श्रीमद् बुद्धिसागरसूरिजी ग्रन्थमाला ग्रन्थांक ४९

श्रीमद् देवचंद्र

भाग १

संशोधक

सद्गत गुरुवर्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरिजी

छपावी प्रसिद्ध करनार

श्री अध्यात्म ज्ञानप्रसारक मंडल

हा. वकील मोहनलाल हीमचद-पादरा.

द्वितीयावृत्ति मत १०००

संवत १९८५ इ. स. १९२९

कींमत रु. २-८-०

अमदावाद—सलापोसरोड;
धी डायमंड ज्युबिलि प्रिन्टिन्ग प्रेसमां
परीख देवीदास छगनलाले छापी.

निवेदन

संवत १९६८ ना चैत्र मासमां सद्गत गुरुवर्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरिजीए मने तथा मारा सहाध्यायी बंधुओने आग्रहपूर्वक प्रेरणा करी के श्रीमद् देवचंद्रजी महाराजना बनावेला तमाम ग्रन्थो मेळवी छपाववामां आवे तो घणो लाभ थाय तेओश्रीनी ते सुचना शिरोधार्य करी श्रीमद् देवचंद्रजी महाराजना बनावेला ग्रन्थो मेळववा प्रवृत्ति शरु करी. घणे स्थळे पत्रो लखी जाते जइ वगेरे तजवीजथी जेटला ग्रन्थो मळ्या ते तमाम श्रीमद् देवचंद्र भाग १-२ ए नामथी छपावी बहार पाड्या. ते ग्रन्थोनी तमाम नकलो टुक वखतमा खपी जवाथी ने मागणी चालु रहेवाथी तेनी बीजी आवृत्ति बहार पाडतां घणो हर्ष थायछे.

प्रथम आवृत्तिनी शरुआत वखते तमाम ग्रन्थो मळेला नहि होवाथी तेमा कोइ जातनो क्रम सचवायेलो नहि. जेम जेम ग्रन्थो मळ्या तेम तेम छपाया जेथी आ बीजी आवृत्तिमा ते ग्रन्थोने त्रण विभागमां वहेंची आ पहेला भागमा गद्य, बीजामां पद्य अने त्रीजामा संस्कृत ग्रन्थो छपाववानी योजना राखी छे. ते मुजब आ पहेला भागमां (१) आगमसार (२) नयचक्रसार (३) गुरुगुण छत्रीसी (४) कर्मग्रन्थ १ थी ५ टबार्थ (५) कर्मसंवेद्य प्रकरण (६) विचार रत्नसार (७) टुटक प्रश्नोत्तर (८) कागलो-ए रीते ग्रन्थो दाखल करवामां आव्या छे आ ग्रन्थो मुख्यत्वे करीने द्रव्यानुयोगने लगता होवाथी आत्मार्थीजनोए गुरुगमपूर्वक अवश्य वाचन मनन करवा योग्य छे.

आ ग्रन्थनुं कद मोटु होवाथी वांचनारने सुगम पडे ते माटे केटलीक प्रतो चार विभागमां छुटी बधावी छे जे नीचे मुजब छे.

१ आगमसार	०—६—०
२ नयचक्र सार अने गुरुगुण छत्रीशी	०—१२—०
३ कर्मग्रन्थ टवार्थ अने कर्म संवेद्य प्रकरण	०—१४—०
४ विचार रत्नसार छुटक प्रश्नोत्तर अने कागलो	१—०—०

आ चारे विभाग सळंग छींटना पुंठाथी पाका बांधवामां आव्या छे अने तेनी कींमत मंडलना नीयम मुजब पडतर करतां पण कमी राखवामां आवी छे.

सद्गत गुरुवर्य श्रीमद् बुद्धिसागरसूरिजीनी सतत प्रेरणा अने सहाय न होत तो आ ग्रन्थो मंडल छपावी वहार पाडी शकत नहि तेथी तेओश्रीनो जेटलो आभार मानीये तेटलो ओछो छे.

आ ग्रन्थ छपाववामां परम पूज्य साध्वीजी महाराज श्रीमती ज्ञानश्रीजी—वल्लभश्रीजी महाराजना सदुपदेशथी सुरत निवासी अध्यात्मज्ञान रसिक झवेरी केशरीचंद कल्याणचंद घेलाभाइए रु. ३५०) नी मदद आपी छे ते माटे धन्यवादपूर्वक आभार मानवामां आवे छे.

पादरा.
पोस सुदी १.संवत १९८५ } वकील मोहनलाल हीमचंद.

॥ ॐ ॥

प्रस्तावना

" Self-reverence, self-knowledge, self-control,
These three alone lead life to sovereign power "

—Lord Tennyson

ग्रन्थ विषे बोलता पहेलां ग्रन्थकर्तानां जीवननी आछी रुपरेखा दोरवी जरुरी छे.

१ सत्य अने आत्मसौंदर्यनी शोधमा भीषण वैराग्यना वाघा पहेरी जीवनसमस्त अर्पी देनार महात्माओ विश्वमा विरल होय छे. समाज अने संयोगोना स्थूल बंधनोथी पर रही आ विभूतिओ आत्मदर्शनना निश्चित लक्ष्ये पहोचवा माटे पार्थिव वस्तुओनो त्याग करी आत्मप्रेममा लीन थाय छे. आ लीनतामांथी झरता दैवी गानमां प्रभु प्रेम अने मानव प्रेमनी अवधि होय छे, जगत्‌ना सनातन सत्यो आपमेळे गुथायेलां होय छे, विश्वना अपार दुःखोमां डुबेला मानवोना आर्तनादने उपशमावनार महामूली मात्रा होय छे. आ संत महात्माओ जेम जेम प्रभुप्रेम अने आत्मदर्शननी निकटता अनुभवे छे, तेम तेम तेमनी भावना "आत्मवत् सर्वभूतेषु" थती जाय छे, अने तेमना वचनो वधु लोकभोग्य अने जगत्‌ने वधु उपकारक बने छे. एमनां लखाणो अमुक धर्म के वाडानु संकुचित क्षेत्र कुदावी जइ विश्वधर्म उपदेशे छे, अने सर्व सामान्य सर्व कालना जगत् विकास अने आत्मविकासनी दरक भूमिकानी मीमांसा करता होवाथी तेमनु स्थान जगत् साहित्यमां अजोड, अबाधित अने दीर्घजीवी छे.

२ आ प्रकारना महात्माओना आत्मलक्षी गानोने काव्योना स्थूल मापथी आंकवां ए तेमने एक जातनो अन्याय करवा जेवुं छे. तेमनो मुख्य उद्देश पोताना अनुभवने लोकोपकारार्थे व्यक्त करवानो होवाथी तेमनी भाषाना बाह्य अलंकारो ए महापुरुषोनी बाह्य दरिद्रताना जेटलाज दरिद्र देखाय छे. छतां सत्यासत्य, जडचेतन अने मोह निर्मोहनुं तेमना हृदयमां निरंतर द्वंद्वयुद्ध चाल्या करतुं होवाथी आ हृदयमंथनना परिणामरूपे तेमने जे काव्यो स्फुरे छे ते साचां काव्यो छे. आपोआप नीकळेला उद्गारो चित्तक्षोभने आभारी छे; तेमां प्रयत्न नथी. स्वतः स्फुरणा छे अने तेथी कवित्व छे. नरसिंह महेता अने मीरांबाइ, अखो अने धीरो, प्रीतम अने ब्रह्मानंद—आ बधा आ दृष्टिएज कवि कही शकाय.

३ विक्रमनी अढारमी सदीने अजवाळनार आवा एक भक्त-कवि ते श्रीमद् देवचंद्रजी. मरुस्थळ—मारवाडनां सुप्रसिद्ध विकानेर पासेना एक गाममां सं. १७४६ मां तेमनो जन्म थयेलो. ओशवाल वंशीय लुणीया गोत्रना शाह तुलशीदासजी तेमना पिता थाय. तेमनी मातानुं पुण्य अभिधान धनबाइ हतुं. आ धर्मप्रिय दंपतिए बाळक गर्भमां हतो त्यारथी ज उपाध्याय श्री राजसागर समक्ष विनयपूर्वक जाहेर कर्युं हतुं के जो पोताने पुत्र थशे तो तेओ गुरुने वहोरावशे. श्रीमद्ने एक भाइ पण हतो. बाळक देवचंद्र आठ वर्षनो थतां मातापिताए गुरुचरणे प्रीतिपूर्वक अर्पण कर्यो. शुभ लक्षणयुक्त आ भावि महात्माने राजसागरजीए आशीर्वादपूर्वक ग्रहण करी सं. १७५६ मां दीक्षा आपी राजविमल नाम पाड्युं. गुरुश्रीए नवदीक्षित शिष्यने सरस्वती मंत्र आप्यो. श्री राजविमलजी

याने देवचद्रजीए निलाडा गाममा वेणातटे भोयरामां मत्रनुं आराधन करी शारदा मैयानी कृपादृष्टि मेळवी.

४ श्रीमदे हवे गुरुदेवनी अनन्य-भक्तिपूर्वक सेवा करवा मांडी. गुरुश्रीए शिष्यना विनयथी प्रसन्न थइ देवचंद्रजीने सकळ शास्त्रो, व्याकरण, नाटक, ज्योतिष्, पिंगळ, स्वरोदय अने अन्य सहस्रावधि पुस्तकोनुं पारायण कराव्युं. श्रीमद्नो चरित्रकार कथे छे तेम तेओश्री थोडाज समयमा

"सकल शास्त्र लायक थया हो.

"जेहने थयु मइ सुइ ज्ञानरे.

५ अभ्यास काळ पूर्ण थतां लागणीयोने व्यक्त अने मूर्तरुप आपवानो काळ आवी लाग्यो. महापुरुषोने आ काळ अनिवार्य अने सहजज छे. आना परिणामरुपे स १७६६ ना वैशाख मासमां श्रीमदे ध्याननुं सपूर्ण स्वरुप आलेखतो ध्यानदीपिका नामनो प्रथम ग्रथ पद्यबद्ध रच्यो. वीश वर्षनी उछरती वये आ ग्रंथमा श्रीमदे ज्ञाननो जे अखूट झरो वहेवडाव्यो छे ते जोता श्रीमद्नी ज्ञानदशानी सहज प्रतीति थाय छे सो वर्षना लाबा आयुष्यना अनुभवनेये झांखप लगाडे तेवी जाग्रत् दशा युवानीना आगणे पग मूकता श्रीमद्नी अवस्थामा अवबोधाय छे. तेज अरसामा स. १७६८ ना पोष मासमा द्रव्यप्रकाश नामनो अपूर्व ग्रथ व्रजभाषामा रची श्रीमदे समाजने चरणे धर्यो श्रीमद्नो व्रजभाषा परनो काबु अने द्रव्यानुयोग जेवा कठिन विषयने सतत अने सटक (एकधारा) पद्यमा रचवानी कळा आश्चर्य पमाडे तेवी छे. केटलेक स्थळे काव्यदेवीना उड्डयनो एटले उचे सुधी जाय छे के श्रीमद्नी शरुआतनी आ बे काव्य कृतिओ अध्यात्म तेमज काव्यकला बनेनी दृष्टिए सफळ नीवडी छे एम कह्या सिवाय चालतु नथी.

त्यार पछी लगभग एक दशका बाद श्रीमदे सर्व आगमोना दोहनरूप, षड्द्रव्य, नय, निक्षेपा, पक्ष, प्रमाण, सप्तभंगी आदिनी चर्चा करतो आगमसार नामनो अद्वितीय ग्रंथ, श्रावक विमलदासनी बे पुत्रीओ माइजी अने अमाइजीना माटे गद्यमां रच्यो. आ कथन श्रीमद्ना चरित्रकार श्री कवियणना आधारे छे. श्रीमद् पोते ग्रंथना अंतमां प्रशस्तिमां जणावे छे ते प्रमाणे आ ग्रंथ मित्र दुर्गादासने समजाववा मोटा कोट मरोटमां सं. १७७६ ना फाल्गुन शुद ३ ने भोमवारे रचायो छे.

अत्यार सुधी श्रीमद् जन्मभूमि मारवाडमांज जुदे जुदे स्थळे विहार करता हता. आ दरम्यान तेमनी प्रखर विद्वतानी फोरम ठेठ गुजरात सुधी प्रसरी हती. कहेवाय छे के ते समये गुजरातमां विचरी रहेला श्री खीमाविजयजीए श्रीमद्ने गुजरातमां आववा आमंत्रण पाठव्युं. आ सुअवसरनो लाभ लइ सं. १७७७ मां श्रीमद् गुजरातमां आव्या. तेमना पुनित चरणारविंदथी पावन थवानुं प्रथम सौभाग्य गुजरातना पाटनगर अणहिलपूर पाटणने सांपडयुं. आ स्वानुभवरसिक, सर्वशास्त्रपारंगत, तत्त्वज्ञानी महात्मानी पाछळ सारुंय पाटण घेलुं बन्युं. श्रीमद्नुं स्याद्वाद शैली युक्त, न्यायालंकृत व्याख्यान सांभळवा हजारो श्रोताओ पधारता. पाटणना वास दरम्यान श्रीमद्ने एक महापुरुष श्री ज्ञानविमलसूरि साथे आत्मप्रेम बंधायो. ते एवी रीते के त्यांना नगरशेठ दोसी तेजसी जेतसीए सहस्रकूट जिनबिंब भराव्यां हतां. श्रीमदे तेनां नाम पूछतां शेठे अजाणपणुं बताव्युं. ते वखते विद्वान् गणाता श्री ज्ञानविमलसूरिने पूछतां शेठने जवाब मळ्यो के प्रायः शास्त्रमां ए नामो नथी. श्रीमदे ए नामो कही बताववाथी सूरिजी साथे तेमने प्रीति जामी अने श्रीमद्नी अत्यंत ख्याति थइ. ज्ञान-

निमलसूरिए आवा विद्वान् नर भाळी तेमने अत्यंत मान आप्यु.

आ समय दरम्यान जैन साधुओमां महा स्तंभरुप अने मखर विद्वान् गणायेला श्री जीनविजयजी, श्री उत्तमविजयजी तथा श्री विवेकविजयजीए श्रीमद् पासे अति प्रेमपूर्वक अभ्यास कर्यो हतो.

श्री जिनविजयजीए श्रीमद् पासे रही महाभाष्यनुं पारायण कर्युं हतु तेनो उल्लेख श्री उत्तमविजयजीकृत 'श्री जिनविजय निर्वाण रास' मा आ प्रमाणे छे.

" गुरुनी महिर नजर रहु, विद्या विनय विशाल,
" पंडित जननी सेवना, पामे ज्ञान रसाल.
" पिमाविजय गुर कहणथी, पाटणमा गुरु पास,
" स्वपर समय अवलोकता कीधां रहु चोमास.
" श्री ठाकुरशी कने पढया शब्द शास्त्र सुखवास,
" कांत्तिविजय गणी संगथी, प्राकृत शब्द अभ्यास
" ज्ञानविमल सूरि कने, वाची भगवति खास,
" महाभाष्य अमृत लह्यो, देवचद गणी पास.
" काव्य छद नाटिक प्रमुख, अभ्यासीया बहु ग्रंथ,
" अनुक्रमे गीतारथ थया, विचरता शुभ पथ.

श्रीमद् पासे श्री उत्तमविजयजीए करेला अभ्यास बाबत श्री पद्मविजयजी कृत 'श्री उत्तमविजय निर्वाण रास 'मां नीचे प्रमाणे कथन छे.—

"खरतर गच्छ माही थया रे लोल, नामे श्री देवचद र सोभागी
"जैन सिद्धात शिरोमणीर लोल, धैर्यादीक गुणवृंदर सोभागी.

× × × ×

" ते गुरुनी वाणी सुणी, हरख्यो चित्त कुमार,
" ज्ञान अभ्यास करु हवे, तुम पासे निरधार

" इंगित आकारं करी, जाणी नेह गृपात्र;
" ज्ञान अभ्यास करावता, कीधो तेहनो छात्र.

श्री विवेकविजयजीए पण श्रीमद् पासे अभ्यास कर्यो हतो. देवविलासकार श्री कवियण कवे छे के:—

" तपगच्छ मांहे विनीत विचक्षण,
" श्री विवेक विजय मुनिंद्र.
" भणवा उद्यम करता विनयी घणुं,
" उद्यमे भणावे देवचंद्र.
" गुरु सदृश मन जांणे विवेकजी
" खिजमतिमें निसदिन्न.
" विनयादिक गुण श्री गुरु देखीने,
" विवेकजी उपर मन्न.

श्रीमद् खरतर गच्छना होवा छतां तपगच्छना आ त्रण महात्माओ जराके न्हानम धर्या सिवाय तेमने चरणे बेसी तेमनी आज्ञा उठावता. श्रीमद् पण गच्छनो मतान्तर राख्या सिवाय वात्सल्य भावथी ज्ञानदान करता. आ उपरथी सहज समजाशे के महापुरुषोने स्थूल वाडाओनां बंधनो जरीके नडतां नथी.

६ हवे श्रीमद्ने हाथे अनेक शासनप्रभावक कार्यो थाय छे. सं. १७८७ मां अमदावाद नागोरी सराहमां भगवती सूत्रनी वाचना, ढुंढक माणेकलालनुं मूर्तिपूजक बनवुं, शांतिनाथनी पोळमां सहस्रफणा बिंबनी स्थापना, सहस्रकूट जिनबिंबनी प्रतिष्ठा, सं. १७७९ ना खंभातना चोमासा बाद शत्रुंजय पर जीर्णोद्धार वगेरे अनेक सुकृत्यो करवा बाद श्रीमद् सुरत पधार्या. केटलोक समय विविध स्थळे विहार करतां सं. १७८५, १७८६ अने १७८७ मां शत्रुंजयपर प्रतिष्ठा करी श्रीमद्

अमदावाद आवी त्यां चोमासु रह्या. ते वखते सं. १७८८ ना आषाढ शुदि २ ना दिने श्रीमद्‌ना गुरु दीपचंद्रजी पाठकनो देहविलय थयो.

७ अमदावादनो सवो रत्नसिंह भंडारी आ समये श्रीमद्‌ना ज्ञानथी मुग्ध थई तेमनो परमभक्त बन्यो. त्या चालेलो मृगी (मरकी) उपद्रव गुरुश्रीए भडारी तथा महाजननी विनतिथी शमाव्यो अने गुरुश्रीना आशीर्वादथी भंडारी रणकुजी साथेना युद्धमां जीत्यो. श्रीमद्‌नी मखर शक्ति जोई विनीत बनेलो भडारी गुरुश्रीनी भक्ति अने सेवोपासनामा पोताने कृतकृत्य मानवा लाग्यो

८ गुरुश्रीए आ वखते एक विष्णुयोगीने प्रतिबोधी जैन बनाव्यो. स. १७९५ मां पालीताणे रही त्यार पछीनां बे वर्ष तेओश्रीए नवानगरमां गाळ्या. त्या ढुढकने जीत्या, चैत्योमा बंध पडेली पूजा चालु करावी अने पडधरीना ठाकोरने प्रतिबोध्यो. स. १८०२–३ मा राणावाव तथा १८०४ मां भावनगर रही त्यांना राजाओने जैन धर्म प्रति प्रीतिवाळा बनाव्या. स. १८०५–६ मा लींबडी रही त्या तथा धागध्रा अने चूडा एम त्रण स्थळे बिंब प्रतिष्ठा करावी.

स. १८०८ मा गुजरातथी शत्रुंजयना संघमां गया. पछीनां बे वर्ष गुजरातमा गाळ्या बाद सं. १८१० मां सुरतना शेठ कचरा कीकाए काढेला संघ साथे श्रीमद्‌ पुनः पालीताणे पधार्या. गुरुश्रीना उपदेशथी शेठे साठ हजार रुपीआ खरच्या. स १८११ मा लींबडीमां पुनः प्रतिष्ठा कराव्या बाद श्रीमद्‌ अमदावाद पधार्या ज्या गच्छपतिए तेमने पूर्णमान सहित वाचक पद आप्युं.

९ श्रीमदे अमदावादमां रही देशनासार (अप्रगट) नयचक्र, ज्ञानसार अष्टक पर संस्कृत टीका, कर्मग्रंथपर टीका वगेरे उत्तमोत्तम पुस्तको रच्यां. सं. १८१२ (गुजराती १८११) ना भाद्रपद अमावास्याने× दिने श्रीमद् समाधिपूर्वक कालधर्म पाम्या. छेल्ली अवस्थामां तेओश्रीनी आत्मजाग्रति अपूर्व हती. निजानंद मस्तीमां झीलता, हस्ते मुखडे, मोक्षसुंदरिने वरवाने अधीरा बन्या होय तेम टुंकां ६५ वर्षो आ मानवी दुनिआमां गाळी श्रीमद् चाली गया.

श्रीमद् अमदावादमां डोशीवाडाना उपाश्रयमां अवसान पाम्या हता. तेओश्रीनी पादुका अमदावाद पासे हरिपुर नामे परामां देरासरनी सामेना मकानमां छे. पादुका उपरनो लेख नीचे प्रमाणे छे.

"श्रीमद् जिनचंद्रसूरिशाखायां श्री खरतरगच्छे संवत् १८१२ वर्षे महा वदि ६ दिने उपाध्याय श्री दीपचंद्रजी शिष्य उपाध्याय श्री देवचंद्रजीनां पादुके प्रतिष्ठिते."

१० श्रीमद्ने मनरुपजी अने विजयचंदजी ए वे विद्वान् शिष्यो हता. जेमांना मनरुपजीने वक्तुजी अने रायचंदजी तथा विजयचंदजीने रुपचंदजी तथा सभाचंदजी नामना शिष्यो हता.

११ श्रीमद् सुंदर व्याख्यान आपी शकता. श्रोताओ

× आ आखुंय चरित्र देवविलासकार श्री कवियणना आधारे लखवामां आव्युं छे. तेओ पोते मारवाडी होवाथी तेमणे जे ते स्थळे मारवाडी संवतनो उपयोग करेलो छे. मारवाडी वर्ष चैत्र मासथी बदलाय छे तथा तेमनामां कृष्णपक्षनी प्रतिपदाथी नवो मास शरु थाय छे ए वाचके ध्यानमां राखवुं. श्रीमद्नुं अवसान ते प्रमाणे मारवाडी सं. १८१२ अने गुजराती रीते सं. १८११ ना भाद्रपद अमावास्याए थयेलुं.

तेमनुं तत्त्वज्ञानथी भरपूर वक्तृत्व साभळी अत्यंत हर्ष पामता. श्रीमद्नु वाचन एटलुं बधुं विशाळ हतु के ते गमे ते विषयने स्पर्शी, गमे तेवा कठिन विषयने रसभर अने सामान्य श्रोताओ पचावी शके तेवो बनावी शुकता. तेमना लखाणोमा जे अनेक अवतरणो टाकवामा आव्या छे ते उपरथी तेमना वाचन बाहुल्यनी प्रतीति थाय छे. फक्त स्वदर्शननाज नहि पण अन्य दर्शनना अनेक ग्रन्थोनु तेमणे परिशीलन कर्यु हतु

१२ श्रीमद्ना प्रसिद्ध तथा अप्रसिद्ध ग्रन्थोनो समुदाय घणो विशाळ छे तेमणे गद्यमा तथा पद्यमां तेमज संस्कृत, व्रज, मागधी अने गुजराती भाषामां लखाण कर्यु छे. पद्यमा श्रीमदे लांबा काव्यो तेमज नाना संगीत काव्यो थोकबंध रचेला छे. श्रीमद्नी काव्यकला कोइ वखत पांखो फफडावती गगनमडळमां विहार करे छे तो कोइ वखत सुरुपा सुंदरीनी माफक रसिक जनोना हृदय रंजन करती मानवभोममा विचरे छे. श्रीमद्नी कविता एकधारी अने सतत खळखळ वहेता झरणा समी मधुर रव करती चाली जाय छे. रस जमाववामां श्रीमद् एका छे. केटलीक ढाळो तथा स्तवनो वाचता आपणने एमज थाय के पुनः पुनः वाच्या करीये घणी वखत तत्त्वज्ञानथी भरपूर काव्यो समजता वार लागे छे, छता सदिग्धता टाळवा अने स्पष्ट थवा जोइए पूरतो प्रयत्न सेव्यो छे. श्रीमद्नी उपमाओ अत्यत मनोहर अने मुग्ध बनावे तेवी छे. श्रीनेमिनाथनु आठमु स्तवन श्रीमद्नी आ शक्तिनी साक्षी आपे छे. तेमना कवनमा ज्या त्या प्रासादिकता अने मधुरता नीतरी रहे छे चोवीशीनु प्रथम स्तवन "ऋषभ जीणदशु प्रीतडी" तर्क, पाडित्य अने कवित्व शक्तिनो नादर नमूनो छे. आना करताये भव्य करुण रसथी टपकतुं वीर विरहनुं ब्यान करतु 'श्री वीरप्रभुनु स्तवन'

श्रीमद्‌नां सर्व काव्योमां प्रथम उभे तेवुं छे. एनी स्पर्धा करी शके तेवां बीजां काव्यो साराय गुर्जर साहित्यमां गण्यां गांठयां ज छे. ए एकज काव्य श्रीमद्‌ने अमरता बक्षे तेम छे.

" नाथ विहुणुं सैन्य ज्यूं रे, वीर विहुणो रे संघ,
" साधे कुण आधारथीरे, परमानंद अभंगो रे—
वीर प्रभु सिद्ध थया.
" मात विहुणो बाल ज्यूं रे, अरहो परहो अथडाय,
" वीर विहुणा जीवडारे, आकुल व्याकुल थाय रे—
वीर प्रभु सिद्ध थया.

सुंदर सरोदोथी गवातुं सांभळीने कोनी आंखोमांथी आंसु नहि टपके? शब्दे शब्दे कारुण्य छवायुं छे. जीवनना सामान्य प्रसंगोमांथी लीधेली उपमाओ पण केटली रम्य छे? तेमनी अध्यात्म होरी (फाग) साधकना तनमनाटथी भरेली छे.

" आत्मप्रदेश रंग थल अनोपम, सम्यग् दर्शन रंग रे!
निज सुखके सधैया.
" तुं तो निज गुण खेल वसंत रे,
निज सुखके सधैया.

१३ श्रीमद्‌नी काव्यशक्तिनुं संपूर्ण दिग्‌दर्शन कराववा जतां विषयान्तर थवानो भय रहे छे. कारणके आ पुस्तकमां फक्त तेमनी गुर्जर गद्यकृतिओनो ज समावेश करवामां आवेलो होवाथी तेमना गद्य विषे बोलवुं एज वधु युक्त छे. 'अध्यात्म-ज्ञान प्रसारक मंडळ' ना चालकोए 'श्रीमद् देवचंद्र' नी द्वितीय आवृत्ति त्रण भागमां छपाववानो इरादो राख्यो छे. तेमनी योजना प्रमाणे प्रथम भागमां श्रीमद्‌नुं गद्य साहित्य, बीजा भागमां पद्य साहित्य अने त्रीजामां फक्त संस्कृत साहित्य छपाववुं एम ठर्युं छे. ते मुजब आ प्रथम भागमां मात्र गद्य-

कृतिओ होइ ते पुस्तकोनो संक्षिप्त परिचय करावी तेमना गद्यनु टुंकु अवलोकन करीशु. आ भागमा नीचे प्रमाणे ग्रन्थो दाखल कर्या छे:—

(१) आगमसार (२) नयचक्रसार (३) गुरुगुण छत्रीशी (४) कर्मग्रन्थ १ थी ५ (५) कर्म संवेध प्रकरण (६) विचार रत्नसार (७) छुटक प्रश्नोत्तर (८) त्रण पत्रो.

१ आगमसार—सकळ जैन सिद्धांतोना दोहनरुप आ ग्रंथ अध्यात्मज्ञानरुप गहन ग्रन्थनी प्रस्तावनारुप छे. जैन दर्शनना मुख्य तत्त्वोनी तारवणी करी श्रीमदे सरळ अने स्पष्ट भाषामा स्व आगमनो रहस्यस्फोट कर्यो छे. षड् द्रव्य, आठपक्ष, सात नय, चार निक्षेप, चार प्रमाण, सप्तभंगी वगेरे गूढ विषयोनी चर्चा करतो आ ग्रन्थ अत्यन्त लोकप्रिय अने जाणीतो छे. एनी महत्तानी पिछाण कराववा एटलुज लखवु बस थशे के स्वर्गस्थ योगनिष्ठ आचार्य श्रीमद् बुद्धिसागरजीए दीक्षा लेता पहला आ ग्रन्थनुं सो वार अध्ययन कर्यु हतु.

आगमसारनी एक जुनी प्रति के जेमां प्रतिमापूजा, पुष्प पूजा चर्चा, गुणस्थानक स्वरुप, पापस्थानक स्वरुप ए चार विषयो (के जे छपायेला आगमसारमा नहोता) छे ते प्रत पाटणना भंडारमाथी मळी अने तेना वधारा वाळी बे प्रतिओ न. ८०९-५६० सुरतना श्रीमोहनलालजी महाराजना भंडारमाथी मळी, तथा तेवी ज एक प्रत मुनिश्री लाभविजयजी पासेथी मळी. तेथी ते विषयो जे ते स्थळे दाखल करी लेवामा आव्या छे.

२ नयचक्रसार—कोइ पण वचनने सारी रीते समजवा अने

सद्दहवा माटे तेने पूर्वापर अपेक्षा सहित जाणवुं जोइए. षड्दर्शनना विरोधाभासवाळां मंतव्योने नयमां पारंगत मनुष्य, विचार वैविध्यनी कोइ पण जातनी अथडामण सिवाय, सत्य दृष्टिए नीरखी शके छे. आथी नयनुं ज्ञान अत्यंत आवश्यक अने मनुष्यनी उच्च नीच भूमिका नक्की करवामां मापरुप छे. आ ग्रन्थमां नयनुं स्वरुप समजाववा श्रीमदे उत्तम प्रयत्न सेव्यो छे. तेओ नयना अनेक भेदोने भेदवामां जड बनी जती बुद्धिने वेग आपी नयनो यथार्थ ख्याल करावे छे. श्रीमल्लवादिकृत द्वादशसार नयचक्र उपरथी श्रीमदे आ ग्रन्थ रच्यो छे. तेओश्री उपसंहारमां कहे छे के,

" द्वादशसार नयचक्र छे, मल्लवादिकृत वृद्ध,
" सप्तशति नय वाचना, कीधी तिहां प्रसिद्ध.
" अल्पमतिना चित्तमें नावे ते विस्तार,
" मुख्य स्थूल नय भेदनो, भाष्यो अल्प विचार.

श्री मल्लवादिए पोताना द्वादशसार नयचक्रमां सातसो नयनी वाचना कीधी छे. ते अल्पमति जीवो समजी न शके ते माटे नयना मुख्य स्थूल भेदोनो संक्षिप्त विचार भाख्यो छे. आ उपरांत गुणठाणा आ श्री जीवना भेद, द्रव्यगुण पर्याय लक्षण नय निक्षेप सहित, सप्तभंगी, पंचास्तिकायनुं स्वरुप, सामान्य विशेष स्वभावनां लक्षण वगेरेनुं वर्णन पण तेमां आवे छे.

३. गुरुगुण छत्रीशी—गुरु जे आचार्य ते छत्रीश गुणोथी अलंकृत छे. वळी एवी छत्रीश (१२९६) छत्रीशी छे. ते भिन्नभिन्नपणे छे. तेनुं स्वरुप आ ग्रन्थमां आलेखेलुं छे. गुरुपद के आचार्यपद धारण करता पहेलां केटली

लायकातनी जरुर छे तेनो स्हेज ख्याल करवानी इच्छावाळाए आ नानकडो ग्रन्थ जरुर वांचवा.

४ कर्मग्रन्थ—कर्म फीलसूफीनी मीमांसा जे झीणवटथी जैन शास्त्रोमां करवामा आवी छे तेवी अन्य कोइपण दर्शनमां नथी. जैनो आने माटे जे अभिमान ले छे ते तद्दन यथार्थ छे. कर्मग्रन्थनु महत्त्व समजाववानी कशी ज आवश्यकता नथी. श्री देवेन्द्रसूरिए १ थी ५ कर्मग्रन्थ मागधी भाषामां रचेल छे. श्रीमदे तेनी उपर गुजराती टबो भर्यो छे. मागधी नहि जाणनाराओ माटे आ प्रयत्न अत्यंत आवकारदायक छे.

५ कर्मसंवेध प्रकरण—कर्मग्रन्थनी पूर्ति समो आ नानो ग्रन्थ श्रीमदे मागधी भाषामा रच्यो छे. कर्मग्रन्थनी निकटनो संबध होवाथी तेने कर्मग्रन्थ साथेज मूकवामा आव्योछे.

६. विचार रत्नसार—नाम प्रमाणे गुण धरावतो आ ग्रन्थ प्रश्नोत्तररुपे अमूल्य विचाररत्नोनो संग्रह छे. एकंदरे ३२७ प्रश्नोत्तरोमा श्रीमदे अध्यात्म ज्ञान अने जैनतत्त्वने लगता केटलाय गहन सवालोनु सुंदर निराकरण कर्युं छे. बधाज प्रश्नो एटली ऊंची कोटिना छे के विवाद याने खंडनमंडननी प्रश्नोत्तरीने आमा जराये स्थान आपवामा आव्युं नथी. प्रगल्भ विचारो लेखकनी उच्च मनोभूमिना सूचक अने अध्यात्मज्ञानमा वधारो करनार छे. विवाद अने 'सहु स्थापे अहमेव'ना जमानामां श्रीमद् आ व्यसनथी दूर रही शक्या ए आश्चर्यजनक छे.

७. छूटक प्रश्नोत्तरो—विचार रत्नसारमा श्रीमदे पोतेज प्रश्नो उठावी तेना उत्तर आपवा प्रयत्न कर्यो छे. ज्यारे आ ग्रंथमा श्रीमद्ने रायनगरना तथा पिरादना संघे तेमज न-

वानगरना श्रावक भणसाली प्रमुखे पूछेला प्रश्नोना लंबा-
णथी शास्त्राधारे जवाव आपेला छे. मुमुक्षुए जरुर वांचवा.

८. त्रण पत्रो—श्रीमदे सुरतनी श्राविका जानकीवाइ तथा
हरखवाइ पर लखेला आ त्रण पत्रो ते वखतना जैनसमा-
जमां स्त्रीओनी स्थितिनुं आछुं प्रतिबिंब पाडे छे. द्रव्या-
नुयोग जेवा गहन विषयमां ते समयनी स्त्रीओ केटलो
ऊंडो रस लइ शकती, तेमनो शास्त्राभ्यास कइ कक्षा सुधी
पहोंचेलो वगेरेनो आ पत्रो सुंदर ख्याल आपे छे. आ
जमानामां ज्यारे द्रव्यानुयोग प्रति ज्यां त्यां बेदरकारी
जोवामां आवे छे, त्यारे बे सदी पूर्वेना आ पत्रो, ते
वखतना स्त्रीसमाज करतांये आजनो स्त्री तेमज पुरुष स-
माज—कहो के आखोय जैन समाज केटली अधःस्थितिए
छे ते बतावता साथे, जैनोना भूतपूर्व गौरवना साक्षीभूत छे.

ग्रन्थोना आटला विवरण पछी तेओश्रीनी गद्यशैलीनुं
विहंगावलोकन करीशुं.

१४. महामस्त मुनिश्री ज्ञानसारजी जेओए आनंदघन-
जीनी चोवीशी पर बालावबोध रच्यो छे अने जेओ श्रीदेवचंद्र-
जीनी साधुपद परनी सज्झायना टवाकार छे तेओए लख्युं छे
के श्री देवचंद्रजीने एक पूर्वनुं ज्ञान हतुं एवी गूजरातमां कहेवत
छे. श्रीज्ञानसारजी जेवा तेवा माणस नहोता. तेमणे जे कह्युं छे
ते ते वखतना साराय जैनसमाजनुं मन्तव्य हतुं एम श्रीमद्
उपरना सर्वगच्छना महापुरुषोना राग उपरथी ग्रहाय छे. तेमना
विषे "श्री उत्तमविजयजी निर्वाण रास"मां आ प्रमाणे उल्लेख छेः

" खरतर गच्छ मांहि थयारे लोल,
" नामे श्री देवचंदरे सोभागी;
" जैन सिद्धांत शिरोमणी रे लोल,
" धैर्यादिक गुणवृंदरे सोभागी;

"देशना जास स्वरूपनीरे लोल,
"ते गुरुना पद पद्मरे सोभागी,
"वदे अमदावादमां रे लोल,
"पूजाशा निंछ्यर सोभागी

पूजाशा ते श्रीउत्तमविजयजी. श्रीमद्नु मरुपेलु विशाळ साहित्य जोतां तेओ एक पूर्वना ज्ञाता हशे ए बाबतनी आपणने जराये शंका रहेती नथी पोताना आ विशाळ ज्ञाननुं व्यक्त शब्दब्रह्म रुपे श्रीमदे जनताने पान कराव्युं छे.

श्रीमद्नुं गद्य सरळ, घरगथ्थु अने भाववाही भाषामां विचारश्रेणीने एक सरखी रीते रजु करे छे. श्रीमद्नु हृदय जेटलुं निखालस छे तेटलीज तेमनी शैली निखालस छे. स्पष्टता अने आडंबररहितपणुं ए तेमना गद्यना मुख्य गुण छे. अनिच्छनीय, जरुर करता वधारे प्रमाणमा वापरवामा आवता संस्कृत शब्दोने तेमणे तीलांजली आपी छे सुंदर, मधुर अने सादी भाषामा श्रीमद् पोतानु कथन कर्ये जाय छे पोताने जे कहेवानुं छे ते स्पष्ट रीते जरुर पुरता शब्दोमा कही दे छे. तेमनी शैलीमा पोते पंडित छता नथी पंडिताइनो डोळ, के नथी विचारोनी उणपने शब्दलालित्यमा गोठवी दइ विचारोनो दुष्काल प्रदर्शित करता मूढमतिना खोटा शब्दप्रयोगो तेमने कडक कहेवानु छे अने तेने तेओ कहे छे. खाली वाणीनो व्यभिचार तेमणे कोइ स्थळे कर्यो नथी. गुजराती भाषामा गद्यसाहित्यना फणगा व्यवस्थित रीते फुटवा माडया त्यार पहलां दोढ सदी पूर्वे आ महात्माए गद्य लखी गुर्जरगिरा पर अनहद उपकार कर्यो छे. पोते संस्कृत पुस्तको रची जाणता छता प्राकृतमा लखी तेओश्रीए मातृभाषापरनो पोतानो प्रेम व्यक्त कर्यो छे श्रीमद् मारवाडमा जन्मेला होवा छता गुजराती भाषापरनो तेमनो

काव्यु अजब छे. आठमा वर्षे दीक्षा लीधा पछी तेओनो विहार गुजरात तरफ थयो हशे. आ शैशव विहार काळमां तेमनो गुजरातीनो अभ्यास परिपक्व थयो होवो जोइए. तेमना लखाणमां कोइ कोइ स्थळे मारवाडी शब्दप्रयोग आवे छे छतां गुजराती भाषामां तेओ एटला सिद्धहस्त छे के सद्गत श्री बुद्धिसागरजी जेवाए देवविलास उपलब्ध थता पहेलां कल्पेलुं के तेओनी जन्मभूमि गुजरात होवी जोइए. तेमना साहित्यमांथी झळकी उठता देवचंद्रनी प्रतिभा अनेरी छे. तेओश्रीनी कीर्ति सर्वभक्षी काळनो उपहास करी बे सैकाथी अणनम उभी छे अने भविष्यना गर्भमां पण उभशे ए निर्विवाद छे.

१५ आ महा प्रभावशाळी महात्मा विषे घणुं कही शकाय तेम छे. प्रखर अध्यात्मरसिकता, निजानंद मस्ती, अलखदशा, उत्कट प्रभु प्रेम, असामान्य लघुता, अद्भूत वैराग्य, समभाव, समता, ऐक्यभाव, पूर्णानन्द प्राप्ति वगेरे हजु अणस्पर्श्या विषयो छे. श्रीमद्ने पुरतो न्याय आपवा जतां एक पुस्तक भराय. पण पुस्तक भरवानी जरुर नथी. प्रस्तावरुपे तेमना अमोला वारसा तरफ अंगुलीनिर्देश कर्या पछी वाचकनेज ए ज्ञान उदधिमां डुबकी देवा देवी ए मारुं कर्त्तव्य छे. सुज्ञ अध्यात्मरसिक बंधुओ ते करवा प्रेराय. अंतमां विरमतां इच्छुं छुं के श्रीमद् जेवा, गच्छना भेदोनी वालीशताने दूर करी जगत्मां आत्मप्रेमनां पूर वहावी, विश्वबंधुत्वनी भावना प्रेरी आत्मसौंदर्यनी झांखी करवा मथता कोइ महात्मा भारतवर्षने अने जैन आलमने सोंपडो.

पादरा.
पोष सुद १, सं. १९८५.

गुरुचरणोपासक
नागकुमार मकाती.

महोपाध्याय श्रीमद् देवचन्द्रजी महाराजनी स्तुति

ज्ञानदर्शनचारित्र-व्यक्तरूपाय योगिने
श्रीमते देवचन्द्राय, सयताय नमोनमः ॥ १ ॥
द्रव्यानुयोगगीतार्थो, व्रताचारमपालकः
देवचन्द्रसमः साधु, र्वाचीनो न दृश्यते ॥ २ ॥
वाचकस्य महारागी, सर्वजैनोपकारक
संमति यस्य सद्ग्रन्थै, स्तत्त्वबोधः मजायते ॥ ३ ॥
आत्मोद्धारामृतं यस्य, स्तवनेषु मदृश्यते
त्रिविधतापतप्तानां, पूर्णशान्तिमदायकम् ॥ ४ ॥
आनन्दघनगीतार्थ-पदस्तवनपूजकः
गच्छेखरतरे तस्य, समःकोऽपिनयोगिराट् ॥ ५ ॥
आत्मशमामृतम्वादी, शास्त्रोद्यानविहारवान्
यत्कृतशास्त्रपाथोधौ, स्नानंकुर्वन्ति सज्जना ॥६॥
सिद्धान्तपारदृश्वा यो, गुणानुरागिशेखरः
माध्यस्थ्यंयस्यसच्चित्ते, तस्मै नित्य नमोनम' ॥७॥
गुर्जरोर्व्यांच सोराष्ट्रे, मेदपाटेच मालवे
लाटदेशेच पञ्जाबे, मरुदेशे स्वपादतः ॥ ८ ॥
विहाराश्चकृतानेके, लोकानां बोधहेतव
ज्ञानिने देवचन्द्राय, पूर्णप्रेम्णा नमोनमः ॥ ९ ॥
संभूत अन्तरात्मा य, आत्मानुभववेदकः
अप्रमत्तदशायोगी, जिनेन्द्राणामसेवक ॥१०॥
श्रुतागमप्रलीनाय, भक्तायब्रह्मरागिणे
चिदानन्दस्वरूपाय, सर्वमध्यस्थरागिणे ॥११॥
ध्यानसमाधिरक्ताय, विश्वजन्यायसाधवे
श्रीमते देवचन्द्राय, पूर्णप्रीत्या नमोनमः ॥१२॥

जैनसंघस्यसेवायै, सर्वस्वार्पणकारिणे
श्रीमते देवचन्द्राय, शुद्धात्मने नमोनमः ॥१३॥
भारत जैनसंघे यः, प्रादुर्भूतो महामुनिः
मोहतमोविनाशेन, देवचन्द्रोहिभास्करः ॥१४॥
शीतलः सर्वलोकाना–मान्तरशान्तिकारकः
क्षमापृथ्वीसमा यस्य, गांभीर्यं सागरोपमम् ॥१५॥
धैर्यं मेरुसमं यस्य, गंगावन्निर्मलं मनः
तस्मै श्रीदेवचन्द्राय पूर्णप्रीत्या नमोनमः ॥१६॥
कायोधर्ममयोयस्य, वचश्चविश्वपावकम्
मनआत्मनिसंलग्न मात्मालीनः प्रभोसदा ॥१७॥
तस्मै श्रीदेवचन्द्राय, त्यागिने धर्मरागिणे
नमःश्रीविश्वपूज्याय, विश्वकल्याणकारिणे ॥१८॥
भावमेघस्वरूपाय विश्वोपग्रहकारिणे
नमः श्रीदेवचन्द्राय सिद्धांतपारगामिने ॥१९॥
सर्वगच्छेषु माध्यस्थ्यं, यस्य सत्यं प्रतिष्ठितम्
तस्मै श्रीदेवचन्द्राय, पूर्णप्रीत्या नमोनमः ॥२०॥
स्वपरगच्छ माध्यस्थ्यं, यस्य ज्ञानेन शोभते
सर्व गच्छसम ! श्रीमद् ! देवचन्द्र नमोऽस्तुते ॥२१॥
तपागच्छीय साधुभिः सार्धं मैत्री प्रवर्तकः
आदर्शो देवचन्द्रोऽभूत् सर्व साधु शिरोमणिः ॥२२॥
देवचन्द्रकृत ग्रन्थान्, स्तुवेऽहं भक्तिभावतः
अमृतसागरा यत्र, विद्यन्ते सुखकारकाः ॥२३॥
गुणानुरागयोगेन, देवचन्द्रमहामुनेः
स्तुतिःकृता तपागच्छे, बुद्धिसागरसूरिणा ॥२४॥
गुणिनां गुणरागेण, व्यक्ताभवन्ति सद्गुणाः
दोषास्त्याज्या गुणाग्राह्या भाषते बुद्धिसागरः ॥२५॥

अनुक्रमणिका.



आगमसार.

शुद्धिपत्रक.

पृष्ट	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
७	४	आकाशास्कित्य	आकाशास्तिकाय
२७	१३	ता	तो
२९	४	बहुमति	बहुमान
३५	१९	जाव	जीव
३८	११	ते	जे
४३	८	बोल्या	बोल्यो
४३	८	जादर्या	आदर्या
४३	१०	मान्या	मान्यो
४३	१३	बोल्या	बोल्यो
४४	७	"	"
४५	१२	पेहेलै	पेहेल
४७	५	जाणवा	जाणवो
४९	५	असख्याता	असख्याती
५२	३	उपजवा	उपजवो
५३	२२	कर्ग	कर्म
५५	१३	आपपणा	आपणा
५६	१८	माकलो	मोकलो
५७	९	परिणाम	परिमाण
५७	११	"	"
५७	१७	मागापमाग	भोगोपभोग
५८	९	व्यतहार	व्यवहार
५८	२२	सेणे	सेने
३४	२५	तु वीभे	तु वीने
३६	१४	रह्या	रह्यो
६७	११	पकडया छे	पकड्यो छे

		प्राणा	प्राणी
७२	२	मद्दहणा	सद्दहणा
७३	७	वहुमत	वहुश्रुत
७९	४	माक्ष	मोक्ष
७९	६	छोडजा	छोडजो
७९	७	माक्षनुं	मोक्षनुं
७९	८	तापण	तोपण
८६	३	माहनी	मोहनो
८७	१२	नाचा	नीचो
८८	२६	अंतमुहुर्त	अंतर्मुहुर्त
८९	२३	वतां	सेवतां
९२	१९	उपाध्याम	उपाध्याय
९३	१५	तधा	तथा
१०२	६	संप्रद्राय	संपराय
१०४	८		



अशुद्धिशुद्धिपत्रक.

पृष्ट	पंक्ति	अशुद्धि	शुद्धि
१०७	११	सम्य र्ग	सम्यग्मार्ग
१०८	४	अव्यावाबाधा	अव्याबाधा
१०९	३	थाये	थो
१०९	५	जीवा	जीवो
११०	६	प्रयय	प्रथम
१११	१४	सम्यत्व	सम्यक्त्व
,,	[illegible]	हाय	होय
,,	२१	जाणवा	जाणवो
११२	१७	ता	तो
११३	१	हय	हये
,,	७	ससायी	ससारी
,,	१२	हैय	हैयें
,,	१६	मिथ्या	मिथ्या
११४	१७	व्याप	व्याप्य
११५	१३	द्रव्य	द्रव्य
११७	६	समुदाय	समुदाय
११८	३	व्यय	व्यय
,,	४	पर्यान्तिकाभय	पर्यायान्तिकोभय
,,	६	पर्यायशद	पर्यायपद
,,	१३	महा	नहीं
११९	१०	मय	मये
,,	१८	अर्थ -र्ते	अयते
१२०	१३	गुणो	गुणी
१२१	[illegible]	संमारी	संसारी
१२३	१४	आर्टभामा	आटभाग
,,	२१	भाव	ओव

		लिगे	लिंगे
१२८	४	प्रगठ	प्रगट
,,	५	अयागी	अयोगी
१२८	१८	काई	कोइ
१२९	२	त्यादिक	इत्यादिक
१३६	३	जीष	जे
१३७	१६	धम	धर्म
१३९	११	करीयं	करीयें
१४८	१८	भोगा	भागो
	२०	नास्पिणो	नास्तिपणो
,,			
१५०	१२	द्रव्य	व्यय
१५६	५	ध्रवत्वं	ध्रुवत्वं
,,	१२	परमाणुनो	परमाणुने
१५८	१७	के नियारण	निरावरण
१५९	४	चोथुं	ए चोथुं
,,	११	ते	ने
,,	१	कयो	सौ
,,	३	भायः	भावः
१६२	१७	ता	तो
१६३	३	हाय	होय
,,	,,	होय	न होय
,,	८	मध्वे	मध्ये
,,	२६	भेव	भेद
१६४	१९	धन	घन
	१५	सर्व भाव	स्वभाव
,,			
१६५	१७	अभेद	ए भेद
	१८	धर्मास्तिकाय	अधर्मास्तिकाय
,,	२०	ता	तो
,,			
१६६	११	भाव	भाव
१६७	१३	नाबिभूंत	नाविर्भूत
	१८	वितश्यति	विनश्यति
,,			
१६९	१	ज्ञानयका	ज्ञायकता
१७०	२०		

१७१	१८	परिणमे	परिणमे
१७२	७	यागेंज	योगेंज
१७३	२५	भाक्तृत्र	भोक्तृत्य
१७४	२०	क्रियायय	क्रियायत
■	२१	उपयोगा	उपयोगी
१७५	६	परणाव	परभाव
,,	११	नदनयी	नदमयी
,,	२०	निरयाण	निरावरण
१७६	१०	कारणात	कारणता
१७७	६	उपाधिता	उपाधितो
,,	१५	जाय	जीय
१७८	९	दानाधिक	दानादिक
१७९	५	काशना	कायना
,	२१	स्पदशायो	स्पशादयो
१८०	८	मध्य	मध्ये
	२८	पुद्गलना	पुद्गलना गपोगुण तेना भेद वर्ण, गध, रस, स्पर्श मंस्थानादिक
१८२	३	निश्चय	निक्षेप
,,	११	श्रीना	धीयना
१८४	१८	छ	छे
१८६	-	पायायथिय	पर्यायार्थिक
१८८	१	,	,,
१९५	६	स्यथादयत	स्यर्पादियते
१९८	९	ते धर्मज	त माव धर्मज्ञ
२०१	२०	घट	घट
२०४	१७	पर्यमृताय	परभूताय
२०४	२०	मयथम	मयथाम
,,	२३	घताम्य	घृताम्य
२०५	१६	मायम	मोपने
	,,	भम	मुम
,,	२०	वराम	वराम

२०६	१५	न गवेषे	गवेषे
२०८	३	मवलम्बमानः	अवलम्बमानः
”	१२	धर्मोंने	धर्मोंने
”	२३	द्रव्यांतरपरणो	द्रव्यांतरपणो
२०९	७	धर्मने	धर्मनेन
२१२	९	ध्येये	ध्येये
२१४	९	निमत्त	निमित्त
”	२०	विशेप	विशेष
२१५	१०	लिगादिके	लिंगादिके
२१७	५	जाणवा	जाणवो
”	१५	विपयी	विपयी
”	२४	पवभूतथी	एवंभूतथी
२१९	७	ज्ञानं	ज्ञानं
२२०	७	पामाने	पामीने
”	१०	अव्यावाद	अव्यावाध
२२२	८	वाधक	वाधक
२२२	१३	आन्माय	आम्नाय
२२४	९	परमाव	परभाव
२२५	१६	कराने शुत्त	करीने शुद्ध
२२७	२०	परभावानुग	परभावानुगत
२२८	२	रमतासंग	समतासंग



पृष्ट	लीटी	अशुद्ध	शुद्ध
४-९	१०	मद्पणाप	मद्पणाप य
४६०	८	मेना	तेना
४६१	३	मार्गमे	मार्गने
४६३	१३	देश्मना	देशना
४६६	१५	यद्दार्थ	यथार्थ
४७१	१०	अज्ञानपर्णु	अज्ञानपर्णु
४७०	१६	रींते	रीते
४७५	३	याग	योग
४७८	९	ञाधमकाश	बोधमकाश
४७९	१६	मम्यग	मम्यग्
४८३	४	आतक	आतय
४८६	१४	द्र पर्मयर	द्रव्यसयर
४८७	२१	मम्यग	मम्यग्
४८९	१७	अशुद्धापयाग	अशुद्धापयाग
४९०	१०	द्वारे	द्वारा
४९४	१८	द्दाय	दोय
४९०	६	मम्यग	मम्यग्
४९९	७	भावद्रियना	भावेंद्रियनी
"	९	यिपरा	यिपरारी
"	१०	त्रिपयभि०	विपयाभि०
५००	१०	यट्ठी	य७१
५०३	१३	भरतेधरन	भरतेश्वरने
५०९	११	नामकम	नामकम
"	१८	स्तात	स्नाक
५११	१	मांहियो	मांहियो
५१३	१७	पुद्गलादि	पुद्गलादि
५१५	१४	माहराजाणो	माहराजाना
५१६	२२	प्रनामा	पनिमा

५२२	९	वहंची	वहंची
,,	१२	कह्य	कह्यु
५२४	१९	पुद्गलनी	पुद्गलनी
५२५	२	प्रतिबिंबत	प्रतिबिंब ने
५२९	१७	स्थात	स्यात्
५३१	१	शरीर	शरीर
५३५	१	प्रर्याय	पर्याय
५३६	२५	हाय	होय
५३७	४	पंचेद्रिय	पंचेंद्रिय
५४४	२	कहा	कहो
५४७	१३	आवं	आवं
५४८	१२	सद्दणा	सद्दहणा
,,	२१	निगादिया	निगोदिया
५५२	५	वांटे	वींटे
५५६	५	अशुद्धापयोग	अशुद्धोपयोग
,,	१६	देचविरति	देशविरति
५६१	९	किंचित्	किंचित्
,,	१०	सम्मुखी	सन्मुखी
५६५	१०	कित	समकित
५६८	१८	प्रकृतिना	प्रकृतिनो
५६९	३	०पयागना	०पयोगना
५७३	२६	धणा	घणा
५७८	२	संमूच्छिम	संमूर्च्छिम
५८२	३	तिकल्प	विकल्प
५८३	२	ढुष्टे	ढूंटे
५८४	९	नोधम्मीया	नोधम्मीया
५९२	१४	तिहाथी	तिहांथी
५९६	१५	समुद्घात	समुद्घात
६००	१६	जोव	जीव
६०१	५	अव्यवहरा-	अव्यवहाररा-
६०८	२१	भागवतो	भोगवतो
६१०	१०	कोडीकोडाकोडी	कोडीकोडाकोडी कोडाकोडी

६१३	१६	घणीने	धणीने
६२३	८	तीव्रभाव	तीव्रभाव
६२७	१२	दाभाने	दोभाले
६२८	२०	ग्नेयं	ग्नेय
६३१	१७	सुबुद्धी	गुबुद्धी
६३२	५	छदो	छदे
,,	७	यते	वत
६३३	९	नात	नात्
,,	१६	मदनफभू	मदनफभ्
६३४	१४	यलो	यलो
,,	१६	यद्या	यद्यो
६३७	१२	पचागोने	पचागीने
६४१	१०	पयास्तिफ	पर्यायास्तिफ
६४३	१०	याइ	वाइ
,,	१७	तान	तान्
६४९	६	संयग्ग	संयग्ग
६४९	७	स्गा	स्गी
६५३	२०	प्रदेनाता	प्रदेशाता
६००	२	मद्दया	मदाया
६०७	२	यगा	गगी
६६१	८	थाल्पुद्गल	थाल्पुद्गल
६६४	१७	आ	औ
६६०	१०	ता	तो
६६०	३	अतिनमादिग	अतिक्रमादिग
६६७	५	नर	नर
६६८	२	त्ते	ते
,,	१३	पुद्गल	पुद्गल

कर्मग्रंथ.

अशुद्धि-शुद्धि पत्रकं.

पृष्ठ=पंक्ति,		अशुद्धि.	शुद्धि.
२६५	८	गणभृद्गौतमं	गणभृद्गौतम
,,	१२	वंदिव-वांदीन	वंदिय-वांदीने
,,	१६	च्त्रार	च्यार
,,	२१	भेअ	भेअ
२६६	१४	चउतिसय	चउतिसय
,,	२३	गुरु लघु	अगुरुलघु
,,	,,	अन्तराय	आठमो अन्तराय
२६७	१२	नाणा णि	नाणाणि
,,	१४	पूर्वक	पूर्वक
२६८	१	ज्ञानना	ज्ञाननी
,,	१९	संज्ञाश्रत	सज्ञीश्रुत
२७०	२	जाणवा १६	जाणवा पाहुड पाहुड श्रुत १५ पाहुड पाहुड समास श्रुत १६
२७०	१३	कहाये	कहीये
,,	२४	ज्ञाना	ज्ञानी
२७१	१६	चक्खु	चक्खु
२७२	११	ऊंधे	ऊंघे
,,	२२	आसाता	असाता
,,	२३	वेदयकर्म	वेदनीयकर्म
२७४	१४	भदंकरी	भेदंकरी
२७५	३	चारत्त	चरित्त
२८०	२	जस	जसं
,,	१६	मिळवा	मिळया
२८३	६	माहनी	मोहनी

३२६	४	मास	मोसा
"	९	स्थानकर्म	स्थानकर्म
३२७	३	अनाण	अन्नाण
३२९	१०	"	"
३३०	१२	ज्ञान	अज्ञान
"	१८	इगिदि	इगिंदि
३३१	१०	तिरि	तिरि
३३६	३	अनाण	अन्नाणं
३३७	४	दाय	दोय
३३७	१३	सव्विउव्वा	सविउव्वा
३३८	९	ाचना	विना
"	२२	मिछ	मिच्छ
३३९	१०	अनाण	अन्नाण
३४०	९	कमा	कम्मा
३४१	११	सक्का	सुक्का
३४३	१२	देश	देस
३४४	"	मिच्छं	मिच्छे
"	२१	निवृत्ति	अनिवृति
३४५	१४	विउवा	विउव्वा
३४७	२	जोगति	जोगत्ति
"	१२	पणःमिच्छ	पणमिच्छ
"	१३	हिसा	हिंसा
३४८	११	निवृत्ति	अनिवृत्ति
"	२३	वज्रऋषभ-	वज्रऋषभ-
३४९	३	मिथ्यात्वथा	मिथ्यात्वथी
३५१	५	पव्वुत्त	पुव्वुत्त
३५३	१७	औदायक	औदयिक
३५४	४	लद्धि	लद्धि
"	५	"	"
"	१६	क्षयापशमिक	क्षयोपशमिक
३५६	९	मिसो. घाइसु	मिसो चउघाइसु
"	१६	कममे	कर्ममें

३५८	१२	सरसव	सरसवे
३५९	१५	समुद्र	समुद्रे
३६१	१८	मध्यय	मध्यम
,,	१७	सगचत्ता	सजचत्ता
३६५	१७	विग्ध	विग्घ
३६६	१	दर्शनावरणी ४	दर्शनावरणी ९
,,	३	चार ४	नव ९
३६७	२०	०	अथिरनाम
३६८	६	बन्धा	बन्धी
,,	७	,,	,,
,,	८	निद्दोवधाय	निद्दो वधाय
,,	२४	वेयणिय	वेयणिय
३६९	१०	नीय	नीय
,,	१५	धुवसत्ता	धुवसत्ता
,,	,,	सम्मीस	सम्ममीस
,,	१६	अधुवसत्ता	अधुवसत्ता
३७१	३	माहनीनी	मोहनीनी
३७१	८	मासाइ	मीसाइ
,,	१३	हवे	होवे
३७७	७	प्रवेशोदय	प्रदेशोदय
,,	१२	अथिर १	अथिर १ शुभ १
,,	९	जोयतिग	ऊज्जोयतिग
३७८	५	भूगारा	भूयगारा
,,	६	अवत्तवा	अवत्तव्वो
३८१	११	य	हवे
३८०	९	जोपय	जोप य
,,	१०	तिसय	तिसियर
३८३	२	कापायिक	अकाषायिक
,,	१९	स्थित	स्थिति
३८४	७	मृदु, स्पर्श	मृदु, लघु, स्निग्ध, ऊष्ण, सुरभि गन्ध, सित-उजलो वर्ण,
,,	८	प छ प्रकृति	प सात प्रकृति

३८७	१९	कालोवण	कालोवर्ण
३९४	९	तया	तथा
"	१०	साद्	सादि
"	१५	अध्रव	अध्रुव
३९६	१८	अमणपत्ते	अमणपज्जे
३९७	१२	वे०	वेन्द्री
३९८	३	समकाती	समकीती
३९९	२१	असमत्त	अपजत्त इतिपाठान्तरं
४००	३	उत्कृ	उत्कृष्ट
"	२०	वृद्धि	वृद्धि
४०१	९	ठिइ	ठिइ
४०१	१२	वार्य	वीर्य
"	१४	"	"
४०२	२०	वांघी	वांधी
४०६	२	परमी	परमो
"	२१	अप्रीयाख्यान	अप्रत्याख्यान
"	२२	प्रीयाख्यान	प्रत्याख्यान
४०८	२१	पणिदि	पर्णिदि
४०९	९	वर्णादि ४	वर्णादि ४ तैजस चतुष्क ४
"	८	वइर	वइरं
४११	१४	वादर	वादर, पर्याप्त.
४१२	५	च्यार ४	×
"	१२	मोहनो ५	मोहनी
"	१३	प ३० नो	प ३८ नो
४१६	५	परमा-आनो	परमाणुआनो
४१७	५	पुतगले	पुद्गले
"	९	संक्तम्या	संक्रम्या
"	१८	रसवत	रसवंत
४१८	१	देशवाती	देशघाती
"	२	सर्वचाती	सर्वघाती
"	१६	गुंण	गुण

४१९	१३	निवारण	निराधरण
४२०	९	नव १०	१०
४२१	१३	नायरो	वायरा
,,	१४	परट्ठ	पग्ट्ठो
४२२	२	उरसाइ	उरलाइ
४२२	२३	थाजे	थाये
४२४	६	अपर्यामो	अपर्यातो
४२५	१६	सुदुभ	सुहुम
,,	१८	अप्रमोदी	अप्रमादी
४२८	११	कोध	क्रोध
४२९	९	स्रोवेद	स्रोवेद
,,	१८	ज्ञानावरणी	ज्ञानावरणी
४३०	३	प्रधरा	प्रनरा
४३०	५	सत्रार्थ	सूत्रार्थ

नोट—आ कर्मग्रन्थमा गाथाओनी उपर जे जे स्थानमा आकडाओ धया छे ते वधा पाठकोए ध्यानपूर्वक गणी शुद्ध करी लेवा।

शुद्धिपत्रकम्

पृष्ठ=पंक्ति,		अशुद्ध	शुद्ध
४३१	५	अहरकाए	अहरखाए
,,	६	गायम्मि	गोयमि
,,	,,	अटय	अट्ठय
,	,,	येअणोए	येअणिए
,,	९	पगठ	पगट्ठ
४३२	३	अणिछि	अणिस्यि
,,	७	अठेय	अट्ठेय

४३३	१	चउवीस	चउवीस
"	२	मिच्छे	मिच्छे
"	"	दुगिकम्मि	दुगिकंमि
"	५	इक्कारधेव	इक्कारसेव
"	७	मिछइ	मिच्छइ
४३५	३	वायरम्मि	वायरंमि
४३६	१	छवीन	छव्वीस
	२	छपणगं	छप्पणगं
"	५	अठवीम	अठ्ठवीस
"	"	छव्वीसं	छव्वीसं
"	८	पणांदि	पणिंदि
"	५	इगदग	इगदुग
४३७	५	अहरकाए	अहक्खाए
"	६-७	चउठ	चउठ्ठ
"	८	वंधठाणाणि	वंधठ्ठाणाणि
"	१६	वधठाणे	वंधठ्ठाणे
"	२४	विणुठ	विणुठ्ठ
"	"	छेवठो	छेवठ्ठो
"	२६	तीस	तीस
४३८	१६	नरसंन्नी	नरसन्नी
"	१८	असन्नी	असन्नी
"	१९	पवगं	खवगं
"	२२	असंन्नी	असन्नी
४३९	२	अहरकाय	अहक्खाय
४३९	४	वंधठाणाण	वंधठ्ठाणाण
"	५	तिग	तिग
४६५	५	खरयगच्छे	खरयरगच्छे
"	१३	युगक्वर	जुगवर
"	१७	नाणच्छं	नाणत्थं
"	२२		



॥ श्री सर्वज्ञायनमः ॥

॥ श्रीमद्पंडितश्रीदेवचन्द्रजीकृत ॥

आगमसार.



भव्यजीवने प्रतिबोधवा निमित्ते मोक्षमार्गनी रचनिका कहे छे. तिहां प्रथम जीव अनादिकालनो मिथ्यात्वी हतो ते काललब्धि पामीने त्रण करण करे छे तेना नाम-पहेलुं यथाप्रवृत्ति करण, बीजुं अपूर्व करण, अने त्रीजुं अनिवृत्ति करण.

तेमां पहेलुं यथाप्रवृत्ति करण कहे छे. १ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, ३ वेदनीय, ४ अंतराय, ए चार कर्मनी त्रीस
कोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति छे. तेमांथी ओगणत्रीस
योग्य [illegible] खपावे अने एक कोडाकोडी बाकी राखे, तथा
[illegible] गोत्रकर्म ए बे कर्मनी वीस कोडाकोडी सागरोप-
[illegible] तेमांथी ओगणीस खपावे अने एक कोडाकोडी
[illegible] कर्मनी स्थिति कोडाकोडी सागरोपमनी
[illegible] खपावे, बाकी एक कोडाकोडी
[illegible] आयुकर्म वर्जीने बाकी सात
[illegible] न्यून एक कोडाकोडी

रोपमनी स्थिति राखे, एवो जे वैराग्यरुप उदासी परिणाम तेने यथाप्रवृत्तिकरण कहीये. ए पहेलुं करण, सर्वसंज्ञी पंचेंद्रीजीव अनंतीवार करे छे.

हवे बीजुं अपूर्वकरण कहे छे. ते एक कोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति मांहेथी एक मुहूर्त्त अने अनादि मिथ्यात्व जे अनंतानुबंधीआनी चोकडी ते खपाववाने अज्ञान हेय ते छांडवुं, अने ज्ञान उपादेय एटले आदरवुं, ए वांच्छारूप अपूर्व कहेतां पहेलां क्यारे न आव्यो एवो जे परिणाम ते अपूर्व करण कहीये, ए बीजुं करण, ते समकित योग्य जीवने थाय.

हवे त्रीजुं अनिवृत्ति करण कहे छे. ते मुहूर्त्तरूप स्थिति खपावीने निर्मल शुद्ध समकित पामे, मिथ्यात्वनो उदय मटे त्यारे जीव उपशम समकित पामे, एवो जे परिणाम ते अनिवृत्ति करण कहिये. ए करण कीधाथी गंठीभेद थयो कहीये. उक्तंश्च आवश्यकनिर्युक्तौ ' जा गंठी ता पढमं। गंठीसमय छेओ भवेबीओ ॥ अनिअट्टिकरणं पुण । समत्तपुरक्खडेजीवे ॥ १ ॥ ऊसर देसं दड्डुलियं च । विज्जाइ वणदवो पप्प इय ॥ मिच्छत्तस्साणुदए। उवसमसम्मं लहइ जीवो ॥२॥ एम मिथ्यात्वने मळ्याथी जीव समकित पामे, ते समकितना बे भेद छे, एक व्यवहार समकित सद्दहणा, बीजुं निच्छे समकित सद्दहणा.

देवश्रीअरिहंत देवाधिदेव, अने गुरु ... अर्थ कहे ते, तथा धर्म केवलीनो प्ररुप्यो जे ...

तथा एक प्रत्यक्ष बीजुं परोक्ष ए बे प्रमाण, अने चार निक्षेपे करी सद्दहे, एवी सद्दहणा ते व्यवहार समकित कहिये. ए पुण्यनुं कारण तथा धर्म प्रगट करवानुं कारण छे एवी रुचि ज्ञानविना पण घणा जीवोने उपजे.

बीजु निश्चयसमकित ते आवी रीते जे निश्चय देव ते आपणोज आत्मा, जीव निष्पन्नस्वरुपी सिद्ध, ते संग्रहनयनीसत्तागवेषता, तथा निश्चयगुरु ते पण आपणो आत्माज तत्त्वरमणी, अने निश्चयधर्म ते आपणा जीवनो स्वभावज छे, एवी सद्दहणा ते मोक्षनुं कारण छे केमके जीव स्वरुप ओळख्या विना कर्म खपे नहीं एवी शुद्ध सद्दहणा ते निश्चयसमकित.

हवे ज्ञाननु स्वरुप कहे छे. ते ज्ञानना बे भेद छे एक व्यवहारज्ञान, बीजुं निश्चयज्ञान, तेमा अन्यमतिना सर्वशास्त्र जाणवा. अथवा जैनागममध्ये कह्या जे एक गणितानुयोग ते क्षेत्रमान, बीजो चरणकरणानुयोग ते क्रियाविधि, त्रीजो धर्मकथानुयोग ए त्रण अनुयोगनु जाणवापणु ते सर्व व्यवहारज्ञान छे. अथवा अन्तरउपयोगविना जे सूत्रना अर्थ करवा ते पण व्यवहारज्ञान कहिये

हवे निश्चयज्ञान ते छ द्रव्य तथा तेना गुण अने पर्याय सर्वने जाणे तेमा पाच अजीव द्रव्य छे ते हेय–कहेता छाडवा योग्य जाणी छांडवा, अने एक जीवद्रव्य ते निश्चयेकरी सिद्धसमान मोक्षमयी मोक्षनो जाणनार मोक्षनुं कारण मोक्षनो जावावालो मोक्षमाज रहे छे एहवो आपणो जीव अनतगुणी अरुपी छे तेनेज ध्यावे ते निश्चयज्ञान कहिये.

हवे एक धर्मास्तिकाय, बीजो अधर्मास्तिकाय, त्रीजो आकाशास्तिकाय, चोथो पुद्गलास्तिकाय,

अने छट्ठो काल ए छ द्रव्य शाश्वता छे. तेनुं ज्ञान कहे छे. ए छ द्रव्य मध्ये पांच अजीव द्रव्य छे अने एक जीव द्रव्य ते चेतनालक्षणवंत छे. उपादेय छे.

हवे छ द्रव्यना गुण कहे छे. पहेलो धर्मास्तिकायना चार गुण. एक अरुपी, वीजो अचेतन, त्रीजो अक्रिय, चोथो गतिसहायगुण. वीजा अधर्मास्तिकायना पण चार गुण छे. एक अरुपी, वीजो अचेतन त्रीजो अक्रिय, अने चोथो स्थितिसहायगुण. त्रीजा आकाशास्तिकायद्रव्यना चार गुण छे. एक अरुपी, वीजो अचेतन, त्रीजो अक्रिय, चोथो अवगाहनादानगुण. हवे कालद्रव्यना चार गुण कहे छे. एक अरुपी, वीजो अचेतन, त्रीजो अक्रिय, चोथो नवापुराणवर्त्तनालक्षण. हवे पुद्गलद्रव्यना चार गुण कहे छे. एक रुपी, वीजो अचेतन, त्रीजो सक्रिय, चोथो मिलणविखरणरुप पूरणगलन गुण. हवे जीवद्रव्यना चार गुण कहे छे. एक अनंतज्ञान, वीजो अनन्तदर्शन, त्रीजो अनन्तचारित्र, चोथो अनन्तवीर्य ए छ द्रव्यना गुण कह्या ते नित्यध्रुव छे.

हवे छ द्रव्यना पर्याय कहे छे. धर्मास्तिकायना चार पर्याय छे. एक खंध, वीजो देश, त्रीजो प्रदेश, चोथो अगुरुलघु. अधर्मास्तिकायना चार पर्याय. एक खंध, वीजो देश, त्रीजो प्रदेश, चोथो अगुरुलघु. पुद्गलद्रव्यना चार पर्याय. एक वर्ण, बीजो गंध, त्रीजो रस, चोथो स्पर्श अगुरुलघुसहित; तथा आकाशास्तिकायना चार पर्याय. एक खंध, बीजो देश, त्रीजो प्रदेश, चोथो अगुरुलघु. कालद्रव्यना चार पर्याय. एक अतीत काल, बीजो अनागत काल, त्रीजो वर्त्तमान काल, चोथो अगुरुलघु. अने जीव द्रव्यना चार पर्याय. एक अव्याबाध,

बीजो अनवगाह, त्रीजो अमूर्त्तिक, चोथो अगुरुलघु. ए छ द्रव्यना पर्याय कह्या.

हवे छ द्रव्यना गुणपर्यायनुं साधर्म्यपणुं कहे छे. अगुरु लघुपर्याय सर्वद्रव्यमां सरीखो छे अने अरूपीगुण पाच द्रव्यमां छे, एक पुद्गलद्रव्यमा नथी, तथा अचेतनगुण पांच द्रव्यमा छे. एक जीवद्रव्यमां नथी, अने सक्रियगुण जीव तथा पुद्गल ए बे द्रव्यमा छे. बाकी चार द्रव्यमा नथी, तथा चलणसहायगुण एक धर्मास्तिकायमा छे, बीजां पाच द्रव्यमां नथी, वली स्थिरसहायगुण एक अधर्मास्तिकायमां छे. बीजां पांच द्रव्यमां नथी अवगाहना गुण ते एक आकाशद्रव्यमा छे, बीजा पाच द्रव्यमा नथी, अने वर्तनागुण ते एक कालद्रव्यमाज छे, बीजां पाच द्रव्यमा नथी नेमज मिलणविखरणगुण ते पुद्गलमा छे, बीजा द्रव्यमा नथी तथा ज्ञान–चेतना गुण ते एक जीव द्रव्यमा छे, पण बीजा द्रव्यमां नथी ए मूलगुण कोइ द्रव्यना कोइ द्रव्यमा मिले नही. एक धर्म बीजो अधर्म, त्रीजो आकाश, ए त्रण द्रव्यना त्रण गुण तथा चार पर्याय सरिखा छे अने त्रण गुणे करी तो कालद्रव्य पण ए समान छे.

हवे वली अग्यार बोले करी छ द्रव्यना गुण जाणवाने गाथा कहे छे.

परिणामी जीव मुत्ता, सपएसा एग खित्त किरिआय । निच्च कारण कत्ता, सव्वगय इयर अंप्पवेसे । १ ।

अर्थ–निश्चयनयथी आप आपणा स्वभावे छ ए द्रव्य परिणामी छे अने व्यवहारनयथी जीव तथा पुद्गल ए बे द्रव्य

परिणामी छे तथा एक धर्म, बीजो अधर्म, त्रीजो आकाश अने चोथो काल, ए चार द्रव्य अपरिणामी छे. तथा छ द्रव्यमां एक जीव द्रव्य ते जीव छे, बीजां पांच द्रव्य अजीव छे तथा छ द्रव्यमां एक पुद्गल रूपी छे अने पांच द्रव्य अरूपी छे. छ द्रव्यमां पांच द्रव्य सप्रदेशी छे, अने एक काल द्रव्य अप्रदेशी छे तेमां एक धर्मास्तिकाय बीजो अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्य असंख्यात प्रदेशी छे अने एक आकाशद्रव्य अनंतप्रदेशी छे. जीव द्रव्य असंख्यात प्रदेशी छे, पुद्गलपरमाणु* अनंतप्रदेशी छे, परमाणुआ अनंता छे एम पांच द्रव्य सप्रदेशी छे अने छट्ठो काल अप्रदेशी छे.

छ द्रव्यमां एक धर्मास्तिकाय, बीजो अधर्मास्तिकाय, त्रीजो आकाशास्तिकाय ए त्रण ते एकेक द्रव्य छे, तथा एक जीव द्रव्य, बीजो पुद्गल द्रव्य, त्रीजो कालद्रव्य ए त्रण अनेक-अनेक छे, छ द्रव्यमां एक आकाशद्रव्य क्षेत्र छे, अने बीजां पांच द्रव्य क्षेत्री छे; निश्चयनयथी छ द्रव्य पोतपोताना कार्ये सदा प्रवर्त्ते छे माटे सक्रिय छे; अने व्यवहार नयथी जीव अने पुद्गल ए बे द्रव्य सक्रिय छे. तेमां पण पुद्गल सदा सक्रिय छे, अने जीव द्रव्य तो संसारी थको सक्रिय छे; पण सिद्धअवस्थाये थको संसारी क्रिया करवाने अक्रिय छे, तथा बाकीना चार द्रव्य तो अक्रिय छे, निश्चय नयथी छ द्रव्य नित्य छे, ध्रुव छे; अने उत्पादव्यये करी अनित्य पण छे. तथा व्यवहारनयें जीव अने पुद्गल ए बे द्रव्य अनित्य छे, बाकीना चार द्रव्य नित्य छे, यद्यपि उत्पादव्ययध्रुवपणे सर्व पदार्थ परिणमे छे तोपण एक धर्म, बीजो अधर्म, त्रीजो आकाश, चोथो काल, ए चार द्रव्य सदा अवस्थित छे ते माटे नित्य कह्यां.

*पुद्गलास्तिकायना स्कन्धो-पर्यायो अनन्तप्रदेशी छे.

छ द्रव्यमा एक जीव द्रव्य अकारण छे अने पांच द्रव्य कारण छे. केमके पांचे द्रव्य जीवने भोगमा आवे छे माटे कारण कहिये. धर्मास्तिकाय चालवामां साह्य आपे छे. अधर्मास्तिकाय थिर रहेवामा साह्य आपे छे. आकाशास्तिकाय अवकाश आपे छे पुद्गलास्तिकाय जीवने मधुरादि, सुरभिगंधादिक तथा सकोमल स्पर्शादिक भोगपणे थाय छे. तथा कालद्रव्य ते जीवने जरा, बाल, तारुण्य अवस्था दिए छे, तथा अनादि ससारी जीव भवस्थिति परिपाक थता एक अंतर्मुहूर्तकालमा सकलकर्म निर्जरी मोक्ष पहोचे तिहा सिद्ध अवस्थायें अनंतोकाल पर्यंत जीव अनता सुखने विलसे, माटे कालद्रव्य पण जीवने भोग थाय छे. पण एक जीव द्रव्य कोइने भोग आवतो नथी माटे अकारण कह्यु. अने पाच द्रव्य भोग आवे माटे कारण कह्या. तथा घणी प्रतोमा ता सक्षेपे एटलुं छे जे छ द्रव्यमा एक जीव द्रव्य कारण छे. पाच द्रव्य अकारण छे ए पण वात घणी रीते मळती छे. माटे जे बहुश्रुत कहे ते खरु "मारी धारणा प्रमाणे जीवद्रव्य कारण अने पाच द्रव्य अकारण एम समजे छे" निश्चयनयथी छए द्रव्य कर्त्ता छे अने व्यवहारनये एक जीवद्रव्य कर्त्ता छे. बाकी पांच द्रव्य अकर्त्ता छे. छ द्रव्यमा एक आकाशद्रव्य सर्वव्यापी, अने पाचद्रव्य लोक व्यापी छे. छए द्रव्य एक क्षेत्रमा एकठा रह्या छे पण एक बीजा साथे मळी जाय नहीं, ए छ द्रव्यनो विचार कर्यो

हवे एकेका द्रव्यमा एक नित्य, बीजो अनित्य, त्रीजो एक, चोथो अनेक, पाचमो सत्, छट्ठो असत्, सातमो वक्तव्य, आठमो अवक्तव्य ए आठ आठ पक्ष कहे छे.

धर्मास्तिकायना चार गुण नित्य छे तथा पर्यायमां धर्मास्तिकायनो एक खंध नित्य छे. बाकीना देश प्रदेश तथा अगुरुलघु पर्याय अनित्य छे. अधर्मास्तिकायना चार गुण तथा एक लोकप्रमाण खंध नित्य छे अने एक देश, बीजो प्रदेश, त्रीजो अगुरुलघु ए त्रण पर्याय अनित्य छे. तथा आकाशास्तिकायना चार गुण तथा लोकालोकप्रमाणखंध नित्य छे अने एक देश, बीजो प्रदेश, त्रीजो अगुरुलघु ए पर्याय अनित्य छे. तथा कालद्रव्यना चार गुण नित्य छे अने चार पर्याय अनित्य छे. पुद्गल द्रव्यना चार गुण नित्य अने चार पर्याय अनित्य छे. जीवद्रव्यना चार गुण तथा त्रण पर्याय नित्य छे अने एक अगुरुलघु पर्याय अनित्य छे. ए रीते नित्यानित्यपक्ष कह्यो.

हवे एक अनेकपक्ष कहे छे. एक धर्मास्तिकाय बीजो अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्यनो खंध लोकाकाशप्रमाण एक छे अने गुण अनेक छे, पर्यायअनन्ता छे, प्रदेश असंख्याता छे. तेणे करी अनेक छे, आकाशद्रव्यनो लोकालोकप्रमाणखंध एक छे अने गुण अनन्ता छे, पर्याय अनन्ता छे, प्रदेश अनन्ता छे माटे अनेक छे, कालद्रव्यनो वर्तनारुप गुण एक छे, गुण अनंता छे, पर्याय अनंता छे केमके समय अनन्ता छे. अतीत काले अनन्ता समय गया अने अनागतकाले अनन्ता समय आवशे तथा वर्त्तमानकाले समय एक छे माटे अनेक छे. पुद्गल द्रव्यना परमाणु अनन्ता छे ते एकेक परमाणुमां अनन्ता गुण पर्याय ते अनन्तपणु छे अने सर्व परमाणुमां पुद्गलपणु ते एकज छे माटे एक छे.

जीवद्रव्य अनंता छे. एकेका जीवमां प्रदेश असंख्याता छे. तथा गुण अनंता छे, पर्याय अनंता छे ते अनेकपणु छे

पण जीवितव्यपणु सर्वजीवनु एकसरीखुं छे माटे एकपणुं छे. इहां शिष्य पुछे छे जे सर्व जीव एक सरीखा छे तो मोक्षनाजीव सिद्ध परमानदमयी देखाय छे अने ससारीजीव कर्मवश पडया दु खी देखाय छे अने ते सर्व जुदा जुदा देखाय छे ते केम ? तेहने गुरु उत्तर कहे छे के निश्चयनये तो सर्व जीव सिद्ध समान छे माटेज सर्व जीव कर्म खपावीने सिद्ध थाय छे तेथी सर्व जीव सत्ताए एक सरखा छे.

फरि शिष्य पुछे छे के जो सर्व जीव सिद्ध समान कहो छो तो अभव्य जीव पण सिद्ध समान छे एम ठेरयु (ठर्युं) अने ते तो मोक्षे जता नथी, तेहने ए उत्तर जे अभव्यमां परावर्त धर्म नथी तेथी सिद्ध थता नथी माटे तेनो एहवोज स्वभाव छे जे मोक्षे जवुज नथी. अने भव्यजीवमा परावर्त्त धर्म छे माटे कारण सामग्री मिले पलटण पामे, गुणश्रेणि चढी मोक्ष करी सिद्ध थाय पण जीवना मुख्य आठ रुचक प्रदेश जे छे ते निश्चयनयथी भव्य तथा अभव्य सर्वना सिद्ध समान छे माटे सर्व जीवनी सत्ता एक सरखी छे केमके ए आठ प्रदेशने बिलकुल कर्म लागतां नथी ते " श्री आचारांग सूत्रनी श्री सिलागाचार्य कृत टीकाना लोकविजयाध्ययने प्रथमोद्देशके शाख छे तिहाथी सविस्तरपणे जोवु "

हवे सत् तथा असत् पक्ष कहे छे ए छ द्रव्य ते स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल अने स्वभावपणे सत् एटले छता छे अने परद्रव्य परक्षेत्र, परकाल तथा परभावपणे असत् एटले अछता छे तेनी रीत बतावयाने अर्थे छए द्रव्यना द्रव्य क्षेत्र काल भाव कहिये छैये

धर्मास्तिकायनो मूलगुण चलण सहाय पणो ते स्वद्रव्य

अधर्मास्तिकायनो मूलगुणस्थिति सहायपणो ते स्वद्रव्य, आकाशास्तिकायनो मूल गुण अवगाहपणो ते स्वद्रव्य, कालद्रव्यनो मूल गुण वर्त्तनालक्षणपणो ते स्वद्रव्य, तथा पुद्गलनो मूलगुण पुरणगलनपणो ते स्वद्रव्य अने जीवद्रव्यनो मूलगुण ज्ञानादिक चेतनालक्षणपणो ते स्वद्रव्य ए छद्रव्यनो स्वद्रव्यपणो कह्यो.

हवे स्वक्षेत्र ते द्रव्यनो प्रदेशपणो छे ते देखाडे छे. तिहां एकधर्मास्तिकाय, बीजो अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्यनो स्वक्षेत्र असंख्य प्रदेश छे अने आकाशद्रव्यनो स्वक्षेत्र अनंत प्रदेश छे. कालद्रव्यनो स्वक्षेत्र समय छे. पुद्गलद्रव्यनो स्वक्षेत्र एक परमाणु छे ते परमाणु अनंता छे. जीवद्रव्यनो स्वक्षेत्र एक जीवना असंख्याता प्रदेश छे

हवे स्वकाल ते छए द्रव्यमां अगुरुलघुनोज छे अने छ द्रव्यना पोतपोताना गुण पर्याय ते सर्व द्रव्यनो स्वभाव जाणवो. एटले धर्मास्तिकायमां पोतानाज द्रव्यक्षेत्र कालभाव छे पण बीजा पांच द्रव्यना नथी तथा अधर्मास्तिकाय द्रव्य मध्ये पण स्वद्रव्यादिक चार छे. पण बीजा पांच द्रव्यना नथी. एमज आकाशास्तिकायने विषे आकाशनाज स्वद्रव्यादिक चार छे पण बीजा पांचद्रव्यना नथी कालद्रव्यमां कालना द्रव्यादिक चार छे बीजा पांच द्रव्यना नथी अने पुद्गलना द्रव्यादिक चार ते पुद्गलमांज छे पण बीजा पांच द्रव्यना नथी तथा जीव द्रव्यना स्वद्रव्यादिक चार ते जीवमां छे पण बीजा पांच द्रव्यना नथी.

जे द्रव्य ते गुण पर्यायवंत, द्रव्यथी अभेदपर्याय होय ते द्रव्य कहिये, तथा स्वधर्मनो आधारवंतपणो ते क्षेत्र कहियें, अने उत्पाद व्ययनीवर्त्तना ते काल कहियें, तथा विशेष गुण परिण-

ति स्वभाव परिणति पर्याय प्रमुख ते स्वभाव कहियें. ए रीते ए द्रव्य स्वगुणे सत् छे अने परगुणे असत् छे.

हवे वक्तव्य तथा अवक्तव्य पक्ष कहे छे. ए छ द्रव्यमां अनता गुणपर्याय ते वक्तव्य एटले वचने कहेवा योग्य छे अने अनता गुणपर्याय ते अवक्तव्य एटले वचने कह्या जाय नहीं एवा छे. तिहा केवली भगवंते समस्त भाव दीठा तेने अनतमे भागे जे वक्तव्य एटले कहेवा योग्य हता ते कह्या वली तेनो अनतमो भाग श्रीगणधरे सूत्रमां गुथ्यो तेना असख्यातमे भागे हमणा आगम रह्या छे ए आठपक्ष कह्या.

इहां १ भेद स्वभाव, २ अभेदस्वभाव ३ भव्यस्वभाव. ४ अभव्यस्वभाव. ५ परमस्वभाव. ए पांच स्वभाव कहेवा. तेमां द्रव्यना सर्व धर्मने पोतपोताना स्वस्वकार्यने करवे करी भेद स्वभाव छे अने अवस्थानपणे अभेद स्वभाव छे अणपलटण स्वभावे अभव्य स्वभाव छे. तथा पलटण स्वभावे भव्य स्वभाव छे अने द्रव्यना सर्व धर्म ते विशेष धर्मने अनुयायीज परिणमे ते माटे ते परम स्वभाव कहियें ए सामान्य स्वभाव जाणवा.

हवे नित्य तथा अनित्य पक्षथी चौभगी उपनी ते कहे छे एक जेनी आदि नथी अने अत पण नथी ते अनादि अनंत पहेलो भागो, अने जेनी आदि नथी पण अंत छे ते अनादि सात बीजो भागो, तथा जेनी आदि पण छे अने अत एटले छेडो पण छे ते सादि सात त्रीजो भागो, वली जेहने आदि छे पण अंत नथी ते सादि अनत नामे चोथो भागो जाणवो.

हवे ए चार भागा छ द्रव्यमां फलावी देखाडे छे जीव द्रव्यमां ज्ञानादिक गुण ते अनादि अनंत छे नित्य छे अने भव्यजीवने कर्म साथे संबंध तथा ससारीपणानो आदि

नथी पण सिद्ध थाय तेवारे अंत आव्यो तेथी ए अनादि सांत भांगो छे, अने देवता तथा नारकी प्रमुखना भव करवा ते सादि सांत भांगो छे, अने जे जीव कर्म खपावी मोक्षे गया तेनी सिद्धपणे आदि छे अने पाछो संसारमां कोइ काले आववुं नथी माटे अंत नथी तेथी ए सादि अनंत भांगो छे. ए जीव द्रव्यमां चौभंगी कही. जीव द्रव्यना च्यार गुण अनादि अनंत छे जीवने कर्म साथे संयोग ते अनादि सांत छे कमके केवारे पण कर्म छुटे छे.

हवे धर्मास्तिकायमां चार गुण तथा खंधपणो ते अनादि अनंत छे अने अनादि सांत भांगो नथी तथा १ देश २ प्रदेश ३ अगुरुलघु ए सादि सांत भागो छे. तथा सिद्धना जीवमां धर्मास्तिकायना जे प्रदेश रह्या छे ते प्रदेश आश्रयीने सादि अनंत भांगो छे एवीज रीते अधर्मास्तिकायमां पण चौभंगी जाणवी अने आकाश द्रव्यमां गुण तथा खंध अनादि अनंत छे बीजो भांगो नथी अने १ देश २ प्रदेश तथा ३ अगुरुलघु सादि सांत छे तथा सिद्धना जीवनी साथे संबंध ते सादि अनंत छे.

पुद्गल द्रव्यमां गुण अनादि अनंत छे. जीव पुद्गलनो संबन्ध अभव्यने अनादि अनंत छे.+ भव्य जीवने अनादि सांत छे पुद्गलना खंध सर्व सादि सांत छे जे खंध बांध्या ते स्थिति प्रमाणे रही खरे छे वली नवा बंधाय छे माटे सादि अनंत भांगो पुद्गलमां नथी.

कालद्रव्यमां गुण चार अनादि अनंत छे, पर्यायमां अतीतकाल अनादि सांत छे अने वर्तमानकाल सादि सांत छे; अनागतकाल सादि अनंत छे. ए कालनुं स्वरूप ते सर्व उपचारथी छे. ए रीते कालद्रव्यमां चौभंगी कही.

+प्रसंततिपणे जाणजो-आ शब्दो जुनी प्रतमां छे.

हवे द्रव्य क्षेत्र काल तथा भावमां चौभंगी कहे छे. जीव द्रव्यमां स्वद्रव्यथी ज्ञानादिक गुण ते अनादि अनत छे. स्वक्षेत्रे जीवना प्रदेश असंख्याता छे ते सादि सांत छे तम्रोदक उद्वर्त्तनापणे फरे छे ते माटे, अथवा अवगाहना माटे सादि सात छे पण छतीपणे तो अनादि अनत छे, स्वकाल अगुरु लघुने गुणे अनादि अनंत छे अने अगुरु लघु गुणनो उपजवो तथा विणशवो ते सादि सात छे. तथा स्वभाव (सर्व भाव) गुण पर्याय ते अनादि अनत छे अने भेदान्तरे अगुरुलघु ते सादि सात छे.

धर्मास्तिकायमा स्वद्रव्य जे चलण सहाय गुण ते अनादि अनत छे अने स्वक्षेत्र असंख्यात प्रदेश लोक प्रमाण छे ते अवगाहनापणे सादि सात छे स्वकाल ते अगुरुलघु गुणे करी अनादि अनंत छे अने उत्पाद व्यय ते सादि सात छे स्वभाव ते चार गुण अगुरुलघु अनादि अनंत छे १ खंध २ देश ३ प्रदेश ते अवगाहनाने प्रमाणे सादि सात छे एम अधर्मास्तिकायना पण द्रव्यादि चार भागा जाणवा तथा आकाशास्तिकायमा स्वद्रव्य अवगाहनादान गुण ते अनादि अनंत छे अने स्वक्षेत्र लोकालोक प्रमाण अनंत प्रदेश ते अनादि अनंत छे. स्वकाल ते अगुरुलघुगुण सर्वथापणे अनादि अनंत छे अने उपजने तथा विणसवे सादि सात छे स्वभावते चार गुण तथा खंध अने अगुरुलघु ते अनादि अनत छे तथा देश प्रदेश ते सादि सात छे ते आकाश द्रव्यना बे भेद छे एक चौदराज लोकनो खध लोकाकाश ते सादि सात छे बीजो अलोकाकाशनो खध ते सादि अनत छे.*

---

* चउदराज लोकनो खध लोकाकाश सादि सात छे ते आवी रीते जे लोकना मध्यभागे आठ रुचक प्रदेशथी मांडीने

काल द्रव्यमां स्वद्रव्य जे नवा पुराणवर्त्तना गुण ते अनादि अनंत छे स्वक्षेत्र समय (काल) ते सादि सांत छे केमके वर्तमान समय एक छे ते माटे, तथा स्वकाल ते अनादि अनंत छे. स्वभाव ते गुण चार अने अगुरुलघु अनादि अनंत छे. अतीत काल अनादि सांत छे वर्तमानकाल सादि सांत छे अनागत काल सादि अनंत छे.

पुद्गल द्रव्यमां स्वद्रव्य ते द्रव्यपणे जे पूरणगलन धर्म ते अनादि अनन्त छे अने स्वक्षेत्र परमाणु ते सादि सांत छे. स्वकाल स्थिति अगुरुलघु गुण ते अनादि अनंत छे. अगुरु-लघुनो उपजवो विणसवो ते सादि सांत छे. स्वभावते गुण चार अनादि अनंत छे. वर्णादि पर्याय चार एटले वर्ण गंध रस स्पर्श ते सादि सांत छे. ए द्रव्यादि चारमां चौभंगी कही.

हवे छ द्रव्यना संबंन्ध आश्री चौभंगी कहे छे, तिहां प्रथम आकाश द्रव्य छे तेमां अलोकाकाशमां कोइ द्रव्य नथी अने लोकाकाशमां छ द्रव्य छे, तिहां लोकाकाश द्रव्य तथा बीजुं धर्मास्तिकाय द्रव्य अने त्रीजुं अधर्मास्तिकाय द्रव्य ते अनादि अनंत संबंधी छे जे लोकाकाशना एकेक प्रदेशमां धर्म द्रव्य तथा अधर्म द्रव्यनो एकेक प्रदेश रह्यो छे ते पण किवारे विछडशे नहीं माटे अनादि अनंत संबंधी छे. आकाश खेत्र लोक सर्व अने जीव द्रव्यनो अनादि अनंत संबंध छे, अने संसारी जीव कर्म सहित तथा लोकना प्रदेशनो सादि सांत संबन्ध छे. लोकांत सिद्धक्षेत्रना सिद्ध जीवोनो आकाश

सादि छे जिहां चउदराज लोकनो अंत आवे तिहां सांत तथा चउदराज लोकनो छेलो प्रदेश मूकीने पछे अलोकनी आदि लेषी पण अलोकनो अंत नथी माटे सादि अनंत कह्युं छे.

प्रदेश साथे सादि अनत सवन्ध छे, लोकाकाश अने पुद्गल द्रव्यनो अनादि अनंत संवन्ध छे, आकाश प्रदेशनी साथे पुद्गल परमाणुनो सादि सात सवन्ध छे. एम आकाश द्रव्यनी परे धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकायनो पण सर्व सवन्ध जाणवो. जीव अने पुद्गलना सवन्धमा अभव्य जीवने पुद्गलनो अनादि अनंत संवन्ध छे, केमके अभव्य जीवनां कर्म किवारें खपशे नहीं माटे, अने भव्य जीवने कर्मनु लागवु अनादि कालनु छे पण ते किवारेक छुटशे माटे भव्य जीवने पुद्गल संबंध अनादि सांत छे. तथा निश्चयनयेकरी छ द्रव्य स्वभाव परिणाम परिणम्या छे ते परिणामीपणो सदा शाश्वतो छे ते माटे अनादि अनंत छे अने जीव तथा पुद्गल बेहु द्रव्य मली बंध भाव पामे छे ते पर परिणामीपणो छे ते परपरिणामिपणो अभव्य जीवने अनादि अनंत छे अने भव्यजीवने अनादि सात छे अने पुद्गलनो परिणामीपणो ते सत्ताये अनादि अनंत छे अने पुद्गलनो मिलवो विछडवो ते सादि सात छे एटले जीव द्रव्य पुद्गल साथे मिल्यो सक्रिय छे अने पुद्गल कर्मथी रहित थाय तेवारें जीव द्रव्य अक्रिय छे अने पुद्गल द्रव्य सदा स[illegible] य छे.

हवे एक, अनेक—पक्षथी निश्चय ज्ञान कहेवाने नय कहे छे, सर्व द्रव्यमा अनेक स्वभाव छे, ते एक वचनथी कह्या जाय नहीं माटे मांहोमाहे नये करी संक्षेपपणे कहे छे, तिहा मूल नयना बे भेद छे, एक द्रव्यार्थिक बीजो पर्यायार्थिक, तेमा उत्पाद व्यय पर्याय गौणपणे अने प्रधानपणे द्रव्यनो गुण सत्ताने ग्रहे ते द्रव्यार्थिक नय कहियें तेना दश भेद छे १ सर्व द्रव्य नित्य छे ते नित्य द्रव्यार्थिक २ अगुरुलघु अने क्षेत्रनी अपेक्षा न

करे मूल गुणने पिंडपणे ग्रहे ते एक द्रव्यार्थिक ३ ज्ञानादिक गुणे सर्व जीव एक सरीखा छे माटे सर्वने एक जीव कहे, सद्द्रव्यादिकने ग्रहे ते सत् द्रव्यार्थिक, जेम स-त्लक्षणं द्रव्यं ४ द्रव्यमां कहेना योग्य गुण अंगीकार करे ते वक्तव्य द्रव्यार्थिक ५ आत्माने अज्ञानी कहेवो ते अशुद्ध द्रव्यार्थिक ६ सर्व द्रव्य गुण पर्याय सहित छे एम कहेवुं ते अन्वय द्रव्यार्थिक ७ सर्व जीव द्रव्यनी मूल सत्ता एक छे ते परमद्रव्यार्थिक नय ८ सर्व जीवना आठ प्रदेश निर्मल छे ते शुद्ध द्रव्यार्थिक नय ९ सर्व जीवना असंख्यात प्रदेश एक सरीखा छे ते सत्ता द्रव्यार्थिक नय, १० गुणगुणी द्रव्य एक छे ते परमभावग्राहक द्रव्यार्थिक. जेम आत्मा ज्ञानरूप छे; इत्यादिक ए द्रव्यार्थिक नयना दश भेद कह्या.

हवे पर्यायार्थिक नयना छ भेद कहे छे. जे पर्यायने ग्रहे ते पर्यायार्थिक नय कहिये, तेना छ भेद छे १ द्रव्य पर्याय ते जीवने भव्यपणुं तथा सिद्धपणु कहेवुं, २ द्रव्य व्यंजन पर्याय ते द्रव्यनुं प्रदेशमान, ३ गुण पर्याय जे एक गुणथी अनेकता थाय जेम धर्माधर्मादिद्रव्य पोताना चलण सहकारादि गुणथी अनेक जीव तथा पुद्गलने सहाय करे, ४ गुण व्यंजन पर्याय जे एक गुणना घणा भेद छे ५ स्वभाव पर्याय ते अगुरुलघु पर्यायथी जाणवो. ए पांच पर्याय सर्व द्रव्यमां छे अने छट्ठो विभाव पर्याय ते जीव पुद्गल ए बे द्रव्यमां छे. तिहां जीव जे चार गतिना नवा नवा भव करे ते जीवमां विभाव पर्याय तथा पुद्गलमां खंधपणुं ते विभाव पर्याय जाणवो.

हवे पर्यायना बीजा छ भेद कहे छे १ अनादि नित्य पर्याय ते जेम पुद्गल द्रव्यनो मेरु प्रमुख, २ सादि नित्य पर्याय

ते जीव द्रव्यनुं सिद्धपणु, ३ अनित्य पर्याय ते समय समयमा द्रव्य उपजे विणशे छे, ४ अशुद्ध अनित्य पर्याय ते जन्ममरण थाय छे तेणे करी कहेवु, ५ उपाधि पर्याय ते कर्म संबंध, ६ शुद्ध पर्याय जे मुल पर्याय सर्व द्रव्यना एक सरीखा छे ए पर्यायार्थिकनुं स्वरूप कह्यु.

हवे सात नय कहे छे १ नैगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजु सूत्र, ५ शब्द, ६ समभिरूढ, ७ एवंभूत–ए सात नयनां नाम जाणवा. तेमा पहेलो नैगम नय कहे छे. नथी एक गमो ते नैगम कहियें गुणनो एक अंश उपन्यो होय तो नेगमनय कहीये दृष्टान्त जेम कोइक मनुष्यने पाली लाववानो मन थयो, ते वारे जंगलमां लाकडु लेवा चाल्यो. रस्तामा कोइक मनुष्य मल्यो तेणे पुछ्युं तु क्यां जाय छे, तेवारे तेणे कह्यु जे पाली लेवा जाउ छु. ते पाली तो हजी घडी नथी पण मनमा चिंतवी ते थइ एम गण्युं, तेम नैगम नय सर्व जीवने सिद्ध समान कहे, केमके सर्व जीवना आठ रुचक प्रदेश निर्मल सिद्ध रूप छे तेथी एक अंशे सिद्ध छे ते माटे सिद्ध समान सर्व जीव कह्या. ते नैगम नयना त्रण भेद छे १ अतीत नैगम २ अनागत नैगम ३ वर्तमान नैगम, ए नैगम नय कह्यो

हवे संग्रह नय कहे छे. सत्तग्रह ते संग्रह जे एक नाम लीधाथी सर्व गुण पर्याय परिवार सहित आवे ते संग्रह नय जाणवो तेनो दृष्टांत–जेम कोइक मनुष्ये प्रभाते दातण करवाने अर्थ पोताना घरना बारणे बेसीने चाकर पुरुषने कह्यु जे दातण लइ आवो, ते वारे ते चाकर मनुष्य पाणीनो लोटो तथा रुमाल अने दातण एम सर्व चीज लइ आव्यो हवे शेठे तो एक दातण नाम लइने मगाव्यु हतुं पण सर्वनो संग्रह करी

चाकर लइ आव्यो. तेमज द्रव्य एवुं नाम कह्युं तो द्रव्यना गुण पर्याय सर्व आव्या. ए संग्रह नयना वे भेद छे. एक जे द्रव्यपणो सामान्यपणे बोलतां जीव तथा अजीव द्रव्यनो भेद पड्यो नही ते पहेलो सामान्य संग्रह, तथा बीजो विशेषपनाने अंगीकार करे छे, जे जीव द्रव्य एम कह्युं तो अजीव सर्व टल्या ते विशेष संग्रह.

हवे व्यवहार नय कहे छे. जे बाह्यस्वरूप देखीनें भेदनी वेंहचण करे अने जे बाहेर देखता गुणनेज माने पण अंतरंग सत्ता न माने. एटले ए नयमां आचार क्रिया मुख्य छे. अंतरंग परिणामनो उपयोग नथी केमके नैगम तथा संग्रह नय ते ज्ञान रूप ध्यानना परिणाम विना अंश तथा सत्ता ग्राही छे, तेम इहां करणी मुख्य छे ते व्यवहारनये (पणे) जीवनी व्यवस्था अनेक प्रकारे छे, तिहां नैगम तथा संग्रह नये करी सर्व जीव सत्तायें एक रूप छे पण व्यवहार नयथी जीवना वे भेद छे. एक सिद्ध, बीजा संसारी. ते वली संसारी जीवना वे भेद छे. एक अयोगी चौदमा गुणठाणावाला तथा बीजा सयोगी. सयोगीना वे भेद एक केवली बीजा छद्मस्थ. छद्मस्थना वे भेद, एक क्षीण मोही बारमा गुणठाणे वर्त्तता मोहनीय कर्म खपाव्युं ते, बीजा उपशान्त मोही. उपशान्त मोहीना वली वे भेद, एक अकषायी इग्यारमा गुणठाणाना जीव; बीजा सकषायी. सकषायीना वे भेद छे. एक सूक्ष्म कषायी दशमा गुणठाणाना जीव; बीजा बादर कषायी. तेना वली वे भेद छे. एक श्रेणि प्रतिपन्न, बीजा श्रेणि रहित. ते श्रेणीरहितना वे भेद. एक अप्रमादी बीजा प्रमादी प्रमादीना वे भेद. एक सर्वविरति परिणामि बीजा देश विरति, देश विरतिना वे भेद, एक विरति परिणामि अने बीजा अविरति

परिणामि, अविरतिना बे भेद एक अविरति समकीति, बीजा अविरति मिथ्यात्वी. ते मिथ्यात्वीना बे भेद, एक भव्य बीजा अभव्य, ते भव्यना बे भेद एक ग्रंथिभेदी बीजा ग्रथि अभेदी (अभेद ग्रन्थी) एवी रीते जे जीव जेवो देखाय तेने तेवो माने ए व्यवहार नय छे, एमज पुद्गलना भेद करवा ते कहे छे, पुद्गल द्रव्यना बे भेद छे, एक परमाणु बीजो खंध, खंधना बे भेद एक जीवने लाग्या ते जीव सहित, बीजा जीव रहित ते घडो प्रमुख अजीवनो खध, हवे जीव सहित खधना बे भेद छे एक सूक्ष्म खंध बीजो बादर खंध.

इहां वर्गणानो विचार लखीये छीये, तिहा पुद्गलनी वर्गणा आठ छे १ औदारिक वर्गणा २ वैक्रिय वर्गणा ३ आहारक वर्गणा ४ तैजस वर्गणा ५ भाषा वर्गणा ६ श्वासोच्छ्वास वर्गणा ७ मनोवर्गणा ८ कार्मण वर्गणा—ए आठ वर्गणाना नाम कह्या. बे परमाणु मेला थाय त्यार द्व्यणुकखध कहेवाय, त्रण परमाणु मेला थाय ते वारे त्र्यणुकखध थाय एम संख्याता परमाणु मिले सख्याताणुकखंध थाय, तेमज असख्याते असख्याताणुकखंध थाय. तथा अनता परमाणु मिले अनताणुकखंध थाय. ए खंध ते सर्व जीवने अग्रहण योग्य छे, अने जे वारे अभव्यथी अनतगुण अधिक परमाणु मेला थाय ते वारे औदारिक शरीरने लेवा योग्य वर्गणा थाय.

एमज औदारिकथी अनन्तगुणा अधिक वर्गणाना दल मेला थाय ते वारे वैक्रिय वर्गणा थाय, वली वैक्रिय थकी अनन्तगुणा परमाणु मिले ते वारे आहारक वर्गणा थाय एम सर्व वर्गणाना एकेकथी अनन्तगुणा अधिक परमाणु मिले तेवारे ते वर्गणा थाय, एटले पहलीथी बीजी वर्गणा. बीजीथी त्रीजी एम सातमी

मनोवर्गणाथी आठमी कार्मण वर्गणामां अनन्त गुण परमाणु अधिक छे. इहां १ औदारिक, २ वैक्रिय, ३ आहारक, ४ तैजस ए चार वर्गणा बादर छे तेमां पांच वर्ण–बे गन्ध–पांच रस, आठ स्पर्श ए वीस गुण छे, तथा १ भाषा २ श्वासोच्छ्वास ३ मन ४ कार्मण ए चार वर्गणा सूक्ष्म छे एमां पांच वर्ण बे गन्ध, पांच रस–चार स्पर्श–ए सोल गुण छे अने एक परमाणुमां एक वर्ण–एक गन्ध–एक रस–बे स्पर्श ए पांच गुण छे. एम पुद्गल खंधना अनेक भेद छे.

ए व्यवहार नयना छ भेद छे. १ शुद्ध व्यवहार ते आगला गुणठाणानुं छोडवुं अने उपरना गुणठाणानुं ग्रहण करवुं अथवा ज्ञान दर्शन–चारित्र गुण ते निश्चयनये एक रूप छे. पण ते शिष्यने समजाववाने जूदा जूदा भेद कहेवा ते शुद्ध व्यवहार छे. २ जीवमां अज्ञान राग द्वेष लाग्या छे ते अशुद्धपणुं छे माटे अशुद्ध व्यवहार. ३ जे पुण्यनी क्रिया करवी ते शुभ व्यवहार. ४ जे थकी जीव पापरूप अशुभ कर्म करे ते अशुभ व्यवहार. ५ धन–घर–कुटुम्ब प्रत्यक्ष सर्व आपणाथी जुदा जुदा छे पण जीवें अज्ञानपणे आपणा करी जाण्या छे ते उपचरित व्यवहार. ६ शरीरादिक परवस्तु यद्यपि जीवथी जुदी छे तोपण परिणामिकभाव लोलीपणे एकठी मिली रही छे तेने जीव आपणी करी जाणे छे ते अनुपचरित व्यवहारनय जाणवो. ए व्यवहार नय कह्यो.

हवे ऋजु सूत्र नयनो विचार कहे छे. जे अतीत काल अने अनागत कालनी अपेक्षा न करे पण वर्त्तमान काले जे वस्तु जेवा गुण परिणामे वर्ते ते वस्तुने तेवेज परिणामे माने माटे ए नय परिणामग्राही छे. जेम कोइक जीव गृहस्थ छे पण

अंतरंग साधुसमान परिणाम छे तो ते जीवने साधु कहे, अने कोइक जीव साधुने वेपे छे पण मनना परिणाम विपयाभिलाप सहित छे तो ते जीव अव्रतीज छे एम ऋजु सूत्रनुं मानवु छे, ते ऋजु सूत्रना बे भेद छे, एक सूक्ष्म ऋजु सूत्र ते एम कहे जे सदाकाल सर्व वस्तुमा एक वर्तमान समय वर्ते छे एटले जे जीव गया काले अज्ञानी हतो अने अनागत काले अज्ञानी भावे अ-ज्ञानी थशे एम बेहु कालनी अपेक्षा न करे पण एक वर्त्तमान समये जे जेवो तेने तेजो कहे ते सूक्ष्म ऋजुसूत्र कहियें अने महोटा बाह्य परिणाम ग्रहे ते स्थूल ऋजु सूत्र नय जाणवो एटले रुजु सूत्र नय कह्यो,

हवे शब्दनय कहे छे, जे वस्तु गुणवंत अथवा निर्गुण ते वस्तुने नाम कही बोलावियें जे भाषा वर्गणाथी शब्द पर्णे वचन गोचर थाय ते शब्दनय जे कारणे अरूपी द्रव्य वचनथी कह्या जाय नहीं पण वचनथी कहेवा ते शब्दनय कहियें, इहा जे शब्दनो अर्थ होय ते पणे जे वस्तुमा वस्तु पणे पामियें ते वारे ते वस्तु शब्दनय कहियें जेम घटनी चेष्टाने करतो होय ते घट, ए शब्दनयमा व्याकरणथी नीपना अने बीजापण सर्व शब्द लीधा ते शब्दनयना चार भेद छे, १ नाम २ स्थापना ३ द्रव्य ४ भाव चार निक्षेपाना पण एहिज नाम छे,

१ पहेलो नाम निक्षेपो ते आकार तथा गुण रहित वस्तुने नाम करी बोलाववो, जे एक लाकडीनो कटको लेइने कोइके तेहने जीव एवुं नाम कह्यु ते नाम जीव जाणवु, जेम काली दोरीने सापनी बुद्धियें करी हणे तेहने सापनी हिंसा लागे ए नाम सर्प थयु, एवीज रीते नाम तप अथवा नाम सिद्ध जेम वड प्रमुखने सिद्धवड एम कही बोलावे छे ते नाम निक्षेपो

कहियें ए सूत्र साखें छे.

२ स्थापना निक्षेपो कहे छे. जे कोइक वस्तुमां कोइक वस्तुनो आकार देखीने तेहने ते वस्तु कहे जेम चित्रामण अथ-वा काष्ट पापाणनी मूर्त्ति तेने घोडा–हाथीनो आकार छे तो ते घोडा हाथी कहेवाय ते स्थापना जाणवी. ए स्थापना निक्षेपो नाम निक्षेपें सहित होय जेम स्थापना सिद्ध जिन प्रतिमा प्रमुख ते सद्भाव स्थापना पण होय अने असद्भाव स्थापना पण होय. अकृत्रिम जिन प्रतिमा ते नन्दीश्वरद्वीप प्रमुखने विषे अने जेह इहांनी जिन प्रतिमा ते कृत्रिम, ते सर्व स्थापना जाणवी. जेम चित्रामनी स्त्री जिहां मांडी होय तिहां साधु रहे नहीं. कारण के स्थापना स्त्री छे ते स्त्री तुल्य जाणवी. तेमज जिन प्रतिमा जिन समान जाणवी. इहां कोइक अज्ञानी जीव कहे छे जे, स्थापनामां ज्ञानादि गुण नथी तेथी स्थापनाने मानवी पूजवी नहीं, तेने उत्तर कहे छे के स्थापना रूप स्त्रीमां स्त्रीपणाना गुण नथी तो पण ते विकारनुं कारण थाय छे. तेमज जिनप्रतिमा पण ध्याननुं कारण छे. अने जे एम पुछे के हिंसा थाय छे अने भगवन्ते तो दयाने धर्म कह्यो छे तेहने एम कहेवुं जे परदेशी राजा केसी गुरुने वांदवाने अर्थे बीजे दीवसे मोहोटा आडम्बरथी आव्यो ते वन्दनामां हिंसा थइ पण लाभ कारण गणतां त्रोटो न थयो. बीजो मल्लिनाथजीयें छ मित्र प्रतिबोधवाने पुतलीनो दृष्टान्त कह्यो, ते हिंसा तो घणी थइ पण ते लाभना कारणमां गणी छे एम भाव शुद्ध होय तिहां हिंसा लागती नथी, अथवा कोइक एम कहे छे जे अमे आपणे स्थानके बेठा नमुथ्थुणं कहिशुं अमने लाभ थाशे ते खरो पण भगवती सूत्रमां भग-वानने वंदनाने अधिकारे तो तिहां जइ वंदना करवानुं फल

मोटुं कह्युं छे तथा निक्षेपाने अधिकारें कह्यु जे भाव निक्षेपो एकलो थाय नही पण नाम स्थापना तथा द्रव्य ए त्रण मिल्या भाव निक्षेपो थाय माटे स्थापना अवश्य मानवी हवे जे स्थापना न माने तेने कहियें जे चित्रामनी मूर्त्ति ते हिंसाना परिणामथी फाडे तेहने हिंसा लागे छे तेमज जिनवरना ध्याने जिनप्रतिमा पूजता लाभ थाय छे एम युक्ति करता तथा आगमनी साखे पण जिन प्रतिमाने जिन समान माने ते आराधक अने जे जिन प्रतिमाने न माने तेणे स्थापना निक्षेपो उथाप्यो अने स्थापना उथापी तो द्रव्य तथा भाव निक्षेपो स्थापना विना थाय नही माटे द्रव्य तथा भाव पण उथाप्यो एम त्रण निक्षेपा उथाप्या ते वारें सिद्धान्त उथाप्याज माटे जे जिनप्रतिमाने नही माने ते विराधक जाणवो तथा कोइ पूछे जे प्रतिमानी पूजा तो पहेला आस्रव मध्ये लखी छे तेने कहीये जे तुम्हे मृषावाद बोलो छो, इहा प्रश्न व्याकरण सूत्रमां पाठ इम छे नही. तिहा पाठ छे ते लिखीये छे ॥ अविजाणओ परिजाणओ विसयहेउ इमेहिं कारणेहि किं ते करीसण पारकरणी वा विवप्पणीकूवसरतलाग चितिवेति खाति आराम विहार, थूभ पागार, दार गोपूर अट्टालगचरीय सेतुसंकमपासायविकप्पभवणघरसरणिलेणआवणचेइयदेवकुलचित्तसभाएवाआयतणवसई भूमिघरमडयाणकएहींसंति—इहा पांच थाउरना पाच आलावा छे तेहने छेडे कोहा, माणा, माया, लोभा, हिंसा, रती इत्यादि पाठ छे ते जे जीव इंद्रीना स्वादने माटे चेईअ कहेता प्रतिमादिक करे ते आश्रव खाते ए पाठ छे पण पूजानो पाठ नथी ते मृषा स्यें (शा माटे) बोलो छो, तथा प्रश्न व्याकरण सूत्रे बीजे संवरद्वारे जे आलावो छे ते लिखीये छे, खवगयवत्ति आयरीय उवज्झाय सेह साहमीए तवसि सिस वुड्ढ कुल गण सय चेईयट्ठे

निज्झरटी वेयावच्चं अणस्सीओद्दसविहंवहुविहंकरेइ-ए आलावे आचारज प्रमुखचेईय कहेतां जिनप्रतिमानो वेयावच्च करे निज्झराना अर्थी अणस्सीओ कहेतां जस कीर्तिनी वांछा रहितथको वेयावच्च दश प्रकार तथा अनेक प्रकारनो करे, इहां चेईय कहेतां प्रतिमा छे तो खोटी कल्पना स्यामाटे करोछो? तथा बीजे प्रश्ने पूछयो जे अहिंसानां ६० नाम कह्यां छे, अभओसव्वस्सविअनाघाओचुरकाय वित्तीपृया विमलप्पभा निम्मलकरीत्ति एव माइणीनियगुणनिम्मियाइं पज्जयनामाणिहूंतिअहिंसाए ॥ तिहां प्रतिमा तथा पूजानो नाम नथी तेहनो उत्तर, तिहां अहिंसानो नाम जाणो. तेहनो अर्थ देवपूजा छे. पूजा एहवो दयानो नाम छे तो अजाण्यो इम स्यें प्ररुपणा करो छो? बीजुं पूजातो श्रीअरिहंत प्रतिमानी तेतो विनय तथा वैयावच्च ते अभ्यंतर तपना भेद छे ते तप मोक्षनो मार्ग छे. श्रीउत्तराध्ययन सूत्रे २८ मे अध्ययने तपने मोक्षनां च्यार कारण कह्यां ते मध्ये गण्यो छे. तथा ते पछी पुछयो जे बोलनी खबर न हवे ते विचारी बोलीये. तथा श्रावके कोणे देहरां कराव्यां? तथा प्रतिमा पूजी! तेहनो उत्तर श्रीसमवायांगसूत्रे तथा नंदीसूत्रे सर्व आगमनो नूंध छे ते मध्ये ए पाठ छे तिहां उपासकदशानो नोंध छे ते आलावा छे ते लखीए छे. सेकिंते उवासगदसाओ उवासगदसासूणं समणोवासगाणं नगराईउज्झाणाइं चेइआइं वणसंडाइं समोसरणाइं रायाणोअम्मापियरो धम्मायरिया धम्मकहाओ इहलोइया पारलोईया इढिविसेसा भोगापरीआड-सुअपरिग्गहीआ तवोवहाणाइसीलवयगुणवेरमणपच्चख्खाणपोसहोववासपडिवज्जणापडिमाओ उवसग्गसंलिहणाओ भत्तपच्चख्खाणइयाउवगमणं देवलोगगमणं सुकुलपच्चायापुणबोहिलाभो अंतकिरीयाआघरिज्झंति ए पाठ छे. इहां चेयाइशब्द

देहरा तथा जिन प्रतिमा जाणज्यो. इहां चेइय एहनो अर्थ बीजो थाय नही, जे वननो अर्थ करे तेतो उद्यान-वनखंडनो पाठ जूदो छे. कोइ साधुनो अर्थ करे ते धम्मायरीया ए पाठ जूदो छे. ज्ञाननो अर्थ करे ते सुयए पाठ जूदो छे. ते माटे चेइय शब्दे जिनप्रतिमानो अर्थ छे. तथा तुम्हे पुछयो जे द्वारका राजग्रहमें देहरा तथा प्रतिमानो पाठ किहा छे ? तेहनो उत्तर नंदीसूत्रे अणुत्तरोववाइ तथा अंतगडना नोधनो पाठ जोज्यो. तथा तुम्हे कहेस्यो इतला बोल उपासकदशा-प्रमुखे दीसता नथी तेहनो उत्तर जे नदी तथा समवायागे जे पाठ तेहने कोण उत्थापी शके ते जोज्यो. तथा पुछयु जे किणे श्रावके प्रतिमा पुजी छे ? तेहनो उत्तर घणे श्रावके प्रतिमा पुजी छे ते पाठ श्रीभगवतीसूत्रे तुंगीया नगरीना श्रावको वरणव्या तिहां "अभिगयजीवाजीवा" इत्यादिक पाठ घणा छे तिहां एहवो पाठ छे. "असहिज्जदेवासुरनागसुवन्नजर-करक्खसकिन्नरकिंपुरिसगरुलगधव्व महोरगादीएहिं देव गणेहि निग्गंथाओपावयणाओ अणतिक्कम्मणिज्झा निग्गथे पावयणे-निस्सकीया निक्खीया लद्धहा गहीयहा' इत्यादि जे श्रावक कोई जातिना देवतानो सहाज वाच्छता नथी तो कोइ बीजा देवतानी पूजा किम करे ? एहवा श्रावक जे देवने देव बुद्धि मानता हवे तेहनेज पूजे ते श्रावक, थिवर आव्या तेवारे एक-वार सर्व एकठा मिल्या एहवो विचार कर्यो जे एहवानिग्रथनो नाम साभल्यानो पिण महा लाभ छे तो तेहने वादवा जाता सेवा करता तो महानिर्ज्जरा महापर्यवसान कहता मोक्ष थयो इम विचारी पोते पोताने घरे गया. पछी सूत्रे पाठ छे, "ण्हाया-कयवलिकम्मा कयकोउयमगल्पायछित्ता शुद्धाप्पावेसाइपवरप रिहीया अप्पमहग्घाभरणालंकीयशरीरा सयाओ गिहाओ

पडिनिरकमति" तिहां नाह्या ते अंघोल कीधां. कयवल्किम्माते देवपूजा कीधी; कयकोउयमंगल ते तिलकादिक कर्या पछी वस्त्र पेहरीने आभरणअलंकार पहेर्या, घरथी निकल्या ए रीते सिद्धार्थ राजा तथा रुखभदत्त, सुदरशन शेठ इम सुभद्र पुत्र श्रावक संखपुष्कली श्रावक कार्तिक शेठ वांदवा गया छे तेवारे कयवलिम्मा तथा पछी घरे आवी साहमीवछल करीने दीक्षा लेवा निकल्या तेवारे न्हाया कयवलिकम्मा ए पाठ छे, इत्यादिक श्रावक अन्य देवनी पूजा न करे गोत्रज न पूजे, अरिहंत देवनेज पुजे, तथा कोइ कहेस्ये कयवलिकम्मा पाठ कठीयारा प्रमुख अनेक थानके छे तेमां स्याना छे? पोते जेहने देवबुद्धे माने ते तेहने पुंजे तथा देवदत्त वालके कीम पुंजा करी हशे तेतो वालकने मावीत्रे पुंजा करावी तो कां न करे? आज पण वालक पुंजा करता दीसे छे तो कयवलीकम्मा ए पाठनो वीजो अर्थ शाने करो छो? तथा दीक्षा महोच्छव घणा दीसे छे पण तिहां देहरा प्रतिमानो पाठ नथी. तेहनो उत्तर जे दीक्षा लेवाने उतावला थया तेवा साधुने वहोरावबा रह्या नथी तो देहरां करावबा तो वरे स्याने रहे? अने पहेलां देहरां प्रतिमा छे तेतो नदीसूत्रे आगमनोंधनो पाठ जोस्यो तो सर्व समो पडशे तथा तुम्हे पुछ्युं जे तीर्थंकरग्रहस्थपणे छतां साधु साध्वी श्रावक श्राविकाए वांद्या नथी तेनो उत्तर घणाए वांद्या छे. ते पाठ ज्ञातासूत्रमां छे तथा तुमे लख्यो जे प्रतिमा एकेन्द्रिदल छे तेहवो वचन संसारनो जेहने भय न हुवे ते बोले? जे कारणे श्रीभगवतीजीमां तो जिणपडिमा कही बोलावी छे. देहराने सिद्धायतन कही बोलाव्यो तो तुमे कठोर वचन स्याने बोलो छो? तथा तुमे दिसी वंदना करो छो ते दीसी तो अजीव छे तो कीम वांदो छो? तिहां तुम्हे कहेस्यो जे अम्हारा मनमें तो

सिद्ध छे तो जिनपडिमा वांदतां पिण अमारा मनमां सिद्ध छे. तथा सूत्रमध्ये गुरुनी पाटनी आशातना टालवी कही छे, ते पाट अजीव छे. ते पीण सर्व गुरुनो बहुमान छे प्रतिमाने बहुमाने सिद्धनो बहुमाने छे. तथा सुधर्मासभामाहि जिननी दाढा छे ते वंदनीक पूजनीक छे. तेतो अजीव स्कंध छे तथा तुमे लख्यो जे परदेशी राजाए प्रतिमा का न करी ? ते परदेशी श्रावक थया पछी केटलोक जीव्या छे ते तथा सर्व श्रावक एकज करणी करे ए स्यो नियम छे ? तथा परदेशीए तथा आणंद श्रावके कोइ साधुने पडिलाभ्या नथी ते माटे तुमे साधुने वीहराव्यामें दोप मानस्यो ? ए विचारी ज्यो ज्यो, तथा लख्युं छे जे सूरीआभे जे प्रतिमा पूजी ते राजधानीना मंगलीक माटे पूजा करी तेतो खोटुं बोलो छो, ए पाठ सूत्रमें नथी, सूत्रमें तो एहवो पाठ छे " हीयाए सुहाए खेमाए निस्सेसाए आणुगामीयत्ताए भविस्सइ निश्रेयस-" कहेतां मोक्षभणी ए अर्थ छे, तथा पच्छा शब्दे जे इहलोकनो अर्थ छे इम कहे छे ते मूढ छे, दर्दूर देवताने अधिकारे पच्छा शब्दे आवता भवनो अर्थ छे तथा आचारांगसूत्रे जस्सपूर्वियनो तस्सपछायिनो इहा पूर्व शब्दे पूठलो भव पछा शब्दे आवतो भव लीधो छे. तथा ए भवे समकितनो लाभ ते घणो छे तथा तीर्थंकर वांधाना फलनो पाठ उववाइमध्ये तथा पंचमहाव्रत पाल्यानो पाठ आचारांग मध्ये तिहा पण हियाए इत्यादिक पाठ छे ते बे ठेकाणे लाभ मानो छो तो जिनप्रतिमा ठामे ना स्याने कहो छो ? अने किहा जिनप्रतिमा पूजानो पाप कह्यो नथी अने होय तो देखाडो. तुमे लिख्यु जे भगवंते हिंसानी ना कही छे तेतो अमे किहा कहुछु जे हिंसा करवी, पण भगवंते किसे सूत्र प्रतिमा पूजानी ना कही नथी. प्रतिमानी १७ प्रकारनी पूजा सूत्रे कही छे.' तथा तुमे प्रतिमानी पूजा

हिंसामें गणो छो ते इम नथी. प्रतिमानी पूजा तो विनय तथा वैयावच्च धर्ममां छे. तथा पूजा हिंसामे गणी तो ठाणांगे नदीमें पडती साध्वीने साधु काढे तेमां हिंसा गणी नहीं, तथा आचारांगसूत्रे बीजा साधु अजाणे पण शर्करानी भूले लूण वीहरीने पछे जाणे जे लूण वीहराव्यां ते जाणी ते पोते खाये ते पोते पीये. तथा बीजा साधु संभोगीने आपे ते खाये पीए तथा विपमवाटे वेलने, रूखने, लताने, गुछाने अवलंबो उत्तरे ए पाठ आचारांगसूत्रे छे. तथा भगवती सूत्रमें साधुना हरस काढे तेहने क्रियाकर्म लागे नहीं. तथा मल्लिनाथजीए पूतलीमें कवल मूक्या ते माटे धर्म माटे हिंसा करी तथा सुबुद्धि मंत्रिए पाणी पलटाव्यो ते धर्म माटे करी पिण मंदबुद्धि न कह्या छे भगवतीसूत्रे २५ मे शतके साधु शासन माटे तेजो लेश्या मुके तेहने आराधक कह्यो, तथा जंबुद्वीपपन्नत्तीए निर्वाण महोच्छव कर्यो छे. थूभकर्याते "जिणभत्तिए धम्मेत्तिए" पाठ छे. इम केटला पाठ लीखीए अनेक पाठ छे ॥ तथा नंदी सूत्रे जे आगम कह्यो ते उत्थापीने ३२ मानो छो ते केनी आज्ञा छे? तथा आवश्यक सूत्रपडिकमणा विना साधुपणो श्रावकपणो हुवेज नही ते तुम्हे आवश्यक सूत्रपडिकमणो मानता नथी तो श्रावकपणो ने साधुपणो केम धरावो छो? श्रीभगवतीसूत्रे साधु साध्वी श्रावक श्राविका पंचमआराना छेहडा पर्यंत कह्या छे ते तुमारी श्रद्धामें हिवणां साधु साध्वी कोण छे? तथा सूत्रे आचारज उपाध्याय कुलगणनीनिश्राये विचरे ते आराधक ते तमे कोनी निश्राये विचरो छो? ते लिखज्यो. तथा श्रीभगवतीसूत्रे गाथा छे॥ पढमोगीयत्थविहारो वीयोगीयत्थनिसीओभणिओ। इत्तोतइयविहारो नाणुन्नाओजिणवरेहिं ॥ १ ॥ एहनो अर्थ गीतार्थ होय ते पोते विहार करे अथवा गीतार्थनी निश्राये विहार करवो

एथी तिजा विहारनी अरिहन्ते आज्ञा दीधी नथी ते माटे तुमे किस्या गीतार्थनी निश्राये विहार करो छो ? तथा योग उपाधानवहीने सिद्धात भणे तेपण श्रावक आचारागादिक सूत्र भणे नही ते निशीथमा कह्यो छे। जे भिक्खुअन्नत्थीय वा गारस्थियंवा वायणं वायज्जत्त साइज्जतितस्सचोमासीयपरिहारठाण जे ग्रहस्थने सूत्र वचावे अथवा वाचताने अनुमोदे तेहने चारमासनो पाल्यो चारित्र जाये तथा प्रश्न व्याकरणसूत्रे अह केरिसीयपुणसवन्नुभासियव्वं जत्थडव्वेहिंगुणेहिपज्जवेहिं कम्मेहिं बहुविहेहि आगमेहि नामरकाय निवाय उवसग्ग तद्धिअ समास संधिपद जोग उणाद्रि कीरीयावीहीणसरथाउसर निभत्ति वन्न जुत्त भासियव्वं तथा अनुयोगद्वारे ७ नय ४ निक्षेपा काल तिन लींग तीन, जाण्या विना उपदेश देवा ते मारग नथी इत्यादिक अनेक वोल छे. ते गीतार्थनी सेवनाथी पामीए इतिभद्रं ॥ जे केइ श्रीजिनप्रतिमानी पूजा मध्ये फूल पूजानी शका करे तेहने कहीये जे श्रीरायपसेणीसूत्रे १७ भेद पूजाना पाठ छे. पुप्फारुहण १ मालारुहण २ तहवन्नयारुहणं ३ तथा पुप्फपगिह ४ पुप्फपगरं ५ एतली पूजा फूलनी छे तेमाटे पूजा फूलनी ते प्रमाण छे तथा श्रीभगवतीसूत्रे पण सूरीआभनी पेरे पूजानी भलामणना पाठ अनेक छे. तथा ज्ञातासूत्रे द्रौपदीने अधिकारे १७ प्रकारी पूजाना पाठ छे. समवायागसूत्रे चोत्रीस अतिशयने अधिकारे "जलय थलय भासुरदसद्धवन्नेणंजाणुस्सेहप्पमाणमित्तेणं पुप्फपूजोवयारकरेइ इत्यादि पाठ छे." इहा समवायाग सूत्रमे देवता मनुष्यनो नाम कह्यो नथी. तथा श्रीउववाईसूत्रमें कोणिकने अधिकारे श्रीवीर समोसर्या तेवारे अनेकजन चंपाथी निकल्या जे "अप्पे गइया वंदण वत्तियाए अप्पेगइयापूयण वत्तियाए अप्पेगइयासुयंसुयम्सामो अप्पेगइयाविउलाइ अट्ठाओहेओआई असिणाइगहिस्सामो" इत्यादि पाठ छे.

तिहां पूयणवत्तीयाए ए पाठनो अर्थ टीकामध्ये पूजनं पुष्पमालादिना इम कह्यो छे. इहां श्रीतीर्थंकरने पूष्पनी पूजा दीसे छे ए पाठ श्रीभगवतीसुत्रे पण छे. तथा नंदीसुत्रे श्रुतज्ञानने पाठे "जेइमं अरिहंतेहिं भगवंतेहि उप्पन्ननाणदंसण धरेहिं तिल्लुक्कनिरक्खीय महीअपूइएहं" पाठनो अर्थ टीकाकारे पिण महीय शब्दे चंदनादि, पुरुएहीं पुष्फमालादिके करीने ए पाठ अनुयोगद्धारमध्ये पण छे. इंम पुष्फपूजाना अनेक पाठ छे, ते माटे शंका न करवी. वली केइक इम कहे छे जे फूल वेचाता जडे ते चढाववा पण पोते चुंटी चढाववां नही तेपण अजाण्युं कहे छे जे श्रीजीवाभिगमसूत्रे " ततेणं सेविजएदेवे पोत्थयरयणंगिण्हइ पो. २ गि पोत्थयरयणंमुयति पो. २ त्ता पोत्थयरयणंविहाडेति पो. २ त्ता पोत्थयरयणंवाइए पो. २ त्तां धम्मियंववसायंपिगेण्हेति ध. २ त्ता पोत्थयरयणंपडिनिक्खमति पो. २ त्ता सीहासणतोअब्भुट्ठति सी. २ त्ता ववसायसभातोपुरत्थिमिल्लेणंदारेणंपडिनिक्खमइ पु. २ त्ता जेणेव णंदापुक्खरणी तेणे व उवागच्छति उ. २ त्ता णंदापुक्खरिणं अणुप्पयाणिकरमाणे पुरत्थिमिल्लेणं तोरणेणं अणुपविसति अ. २ त्ता पुरत्थिमिल्लेणं तिसोपाणेपडिरूवेणं पच्चोरुहति प० २ त्ता हत्थपादं पक्खालेति ह. २ त्ता एगंमहंसेतंरजतामयं विमलसलिलपुण्णमत्तगयमहामुहागिइ समाणंभिंगारं पगिण्हति प २ त्ता जाइंतत्थउप्पलाइपउमाइजावसत्तपत्ताइंसहस्सपत्ताइं ताइं गेण्हंति २ त्ता णंदातो पुक्खरिणिओ पच्चुत्तरेइ प. २ त्ता जेणेवसिद्धायतणे तेणेवपाहारेत्थगमणाइ तएणंतंविजयंदेवंचत्तारि सामाणियसाहस्सीओजावअण्णेवहवेवाणमंतरादेवादेवीओ अप्पेगतिया उप्पलहत्थगता जाव सतसहस्सपत्ताहत्थगया विजयदेवंपिट्ठओअणुगच्छइत्ता."

इहा फूल चूंटी लीधा छे. ए आलावे विजयदेने पोते वावडीमें उतरीनें फूल चूंटी लीधा तथा सामानिक देवता तथा बीजे देवताए पिण फूल पोताना हाथथी लीधां छे इहा कोइ पुछस्ये जे तिहां कोइ माली नथी ते माटे पोते लिधा तेहनो उत्तर जे माली नथी पिण देवता चाकर लोक घणा छे, तेहनेज पासे का न मंगावे ? जो पुष्प आण्यानो विधि होवे तोपण पोताना हाथथी लीधानो विधि छे ते माटे पोते वावडी मध्ये उतरी लीधां छे तथा श्रीरायपसेणीसूत्रे सूरीआभाधिकारे.

“ ततेण से सुरियाभेदेवे पोत्थरयणंगिण्हइ, पो २. गि त्ता पोत्थरयण मुयइ, पोत्थरयणविहाडेइ, त्ता २ पोत्थरयणवाए-ति. त्ता २ धम्मिय ववसायं गिण्हइ, २ त्ता पोत्थरयणपडिणिक्ख-मति २ त्ता सींहासणाओअब्भुठेइ २ त्ता ववसायसभाओ पुरत्थि-मिल्लेण दारेणं पडिणिक्खमइ २ त्ता जेणेव णदापोरकरिणि तेणेव उवागच्छइ २ त्ता णदापोक्खरिणी पुरत्थिमल्लेण तोर-णेणंतिसोयाणपडिरूवेणं पच्चोरुहत्ति २ त्ता हत्थपायपक्खालेइ २ त्ता आयते चोक्खे परमसुइभूए एगंसेयमहरययामयं विमलस-लिलपुण्ण मत्तगयमुहागितिसमाणभगार पगिण्हति पच्चोरुहइ २ त्ता जाइतत्थउप्पलाइंजावसयसहस्सपत्ताइगिण्हंति णंदाओ पुक्खरिणीओ पच्चोरुहइ २ त्ता जेणेव सिद्धायतणे तेणेव पहारे गमणाए तएण त सूरियाभदेवं चत्तारिसामाणियसाहस्सीओ जावसोलसआयरक्खदेवसाहस्सीओ अण्णेयबहवे सूरियाभवि-माणे जाव देवा देवीओअप्पेगइया उप्पलहत्थगया जावसयस-हस्सपत्तहत्थगया सूरियाभ देवपिट्ठओसमणुगच्छति ततेणं सूरि-याभदेवबहवेआभिओगिय देवाय देवीओ य अप्पेगइयाकलसह-त्थगयाओ जावअप्पेगइया धुवकडच्छहत्थगया हट्ठतुट्ठाजावजा

सूरियाभं देवंपिट्ठओसमणुगच्छंति तेतेणं णे सूरियाभेदेवे चउहिं सामाणियसाहस्सीहिं जावअण्णेहिंयबहूहिंसूरियाभविमाणवासीहिं देवेहिं देवीहिंयसद्धिं संपुरिवुडे सव्वड्ढीए जाव णाइयरवेणं जेणेव सिद्धायणे तेणेव उवा गच्छइ सिद्धायणंपुरत्थिमिल्लेणं दारेणं अणुपविसंति २ त्ता जेणेव जिणपडिमाउ तेणेव उवागच्छइ, जिणपडिमाणंआलोए पणामंकरेति २ त्ता लोमहत्थगंगिण्हइ २ त्ता जिणपडिमाणं लोमहत्थएणं पमज्जइ २ त्ता जिणपडिमाओ सुरभिणागंधोदएणंण्हाणेति ण्हाणित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाणं अणुलिप्पइ २ त्ता जिणपडिमाणंअहियांदेवदूसाइं जुयलाइं णियंसेइ २ त्ता पुप्फरुहणं मल्लारुहणं चूण्णारुहणं गंधारुहणं वण्णारुहणं चुण्णरुहणं वत्थारुहणं आभरुहणं करेइ करेत्ताआसत्तासत्तविउलवग्घारियमल्लदामंकलावं करेइ २ त्ता कयग्गहगहित्ता करयलपभ्भट्ठ विप्पमुक्केणं दसद्धवण्णेणं कुसुमेणं मुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं करेति करेत्ता जिणपडिमाणं पुरतोअच्छेहिं सण्हेहिं सेएहिं रयणामएहिं अच्छरसतंदुलेहिं, अट्ठमंगले आलिहइ तंजहासत्थियजावदप्पणतयाणं तरंचणंचंदप्पहरयणवइरवेरुलियविमलदंडकंचणमणिरयणभत्तिचित्ताकालागुरुपवरकुंदरुक्क तुरुक्कधूवमघमघंतगंधत्तामाणुचिट्ठंति धूववट्टिविणिमुयंतं वेरुलियमयंकडुछरंव पग्गहियपयतेणं धूवंदाऊणं जिणवराणं अट्ठसयविसुद्धगंधजुत्तेहिं अपुणरत्तेहिं महाचित्तेहिं संथूणइ सत्तट्ठपयाहिं पच्चोरुहइ १ त्ता वामंजाणुंअंचेइ दाहिणं जाणुंधरणितलं सिनिहट्टुतिक्खूत्तो मुद्धाणं धरणितलंसि णिव्वोडेत्ति २ त्ता इसंपच्चूण्णमइ इसिंपच्चूणमित्ता करयलपरिग्गहियंसिरसावत्तं मत्थएयंजं एवंवयासी णमोत्थुणं अरिहंताणंजावसंपत्ताणंवंदति णमंसइ २ त्ता

ए रायपसेणीसुत्र पाठ छे. सुरीयाभे पोते हाथे फूल चूंटी

लीधां छे, सामानीक मुख पासे मगाव्यां नथी. तथा जंबुद्वीपपन्नतीमें जन्माभिषेक "जेणेवरखीरादसमुदे तेणेव आगमखीरोदग गिण्हति २ त्ता जाईतत्थउप्पलाई पउमाइ जावसहस्सपत्ताई तांवगिण्हंति २ त्ता" इत्यादि सूत्रमे पाठ हाथना चूंट्या फूल लेवाना छे. तथा कोइक कहेसे जे एतो चूंट्या नथी सहेजे पड्या लीधां छे तेहने कहीये जे हज्जारगमे सहेजे पड्या वावडीमध्ये हुवेज नही, तथा निगाइने अधिकारे निगाइ राजाए आंवानी माजरीयो पोते चूंटी लीधी तेवारे कटक बधे चुटी लीधी ते पाठ उववायीमध्ये जोजो.

अन्नयाणुजुत्तनिग्गओपछइ कूसुमाचूअराइणा येगामजरीगहीयाएवरकधावरेणलयतेण मजरीपत्त पवाललयाइ कट्ठाविसेसो कओ पडिनियत्तओपुच्छइ कहे सोरुक्खोअमच्चणादसाओ कहअे सयावेस्थोभणइ तुम्हेहिं एगामजरीगहीयापच्छसव्वणगहेलेण एवकओ ॥

इहा गहीय शब्दे चूंट्यानो अर्थ छे, तथा कोइ कहेस्ये जे एतो देवताये कर्यो छे ते श्रावके कर्यानो किहा पाठ नथी, तेहने कहीये जे जो देवतानी करणी ताहरे न करवी तो शक्रस्तव किम करे छे? तथा स्नात्र केम मानो छो? स्नात्रनो फलस ढोलो छो ते देवतानी करणीज छे, तथा सूरीयाभनी पूजानी भलामण द्रौपदीने पाठे छे. देवतानी पूजाकरणी तथा मनुष्यनो पाठ एकज छे ते माटे देवतानी करणी श्रावक करे ए श्रद्धामणाण छे तथा जे फूल चुंटवानी ना क्हे ते वींटना जीवनी कीलामना माटे. तेवारे फूलनी पूजा किम करी शके?

अने फूलनी पूजानो तो सूत्रे पाठ छे. तथा जे पूजाने हिंसामें गणे तेहने कहीये जे श्री प्रश्नव्याकरण सूत्रे प्रथम संवरद्वारे अहिंसानां ६० नाम कह्यां छे. तिहां पूजा तें दया कही छे. ते पाठ लिखीइ छे. "अभउसव्वस्सविअनाघाओ चुरकापव्वत्तीपूयाविमलप्पभानिम्मलकरत्तिएवमाइणिनियगुणनिम्मियाइपज्झायनामाणिहुंति अहिंसाए भगवइए" इत्यादि पाठे पूजा ते अहिंसामें गणी छे, तो तुम्हे हिंसामे किम गणे छो ? तथा भगवती सूत्रे " सुभयोगपडुच्चअणारंभा " ए पाठ शुभयोग प्रवृत्तिने आरंभनी ना कही छे. विनय तथा वैयावच्च ते तपना भेद छे. तप ते मोक्षमार्गमध्ये श्रीउत्तराध्ययने २८ मे अध्ययने कह्यो, ते तुमे हींसामें केम कहो छो ? तथा विवहारसूत्रे "सिद्धवेयावच्चेणं महानिज्जरामहापज्झवसाणंभवति " ते माटे सिद्धवैयावच्च ते पूजा छे, तथा कोइ पूछे जे श्रावके प्रतिमा किहां पूंजी छे ? तेहने केहवो जे श्रीभगवतीसूत्रे तुंगीया नगरीने श्रावके पूंजा करी छे. शंख पुष्कलीये पूजा करी छे, तथा समवायांगसुत्रे द्वादशांगीनी हूंडीने अधिकारे उपासकदशानी हूंडीमध्ये दश श्रावकनां चैत्य एहवो पाठ छे. ए पाठमे चैत्य तो साधु थाय नहीं, ज्ञान थाय नहीं ते सर्वना पाठ जुदा छे, तथा नंदीसुत्रे पिण पाठ छे तथा नंदीमध्ये जे आगम कह्या ते सर्व माने तेज समकिती जाणवो. श्रीअनुयोगद्वारसुत्रे निर्युक्तनी हा कही छे ते निर्युक्तिमध्ये पूजाना अनेक अधिकार छे, तथा तंदूलवेयालीपयन्नानी टीकामध्ये समवसरणना फूल सचित्त ते उपर साधु साध्वी चाले. प्रवचनसारोद्धार टीकाये पण ए मत छे. तथा कोइ कहेस्ये जे फूलने प्रोइ (परोववा) नहीं तेहने कहीये जे हीरप्रश्नमध्ये पाठ छे. तथा वन्नगंधोवमेहेंचेतिः श्लोक-

व्याख्यायते श्राद्ध दिनकृत्ये प्रोतपु पूजाक्षराणिवर्तंते तथा आद्यपक्षेतु जिनवल्लभसूरि कृत पृजाकुलकेऽपि प्रोत पुष्पाक्षराणि संति तथा हरिभद्रसूरि कृत पूजा पंचासके "जहरेंहईतकीरइ", ए गाथाना आसयथी पिण प्रोया फूलनी हा जणाय छे. तथा उमास्वातिवाचक कृत पूजा पटलमापिण एमज जणाय छे ते स्थापना इतर अने यावत्कथिक ए बे भेदें छे.

३ द्रव्य निक्षेपो कहे छे, जेनो नाम पण होय तथा आकार थापना गुण पण होय अने लक्षण होय पण आत्मोपयोग न मिले ते द्रव्य निक्षेपो जाणवो. एटणे अज्ञानी जीव ते जीव स्वरुपना उपयोग विना द्रव्य जीव छे " अणुवओगो दव्व " इति अनुयोगद्धार वचनात्. वली कहुं छे जे सिद्धान्त वाचता पूछता पद अक्षर मात्रा शुद्ध अर्थ करे छे अने गुरु मुखे सद्दहे छे ते पण शुद्ध निश्चये सत्ता ओलख्या विना सर्व द्रव्य निक्षेपामां छे. जे भाव विना द्रव्यपणो छे ते पुण्य बंधनुं कारण छे पण मोक्षनु कारण नथी एटले जे करणी रूप कष्ट तपस्या करे छे अने जीव अजीव सत्ता ओलखी नथी तेने भगवती सूत्रमा अव्रती तथा अपच्चक्खाणी कह्या छे, तथा जे एकली बाह्य करणी करे छे अने पोते साधु कहेवरावे छे ते मृषावादी छे एम उत्तराध्ययन सूत्रमां कहुं छे " न मुणी रन्नवासेणं " ए वचनें " नाणेणय मुणी होइ " ए वचनथी जे ज्ञानवान् ते मुनि छे अने जे अज्ञानी ते मिथ्यात्वी छे. तथा कोइक गणितानुयोगना नरक देवताना बोल अथवा यति श्रावकनो आचार जाणीने कहे जे अमे ज्ञानी छैयें ते पण ज्ञानी नथी, पण जे द्रव्य गुण पर्याय जाणे तेने ज्ञानी कहिये श्री उत्तराध्ययने मोक्ष मार्गे कह्यो छे गाथा. "एयं पंच विहनाणं द्व्वाणय गुणाणय, पज्जवा-

णय सव्वेसीं, नाणं नाणी हीं देसियं" ॥१॥ माटे वस्तु सत्ता जाण्या विना ज्ञानी नही अने नवतत्त्व ओलखे ते समकीति. अने एहवा ज्ञान दर्शन विना जे कहे के अमे चारित्रिआ छैये ते पण मृषावादी छे, कारण के श्रीउत्तराध्ययन सूत्र मध्ये कह्युं छे जे " नादंसणस्सनाणं नाणेण विणा न हुंति चरण गुणा " ए वचन छे ते माटे आज केटलाक ज्ञानहीन क्रियानो आडंबर देखाडे छे ते ठग छे तेहनो संग करवो नही. ए बाह्य करणी अभव्य जीवने पण आवे माटे ए बाह्य करणी उपर राचवुं नही अने आत्मानुं स्वरूप ओलख्या विना सामायक पडिक-मणां पच्चख्खाण करवां ते सर्व द्रव्यनिक्षेपामां पुण्याश्रव छे पण संवर नथी. श्रीभगवती सुत्र मध्ये कह्युं छे के "आया खलु समाइयं " ए आलावाथी जाणजो तथा जीव स्वरूप जाण्या विना तपसंयम पुण्य प्रकृति ते देवताना भवनुं कारण छे " पुव्व तवेणं पुव्व संयमेणं देवलोए उववज्जंति नो चेवणं आय भाव-वत्तव्वयाए " ए आलावो भगवतीमां कह्यो छे. तथा जे क्रिया-लोपी आचार हीन अने ज्ञानहीन छे मात्र गच्छनी चालें सिद्धान्त भणे छे वांचे छे व्रत पच्चख्खाण करे छे ते पण द्रव्य निक्षेपो जाणवो. एम श्री अनुयोगद्धारमां कह्युं छे.

जे इमे समण गुणमुक्कजोगी छक्काय निरणु-कंपा ॥ हयाइव उद्दामा ॥ गयाइव निरंकुसा ॥ घट्ठामट्ठातुप्पोठा ॥ पंडुरयाउरणा जिणाणं आणाए सच्छंद विहरिउण उभओकालं आवस्सग्गस्स ऊवट्ठंति ॥ तं लोगुत्तरियं दव्वावस्सयं ॥

अर्थ...जेने छ कायनी दया नथी, घोडानी पेरें उन्मत्त छे,

हाथीनी पेठे निरंकुश छे, पोताना शरीरने धोवतां मसलतां उजले कपडे शिणगार करी गच्छना ममत्वभावे माचतां स्वेच्छाचारी वीतरागनी आज्ञा भांजता जे तप क्रिया करे छे ते पण द्रव्य निक्षेपामा छे. अथवा ज्योतिष वैद्यक करे छे अने पोताने आचार्य उपाध्याय कहेवरावीने लोक पासे महिमा करे (करावे छे) छे ते पत्रीनथ खोटा रूपैया जेवा छे घणा भव भमशे अवदनीक छे. ए साख उत्तराध्ययनमध्ये अनाथी मुनिना अध्ययनथकी जाणवी. अने सूत्रना अर्थ गुरुमुखे शिख्या विना तथा नय प्रमाण जाण्या विना निश्चय आत्मानुं स्वरूप ओलख्या विना निर्युक्ति विना उपदेश आपे ते पोते तो संसारमां बुड्या छे पण जे तेमनी पासे बेसे छे तेमने पण संसारमां बुडावे छे एम प्रश्न व्याकरणसूत्र तथा अनुयोगद्वार सूत्रमां कह्युं छे " अज्जुत्थ चेव सोल सम " इत्यादि अने भगवती सूत्रमा पण कह्यु छे " सुतत्थो खलु पढमो, बीओ निज्जुत्ति मिसओ भणिओ, इत्तो तईअणुओगो, नाणुन्नाओ जिणवरेहिं " अने केटलाक एम कहे छे जे अमे सूत्र उपर * अर्थ करिये छैये तो निर्युक्ति तथा टीका प्रमुखनुं शु काम छे ते पण मृषावाद छे केमके श्रीप्रश्नव्याकरणमां " वयणतियं लिंगतियं "

---

* श्री भगवती सूत्रमा " सुतत्थोखलु पढमो, बीओनिज्जुत्ति मिसओ भणिओ ॥ इत्तो तईयणुओगो, नाणुन्नाओजिण वरेहिं " एवी राते आगमसारनी जूदी जुदी त्रण प्रतोमा लख्यु हतु माटे में पण तेमज लख्यु छे पण बीजा ठेकाणे ए भगवतीनो साख दीधी छे तिहा तो " सुतत्थो खलु पढमो, बीओनिज्जुत्ति मिसओ भणिओ ॥ तइओय निरविसेसो, एस विहि होइ अणुओगो " एवो पाठ छे ते खरो जणाय छे पछे बहुश्रुत कहे ते खरु

इत्यादिक जाण्या विना अने नय निक्षेप जाण्या विना जे उपदेश आपे ते मृषावादी छे एम अनेक सुत्रमां कह्युं छे माटे बहुश्रुत पासे उपदेश सांभलवो. श्री उत्तराध्ययन मध्ये बहुश्रुतने मेरुनी तथा समुद्रनी अने कल्पवृक्षादि सोल उपमा दीधी छे ए द्रव्य निक्षेपो कह्यो.

४ भाव निक्षेपो कहे छे. जे नाम स्थापना अने द्रव्य ए त्रण निक्षेपा ते एक भाव निक्षेपा विना अशुद्ध छे जे नाम तथा आकार लक्षण गुण सहित वस्तु ते भाव निक्षेपा जाणवो " उवओगो भाव " इति वचनात्. एटले पूजा, दान, शील, तप, क्रिया, ज्ञान ए सर्वं भावनिक्षेपे सहित लाभनुं कारण छे. इहां कोइ कहेशे जे मननां परिणाम दृढ करीने ने करियें तेने भाव कहियें एम कहे छे ते जूठा छे एतो सुखनी वांछायें मिथ्यात्वी पण घणा करे छे ते गणवुं नहीं. इहां सूत्रनी साखे वीतरागनी आज्ञाए हेय उपादेयनी परीक्षा करी अजीवतत्त्व तथा आस्रवतत्त्व अने बन्धतत्त्व उपर हेय कहेतां त्याग भाव अने जीवना स्वगुण जे संवर निर्जरा तथा मोक्षतत्त्व ऊपरें उपादेय परिणाम ते भाव कहिये. एटले रूपीगुण ते द्रव्य निक्षेप छे अने अरूपीगुण ते भावनिक्षेप छे. एटले मन वचन काया लेश्यादिक सर्व द्रव्य निक्षेपामां छे. अने ज्ञान दर्शन चारित्र वीर्य ध्यान प्रमुख सर्व गुण भाव निक्षेपामां छे. ए भाव निक्षेपो ते नामस्थापना तथा द्रव्य सहित होय एटले चार निक्षेपा कह्या.

हवे चार निक्षेपा पदार्थ ऊपर लगाडी देखाडे छे. नाम जीव ते चेतना अथवा मांचाना वाणने जीव कही बोलावे छे ते नाम निक्षेपे जीव. मूर्ति प्रमुख थापियें ते स्थापना जीव. एकेंद्रियथी पंचेंद्रिय पर्यंत सर्व जीव छे पण उपयोग मिले नहि ते द्रव्य

जीव. अने मूर्तिमां जीव स्वरूप ओलखी समकितना उपयोगमां छे ते भाव जीव. एम धर्मास्तिकायादिक द्रव्यमा पण जाणवु. नामथी धर्मास्तिकाय कही बोलाववो ते नाम धर्मास्तिकाय. धर्मास्तिकाय एहवा अक्षर लखवा अथवा दृष्टांत कारणे काइक वस्तु थापवी ते स्थापना धर्मास्तिकाय. तथा धर्मास्तिकाय जे असंख्यात प्रदेशी धर्म द्रव्य छे ते द्रव्य धर्मास्तिकाय. ए धर्मास्तिकायने जे वारे चलण सहाय गुणनी अपेक्षा सहित ओलखियें ते भाव धर्मास्तिकाय

हवे कोइकनो साधु एहवो नाम छे ते नाम साधु अने स्थापना करियें ते स्थापना साधु. तथा जे पंच महाव्रत पाले क्रिया अनुष्टान करे-सुजतो आहार लिये पण ज्ञानध्याननो जेवो उपयोग जोइए तेवो उपयोग न होय ते द्रव्य साधु. जे भाव संवरमोक्षनो साधक थइ भाव साधुनी करणी करे ते भाव निक्षेपे साधु कहियें

कोइकनो अरिहत नाम छे ते नाम अरिहंत. अने अरिहंतनी प्रतिमा ते थापना अरिहंत. जेटला सुधी छद्मस्थ अवस्था ते द्रव्य अरिहंत अने केवल ज्ञान पाम्या पछे लोकालोकनो भाव जाणे देखे ते भाव अरिहत. एम सिद्धमा पण कहेवो.

कोइ जीवनो ज्ञान एहवो नाम अथवा भावें अजीवनो नाम ते नाम ज्ञान तथा जे ज्ञान पुस्तकमा लख्यु छे ते स्थापना ज्ञान. जे उपयोग विना सिद्धातनो भणवो अथवा अन्य मतिना सर्व शास्त्र भणवा तथाक्ष शरीरादिक ते सर्व द्रव्य ज्ञान. जे नवतत्त्वनुं जाणवुं ते भावज्ञान.

तथा कोइकनु तप एहवु नाम ते नाम तप तथा पुस्तकमां

दिक करवो ते द्रव्य तप. जे परवस्तु ऊपर त्यागनो परिणाम ते भाव तप. एम संवरादिक सर्वमां चार चार निक्षेपा जाणवा. तथा श्री अनुयोगद्धारमध्ये कह्युं छे-यतः "जत्थयजं जाणिज्जा, निख्खेवं निख्खिवे निरवसेसं ॥ जत्थयनो जाणिज्जा चउक्कयं निख्खिवे तत्थ ॥ १ ॥ ए चार निक्षेपा कह्या एटले शब्दनय कह्यो.

हवे छठ्ठो समभिरूढ नय कहे छे जे वस्तुना केटलाक गुण प्रगट्या छे अने केटलाक गुण प्रगट्या नथी पण अवश्य प्रगटशे एहवी वस्तुने वस्तु कहे ते वस्तुना नामांतर एक करी जाणे. जेम जीव चेतन तथा आत्मा एहनो× एक अर्थ कहे ते समभिरूढ नय कहियें, ए नय एक अंश ओछी वस्तुने पूरेपूरी वस्तु कहे, जेम तेरमा गुणठाणे केवली होय तेहने सिद्ध कहे, ए नयना भेद बिलकुल नथी ए समभिरूढ नय कह्यो.

हवे एवंभूतनय कहे छे जे वस्तु पोताने गुणे संपूर्ण छे अने पोतानी क्रिया करे छे तेने ते वस्तु कही बोलावे. जेम मोक्षस्थानके जे जीव पहोतो तेने सिद्ध कहे. जेम पाणीथी भरेलो स्त्रीना माथा उपर आवतो जल धारण क्रिया करतो तेने घडो कहे. ए एवंभूत नय कह्यो.

हवे सात नयना दृष्टान्त श्री अनुयोगद्धार सुत्रथी लखियें छैयें. जेम कोइक पुरुषे बीजा कोइक पुरुषने पुछयुं जे तमे किहां वसो छो तेवारे ते पुरुषे कह्युं हुं लोकमां वसुं छुं. ए अशुद्ध नैगम. वली पुछयुं जे लोकना त्रण भेद छे, १ अधोलोक, २ तिर्छोलोक, ३ उर्ध्वलोक, तेमां तुं किहां रहे छे

× एकार्थवाची नामोनां नामभेदे भिन्न भिन्न अर्थ करे छे तेने समभिरूढ नय कहे छे. एम नयचक्रसारमां कह्युं छे.

तेवारें नैगमे कह्यु जे तिर्छालोकमा रहुं छु. वली पुछयुं जे तिर्छालोकमा असंख्याता द्वीप समुद्र छे तेमां तुं कया द्वीपमा रहे छे. तेवारें विशुद्ध नैगमें कह्युं जे जंबुद्वीपमा रहु छुं. ते जंबुद्वीपमां क्षेत्र घणा छे, तेमां तुं कया क्षेत्रमां रहे छे, तेवारें अतिशुद्ध नैगम बोल्यो जे भरतक्षेत्रमां रहु छुं. ते भरतक्षेत्रना छ खंड छे ते मांहेला कया खंडमा रहे छे तेवारें कह्युं जे मध्यखंडमां रहु छु एम क्रमे पृछतां छेल्ले कह्यु जे आपणा देशमां रहु छु, तेवारें फरी पुछ्यु जे देशमां तो नगरगाम घणा छे तो तु किहा रहे छे तेवारें कह्युं जे हुं अमुक गाममां रहु छुं, ते गाममा वली अमुक पाडो तथा अमुक घर बताव्युं तिहां सुधी नैगम नय जाणवो.

अने संग्रह नय वालो बोल्यो जे मारा पोताना शरीरमा वसुं छु, तथा व्यवहारनयवालो बोल्यो ज संथारे बेठो छुं तेटलाज बिछानामां रहु छु, अने ऋजुसुत्र नयवाले कह्युं जे मारा आत्माना असंख्याता प्रदेशमा रहुं छु. वली शब्दनय कहे जे मारा स्वभावमा रहु छु, तेमज समभिरूढनय कहे जे हुं मारा गुणमा रहुं छु, अने एवंभुतनयवादी कहे जे ज्ञानदर्शन गुणमां वसुं छु. ए दृष्टांत कह्यो तेम सर्व वस्तुमां कहेवु.

तथा कोइके प्रदेशमात्र क्षेत्र अंगीकार करी पुछ्युं जे ए प्रदेश कया द्रव्यनो छे तेवारे नैगमनय बोल्यो जे छए द्रव्यनो प्रदेश छे केमके एक आकाश प्रदेशमध्ये छ द्रव्य भेला छे तेवारे संग्रह नय बोल्यो जे कालद्रव्य तो अप्रदेशी छे ते माटे सर्व लोकमा एक समय छे पण ते एक आकाश द्रव्यना प्रदेशमां जुदो नथी माटे काल विना पांच द्रव्यनो प्रदेश छे तेवारें व्यवहारनय बोल्यो के जे द्रव्य मुख्य देखाय छे तेहनो प्रदेश छे तेवारें ऋजु-

सुत्रनय बोल्यो के जे द्रव्यनो उपयोग॰ देइ पुछियें ते द्रव्यनो प्रदेश छे. जो धर्मास्तिकायनो उपयोग देइ पुछियें तो धर्मास्तिकायनो प्रदेश छे. जो अधर्मास्तिकायनो उपयोग देइ पुछियें तो अधर्मास्तिकायनो प्रदेश छे. तेवारे शब्दनय बोल्यो के जे द्रव्यनो नाम लइ पुछियें ते द्रव्यनो प्रदेश छे. हवे समभिरूढनय बोल्यो जे एक आकाश प्रदेश मध्ये धर्मास्तिकायनो एक प्रदेश छे, अधर्मास्तिकायनो एक प्रदेश छे अने जीवना अनंता प्रदेश छे. पुद्गलना अनंता परमाणु प्रमुख अस्तिकायनो एक प्रदेश छे, तेवारे एवंभूतनय बोल्यो, जे प्रदेश द्रव्यनी क्रियागुण अंगीकार करी देखीयें ते समयमां ते प्रदेश ते द्रव्यनो गणिये. ए प्रदेशमां सात नय कह्या.

हवे जीवमां सात नय कहे छे. प्रथम नैगमनयने मते जे गुण पर्यायवंत शरीर सहित ते जीव. एटले शरीरमां जे बीजा पुद्गल तथा धर्मास्तिकायादिक द्रव्य छे ते सर्व जीवमांज गण्या तेवारे संग्रहनय बोल्यो जे असंख्यात प्रदेशी ते जीव एटले एक आकाशना प्रदेश टल्या बीजा सर्व द्रव्य एमां गणाणा तेवारे व्यवहारनय बोल्यो, जे विषय लइ काम वात संभारे ते जीव. इहां धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाश तथा बीजा पुद्गल सर्व टल्या पण पांचे इन्द्रीय तथा मन अने लेश्या ए पुद्गल छे ते जीवमां गणाणा, कारणके विषयादिकतो इन्द्रियो ले छे ते जीवथी न्यारा छे पण इहां व्यवहारनयमते जीव भेला लीधा छे. तेवारे ऋजुसुत्रनय बोल्यो जे उपयोगवंत ते जीव. इहां इन्द्रियादिक सर्व टल्या पण अज्ञान तथा ज्ञानना भेद टल्या नहीं. हवे शब्दनय बोल्यो जे नामजीव, स्थापना जीव, द्रव्यजीव, भाव जीव, इहां जीवमां गुण निर्गुणनो भेद पड्यो नही, तेवारें

समभिरूढनय बोल्यो जे ज्ञानादिगुणवंत ते जीव तेवारे मतिज्ञान श्रुतज्ञान इत्यादिक साधक अवस्थाना गुण ते सर्व जीव स्वरूपमां आव्या. हवे एवभूतनय बोल्यो जे अनतज्ञान, अनंतदर्शन, अनत चारित्र, शुद्धसत्तावत ते जीव. ए नये जे सिद्ध अवस्थामा गुण हता तेज ग्रह्या ए सात नये जीव द्रव्य कह्यो

हवे सातनयें धर्म कहे छे नैगमनय बोल्यो जे सर्व धर्म छे केमके सर्व प्राणी धर्मने चाहे छे ए नय स्वरुप धर्म-नाम धर्मने धर्म कहे. हवे सग्रहनय बोल्या जे वडेरायें आदर्या ते धर्म, एणे अनाचार छोड्यो पण कुलाचारने धर्म कह्यो, व्यवहारनय बोल्यो जे सुखनु कारण ते धर्म एणे पुण्य करणीने धर्म करी मान्या. ऋजुसूत्रनयमते जे उपयोग सहित वैराग्यरूप परिणाम ते धर्म कहियें. ए नयमा यथाप्रवृत्तिकरणना परिणाम प्रमुख सर्व धर्ममा गण्या ते मिथ्यात्वीने पण होय हवे शब्दनय बोल्या जे धर्मनुं मूल समकित छे माटे समकित तेज धर्म तेवारें समभिरूढनय बोल्यो जे जीव अजीव नवतत्व तथा छ द्रव्यने ओलखीने जीवसत्ता ध्यावे अजीवनो त्याग करे एहवो ज्ञान दर्शन चारित्रनो शुद्धनिश्चय-परिणाम ते धर्म. ए नये साधक सिद्ध परिणाम ते धर्मपणे लीधा एवभूतनय बोल्यो जे शुक्लध्यान रूपातीत परिणाम क्षपकश्रेणि कर्मक्षयना कारण ते साधन धर्म जे जीवनो मूल स्वभाव ते वस्तु धर्म जे मोक्षरूप कार्य नीपने सिद्धमा रहे ते धर्म. ए साते नयें धर्म कह्यो.

हवे सातनयें सिद्धपणो कहे छे. नैगमनयने मते सर्व जीव सिद्ध छे केमके सर्व जीवना आठ रुचक प्रदेश सिद्ध समान निर्मल छे माटे सग्रहनय कहे जे सर्व जीवनी सत्तासिद्ध समान छे एणे पर्यायार्थिक नयेकरी कर्म सहित अवस्था ते टालीने

द्रव्यार्थिक नयेंकरी अवस्था अंगीकार करी. तेवारें व्यवहारनय बोल्यो जे विद्या लब्धि प्रमुख गुणे करी सिद्ध थयो ते सिद्ध. ए नये बाह्य तप प्रमुख अंगीकार कर्या, हवे ऋजुसूत्रनय बोल्यो के जेणे पोताना आत्मानी सिद्धपणानी सत्ता ओलखी अने ध्याननो उपयोग पण तेज वर्त्ते छे ते समयें ते जीव सिद्ध जाणवो. ए नये समकीति जीव सिद्ध समान छे एम कह्युं. हवे शब्दनय बोल्या जे शुद्ध शुक्ल ध्यान परिणाम नामादिक निक्षेपे ते सिद्ध. तेवारें समभिरूढनय बोल्यो जे केवलज्ञान, केवलदर्शन, यथाख्यातचारित्र ए गुणे सहित ते सिद्ध जाणवा. ए नये तेरमा चउदमा गुणठाणाना केवलीने सिद्ध कह्या. अने एवंभूतनय कहे छे के जेना सकल कर्म क्षय थया लोकने अंते विराजमान अष्टगुण संपन्न ते सिद्ध जाणवा. ए रीते सिद्ध पदे सात नय कह्या. एम सात नय मिल्या समकीति छे अने जे एक नयने ग्रहण करे ते मिथ्यात्वी छे. ए साते नय सिद्ध ते वचन प्रमाण छे अने ए सात नयमां कोइ पण नयने उत्थापे तेनुं वचन अप्रमाण छे.

हवे प्रमाणनो विचार कहे छे. प्रमाणना बे भेद छे. एक प्रत्यक्ष प्रमाण, बीजुं परोक्ष प्रमाण. तेमां जे जीव पोताना उपयोगथी द्रव्यने जाणे ते प्रत्यक्ष प्रमाण कहियें. जेम केवली छ द्रव्य प्रत्यक्ष प्रमाणे जाणे तथा देखे ते माटे केवलज्ञान ते सर्वथी प्रत्यक्ष ज्ञान छे, अने मनः पर्यवज्ञान ते मनोवर्गणा प्रत्यक्ष जाणे तथा अवधिज्ञान ते पुद्गल द्रव्यने प्रत्यक्ष जाणे माटे ए बे ज्ञान देश प्रत्यक्ष छे. बीजुं छद्मस्थज्ञान ते सर्व परोक्ष प्रमाण छे.

हवे परोक्ष प्रमाण कहे छे. मतिज्ञाननो अने श्रुतज्ञाननो उपयोग परोक्ष प्रमाण छे, केमके जे शास्त्रना बलथी जाणे ते परोक्ष

प्रमाण कहियें. ते परोक्ष प्रमाणना त्रण भेद छे. १ अनुमान प्रमाण, २ आगम प्रमाण, ३ उपमान प्रमाण. तेमां अनुमान एटले कोइक सहिनाण देखीने जे ज्ञान थाय. जेम धुमाडो देखीने अग्निनु अनुमान थाय अने आगम एटले शास्त्रनी साखथी जे वात जाणियें जेम देवलोक तथा नरक निगोद विगेरेनो विचार आगमथी जाणिये छैये ते आगमप्रमाण, अने कोइक वस्तुनो दृष्टान्त आपीने वस्तुने ओलखाववी ते उपमान प्रमाण जाणवा. ए प्रमाण कह्या हवे सत् असत् पक्षथी सप्तभंगी कहे छे

१ स्यात् केहतां अनेकांतपणे सर्व अपेक्षा लेइ जीवद्रव्यमां आपणो द्रव्य, आपणो खेत्र, आपणो काळ, आपणो भाव एम आपणे, गुणपर्यायें जीव छे तेम सर्व द्रव्य आपणे गुणपर्यायें छे ते स्यात् अस्ति नामा पहेला भांगो थयो.

२ जे जीवमा बीजा पाच द्रव्यना १ द्रव्य २ खेत्र ३ काल ४ भाव नथी एटले परद्रव्यना गुणनो नास्तिपणो सर्व द्रव्यमा छे. ए स्यात् नास्ति बीजो भागो थयो.

३ द्रव्य स्वगुणे अस्ति अने पर गुणे नास्ति ए बे भांगा एक समये द्रव्यमां छे. जेम जे समये शुद्ध स्वगुणनी अस्ति छे तेज समयें परगुणनी नास्ति पण छे, माटे अस्ति नास्ति ए बेहु भागा भेला छे ते स्यात् अस्ति नास्ति त्रीजो भांगो थयो.

४ अस्ति अने नास्ति ए बेहु भांगा एक समयमां छे तो वचने करी अस्ति एटलो बोलतां असख्याता समय लागे तेथी नास्ति भागा तेज वखते कहेवाणा नही अने जो नास्ति भागो कह्यो तो अस्तिपणो नाव्यो माटे एकज अस्ति कहेता थका नास्तिपणो तेज समये द्रव्यमा छे ते नही कहेवाणो माटे मृपावाद लागे, तेमज नास्ति कहेता अस्तिनो मृषावाद लागे, माटे

સિદ્ધના જીવને ચલાવવાપણો કરતો નથી તેનું કેમ? તેને ઉત્તર કહે છે જે સિદ્ધના જીવ અક્રિય છે માટે ચાલતા નથી પણ તે ક્ષેત્રમાં જે સૂક્ષ્મ નિગોદના જીવ તથા પુદ્ગલ છે તેહને ધર્માસ્તિકાય ચલાવે છે માટે પોતાની ક્રિયા કરે છે, તેમજ અધર્માસ્તિકાય જીવ તથા પુદ્ગલને સ્થિર રાખવાની ક્રિયા કરે છે, તથા આકાશ દ્રવ્ય તે સર્વ દ્રવ્યને અવગાહનારૂપકાર્ય કરે છે. ઇહાં કોઇ પૂછે જે અલોકાકાશમાં તો બીજું કોઇ દ્રવ્ય નથી તો અલોકાકાશ કયા દ્રવ્યને અવગાહદાન આપે છે તેને ઉત્તર કહે છે જે અલોકાકાશમાં અવગાહ કરવાની શક્તિ તો લોકાકાશ જેવીજ છે પરંતુ તિહાં અવગાહનો દાન લેનાર દ્રવ્ય કોઇ નથી માટે અવગાહદાન કરતો નથી અને પુદ્ગલ દ્રવ્ય મિલવા વિખરવારૂપ ક્રિયા કરે છે, તથા કાલદ્રવ્યં વર્ત્તના રૂપ ક્રિયા કરે છે, અને જીવ દ્રવ્ય જ્ઞાન લક્ષણ ઉપયોગરૂપ ક્રિયા કરે છે. એમ સર્વ દ્રવ્ય પોતાને પરિણામી સ્વસત્તાની ક્રિયા કરે છે. એ દ્રવ્યત્વપણો કહ્યો.

૪ પ્રમેયત્વં કહેતાં પ્રમેયપણો જે છ દ્રવ્યમાં પ્રમેયપણો છે, તેનો પ્રમાણ કેવલી પોતાના જ્ઞાનથી કરે છે, જે ધર્માસ્તિકાય તથા અધર્માસ્તિકાય અને આકાશાસ્તિકાય એકેક દ્રવ્ય છે, અને જીવદ્રવ્ય અનંતા છે, તેહની ગણતી કહે છે. સંજ્ઞી મનુષ્ય સંખ્યાતા છે, અસંજ્ઞી મનુષ્ય અસંખ્યાતા છે, નારકી અસંખ્યાતા છે, દેવતા અસંખ્યાતા છે, તિર્યંચ પંચેન્દ્રિય અસંખ્યાતા છે, બેઇન્દ્રી અસંખ્યાતા છે. તેરિન્દ્રી ચૌરેંદ્રીય અસંખ્યાતા છે, પૃથ્વીકાય અસંખ્યાતા, અપકાય અસંખ્યાતા, તેઉકાય અસંખ્યાતા, વાયુકાય અસંખ્યાતા, પ્રત્યેક વનસ્પતિ જીવ અસંખ્યાતા, તે થકી સિદ્ધના જીવ અનંતા તે થકી બાદર નિગોદના જીવ અનંત-

गुणा एटले बादर निगोद ते कदमूल आदु सुरण प्रमुख एहने सुइने अग्रभागें अनंता जीव ठे ते सिद्धना जीवथी अनतगुणा छे अने सूक्ष्मनिगोद सर्वथी अनतगुणा छे. सूक्ष्मनिगोदनो विचार कहे ठे जेटला लोकाकाशना प्रदेश तेटला गोला छे ते एकेक गोलामा असख्याता निगोद ठे. निगोद शब्दनो अर्थ ए छे जे अनता जीवनो पिंड भूत एक शरीर तेहने निगोद कहियें ते एकेकी निगोदमध्ये अनंता जीव छे ते अतीतकालना सर्व समय तथा अनागतकालना सर्व समय अने वर्तमान कालनो एक समय तेने मेला करी अनतगुणा करीये एटला एक निगोदमा जीव ठे एटले अनंता जीव छे ए संसारी जीव एकेकाना असंख्याता प्रदेश छे, अने एकेका प्रदेशे अनंति कर्मवर्गणा लागी छे. ते एकेक वर्गणा मध्ये अनंता पुद्गल परमाणु छे एम अनता परमाणु जीव साथे लाग्या छे ते थकी अनत गुणा पुद्गल परमाणु जीवथी रहित छुटा छे.

गोलाय असंखिज्जा, असंख निगोयओ हवइ गोलो॥
इक्किक्कमि निगोए, अणंतजीवा मुणेयव्वा ॥१॥

अर्थ—लोकमांहे असंख्याता गोला छे, एकेका गोला मध्ये असंख्याति निगोद ठे.एकेक निगोदमा अनंता जीव छे॥

सत्तरस समहियाकिरी।इगाणुपाणुमि हुंति खुड्डभवा
सगतीससयतिहुत्तर पाणु पुण इग मुहुत्तमि ॥१॥

अर्थ—निगोदिया जीव ते मनुष्यना एक उसासमां सत्तर १७ भव जाजेरा करें छे अने सडत्रीससो तिहुंतेर ३७७३ श्वासोछ्वास एक मुहूर्त्तमा थाय.

पंणसट्ठि सहस्य पणसय। छत्तिसा इग मुहुत्त खड्डभवा
आवलियाणं दो सय । छपन्ना एग खुड्डभवे ॥१॥

अर्थ—निगोदना जीव एक मुहूर्तमां ६५५३६ भव करे अने निगोदनो एक भव २५६ आवलीनो छे. क्षुल्लक भवनो ए प्रमाण छे.

अत्थि अणंताजीवा, जेहिं न पत्तो तसाइपरिणामो
उवज्जंतियंचयंतिय, पुणोवि तत्थेव तत्थेव ॥२॥

अर्थ—निगोदमां अनंता जीव एहवा छे, जे जीव त्रसपणो पहेला किवारें पाम्या नथी अनंतो काल पूर्वें गयो अने अनंतो काल जाशे पण ते जीव वारंवार तिहांज उपजे छे अने तिहांज चवे छे. एम एक निगोदमां अनंता जीव छे ते निगोदना बे भेद छे. एक व्यवहार राशी निगोद, अने बीजो अव्यवहारराशी निगोद. तेमां जे वादर एकेंद्रियपणो आवें त्रसपणा पामीने पाछा निगोदमां जाइ पड्या छे ते निगोदिया जीवने व्यवहार राशिया कहियें, अने जे जीव कोइ पण काले निगोदमांथी निकल्या नथी ते जीव अव्यवहारराशीया कहियें. अने इहां मनुष्यपणाथी जेटला जीवकर्म खपावीने एक समयमां मोक्षे जाय छे तेटला जीव तेज समये अव्यवहारराशी सूक्ष्म निगोदमांथी निकलीने उंचा आवे छे. जो दश जीव मोक्ष जाय तो दश जीव निकले. कोइक वेलाए भव्य जीव ओछा निकले तो ते ठेकाणे एक बे अभव्य निकले पण व्यवहारराशीमां जीव कोइ वधे घटे नहीं. एवा निगोदना असंख्याता लोक मांहेला गोला ते छदिशीना आव्या पुद्गलने आहारादिपणे ले छे ते सकल गोला कहेवाय. अने लोकांतना प्रदेशे जे निगोदना गोला रह्या छे तेने त्रण दिशीना आहारनी फरशना छे माटे

विकल गोला कहियें. ए सूक्ष्म निगोदमा पांच थावरना सूक्ष्म जीव ते सर्व लोकमा काजलनी कुंपलीनी पेरे भर्या थका व्यापी रह्या छे अने साधारणपणो ते मात्र एक वनस्पतिमाज छे पण चार थावरमा नथी. ए सूक्ष्म निगोदमा अनतु दुःख छे तेनुं उदाहरण कहे छे. सातमी नरकनु आयुष्य तेत्रीस सागरोपमनुं छे ते तेत्रीस सागरोपमना जेटला समय थाय तेटला वखत सातमी नरकमा उत्कृष्टो तेत्रीस सागरोपमने आयुषे कोइक जीव उपजे तेटला (असंख्याता) भवमां जेटलु छेदन भेदननुं दु ख थाय ते सर्व एकठु करियें तेथी अनतगणुं दुःख निगोदना जीव एक समयमा भोगवे छे. दृष्टात जेम कोइक मनुष्यने साडात्रण क्रोड लोहानी सुइने अग्निथी तपावीने कोइक देवता समकाले चापे तेने जे वेदना थाय तेथी अनतगुणी वेदना निगोद मध्ये छे, अने भव्य जीवने निगोदनु कारण ते अज्ञान दशा छे, माटे तेहनो त्याग करो. ए निगोदनो विचार कह्यो. ए सर्व प्रमेयनो प्रमाता आत्मा पोताना ज्ञान गुणे करी प्रमेयनो प्रमाण करे ए प्रमेयपणो कह्यो.

५ सत्त्वपणो ते छ द्रव्य एक समयमा उपजे विणसे छे अने स्थिरपणे छे उत्पाद व्यय ध्रुवपणो तेहिज सत्पणो. "उत्पाद व्ययध्रुवयुक्त सत्" इति तत्त्वार्थ वचनात् ते विस्तारथी कही देखाडे छे जेधर्मास्तिकायना असख्याता प्रदेश छे तिहां एक प्रदेशमा अगुरुलघु असख्यातो छे अने बीजा प्रदेशमां अनंतो अगुरुलघु छे, त्रीजा प्रदेशमा सख्यातो अगुरुलघु छे एम असंख्याता प्रदेशमा अगुरुलघुपर्याय घटतो वधतो रहे छे ते अगुरुलघु पर्याय चल छे ते जे प्रदेशमा असख्यातो छे ते प्रदेशमा अनतो थाय छे, अने अनताने ठेकाणे असख्याता थाय छे. एम लोकप्रमाण असंख्यात

प्रदेशमां शरीखो समकाले अगुरु लघु पर्याय फिरे छे ते जे प्रदेशमां असंख्यातो फिटीने अनंतो थाय छे, ते प्रदेशमां असंख्यापणानो विनाश छे, अने अनंतपणानो उपजवो छे, अने अगुरुलघुपणे गुण ध्रुव छे, एम उपजवो विणसवो अने ध्रुव ए त्रणे परिणाम छे. अधर्मास्तिकायमां पण ए त्रणे परिणाम असंख्यात प्रदेशे सदा समय समयमां परिणमी रह्या छे. तेमां पण उपजे विणशे अने स्थिर रहे छे. एम आकाशना अनंता प्रदेशमां पण एक समये त्रण परिणाम परिणमे छे अने जीवना असंख्याता प्रदेश छे ते मध्ये पण उपजे विणसे थिर रहे (छे) तथा पुद्गल परमाणुमां पण समये समये थाय छे अने कालनो वर्त्तमान समय फिटीने अतीतकाल थाय छे तो ते समयमां वर्तमानपणानो विनाश छे अने अतीतपणानो उपजवो छे काल पणे ध्रुव छे. ए स्थूल थकी उत्पाद व्यय ध्रुवपणो कह्यो, अने वस्तुगते मूलपणे ज्ञेयने पलटवे ज्ञाननो पण ते भासनपणे परिणमवो थाय ते पूर्व पर्याय भासननो व्यय अने अभिनव ज्ञेयना पर्याय भासननो उत्पाद तथा ज्ञानपणानो ध्रुव ए रीते सर्व गुणना धर्मनी प्रवृत्तिरूप पर्यायनो उत्पाद व्यय श्रीसिद्धभगवन्तमां पण थइ रह्यो छे. एमज धर्मास्तिकायना प्रदेशे ते क्षेत्र गत पुद्गल तथा जीवने पहेले समये असंख्यात चलण सहायीपणो परिणमतो हतो अने बीजे समये अनन्त परमाणु तथा अनन्ता जीव प्रदेशने चलन सहायी थयो तेवारें असंख्याता चलन सहायनो व्यय, अने अनंता चलन सहायनो उपजवो, अने गुणपणे ध्रुव, एम धर्मद्रव्यमध्ये उत्पाद व्यय थइ रह्यो छे. तेमज अधर्मादिक द्रव्यने विषे पण भाववुं. तथा वली कार्य कारणपणे उत्पाद व्यय तथा अगुरुलघुना चलननो उत्पाद व्यय पंचास्तिकायने विषे कहेवो. तथा कालद्रव्य ते उपचार छे तेनुं स्वरूप सर्व उपचारथीज कहेवुं. ए रीते सर्व

द्रव्यमां सत्पणो छे जो अगुरुलघुनो भेद न थाय तो पछे प्रदेशनो मांहोमांहे भेद केम थाय ? ते माटे अगुरुलघुनो भेद सर्वमा छे अने जेनो उत्पाद व्यय रूप सत्पणो एक छे ते द्रव्य एक छे. तथा जेनो उत्पाद व्यय सत्पणो जूदो ते द्रव्य पण जूदो छे एटले सत् कहेता सत्त्वपणो कह्यो.

६ अगुरुलघुपणो कहे छे. जे द्रव्यनो अगुरुलघु पर्याय छे ते छ प्रकारनी हानि वृद्धि करे छे. तेमा छ प्रकारनी वृद्धि छे १ अनन्त भागवृद्धि, २ असख्यातभागवृद्धि, ३ सख्यातभाग वृद्धि, ४ संख्यातगुणवृद्धि, ५ असख्यातगुणवृद्धि, ६ अनंतगुण वृद्धि. हवे छ प्रकारनी हानि कहे छे. १ अनतभागहानि, २ असंख्यातभागहानि, ३ सख्यातभागहानि, ४ संख्यातगुणहानि, ५ असंख्यातगुणहानि, ६ अनंतगुणहानि ए रीते छ प्रकारनी वृद्धि तथा छ प्रकारनी हानि ते सर्व द्रव्यमां सदा समय समय थइ रही छे. वृद्धि ते उपजवो अने हानि ते व्यय कहियें. ए अगुरुलघुपणो कह्यो. नहीं गुरु तथा नहीं लघु ते अगुरुलघु स्वभाव कहियें. ए सर्व द्रव्य मध्ये छे, ते श्री भगवती सूत्रें "सव्वदव्वा सव्वगुणा सव्वपएसा सव्वपज्जवा सव्वद्धा अगुरुलहुआए" अगुरुलघु स्वभावने आवरण नथी तथा आत्मा मध्ये जे अगुरुलघुगुण ते आत्माना सर्व प्रदेशे क्षायिक भाव थये सर्व गुण सामान्यपणे परिणमे, पण अधिका ओछा परिणमे नही ते अगुरुलघुगुणनु प्रवर्तन जाणवुं ते अगुरुलघु गुणने गोत्रकर्म रोके छे. ए अगुरुलघु स्वभाव ते सर्व द्रव्यमा छे.

हवे गुणनी भावना कहे छे तिहा जेटला छए द्रव्यमां सरीखा गुण छे ते सामान्य गुण कहियें, अने जे गुण एक द्रव्यमा छे अने बीजा द्रव्यमा नथी ते विशेष गुण कहियें जे गुण

कोइक द्रव्यमां छे अने कोइक द्रव्यमां नथी ते साधारण अ-
साधारण गुण कहियें. एम ए छ द्रव्यमां अंनतगुण, अनन्त
पर्याय, अनन्त स्वभाव सदा शाश्वता छे. जेम श्री केवली
भगवंते प्ररूप्या ते सर्व जे रीते छे ते रीते सद्दहणा पूर्वक
यथार्थ उपयोगथी श्रुतज्ञानादिकथी यथार्थपणे जाणवा-सद्दहवा.
ए निश्चयज्ञान मोक्षनुं कारण छे. जे जीव ज्ञान पाम्यो ते जीव
विरति करे छे ते चारित्र कहियें. ज्ञाननुं फळ विरतिपणो छे
ते मोक्षनुं तत्काल कारण छे.

हवे निश्चय चारित्र अने व्यवहार चारित्रनो विचार कहे छे.
तेमां प्रथम व्यवहार चारित्र ते जे प्राणातिपातविरमण प्रमुख
पंच महाव्रतरूप ते सर्व विरति कहियें अने स्थूलप्राणातिपात-
विरमण व्रतादिक श्रावकनां बारव्रत ते देश विरति चारित्रनां जाणवुं.
ए व्यवहार चारित्र सुखनुं कारण छे एवी करणीरूप श्रावकना
बार व्रत अने यतिनां पांच महाव्रत ते अभव्यने पण आवे
तेथी देवतानी गति पामे पण सकाम निर्ज्जरानुं कारण न थाय.
इहां कोइ पूछे के मोक्षनुं कारण नथी तो एटलुं कष्ट शा वास्ते
करियें? तेने उत्तर जे त्याग बुद्धि निश्चय ज्ञान सहित चारित्र ते
मोक्षनुं कारण छे माटे निश्चय चारित्र सहित व्यवहार चारित्र
पालवुं ते निश्चय चारित्र कहे छे. शरीर, इन्द्रिय, विषय, कषाय,
योग ए सर्व परवस्तु जाणी छोडवा तथा आहार ते पुद्गल वस्तु
जाणी छांडवो. आत्मा अणाहारी छे ते माटे मुजने आहार
करवो घटे नहीं. आहार ते पुद्गल छे, आत्मा अपुद्गली छे ते
माटे त्याग करवो. तद्रूप जे तप ते तप निश्चय चारित्रमां जाण-
वुं. चारित्र कहेतां चंचलता रहित थिरताना परिणाम अने

आत्म स्वरूपने विषे एकत्वपणे रमण तन्मयता स्वरूप विश्राति-तत्त्वानुभव ते चारित्र कहियें. ते चारित्रना बे भेद छे एक देशविरति, बीजुं सर्व विरति. तिहा देश विरति कहेतां श्रावकनां बार व्रत ते बार व्रत निश्चय तथा व्यवहारथी कहे छे.

१ प्राणातिपात विरमण व्रत-ते परजीवने आपणा जीव सरीखो जाणी सर्व जीवनी रक्षा करे ते व्यवहार दया थइ माटे व्यवहार प्राणातिपात विरमण व्रत जाणवु अने जे आपणो जीव कर्म वश पडयो दु खी थाय छे ते आपणा जीवने कर्मबंधनथी मुकाववु अने आत्म गुण रक्षा करी गुण वृद्धि करवी ते स्वदया बंधहेतु परिणति निवारि स्वरूप गुणने प्रगटपणे करवा, जे गुण प्रगट थयो ते राखवो, एटले ज्ञाने करी मिथ्यात्व टाली आपपणा जीवने निर्मल करे ते निश्चयथी प्राणातिपात विरमण व्रत कहियें.

२ मृषावाद विरमणव्रत कहे छे जूठु वचन बिलकुल बोलवु नही ते व्यवहार मृषावाद विरमणव्रत, हवे निश्चय कहे छे जे पर पुद्गलादिक वस्तुने आपणी कहेवी ते मृषावाद वचन छे. अने जीवने अजीव कहे तथा अजीवने जीव कहे इत्यादिक अज्ञान ते भाव मृषावाद छे. अथवा सिद्धान्तना अर्थ खोटा कहे ए मृषावाद जेणे छाडयो ते निश्चय मृषावाद विरमणव्रत कहियें एटले बीजा अदत्तादानादिक व्रत जो भाजे (भागे) तो तेनो मात्र चारित्र भंग थाय पण ज्ञान दर्शनना भग न थाय अने जेणे निश्चय मृषावाद विरमणना भग कर्यो तेणे समकित तथा ज्ञान अने चारित्र ए त्रणेनो भंग कर्यो, तथा आगममा एम कह्यु छे जे एक साधुये चोथो व्रत भंग कर्यो अने एक साधुयें

बीजो मृषावाद व्रत भंग कर्यो तो जेणे चोथो व्रत भंग कर्यो ते आलोयण लेइ शुद्ध थाय पण जे सिद्धान्तना अर्थनो मृषा उपदेश आपे ते आलोयण लीधे पण शुद्ध थाय नहीं.

३ अदत्तादान विरमण व्रत कहे छे, जे पारकुं धन वस्तु छुपावे; चोरी करे; ठगबाजी करी लीये ते चोरी छे, एटले पारकी वस्तु धणीना दीधा विना लेवी नही ए व्यवहारथी अदत्तादानविरमण व्रत जाणवुं. अने जे पांच इन्द्रियना त्रेवीस विषय, आठ कर्मवर्गणा इत्यादिक परवस्तु लेवी नहीं तथा तेनी वांछा न करवी ते आत्माने अग्राह्य छे माटे. ते निश्चयथी अदत्तादानविरमण व्रत कहियें. इहां कोइ पूछे जे विषयनी अने कर्मनी वांछा कोण करे छे? तेने उत्तर जे पुण्यने भेलो लेवा योग्य कहे छे ते जीव कर्मनी वांछा करे छे. जे पुण्यना ४२ भेद छे ते नाम कर्मनी शुभ प्रकृति छे एटले जे व्यवहार अदत्तादान तो नथी लेता पण अंतरंग पुण्यादिकनी वांछा छे तेने निश्चय अदत्तादान लागे छे.

४ मैथुन विरमणव्रत कहे छे. जे पुरुष परस्त्रीनो परिहार करे, तथा जे स्त्री परपुरुषनो परिहार करे. इहां साधुने स्त्रीनो सर्वथा त्याग छे अने गृहस्थने परणेली स्त्री मोकली छे. परस्त्रीनो पच्चखाण छे ते व्यवहारथी मैथुननुं विरमण कहियें अने जे विषयनी अभिलाषानो तथा ममता तृष्णानो त्याग, परभाव वर्णादिक परद्रव्यना स्वामित्वादिक तेनो अभोगीपणो आत्मा स्वगुण ज्ञानादिकनो भोगी छे अने ए पुद्गलखंध ते अनंता जीवनी एंठ छे तेने केम भोगवे? ए रीते त्याग निश्चयथी मैथुन विरमण कहियें. जेणे बाह्य विषय छांड्यो छे अने अंतरंग लालच छुटी नथी तो तेहने ते मैथुनना कर्म लागे छे.

५ परिग्रह परिमाणव्रत कहे छे. परिग्रह धन-धान्य-दास-

दासी०चतुष्पद-जमीन-वस्त्र आभरणनो त्याग तेमां साधुने तो सर्वथा परिग्रहनो त्याग छे तथा श्रावकने इच्छा० परिमाण छे जेटली इच्छा होय तेटलो परिग्रह मोकलो राखे. बीजानी विरति करे ए व्यवहारथी कह्यो अने जे भाव कर्म रागद्वेष अज्ञान द्रव्य कर्म ज्ञानावरणीय प्रमुख आठ कर्म अने शरीर इन्द्रियनो परिहार एटले कर्मने जाणी छांडवा ते निश्चयथी परिग्रहनो त्याग एटले परवस्तुनी मूर्छा छांडवी जेणे मूर्छा छोडी तेणे परिग्रह छोड्योज छे एम जाणवु

६ दिशिपरिणाम व्रत कहे छे. तिहां तिरछि चार दिशी पांचमी अधो छट्ठी ऊर्ध्वं ए छ दिशिना क्षेत्रनो मान करी मोकलो राखे ते व्यवहारथी दिशिपरिणाम कहियें अने चार गतिमा भटकवु ते कर्मनुं फल छे एम जाणी तेथी उदासीपणो अने सिद्ध अवस्था (नो) शुं उपादेयपणो ते निश्चय दिशिपरिमाण व्रत कहियें.

७ भोगोपभोगपरिमाण व्रत कहे छे. जे एकवार भोगववुं ते भोग अने वारम्वार भोगववुं ते उपभोग तेनो परिमाण करे ते व्यवहार भोगोपभागव्रत कहिये, अने जे व्यवहारनयें कर्मनो कर्त्ता भोक्ता जीव छे अने निश्चयनये तो कर्मनो कर्त्ता कर्म छे आत्मा अनादिनो परभाव भोगी थयो छे तेथी परभावग्राहक अने परभावरक्षक थयो एटले आत्मानी ज्ञायकता, ग्राहकता, भोग्यता, रक्षकता बीगडे कर्त्ता पणो बीगड्यो, तेवारे परभाव कर्त्ता थयो तेथी परभाव रंगीपणे आठ कर्मनो कर्त्ता थयो छे पण सत्तायें तो स्वभावनो कर्त्ता छे पण उपकरण अवराणा तेथी स्वकार्य करी शकतो नथो. विभावने करे छे, अज्ञानपणे जीवनो उपयोग मल्यो छे. पोताना ज्ञानादिक गुणनो कर्त्ता

भोक्ता छे एहवो स्वरूपानुयायी परिणाम ते निश्चयभोगोपभोग-व्रत त्याग जाणवो.

८ अनर्थदण्डविरमणव्रत कहे छे. काम विना जीवनो वध करवो. पारका वास्ते आरम्भ प्रमुख करवानी आज्ञा प्रमुख आपवी ते व्यवहार अनर्थदंड अने शुभाशुभ कर्म ते मिथ्यात्व अविरति कषाय योगथी बंधाय छे तेने जीव आपणा करी जाणे ए निश्चयथी अनर्थदंड.

९ सामायिक व्रत कहे छे. जे मन वचन कायाने आ-रम्भथी टालीने तेने निरारम्भपणे वर्त्तावे ते व्यतहार सामायिक जाणवो. अने जे जीव ज्ञान, दर्शन, चारित्र गुण विचारे सर्व जीव सत्ता गुण एक समान जाणी सर्वथी समतापरिणाम ते निश्चय समतारूप सामायिक कहियें.

१० देशावगाशिक व्रत कहे छे. जे मन वचन काय योग एक ठोर करी एकस्थानके बेसी धर्म ध्यान करवो ते व्यवहार देशावगाशिक कहियें. अने जे श्रुतज्ञाने करी छ द्रव्य ओलखीने पांच द्रव्यनो त्याग करे अने ज्ञानवन्त जीवने ध्यावे ते निश्चय देशावगाशिक व्रत कहियें.

११ पौषध व्रत कहे छे. जे चार पहोर अथवा आठ पहोर सुधी समता परिणामे सावद्य छोडी निरारम्भपणे सझायध्या-नमां प्रवर्ते ते व्यवहार पोशह कहियें, अने पोताना जीवने ज्ञान ध्यानथी पोषीने पुष्ट करे ते निश्चयथी पौषध व्रत कहियें. जीवने पोताना स्वगुणे करी पोषीजे तेणे पौषध कहियें.

१२ अतिथिसंविभाग व्रत कहे छे. जे पोशहने पारणे अ-थवा सदा सर्वदा साधुने तथा जैनधर्मिश्रावकने पोतानी शक्ति प्रमाणे दान देवुं ते व्यवहार अतिथिसंविभाग कहियें अने पो-

ताना जीवनें अथवा शिष्यने ज्ञाननु दान ते भणवुं, भणाववुं, सुणवु सुणाववुं, ते निश्चयथी अतिथिसंविभाग व्रत कहियें एटले श्रावकनां बार व्रत कह्यां ते समकित सहित जे निश्चय तथा व्यवहारथी बार व्रत धारे ते जीवने पांचमे गुणठाणे देशविरति श्रावक कहियें देश केहता देशथकी थोडोशा व्रतिपणो छे माटे. अने यतिने सर्वथी व्रतिपणो छे तेथी पांच महाव्रत छे साधुने पांच महाव्रतमा सर्व व्रत आव्या. ए निश्चय त्यागरूप ज्ञान ध्यान संवर निर्ज्जरामां थिरताना परिणाम ते निश्चय चारित्र. तेना एक उत्सर्ग बीजो अपवाद ए बे मार्ग छे तेमां जे उत्कृष्ट तीक्षण परिणाम ते उत्सर्ग अने ते राखवाने कारणरूप ते अपवाद—उक्तच ॥ " संघरणमि अशुद्ध, दुन्नवि गिन्ह तदेतयाणहियं ॥ आउर दिठ्ठं तेण, ते चेवहिय असंघरणे " ॥ १ ॥ एटले ज्यां सुधी साधक भावने बाधक न पडे त्यां सुधी जेहनी ना कही ते आदरवो नहि अने जो साधक परिणाम रहेता न दीठा तेवारे जेहनी ना ते आचरे तेने अपवाद मार्ग कहिये. जे आत्मगुण राखवाने करवो ते अपवाद, अने गुणीने रागे—भक्तिये करवो ते प्रशस्त. ए बे तो साधन छे अने जे औदयिकने अखमवायी करवुं ते अतिचार छे तथा सरलो अने औदयिक माटे, आसक्तपणे करवुं ते पडिवाइ छे ते माटे अपवाद मार्ग ते परिणाम दृढ रहे तेम आचार्ये करवो

हवे चार ध्यान कहे छे. १ आर्तध्यान, २ रौद्रध्यान, ३ धर्मध्यान, ४ शुक्लध्यान तिहां पहेलां बे ध्यान ते अशुभ कहियें अने पाछलां बे ध्यान ते शुभ छे. जे एक ध्येयने विषे अंतर्मुहूर्त चित्तनो—उपयोगनो तन्मय एकाग्रपणे थीर रहेवो ते ध्यान अने केवलीने योगनो रोकवो ते ध्यान उक्तच-

"अंतो मुहूत्ता मित्ता चित्तावत्थाणमेग वथ्थुम्मि, छउमत्थाणं, झाणं, जोगनिरोहो जिणाणंतु." तिहां मनमां आहट्ट दोहट्टना परिणाम ते आर्तध्यान कहिये तेना चार पाया छे. १ भाइ, मित्र, सज्जन, माता, पिता, स्त्री, पुत्र, धन, प्रमुख इष्ट वस्तुनो वियोग थवाथी विलाप करे ते पहेलो इष्ट वियोगनामा आर्तध्यान तथा २ अनिष्ट जे भुंडां दुःखनां कारण, दुश्मन दरिद्रीपणो, तथा कुपुत्रादि मलवाथी मनमां दुःख चिंता उपजे ते अनिष्ट संयोग नामा आर्तध्यान. ३ शरीरमां रोग उपना थका दुःख करे, चिन्ता घणी करे ते रोग चिंतानामा आर्तध्यान. ४ मनमां आगलना वखतनो शोच करे जे आ वर्षमां आ काम करशुं, आवता वर्षमां अमुक काम करशुं तो अमुक लाभ थशे अथवा दान .शील तपनुं फल मांगे जे आ भवमां तप कीधो छे माटे आवते भवे इन्द्र चक्रवर्तिनी पदवी मले एहवी आगला भवनी वांच्छा ते अग्रशोचना परिणाम उपजे अथवा नियाणानो करवो ते निदान आर्तध्यान कहीये, ए धर्मकरणीनां फलनुं नियाणुं समकिती न करे. ए आर्तध्याननो चोथो पायो जाणवो. ए आर्तध्यानना चार भेद कह्या. ते तिर्यंच गतिना कारण छे. ए ध्यानना परिणाम ते पांचमा अथवा छठ्ठा गुणठाणा सुधी होय.

२ जे कठोर परिणामनुं चितवन ते रौद्रध्यान. तेना चार भेद छे. १ जीवहिंसा करीने हर्ष पामे अथवा बीजो कोइ हिंसा करतो होय तेने देखी खुशी थाय अथवा युद्धनी अनुमोदना करे ते हिंसानुबंधी रौद्रध्यान. २ जूठुं बोलीने मनमां हर्ष पामे के जुओ में केवो कपट केळव्यो. मारा जूठापणानी खबर कोइने पडी नहीं, एवो मृषावाद रूपपरिणाम ते मृषानुबंधी रौद्रध्यान. ३ चोरी करी अथवा ठगाइ करी मनमां खुशी थाय

के मारा जेवो जोरावर कोण छे, हुं पारको माल खाउं छुं एवो परिणाम ते चौरानुबंधि रौद्रध्यान ४ परिग्रह धन धान्य परिवार घणो वधवानी लालच होय ते धन अथवा कुटुंबने माटे गमे तेवुं पाप करे अथवा घणो परिग्रह मिल्याथी अहंकार करे ते परिग्रहरक्षणानुबंधी रौद्रध्यान. ए रौद्रध्यानना चार भेद कह्या. ए ध्यान नरक गति पमाडवानुं कारण छे महा अशुभकर्मनुं कारण छे. ए पांचमा गुणठाणा सुधी छे अने छठे गुणठाणे पण एक हिंसानुबंधीरौद्रध्यानना परिणाम कोइक जीवने होय.

हवे धर्मध्यान कहे छे. जे व्यवहार क्रियारूप ते कारण धर्म तथा श्रुतज्ञान अने चारित्र ए उपादानपणे साधन धर्म तथा रत्नत्रयी भेदपणे ते उपादान शुद्ध व्यवहार उत्सर्गाऽनुयायी ते अपवाद धर्म जाणवो. अने अभेद रत्नत्रयी ते साधन शुद्ध निश्चयनयें उत्सर्ग धर्म अने (धम्मो वत्थु सहावो) जे वस्तुनो सत्तागत शुद्ध पारिणामिक स्वगुण मवृत्ति कर्त्रादिक अनंतानंद रूप सिद्धावस्थायें रह्यो ते एवंभूत उत्सर्ग उपादान शुद्धधर्म, ते धर्मनुं भासन रमण एकाग्रतापणे चिंतन तन्मयतानो उपयोग एकत्वनो चिंतववो ते धर्मध्यान कहियें. तेना पाया चार छे ते कहे छे.

१ आज्ञाविचयधर्मध्यान–जे वीतराग देवनी आज्ञा साची करी सद्दहे एटले भगवते छ द्रव्यनुं स्वरूप नय प्रमाण निक्षेपा सहित सिद्ध स्वरूप, निगोद स्वरूप जे कह्या तेम सद्दहे, वीतरागनी आज्ञा नित्य अनित्य स्याद्वादपणे निश्चय व्यवहारपणे माने सद्दहे ते आज्ञा प्रमाणे यथार्थ उपयोग भासन थयो तेने हर्षे करी ते उपयोग मध्ये निर्धार, भासन, रमण, अनुभवता, एकता, तन्मयपणो ते आज्ञाविचय धर्मध्यान कहियें.

२ अपायविचयधर्मध्यान ते जीवमां अशुद्धपणे कर्मना योगथी संसारी अवस्थामां अनेक अपाय कहेतां दूषण छे ते अज्ञान, राग, द्वेष, कषाय, आस्रव ए मारा नथी. हुं एथकी न्यारो छुं. हुं अनंतज्ञान, दर्शन, चारित्र, वीर्यमयी, शुद्ध, बुद्ध, अविनाशी छुं. अज, अनादि, अनंत, अक्षर, अनक्षर, अचल, अकल, अमल, अगम्य, अनामी, अरूपी, अकर्म्मा, अबंधक, अनुदय अनुदीरक, अयोगी, अभोगी, अभेदी, अवेदी, अछेदी, अखेदी, अकषायी, असखाइ, अलेशी, अशरीरी, अणाहारी, अव्यावाध, अनवगाही, अगुरुलघु, अपरिणामी, अतीन्द्रिय, अप्राणी, अयोनि, असंसारी, अमर, अपर, अपरंपार, अव्यापी, अनाश्रित, अकंप, अविरुद्ध, अनाश्रव, अलख, अशोकी, असंगी, लोकालोकज्ञायक, एवो शुद्ध चिदानंद मारो जीव छे, एहवो एकाग्रतारूप ध्यान ते अपायविचयधर्मध्यान जाणवो.

३ विपाकविचय धर्मध्यान कहे छे. जे एहवो जीव छे तोपण कर्मवशें दुःखी छे ते कर्मनो विपाक चिंतवे, जे जीवनो ज्ञानगुण ते ज्ञानावरणीय कर्मे दाब्यो छे, अने दर्शनावरणीय कर्मे दर्शनगुण दाब्यो छे, एम आठ कर्मे जीवना आठ गुण दाब्या छे. एटले आ संसारमां भमतां थकां जीवने जें सुखदुःख छे ते सर्व कर्मनां कीधां छे. माटे सुख उपने राचवुं नहीं अने दुःख उपने दिलगीर थवुं नही. कर्म स्वरूपनी प्रकृति, स्थिति, रस, अने प्रदेशनो बंध, उदय, उदीरणा, तथा सत्ता, चिंतवन एकाग्रता परिणाम ते विपाकविचय धर्मध्यान.

४. संस्थानविचयधर्मध्यान कहे छे. ते चउद राजमान लोकनुं स्वरूप विचारे जे ए लोक ते चउदराज ऊंचो छे ते मध्ये सातराज अधोलोक छे. विचमां अढारसो योजन मनुष्य क्षेत्र त्रिछो लोक छे ते ऊपर कांइक ऊणो सातराज ऊर्ध्वलोक

छे, तेमा सर्व वैमानिक देवता वसे छे, अने ऊपरे सिद्ध शिला सिद्ध क्षेत्र छे. ए रीते लोकनुं प्रमाण छे, ए लोकनु सस्थान वैशाख ठे. अनतो काल आपणा जीवें संसारमा भमता सर्व लोकने जन्म मरण करी फरस्यो ठे, एवु जे लोक स्वरूप तथा लोकने विषे पंचास्तिकायनु अवस्थान तथा परिणमन द्रव्य मध्ये गुणपर्यायनुं अवस्थान तेनो जे एकाग्रताये तन्मयचिंतवन परिणाम एहवु जे ध्यान ते संस्थान विचय धर्मध्यान कहियें. ए धर्मध्यानना चार पाया कह्या ए धर्मध्यान चोथा गुणठाणाथी मांडीने सातमा गुणठाणा सुधी छे.

हवे शुक्लध्यान कहे छे. शुक्ल केहता निर्मल, शुद्ध, पर आलंबन विना आत्माना स्वरूपने तन्मयपणे ध्यावे एहवू ध्यान तेने शुक्लध्यान कहियें. तेहना पाया चार छे ते कहे ठे.

१ पृथक्त्ववितर्कसप्रविचार—ते पृथक्त्व केहतां जीवथी अजीव जूदा करवा, स्वभाव विभाव तेने जूदा पृथक्पणे वहेंचण करवी, स्वरूपने विषे पण द्रव्य तथा पर्यायनो पृथक्पणे ध्यान करी, पर्याय ते गुणमा संक्रमावे अने गुण ते पर्यायमा सक्रमण करे ए रीते स्वधर्मने विषे धर्मांतरभेद ते पृथक्त्व कहियें अने तेनो वितर्क ते जे श्रुतज्ञाने स्थित उपयोग. अने सप्रविचार ते सविकल्पोपयोग एटले एक चिंतव्या पछी बीजो चिंतववो तेने विचार कहियें एटले निर्मल विकल्प सहित पोतानी सत्ताने ध्यावे ते पृथक्त्व वितर्कसप्रविचार पेहेलो पायो ए आठमा गुणठाणाथी माडी अग्यारमा गुणठाणा सुधी ठे.

२ एकत्ववितर्कअप्रविचार नामा बीजो पायो कहे छे, जे जीव आपणा गुणपर्यायनो एकता करी ध्यावे ते आवी रीते के जीवना गुणपर्यायअने जीव ते एकज छे, अने महारो जीव

सिद्धस्वरूप एकज छे एवो एकत्व स्वरूप तन्मयपणे अनंता आत्म धर्मनो एकत्वपणे ध्यानवितर्क केहतां श्रुतज्ञानावलंबीपणे अने अप्रविचार केहतां विकल्प रहित दर्शन ज्ञानो समयांतरे कारणता विना रत्नत्रयीनो एक समयी कारण कार्यतापणे जे वीर्य उपयोगनी एकाग्रता ते एकत्ववीतर्क अप्रविचार ध्यान, जाणवो. ए पायो बारमा गुणठाणे ध्यावे. ए बेहु पायामां श्रुतज्ञानावलंबनीपणो छे. पण अवधि मनःपर्यव ज्ञानोपयोगें वर्तता जीव कोइ ध्यान करी शके नहीं, ए बे ज्ञान परानुयायी छे. माटे ए ध्यानथी घनघातियां चार कर्म खपावे. निर्मल केवल ज्ञान पामे, पछे तेरमे गुणठाणे ध्यानंतरीकापणे वर्त्ते छे तेरमोना अंते अने चउदमे गुणठाणे बाकीना बे पाया ध्यावे.

३ सूक्ष्मक्रिया अप्रतिपाति पायो कहे छे. ते सूक्ष्म मन, वचन कायाना योग रुंधे, शैलेशी करण करी अयोगी थाय ते जे अप्रतिपाति निर्मलवीर्य अचलतारूप परिणाम ते सूक्ष्मक्रिया-अप्रतिपाति ध्यान जाणवुं. इहां सत्ताए ८५ प्रकृति रही हती ते मध्ये ७२ खपावे.

४ उच्छिन्नक्रियानिवृत्ति पायो कहे छे, जे योग निरुंध कीधापछें, १३ प्रकृति खपावे, अकर्मा थाय, सर्व क्रियाथी रहित थाय ते समुच्छिन्न क्रियानिवृत्ति शुक्लध्यान कहिये, ए ध्यान ध्यावतां शेष, दलखरणरूप क्रिया उच्छेदे, अवगाहना देहमानमांथी त्रीजो भाग घटाडे, शरीर मूकी इहांथी सातराज उपर लोकने अंते जाय, सिद्ध थाय. इहां शिष्य पूछे जे चौदमे गुणठाणे तो अक्रिय छे, तो सातराज उंचो गयो ए क्रिया केम करे छे? तेने उत्तर जे सिद्ध तो अक्रिय छे, परंतु पूर्व प्रेरणायें तुंबीगे दृष्टान्ते जीवमां चालवानो गुण छे. धर्मास्तिकाय मध्ये प्रेरणा गुण छे, तेथी कर्मरहित जीव मोक्षे जतां लोकने

अंते जइ रहे. इहा कोइ पूछे जे आगळ उंचो अलोक छे तिहां किम जातो नथी ? तेने ऊत्तर जे आगल धर्मास्तिकाय नथी माटे न जाय. वली कोइ पुछे जे तो अधोगतिये अथवा तिरच्छी गतिये केम नथी जातो ? तेने उत्तर जे कर्मना भारथी रहित-थयो हलवो थयो, माटे नीचो तथा डावो जिमणो न न जाय, कारण के प्रेरक कोइ नथी. तथा कपे नही केमके अक्रिय छे माटे. तथा कोइ पुछे जे सिद्धने कर्म केम लागतां नथी ! तेने कहे छे जे कर्म तो जीवने अज्ञानथी तथा योगथी लागे छे, ते सिद्धना जीवने अज्ञान तथा योग नथी, माटे कर्म लागे नही. ए चार ध्याननो अधिकार कह्यो.

हवे वली बीजां चार ध्यान कहे छे. १ पदस्थ, २ पिंडस्थ, ३ रूपस्थ, ४ रूपातीत. तेमां पहेलुं पदस्थ ध्यान कहे छे. जे अरिहंतादिक पाच परमेष्ठीना गुण संभारे, तेनो चित्तमा ध्यान करे ते पदस्थध्यान. २ पिंडस्थ कहेतां शरीरमां रह्या जे आपणो जीव तेमां अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय अने साधुपणाना गुण सर्व छे एहवो जे ध्यान ते पिंड कहेता जीव द्रव्य अथवा आकार अथवा स्थापना तेनु अवलंबन पामी गुणीना गुण माध्ये एकत्वता उपयोग करवो ते पिंडस्थ ध्यान. ३ रूपमा रह्यो थको पण ए मारो जीव अरूपी अनंत गुणी छे, जे वस्तुनो स्वरूप अतिशयावलंबी थया पछे आत्मानुं रूप एकतापणो एहवो जे ध्यान ते रुपस्थध्यान ए त्रण ध्यान धर्म ध्यानमा गणवा. ४ निरंजन, निर्मल, सकल्पविकल्प रहित अभेद एक शुद्ध सत्तारूप, चिदानद, तत्त्वामृत, असंग, अखड, अनन्तगुण पर्यायरुप, आत्मस्वरूपनुं ध्यान ते रुपातीत ध्यान जाणवु. इहा मार्गणागुणठाणा नयप्रमाण मति आदिक ज्ञान

क्षयोपशमभाव सर्व छांडवा योग्य थया. एक सिद्धना मूल गुणने ध्यावे ते रूपातीत ध्यान जाणवो. एटले मोक्षनुं कारण जे ध्यान ते कह्युं.

हवे भावना कहे छे. तेमां धर्म ध्याननी चार भावना कहे छे. १ मैत्री भावना–ते सर्व जीव साथे मित्रतानो भाव चितववो, सर्वनुं भलुं चाहवुं पण कोइनुं माठुं चितववुं नही. सर्व जीव ऊपर हित बुद्धि राखवी ते मैत्री भावना. २ गुणवंत अने ज्ञानादिक गुण उपरें राग जे गुणी श्री अरिहंतादिकनो योग मिल्ये जे अनंत गुण मोक्षना कारण तत्त्वभोगी तत्त्वविलासी एवा अद्भुत प्रभुजी अहो प्रभुजी, अहो प्रभुजीनी उपकारता, अहो प्रभुनी निःसंगता एहवो जे परिणाम ते अद्भुतता, वली दुःखे करी मोहाधीन, मोहमयी, पुद्गल रंगी, पराधीन मने एहवा परमात्मा प्रभु अथवा यथार्थ वादी गुरु तथा स्याद्वाद धर्मनो योग मिल्यो. आज मुजने चिंतामणिनी कोडी मिलि. आज माहरा मननो मनोरथ सफल थयो, एहवी आश्चर्यता तथा वली रखे मने एहवा कारणनो विरह पडे एहवो कायरता परिणाम ते बीजी प्रमोदभावना. ३ जे धर्मवंत उपर राग अने मिथ्यात्वी ऊपर राग नही तेम द्वेष पण नही कारण के हिंसक उपरे पण उत्तम जीवने करुणा उपजे. जा उपदेश थकी सारा मार्गे आवे तो तेने शुद्ध मार्गे आणवो, कदाचित् मार्गे न आवे तो पण द्वेष न राखवो केमके ते अजाण छे एम समजवुं एहवा जे परिणाम ते मध्यस्थ भावना. ४ सर्व जीवने पोताने तुल्य जाणी दया पाले, कोइने हणे नहीं तथा जे दुःखी अथवा धर्महीन तेवा जीव उपर करुणा तेना दुःख टाळवानो परिणाम तथा धर्महीन जीव देखीने एवो चिंतवे जे ए जीव किवारें धर्म

पामशे, यथार्थ आत्मसाधन पामी स्वरूप धर्मने किवारे (क्यारे) अवलंबशे एवो परिणाम, ते चोथी करणा केहतां दया भावना. ए चार भावना कही.

१ हवे बार भावना कहे छे. शरीर, कुटुम्ब, धन, परिवार सर्व विनाशी छे जीवनो मूलधर्म अविनाशी छे एम चितवबु ते पहेली अनित्य भावना. २ ससारमा मरण समये जीवने शरण राखनार कोइ नथी, एक धर्मनो शरण छे एवु चितवबु ते बीजी अशरणभावना. ३ मारा जीवे ससारमा भमता सर्व भव कीधा छे ए ससारथी हु किवारें छुटीश, ए संसार मारो नथी, हु मोक्षमयी छुं एम विचारवुं ते त्रीजी संसार भावना. ४ ए माहरो जीव एकला छे, एकलो आव्यो, एकलो जशे, पोतानां करेलां कर्म एकलो भोगवशे एम चितवबु ते चोथी एकत्व भावना ५ आ ससारमां कोइ कोइनो नथी एम चितवबु ते पांचमी अन्यत्वभावना. ६ आ शरीर अपवित्र मलमूत्रनी खाण छे, रोग-जराथी भर्यो छे, ए शरीरथी हु न्यारो छु, एम चितववो ते छट्ठी अशुचि भावना. ७ रागद्वेष, अज्ञान, मिथ्यात्व प्रमुख सर्व आस्रव छे, एम चितवबु ते सातमी आस्रव भावना. ८ ज्ञान ध्यानमा वर्त्ततो जीव नवा कर्म बांधे नहीं ते आठमी संवर भावना. ९ ज्ञान सहित क्रिया ते निर्ज्जरानु कारण छे, ते नवमी निर्ज्जरा भावना १० चउद राजलोकनुं स्वरूप विचारवु ते दशमी लोक स्वरूप भावना. ११ ससारमा भमता जीवने समकित ज्ञाननी प्राप्ति पामवी (थवी) दुर्लभ छे. अथवा समकित पाम्यो पण चारित्र सर्व विरति परिणाम रूप धर्म पामवो दुर्लभ छे ते अग्यारमी बोधिदुर्लभ भावना. १२ धर्मना कहणहार (कथक) गुरु तथा शुद्ध आगमनुं

सांभलवुं एहवी जोगवाइ मलवि दोहेली छे ते बारमी धर्मदुर्लभ भावना. एटले बार भावना कही. ए चारित्रनुं स्वरुप संपूर्ण कह्युं.

एवो समकित सहित ज्ञानचारित्र ते मोक्षनुं कारण छे: तेना उपर भव्य प्राणीयें उद्यम करवो. अने जो तेवुं ज्ञानचारित्र नही पले तोपण श्रेणिक राजानी पेरे सद्दहणा शुद्ध राखजो. जो समकित शुद्ध छे तो मोक्ष नजीक छे. समकित विना ज्ञानध्यान क्रिया सर्व निःफल छे एम आगममां कह्यो छे.

जंसक्कं तं किरइ, अहवा न सक्केइ तहय सद्दहइ।
सद्दहमाणो जीवो, पावइ अयरामरं ठाणं ॥ १ ॥

अर्थ—रे जीव तुं करी शके तो कर अने जो न करी शके तोपण जेवो वीतरागे धर्म कह्यो ते रीते सद्दह. सद्दहणा शुद्ध राखनार जीव अजरामर स्थानक ते मोक्ष पदवी पामे.

हवे समकितनो मार्ग कहे छे. १ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निज्जरा, ८ बंध, ९ मोक्ष. ए नव तत्त्व छे. तेमां मोक्षनो कर्ता जीव छे, अने संवर तथा निज्झरा ए बे छे, ते मोक्षना उपादानकारण छे, देवगुरु उपकारी ते मोक्षना निमित्त कारण छे एटले जीव संवर निज्झरा मोक्ष ए चार उपादेय छे अने बीजा पांच हेय छे एहवो परिणाम तेने समकित ज्ञानकहियें ते समकित ज्ञान भल्योज थाय. तिहां अनुयोगद्वारमां कह्यो छे.

नायम्मि गिन्हियव्वे, ।
अगिन्हियव्वे अ इच्छ अत्थंमि ॥

जइवमेवइ्यजो, सो उवएसो नओ ताम ।१।

अर्थ—ज्ञानथी छ द्रव्य जाणीने लेवा योग्य होय ते ले अने छांडवा योग्य छांडे एवो जे उपदेश ते नयउपदेश जाणवो. हवे समकितनी दश रुचि कहे छे.

१ निसर्ग रुचि ते निश्चयनये करी जीवादि नवतत्त्व जाणे, आश्रव त्यागे, संवर आदरे, वीतरागना कह्या भाव ते द्रव्य क्षेत्र काल भाव सहित जाणे, नामादि चार निक्षेपा पोतानी बुद्धिथी जाणे, सद्दहे, वीतरागना भाख्या भाव ते सत्य एवी सद्दहणा होय.

२ उपदेश रुचि—नव तत्त्व तथा छ द्रव्यने गुरु उपदेशथी जाणी सद्दहे ते उपदेश रुचि.

३ आज्ञा रुचि—ते रागद्वेष मोह जेमना गया छे, अज्ञान मिट्यु छे एहवा अरिहंत देव तेणे जे आज्ञा कही तेने माने सद्दहे ते आज्ञारुचि.

४ सूत्ररुचि—१ आचारांग, २ सुयगडांग, ३ ठाणांग, ४ समवायांग, ५ भगवती, ६ ज्ञाताधर्म कथा, ७ उपासकदशांग, ८ अंतगडदशांग, ९ अनुत्तरोववाइ दशांग, १० प्रश्न व्याकरण, ११ विपाक, ए इग्यार अंग तथा बारमु अंग दृष्टिवाद जेमा चउद पूर्व हता ते हमणा विच्छेद गयांछे. तथा १ उववाइ, २ रायपसेणी, ३ जीवाभिगम, ४ पन्नवणा, ५ जंबुद्वीपपन्नति, ६ चंदपन्नति, ७ सूरपन्नति, ८ कप्पीआ, ९ कप्पवडंसिया, १० पुप्फिआ, ११ पुप्फचुलीआ, १२ वन्हिदिशा, ए बार उपांग जाणवां. अने १ व्यवहारसूत्र, २ बृहत्कल्प, ३ दशा-

श्रुतस्कंध, ४ निशीथ, ५ महानिशीथ, ६ जितकल्प. ए छ छेद-ग्रंथ तथा १ चउसरण, २ संथारापयन्ना, ३ तंदुलवेयालीय, ४ चंदाविजय, ५ गणिविजय, ६ देविंदथुओ, ७ वीरथुओ, ८ गच्छाचार, ९ जोतिकरंड, १० आयुः पच्चखाण, ए दश पयन्नानां नाम तथा १ आवश्यक, २ दश वैकालिक, ३ उत्तराध्ययन, ४ ओघनिर्युक्ति, ए चार मूलसूत्र तथा १ नंदि, २ अनुयोगद्वार, ए पीस्तालीस आगम ते १ मूलसूत्र तथा २ निर्युक्ति, ३ भाष्य, ४ चूर्णि, ५ टीका, ए पंचांगीना वचन जे जीव माने तथा आगम सांभलवानी तथा भणवानी जेने घणी चाहना होय ते सूत्ररुचि जाणवी.

५ जे जीव गुरुमुखथी एक पदनो अर्थ सांभलीने अनेक पद सद्दहे ते बीजरुचि.

६ अभिगमरुचि-ते जे सूत्र सिद्धान्त अर्थ सहित जाणे अने अर्थ विचार सांभलवानी घणी चाहना होय ते अभिगमरुचि.

७ जे छ द्रव्यना गुण पर्यायने चार प्रमाण तथा सात नये करी जाणे ते विस्ताररुचि.

८ क्रियारुचि-ते दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप, विनय, समिति, गुप्ति बाह्य क्रिया सहित आत्मधर्म साथे जेने रुचि घणी होय ते क्रियारुचि.

९ संक्षेपरुचि-ते जे अर्थने ज्ञानमां थोडो कहे थके घणो जाणीने कुमतिमां पडे नहि, जिनमतनी प्रतीति मानेते संक्षेपरुचि.

१० जे पांच अस्तिकायनुं स्वरूप जाणे, श्रुतज्ञाननो स्वभाव अंतरंग सत्ता सद्दहे ते धर्मरुचि.

हवे समकितना आठ गुण कहे छे १ निशंका–ते जिनागम मध्ये सूक्ष्म अर्थ कह्या ते साचा सद्दहे तेमा संदेह आणे नही. तथा सात भयथी पण डरे नहि २ निकंखा गुण–ते पुण्यरूप फलनी चाहना न राखे, केमके जिहां इच्छा तिहां कर्मनो बंध छे माटे. ३ निर्विचिगिच्छागुण–ते शुभ अशुभ पुद्गल एक सरिखा छे तेमा पुण्यना उदयथी शुभयोग मिल्या खुशी थइ अहंकार न करवो तथा पापना उदयथी दुःखसंयोग मिल्या दिलगीर थाउं नही. ४ अमूढदृष्टि गुण–ते जे आगममां सूक्ष्म निगोदना तथा छ द्रव्यना सूक्ष्म विचार कह्या छे ते सांभलतो थको मुंजाय नही, जे पोतानी धारणामा आवे ते धारी राखे अने जे धारणामा न आवे तेने सद्दहे ५ उपबृंहगुण–जे आपणा जीवमा अनंत ज्ञानादिक गुण छे ते छुपाववा नही, शुद्ध सत्ता जेवी छे तेवी कहेवी, राग द्वेष अज्ञान ते कर्मनी उपाधि छे जीव ए उपाधिथी न्यारो छे ६ स्थिरीकरण–गुण ते आपणा परिणाम ज्ञानध्यानमा स्थिर करवा, डगाववा नही अथवा कोइ भव्य प्राणी धर्मथी पडतो होय तेने साह्य देइ उपदेश आपी स्थिर करवो. ७ वात्सल्यता गुण–ते जेनी साथे ज्ञान ध्यान तप पडिकमणो भेलो करता होइये अने सद्दहणा पण एकज होय ते आपणो साधर्मी भाइ छे तेनी भक्ति करवी. अथवा सर्व जीवना ज्ञानादि गुण आपणा समान छे माटे सर्व जीव ऊपर दया करवी. अथवा बीजा जीवना पण आपणा तुल्य ज्ञानादि गुण छे ते जीवने पोषवा योग्य ज्ञान ध्याननो घणो अभ्यास करावे. ८ प्रभावक गुण–ते भगवतना धर्मनी प्रभावना महिमा करवो अथवा पाताने ज्ञानादि गुण वधारवा दान, शील, तप, भाव, पूजा करी घणो महिमा करवो, ए समकितना आठ गुण.

हवे समकितना पांच लक्षण कहे छे. १ उपशम भावलक्षण–ते विवेकी प्राणी प्रायें कपाय न करे अने जो कदाचित् कपाय करे तोपण तरत मनने पाछो वाले. २ आस्ताभूपण–ते भगवंतना वचन उपर शुद्ध प्रतीत राखें, भगवंते जेम आगममां आज्ञा करी तेम सद्दहे. ३ दया भाव लक्षण–ते सर्व जीव पोताना सरीखा जाणी दया पालवी. ४ निर्वेद–ते संसारथी तथा धनथी शरीरथी उदाशीनपणो राखवो. ५ संवेग–ते इन्द्रियना सुख जीवें अनन्ति वार भोगव्या पण ते दुःखना कारण छे, एक चिदानंद मोक्षमयी अतीन्द्रिय सुखने आपणो करी जाणे. ए समकितनां पांच लक्षण कह्यां.

हवे छ आयतन कहे छे. १ निश्चयकुगुरु ते भगवंतना वचनना खोटा अर्थ करे खोटी प्ररूपणा करे. २ व्यवहारकुगुरु ते योगी, संन्यासी, ब्राह्मण अने आचारहीन वेपधारी यति ते पण छोडवा. ३ निश्चय कुदेव ते जिणे श्रीवीतरागदेवनुं स्वरूप नथी जाण्युं, ४ व्यवहार कुदेव ते जे सरागीदेव कृष्ण, महादेव, क्षेत्रपाल, देवी, पितर प्रमुख ते पण छोडवा. ५ निश्चयथी कुधर्म ते जे एकांत मार्ग वाह्यकरणी उपर राच्या छे अंतरंगज्ञान नथी ओलख्यो ते. ६ व्यवहार कुधर्म ते पारका अन्य दर्शनोना मत सर्व छांडवा एटले कुदेव कुगुरु तथा कुधर्मने छोडी शुद्धदेव, गुरु तथा धर्म सद्दहे ते समकितनी सदहणा जाणवी, समकितना लक्षण पन्नवणा सूत्रथी कहे छे.

परमत्थसंथवो वा, सुदिट्ठपरमत्थ सेवणावावि ॥
वावन्न कुदंसणा वज्जाणाय सम्मत्तसद्दहणा ॥१॥

अर्थ—परमार्थ छ द्रव्य नव तत्त्वना गुण पर्याय मोक्षनुं स्वरूप एटले जे परमार्थ सूक्ष्म अर्थ छे ते जाणवानो घणो

अभ्यास परचो करे अथवा जाणवानी घणी चाहना राखे अने सुदिठ्ठ कहेतां भली रीते दीठा जाण्या छे परमार्थ छ द्रव्य मोक्षमार्ग जेणे एहवा गुरुनी सेवा करे एटले ज्ञानी गुरु धारवा अने वावन्न कहेतां जिनमति यतिना नाम धरावीने जे क्षेत्रपाल प्रमुखने समकित विना माने एवा गुरुनो संग वर्जे अने कुदर्शनी जे अन्यमति तेनो संग न करे; एवा जे परिणाम ते समकितनी सद्दहणा जाणवी.

विरया सावज्जाओ, कसायहीणा महव्वयधरावि ॥
सम्मद्दिट्ठिविहूणा, कयावि मुक्खं न पावंति ॥ २ ॥

अर्थ—जे सावद्य आरंभथी विरम्या छे, क्रोधादि चार कषाय जीत्या छे अने शुद्ध पाच महाव्रत पाले छे पण समकित विना छे ते जीव मोक्ष पामे नहि.

हवे समकित ते शी वस्तु छे ते विषे गाथा कहे छे.

नयभंगपमाणेहिं, जो अप्पा सायवायभावेणं ।
जाणइ मोक्खसरूवं, सम्मदिट्ठिओ सो नेओ ॥३॥

अर्थ—नय तथा भंगे करी तथा प्रमाणे करी जे पोताना आत्माने जाणे, ओलखे, स्याद्वाद आठ पक्षे जाणे अने एम स्याद्वादपणे मोक्ष–नि कर्मावस्थाने पण जाणे, परवस्तुने हेय जाणे, जीवगुण उपादेय जाणे, तेने समकीति जाणवो.

हवे जीवस्वरूप ध्यान करवाने गाथा कहे छे.

अहमिक्को खलु सुद्धो,
निम्ममओ नाणदंसणसमग्गो ॥

तम्मि ठिओ तच्चित्तो,
सव्वे ए ए खयं नेमि ॥ ४ ॥

अर्थ—ज्ञानी जीव एहवुं ध्यान करे के हुं एक छुं, पर पुद्गलथी न्यारो छुं, निश्चयनये करी शुद्ध छुं, ज्ञानदर्शन स्वरूप छुं, निर्मल छुं, ममताथी रहित छुं, हुं मारा गुणमां रह्यो छुं, चेतनागुण ते माहारी सत्ता छे, हुं मारा आत्मस्वरूपने ध्यावतो सर्व कर्म क्षय करूं छुं.

निरंजणं निकल अयल, देवअणाइ अणाइ अणंतं ॥
चेयणलख्खण सिद्धसम, परमप्पा सिवसंतं ॥ ५ ॥

अर्थः—कर्म अंजनथी रहित निरंजन छुं, कलंक रहित छुं, अयल केहतां पोताना स्वरूपथी किवारें चलायमान थाउं नहिं, परमदेव छुं. जेनी आदि नथी तथा जेनो अंत नथी एवो छुं, चेतना लक्षण छुं, सिद्ध समान छुं, संतसत्ता मयी छुं.

जीवादिसद्दहणं सम्मत्तं, अहिगमो नाणं ॥
तथ्थेव सथा रमणं, चरणं एसो हु मुख्ख पहो ॥६॥

अर्थः—जीवादिक छ द्रव्य जेवा छे तेवा सद्दहवा ते समकित अने छ द्रव्य जेवा छे तेहवा गुणपर्याय सहित जाणवा ते ज्ञान जाणवु. ते छ द्रव्य जाणीने अजीवने छांडे अने जीवना स्वगुणमां स्थिर थइने रमे ते चारित्र कहियें. ए ज्ञान दर्शन चारित्र शुद्ध रत्नत्रयो ते मोक्षनो मार्ग छे. माटे ए ज्ञान दर्शन चारित्रनो घणो यत्न करवो. ए रत्नत्रयी पामीने प्रमाद करवो नहीं. तिहां निश्चय व्यवहारनी गाथा.

निच्छयमग्गो मुख्खो, ववहारो पुण्णकारणो वुत्तो ॥
पढमो सवररुवो,•आसवहेउ तओ वीओ ॥ ७ ॥

अर्थः—निश्चयनयनो मार्ग ज्ञान सत्तारूप ते मोक्षनुं कारण छे अने व्यवहार क्रिया नय ते पुण्यनुं कारण कह्यो. पहेलो निश्चय नय सवर छे अने निश्चय संवर–निश्चय नय ते एकज छे जूदा नथी. बीजो व्यवहार नय ते आस्रव नवा कर्म लेवानो हेतु छे एटले शुभ पुण्य कर्मनो आस्रव थाय छे अने अशुभ व्यवहारे अशुभ कर्मनो आस्रव थाय छे. कोइ पुछे जे व्यवहारनय आस्रवनु कारण छे तो अमे व्यवहार नही आदरशुं, एक निश्चय मार्ग आदरशु. तेने उत्तर कहे छे.

जइ जिणमय पवज्जह, ता मा ववहारनिच्छए मुयह ॥
एकेण विण तित्थं, छिज्जइ अन्नेगओ तच्च ॥ ८ ॥

अर्थः—अहो भव्य प्राणी ! जो तमने जिनमतनी चाहना छे अने जो तुमे जिनमतने इच्छो छो, मोक्षने चाहो छो तो निश्चयनय अने व्यवहारनय छाडशो नहि एटले बेहुनय मानजो. व्यवहार नये चालजो अने निश्चय नय सद्दहजो. जो तमे व्यवहारनय उत्थापशो तो जिनशासनना तीर्थनो उच्छेद थाशे. जेणे व्यवहार न मान्यो तेणे गुरु वदना, जिनभक्ति, तप, पच्चख्खाण, सर्व न मान्या. एम जेणे आचार उथाप्यो तेणे निमित्त कारण उथाप्यो. अने निमित्त कारण विना एकलो उपादान कारण ते सिद्ध न थाय, माटे निमित्त कारणरूप व्यवहार नय जरूर मानवो. अने जो एकलो व्यवहार नय मानियें तो निश्चयनय ओलख्या विना तत्त्वनु स्वरूप जाण्युं जाय नहीं माटे तत्त्व मोक्ष

मार्ग ते निश्चयनय विना पामियें नही, अने तत्त्वज्ञान विना मोक्ष नथो, एटले निश्चयनय अने व्यवहारनय बे मानवा. जे कारणे आगममां ज्ञान क्रियाथी मोक्ष छे, तिहां ज्ञान—हेय उपादेयनो परीक्षा, क्रिया—जे हेय बंधकारणनो त्याग, उपादेय स्वगुण ते लेवा, थिर परिणाम राखवां; एवुं ज्ञान क्रिया ते मोक्षनुं कारण छे, माटे ज्ञान सहित क्रिया प्रमाण छे. ज्ञान विना क्रिया पुण्यनुं कारण छे एम निश्चय विना व्यवहार निःफल छे अने निश्चय सहित व्यवहार ते प्रमाण छे. तेनो दृष्टान्त—जेम सोनाना आभूषणमां उपधातु अथवा किणजो मिल्यो होय ते पण उंचा सोनाने भावें लेइ राखियें छैयें; अने जो ते किणजो तथा सोनुं जुदुं करियें तो सहु कोइ सोनाने ले पण कोइ किणजो जे कुधातु ते लीये नही. तेम निश्चय नय सोना समान छे, माटे निश्चय नय सहित सर्व भला छे अने निश्चयनय विना सर्व अलेखे, माटे आगममां निश्चय व्यवहार रूप मोक्षमार्ग छे ते कह्यो.

वली शरीर उपर मोह करे नही ते विषे.

छिज्जो भिज्जो जाय खओ, जो इहमे हु सरीरं ॥
अप्पा भावे निम्मलो, जं पावं भवतीरं ॥ १ ॥

अर्थः—भव्य प्राणी एम चितवे जे ए शरीर छीजजाओ, भिजजाओ, क्षय थइ जाओ, विणसी जाओ, ए म्हारूं शरीर पौद्गलिक छे, परवस्तु छे, ते एक दिवसे मूकवुं छे माटे रे प्राणी ! तुं आपणा आत्माने निर्मलपणे ध्यावतो संसारथी तरीने कांठो पामीश.

ए हिज अप्पा सो परमप्पा,
कम्मविसेसोइ जायोअप्पा ॥

इमये देवज्जासुसो परमप्पा,
वहु तुह्ने अप्पो अप्पा ॥ १० ॥

अर्थः—अहो भव्यजीव ! एहीज आपणो आत्मा ऊे. ते शुद्ध ब्रह्म ऊे, पण कर्मने वश पड्यो जन्ममरण करे ऊे पण ए शरीरमा जे जीव छे ते देव छे, परमात्मा ऊे, माटे तुमे आपणो आत्मा यावो, तरण तारण जिहाज ए आपणो आत्माज छे एम श्री हेमाचार्ये वीतरागस्तोत्रमा कह्यो छे.

यः परमात्मा परं ज्योतिः, परमःपरमेष्ठिनाम् ॥
आदित्यवर्णं तमसः, परस्तादामनति यम् ॥ १ ॥
सर्वे येनोदमूल्यत, समुला क्लेशपादपाः। इत्यादि ॥

अर्थः—परमात्मा ऊे, परमज्योति ऊे, पच परमेष्ठीथी पण अधिक पूज्य छे. केमके पंचपरमेष्ठी तो मोक्षमार्गना देखाडनारा छे पण मोक्षमां जवावाळो तो आपणो जीव छे. अज्ञाननो मिटावनार छे सर्व कर्म क्लेशनो खपावनार ऊे, एवो आत्मा ध्याओ एहिज परम श्रेयनु कारण छे शुद्ध छे, परम निर्मल ऊे. एहवो आत्मा उपादेय जाणी सद्दहे अने जेवो पोताथी निर्वाह थाय तेवो त्याग वैराग्यमा प्रवर्त्ते एटले धन ते परवस्तु जाणी सुपात्रने दान आपे अने इन्द्रियना विकार ते कर्मबंधना कारण जाणी परिहरे, शील पाले, जे आहार छे ते पौद्गलिक परवस्तु ऊे, शरीर पुष्टीनु कारण ऊे, अने शरीर पुष्ट कीधाथी इन्द्रियोना विषयनो पोष थाय माटे ते परस्वभाव ऊे, अथान संसारनुंकारण छे माटे आहारनो त्याग करवो तेने तप कहियें. तथा पूजा ते जे श्री अरिहंत देवें मोक्षमार्ग उपदेश्यो ते आपणे जाण्यो माटे आपणा उपकारी छे ते उपकारीनी बहु मान सहित भक्ति करीयें माटे .

श्रीअरिहंत देवाधिदेवनी पूजा करवी. एम दान, शील, तप, पूजा सर्व जीव अजीवनुं स्वरूप ओलख्या विना जे करवुं ते पुण्यरूप इंद्रिय सुखनुं कारण छे अने जे जीवने उपादेय करी वांछा विना करे ते निर्ज्जरानुं कारण छे. एम दया पण श्री भगवती सूत्रमां सातावेदनी कर्मनुं कारण छे. एटले सम्यक् ज्ञानीनी सर्व करणी निर्ज्जरारुप छे, अने ज्ञान विना सर्व करणी बंधनुं कारण छे; माटे ज्ञाननो घणो अभ्यास करजो ए भगवंते सीखामण दीधी छे.

तथा ज्ञाननुं कारण श्रुतज्ञान छे तेनो घणो भाव राखजो.

श्रीठाणांगमां तथा उत्तराध्ययनमां १ वाचना, २ पृच्छना, ३ परावर्तना, ४ अनुप्रेक्षा, ५ धर्मकथा, ए सज्झाय भणवा गुणवानुं फल मोक्ष कह्यो छे. सज्झाय करवाथी ज्ञानावरणी कर्म खपावे केमके वाचनाथी तीर्थधर्म प्रवर्त्ते, महानिर्ज्जरा थाय पूछवाथी सूत्र तथा अर्थ शुद्ध थाय, मिथ्यात्व मोहनीय खपावे, ते जेम अर्थ विचार पूछे तेम तेम समकित निर्मळ थाय अने अनुप्रेक्षा ते अर्थ विचारतां सात कर्मनी स्थिति, रस पातला करे. अनंतो संसार खपावीने पातला करे तथा श्रुतज्ञाननी आराधनाथी अज्ञान मिटे एवां फल कह्यां छे.

माटे वांचवा तथा भणवानो घणो उद्यम करवो, केमके आज पांचमा आरामां कोइ केवली नथी तथा मनः पर्यवज्ञानी अने अवधिज्ञानी पण नथी; एक मात्र श्रुतज्ञान—आगमनो आधार छे. यतः—

कहं अम्हारिसा पाणी, दुसमादोसदूसिया ॥
हा अणाहा कहं हुंता, न हुंतो जइ जिणागमो॥१॥

अर्थ—हे भगवंत ! अमसरिखा प्राणीनी शी गति थात

जे अमे आ दुसम पचम कालमां अवतार लीधो. हा ! इति खेदे अमे अनाथ छुं (छीए). जो जिनराजना कहेला आगम न होत तो आज शुं थात, एटले आज आगमनोज आधार छे. माटे आगम अने आगमधर जे बहुश्रुत तेनो घणो विनय करवा. आगममा विनयनुं फल ते सांभळवु अने सामळवानुं फल ज्ञान छे, ज्ञाननुं फल मोक्ष छे, एम आगम सांभळी लेवा योग्य लेजो, छंडवा योग्य छोडजो, सदहणा शुद्ध राखजो, सद्दहणा ते मोक्षनुं मूल छे. ए इन्द्रिय सुख तो आ जीवे अनंतिवार पाम्युं छे. एहवी जाति-जन्म-योनि कोइ रही नथी जे आपणा जीवे नहीं करी होय ए जीवने संसारमा भमता अनंता पुद्गल परावर्तन थया पण धर्मनी जोगवाइ मली नहीं तो हवे मनुष्यभव, श्रावक कुल, नीरोग शरीर, पचेन्द्रिय प्रगट, बुद्धि निर्मल, एटला संयोग मल्या. वली श्री वीतरागनी वाणीना कहेनारा शुद्ध गुरुनी जोगवाइ पामीने अहो भव्यलोको ! तुमे धर्मने विषे विशेष उद्यम करजो, फरिथी एवी जोगवाइ मिलवी दुर्लभ छे माटे प्रमाद करशो नहीं. ए शरीर, धन, कुटुंब, आयुष्य, सर्व चंचल छे, क्षण क्षण छीजे छे, माटे पाच समवाय कारण मल्यां मोक्षरूप कार्य सिद्ध करवु. ते पंचसमवायनां नाम कहे छे. १ काल, २ स्वभाव, ३ नियति, ४ पूर्वकृत, ५ पुरुषाकार. ए पांच समवाय माने ते समकीति छे. एमा एक समवाय उथ्थापे तेहने मिथ्यात्वी कहियें एम सम्मति सूत्रमा कह्यो छे.

कालो सहाव नियइ, पुव्वकयं पुरिसकारणे पंच ॥
समवाए सम्मत्तं, एगंते होइ मिच्छत्तं ॥ १ ॥

अर्थ.—काल लब्धि विना मोक्षरूप कार्य सिद्ध थाय

नही, एटले काल सर्वनुं कारण छे. जे काले जे कार्य थवानों होय ते कार्य ते कालें थाय, ए काल समवाय अंगीकार करी कह्यो. इहां कोइ पूछे जे अभव्य जीव मोक्षे केम जता नथी ? तेनो उत्तर जे अभव्यने काल मले पण अभव्यमां मुक्ति जवानो स्वभाव नथी तेथी मोक्षे जाय नहीं. केमके काल अने स्वभाव ए बे कारण जोइये. तेवारें फरि पूछयुं जे भव्य जीवोमां तो मोक्षे जवानो स्वभाव छे तो सर्व भव्य केम मोक्ष जता नथी ? तेने उत्तर जे नियत कहेतां निश्चय समकित गुण जागे तेवारें मोक्ष पामे एटले काल, स्वभाव, नियत ए त्रण कारण मान्या. ते वारे फरि पूछयुं जे समकित आदि कारण तो श्रेणिक राजाने हतां तो मोक्ष केम न थयो ? तेने उत्तर जे पूर्वकृत कर्म घणां हतां अथवा पुरुषाकार जे उद्यम करयो नही. फरी पूछयुं जे शालिभद्र प्रमुखे तो उद्यम घणो कीधो तेनुं उत्तर जे तेमना पूर्वकृत शुभकर्म खप्यां न हतां माटे पांच समवाय मिल्या कार्यनी सिद्धि थाय, ते वारें फरि पूछयुं जे मरुदेवा माताने तो चार कारण मिल्या पण पांचमो पुरुषाकार उद्यम कांइ कीधो नही, तेने उत्तर जे क्षपक श्रेणि चढवानो शुक्ल ध्यान रूप उद्यम कीधो छे, माटे पांच समवाय मील्या मोक्षरूप कार्य सिद्ध थाय.

जेवारें केवलज्ञाने करी सर्व द्रव्य जेम रह्यां छे तेम देखे एटले आकाशद्रव्य लोकालोक प्रमाण छे तेमां अलोकमां बीजुं द्रव्य कोइ नथी. लोकाकाशना एकेक प्रदेशे धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायनो एकेक प्रदेश रह्यो छे तथा अनंता जीवना अनंता प्रदेश रह्या छे, अनंता पुद्गल परमाणुआ रह्या छे. कालनो समय सर्वत्र वर्त्ते छे.

हवे छ द्रव्यनी फरसना कहें छे. धर्मास्तिकाशना एक प्रदेशे धर्मास्तिकायना छ प्रदेश फरस्या छे. ते आवी रीते के चार

दिशिना चार अने पांचमो नीचे, छट्ठो उपर, ए छ प्रदेश फरस्या छे, तथा एक मूल पोतें प्रदेश, एम सात प्रदेशनो संबध छे अने धर्मास्तिकायना एक प्रदेशने आकाशद्रव्य तथा अधर्मास्तिकायना सात सात प्रदेश फरशे छे ते एक मूलना प्रदेशने बीजा द्रव्यनो मूलनो प्रदेश फरशे माटे सात प्रदेशनी फरसना छे अने धर्मास्तिकायना एक प्रदेशें जीव पुद्गलना अनंता प्रदेशनी फरसना छे अने लोकने अंते जे धर्मास्तिकायना प्रदेश छे तेने आकाश फरसनातो छए दिशीनी छे अने एक मूल प्रदेश सुद्धां सात प्रदेशनी फरशना छे अने बीजा द्रव्यनी त्रण दिशीनी फरशना छे. एम सर्व द्रव्यनी फरसना छे अने आकाशथी धर्म अधर्मनी अवगाहना सूक्ष्म छे धर्म अधर्म द्रव्यथी जीवनी अवगाहना सूक्ष्म छे. जीवथी पुद्गलनी अवगाहना सूक्ष्म छे.

एम छ द्रव्यना गुण पर्याय सामान्य स्वभाव ११ छे. अने विशेष स्वभाव दश छे, ते श्रीसिद्ध भगवत ज्ञानथी जाणे दर्शनथी देखे. ते इग्यार सामान्य स्वभाव कहे छे. १ अस्ति स्वभाव, २ नास्ति स्वभाव, ३ नित्य स्वभाव, ४ अनित्य स्वभाव, ५ एक स्वभाव ६ अनेक स्वभाव, ७ भेद स्वभाव, ८ अभेद स्वभाव, ९ भव्य स्वभाव, १० अभव्य स्वभाव, ११ परम स्वभाव. ए इग्यार सामान्य स्वभाव सर्व द्रव्यमां छे. ए सामान्य उपयोग दर्शन गुणथी देखे. हवे दश विशेष स्वभाव कहे छे. १ चेतन स्वभाव, २ अचेतन स्वभाव, ३ मूर्ति स्वभाव, ४ अमूर्ति स्वभाव, ५ एक प्रदेश स्वभाव, ६ अनेक प्रदेश स्वभाव, ७ शुद्ध स्वभाव, ८ अशुद्ध स्वभाव, ९ विभाव स्वभाव, १० उपचरित स्वभाव. ए दश विशेष स्वभाव छे. ते कोइक द्रव्यमा कोइक स्वभाव छे, कोइक द्रव्यमा कोइक स्वभाव नथी, ए ज्ञानथी जाणे एटले सिद्ध भगवान लोकालोक सर्व ज्ञानोपयोगथी जाणी रह्या छे. दर्शनोप-

योगथी देखी रह्या छे. एहवा अनंत गुणी अरूपी सिद्ध भगवान् छे ते समान पोताना आत्माने जाणे उपादेय करी ध्यावे ते समकिती जाणवो.

॥ दोहा ॥

अष्ट कर्म वन दाहके, भए सिद्ध जिनचन्द ।
ता सम जो अप्पा गणे, वंदे ताको इंद ॥ १ ॥
कर्मरोग औषधसमी, ज्ञान सुधारस वृष्टि ।
शिव सुखामृत सरोवरी, जय जय सम्यक्दृष्टि ॥२॥
एहिज सद्गुरु शीख छे, एहिज शिवपुर माग ।
लेजो निज ज्ञानादि गुण, करजो परगुण त्याग ॥३॥
ज्ञान वृक्ष सेवो भविक, चारित्र समकित मूल ।
अमर अगम पद फल लहो, जिनवर पदवी फूल॥४॥
संवत सत्तर छिहत्तरे, मनशुद्ध फागुण मास ।
मोटे कोट मरोटमे, वसतां सुख चामास ॥५॥
सुविहित खरतर गच्छसुथिर, युगवर जिनचंद सूर।
पुण्य प्रधान प्रधान गुण, पाठक गुण पंडूर ॥६॥
तास शिष्य पाठक प्रवर, सुमतिसार गुणवंत ।
सकल शास्त्र ज्ञायक गुणी, साधुरंग जसवंत ॥७॥
तास शिष्य पाठक विबुध, जिनमत परमत जाण।
भविक कमल प्रतिबोधवा, राजसार गुरुभाण ॥८॥

ज्ञानधर्म पाठक प्रवर, शमदम गुणे अगोह।
राजहंस गुरु गुरु शक्ति, सहुजग करे सराह ॥९॥
तास शिष्य आगमरुचि, जैन धर्मको दास ।
देवचद आनदमें, कीनो ग्रथ प्रकाश॰॥ १० ॥
आगमसारोद्धार एह, प्राकृत सस्कृत रूप ।
ग्रथ कियो देवचदमुनि, ज्ञानामृत रसकूप ॥११॥
करयो इहां सहाय अति, दुर्गदास शुभचित्त ।
समजावन निज मित्रकु, कीनो ग्रथ पवित्त ॥१२॥
धर्ममित्र जिन धर्म रत, भविजन समकितवत ।
शुद्ध अमरपद ओलखण, ग्रथ कियो गुणवंत ॥१३॥
तत्त्वज्ञानमय ग्रन्थ यह, जोवे वालावोध ।
निजपर सत्ता सव लिखे, श्रोता लहे प्रवोध ॥१४॥
ता कारण देवचद मुनि, कीनो भाषा ग्रथ ।
भणशे गुणशे जे भविक, लहेशे ते शिवपथ ॥१५॥
कथक शुद्ध श्रोतारुचि, मिळजो एह सयोग ।
तत्त्वज्ञान श्रद्धा सहित, वलीय काय निरोग ॥१६॥
परमागमसुं राचजो, लहेशो परमानद ।
धर्मराग गुरु धर्मसैा, धरजो ए सुखवृंद ॥ १७ ॥
ग्रन्थ कियो मनरगसों, सितपख फागुणमास ॥
भोमवार अरु तीज तिथि, सफल फली मन आस॥१८।

गुणस्थानक विचार.

हवे गुणठाणानो विचार लखीइं छे. प्रथम मिथ्यात्वगुणठाणुं १, सास्वादनगुणठाणुं २, मिश्रगुणठाणुं ३, अविरति समकित गुणठाणुं ४, देशविरति गुणठाणुं ५, प्रमत्त गुणठाणुं ६, अप्रमत्तगुणठाणुं ७, अपूर्वकरण गुणठाणुं ८, अनिवृत्तिबादर गुणठाणुं ९, सूक्ष्मसंपराय गुणठाणुं १०, उपशांतमोह गुणठाणुं ११, क्षीणमोह गुणठाणुं १२, सयोगी केवली गुणठाणुं १३, अयोगी केवलि गुणठाणुं १४, अरिहंतनां भाख्यां वचन साचां करी सद्दहे नहिं ते मिथ्यात्व गुणठाणो कहीइं. तेहना भेद पांच छे. अभिग्गहिय मिथ्यात्व—जे लीधो हठ मुकी सके नहीं १, अनभिग्रहिक मिथ्यात्व जे देव तथा कुदेव तथा गुरु तथा कुगुरु धर्म अधर्म सरिखा करी मांने परीक्षाबुद्धि नहीं २, अभिनिवेशमिथ्यात्व—जे खोटाने खोटुं जाणे पण हठ मुकी सके नहीं ३, सांशयिक मिथ्यात्व—जे केवलिना भाख्या वचन तेमां संशय उपजे पूरी परतीत आवे नहीं ४, अनाभोग मिथ्यात्व—जे कांई जाणपणुं उपजे नहीं एकेंद्रीविकलेंद्रीनी पेरे तथा श्रीठांणागसूत्रे मिथ्यात्वना दश बोल कह्या छे. जीवनें अजीव करी माने ते मिथ्यात्व १, तथा अजीवने जीव करीं माने ते मिथ्यात्व २, तथा धर्मने अधर्म करी माने ते मिथ्यात्व ३ तथा अधर्मने धर्म करी माने ते मिथ्यात्व ४, मोक्षनो मार्ग ज्ञानदर्शन चारित्र तप तेहने मोक्षमार्ग न माने ते मिथ्यात्व ५, तथा मोक्षनो मार्ग नथी संसारनो हेतु छे तेहने मोक्ष मार्ग करी माने ते मिथ्यात्व ६, तथा मोक्ष गया नथीं तेनें मोक्ष माने ते मिथ्यात्व ७, जे मोक्षे गया तेहने मोक्ष न माने ते मिथ्यात्व ८, जे साधु विषयविकार त्यागी तेहने असाधु माने ते मिथ्यात्व ९, तथा

जे साधु नथी तेहने साधु करी माने ते मिथ्यात्व १०, ते मिथ्यात्वनी चाल तीन प्रकारनी छे. एक देवगत मिथ्यात्व—ते कुदेव सरागी तेहने देव करी माने बीजो गुरुगत—जे कुगुरुने गुरु करी माने, त्रीजो पर्वगत मिथ्यात्व—ससारी पर्वने धर्मना पर्व करी माने ते मिथ्यात्व. ते मिथ्यात्वनी स्थिति तीन प्रकारनी छे. अनादि अनंतनी अभव्य जीवने, अनादि सात भव्यजीवने, सादिसात पडवाइने, ते जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्टी अर्द्धपुद्गलपरावर्त्त कांइक उणी छे बीजु गुणठाणुं सास्वादन—ते कोईक जीव उपसमसमकितथी पडतो मिथ्यात्व गुणठाणे प्होतो नथी वचे छआवलिका रहे ते सास्वादन गुणठाणुं कहीइं तेहनो दृष्टांत जे कोइ पुरुष खीरखांड घृत जमीने तुरत वमतो होई ते वमता कांईक स्वाद आवे तिम समकितथी पडता पिण कांइक वासना रहे तेहनें सास्वादन कहिइ त्रीजो गुणठाणो मिश्र—कोइ जीव क्षयोपशम समकितथी पडी मिश्रमोहनीने उदये मिश्रगुणठाणे आवे अथवा मिथ्यात्वथी निकली समकित गुणठाणे आवता वचे मिश्रमोहनीने उदये मिश्रगुणठाणे आवे ते जीव अंतर्मुहूर्त्तकालसीम रहे एहने समकित मिथ्यात्वदृष्टि कहीइं. एहनो दृष्टांत कहे छे जे कोइ जीव नालियरद्वीपमा रहतो होइ ते नालियर खाई तेहने अन्न दीठे राग न उपजे तेम द्वेष पण न उपजे तिम ए जीवने जिन धर्म साचो साभलता राग पण न उपजे तेम द्वेष उपजे नहीं एहवा जीवने मिश्रगुणठाणुं कहीइ, एहनी स्थिति अंतर्मुहूर्तनी छे. चोथो अविरत समकित, तेहना भेद त्रण छे, तेहनो पहेलो भेद उपसमसमकित—जे जीव अनादि मिथ्यात्व सन्नीपचेंद्रीपर्याप्तो कोई कारण पामीने ससारथी उभगे, नरक निगोदथी जनममरणना दुःखथी बीहे, तेवारे ए सर्व ससार खोटो जाणे, धर्म जाणवानी रुचि घणी करे, दयापाले, दानदे, तप करे, श्रावकनां बार व्रत पाले ते जीव यथाप्रवृत्तिकरणे य-

तैता कहीइं, एटली करणोसुधी भव्य तथा अभव्य जीव आवे, नवग्रैवेयकसुधी जाए पण समकित पाम्यो नथी ते माटे लेखामां नावे, तापण काई जीव वैराग्य परिणामसहित संसारने असार जाणतो साचा धर्मनी परीक्षा करतो सातकर्मनी स्थिति उत्कृष्टी खपावे, एक कोडाकोडी सागरोपम बाकी स्थिति सातकर्मनी रहे तेवारे अपूर्वकरण करे तेवारे एक ज्ञान मार्ग साचो करी माने, बुद्धि सूक्ष्मभाव जाणवानी विशेष थाइं. तेवारे पछे एक आत्मा पाताना शरीरने विषे रह्यो, पण अशरीरी छे, अरूपी छे, अविनाशी छे, अनंतज्ञानमयी, अनंत दर्शनमयी, अनंत चारित्रमयी, अनंतअगुरुलघुमयो, अनंततपमयी, अनंतवीर्यमयी, निर्मल अलेप अखंड छे तेहना प्रदेश असंख्याता छे, प्रदेशे प्रदेशे अनंतागुण, अनंतापर्याय छे, उपयोग लक्षण ते माहरो धर्म छे, ए धर्म ते जे करतां प्रगट थाये, गुणी- श्रीअरिहंत, सिद्ध, आचारज, उपाध्याय, साधु तथा सिद्धांत तेहनो विनय तथा वैयावच्च करवो, अरिहंतना आगम प्रमाणप्रतीत राखे ते समकित कहोइं, ते समकितना तिन भेद छे, १ उपसम समकित २ क्षयोपशम समकित ३ क्षायिकसमकित तिहां अनंतानुबंधिकषाय ४ मिथ्यात्वमोहनी, मिश्रमोहनी, समकितमोहनी एसातप्रकृति उदये आवे ते खपावी अने उदये नथी आवी ते विपाके उपसमावी छे, प्रदेसे उदये छे, समकितमोहनी उदय आकरो छे तेणे समकितना अतिचार लागे छे. तेहने क्षयोपशम समकित कहीइं, एहनी स्थिति जघन्य अन्तर्मुहुर्त्त छे उत्कृष्टि ६६ छासठिसागरोपम केटलाएक मनुष्यभव अधिक एटली स्थिति रहे ए समकितने पांच अतिचार लागे तेहनां नाम॥शंका– जे आगममां कह्यो ते साचो पीण कांइक संदेह उपजे १. अतिचार. कंखा–बीजा मतना शास्त्र तथा देव हरिहरादिक सरागि तथा ते मतना गुरु सविकारी तेहने कांईक रुडापणे जाणि वांछा करिये २ अतिचार, वितिगिछा–जे धर्मअरिहंतनो कह्यो करीई पण ए-

इनो फल थासे के नही थाय अथवा जिनसासनथी बीजा मतनी करणी रुडी छे एहवो परिणाम आवे ते ३ अतिचार ॥ पसंस–जे परमतनी परसंसा करे, जे बीजा मतना देव तथा लिंगीयाना कष्टकरणी तथा काइं चमत्कार देखीने ते उपर राग आवे तेहने पगे लागे तेहना गुण बोले ए ४ अतिचार जाणवो ॥ संथवो–जे बीजा मतना देव तथा गुरु तथा ते मतना जे सेवक तेहनो परिचय मेलाप घणो करे बीजा मतनी वात करे सांभले ते पाचमो अतिचार ॥ ए क्षयोपशम समकित एक जीवने असंख्यातीवार आवे अने वली असंख्यातीवारजाए, जे आगमने आधारे राखे तेहने रहे. तेपछे क्षायिक समकित थाइं ते क्षायिकनो अर्थ लिखीइ छे. ४ अनतानुबंधी १ मिथ्यात्व मोहनी २ मिश्रमोहनी ३ समकितमोहनी ए सात प्रकृति सर्वथा जे जीवे खपावीने निरमली परतीत किधी ते क्षायिकसमकितो कहीइं ए आव्या पछे जाय नहीं. ए समकितवाला जीवने दस जातिनी रुचि उपजे ते लिखीइ छे १ निसर्गरुचि–नव तत्त्व छ द्रव्य ४ निक्षेपा सातनय पोतानी बुद्धिथी साचा जाणे ते निसर्गरुचि २ अभिगमरुचि–जे जिनागमनासूक्ष्म अर्थ जाणवा नी रुचि गुरुना मुखथी उपदेशथी जाणे ते उपदेशरुचि ३ आणारुचि–श्री अरिहत केवलीना कह्या वचननी आणा प्रमाण करे ते आणारुचि ४ सूत्ररुचि–जिन सूत्र सांभलता साचा मारगनी परतीत उपजे समकित पामे ५ बीजरुची–सिद्धातनुं एकपद सामलता बघाबोलनु जाणपणुं आवे श्रद्धासमीथाइं ६ अभिगमरुचि–जे ११ अंगादिक ८४ आगम तथा निर्युक्ति भाष्य चूर्णि टीकाना अर्थ जाणे सर्व बोलना परमार्थ जाणवानी रुचि ७ विस्ताररुची ६ द्रव्यनाभाव ४ निक्षेपसातनये करी च्यार प्रमाणे करी जाणे ८ क्रिया रुचि–जे जीव जिनसासननी क्रिया साची करी सू-

क्रमां कह्यो ते रीते करे आघीपाछी न करे ९ संक्षेपरुचि, जे जीव सिद्धांतना जाण, गीतार्थ आगमने अनुसारे जे अर्थ कहे ते साचा करी माने १० धर्मरुचि–आतमानो धर्म ज्ञान दर्शन चारित्रमयी अरुपी आतमानो परिणाम भावदया प्रमुख गुणी श्री अरिहंतादिकनो बहुमान वेयावच्च ते धर्म करी माने बीजा बाह्य तप बाह्यकिरिया जे आगममां कह्या परमाणे करे ते धर्मनो कारण करी माने ते धर्मरुचि, समकित मोक्षमार्ग मूल छे, समकित विना जे करणि ते संसार खाते छे पण मोक्षमारग न जाणे ए चोथो गुणठाणो कह्यो ४ पांचमो देशविरति गुणठाणो इहां जीवने व्रतपच्चखाण आवे, जघन्ये एक नवकारसीपच्चखाण तथा कंदमूलना पच्चखाण साची श्रद्धासहीत थया होवे तेहने श्रावक कहीइं, उत्कृष्टे इंद्रीसुखनी वांछा विना श्रावकनां बारव्रत पाले ते उत्कृष्टो श्रावक कहीइं बारव्रतनां नाम. १ स्थूलप्राणातिपात विरमण, जे त्रस जीवने निरपराध हणे नहि २ स्थूलमृषावाद विरमण, जे मोटका पांच कन्यालीक १, गवालीक २, भौमालिक ३, थापिणमोसो ४, कुडीसाख न बोले ५ ॥ ३ थूलअदत्तादान विरमण, जे चोरी कीधे राजा दंडे तथा च्यार रुडां माणस ठपको दे अथवा पोताने भय लागे अथवा सामाना जीवने ध्रास्को पडे ते मोटी चोरी करवी नहि ४ थूलमैथुन विरमणव्रत, जे परस्त्री मनुष्यणी तथा तिर्यंचणी तथा देवतानी भोगववी नहीं. पांच इन्द्रीना स्वाद घणा मगनपणे सेवे नहीं ५ थूलपरिग्रह विरमण, जे धनादिक नव भेदनो परिग्रहना पच्चक्खाण करे, ईच्छा परिमाण करे अथवा पोता पासे जे धन होइं ते राखी बीजानो पच्चक्खाण करे ६ दिक परिमाणव्रत, जे च्यार दिशा तथा उंचो तथा नीचो दिसो जावानो मान करे ७ भोगोपभोग परिमाण

व्रत जे नीम साचवे, पन्नर कर्मादान न करे, जे पोताने खावे-पीवे तथा वस्त्रोनु मान राखे ८ अनर्थ दंड विरमणव्रत, ते जे मोटका पाप, रंगवां, खेतर खेडवा, भाठो जे चूना प्रमुख न करवाना पच्चक्खाण करे, ९ सामायिकव्रत जे जघन्य २ घडी सुधी ससारना काम मूकी कुटुंब धननो राग तजी कोइथी द्वेष न करवो एहवो समपरिणाम राखवो ते सामायिक कहिइं १० देशावगासिकव्रत जे बे घडीथी च्यार पोहोरथी प्रमुकाल दिसनुं मानकरि थीरचित्त समतापणे रहेवु ते देसावगासिकव्रत जाणवुं ११ पोषधव्रत च्यार पोहोर अथवा आठ पोहोर सुधी समतापणे साधुपेरे श्रावकवर्ते, मन वचन काया समताई राखे ते पोषधव्रत कहीइ १२ अतिथिसंविभाग बारमु व्रत जे श्रावक ते साधुने विहरावीने पछे जिमवु जो तेहवा साधुनो योग न मिले तो साधर्मिक श्रावकने जीमाडीने जमवा बेसवु बेठा पछे थोडीसीकवार साधुजीनी वाट जोवी इम करता साधुजी न आव्या तो एहवी भावना भाववी जे धन्य ते श्रावक जे साधुजीने वहोरावीने जिमता हस्ये इम चिंतवी जमवा बेसे ए बारव्रत धरे ते श्रावक कहीइ. श्रावकने जघन्य ३ वार उत्कृष्टे ७ वार चैत्य वंदन करवु, अरिहंतदेवसिद्ध भगवतने वंदना करवी तथा नित्य पडिक्कमणु बे वार करवुं जो नित्य न थाय तो पाखीनो पडिकमणुं नियमा करवु तथा पच्चक्खाण प्रभातना नोकारसी अवस्य साचववी, रात्रि चउविहार, तिविहार, दुविहार ए ३ मांहि एक पच्चक्खाण अवस्य करवुं. ए पांचमा गुणठाणानी स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त्त उत्कृष्टे देशे उणी पूर्वक्रोडी वर्षनी जाणवी ए जीव अढार पाप स्थानक आलोइने निर्मल थयो चारित्र फरसे ते कहे छे, अथ अढारे पाप स्थान लिखीइ छे. कोइ भव्य जीव अवसर पामीने जैनागम सुणता संसारथी उभग्यो थको मोक्ष सुखनो

अभिलाप करे पण आलंबन विना कार्य नीपजवो दुष्कर छे तेथी प्रथम देवतत्त्व श्री वितराग अनंत ज्ञानमय अनंत दर्शनमय शुद्ध स्वरूपी आत्म ऋद्धिभोगी आत्मालंबी आत्मपरणामी जेहने अवलंबीने अनंता जीव अव्याबाध सुख वरे, ते देवतत्व. तेहने सेववे सर्व जीव संसारभयथी छुटे तथा निग्रंथपंच महाव्रतधारी संवरस्वरूपी एक निर्मल मोक्षमार्गने विषे जेहनी दृष्टि छे, शरीर, इन्द्रिय, कषाय, योगनी प्रवृत्ति जीपता मुनिराज अतीतकाल विषय संभालता नथी, वर्त्तमान विषयमां रमता नथी, अनागतकाल विषयनी आसंसा नथी, पोताना अनंतगुणपर्याय निर्मल करवाने उत्कृष्ट उद्यमवंत छे ते साधु महात्मा गुरुपणे धारवा, तथा धर्मतत्त्व–जे जीव द्रव्य असंख्यात प्रदेशी स्याद्वाद रीते पोतानी गुणपर्याय परणति ते धर्म श्री सिद्ध भगवानने प्रगट छे, श्री अरिहंते उपदिस्यो आचार्य ते धर्म साधवाने ज्ञानादिक पंचाचार पाले छे, श्रीउपाध्यायजी ते धर्मनी घोषणा करे छे, साधुनिग्रंथ ते धर्म साधवाने राज्य तजी इन्द्रिय विषय तजी वनमां साधु टोलामध्ये अथवा एकलवासी, वनवासी, गुफानिवासी, पर्वतनी शिला उपर उनाले आतापना शीतकाले नदीने तटे शीत खमे छे, जगत्रयथी अव्यापकपणे रागद्वेष वारता समतामई श्रुतसंपन्न चारित्रसंपन्न विचरे छे तथा देशविरति ते शुद्ध धर्म प्रगट करवा वास्ते देशविरती लेइ सर्व विरतीनो इहा करतो संसार कार्य ते विष पाननी पेरे उदासीनपणे करे छे, सम्यग्दृष्टि ते धर्मनी इहा करतां

कईयांसिद्धिलंभो कईयासव्वेगुणनिरावरणा
कईयाअव्वाबाहं, सुहंसमुहंमयेसिज्जे ॥ १ ॥

कईयांपुग्गलरहियो रमामिसिवमयल
निरुवमसहावो, पासतोसव्वपय भुजतोअप्पणोभावं २

ए भावना भाविने धर्मनो अभिलाप करतां संसारप्रवृत्ति तप्त लोहपद धरवानी रीते करे छे, ससारसपदा वालक रमवाना धूलघर समान जाणे छे, ते धर्म प्रगट करवानी रुचि सर्व जीवे करवी. पण ते धर्म आठ कर्म आवर्यो छे ते आठ कर्मने क्षये प्रगटे ते आठ कर्मनो क्षय, पापस्थान आलोयता थाये ते पापस्थानकनी आलोयणा करवी, जे माहरे जीवे संसार भमतां स्वस्वरूपनी भूले हिंसा पापस्थान कर्यो, आपणा ज्ञानादिक प्राण हण्या ते भावहिंसा, अने रागद्वेषे असयमे परना प्राण हण्या ते द्रव्यहिसा, ते लौकिक रीते पृथ्वीकाय, अप्काय, तेऊकाय, वाउकाय, वनस्पतिकाय, त्रसकाय हण्या, सताप्या, छेद्या भेद्या, तपाव्या, परने संक्लेश उपजाव्यो, परणति संकल्पे प्रवर्त्ते हे श्रीवीतराग तुमें सर्व जाणो छो, ते हिंसाने धर्म करी मान्यो, हिंसामध्ये राच्यो, ए रीवे हिंसा पोते ए भवे पाछले अनतेभवे जे जे हिंसा परिणति करी, करावी, करता अनुमोदि मने, वचने, कायाए ते सर्व श्रीप्रभुजीनी माखे गुरुसाखे मिच्छामिदुक्कड. ए प्रथम पापस्थान ॥ हवे बीजो पापस्थान ते मृपावाद जे जूठु बोलवु, लौकिक ससारकाममध्ये, लोकोत्तर धर्मकार्यमध्ये, ते पिण भाव मृपावाद स्वस्वरूपशुद्ध अध्यात्मभाव पोतानी परणतिने पोतानी न माने, शरीर इन्द्रिय धन कुटुम्ब ते परभाव संसार हेतु दुष्टता मूल तेहने पोताना कहे, क्रोधे मृपा बोले, भये मृपा बोले, लोभे मृपा बोले ते सर्व माहरे जीवे ससार भमतां चार गतिमांही जे मृपावाद बोल्या होय, बोलाव्या होय, बोलता

अनुमोद्या होय, ते सर्व मने वचने कायाए श्रीप्रभुजीनी साखे, गुरुसाखे, आत्मसाखे मिच्छामिदुक्कडं. हवे त्रीजो पापस्थानक अदत्तादान—ते जे पारकी वस्तु अणदीधी लेवी ते लौकिक, जें संसारी असंयमीना धन, कंचन, द्विपद, चतुष्पद, आदिक अणदीधा लेवा, लोकोत्तर ते जे चैत्यउपगरण पूजाउपगरण चारित्रउपगरण तेहनो चोरवो. बाह्य वस्तुनो लेवो, ते द्रव्य, भाव ते जीव परपुद्गल खंधादिकनो आत्माने विषे ग्राहकतारुप परिणमन कर्यो हवे, कराव्यो हवे, करतां अनुमोद्यो हवे, ते सर्व मन वचन कायाए श्रीप्रभुजीनो साखे, गुरुसाखे, आत्मसाखे मिच्छामिदुक्कडं. हवे चोथो पापस्थान मैथुन—जे कामी भोगीपणे इन्द्रि विषे पुद्गलना वर्णादिकनो भोगववो, लोकोत्तर धर्मलिंगे धर्मी महाजन, साधु, साध्वी, धर्मोपकरण, चैत्यादिने विषे इन्द्रिनी पोषणा करवी ते वली द्रव्यथी त्रण वेदना उदये जे कामविकारीपणे भोगविलासादिक, भावथी आत्मपरिणति परभोगीपणे पर वस्तु अशुचिपरिणाममध्ये रमणीकता ते माहारे जीवे, एकेन्द्रियपणे, वेरिन्द्रियपणे, तेरिन्द्रिपणे, चौरिन्द्रिपणे, पंचेन्द्रिपणे १ फरसन २ रसन ३ घ्राण ४ चक्षु ५ श्रोत्रेन्द्रिय पांच इन्द्रियना त्रेवीस विषय वांच्छचा, सेव्या, सेवाव्या, वतां अनुमोद्या होइं ते मन वचन कायाए करी श्रीप्रभुजीनी साखे आत्म साखे मिच्छामिदुक्कडं. हवे पांचमो पापस्थान परिग्रह—जे कोइ आत्मधर्मथी अन्यभाव संरक्षणा परिणामे राखवा ते, लौकिक परिग्रह द्विपद चतुःपद धनधान्य गृहखेत्र वस्त्रप्रमुख, लोकोत्तर परिग्रह सम्यक्त्वनो हेतु मोक्षकारण श्री अरिहंतनो चैत्य तथा जिनबिंब तथा ज्ञाननो कारण पुस्तक नवकारवाली प्रमुखचारित्रनां उपगरण तेहने ममत्वभावे ग्रहे, द्रव्य परिग्रह पुद्गल खंधादि ममत्वभावे ग्रहे, भावपरिग्रह क्रोधादिक अशुद्ध

परिणांम परभावस्वामित्वग्राहकत्वादिक परिणति ते परिग्रह राख्यो हवे, परद्रव्यनी इच्छा करी हवे, परिग्रह सुख मान्यो हवे, परिग्रह वास्ते धर्म आचरण कर्यो हवे ते परिग्रह पापस्थान मने वचने कायाए करी सेव्यो, सेवाव्यो होय सेवता अनुमोद्यो होवे ते श्रीअरिहंतनी साखे गुरुसाखे आत्मसाखे मिच्छामिदुक्कडं हवे छठो पापस्थानक क्रोध-तप्त परिणाम क्षमानो रोधक ते लौकिक भाई पिता प्रमुख कुटुम्ब उपर तथा अन्य जीव उपर क्रोध परिणाम, लोकोत्तर देवगुरु सार्धर्मिक उपर क्रोध परिणाम ते द्रव्यत तथा सकठोरता भाव रुद्र परिणाम ते जो कोई रीतनो अप्रशस्त क्रोध कर्यो होवे कराव्यो होवे करता अनुमोद्यो होवे ते श्री त्रिभुवनपति निरंजन देवनी साखे गुरुसाखे आत्मसाखे मिच्छामिदुक्कड हवे सातमो पापस्थान मान, अहंकार १ रुपनो, धननो, राज्यनो, परिवारनो, बलनो, तपनो, विद्यानो, कुलनो तथा गुणी नहीं ने गुणीनो मान, आचार्य उपाध्याय साधुपणानो अभिमान, संसारकार्य यशाभिलापे मान, धर्मकार्य सघयात्राचैत्य प्रमुखनो कराव्या रखवाल्यानो मान कर्यो हवे, लौकिक वालोकोत्तर गुणनो गुणथी, महत्व कर्यो हवे ते सर्व मने वचने कायाई करि कर्यो हवे कराव्यो होवे करता अनुमोद्यो होवे ते श्रीप्रभुजीनी साखे आत्मसाखे मिछामिदुक्कड. हवे आठमो पापस्थान माया कपट-वक्रता जे कोइथी वचननो द्रोह ठगाइ करवी ते माया लौकिक संसारी संबधथी, लोकोत्तर आचार्य साधु सार्धर्मिकथी, धर्म पद्धतिनो कपट करवो ते द्रव्यत कोइने वचवो, ते भावत' आर्ज्जवता रहित परिणामे जे माहरे जीवे कर्यो कराव्यो करतां अनुमोद्यो ते मने वचने कायाए करी श्रीजगवत्सल परम करुणानिधिनी साखे गुरु यथार्थवादीनी साखे, आत्म सारवे मिछामिदुक्कड

हवे नवमो पापस्थान लोभ, लालची परिणाम इच्छा गृद्धता ते लौकिक, वाह्य पोताने इष्ट वस्तु तेहनी लालच जे घणी जडे इन्द्रिय सुख प्रमुख आवे एहवो परिणाम ते लोभ, लोकोत्तर धर्मलिंगे धन विषय जसनो लाभ वांछे ए द्रव्यतः कह्युं, जे भावतः परभावाभिलाष सर्व ते जे माहारे जीवे कर्यो कराव्यो करतां अनुमोद्यो ते मने करि वचने करि कायाये करि श्री प्रभुजीनी साखे गुरु साखे आत्म साखे मिछामिदुक्कडं. हवे दसमो पापस्थान रागप्रीत परिणाम-वाल्हास जे जीव अजीव पोताने विषे पोषणीये लौकिक तथा लोकोत्तरथी द्रव्य तथा भावथी ते राग परिणति अनंति आत्माथी उपनी अन्य द्रव्यने विषे तेना उदिकनी रीझ ते माहारे जीवे करी करावो करतां अनुमोदि ते सर्व मने करी वचने कायाए करी श्री अरिहंतनी साखे गुरुनी साखे मिछामिदुक्कडं. हवे अग्यारमो पापस्थानक द्वेष अप्रीति परिणाम-जीव तथा अजीव उपर पोतानी विषयादि इष्टताये अपूरातां जे असुहामणां ने लौकिक उपर द्वेष तथा लोकोत्तर उपर द्वेष जे कर्यो होवे कराव्यो होवे करता प्रत्ये अनुमोद्यो होवे ते मने वचने कायाये करी ते श्रीसर्वज्ञनी साखे गुरु साखे मिछामिदुक्कडं. हवे वारमो पापस्थान कलह वढवाड-कोइथी द्रव्य वासते जस वडाइ वासते आक्रोश कुवचनादिक करवा तथा धर्म मध्ये नामगावा वासते, कुयुक्तिये पोतानो मत थापवाने जे कलह करवे प्रशस्त करतां अप्रशस्त थयुं होवे ते सर्व मने वचने कायाए करी कर्यु कराव्युं अनुमोद्युं ते देवसाखे गुरुसाखे आत्मसाखे मिच्छामिदुक्कडं. तथा तेरमो पापस्थान अभ्याख्यान-कुडोआल देवो द्वेषे तथा हास्ये गुणीना गुण ओलववा, आगलांने सहसात्कारे हिणो वचन कहेवो तथा वस्तुगते लोपीने फट्कार करवो ते लौकिक

अन्यजीवने संसारी रीते, लोकोत्तर अरिहन्त सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधु साधर्मिक देशविरति समकिती तेहनी औदयि चाल देखी कलंक देवो ते अभ्याख्यान कर्या होवे, कराव्या होवे करता अनुमोद्या होवे ते मने वचने कायाए करी श्री प्रभुजीनी साखे गुरुसाखे आत्मसाखे मिच्छामिदुक्कड. हवे चउदमो पापस्थान पैशुन्य-पारकी चाडी करवी ते जे द्वेषे थाये आगल्या जीवने कष्ट असातानो हेतु राजा तथा आचार्यादिक अधिक आगल तेहना छता अथवा अछता दोष कही तेहनो आश्रय भाजवो ते पैशुन्य कहीये ते जे माहारे जीवे कर्यो कराव्यो करता अनुमोद्यो मने वचने कायायें करो श्री प्रभुजीनी साखे आत्म साखे गुरु साखे मिच्छादि दुक्कडं. पन्नरमो पापस्थान रति तथा अरति उपजे असाता दुःखवियोग हानिप्रमुख उपजे जे अरति आकुलता किहाइ सुहाए नही ते अरति लौकिक विषयनी ऊणी असुहामणे, तथा लोकोत्तर आगम सुणता देवयात्राये तप सामायकपोसह भणवो प्रमुख ते मध्ये अरति करि होवे तथा रति, इन्द्रि विषयमध्ये रीझ सुहामण रक्तता विश्राम ते रति लौकिक, तथा लोकोत्तर चैत्य पुस्तकादिकनी सुन्दरता देखीने जे इद्रि विषे रीझ पामे ते रीझ ए नवा कर्म बांधवाने आकरी चिकणता जे माहरे जीवे करी, करावी, करता अनुमादी ते मने वचने कायाये करी श्रीपरमात्मानी साखे गुरुनी साखे आत्म साखे मिछामिदुक्कड. कर्यो कराव्यो करता अनुमोद्यो मने वचने कायाए करी श्रीप्रभुजीनी साखे, आत्मसाखे गुरु साखे मिछामिदुक्कड सोळमो पापस्थान परपरिवाद, पारकी निंदा तें द्वेषे पारका अवगुण कह्या, कोइना अपजस वासते पारकी कुथली करी अथवा सामा मनुष्यने खिसाणो पाडवा माटे जे निंदा करी ते मध्ये लौकिक ते जे संसारी जीवनी, लोकोत्तर गुणी जैनमार्ग अवलबता मार्गानुसारिथी माडी सिद्ध भगवान लगे जे

अवर्णवाद बोलवो ते बोल्यो होवे बोलाव्यो होवे बोलताने अनुमोद्यो होवे ते मन वचन कायाए करीने श्रीप्रभुजीनी साखे, गुरु साखे, आत्म साखे मिच्छामिदुक्कडं. हवे सत्तरमो पापस्थान माया मृषा—कपटे परने ठगवा वास्ते मिठूं बोले, कोइ कपटलिंग बगलानी पेरे देखाडीने गुणी नहि ने गुणी रीते वंदाववो, पूजाववो, मनाववो, कराववो, अथवा लौकिक वचने व्यापार प्रमुख मध्ये कपटे मृषा बोले तथा धर्म-चाले जैनागम मध्ये कपट रीते प्रवृत्ति करवी ते लिंगी जीव प्रमुख करवां ते जे माहारे जीवे कर्यां कराव्यां करतो अनुमोद्या ते मने वचने कायाए करी श्रीप्रभुजीनी साखे गुरु साखे आत्म साखे मिच्छामिदुक्कडं. हवे अढारमो पापस्थान मिथ्यात्व—जे कुदेव विषयी कर्साधिन परिग्रही पुण्यप्रकृति भोगि तेहने देव माने, कुगुरु चारित्रधर्म रहित जे अन्य लिंगी तथा स्वलिंगी गुणभ्रष्ट परिग्रहनो लोभी अढार पापस्थान भर्या ते गुरु करी माने, धर्म यथार्थ आत्मपरिणति विना अथवा तेहना साधन विना धर्म माने तथा जीवादिक नव तत्त्व जिम वस्तुधर्म वस्तु-पणे पोतानो परिणति छे, षटद्रव्ये जिम पोतानी परिणति गुणपर्याय स्वभाव स्याद्वाद रीते जिम छे तिम न सद्दहे कल्पित रीते सद्दहे तेने मिथ्यात्व कहे छे, तेहना मूल भेद ५ पहेलो अभिग्रह मिथ्यात्व—खोटो कदाग्रह झाल्यो मूके नहि २ अनभिग्रह मिथ्यात्व गुणअवगुण परख्या विना सर्व सरिखा माने ३ अभिनिवेश मिथ्यात्व. जाणीने खोटो कदाग्रह खेंचे ४ संशयमिथ्यात्व जे सर्व संशय मध्ये रहे ५ अनाभोग मिथ्यात्व जे कांइ जाणे नहि तथा साध्य साधन निमित्त तथा उपादान उत्सर्ग अपवाद विपर्यास रीते करि एहवी अशुद्ध सद्दहणा जे वेदांतादिकनी ते सर्व मिथ्यात्व जाणवो, ते जे सेव्यो होवे, सेवाव्यो होवे सेवतां अनुमोद्या होवे मने वचने कायाए करीने ते श्रीप्रभुजीनी साखे

गुरुसाखे आत्मसाखे मिच्छामिदुक्कड, ते मिथ्यात्व जीवने महादु'खकारी छे, अनादि ससारनो बीज छे, लोकोत्तर श्री जिनेन्द्रनो कह्यो शुद्धमार्ग जीव पामे नही ते मिथ्यात्व महा पापस्थान छे ते थका धर्म करणी पिण साधक न थाय ते माटे मिथ्यात्वनो पश्चात्ताप घणो करवो, ते मिथ्यात्व टळतो नथी ते जे पूर्वे जीवे गुणीनी आशातना तथा गुणनो अनादर कर्यो छे ते महागुणी अरिहन्त देव तेहनी भक्तिने काजे उत्तम भव्य-जीवे जे धनादिक रह्यो थको पोताना आत्माने तथा अन्य संसारी जीवने सिण (स्नेह) सरागता, परिग्रहता हिंसादिकनो हेतु थाये, तिणे गुणीनी भक्ति जोडतो निरधिकरणी थाये, ते माटे जे अरिहतनी भक्ति कारजे कर्यो जे धनादिक ते देवको कहिये, ते जे खाधो होवे अथवा पोते विणसाड्यो होवे अथवा उवेख्यो होवे ते सर्वे देवकाना दूषण थयो, ते माटे देवकादोषनी आलोयणा करवी ते लखीये छे, जे माहरे जीवे एकेन्द्रि पृथ्वी-कायपणे जिनबिंबादिकनी आशातना करी अथवा पृथ्वीकायपणे मुक्यां जे शरीर तेहथी जे गुणी अथवा गुणीनी थापना चैत्यादिक तेहने व्याघात थयो तथा अपकायपणे पाणिमे चैत्य वहेवराव्या पाड्या जिन बिंब वहाव्या तथा अग्निकायपणे जे चैत्य-बिंबादिक बाल्या होवे, तथा वायुकायपणे चैत्य पाड्यो होवे, तथा वनस्पतिकायपणे ले चैत्य मध्ये रुखडा झाड पणे उगीने चैत्य पाड्या होवे, त्रसकायपणे चैत्यमध्ये मालादिक करी रह्या हये पखीने भवे चैत्य तथा जिनबिंब उपर बेसी असमंजस आचरण कर्या होवे, तथा देवकाद्रव्य मनुष्यपणे जाणी तथा जाण्या विना खाधा होवे अथवा अविधि वावर्या होवे तथा देवका उपर अन्याय हुकम कर्या होवे, अथवा देवकी वस्तु वावरीने पोताना यश रोलाव्या होवे, देवका टोकडा व्याजे

राखी थोडो व्याज भरी आप्यो होवे अने घणो लाभ लीधो होवे, तथा बीजी पण देवथी इन्द्रि सुख यशवडाइ प्रमुख जे करी होवे तथा अरिहंत देव मते सांसारिक कामे मान्या इच्छ्या होवे ते मने वचने कायाए करी मिच्छामिदुक्कडं. हिवे माहारे ए कार्य अशुद्धाचरणरूप न करवुं आज पछी माहारो आत्मा अनंतगुणमयी प्रगट करवानी रुचि करवी श्रीअरिहंतनो कह्यो मार्ग तहत्त करी सर्दहवो, अन्य सर्व मिथ्या, श्रीवीतरागे कह्यो, निग्रंथे आचर्यो, समकिती जीवे सदह्यो, श्रीगणधर देवे आगम मध्ये गूंथ्यो, शुद्ध धर्म माहारो तथा सर्व जीवनो हित छे ते माहरे प्रमाण ते सदहवो, ते जाणवो, ते आदरवो, ते नीपजाववो. जे समये समये गुणस्थान चढी कर्मक्षय करी संलेशी अंते पोतानी सिद्ध संपदा प्रगट थास्ये ते समयसार मानवो, अने जेने ए मारगनी परतीत प्रगटी तेने शरणे. रहेवो तथा साध्य शुद्धसत्ता साधन गुणठाणे चढी ते रत्नत्रयी परणमवी ए मार्ग माहरो सदा अविहड होज्यो इति ॥

॥ दूहा ॥

परम अध्यातमने लखे, सद्गुरुकेरे संग;
तिणकुं भव सफलो हवे, अविहड प्रगटे रंग. १

धर्मध्यानको हेत यह, शिवसाधनको खेत;
ऐसो अवसर कब मिले, चेत सके तो चेत. २

वक्ता श्रोता सम मिले, प्रगटे निजगुणरूप;
अक्षय खजानो ज्ञानको, तीन भूवनको भुप. ३

एह पत्र अनुप हे, समझे जे चित्तलाय,
देवचद्रकवि इम कहे, निज आतम थिर थाय ४

इति अढार पापस्थान जाणवां. हवे छट्ठो गुणठाणो प्रमत्त साधु एहवे नामे कहीये जे प्रत्याख्यानी चोकडीनो उदय टल्यो सर्व विरति प्रगटी, संयम साधन माटे पौद्गलिक भावे ग्रहे पण पुद्गलने भोगिपणे ग्रहे नहीं. स्वरूपरमणी आत्मधर्म थिरता रूप सर्व-परभाव उपर अग्राहकतारूप चारित्रधर्म प्रगटयो छे ते साधु उत्सर्ग अपवाद मार्गेपचमहाव्रत पाले छे, तिहा द्रव्यभाव पच महाव्रत सहित पांच समिति, तीन गुपतिना, दश यति धर्मना पात्रयका निराशसी एक आत्मा निर्मल करवाना उद्यमथकी विचरे ते पच महाव्रत, तिहा पहेलो महाव्रत–सव्वाओपाणाईवायाओवि-रमण " विवहारे छकायना जीवना द्रव्य प्राण १० हणे नहीं हणावे नहीं हणताने अनुमोदे नही. मन वचन कायाए करीने, निश्चयथी ज्ञानदर्शन चारित्र सुख प्रमुख भावप्राण पोताना पर-ना कर्म आवरणपणे हणे नहि, हणावे नहि, हणतां अनुमोदे नहीं, तथा बीजे महाव्रते, सव्वाओ मोसा वायाओ वेरमणं. द्रव्यतः क्रोधे, माने, मायाए, लोभे, सूक्ष्मबादर लौकिक तथा लोकोत्तर जूठु पोते बोले नही, बोलावे नहि, बोलता अनुमोदे नहि, मन वचन कायाए करी, भावथी सर्व द्रव्य पर्यायनो य-थार्थ जाणवो, सत्य भासनरूप ज्ञायकता शक्ति साधि ज्ञान सत्यपणे पाले तथा श्री वीतरागना आगम प्रमाणे अर्थ भाव छे तेहनी सद्दाय करे, जेहथी पोताना ज्ञानदर्शन चारित्र निर्मल थाये ते भाषा बोले. त्रीजा महाव्रत सव्वाओ अदिन्नादाणाओ वेरमणं" जे द्रव्य ते त्रण तुस मात्र पण अण दीधो लेवे नही, लेवरावे नही, जे लेवे तेहने सारो कहे नही, मने वचने कायाए

करीने लौकिक चोरी जे संसारी जीवनी वस्तु चोरी लेवी, लोकोत्तर चोरी जे तीर्थंकर आणसे जे न लेवानो कह्यो ते लेवो ते चोरी न करे, भावथी आत्मानी ग्राहकता शक्ति ते स्वरूप ग्रहणरूप कार्यना कर्ता छे ते अनादिनो परभाव ग्राहकता करी रह्युं छे ते निवारीने स्वरूप ग्राहकपणे परणमावे, ते अदत्तादान विमरणव्रत थयो. ते अदत्तादान चार भेदे छे ते तीर्थंकर अदत्त–जे तीर्थंकरनी आणामें न लेवो कह्यो सर्व परभाव ते लेवे बीजो गुरुअदत्त–जे गुरु परंपरा विना सूत्र अर्थ कहेवा त्रीजो स्वामी अदत्त जे वस्तुना जे धणी होवे तेनी अणदीधी जे वस्तु लेवी ते चोथुं जीव अदत्त–जे कोइ जीवे एम कह्यो नथी जे माहरा प्राण हणो अने पोताने इंद्री स्वाद माटे परजीवना प्राणहणे ते जीव अदत्त तथा प्रशस्त काम करतां कोइ जीवना प्राणघात थाये ते श्री भगवंते हिंसा कही नथी, ते त्रिनय तथा वैयावच्चमां गण्युं छे ए द्रव्यभाव अदत्तादान त्रिविधि त्रिविधिपणे होवे. चोथे महाव्रते "सव्वाओ मेहुणाओ वेरमणं" जे द्रव्यथी पांच इंद्रिना त्रेवीस विषय सेवे नही, सेवतां अनुमोदे नहीं, मनुष्य तिर्यंच देवताना विषयनी वांछा न करे, न करावे, अनुमोदे नही, भावथी जे आत्मा द्रव्य आत्म. गुणनो भोगी छे ते पण करम करवा माटे परभावने भोगवे ते भाव मैथुन छे, ते सर्व परभाव भागीपणे भोगवे नही, ते आत्मानिःकर्मी करवा माटे, परभाव साधनपणे ग्रहे पण अभोग्य अग्राह्यपणे अरमणिक माने, जे माहरा आत्मा आत्मानंदना. भोगी ते परभाव अनंत जीवे अनंतवार लइ भोगवीने वम्यो ते. मने ग्रहवो भोगववो घटे नही ए अनंत जीवे अनंतीवार भोगवी जे अैठ जडचल तेहने हुं भोगवुं नहीं इम सर्व परभाव भोगीपणो तजी स्वभाव भोक्तापणे रहेवा ते. द्रव्यथी मैथुनना कारणरूपी खंभ

मिल्या जाणवो, खेत्रथी मैथुन तीन लोकने विषे इंद्रीना सवादनी ईच्छा, कालथी मैथुन दिवस तथा रात्री, भावथी मैथुन रागथी तथा द्वेषथी, ते सर्वथी सेववो नहीं तेहनी वाड नवे पाळवी. पहली वाडे जे थानके स्त्री पशु पडक रहे ते थानके ब्रह्मचारीए रातीये रहेवु नहीं. बीजी वाडे स्त्री साथे हासि तथा कामकथा करवी नहीं, त्रीजी वाडे जे पीठ पाटले स्त्री बेठी होये ते पाटले बे घडी लगे ब्रह्मचारी पुरुषे बेसवु नहीं, स्त्रीये तीन पहोर लगे बेसवुं नहीं. चोथी वाडे स्त्रीनुं रूप नजर जोडीने जोवु नहीं पाचमी वाडे जिहा स्त्री भरतार काम भोग भोगवता होवे ते भींतने अंतरे ब्रह्मचारीये राते रहेवुं नहीं, तेहना शब्द काने पडवा देवा नहीं. छट्ठी वाडे गृहस्थपणे जे भोग भोगव्या ते सभारवा नहीं. सातमी वाडे सरस आहार जेहथी काम दीपे ते आहार करवो नहीं. आठमी वाडे अतिमात्राए आहार करवो नहीं, नवमी वाडे शरीर सिणगार लगडानो तथा घरेणानो करवो नहीं, सनान उगटणा न करवा, एकली स्त्री साथे एकलु वाटे चालवु नहीं, तथा नानु बालक तथा बालिकाथी एक शय्याए सुवु नहीं, सात वरस पछें. पाचमे महाव्रते "सव्वाओ परिग्गहाओ वेरमणं" जे द्रव्यथी परिग्रह सूक्ष्मबादर राखे नहीं रखावे नहीं, राखे तेहने अनुमोदे नही, जे सयम पालवा माटे सुखे सिझाय थाये ते माटे उपकरण १४ राखे, कारणे अधिको जोइए तो गृहस्थनाथका पाडेरुं वापरे ए थिरकल्पीनो विवहार छे, जिनकल्पी कोइ उपगरण न राखे, अपवादे दश उपगरण राखे चार कषायउदय टल्या तेहने छट्ठो गुणठाणो कहीये-साधु कहीये. पण ५ परमाद सेवे १ निद्रा २ विकथा ३ आहार ४ अल्पविषय ५ मानादिक ए अल्प सेवे, अनाभोगे जाणे, सेवे नहीं. ए छट्ठा गुणठाणानी स्थिति जघन्ये एक समय उत्कृष्टे अंतर्मुहुर्त ए

गुणठाणे १ सामायिक, २ छेदोपस्थापनीय, ३ परिहार विशुद्धि ए तीन चारित्र छे. तेहनो स्वरूप जे परभाव परित्यागे स्वरूप एकत्व ते चारित्र कहीये ते मध्ये जे तजवा योग्य भाव तजे ते द्वेष विना, अने रत्नत्रयीजे आत्म धर्म ते ग्रहे स्वधर्म माटे. पण लौकिकादिक इष्टता राग विना. एहवो समपरिणाम ते सामायिक कहीए, तथा जे सामायक मध्ये संज्वलनना तीव्रोदये जे आकरा अतिचारे अथवा चार कषायने उदये असंजमपरिणाम फरसे जे पूर्व पर्याय छेदीने अभिनव निर्मल पर्यायनो अंगीकार करवो ते छेदोपस्थापनीय कहीये, अने छेदोपस्थानीचारित्र भरत ५ तथा ऐरवत ५ ते मध्ये प्रथम चरम तीर्थंकरना साधुजीने होवे तथा तीर्थंकर तथा गणधरजीना शिष्य नव पूर्वथी उपरांत श्रुतवन्त मध्य युवान वयी प्रथम संघयणे अढार मासनो उग्रतप ते अप्रमादी निद्रा रहित नवजणा वनवासी थका जे तप करे ते परिहार विशुद्ध चारित्र कहिजे, दशमे गुणठाणे शुक्लध्यान तथा सूक्ष्म लोभनो उदय छे ते सूक्ष्म संपराय चारित्र कहिजे, तथा सर्वथा कषायना उदय नथी ते यथाख्यात चारित्र कहिजे ते मध्ये ११ मे गुणठाणे उपशांत यथाख्यात छे १२, १३, १४ मे गुणठाणे क्षायिक यथाख्यात छे, हवे सातमो अप्रमत्त गुणठाणो लिखीये छे, छट्ठे गुणठाणे जे भाव साधुजीना कह्या ते सर्व होवे पण पांच प्रमाद न होवे, ते माटे अप्रमाद, ए छट्ठे गुणठाणे वरततो साधु जिनशासनने कामे लब्धि फोरवे पण सातमे गुणाठणे वरततो साधु लब्धि न फोरवे, एहनी स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तनी छे. छट्ठे तथा सातमे गुणठाणे मिलीने साधु देशे उणी पूर्व कोडी रहे. श्री भगवतीसूत्रे ए बे गुणठाणानी देशे उणी पूर्व कोडी स्थिति जूदी कही छे. ते व्यवहारनये छे, समय तथा बे समय वच्चे गुणठाणो पलटे

ते गवेल्यो नथी ते माटे अंतर्मुहुर्तनी स्थिति कही छे, सातमे बे गुणठाणे सामायिक तथा छेदोपस्थापनीय तथा परिहार विशुद्धि चारित्र छे, तथा सातमे गुणठाणे साधु लब्धि फोरवे नहि, अने छठ्ठा गुणठाणाना साधु जिनशासनने काजे लब्धि फोरवे तेनुं साधुपणु जाय नहीं. आठमो अपूर्वकरण गुणठाणो-जे जीव भावनाभावतो आत्मानो स्वरूप अनंतज्ञानमयी, अनतदर्शनमयी, अनतचारित्रमयी, अनन्तदानमयी, अनन्तलाभमयी, अनन्तभोगमयी, अनंतउपभोगमयी, अनन्तवीर्यमयी, अनन्त अव्याबाधसुखमयी, परमआनदमयो, अरूपी, अवेदी, अकपाई, अलेसी, अशरीरी, अनाहारी, सर्व आनन्दरूप माहारो धर्म छे ए शरीर, आहार ते हु नहीं, एहवी भावनामाहे परणम्यो जीव शुक्लध्याननो पहेलो पायो ध्यावे, इहा पांच अपूर्वकरण-करे पूर्वे किवारे नकरयां होय ते करे, तेहना नाम पहेलो अपूर्वकरण थितिघात जे जीव कने असख्याता थित जघन्य थोकडा हता ते करमथिति सघली खपावी अथवा उपशमावी बीजो अपूर्वसंघात जे कर्मना रस चीकणास हती ते खपावी पातलुं करवु, त्रीजो अपूर्वगुण श्रेणि जे जीवने सत्तामाहे करमदल हता ते सर्व विखेरी नाखवां, चोथो अपूर्वगुणसंक्रम आत्माना गुणमे रमवो, पांचमो अपूर्व जे नवोस्थितिबध न करवो एहवा परिणामथी कषाय खपावीने आतमा शीतल परिणामे परिणम्यो कर्म निर्जरा करे ते. ए गुणठाणे जघन्य एक समय उत्कृष्ट अतर्मुहुर्तनी स्थिति छे, ए गुणठाणे चारित्र सामायिक तथा छेदोपस्थापनीय ए बे छे नवमो गुणठाणो अनिवृत्तिबादर छे ते शुक्लध्याननो पहेलो पायो तेथी आवे, ए गुणठाणे वर्तता जीव एक अध्यवसाये जेटला होवे तेटला सर्वनो एक सरखो परिणाम एक सरखो सवर, एक सरखी निर्जरा. एहने सामायिक

तथा छेदोपस्थापनीय ए बे चारित्र होवे, एहने अंते तीन वेद जाये तथा तीन कषाय संजलनो क्रोधमान माया लोभ जाये ए गुणठाणे संख्याता जीव होये. ए गुणठाणानी स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहुर्तनी छे. दशमो गुणठाणो सूक्ष्म संपराय इहां सूक्ष्म संज्वलननो लोभ उदय होवे. इहां बे जातना जीव पामीये, उपशम श्रेणि तथा क्षपक श्रेणि. कर्मने उपशमावेते उपशम श्रेणि, क्षपकश्रेणि कर्म मोहनीने खपावे, ए गुणठाणे एक सूक्ष्म संपदाय चारित्र होषे, ध्यान शुक्ल होवे, परिणाम निर्मल होवे, ते अवेदी छे एहनी स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहर्तनी छे. इग्यारमो गुणठाणो उपशांतमोह तिहां जे जीव उपशम श्रेणि आठमेछतोघोलना परिणामशांत मोह कर्मनी प्रकृतिउपशमावतो जाय ते तेहनो उठाणधुरथीज उपशमावानो छे ते नवमे आवी मोहप्रकृति उपशमावी दशमे लोभ उपशमावीने कषायना उदयरहीत छे ते इग्यारमे आवे ते ×यथाख्यात चारित्र पामे, एहने चोवीस संपरायकी क्रिया उतरी एकइरियावहिकी क्रिया रहे. प्रकृति तथा परदेश ए बे बंध रह्या छे हेतु न बांछे, बंध एक सातावेदनीनो छे, ध्यान शुक्ल छे. ए गुणठाणे जे जीव मरण पाम्या पछी चोथे गुणठाणे आवे ते देवता लवसत्तमीया थाए, एकावतारी थाए. अथवा कोइक जीव अगीयारमे गुणठाणे जइ पाछो पडे ते इग्यारमांथी दशमे आवे, दशमाथी नवमे आवे, नवमेथी आठमे आवे, आठमेथी सातमे आवे, सातमेथी छट्ठे आवे. इहांथी पाछो पडे न चढे तो पाछो पांचमे गुणठाणे आवे, पांचमाथी चोथे आवे, जो क्षायक समकिती होए तो चोथे गुणठाणे टके, अने उपशम समकिती होए तो चोथाथी पडी बीजे सा-

+ पडी पाछो क्षपक श्रेणी चढी.

स्वादन गुणठाणे थइने पहेले मिथ्यात्व गुणठाणे आवे, कोइक जीव अंतर्मुहूर्त्त रहे, कोइक जीव देश उणोअर्ध पुद्गल परावर्त्त मिथ्यात्वीपणे रहे पछे समकित पामे. ए अगीयारमो गुणठाणो एक जीव च्यारवार पामे, एक जीव एक भवमांहि बेवार पामे, एहनी स्थिति जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त्तनी छे. एअगीयारमो गुणठाणोकह्यो. हवे बारमो क्षीणमोह गुणठाणो ते जे जीव आठमा गुणठाणाथी कर्म खपावतो तीव्र वीरज निरमल उपयोग शुद्ध शुक्ल ध्यानने वले नवमे दशमे गुणठाणे मोहनी कर्म खपावी बारमे गुणठाणे आवे, एह शुक्ल ध्याननो बीजो पायो एकत्ववितर्क अप्रविचार ध्यावे, एहथी आयु वले घनघाती तीन कर्म ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, अतराय खपावे, एहनी स्थिति अंतर्मुहूर्त्तनी छे. १२। तेरमो गुणठाणो सयोगी केवली–जे जीव गुणमाने अते ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, अतराय, ए खपे केवलज्ञान केवलदर्शन प्रगटे, लोक अलोकना सर्व भाव अतीतकाल, अनागतकाल, वर्तमानकाल, सर्व प्रत्यक्ष आत्मवले इन्द्रिय विना जाणे देखे, इहां जे अंतगड केवली होवे ते केवली समुद्घात करीने मोक्ष जाय अने जे केवलीनो आऊखो घणो होवे ते अनेक जीवने उपगार करवा अनेकदेशना देता विचरे देशे उणीपूर्व कोडी लगे विचरे, तथा जे तीर्थंकरदेव केवलीपणे विचरे ते चोत्रीश अतिशय तथा आठ प्रतिहारज विराजमान थका नवा सोनाना कमले पग थापता चाले, योजनप्रमाण माडलेसमोसरणे सोनाने सिंहासने तीन छत्र माथे वीराजता बे पासे चामरनी जोड विझता हजार धजा इन्द्रधजा लहेकता देशना देता जघन्य बहोतेर वरसने आऊखे उत्कृष्टे चौराशी लाख पूरवने आऊखे विचरे, अनेक जीवने धरम उपदेश दे, गणधर थापना करे, साधु साध्वी श्रावक श्राविका ए च्यार

संघ थापे, द्वादशांगी सिद्धांत प्ररूपे, अने सामान्य केवलीने अतिशय न होवे ते छेडे आवरजीकरण करे. पछी जो आऊखो अने बीजां करम सरखां होवे तो केवली समुद्घात न करे. अने जो आऊखेथी (अन्य) करम घणा होवे तो केवली समुद्घात करे तेहने आठ समय लागे, ए तेरमा गुणठाणानी स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्तनी छे उत्कृष्टे देश उणीपूर्व कोडी वर्षनी छे १३ ॥ चउदमे गुणठाणे अयोगी केवली ते जे जीव तेरमे गुणठाणे जोगरोध करवा मांडे, सूक्ष्म क्रिया अप्रतिपाति शुक्ल ध्याननो त्रीजो पायो ध्यावतो ते चउदमे गुणठाणे चढे, तिहां प्रथमथी बादर मनोजोग रोके, पछी बादर वचनजोग रोके पछी बादर कायाजोग रोके पछी सूक्ष्म मनोयोग रोके, पछी सूक्ष्म वचनजोग रोके, पछी सूक्ष्म कायाजोग रोके, शरीररहित थाए, जेटलो देहमान होवे, जघन्य बे हाथनो उत्कृष्टो पांचसे धनुषनो त्रीजे ते मध्येथी त्रीजे भागे घटाडे, तेवारे जघन्य बत्रीस आंगुलनी उत्कृष्टी तीनसेतेत्रीस धनुप बत्रीस आंगुलनी अवगाहना रहे, तेवारे आत्मा अयोगी, अक्रिय, अलेसी, अनाहारी, अशरीरी, शुक्ल ध्याननो चोथो पायो ध्याईने अघाती करम च्यार, वेदनीकर्म १ आऊखोकर्म २ नामकर्म ३ गोत्रकर्म ४ नो क्षय करीने मोक्ष जाय ॥ इतिश्री चौदमुं गुणस्थानकं संपूर्णम् ॥





॥ श्री परम गुरुभ्यो नमः ॥

श्रीदेवचंद्रजीकृत नयचक्रसार.

वालाववोध सहित.



मंगलाचरण

प्रणम्य परमब्रह्म शुद्धानन्दरसास्पदम् ।
वीरं सिद्धार्थराजेन्द्र नन्दनं लोकनन्दनम् ॥१॥
नत्वा सुधर्मस्वाम्यादि, सङ्घ सद्वाचकान्वयम् ।
स्वगुरुन् दीपचन्द्राख्यपाठकान् श्रुतपाठकान् ॥२॥
नयचक्रस्य शब्दार्थ कथनं लोकभाषया ।
क्रियते वालवोधार्थं सम्य ग्गीविशुद्धये ॥३॥

प्रशस्ति

श्रीजिनागमने विषे १ द्रव्यानुयोग २ चरणकरणानुयोग ३ गणितानुयोग ४ धर्मकथानुयोग ए चार अनुयोग कह्या छे तेमां छ द्रव्य अने नव तत्त्व तेना गुणपर्याय स्वभाव परिणमनने जाणवुं ते द्रव्यानुयोग एवं पंचास्तिकायनुं स्वरूप कथन-

रूप छे. ते पंचास्तिकायमध्ये एक आत्मा नामे अस्तिकाय द्रव्य छे, ते आत्मा अनंता छे, तेना मूल वे भेद छे, तेमां एक सिद्ध निष्पन्न सर्वकर्मावरण दोषरहित संपूर्ण केवलज्ञान केवलदर्शनादिगुणप्रकटरूप, अखंड, अमल, अव्यावाबाधानंदमयी, लोकने अंते विराजमान, स्वरूपभोगी ते सिद्धजीव कहियें. ते सिद्धता सर्व आत्मानो मूल धर्म छे, ते सिद्धतानी ईहा करवाने सिद्धभगवंतनो यथार्थसिद्धपणो ओलखीने निष्पन्न सिद्धनो वहुमान करवो, अने पोते पोतानी भूले अशुद्धचेतनपणे परिणमतां बांध्यां जे ज्ञानावर्णादिकर्म ते टालीने पोतानी संपूर्ण सिद्धतानी रुचि करवी एहीज हितशिक्षा छे.

वली बीजो भेद संसारि जीवोनो छे. ते जेणे आत्मप्रदेशें स्वकर्त्तापणे कर्मपुद्गलने ग्रह्या, जेने कर्मपुद्गलनो लोलीभाव छे ते मिथ्यात्व गुणठाणाथी मांडीने अयोगी केवली गुणठाणाना चरमसमयपर्यंत सर्व संसारीजीव कहियें. तेना वली बे भेद छे. एक अयोगी, बीजा सयोगी. ते सयोगीना बे भेद. एक सयोगीकेवली, बीजा सयोगी छद्मस्थ. छद्मस्थना बे भेद. एक अमोही, वीजा समोही. समोहीना बे भेद छे. एक अनुदितमोही, वीजा उदितमोही. उदितमोहीना बे भेद. एक सूक्ष्ममोही, बीजा वादरमोही. वादरमोहीना बे भेद. एक श्रेणिवंत, बीजा श्रेणिरहित. श्रेणिरहितना बे भेद. एक संयमी विरति, बीजा अविरति, अविरतिना वली बे भेद. एक समकीति, बीजा मिथ्यात्वी. मिथ्यात्वीना बे भेद. एक ग्रंथिभेदी, बीजा ग्रंथिअभेदी. ग्रंथिअभेदिना बे भेद. एक भव्य, बीजा अभव्य. तेमां अभव्यजीवोनुं तो दल ज एवो होय जे श्रुतअभ्यास पण करे तथा द्रव्यथी पंच महाव्रत आदरे पण

आत्मधर्मनी यथार्थ श्रद्धा विना पहेलो गुणठाणो किवारे मूके नही. माटे ए जोवो ते सिद्धपद पामवाने योग्य नही ते अभव्य चाथे अनंते छे.

बीजा भव्य ते जे सिद्धपणाने योग्य छे, जेने कारणयोग मिले पलटण पामे. ते भव्यजीवा अभव्यथी अनन्तगुणा छे ते मध्ये केइक भव्य सामग्रीयोग पामी ग्रंथिभेद करीने समकित पामे अने केटलाएक भव्य तो सामग्रीने अभावें समकित पामे ज नही. उक्त च

विशेषणवस्था सामग्गी अभावाओ, ववहाररासिअप्पवेसाओ ॥ भव्वावि ते अणता, जे सिद्धसुह न पावति ॥ १ ॥

पण ते भव्य जीवोमा योग्यता धर्म छतो छे ते माटे भव्य कहियें. जे जीव मिथ्यात्व तजीने शुद्ध यथार्थ आत्मपणे व्यापक रह्यो तेज मारो धर्म, अने जेथी ते आत्मसत्तागत धर्म प्रगटे ते साधनधर्म. तेना बे भेद छे. एक वायणा–पुछणादि–वंदन, नमनादि पडिलेहण–प्रमार्जनादि जेटली योगप्रवृत्ति ते सर्व द्रव्यथी साधनधर्म कहियें. ते भावधर्म प्रगट करवाने जे करे तेने कारणरूप छे. द्रव्य ते जे भावनुं " कारण कारयासे दव्व " इति आगमवचनात ॥

अने जे उपयोगादि पोताना क्षयोपशमभावें प्रगट्या जे ज्ञानवीर्यादिगुण ते पुद्गलानुयायीपणाथी टालीने शुद्धगुणी जे श्रीअरिहंत–सिद्धादिक तेना शुद्धगुणने अनुयायी करवा. अथवा आत्मस्वरूप अनतगुणपर्यायरूप तेने अनुयायी करवा ते भावथी साधनधर्म जाणवो. ए आत्मा नीपजाववानो उपाय छे.

जिहा लगे आत्मानुं शुद्धस्वरूप चिदानंदघन ते साध्यमां नथी अने पुद्गलसुखनी आशाये विष, गरल, अन्योन्य अनुष्टान जे करवु ते ससारहेतु छे माटे साध्यसापेक्षपणे स्याद्वादश्रद्धायें

साधन करवुं एहिज मार्ग छे. अने ए मार्गनी जे प्रतीतरुचि ते सम्यक्त्व कहियें. ते सम्यक्त्व ग्रंथिभेद कर्यो पामियें. ते ग्रन्थिभेद तो त्रण करण करे तो जडे. ते त्रण करण जीव करे तेवारें सम्यक्दर्शन पामे. ते त्रण करणमां पहेलुं यथाप्रवृत्तिकरण, बीजुं अपूर्वकरण, त्रीजुं अनिवृत्तिकरण. ए करण सर्व संज्ञी पचेंन्द्रि करे. तेमां प्रथथ यथा प्रवृत्तिकरण ते भव्य तथा अभव्य पण करे. कोइक जीव अनंतिवार करे. ते यथाप्रवृत्तिकरणनुं स्वरूप लखियें छैये.

सर्वकर्मनी उत्कृष्टस्थितिना बांधनार जीवने संक्लेश घणो छे माटे यथाप्रवृत्तिकरण करे नही. उक्तंच विशेषावश्यके-

उक्कोसठ्ठि न लब्भइ भयणा एएसु पुव्वलद्धा-ए ॥ सव्वजहन्नठिइसु वि, न लब्भइ जेण पुव्व-पडिवन्नो ॥ १ ॥

माटे कर्मनी उत्कृष्टस्थितिनो बांधनार जीव ते चार सामायिकनो लाभ न पामे, अने जे जीव सात कर्मनी जघन्यस्थिति बांधे ते जीव तो गुणवंत ज छे ए रीत छे. माटे जे वारें एक कोडाकोडी सागरोपम पल्योपमने असंख्यातमें भागे उणी स्थिति बांधतो होय ते यथाप्रवृत्तिकरण करे. जे जीव कर्मक्षपणारूप शक्ति पाम्यो न हतो ते शक्ति पाम्यो तेने यथाप्रवृत्तिकरण कहियें. उक्तं च भाष्ये **येन अनादिसंसिद्धप्रकारेण प्रवृत्तं कर्मक्षपणंक्रियते अनेनेति करणं जीवपरिणाम एव उच्यते अनादिकालात् कर्मक्षपणप्रवृत्ताव्यवसायविशेषो यथाप्रवृत्तिकरणमीत्यर्थः ॥**

क्षयोपशमी चेतनावीर्यं जे संसारनी असारता जाणे, संसार दुःखरूप करी जाणे, तेथी परिग्रह शरीरथी खरे, उद्वेगे उदासीनता परिणामे करी सात कर्मनी स्थिति अनेक कोडाकोडीना थोकडा असंख्याता जे सत्तामां हता ते खपावे, ने कांइक

उणी एक कोडाकोडी राखे. ए यथाप्रवृत्तिकरण आत्मा अनंतिवार करे, पण ग्रथिभेद करी शके नही. ए करण ते गिरि नदीने विचें आव्युं पाषाण ते घचना घोलनारूप चालवे करीने जेम सहेजे सुंहालो थाय, अनें कोइक आकार पकडे तेम जन्म मरणादि दुःखने उद्वेगे अनाभोगथी ज भववैरागें जीव यथाप्रवृत्तिकरण करे एहिज जीव कोइक रीते वैराग्यं विचारे जे भवभ्रमण ते दु'ख छे, ए संयोग वियोगादि असार छे पण कांइक ज्ञानानंदादि ते सार ऊे. एहवी गवेषणा करनारो जीव ते यथाप्रवृत्तिकरण करीने अपूर्वकरण करे. इहा कोइ पुछे जे भव्यने तो पलक्षण योग्यता छे पण अभव्य जीव केम करे ? तेनु उत्तर जे तीर्थंकरभक्तिमा जे देवतानी महिमा तथा लोक सन्मानादिक देखीने पुण्यनी वाछायें देवत्व राज्यादिक लाभ इच्छायें इग्यार अंग तथा बाह्य पच महाव्रतादि पामे पण तेने सम्क्त्व न हाय. जे पुद्गलाभिलाषी छे तेने गुणस्पर्श न थाय उक्तचमहाभाष्ये ॥ अर्हदादिविभूतिमतिशयवतीं दृष्ट्वा धर्मादेवविधसत्कारो देवत्वराज्यादय' प्राप्यते इत्येव समुत्पन्नबुद्धेरभव्यस्यापि देवनरेन्द्रादिपदेहया निर्वाणश्रद्धारहितकष्टानुष्ठान किंचिदगी कुर्वतो ज्ञानरूपस्य श्रुतसामायिकमात्रलाभेऽपि सम्यक्त्वादिलाभः श्रुतस्य न भवत्येवेति ॥ ए रीतें धारवुं.

तथा अपूर्वकरण अने अनिवृत्तिकरणनो अधिकार जेम आगमसारमां लख्यो ऊे तेज प्रमाणे इहा पण जाणवा. इम त्रण करण करीने उपशम अथवा क्षयोपशम अथवा क्षायिक सम्यक्त्व जे पाम्यो अने आत्मप्रदेशे वर्त्तमाने सम्यक्दर्शनगुणनो रोधक एहवो मिथ्यात्व मोहप्रकृतिना विपाकोदयने टलवे करीने जे सम्यक्दर्शनगुणनी प्रवृत्ति थाय तेथी यथार्थपणे निर्द्धार

सहित जाणपणो प्रवर्ते ते जीवने द्रव्यानुयोगें तत्त्वज्ञान प्रगटे. तेथी जे आत्मगुण प्रगटे ते आत्मगुणरक्षणायें ज प्रवर्त्ते एहवी स्वरूपानुयायी आत्मगुणनी प्रवृत्ति तेहने धर्म करी सद्दहे. ते माटे स्याद्वादपरिणामी पंचास्तिकाय छे. ते स्याद्वादरूप ज्ञान ते नयज्ञाने थाय; माटे नयसहित ज्ञान करवुं. ते नयज्ञान अति दुर्लभ छे. अने नयनी अनंतता छे. उक्तं च॥जावइया वयणपहा तावइया चेव हुंति नयवाया ॥ ते जे पूर्वापर सापेक्ष नही ते कुनय कहियें, अने सर्वसापेक्षपणे वर्त्ते ते सुनय कहियें. ते मूल सात नय छे तेनुं स्वरूप अल्पमात्र लखियें छैयें.

नय ते ज्ञानगुणनुं प्रवर्त्तन छे.जे कारणे एकद्रव्य मध्ये अनंता धर्म छे, ते एक समये श्रुतोपयोगमां आवे नही, स्या माटे जे श्रुतज्ञाननो उपयोग असंख्याता समयें थाय. अने वस्तु मध्ये तो अनंता धर्म एक समये परिणमता पामिये. तेवारे श्रुतज्ञान सत्य थाय नही. ते माटे नयें करी जाणे. तथा यद्यपि केवलीनो उपयोग एकसमयी छे ते माटे जाणवामां नयनुं कार्य केवलीने पडे नही, पण वचने कहेतां केवलीने पण नयें करी कहेवुं पडे, कारण के वचन ता क्रमे करीने बोलाय छे अने वस्तुधर्म अनंता एकसमयकालें छे ते माटे नयें करी कहे. वली जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणपूज्य कहे छेः—

जीवादि द्रव्यमां जे गुण छे ते अनंतस्वभावी छे. गुणनी छति तेनुं परिणमन तेनी प्रवृत्ति तेमः जे समये कारणता ते समये ज कार्यता इत्यादि अनेकपरिणतिसहित छे. तेथी कोइक रीते सर्वनुं भिन्नाभिन्नपणे ज्ञान थाय ते नयथी थाय. माटे समकितरुचि जीवने नयसहित ज्ञान करवुं जे एटला धर्म सर्वद्रव्य मध्ये रह्या छे माटे प्रथमतो श्रीगुरुकृपाथी द्रव्यगुणपर्याय

ओलखावे छे. ए पीठिका कही. हवे मूलसूत्रना अर्थनुं व्याख्यान करे छे.

श्रीवर्द्धमानमानम्य, स्वपरानुग्रहाय च ॥
क्रियते तत्त्वबोधार्थं, पदार्थानुगमो मया ॥१॥

अर्थ ॥ श्रीके०गुणनी शोभा अतिशय शोभायें विराजमान एहवा श्रीवर्द्धमान अरिहंत शासनना नायक ते प्रते अत्यन्तपणे नमीने-नमस्कार करीने पोतानो मान मूकी त्रण योग समावी गुणीने अनुयायी चेतनानुं करवुं तेने नमवुं कहियें ते पण स्वके०पोताने अने पर जे शिष्य अथवा श्रोतादिकने अनुग्रहके० उपकारने सारु तत्त्वके० यथार्थ वस्तुधर्म तेने बोधके० जाणवाने अर्थे पदार्थके० धर्मास्तिकायादिक छ मूलद्रव्य तेनो अनुगमके० साचो मरुपवो ते क्रियते के० करियें छय.

जगत्मां मतान्तरीओ द्रव्यने अनेकपणे कहे छे, तिहां नैयायिक सोल पदार्थ कहे छे. वैशेषिक सात पदार्थ कहे छे. वेदांति, सांख्य एक पदार्थ कहे छे मीमांसक पांच पदार्थ कहे छे. पण ते सर्व मिथ्या छे. तेणे पदार्थनुं स्वरूप जाण्युं नथी अने श्रीअरिहत सर्वज्ञ प्रत्यक्षज्ञानी ते एक जीव अने पांच अजीव ए रीते छ पदार्थ कहे छे. इहा कोइ पूछे जे नवतत्त्वरूप नव पदार्थ कह्या छे ते केम ? तेने उत्तर जे एक जीव, बीजो अजीव, ए बे पदार्थ तो मूल छे अने शेष सात तत्त्व तो जीव अजीवनो साधक बाधक शुद्ध अशुद्ध परिणतिनी अवस्था भिन्न ओलखवाने कह्या छे.

श्लोक॥ द्रव्याणां च गुणानां च, पर्यायाणां च लक्षणं॥
निक्षेपनयसंयुक्तं, तत्त्वभेदैरलङ्कृतम् ॥
तत्र तत्त्वभेदपर्यायैर्व्याख्यातस्य-
जीवादेर्वस्तुनो भावः स्वरुपतत्त्वम्

अर्थ ॥ द्रव्यना, गुणना तथा पर्यायना लक्षण जे ओलखाण ते निक्षेपे करी तथा नयें करी युक्त तत्त्वना भेद सहित कहुं छुं. तत्र के० तिहां जिनागमने विषे तत्त्व जे वस्तुस्वरूप, भेद तेना जूदा जूदा भेदपर्याय तेमां रह्या जे धर्म एटला प्रकारे व्याख्या के० अर्थनुं कहेवुं तेणे करीने यथार्थ व्याख्यान थाय, तिहां तत्त्वनुं लक्षण कहे छे. व्याख्यान करवा योग्य जे जीवादिक वस्तु तेनो मूल धर्म ते वस्तुनुं स्वरूप तत्त्व कहियें. जेम कंचननुं स्वरूप पीत गुरु स्निग्धतादि तथा एनुं कार्य आभरणादिक अने एहनुं फल ते एहथी अनेक भोग्यवस्तु आवे, एम जीवनुं स्वरूप ज्ञान दर्शन चारित्रादि अनन्त गुण, तथा जीवनुं कार्य सर्वभावनुं जाणवुं प्रमुख. ए रीते अभेदपणे रह्या जे धर्म ते सर्व वस्तुनुं तत्त्व कहिये.

येन सर्वत्राविरोधेन यथार्थतया व्यापव्यापकभावेन लक्ष्यते वस्तुस्वरुपं तल्लक्षणं तत्र द्रव्यभेदा यथा जीवा अनंताः कार्यभेदेन भावभेदा भवन्ति क्षेत्रकाल भावभेदानामेकसमुदायित्वं द्रव्यत्वम्

अर्थ ॥ हवे लक्षण कहे छे. जे गुणे करी सर्वद्रव्य स्वजातिमां अविरोधिपणे यथार्थपणे १ अतिव्याप्ति २ अव्याप्ति असंभवादि दोषरहित वस्तु जे व्याप्य तेहने विषे व्यापकपणे ळखिये जाणिये तेने वस्तुनुं लक्षण कहिये. ते लक्षण बे प्रकारनुं छे एक लिंगबाह्य आकाररूप अने बीजुं वस्तुमां रह्यो जे स्वरूप ते. ए बे भेद छे. तेमा लिंगथी तो गायनुं लक्षण जे सास्नासहितपणो ते बाह्य आकाररूप लक्षण छे. ए बाह्य लक्षणे जे ओलखाण करे ते बालचाल छे अने जे वस्तुने धर्मे ओलखाय ते स्वरूपलक्षण कहिये. जेम चेतनालक्षण ते जीव, तथा चेतनारहित ते अजीव, इत्यादिक लक्षणे लक्षणस्वरूप जाणवो एम अनेक रीते जाणी लेवो, भेदाश्च–हवे भेदनुं स्वरूप कहे छे. वक्तव्यवस्त्वशः के० जे वस्तु कथन करता होय तेहना चार भेद छे. तत्र द्रव्यभेदाके० तिहा द्रव्यना भेद मूल लक्षणे सरिखा पण पिंडपणे जूदा छे ते द्रव्यथी भेद कहिये. यथाके० जेम सर्वजीव जीवत्वसामान्ये सरिखा छे, पण जीव जीव प्रते पोताना गुणपर्यायनो पिंडपणो जूदो छे. कोइनु कोइमा मिलि जातो नथी. ते माटे जीव अनंता द्रव्यभिन्नपणे, तेमज अजीव अनंता द्रव्यभिन्नपणे, एम पुद्गलपरमाणु पण जडतारूपपणे सरिखा पण सर्व परमाणुओ जूदा द्रव्य छे. जे काळे पुछीये ते काळे एटलाने एटला छे कोइ काळे घटे नही, तेम नवो वधे नहीं. ए सर्व द्रव्यथी भेद जाणवो

हवे क्षेत्राश –क्षेत्रथी भेद ते जे विस्तरे तो जूदो क्षेत्र अवगाहीने रहे, जेम जीवादि द्रव्यना प्रदेश अवगाहनाधर्मे जूदा छे पण द्रव्यथी जूदा पडे नही, सलग्नपणे रहे. गुणपर्याय सर्वप्रदेशे अनता छे ते गुणपर्याय एक प्रदेश मूकी बीजा प्रदेशमा जाय नही, पर्यायविभाग एकनो अने प्रदेशनो अवगाह

सरिखा छे पण ते पर्याय अनंता भिन्न छे, अने जे अनंतापर्याय मलीने एक कार्य करे ते कार्यने गुण कहे छे. श्रीवीतराग सर्वज्ञ एम कहे छे ए क्षेत्रथी भेद छे.

एकवस्तुमां उत्पादव्ययरूप पर्याय पलटवानुं मान ते समय कहियें. जेटलो उत्पाद व्यय तथा अगुरुलघुनी हानिवृद्धिने परिणमतानुं मान ते समय कहियें. अने तेथी वीजी परिणमनता थइ ते वीजो समय, एम जे अनंति अतीतप्रवृत्ति थइ ते वर्त्तमानप्रवृत्तिनी परंपरारूप जाणवी. अने आगामिक थाशे ते कार्यरूपे योग्यतारूप जाणवी. अतीतकालनो तथा अनागत कालनो कोइ ढिगलो नथी, अने पिंडरूप पंचास्तिकायनु वर्तना रूप जे परिणमन तेनुं मान ते काल कहियें. तेने समयभेद ते त्रीजो कालरूप भेद कहिये. ते जे पर्याय भिन्न भिन्न कार्य करे ते कार्यभेदे भिन्नपणो छे, ते माटे चोथो भावथी भेद कहियें. हवे द्रव्यनुं लक्षण कहे छे. ते क्षेत्र काल अने भावना जे भेद ते सर्वनुं एकठा मिलिने पिंडपणे एकाधारपणे समुदायीपणे रहेवुं ते द्रव्य कहियें.

तत्रैकस्मिन् द्रव्ये प्रतिप्रदेशे स्वस्वएककार्यकरण-सामर्थ्यरूपा अनन्ता अविभागरूपपर्यायास्तेषां समुदायो गुणः ॥ भिन्न कार्यकरणे सामर्थ्यरूपा भिन्नगुणस्य पर्यायाः एवं गुणा अप्यनन्ताः प्रतिगुणं प्रतिदेशं पर्याया अविभागरूपाः अनन्तास्तुल्याः प्राय इति ते चास्तिरुपाः प्रतिवस्तुन्यनन्तास्ततोऽ-नन्तगुणाः सामर्थ्यपर्यायाः

अर्थ ॥ हवे गुणनुं लक्षण कहे छे तिहां गुणनामाश्रयो-द्रव्यमिति वचनात्, एकद्रव्यने विषे स्वस्वके० पोतपोतानो एक जाणवा प्रमुख कार्य करवानुं जेने सामर्थ्य छे एवा अनंता सूक्ष्म जेनो अविभागके० बीजो छेद न थाय एवा विभागनो जे समुदाय तेने गुण कहियें. जेम एक दोरडो सो तातणानो कर्यो ते सो तातणा तो अविभागपणे छता पर्याय छे, ते दोरडाथी अनेक कार्य थाय, अनेक वस्तु बंधाय, अने अनेकने आधार थाय अनेक वेष्टण थाय तेने सामर्थ्य पर्याय कहियें. छतिरूप जे पर्याय ते तो वस्तुरूप छे अने सामर्थ्यपर्याय तो प्रवर्त्तनरूप–कार्यरूप छे, ते छतिपर्यायनो समुदाय तेने गुण कहियें. छतिपर्यायना अविभाग ते योगस्थान समयस्थानमां कह्योज छे अने भिन्नके० जुदो कार्य करवानुं जेमा सामर्थ्य होय एवा अविभागरूप आत्मप्रदेशे वर्तता पर्याय ते भिन्नके० जुदा गुणना पर्याय जाणवा. जेम जे अविभाग परिणामालंबनरूप कार्य सामर्थ्यरूप तेनो समुदाय ते वीर्यगुण. एमज जाणवारूप सामर्थ्य छे जेमां, एहवा जे अविभागपर्याय छे तेनो समुदाय ते ज्ञानगुण. तेवा गुण एकद्रव्यने विषे अनंता छे. ते एकगुणना प्रदेशें प्रदेशें पर्याय अविभागरूप अनंता छे, अने सर्व प्रदेशे सरिखा छे, तथा पंचास्तिकाय मध्ये एक अगुरुलघु पर्यायनो भेद तरतम छे, तथा पुद्गलपरमाणुमध्ये कालभेदे अथवा द्रव्यभेदें वर्णादिकना पर्यायनो तरतमयोग ते थोडा घणापणो छे, ते पर्यायअस्तिरूप छे, सदा छता छे, कोइ पर्याय द्रव्यांतरमा जातो नथी, प्रदेशांतरमा पण जातो नथी, ते छतिपर्यायथी सामर्थ्यपर्याय अनंतगुणा जाणवा. ते कार्यरूप छे तथा च महाभाष्ये–यावन्तो ज्ञेया स्तावन्त एव ज्ञानपर्यायाः

ते च अस्तिरूपाः प्रतिवस्तुनि अनन्तास्ततोप्यनन्तगुणाः सामर्थ्यपर्यायाः

तत्र द्रव्यलक्षणं–उत्पादव्ययध्रुवयुक्तं सल्लक्षणं द्रव्यं ए तद् द्रव्यास्तिकपर्यास्तिकाभयनयापेक्षया लक्षणं ॥ गुणपर्यावद् द्रव्यं एतत् पर्यायनयापेक्षया अर्थक्रियाकारि द्रव्यं एतल्लक्षणं स्वस्वशक्तिधर्मापेक्षया । धर्मास्तिकाय–अधर्मास्तिकाय–आकाशास्तिकाय–पुद्गलास्तिकाय–जीवास्तिकाय–कालश्चेति

अर्थ ॥ हवे वली द्रव्यनु मुख्यलक्षण कहे छे, उत्पाद के० नवा पर्यायनुं उपजवुं व्यय के० पूर्व पर्यायनुं विणसवुं अने ध्रुव के० नित्यपणो ए तीन परिणमनपणे सर्वदा जे परिणमे तेने द्रव्य कहिये. एटले तेहिज गुण कारणकार्य ने धर्मे समकाले परिणमे छे, कारण विना कार्य थाय ज नहीं अने कार्य करे नहीं ते कारण पण समजवुं नहीं, जे उपादानकारण तेहिज कार्य थाय छे. ते कारणतानो व्यय अने कार्यतानुं उपजवुं समकाले थाय छे, वली कारणपणो पण समयेंसमयें नवो नवो छे अने कार्यपणो पण समयें समयें नवो नवो छे ते माटे कारणपणानो पण उत्पाद व्यय छे, अने कार्यपणानो पण उत्पाद व्यय छे, अने गुणपिंडपणे द्रव्याधारपणे ध्रुव छे. एवी परिणतिये परिणमे ते सत् के० छतिवन्त द्रव्य जाणवो. एटले ए लक्षण ते द्रव्यास्तिकनय तथा पर्यायास्तिकनय ए बे भेला लइने कर्यो छे, जे

ध्रुवपणो ते द्रव्यास्तिकधर्म ग्रह्यो छे अने उत्पादव्यय ते पर्याया-स्तिकधर्म ग्रह्यो छे. ते माटे ए लक्षण संपूर्ण छे, ए तत्त्वार्थकारकनु वाक्य छे

तथा वली बीजुं लक्षण तत्त्वार्थमां ज कह्युं छे. एक द्रव्यमा वधामां स्वकार्यगुणे वर्त्तमान ते गुण अने पर्याय ते गुणनु कारणभूत द्रव्यनुं भिन्न भिन्न कार्यपणे परिणमे द्रव्यगुण ए बेहुने स्वाश्रयीपणे परिणमन ते बे छे जेमा ते द्रव्य कहियें. एटले गुण तथा पर्यायवंत ते द्रव्य कहियें. ते द्रव्य एकना बे खंड थायज नही, ए मूल द्रव्यनु लक्षण छे अने जे घणा परमाणुना खंधने द्रव्य मान्यो छे ते उपचारें जाणवो. जेनी परिणति त्रण कालमध्ये ते रूपने तजे नही ते द्रव्य पोतानी मूल जात त्यजे नही. जेने अगुरुलघुनुं षड्गुण हानिवृद्धिरूप लक्षण चक्र एकठो फिरे ते एक द्रव्य, अने जेने जूदो फिरे ते भिन्न द्रव्य कहियें. एटले धर्म, अधर्म, आकाश ए एक द्रव्य छे, अने जीव असंख्यातप्रदेशरूप एक अखंड द्रव्य छे. एवा जाव सर्वलोकमध्ये अनता छे ते जीव सिद्धमां वधे छे अने संसारीपणामां ओछा थाय छे, पण सर्व संख्यामा घटता वधता नथी. तथा पुद्गल परमाणु एक आकाश प्रदेश प्रमाण एक द्रव्य छे. तेवा परमाणु सर्व जीवथी तथा सर्व जीवना प्रदेशथी पण अनंतगुणा द्रव्य छे. स्कंधपणे अथवा छुटा परमाणुपणे वधे तथा घटी जाय पण परमाणुपुद्गलपणे जे संख्या छे तेमां वधता घटता नथी ए निश्चयनयथी लक्षण कह्युं.

हवे व्यवहार नयथी लक्षण कहे छे.

अर्थः—जे द्रव्य तेनी जे क्रियाके० प्रवृत्ति तेने करें ते द्रव्य कहियें. तेमां जीवनी शुद्ध क्रिया ते ज्ञानादिक गुणनी

प्रवृत्ति जेम सकल ज्ञेय जाणवा माटे ज्ञानविभागनी प्रवृत्ति. एम सर्व गुणनुं जे कार्य जेम ज्ञानगुणनुं कार्य विशेष धर्मनुं जाणवुं. तथा दर्शनगुणनुं कार्य सकलसामान्यस्वभावनो बोध, अने चारित्रगुणनुं कार्य ते स्वरूपनुं रमवुं इत्यादि. अने धर्मास्तिकायनुं कार्य गतिगुणे परिणम्या जे जीव तथा पुद्गल तेने चालवाने सहकारी थाय. एम सर्व द्रव्यनी समजण जोड़ लेवी. ए लक्षण सर्व द्रव्यना जे गुण छे ते सर्वना स्वकार्यानुयायी प्रवृत्ति तेने अर्थक्रिया कहेवी. हवे ते छ द्रव्य छे १ धर्मास्तिकाय, २ अधर्मास्तिकाय, ३ आकाशास्तिकाय, ४ पुद्गलास्तिकाय, ५ जीवास्तिकाय, ६ काल. ए छ द्रव्य जाणवा. एथी वधारे पदार्थ कोइ नथी. जे नैयायिकादिक सोल पदार्थ कहे छे ते मृषा छे, कारणके ते प्रमाणने भिन्नपदार्थ कहे छे ते तो ज्ञान छे, ते आत्मामां प्रमेयनो गुण छे ते गुणो जे आत्मा ते मध्ये रह्यो छे तेने भिन्न पदार्थ केम कहियें ? बीजा प्रयोजन सिद्धान्तादिक ते सर्व जीव द्रव्यनी प्रवृत्ति छे ते माटे भिन्नपदार्थ कहेवाय नहो.

तथा वैशेषिक १ द्रव्य, २ गुण, ३ कर्म, ४ सामान्य, ५ विशेष, ६ समवाय, ७ अभाव ए सात पदार्थ कहे छे. पण तेने कहियें जे गुण ते तो द्रव्यमांज रह्या छे तो तेने भिन्नपदार्थ करी कहेवुं ते केम घटे ! अने कर्म ते द्रव्यनुं कार्य छे तथा सामान्य अने विशेष ए बे तो द्रव्य मध्ये परिणमन छे वली समवाय ते कारणतारूप द्रव्यनुं प्रवर्त्तन छे अने अभाव तो अछताने कहेवाय ते अछताने पदार्थ कहेवुं घटतुं नथी ते माटे वैशेषिकमत पण मृषा छे, ते मध्ये द्रव्य नव कहे छे. १ पृथ्वी, २ अप, ३ तेज, ४ वायु, ५ आकाश, ६ काल, ७ दिक्, ८ आत्मा, ९ मन. ए नव पदार्थ कहे छे, तेने उत्तर जे पृथ्वी

आप तेज वायु ए तो आत्मा छे पण कर्मयोगें शरीर भेदें नाम पड्या छे, अने दिशी तो आकाशमांज मिली गइ छे, तथा मन ते आत्माने समारीपणाना उपयोग प्रवर्त्तनानो द्वार छे तेने भिन्न द्रव्य केम कहियें.

वली वेदांतिसारत्य ते एक आत्मा अद्वैतपणे एकज द्रव्य माने छे तेनी पण भूल छे, केमके जे शरीर छे ते तो रूपी छे अने पुद्गल द्रव्यनां खध छे ते केम एक थाय तथा आत्मा अने शरीरनो आधार ते आकाश छे ते सर्व प्रसिद्ध छे ते जूदो मान्या विना केम चाले ? ते माटे अद्वैतपणो रह्यो नही.

अने बौद्धदर्शन ते समयसमय नवानवापणे १ आकाश, २ काल, ३ जीव, ४ पुद्गल. ए चार द्रव्य माने छे. तेने पुछीयें जे जीव, पुद्गल एकज क्षेत्रें केम रहेता नथी ते तो चलादि भाव पामे छे माटे तेना अपेक्षाकारणरूप १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ए बे द्रव्य पण मानवा जोइये. तथा केटलाक संसारस्थितिनो कर्त्ता एक परमेश्वरने माने छे, ते पण मृषा छे. जे निर्मल रागद्वेषरहित एवो परमेश्वर ते परना सुख दुःखनो कर्त्ता केम थाय. वली कोइक इच्छा वलगाडे छे, ते तो अधुराने छे, पूराने केम होय ? तथा केटलाक परमेश्वरनी लीला कहे छे ते लीला तो अजाण अधूरो तथा जेने पोतानो आनंद पोता पासे न होय ते करे, पण जे संपूर्ण चिदानदघन तेने लीला होय ज नही. धर्माधर्मों विना नाग, विनागेन सुख कुतः ॥ सुखं विना न वक्तृत्व तच्छास्तारः पर कथं ॥१॥ अने मीमासादिक पाच भूत कहे छे. तेमा पण चार भूत तो जीवपुद्गलना संबधे उपना छे, अने आकाश ते लोकालोक भिन्न द्रव्य छे.

तत्र पञ्चानां प्रदेशपिंडत्वात् अस्तिकायत्वं। कालस्य प्रदेशाभावात् अस्तिकायता नास्ति, तत्र काल उपचारत एव द्रव्यं न वस्तुवृत्त्या ॥

ए रीते असत्य प्ररूपणानुं निराकरण करी आगमनी साखे कार्यादिकने अनुमाने द्रव्य छ ठरे छे, माटे तेहिज मानवा. तेमां पांच द्रव्य सप्रदेशी छे, ते प्रदेशना पिंडपणा माटे अस्तिकायपणो पांच द्रव्यने छे. अने छठ्ठो कालद्रव्य तेने प्रदेश नथी ते माटे अस्तिकायता नथी तिहां कालते मुख्यवृत्तियें द्रव्य नथी, उपचारथी द्रव्य कहेवाय छे. जेम वस्तुगते धर्मास्तिकायादिक द्रव्य छे तेम काल द्रव्य नथी. जो ए कालने पिंडरूप द्रव्य मानियें तो एनो मान किहां छे? जो मनुष्यक्षेत्रमां काल द्रव्य मानियें तो वाहिरना क्षेत्रमां नवापुराणादिक तथा उत्पाद व्यय कोण करे छे? अने जो चौदराजलोकमां व्यापी मानीयें, तो असंख्यात प्रदेश मानवा जोइयें; अने प्रदेश मानवे करी अस्तिकाय थाय, अने जो रेणुंक असंख्याता मानियें, तो लोकप्रदेश प्रमाण रेणुक थाय ते वारें असंख्याता काल द्रव्य थाय. ते तो अनंत द्रव्य मान्यो छे माटे ए कालने पंचास्तिकायना वर्त्तनारूप पर्यायने आरोपे द्रव्य मानियें. केमके अस्तिकायता नथी. अने सर्वमां वर्त्तना करे ए पक्ष सत्य छे. जे आगमने विषे ठाणांगसूत्रना आलावामां छे. "किं भंते अद्धासमयेतिवुच्चत्ति? गोयमा जीवा चेव अजीवा चेव" एटले काल ते जीव तथा अजीवनो वर्त्तमानपर्याय छे, तेना उत्पाद व्ययरूप वर्त्तनाने काल कह्यो छे, ते कालने अजीव द्रव्यमां गण्यो तेनो आशय ए छे जे जीव वर्त्तनाथी अजीववर्त्तना अनंतगुणी छे ते बहुलता माटे कालने

अजीव गवेष्यो छे केमके कालनी वर्त्तना अजीव उपर अनंति छे अने जीव उपर तेथी थोडी छे माटे.

तथा विशेषावश्यकभाष्यमध्ये "न पश्यति क्षेत्रकालावसौ तयोरमूर्त्तत्वात्, अवधेश्च मूर्त्तिविषयत्वात्, वर्त्तनारूप तु काल पश्यति द्रव्यपर्यायत्वात्तस्येति" तथा बावीसहजारीमध्ये "तथा कालस्य वर्त्तनादिरूपत्वात् पर्यायत्वात्, द्रव्योपक्रमः उपचारात्" तथा भगवत्यगे १३ तेरमा शतक मध्ये इहा पुद्गलवर्त्तनानी अपेक्षायें कालने रूपी गवेष्यो छे.

तत्र गतिपरिणतानां जीवपुद्गलानां गत्युपष्टंभहेतुर्धर्मास्तिकायः स चासख्येयप्रदेशलोकप्रदेशपरिमाण. ।

अर्थः—हवे पंचास्तिकायनुं भिन्न भिन्न लक्षण कहे छे. जे गति परिणामीपणे परिणम्या जीव तथा पुद्गल तेने गतिना आठभानो हेतु ते धर्मास्तिकाय द्रव्य कहियें ते धर्मास्तिकाय असंख्याता प्रदेश परिमाण छे. लोकमा व्यापी छे, लोकमान छे, लोकना एक एक प्रदेशे धर्मास्तिकायनो एक एक प्रदेश ते अनत समीपणे छे. ए धर्मादि त्रण द्रव्य अचल, अवस्थित, अक्रिय छे.

स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थिरयुपष्टंभहेतुः अधर्मास्तिकाय,स चासख्येयप्रदेशलोकपरिमाणः।

अर्थ.—स्थितिपणे परिणम्या जे जीव तथा पुद्गल तेने स्थितिना आठभानो हेतु ते अधर्मास्तिकाय द्रव्य कहियें. ते पण लोक परिमाण असख्य प्रदेशी छे.

सर्वद्रव्याणां आधारभुतः अवगाहकस्वभावानां जीवपुद्गलानां अवगाहोपष्टंभकः आकाशास्तिकायः, स चानन्तप्रदेशः लोकालोकपरिमाणः। यत्र जीवादयो वर्तन्ते स लोकः असंख्यप्रदेशप्रमाणः ततः परमलोकः केवलाकाशप्रदेशव्युहरूपः स चानन्तप्रदेशप्रमाणः।

अर्थः—सर्व द्रव्यने आधारभूत अवगाह स्वभावी जे जीव तथा पुद्गलने अवगाहनानो ओठंभानो हेतु ते आकाशास्तिकाय द्रव्य कहियें. तेना प्रदेश अनंता छे. लोक तथा अलोक रूप छे, तेमां जे क्षेत्रें जीव तथा पुद्गल तथा धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय छे ते क्षेत्रने लोक कहियें, अने केवल एक लोक मात्र आकाशज जिहां छे तेने अलोक कहियें, एटले जे लोक ते जीवादि द्रव्य सहित अने जीवादिक द्रव्य जिहां नथी तेने अलोक कहियें. ते अलोकना प्रदेश अनंता छे, अवगाहक धर्मे सर्व द्रव्य एमां समाय छे.

कारणमेव तदन्त्यं सूक्ष्मो नित्यश्च भवति परमाणुः॥ एकरसवर्णगन्धो द्विस्पर्शः कार्यलिंगीच॥ पूरणगलनस्वभावः पुद्गलास्तिकायः स च परमाणुरूपः। ते च लोके अनंताः एकरूपाः परमाणवः अनन्ताः व्द्यणुका अप्यनन्ताः त्र्यणुका अप्यनन्ताः एवं संख्याताणुका स्कंधा अप्यन-

न्ताः असख्याताणुकस्कधा अप्यनन्ताः एकैकस्मिन् आकाशप्रदेशे एव सर्वलोकेऽपि ज्ञेय एव चत्वारोऽस्तिकायाः अचेतनाः ।

अर्थ'—हवे पुद्गल द्रव्यनुं स्वरुप लखियें छेयें. जे पूरण के० पूराये, वर्णादिगुणे वधे, गली जाय, खरि जाय, वर्णादि गुण घटि जाय एवो जेमां स्वभाव छे ते पुद्गलास्तिकाय कहियें. ते मूल द्रव्य परमाणुरुप छे ते परमाणुनु लक्षण कहे छे. द्वयणुकादिक जेटला स्कंध छे ते सर्वनु अत्यत के० मूल कारण परमाणु छे एटले सर्व स्कंधनुं परमाणु कारण छे पण ए परमाणुनुं कारण कोइ नथी, कोइनु नीपजाव्यो थयो नथी अने कोइने मिलवे पण थयो नथी. सूक्ष्म छे. एक आकाशप्रदेशनी अवगाहना तुल्य एक परमाणु छे तो पण ते एक आकाश प्रदेशमा अनंत परमाणु समाय छे पण परमाणु मध्ये बीजुं द्रव्य कोइ समाय नही माटे परमाणु द्रव्य सूक्ष्म छे अने नित्य छे. जेटलुं परमाणु द्रव्य छे ते खधादिक अनेकपणे परिणमे, पण परमाणु द्रव्य कोइ विणसी जाय नही एवु परमाणु द्रव्य छे. ते एक परमाणुमा एक रस होय, एक वर्ण होय, एक गध होय अने लुखो, चिकणो, टाढो, उन्हो, ए चार स्पर्श माहेला गमे ते बे फरस होय, एवु एक परमाणु द्रव्य छे. इहां कोइ पुछे जे ते परमाणु देखातो नथी तो केवी रीते मनाय? तेने उत्तर जे घटपट शरीरादिक कार्य देखाय छे, ग्रहणाय छे, ते रुपी छे तो एहना सबधनुं कारण परमाणु सूक्ष्म छे माटे इंद्रियज्ञाने ग्रहेवानो नथी, परतु रुपी छे केमके अरुपीथी रुपी कार्य थाय नही ते माटेज परमाणु रुपी छे. तेथी ए स्कंध पण रुपी थया छे. अने

आकाश प्रदेश अरूपी छे तो तेनो अनंत प्रदेशी स्कंध पण अरू-पी छे एम धारवुं. ते परमाणुना द्व्यणुकादिक स्कंध अनंता छे, तथा छुटा परमाणु ते पण अनंता छे ते वली खंधमां मिले छे तो वीजा खंधमांहेथी छुटा थाय छे एम खंध विखरी जाय ने परमाणु थाय तेनी वर्गणा अठ्यावीस प्रकारनी छे. ते अठ्या वीस भेद कम्मपयडीथी जाणवा. एम एकला परमाणु ते पण अनंता, तथा वे मिलीने खंध पाम्या तेवा खंध पण अनंता, ए-मज संख्याताणुकना खंध पण अनंता, तेमज असंख्यात परमाणु मिलि खंध थाय ते पण अनंता, तथा अनंत परमाणु मल्या खंध थाय तेवा खंध पण अनंता, ते ए जातिना खंध ते एक आकाश प्रदेश अवगाहे. आकाशांश अवगाहे एम असंख्याता प्रदेश अ-वगाहे छे पण एक वर्गणानी अवगाहना अंगुलने असंख्यातमें भागे अवगाहे, वधति अवगाहे नही, अने अनंति वर्गणा मिले अंगुल, हाथ, गाउ, योजनादिकने माने अवगाहना थाय, एम ए १ धर्मास्तिकाय २ अधर्मास्तिकाय ३ आकाशास्तिकाय ४ पुद्ग-लास्तिकाय ए चारे द्रव्य अचेतन छे, अजीव छे, जाणपणा रहित छे.

चेतनालक्षणो जीवः, चेतना च ज्ञानदर्शनो-पयोगी अनन्तपर्याय परिणामिककर्तृत्वभोक्तृत्वा-दिलक्षणो जीवास्तिकायः ।

अर्थ ॥ हवे जीव द्रव्यनुं स्वरूप कहे छे. चेतना जे वोध शक्ति छे लक्षण जेनुं ते जीव कहियें. जे पोताना परिणमन तथा पर-नी परिणमन सर्वने जाणे ते जीव. तथा सर्व द्रव्य ते अनंता

सामान्य स्वभाव अने अनंता विशेष स्वभावरत छे. तेमां सर्व द्रव्यना अनंता विशेष धर्मनुं अववोधक ते ज्ञानगुण कहिये, तथा सामान्य विशेष स्वभाववंतवस्तुने विषे जे सामान्य स्वभावनुं अववोधक ते दर्शन गुण कहिये. ते ज्ञानदर्शनोपयोगी जे अनंतपर्याय तेनो परिणामी कर्त्ता भोक्तादिक अनंति शक्तिनुं पात्र ते जीव जाणवो. उक्तं च "नाणं च दसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा ॥ वीरिय उवओगोअ, एव जीवस्स लक्खणं ॥१॥

चेतना लक्षण ज्ञानदर्शन चारित्र सुखवीर्यादिक अनत गुणनुं पात्र, स्वस्वरूपभोगी, तथा अनवच्छिन्न जे स्वावस्था प्रगटी तेनो भोक्ता अनता स्वगुणनी जे स्वस्वकार्यशक्ति तेनो कर्त्ता, भोक्ता, परभावनो अकर्त्ता, अभोक्ता, स्वक्षेत्रव्यापी अनति आत्मसत्तानो ग्राहक, व्यापक, रमण करनारो, तेने जीव जाणवो.

पञ्चास्तिकायानां परत्वापरत्वे नवपुराणादिलिङ्गव्यक्तवृत्तिवर्त्तनारूपपर्यायः कालः, अस्य चाप्रदेशिकत्वेन अस्तिकायत्वाभावः। पञ्चास्तिकायान्तर्भूतपर्यायरूपतैवास्य एते पञ्चास्तिकाया । तत्र धर्माधर्मौ लोकप्रमाणासख्येयप्रदेशिकौ, लोकप्रमाणप्रदेश एव एकजीवः। एते जीवा अप्यनन्ताः, आकाशो हि अनन्तप्रदेशप्रमाण, पुद्गलपरमाणुः स्वयं एकोऽप्यनेकप्रदेशवधहेतुभुतद्रव्ययुक्तत्वात् अस्तिकाय, कालस्य उपचारेण भिन्नद्रव्यता उक्ता सा च व्यवहारनयापेक्षया आदित्यगतिपरिच्छेदपरिमा-

णः कालः समयक्षेत्रे एव एप व्यवहारकालः समयावलिकादिरूप इति ॥

अर्थ ॥ हवे काल द्रव्यनुं लक्षण कहे छे. जे पंचास्तिकायने परत्वे अपरत्वे ए लिंगे तथा पुद्गल खंधने नव पुराणपणे व्यक्त के० प्रगट छे वृत्ति के० प्रवृत्ति तेने वर्तना कहियें ते वर्त्तनारूप पर्याय तेने काल कहियें. एने प्रदेश नथी ते माटे अस्तिकायपणो नथी. ए काल ते पंचास्तिकायने विषे अंतर्भूतपर्याय परिणमन छे, जाते धर्मास्तिकायादिकनो पर्याय छे एम तत्त्वार्थवृत्तिने विषे कह्यो छे. तिहां धर्मास्तिकाय एक द्रव्य छे, असंख्यात प्रदेशी छे. लोकाकाशना प्रदेश प्रमाण छे. एम अधर्मास्तिकाय पण एक द्रव्य छे. लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेशी छे. अनेक जीव द्रव्य ते पण लोकप्रमाण असंख्यात प्रदेशो छे पण स्व अवगाहना प्रमाण व्यापक छे ते जीव द्रव्य अनंता छे. अकृत सदा छता अखंड द्रव्य छे. सत्‌चिदानंदमयी छे. पण परपरिणामी थवे पुद्गलग्राहक, पुद्गलभोगी थवे प्रतिसमये नवा कर्म बांधवे संसारी थया छे. तेहिज जे वारे स्वरूप ग्राहक, स्वरूप भोगी, थाय तेवारे सर्व कर्म रहित थइ परम ज्ञानमयी, परम दर्शनमयी, परमानंदमयी, सिद्ध, बुद्ध, अनाहारी, अशरीरी, अयोगी, अलेशी, अनाकारी, एकांतिक, आत्यंतिक, निःप्रयासी, अविनाशी, स्वरूप सुखनो भोगी, शुद्ध सिद्ध थाय ते माटे अहो चेतन !!! ए पर भाव अभोग्य सर्व जगत्‌ना जीवनी एठ तेनो भोगववापणो तजी स्वभाव भोगीपणानो रसीयो थइ स्वस्वरूप निर्धार, स्वरूप भासन, स्वरूप रमणी, थइ पोताना आनंदने प्रगट करीने निर्मल थावुं.

तथा आकाश द्रव्य ते लोकालोक मिलि एक द्रव्य छे, अ-

नत प्रदेशी छे। अने पुद्गल द्रव्य ते परमाणु रूप छे केमके परमाणु अनंता छे माटे अनता द्रव्य छे. इहा काइ पुछे जे प्रदेशना संबंध विना परमाणु द्रव्यने अस्तिकाय किम कह्यो छे? तेने उत्तर जे परमाणु तो एक प्रदेशी छे पण अनंता परमाणुथी मिल्वाना जे कारण ते आ द्रव्य तेणे युक्त छे, ते योग्यता माटे अस्तिकाय कह्यो छे. तथा काल द्रव्यने उपचारें भिन्न द्रव्यपणो कह्यो छे ते व्यवहारनयनी अपेक्षायें. जे मनुष्य क्षेत्रने विषे सूर्यनी गतिने परिज्ञाने एटले समयावलिकादिरूपपरिमाणे जे मान तेने व्यवहारथी काल कहियें इति. ए काल मुख्य वृत्तिये तो समय क्षेत्र मध्ये छे अने मनुष्य क्षेत्रथी बाहेर जे जीवो छे तेना आयुष्य पण एज क्षेत्र प्रमाणे सर्वज्ञ देवें कह्या छे तथा सूर्यनो चार ते पण जीव पुद्गलनुं प्रवर्त्तन छे कारण के सूर्य ते पण जीव तथा पुद्गल छे, एटले ए काल द्रव्य ते कालपणे भिन्न पिंडपणे ठेर्यो नही, उपचारेंज ठेर्यो एम मानवो.

इहां कोइ कहे जे एक एक द्रव्यने विषे अनेक अनेक पर्याय छे ते कोइ पर्यायने द्रव्यपणो न कह्यो अने एक वर्त्तना पर्यायने विषे द्रव्यनो आरोप शा माटे कर्यो? तेने उत्तर ए वर्त्तना परिणति ते सर्व पर्यायने सहकारी छे अने सर्व द्रव्यने छे तेथी मुख्य पर्याय छे माटे एने द्रव्यनो आरोप छे ते पण अनादि चाल छे.

एते पञ्चास्तिकाया. सामान्यविशेषधर्ममया एव, तत्र सामान्यतः स्वभावलक्षण द्रव्यव्याप्यगुणपर्यायव्यापकत्वेन परिणामिलक्षण स्व भावः, तत्र एक नित्य निरवयव अक्रिय सर्वगत

च सामान्यं । नित्यानित्य निरवयवसावयव: सक्रियताहेतु: देशगत: सर्वगतं च विशेषपदार्थगुणप्रवृत्तिकारणं विशेषः । न सामान्यं विशेष रहितं न विशेषः सामान्यरहितः ॥

अर्थः—हवे ए पंचास्तिकाय ते सामान्य विशेष धर्ममयी छे. ते सामान्यनुं लक्षण विशेषावश्यकें कह्युं छे. तिहां प्रथमथी स्वभावनुं लक्षण कहे छे. जे द्रव्यने विषे व्यापतो होय तथा गुण पर्यायमां पण व्यापकपणे सदा परिणमतो थको पामियें तेने सामान्य स्वभाव कहियें. ते सामान्य स्वभाव जे होय ते एक होय तथा नित्य अविनाशी होय तथा निरवयव के० जेहने अविभाग रूप अवयव न होय अने सर्व गत के० सर्वमां व्यापकपणे होय ते सामान्य स्वभाव कहियें. जीवादि द्रव्यने विषे एकपणो ते पिंडपणे छे ते सर्व द्रव्यने विषे छे. सर्व गुण पर्याय पोताने रूपें अनेक छे, पण ते समुदाय पिंडपणुं मूकीने जूदा थायज नही ते माटे ए रीते जे परिणमन होय ते सामान्य स्वभाव कहियें. ते सामान्यना बे भेद छे. अस्तितादिक जे सर्व पदार्थने विषे छे ते महा सामान्य कहियें. एनी श्रुतज्ञाने करी प्रतीत थाय पण प्रत्यक्ष तो अवधिदर्शन केवलदर्शनेज जणाय. परोक्षे न ग्रहवाय. तथा वृक्ष, अंब, निंब, जंबु प्रमुख व्यक्ति अनेक छे. पण वृक्षत्व सर्वमां छे ए अवांतर सामान्य. ते चक्षुदर्शने तथा अचक्षुदर्शने ग्रहवाय अने अस्तित्व वस्तुत्वादि सामान्य. ते अवधिदर्शने तथा केवलदर्शने ग्रहवाय अने विशेष धर्म ते ज्ञान गुणेज ग्रहवाय. हवे विशेषनुं लक्षण कहियें छीए. कोइक धर्म नित्य, कोइक धर्म अनित्य, कोइक रीतें अवयव सहित, कोइक रीतें अवयव रहित,

अविभाग पर्यायें सावयव, सामर्थ्यें पर्यायें निरवयव, पण सक्रियता हेतु देशगत जे गुण ते गुणांतरमा व्यापता नथी. ते माटे देशगत जे गुण होय ते आखा द्रव्यमा व्यापकज होय तेने सर्वगत कहियें तो एवा जे धर्म ते सर्व विशेष जाणवा पदार्थना गुणनी प्रवृत्ति तेना जे कारण ते विशेष स्वभाव. जे कार्य करे ते गुणने पण विशेष धर्मज गणवो. जे सामान्य ते विशेष रहित नथी अने जे विशेष ते सामान्य रहित नथी.

ते मूलसामान्यस्वभावा षट् । ते चामी १ अस्तित्वं २ वस्तुत्व ३ द्रव्यत्वं ४ प्रमेयत्व ५ सत्त्व ६ अगुरुलघुत्व । तत्र १ नित्यत्वादीना उत्तरसामान्यानां परिणामिकत्वादीनां निःशेषस्वभावानामाधारभूतधर्मत्वं अस्तित्व २ गुण पर्यायाधारत्व वस्तुत्व ३ अर्थक्रियाकारित्व द्रव्यत्व, अथवा उत्पादव्यययोर्मध्ये उत्पादपर्यायाणा जनकत्वप्रसवस्याविर्भाव लक्षणव्ययीभूतपर्यायाणा तिरोभाव्यभावरूपायाः शक्तेराधारत्व द्रव्यत्वं ४ स्वपरव्यवसायिज्ञान प्रमाण, प्रमीयते अनेनेत्ति प्रमाण, तेन प्रमाणेन प्रमातुं योग्य प्रमेय ज्ञानेन ज्ञायते तद्योग्यतात्व प्रमेयत्वं ५ उत्पादव्ययध्रुवयुक्त सत्व ६ षड्गुणहानिवृद्धि स्वभावा अगुरुलघुपर्यायास्तदाधारत्व अगुरुलघु-

एवं एते षट्स्वभावाः सर्वे द्रव्येषु परिणमंति तेन सामान्यस्वभावाः

अर्थः—ते मूल सामान्यना छ भेद छे. ते सर्व द्रव्यमां व्यापकपणे छे. १ अस्तित्व, २ वस्तुत्व, ३ द्रव्यत्व, ४ प्रमेयत्व ५ सतत्व, ६ अगुरुलघुत्व. ए छ मूल स्वभाव छे ते सर्व द्रव्य मध्ये परिणामिकपणे परिणमे छे. ए धर्मने कोइनो सहाय नथी. तत्र के० तिहां १ सर्व द्रव्यने विषे उत्तर सामान्य स्वभाव नित्यत्व अनित्यत्वादिक तथा विशेष स्वभाव ते परिणामिकत्वादिक तेनो आधारभूतधर्म ते धर्मने तीर्थंकरदेव सामान्य स्वभाव अस्तित्वरूप कहे छे तथा, २ गुणपर्यायनो आधारवंत पदार्थ तेने वस्तुत्व कहियें अने, ३ अर्थ जे द्रव्य तेनी जे क्रिया, जेम धर्मास्तिकायनी चलनसहाय क्रिया, अधर्मास्तिकायनी थिरसहाय क्रिया, आकाश द्रव्यनी अवगाहरूप क्रिया, जीवनी उपयोग लक्षण क्रिया तथा पुद्गलनी मिलवा विखरवारूप क्रियानो करवापणो एटले जे पर्यायनी प्रवृत्ति ते अर्थक्रिया अने अर्थ क्रियानो आधारी धर्म तेने श्री सर्वज्ञदेवे द्रव्यत्वपणो कह्यो छे.

वली द्रव्यत्वपणानुं लक्षणांतर कहे छे. उत्पादपर्यायनी जे प्रसवशक्ति एटले आविर्भाव लक्षण जे शक्ति तेना व्ययीभूत पर्यायनो तिरोभाव थयो अथवा अभाव थवा रूप शक्तिनो जे आधारभूत धर्म तेने द्रव्यत्व कहियें.

४ स्व के० पोते आत्मा अने पर के० पुद्गलादिक धर्मास्तिकायादिक अन्य द्रव्य तेने यथार्थपणे जाणे ते ज्ञान कहियें. ते ज्ञान पांच भेदें छे. ते ज्ञानना उपयोगमां आवे एवी

जे शक्ति तेने प्रमेयत्वपणो कहिये ते प्रमेयपणो सर्व द्रव्यनु मूल धर्म छे. प्रमाणमा वसाव्यो जे वस्तु तेने प्रमेयपणो कहियें. ते सर्व गुण पर्याय प्रमेय छे अने आत्मानो ज्ञानगुण तेमां प्रमाणपणो तथा प्रमेयपणो ए बे धर्म छे. पोतानो प्रमाणपणो ते पोतेज करे छे, दर्शनगुणनो प्रमाण ज्ञानगुण करे छे, केमके दर्शनगुण ते विशेष छे जे सावयव होय ते विशेषज होय. अने जे विशेष होय ते ज्ञानथीज जणाय. दर्शनगुण ते सामान्य धर्मनो ग्राहक छे, ते पण प्रमाण कहेवाय. पण प्रमाणना भेद कह्या छे तिहां ज्ञानज ग्रह्युं छे. तेनुं कारण जे दर्शनोपयोग ते व्यक्त पडतो नथी ते माटे प्रमाण मध्ये गवेष्यो नथी. ते प्रमाणना मूल बे भेद छे. एक प्रत्यक्ष अने बीजो परोक्ष. **स्पष्ट प्रत्यक्ष परोक्षमन्यत्** इतिस्याद्वादरत्नाकरवाक्यात्.

५ उत्पाद के० उपजवो व्यय के० विणसवो ध्रुव के० नित्यपणो वस्तुना एक गुणमा एक समये ए त्रणे परिणमनें सदा परिणमे छे एवो जे परिणाम ते सत्पणो कहियें अने ते सत्पणानो भाव ते सत्वपणो कहियें.

६ तथा छट्ठो १ अनतभाग हानि, २ असंख्यातभाग हानि, ३ सख्यातभाग हानि, ४ सख्यात गुण हानि, ५ असंख्यात गुण हानि, ६ अनत गुण हानि, ए छ प्रकारनी हानि, तथा १ अनत भाग वृद्धि, २ असख्यात भाग वृद्धि, ३ सख्यात भाग वृद्धि, ४ सख्यात गुण वृद्धि, ५ असख्यात गुण वृद्धि, ६ अनंतगुण वृद्धि. ए छ वृद्धि. एम छ प्रकारनी हानि तथा छ प्रकारनी वृद्धि ते अगुरुलघु पर्यायनी सर्व द्रव्यने सर्व प्रदेशे परिणमे छे ते कोइक प्रदेशें कोइ समये अनतभाग हानिपणे परिणमे छे अने कोइक समये कोइक प्रदेशें अनंतभाग वृद्धिपणे

परिणमे छे. एवं बार प्रकारें परिणमे छे ते अगुरुलघु पर्यायनी परिणमन शक्ति ते अगुरुलघुत्वं. अगुरुलघुनो भाव जाणवो. तत्त्वार्थ टीकाने विषे पांचमा अध्यायं अलोकाकाशने अधिकारें कह्यो छे. एम छ स्वभाव सर्व द्रव्यने विषे परिणमे छे. ए छए द्रव्यना मूल स्वभाव छे. द्रव्यनो भिन्नपणो प्रदेशनो भिन्नपणो ते अगुरुलघुने भेदपणे थाय छे ते माटे ए छ मूल सामान्य स्वभाव छे. ए द्रव्यास्तिक धर्म छे अने एनूं परिणमन ते पर्यायास्तिक धर्म छे. केटलाक वादी एम कहे छे जे पर्यायनो पिंड ते द्रव्य छे. पण द्रव्यपणो भिन्न नथी. जेम धूरी, पइडा, कागमो, डागली, जूंहरी प्रमुख समुदायने गाडो कहियें पण सर्व अवयवथी भिन्न गाडापणो कोइ देखातो नथी; तेमज ज्ञानादिक गुणथी भिन्नपणे कोइ आत्मा देखातो नथी. तेने कहियें जे ज्ञानादिक गुणने विषे छति एक पिंड समुदायता सदा अवस्थितपणो अने द्रव्यथी मिली न जाय तथा स्व क्रियावंतपणो इत्यादिक सामान्य धर्म छे. छति अस्तित्व अर्थ क्रियावंत ते द्रव्यपणो एक पिंडपणो ते वस्तुत्व इत्यादिक ते सर्व द्रव्यपणो छे. एटले द्रव्यास्तिक पर्यायास्तिक ए बेहु मलीने द्रव्यपणो छे. उक्तं च संमतौ **दव्वापज्जवरहिआ न पज्जवा दव्वओवि उत्पत्ति**× ए मूल सामान्य स्वभावना छ भेद कह्या.

तत्र अस्तित्वं उत्तरसामान्यस्वभावगम्यं ते चोत्तरसामान्य स्वभावा अनन्ता अपि वक्तव्येन त्रयोदश १ अस्तिस्वभावः २ नास्तिस्वभावः ३ नित्यस्वभावः ४ अनित्यस्वभावः ५ एकस्व

× अर्थ–द्रव्य पर्यायथी रहीत न होय–पर्यायनी उत्पत्ति द्रव्यथी छे.

भावः ६ अनेकस्वभावः ७ भेदस्वभाव. ८ अभेदस्वभावः ९ भव्यस्वभावः १० अभव्यस्वभावः ११ वक्तव्यस्वभावः १२ अवक्तव्यस्वभावः १३ परम स्वभावः इत्येवरुपवस्तुसामान्यानतमयम्॥

अर्थः—तथा वली अस्तित्व उत्तर सामान्य स्वभाव कहे छे ते उत्तर सामान्य स्वभाव वस्तु मध्ये अनता छे. पण तेर सामान्य स्वभाव अनेकातजयपताकादि ग्रथे वखाण्या छे, तेमाथी लेशमात्र लखिये छैयें. तेनां नाम उपरना मूल पाठमा सुलभ छे माटे लिख्या नथी. तथा एना व्याख्यानथी पण जणाशे. ए तेर सामान्य स्वभावें परिणमति वस्तु होय.

स्वद्रव्यादिचतुष्टयेन व्याप्यव्यापकादिसम्बन्धिस्थिताना स्वपरिणामात् परिणामान्तरागमन हेतुः वस्तुनः सद्रुपतापरिणति. अस्तिस्वभाव.

अर्थ॥ तेमां १ प्रथम अस्तिस्वभावनुं लक्षण कहे छे. स्वके० पोताना द्रव्यादिक चार धर्म तेनो जेमा व्यापकपणो छे, १ द्रव्य ते गुणपर्यायना समुदायनो आधारपणो, २ क्षेत्र ते प्रदेशरूप सर्व गुणपर्यायनो अवस्थाने राखवापणो, जे जेने राखे ते तेनु क्षेत्र जाणवु, ३ काल ते उत्पाद व्यय ध्रुवपणे वर्त्तना, ४ भाव ते सर्व गुणपर्यायनो कार्यधर्म. तिहा जीव द्रव्यनु १ स्वद्रव्यप्रदेश गुणनो समुदाय द्रव्य छे, ते गुणपर्यायनो जनकपणो ते स्वद्रव्य, २ जीवना असंख्याता प्रदेश ते स्वपर्यायनो स्वक्षेत्रपर्याय ते जाणवा एटले देखवादिक जे गुणनो पर्याय तेनु जे क्षेत्र ते स्वक्षेत्र, ३ पर्यायमये कारण कार्यादिकनो जे उत्पा-

द्रव्य ते स्वकाल तथा, ४ अतीतअनागत वर्त्तमाननु परिणमन ते स्वभाव ते कार्यादिक धर्म. जेम ज्ञानगुणनो पर्याय जाणंगपणो, वेत्तापणो, परिच्छेदकपणो, विवेचनपणो, इत्यादिक स्वभाव. एम स्वद्रव्य, स्वक्षेत्र, स्वकाल, स्वभाव, जे परिणामिकपणे परिणमता तेनी अस्तिता कहेवी. ए सर्वनी छति छे ते अस्ति स्वभाव छे. ए अस्तिस्वभावे द्रव्य छे, ते पोतानो मूल धर्म मूकी अन्य धर्मपणे परिणमतो नथी, परिणामांतरे आगमन छे ए अस्ति स्वभाव ते सर्व द्रव्यमां पोताना गुणपर्यायनो जाणवो. जे अस्ति ते सद्रूपता छतारूपपणानी परिणति लेवी. सर्व द्रव्यमां पोताने धर्मेज परिणमे पण जे जीव द्रव्य ते अजीव द्रव्यपणे न परिणमे तथा एक जीव ते अन्य जीवपणे न परिणमे, वली एक गुण ते अन्य गुणपणे न परिणमे, ज्ञानगुणने विषे दर्शनादिक गुणनी नास्तिता छे अने ज्ञानना धर्मनी अस्तिता छे. तथा एकगुणना पर्याय अनंता छे ते सर्व पर्याय धर्मे सरिखा छे पण एक पर्यायना धर्म वीजा पर्यायमां नहि अने वीजा पर्यायना धर्म पहेला पर्यायमां नही. माटे सर्व पोताने धर्मेज अस्ति छे. ए रीते अस्ति नास्तिनुं ज्ञान सर्वत्र करवुं. ए द्रव्यने विषे प्रथम अस्ति स्वभाव कह्यो.

अन्यजातीयद्रव्यादीनां स्वीयद्रव्यादिचतुष्टयतया व्यवस्थितानां विवक्षिते परद्रव्यादिके सर्वदेवाभावाविच्छिन्नानां अन्यधर्माणां व्यावृत्तिरूपो भावः नास्तिस्वभावः यथा जीवे स्वीयाः ज्ञानदर्शनादयो भावाः अस्तित्वे परद्रव्यस्थिताः अचेतनादयो भावा नास्तित्वे सा च नास्तिता द्रव्ये अस्तित्वेन वर्तते

घटे घट धर्माणा अस्तित्व पटादिसर्वपरद्रव्याणां नास्तित्वं एव सर्वत्र ।

अर्थ ॥ हवे बीजा नास्ति स्वभावनु स्वरूप लखियें छैयें. अन्य के० बीजा जे द्रव्यादिक जे द्रव्यगुणपर्याय तेना पोताना जे द्रव्य क्षेत्र काल भाव ते तेहिज द्रव्यमा सदा अवष्टभपणे परिणमे छे. एटले विवक्षित द्रव्यादिकथी पर जे बीजा द्रव्यादिकना जे धर्म ते तेमा सदा अभावपणे निरंतर अविच्छेद छे, ते माटे परद्रव्यादिकना धर्मनी व्यावृत्तितापणानो जे परधर्म ते विवक्षित द्रव्यमां नथी, एवा द्रव्यमा जे भाव छे ते नास्ति स्वभाव जाणवो. जेम जीवने विषे ज्ञान दर्शनादिक पोताना जे भाव ते तो अस्तिपणे छे अने परद्रव्यमां रह्या जे अचेतनादिक भाव तेनी नास्तितता छे, एटले ते धर्म जीव द्रव्यमा नथी, माटे परधर्मनी नास्तितता छे, पण ते नास्तिता ते द्रव्य मध्ये अस्तिपणे रही छे जेम घटना धर्म घटमा छे तेथी घटमा घट धर्मनो अस्तित्वपणो छे पण पटादि सर्व परद्रव्योनो नास्तित्वपणो ते घटने विषे रह्यो छे तथा जीवमध्ये जीव ज्ञानादिक गुण ते अस्तित्वपणे छे, पण पुद्गलना वर्णादिक जीव मध्ये नथी माटे वर्णादिकनी नास्ति ते जीव मध्ये रहि छे श्रीभगवती सूत्रे कह्यु छे "हे गौतम अत्थित्तं अत्थित्ते परिणमयी नत्थित्तं नत्थित्ते परिणमयी" तथा ठाणाग सूत्रे १ सियअत्थि, २ सियनत्थि, ३ सियअत्थिनत्थी, ४ सियअवत्तव्व, ए चोभंगी कही छे, अने श्रीविशेषावश्यक मध्ये कह्यु छे के, जे वस्तुनो अस्ति नास्तिपणो जाणे ते सम्यग् ज्ञानी अने जे न जाणे अथवा अयथार्थपणे जाणे ते मिथ्यात्वी उक्तं च "सदसद् विशेषणाओ, भवहेउजहच्छियओवलभाओ ॥ नाणफलाभावाओ मिच्छादिठिसअन्नाणं" ॥ १ ॥ ए गाथानी टीका

मध्ये स्याद्वादोपलक्षितवस्तुस्याद्वादश्चसप्तभङ्गीपरिणामः एकैक-स्मिन्द्रव्येगुणेपर्यायेचसप्तसप्तभङ्गाभवन्त्येव अतः अनन्तपर्यायप-रिणतेवस्तुनिअनन्ताः सप्तभङ्ग्योभवन्ति इतिरत्नाकरावतारि-कायां ते द्रव्यने विषे, गुणने विषे, पर्यायने विषे स्वरूपं सातभंगा होय, जे ए सात भंगानो परिणाम ते स्याद्वादपणो कहियें.

तथाहि स्वपर्यायैः परपर्यायैरुभयपर्यायैः सद्भा-वेनासद्भावेनोभवेन वार्पितो विशेषतः कुंभ-अकुंभः कूंभाकूंभो वा अवक्तव्योभयरूपादिभेदो भवति सप्तभङ्गी प्रतिपाद्यते इत्यर्थः ओष्टग्रीवा कपालकुक्षिवुध्नादिभिः स्वपर्यायैःसद्भावेनार्पित-विशेषतः कूंभकूंभो भण्यते सन् घट इति प्रथमभंगो भवति एवं जीवः स्वपर्यायैः ज्ञाना-दिभिः अर्पितः सन् जीवः

अर्थः—एसप्तभंगी परनी अपेक्षायें नथी ते द्रव्यादिक मध्येज छे. यथा स्वधर्मे परिणमवुं ते अस्ति धर्म छे अने पर द्रव्यना धर्मे न परिणमवुं ए नास्तिनुं फल छे, ते माटे ए सप्त-भंगी ते वस्तुधर्म छे, ते विशेषावश्यकथी सप्तभंगी लखियें छैयें. एक विवक्षित वस्तु स्व के० पोताने पर्यायें सद्भाव के० छता-पणे छे अने परपर्यायें जे अन्य द्रव्यने परिणमे तेनो असद्भाव के० अछतापणो परिणमे छे. तथा जे छता अथवा अछता पर्याय तेनो छतापणो छे. कोइकपणे अछतापणो छे, माटे छता अछ-तापणो पण तेज कालें छे. केमके वस्तु मध्ये अनेक धर्म छे. ते सर्व केवलीने एक समयें समकालें भासे छे. ते पण वचने भंगां-

तरेज कही शके, अने छद्मस्थने श्रद्धामा तो सर्व धर्म समकाले सद्दहे छे पण छद्मस्थनो उपयोग असख्यात समयी छे, अनुक्रमे ठे, पूर्वापरसापेक्ष छे, तेथी सप्तभंगे भासन छे जे वस्तुमां समकालें छे, समकीतिनी श्रद्धामां समकाले छे अने केवळीना भासनमां समकाले छे, ते श्रुतज्ञानीना भासनमा क्रमपूर्वक छे, केमके भाषा सर्व क्रमे कहेवाय ठे. तेथी असत्य थाय तेने जो स्यात्पदें प्ररुपियें जाणियें तो सत्य थाय माटे स्यात्पूर्वक सप्तभंगी कहियें. द्रव्य गुणपर्याय स्वभाव सर्व मध्ये ठे ते रीतें सद्दहवी. ते दृष्टांते करी कहे ठे. ओष्ठ के० होठ, गावड, काठो, कपाल, तलो, कुक्षि-पेटो, बुध्न, पोहोलो इत्यादि स्वपर्यायें करी घट छतो छे, ते घटने स्वपर्याये छतापणें अर्पित करियें तेवारें ते कुभकुंभ थम सन् के० छतो छे, पण अछतादिक धर्मनी छति सापेक्ष राखवाने स्यात्पूर्वक कहेवो एटले स्यात्अस्तिघटः ए मथम भगो जाणवो, तथा जीवादि द्रव्यने विषे जीवना ज्ञानादि गुण तेने पर्यायें जीव द्रव्यने नित्यादि स्वभावे करीने स्यात्अस्तिजीवः एम सर्व द्रव्यने कहेवो. यद्यपि जीव तथा अजीवनो नित्यपणो सरिखो भासे पण एनो तेमां नही अने तेनो एमा नही जो के जीव सर्व एकजातीय द्रव्य ठे पण एक जीवमा जे ज्ञानादि गुण ठे ते बीजा जीवमा नथी. माटे सर्व द्रव्य स्वधर्मज अस्ति छे, अने परधर्मे नास्ति ठे. एम स्यात अस्तिजीव ए मथम भंग जाणवो.

तथा पटादिगतैस्त्वक्त्राणादिभिः परपर्यायैरस द्भावेनार्पित अविशेषित अकुंभो भवति सर्वस्यापि घटस्य परपर्यायैरसत्वविवक्षायामसन्

घटः एवं जीवोऽपि मूर्त्तत्वादिपर्यायैः असत् जीव इति द्वितीयो भङ्गः

अर्थः—पटने विषे रह्या जे पर्याय ते त्वक् जे शरीरनी चामडीने ढांके, लांबो पथराय इत्यादि ते घटना पर्याय नथी. पर पर्याय छे, पटने विषे रह्या छे. घटने विषे ए पर्यायनी नास्ति छे, तेथी ए पर्यायनो असद्भाव छे, ते माटे ए घटना पर्याय नथी. एम सर्व पर्यायें घट नथी तेवारें परपर्यायना अछतापणानी विवक्षाये अछतो घट छे, एम जीव पण मूर्तिपणादिक अचेतनादि पर्यायनो जीव मध्ये असत्—अछतापणो तेथी जीव पर पर्याये नास्ति छे. माटे स्यात् नास्ति ए बीजो भांगो जाणवो. केमके पर पर्यायनी नास्तितानुं परिणमन द्रव्यने विषे छे.

तथा सर्वो घटः स्वपरोभयपर्यायैः सद्भावासद्भावाभ्यां सत्वासत्वाभ्यामर्पितो युगपद्वक्तुमिष्टोऽवक्तव्योभवति स्वपरपर्यायसत्वासत्वाभ्यां एकैकनाप्यसांकेत्तिकेन शब्देन सर्वस्यापि तस्य वक्तुमशक्यत्वादिति, एवं जीवस्यापि सत्वासत्वाभ्यामेकसमयेन वक्तुमशक्यत्वात् स्यादवक्तव्यो जीव इति तृतीयो भङ्गः। एते त्रय सकलादेशाः सकलं जीवादिकं वस्तुग्रहणपरत्वात्

अर्थः—सर्व घटादि वस्तु छे ते स्वपर्याय जे पोताना

सद्भाव पर्याय तेणे करी छतापणे कहेवाय तथा परने पर्यायें अछता पण कहेवाय, तेवारे स्व पर्यायनो छतापणो पर पर्यायनो अछतापणो ए बे धर्म समकालें छे, पण एक समये कहेवाय नही, ते माटे ए घटादि द्रव्य ते स्वद्रव्यमा स्वपर्यायनो सत्वपणो, परपर्यायनो असत्वपणो, ते कोइ पण एक साकेतिक शब्दें करी कहेवाने समर्थ नही माटे सत्व अस्तिपणो असत्व नास्तिपणो ते एक समये कहेवामां असमर्थ छे तेथी वस्तुविभावना बे धर्म ते एक समयें छता छे तेनो ज्ञान करवा माटे स्यात् अवक्तव्य ए वचन बोल्या केमके कोइकने एवो बोध थाय जे सर्वथी वचने अगोचरज छे. ते माटे स्यात्पद दीधो स्यात् के० कथंचित्पणे कोइक रीतें एक समये न कहेवाय माटे स्यात् अवक्तव्य ए जीव छे. एम सर्व द्रव्य जाणवा. ए त्रीजो भांगो थयो. ए त्रण भंगा सकलादेशी छे. सर्व वस्तुने सपूर्णपणे ग्रहेवा रूप छे. जीवादिक जे वस्तु तेने संपूर्ण ग्रहेवावत छे.

अथ चत्वारो विकलादेशाः तत्र एकस्मिन् देशे स्वपर्यायसत्वेन अन्यत्र तु परपर्यायसत्वेन सश्च असश्च भवति घटोऽघटश्च एव जीवोऽपि स्वपर्यायै. सन् परयर्यायैः असन् इति चतुर्थो भङ्गः

अर्थः—हवे चार भागा विकलादेशी कहे छे जे वस्तुनु स्वरूप कहेवो तेना एक देशनेज ग्रहे ए स्वरूप छे. तिहा एक देशने विषे स्वपर्यायनो सत्वपणो अस्तिपणो गवेषे छे ते वारें वस्तु सद् असत्पणे छे, एटले ए घट छे अने ए घट नथी. एम जीव पण स्वपर्यायें सत् परपर्यायें असत्, ते माटे एक समये अस्ति नास्तिरूप छे, पण कहेवामां असख्यात समये

छे, ते माटे स्यात्पूर्वक छे एम स्यात् अस्तिनास्ति ए चोथो भंगो जाणवो.

तथा एकस्मिन् देशे स्वपर्यायैः सद्भावेन विवक्षितः अन्यत्र तु देशे स्वपरोभयपर्यायैसत्वासत्वाभ्यां युगपदसंकेतिकेन शब्देन वक्तुं विवक्षितः सन् अवक्तव्यरूपः पञ्चमो भङ्गो भवति. एवं जीवोपि चेतनत्वादिपर्यायैः सन् शेषैरवक्तव्य इति ।

अर्थ ॥ तथा एक देशें पोताने पर्यायें स्वद्रव्यादिकें छतापणे गवेषीयें अने अन्य के० बीजा देशोने विषे स्वपर ए बे पर्यायें सत्व छतापणें तथा असत्व-अछतापणें समकालें असंकेतपणे नामने अणकहे गवेषीयें तेवारे सत् के० अस्तिअवक्तव्यरूप भांगो उपजे अने ए भांगा छतां बीजा छ भांगा छे, तेनो गवेषणा माटे स्यात् पद जोडीयें एटले स्यात् अस्ति अवक्तव्य ए पांचमो भांगो जाणवो. जेम जीवने विषे चेतनपणो सुखवीर्यगुणें अस्ति छे अने नास्तिपणे अस्तिनास्ति समकालपणे वचनगोचर न आवे ते स्यात् अस्ति अवक्तव्य.

तथा एकदेशे परपर्यायैरसद्भावेनार्पितो विशेषतः अन्यैस्तु स्वपरपर्यायैः सद्भावासद्भावाभ्यां सत्वासत्वाभ्यां युगपदसंकेतिकेन शब्देन वक्तुं विवक्षितकुंभोऽसन् वक्तव्यश्च भवति । अकुम्भो

वक्तव्यश्च भवतीत्यर्थः देशे तस्याकुम्भत्वात् देशे अवक्तव्यत्वादिति षष्ठो भङ्गः

अर्थ ॥ तथा एकदेशें परपर्याय जे नास्ति पर्याय तेने असद्भाव के० अछतापणे अर्पित करीने मुख्यपणे गवेपीयें तेवार पछी अन्य के० बीजा स्वपर्यायें अस्तिपणो तथा परपर्याय जे नास्ति पर्याय ए बे सत्व के० छतापणे असत्व के० अछतापणे युगपत् समकाले कहियें. इहां संकेतिक शब्दने अभावे कहेवामा न आवे, अने ते कह्या विना श्रोताने ज्ञान केम थाय? ते माटे स्यात् पद ते अन्य भागानी सापेक्षता माटे तथा सर्व धर्मनी समकालता जणाववा माटे स्यात्नास्तिअवक्तव्य ए छट्ठो भागो जाणवो. एटले जीव पोताने स्वगुणे तो छतापणो सर्वपर्याय समकालनो अव्यक्तव्यपणो ए स्यात्नास्ति अवक्तव्य छट्ठो भांगो थयो.

तथा एकदेशे स्वपर्यायैः सद्भावेनार्पित· एकस्मिन् देशे परपर्यायैरसद्भावेना· र्पित· अन्यस्मिस्तु देशे स्वपरोभयपर्यायै सद्भावासद्भावाभ्या युगपदेकेन शब्देन वक्तु विवक्षित· सन् असन् अवक्तव्यश्च भवति इति सप्तमो भङ्गः। एतेन एकस्मिन् वस्तुन्यर्पितानर्पितेन सप्तभङ्गी उक्ता॥

अर्थ ॥ तथा एकदेशे स्वपर्यायने छतापणे अर्पित करियें अने एकदेश परपर्यायने अछतापणे गवेषिय अने ते सर्व पर्याय समकाले भेला रह्या छे पण वचने कहेवाय नहि, एटले अस्ति-

पणो पण छे अने नास्तिपणो पण छे, ए सर्व धर्म समकालें छे, पण वचने गोचर थाय नही, ए अपेक्षायें स्यात्‌अस्तिनास्तिअ-वक्तव्य ए रीते वस्तुनो परिणमन छे. ए सातमो भांगो जाणवो. ए सप्तभंगी अर्पित अनर्पितपणे कही. ते अर्पित एक धर्मज होय एम एक धर्मने विषे सप्तभंगी कही.

तत्र जीवः स्वधर्मैं ज्ञानादिभिः अस्तित्वेन वर्त्तमानः तेन स्यात् अस्तिरुपः प्रथमभङ्गः अत्र स्वधर्मा अस्तिपदगृहीताः शेषानास्तित्वादयो धर्माः अवक्तव्यधर्माश्च स्यात्पदेन संगृहीता.

अर्थ ॥ हवे स्वरूपपणे सप्तभंगी कहे छे. जे एक द्रव्यने विषे अथवा एक गुणने विषे, एक पर्यायने विषे, एक स्वभावने विषे सातसात भांगा सदा परिणमे छे, ते रीतें सप्तभंगी कहे छे. स्याद्वादरत्नाकरावतारिका मध्ये कह्यो छे "एकस्मिन् जीवादौ अनंतधर्मापेक्षासप्तभंगीनामानंत्यं" ए वचनथी जाणी लेजो. अत्थिजीवे इत्यादि गाथाथी जाणजो, ए सुयगडांग सूत्रें छे. हवे पहेलो भांगो लखियें छैयें. तिहां जीव द्रव्य पोताने १ स्व-द्रव्य पिंडगुणपर्याय समुदाय आधारपणो, २ स्वक्षेत्र असंख्य प्रदेश ज्ञानादि गुणनुं अवस्थान, अगुरुलघुता हानि वृद्धिनो मान, ३ स्वकाल ते गुणनी वर्त्तना उत्पादव्ययना परिणमननो भिन्न स्वभाव तथा ४ अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारि-त्र, अनंत दान, अनंत लाभ, अनंत भोग, अनंत उपभोग, अनंत वीर्य, अनंत अव्यावाध, अरूपी, अशरीरी, परम क्षमा, परम मार्दव, परम आर्जव, स्वरूपभोगी प्रमुख स्वस्वभाव. ए अनंतज्ञेय ज्ञायकपणे जीव द्रव्य छतो छे, एम जीवनो ज्ञानगुण

सधर्म सकल ज्ञेयज्ञायकरूपणो स्वशक्तिधर्मे अनंत अविभागें एक-एक पर्याय अविभागमा सर्व अभिलाप्य अनभिलाप्य स्वभावनो जाणगपणो छे. इहा विस्तारे लखियें छैयें. तिहां मतिज्ञानना पर्याय जूदा छे श्रुतज्ञानना अविभाग जूदा छे. मनःपर्याय ज्ञानना अविभाग जूदा छे. केवल ज्ञानना पर्याय जूदा छे. श्रीविशेषावश्यके गणधरवादने छेडे कह्यो छे जो आवरवा योग्य वस्तु भिन्न छे तो आवरण जूदा छे. तिहा क्षयोपशमने भेदें जाणे छे ते परोक्ष अथवा देशथी जाणे छे, सर्वथा आवरण गयेथके प्रत्यक्ष जाणे पण केवलज्ञान सर्वभावनो संपूर्ण प्रत्यक्षदायक ते संपूर्ण प्रगट्यो तेवारें बीजा ज्ञाननी प्रवृत्ति छे पण भिन्न पडती नथी, माटे ते केवलज्ञाननो जाणपणोज कहेवाय छे, तथा कोइक ज्ञानगुणना अविभाग सर्व एक जातिना कहे छे, ते अविभागमध्ये वर्णादिक जाणवानी शक्ति अनेक प्रकारनी छे, तेमांज आवरण एटले जे शक्ति प्रगटे ते शक्तिनु मतिज्ञानादि भिन्न नाम छे, अने सर्व आवरण गयाथी एक केवलज्ञान रह्यु छे. छद्मस्थ ज्ञानमो भास छे ए पण व्याख्यान छे. एवो ज्ञानगुण पोताना स्वपर्याय ज्ञायक परिच्छेदक चेतनत्वादिक अस्ति छे. एम सर्व गुणमा स्वधर्मनी अस्तिता कहेवी. तेमज जे अवि भागरूप पर्याय छे जेना समूहनी एक प्रवृत्तिने गुण कहियें छैयें तेपण स्वकार्य कारणधर्म अस्ति छे एम छ द्रव्यनु स्वरूप स्व-स्वरूपें अस्ति छे अने अन्य छ भागा पण छे एवो सापेक्षता माटे स्यात्पद देइने बोल्वो ते स्यात् अस्ति ए प्रथम भागापणो (कथ्यो) एटले गवेष्यो. जे अस्तिधर्म ते पण नास्तिपणा सहित छे एटले अस्ति कहेतां थका नास्ति प्रमुख छ भागानी छति छे, तिहा शब्द सहित उपयोग थयो तेथी सत्यपणो थयो.

तथा स्वजात्यन्यद्रव्याणां तद्धर्माणां च विजाति परद्रव्याणां तद्धर्माणां च जीवे सर्वथैव अभावात् नास्तित्वं तेन स्यात् नास्तिरूपो द्वितियो भङ्गः अत्र परधर्माणां नास्तित्वं नास्तिपदेन गृहीतं शेषा अस्तित्वादयः स्यात्पदे गृहीता इति ॥

अर्थ ॥ हवे बीजो भांगो कहे छे जे एक जीवनुं स्वरूप उपयोगमां आण्युं छे ते जीवने विषे, अन्य जे सिद्ध संसारी जीव छे ते सर्वना गुणपर्याय अस्तित्वादि प्रमुख सर्व धर्मनी नास्ति छे, अने अजीव द्रव्य तथा तेना जडतादिक सर्व धर्मनी नास्ति छे. जेम अग्निमां दाहकपणो छे तेनी पासे बीजो अग्निनो कणियो छे, ते पण दाहक छे; पण ते दाहकपणो भिन्न छे, एटले ते कणीयानो दाहकपणो ते अग्निमां नथी अने ते अग्निनो दाहकपणो ते कणीयामां नथी. तेमज एक जीवमां ज्ञानादिक गुण छे ते बीजामां नथी अने बीजा जीवमां जे ज्ञानादिक गुण छे ते तेमां नथी. बाकी सरिखा छे. ते माटे जाणवादिक कार्य सरिखा करे तो पण सर्वमां पोतपोताना गुण छे, पण कोइ द्रव्यना गुण कोइ द्रव्यमां आवता नथी. ते माटे स्वजाति अन्य द्रव्यपणो, अन्य गुणपणो तथा अन्य धर्मपणो ते सर्वनो नास्ति छे. एमज गुणमां पण सर्व अन्य द्रव्यादिकनी नास्ति छे, तथा पर्यायना अविभागमां पण स्वजाति अविभागकार्यता कारणतानी नास्ति छे. ते माटे परद्रव्यपणो, परक्षेत्रपणो, परकालपणो, परभावपणो एनी नास्ति छे. एवो नास्तिपणो पण तेमांज रह्यो छे, ते माटे स्यात् नास्तिपणो ए भांगो पण तेमांज छे. एम एकज मात्र नास्तिपणो कह्ये थके अस्तिपणो तथा एक कालपणो पण छे तथा जीवमां जडता गुणनी

नास्ति छे, एटले जडतानी नास्ति ते जीवमाज रही छे. इत्यादिक अनंता धर्मनी सापेक्षता माटे स्यात्पदें वोलतां सर्व धर्मनो भासन थयो एटले सत्यता थाय ते माटे स्यात्नास्ति ए वीजो भांगो कह्यो.

केषाश्चिद्धर्माणा वचनगोचरत्वेन तेन स्यात्अवक्तव्य इति तृतीयो भङ्गः। अवक्तव्यधर्मसापेक्षार्थं स्यात्पदग्रहणम्

अर्थ ॥ हवे त्रीजो भांगो कहे छे. जे वस्तु होय तेमा केटलाक धर्म एवा छे जे वचने करी कहेवाता नथी ते अवक्तव्य छे. ते केवलीने ज्ञानमा जणाय पण वचने करी ते पण कही शके नही ते माटे तेवा धर्मनी अपेक्षायें वस्तु अवक्तव्य छे, एटले अवक्तव्य कहेतां थका वक्तव्यनी ना थइ, पण केटलाक धर्म वस्तु मध्ये वक्तव्य छे, ते जणाववा माटे स्यात्पद ग्रहण करीने स्यात् अवक्तव्य ए त्रीजो भागो कह्यो.

अत्र अस्तिकथने असङ्ख्येया. नास्तिकथनेऽप्यसङ्ख्येयाः समया वस्तुनि, एकसमये अस्तिनास्तिस्वभावौ समकवर्त्तमानौ तेन स्यात्अस्तिनास्तिरूपश्चतुर्थो भङ्ग॰

अर्थ ॥ हवे चोथो भागो कहे छे, जे अस्ति एवो शब्द उचार करतां पण असख्यात समय थाय तथा नास्ति ए शब्द उचार करता पण असंख्यात समय थाय अने वस्तुमा तो अस्तिधर्म नास्तिधर्म ए वेहु एक समयमां छे, ते वेहु समकालें जणाववा माटे, अने जे अस्ति ते नास्ति न थाय तथा जे नास्ति ते अस्ति न थाय ते सापेक्षता माटे स्यात् अस्तिनास्ति ए चोथो भागो जाणवो.

तत्र अस्तिनास्तिभावाः सर्वे वक्तव्या एव न अवक्तव्या इति शङ्कानिवारणाय स्यात्अस्ति अवक्तव्य इति पञ्चमो भङ्गः स्यान्नास्ति अवक्तव्य इति षष्ठः अत्र वक्तव्या भावाः स्यात्पदेग्रहीताः अत्र अस्तिभावा वक्तव्यास्तथाअवक्तव्यास्तथा नास्तिभावा वक्तव्या अवक्तव्या एकस्मिन् वस्तुनि, गुणे, पर्याये, एकसमये, परिणममाना इतिज्ञापनार्थं स्यात्अस्तिनास्ति अवक्तव्य इति सप्तमो भङ्गः ॥ अत्र वक्तव्या भावास्ते स्यात्पदे संगृहीता इति अस्तित्वेन अस्तिधर्मा नास्तित्वेन नास्तिधर्मा युगपदुभयस्वभावत्वेन वक्तुमशक्य स्वात् अवक्तव्यः स्यात्पदे च अस्त्यादिनामेव नित्यानित्याद्यनेकान्तसंग्राहकम्

अर्थ ॥ हवे पांचमो तथा छठो भांगो कहे छे. तिहां स्यात् अवक्तव्य एम कहेवाथी द्रव्य ते मूळधर्मे एकलो अवक्तव्य थयो ते संदेहनिवारवा कह्यो जे स्यात् अस्ति अवक्तव्य. वस्तुमां अनंता अस्ति धर्म छे पण वचने अगोचर छे, अने अनंताधर्म वचनगोचर पण छे, तेनी सापेक्षता माटे स्यात् पदयुक्त करीये एटले स्यात् अस्ति अवक्तव्य ए पांचमो भांगो जाणवो. एमज पांचमानी रीते स्यात् नास्ति अवक्तव्य ए छठो भांगा जाणवो. हवे सातमो भांगो कहे छे. इहां अस्तिभावपणो वक्तव्य छे तेमज नास्तिभाव पण वक्तव्य छे, अने अवक्तव्य पण छे. ए सर्व धर्म एक समयमां एक वस्तुमध्ये तथा एक गुणमध्ये तथा एक पर्याय मध्ये

समकालें परिणमे छे, ते जणाववा माटे अस्तिनास्ति अवक्तव्यः ए सातमो भागो. इहा अस्ति ते नास्ति न थाय अने नास्ति ते अस्ति न थाय तथा वक्तव्य ते अवक्तव्य न थाय अने अवक्तव्य ते वक्तव्य न थाय ते जणाववाने अर्थे स्यात्पद ग्रह्यो छे इहां अस्तिपणे जे भाव छे ते अस्तिधर्म अने नास्तिपणे जे भाव छे ते नास्तिपणे ग्रह्या छे, बेहु समकाले छे ते माटे एक समय वक्तव्यके० कहेवामा अशक्य छे, असमर्थ छे, तेथी अवक्तव्यके० अगोचरपणे छे अने जे स्यात्पद छे ते अस्तिधर्म नास्तिधर्म अवक्तव्य धर्मनो नित्यपणो अनित्यपणो प्रमुख अनेकातनो संग्रह करे छे. जे अस्तिधर्म छे ते नित्यपणे पण छे तथा अनित्यपणे पण छे, एकपणे छे, अनेकपणे छे, भेदपणे छे, अभेदपणे छे, इत्यादिक ते अस्तिधर्ममां अनेकातता छे तेने ग्रहे छे केमके वस्तुनो एकगुण तेमा अस्तिपणो छे, नास्तिपणो छे, नित्यपणो छे, अनित्यपणो छे, भेदपणो छे, अभेदपणो छे, वक्तव्यपणो छे, अवक्तव्यपणो छे, भव्यपणो छे, अभव्यपणो छे, ए अनेकातपणो एह ज स्याद्वाद छे. तेनुं संकेतिक वाक्य ते स्यात्पद छे ए रीते जाणवो.

आत्मद्रव्यने विषे स्वधर्मनी अस्तिता छे, परधर्मनी नास्तिता छे, स्वगुणनो परिणमवो अनित्य छे अने तेज गुणपणे नित्य छे, तथा द्रव्य पिंडपणे एक छे अने गुण पर्यायपणे अनेक छे. तथा आत्मा कारणपणे कार्यपणें समय समयमा नवानवापणो जे पामे छे ते भवनधर्म छे. तो पण आत्मानो मूलधर्म जे पलटतो नथी ते अभवनधर्म छे. इत्यादिक अनेक धर्म परिणति युक्त छे। ए रीते षट् द्रव्यने जाणी निर्धारी जे हेयोपादेयपणे श्रद्धान भासन थाय ते सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन छे. ए जीवनी अशुद्धता ते परकर्त्ता, परभोक्ता, परग्राहकता टालवाना उपायनु साधन ते साधन करवे आत्मा आत्मापणें मूलधर्म रहे ते सिद्धपणो तेनी रुचि उद्यमपणो करवो एहिज श्रेय छे.

स्यात्अस्ति, स्यान्नास्ति, स्यात्अवक्तव्यरूपा-स्त्रयः सकलादेशाः संपूर्णवस्तुधर्मग्राहकत्वात्, मूलतः अस्तिभावा अस्तित्वेन सन्ति, नास्ति-त्वेन सन्ति एवं सप्तभङ्गाः एवं नित्यत्वसप्तभङ्गी अनित्यत्व सप्तभङ्गी एवं सामान्यधर्माणां, विशे-षधर्माणां, गुणानां, पर्यायाणां, प्रत्येकं सप्त-भङ्गी तद्यथा

अर्थ ॥ स्यात्अस्ति, स्यात्नास्ति, स्यात्अवक्तव्य ए त्रण भांगा वस्तुना संपूर्णरूपने ग्रहे माटें सकलादेशी छे, अने शेष रह्या जे चारभांगा ते विकलादेशी छे. ते वस्तुना एकदेशने ग्रहे माटे. तथा वली अस्तिपणाने विषे जे अस्तिपणो ते नास्तिपणे नथी, अने नास्पिणो नास्तिपणे छे तेमां अस्तिपणो नथी. इहां कोइ पुछे के वस्तुमां जे नास्तिपणो ते अस्तिपणे कहो छो तो नास्तिपणामां आस्तिपणानी ना किम कहो छो ? तेने उत्तर जे नास्तिपणो ते अस्ति छे—छतापणे छे अने अस्तिधर्म कांइ नास्ति-पणामां नथी माटे ना कही छे. छतिनी ना कही नथी. तथा एमज नित्यपणानी सप्तभंगी, तथा अनित्यपणानी सप्तभंगी, तेमज सामान्य धर्म सर्वनी भिन्न भिन्न सप्तभंगी, तथा सर्व विशेष धर्मनी सप्तभंगी, तेमज गुण पर्याय सर्वनी जूदी जूदी सप्तभंगी कहेवी, तद्यथा के० ते कही देखाडे छे.

ज्ञानं ज्ञानत्वेन अस्ति दर्शनादिभिः स्वजाति धर्मैः अचेतनादिभिः विजातिधर्मैः नास्ति, एवं पञ्चास्तिकाये प्रत्यस्तिकायमनन्ता सप्तभंग्यो

भवन्ति अस्तित्वाभावे गुणाभावात्पदार्थे शून्यतापत्तिः नास्तित्वाभावे कदाचित् परभावत्वेन परिणमनात् सर्वसङ्करतापत्तिः व्यंजकयोगे सत्ता स्फुरति तथा असत्ताया अपि स्फुरणात् पदार्थानामनियता प्रतिपत्तिः तत्त्वार्थे तद्भावाव्यय नित्यम् ॥

अर्थ ॥ हवे गुणनी सप्तभंगी कही देखाडे छे, जेम ज्ञान गुण ज्ञायकादिक गुणे अस्ति छे अने दर्शनादिक स्वजाति एकद्रव्यव्यापि गुण तथा स्वजाति भिन्न जीवव्यापि ज्ञानादिक सर्वगुण अने अचेतनादिक परद्रव्यव्यापि सर्व धर्मनी नास्ति छे, एम पचास्तिकायने विषे अस्तिकार्ये अनंति सप्तभगीओ पामे. ए सप्तभंगी स्याद्वादपरिणामें छे ते सर्व द्रव्यादिकमा छे.

हवे वस्तुम ये अस्तिपणो न मानियें तो शो दोष उपजे ते कहे छे. जो वस्तुमा अस्तिपणो न मानियें तो गुण पर्यायनो अभाव थाय अने गुणना अभावें पदार्थ शून्यतापणो पामे.

तथा जो वस्तुमध्ये नास्तिपणो न मानियें तो ते वस्तु कदाकालें पर वस्तुपणें अथवा परगुणपणें परिणमी जाय, तेथी कोइवारे जीव ते अजीवपणो पामे, अने अजीव ते जीवपणो पामे तो सर्व सकरतादोष उपजे. तथा व्यंजन के० प्रकटतानो हेतु तेने योगें छतो धर्म ते फुरे, पण जे धर्मनी सत्ता छति न होय ते फुरे नही. जो नास्तिपणो न मानियें तो असत्तापणे फुरे, अने जे वारें असत्ता स्फुरे ते वारें द्रव्यनो अनियामक के० अनिश्चयपणो थइ जाय, ते माटे सर्व भाव अस्ति नास्तिमयी छे.

व्यंजकतानो दृष्टांत कहे छे. जेम कोरा कुंभमां सुगंधतानी सत्ता छे तोज पाणीने योगें वासना प्रगटे छे. जो वस्त्रादिकमां ते धर्म नथी तो तेमां प्रगटतो पण नथी एम सर्वत्र जाणवो. हवे त्रीजो नित्य स्वभाव कहे छे ते जे वस्तुना भाव तेनो अन्वय के० नही टलवो एटले तेमनो तेमज रहेवो ते नित्यपणो कहियें. तेना बे भेद छे ते कहे छे.

एका अप्रच्युतिनित्यता द्वितीया पारंपर्यनित्यता ॥ तथा द्रव्याणां ऊर्ध्वप्रचयतिर्यग्प्रचयत्वेन तदेव द्रव्य मिति ध्रुवत्वेन नित्यस्वभावः नवनवपर्यायपरिणमनादिभिः उत्पत्तिव्ययरूपो नित्यस्वभावः उत्पत्तिव्ययस्वरुपमनित्यम् ॥ १

अर्थः—एक अप्रच्युतिनित्यता, बीजी पारंपर्यनित्यता, तिहां अप्रच्युतिनित्यता तेने कहियें जे द्रव्य ते ऊर्ध्व प्रचय तिर्यक् प्रचयने परिणमवे ए द्रव्य तेहिज ए ध्रुवतारूप ज्ञान थाय छे एटले सदा सर्वदा त्रणे काले तेहिज, एवुं जे ज्ञान थाय छे जे मूल स्वभाव पलटे नही ते अप्रच्युति नित्यता कहियें. अने ए नित्यतामां जे ऊर्ध्व प्रचय कह्यो ते ओलखावे छे. जे पहेले समयें द्रव्यनी परिणति हती ते बीजे समयें नवपर्यायने उपजवे अने पूर्वपर्यायने व्यय सर्व पर्यायनी परावृत्ति थइ, तो पण ए द्रव्य तेनुं तेज, एवुं जे ज्ञान थाय ते द्रव्यमां ऊर्ध्वप्रचय कहियें. उपरले समये ते माटे ऊर्ध्व प्रचय कहियें.

तथा अनंताजीव सरिखा छे पण सर्वजीव जाणतां ए पण जीव एवो जीवत्वसत्तायेंतुल्य भीन्न जीव सत्तारूप ज्ञान थाय ते तिर्यक्प्रचय कहियें.

ऊर्ध्वप्रचय ते समयांतरे अनेक उत्पादव्ययनें पलटवे पण ए जीव ते तेज छे एवुं ज्ञान थाय ए नित्यस्वभावनो धर्म जाणवो. ए कारणथी कार्यउपनो तेनुं ज्ञान थाय ते नित्यस्वभावनो धर्म जाणवो. तथा ए कारणथी जे कार्यउपनो वली ज्ञान थयु ते कारणथी बीजे कारणे बीजुं कार्य थाय एम नवे नवे कार्यउपने पण जीव तेज छे एवुं जे ज्ञान थाय, परंपरारूप संतति चाली जाय ते पारपर्य नित्यता कहियें, जेम प्रथम शरीरने कारणे राग हतो तेहिज वस्त्र धनने कारण प्रते राग थयो ते कारण नवा रागनो नवापणो पण राग रहित आत्मा केवारे नही, ए पारंपर्य एटले परंपरा नित्यता कहियें. बीजुं नाम संतति नित्यता जाणवी, ते कारण योगे निमित्ते नीपजे, नवा नवा पर्यायने परिणमवे एटले पूर्व पर्यायने व्ययथवे तथा अभिनव पर्यायने उपजवे अनित्य स्वभाव जाणवो. एटले उत्पत्ति के० उपजवो व्यय के० विणसवो एवो जे स्वभाव ते अनित्य स्वभाव जाणवो.

तत्र नित्यत्वं द्विविधं कूटस्थं प्रदेशादिना, परिणामित्वं ज्ञानादिगुणाना, तत्रोत्पादव्ययावनेकप्रकारौ तथापि किञ्चिल्लिख्यते विस्रसाप्रयोगजभेदाद् द्विभेदौ सर्वद्रव्याणां चलनसहकारादिपदार्थक्रियाकारणं भवत्येव ॥

अर्थ:—तिहावली ग्रंथांतरे नित्यपणो बे प्रकारे कह्यो छे, एक कूटस्थनित्यता, बीजी परिणामिनित्यता छे. जीवना असख्यात प्रदेश ते संस्थाये तथा क्षेत्रावगाह पलटतो नथी ते तथा गुणनो अविभाग ते सर्व कूटस्थनित्यता छे.

ज्ञानादिक गुण ए सर्वं परिणामिक नित्यतायें छे. केमके गुणनो धर्मज ए छे. जे समयें समयें स्वभाव कार्यपणे परिणमे अने जे कार्य होय ते परिणामिकपणेज होय ए नीतिज छे, अने जो ज्ञानगुणने कूटस्थनित्यतापणे मानियें तो पहेले समयें जे ज्ञाने करी जाण्यो तेहिज जाणपणो सदासर्वदा रहे, पण तेम तो नथी. ज्ञेय तो नवनवी रीतें परिणमता देखाय छे तो ते ज्ञेयनी नवनवी अवस्था ज्ञान जाणे नही, एटले पहेले समय जे रीते ज्ञान परिणमे छे ते रीतें परिणमन जोवुं जोईयें अने ए रीते ज्ञान यथार्थ थयुं एम घटे नहीं ते माटे ज्ञेय जे घटपटादिक ते जेम पलटे छे तेम ज्ञान पण जाणे तेहिज ज्ञान यथार्थ थाय, ते माटे ज्ञानगुण ते नवा नवा ज्ञेय जाणवा माटे परिणामी जाणवो. अनित्य ज्ञायकता शक्ति माटे नित्य. ए रीतें नित्यानित्य स्वभावी सर्व गुण छे. सर्व द्रव्यने विषे पोतानी क्रियानुं कारण थायज छे.

तत्र चलनसहकारित्वं कार्यं धर्मास्तिकायं द्रव्यस्य प्रतिप्रदेशस्थचलनसहकारिगुणा विभागाः उपादानकारणं कारणस्यैव कार्यपरिणमनात् तेन कारणत्वपर्यायव्ययः कार्यत्वपरिणामस्योत्पादः गुणत्वेन ध्रुवत्वं प्रतिसमयं कारणस्यापि उत्पादव्ययौ कार्यस्याप्युत्पादव्ययावित्यनेकान्तजयपताकाग्रन्थे. एवं सर्वद्रव्येषु सर्वेषां गुणानां स्वस्वकार्यकारणता ज्ञेया इति प्रथमव्याख्यानम्।

अर्थः—तिहां जेम धर्मास्तिकायद्रव्यनो चलन सहकारी-

पणो ते मुख्य कार्य छे, अने अधर्मास्तिकायद्रव्यनो स्थिर सहायील ते मुख्य कार्य छे, वली आकाशद्रव्यनु अवगाहना दान ते मुख्य कार्य छे, जीवनो जाणवा देखवारूप उपयोग ते मुख्य कार्य छे, पुद्गलनो वर्णगंधरसस्पर्शपणो ते मुख्य कार्य छे, इत्यादि स्वकार्यनो थावु छे ते जिहा थावु तिहा भवनधर्म थयो. अने जिहां भवनधर्म ते उत्पाद थयो, अने उत्पाद होय ते व्यय सहितज होय. ते भवनधर्म तत्त्वार्थ ग्रथ मध्ये कह्यो छे. हवे ते उत्पादव्यय बे प्रकारना छे एक प्रयोगथी थाय अने बीजो विश्रसा के० सहजे परिणामी धर्मे थाय हवे इहां सहजनो उत्पादव्यय कहे छे. तिहा धर्मास्तिकायादि छ द्रव्यने पोतपोताना चलन सहाकारादि गुणनी प्रवृत्तिरूप अर्थक्रियानो करवो थायज, अने चलनसहकारपणो ते कार्य धर्मास्तिकायद्रव्यने प्रतिप्रदेशें रह्यो जे चलन सहकारी गुणा विभाग ते उपादानकारण छे, तेहिज कार्यपणे परिणमे छे. एटले कारणपणानो व्यय अने कार्यपणानो उत्पाद तथा चलन सहकारीपणे ध्रुव छे एमज अधर्मास्तिकायने विषे थिरसहागुणनुं प्रवर्त्तन छे, तथा आकाशास्तिकायने विषे पण अवगाहनागुणनु प्रवर्त्तन एमज छे. वली पुद्गलमां पूरणगलनादिक गुणनु प्रवर्त्तन छे, तेमज जीवद्रव्यमा ज्ञानादिक गुणनु प्रवर्त्तन छे, अथवा वली अनेकांतजयपताका ग्रथने विषे एम पण कह्यु छे जे प्रतिसमयें गुणने विषे कारणपणो नवो नवो उपजे छे एटले कारणपणानो पण उत्पाद व्यय छे, तेमज प्रतिसमयें कार्यपणो पण नवो नवो उपजे छे, एटले कार्यपणानो पण उत्पाद व्यय छे, एम सर्व द्रव्यने विषे सर्व गुणनो कार्यपणो कारणपणो उपजे विणसे छे, एम उत्पाद व्ययनो एक स्वरूप प्रथम भेद कह्यो.

तथा च सर्वेषां द्रव्याणां पारिणामिकत्वं पूर्वपर्यायव्ययः नवपर्यायोत्पादः एवमप्युत्पादव्ययौ द्रव्यत्वेन ध्रुवत्वं इति द्वितीयः

अर्थः—सर्व धर्म छे ते परिणामिक भावे छे. तिहां पूर्व पर्यायनो द्रव्य अने नवा पर्यायनो उत्पाद समय समये छे अने द्रव्यपणो ध्रुव छे ए बीजो भेद.

प्रतिद्रव्यं स्वकार्यकारणपरिणमनपरावृत्तिगुणप्रवृत्तिरुपा परिणतिः अनन्ता अतीता एका वर्त्तमाना अन्या अनागता योग्यतारुपास्ता वर्त्तमाना अतीता भवन्ति अनागता वर्त्तमाना भवन्ति शेषा अनागता कार्ययोग्यतासन्नतां लभन्ते इत्येवंरुपावुत्पादव्ययौ गुणत्वेन ध्रुवत्वं इति तृतीयः। अत्र केचित् कालापेक्षया परप्रत्ययत्वं वदन्ति तदसत् कालस्य पञ्चास्तिकायपर्यायत्वेनैवाऽऽगमे उक्तत्वादियं परिणतिः स्वकालत्वेन वर्तनात् स प्रत्यक्षं एवं तथा कालस्य भिन्नद्रव्यत्वेऽपि कालस्य कारणता अतीतानागतवर्तमानभवनं तु जीवादिद्रव्यस्यैव परिणतिरिति ॥

अर्थः—सर्व द्रव्यने विषे स्व के० पोतानुं कारण परिण-

मन परावृत्ति के० पलटणपणे गुणनी प्रवृत्तिरूप परिणमन छे, ते परिणति अनंति अनत जातिनी अतीतकालें थइ छे अने अनंतिजातिनी ए क वर्त्तमान कालें छे, अने वीजी अनागत योग्यतारूपपणे अनंति छे, ते वर्त्तमान परिणति ते अतीत थाय छे, एटले ते परिणतिमध्ये वर्त्तमानपणानो व्यय अने अतीतपणानो उत्पाद तथा परिणतिपणे ध्रुव छे. अने अनागतपरिणति ते वर्त्तमान थाय छे, तिहां अनागतपणानो व्यय, वर्त्तमानपणानो उत्पाद अने छतिपणे ध्रुव अने अनागत कार्य योग्यता ते दूर हता ते आसन्न के० नजीकपणो पामे, एटले दूरतानो व्यय अने नजीकतानो उत्पाद तथा अतीतमध्ये दूरतानो उत्पाद अने नजीकतानो व्यय, ए रीतें सर्व द्रव्यने विषे अतीत वर्त्तमान तथा अनागतपणे परिणति छे, ते परिणमेज छे ए द्रव्यने विषे स्वकालरूप परिणमन छे, ए उत्पाद व्ययनो त्रीजो भेद जाणवो.

इहां केटलाक कालनी अपेक्षा लेइने परमत्ययपणो कहे छे ते खोटो छे, कारण के कालद्रव्य जे छे, ते पचास्तिकायनो पर्याय छे, अने परिणतितो द्रव्यनो स्वधर्म छे, माटे काल ते स्वकालरूप वस्तुनो परिणाम तेनो भेद छे, अथवा कालने भिन्न द्रव्य मानियें तो पण काल ते कारणपणे छे, अने अतीत, अनागत वर्त्तमानरूप परिणति तेतो जीवादिक द्रव्यनो धर्म छे ते माटे ए उत्पाद व्यय पण स्वरूपज छे. ए त्रीजो भेद थयो.

तथाच सिद्धात्मनि केवलज्ञानस्य यथार्थज्ञेयज्ञायकत्वात् यथा ज्ञेया धर्मादिपदार्थाः तथा घटापटादिरुपा वा परिणमन्ति तथैव ज्ञाने भासनाद्र यस्मिन् समये घटस्य प्रतिभासः समयातरे

घटध्वंसे कपालादिप्रतिभासः तदा ज्ञाने घटा प्रतिभासध्वंसः कपालप्रतिभासस्योत्पादः ज्ञानरुपत्वेन ध्रुवत्वमिति. तथा धर्मास्तिकाये यस्मिन् समये संख्येयपरमाणूनां चलनसहकारिता अन्यसमये असंख्येयानां एवं संख्येयत्वसहकारिताव्ययः असंख्येयानन्तसहकारिताउत्पादः चलनसहकारित्वेन ध्रुवत्वं. एवमधर्मादिष्ववि ज्ञेयं, एवं सर्वगुणप्रवृत्तिषु इति चतुर्थः ॥

अर्थः—तथा के० तेमज वली सिद्धात्माने विषे केवल ज्ञानगुणनी संपूर्ण प्रगटता छे ते यथार्थ जे कालें जे ज्ञेय जेम परिणमे ते कालें तेमज जाणे एहवो ज्ञेयनो ज्ञायक ते केवल ज्ञान छे, जेम धर्मादि द्रव्य तथा घटपटादि ज्ञेय पदार्थ जे रीते परिणमे ते रीतेज केवल ज्ञान जाणे, ते जे समये घटज्ञान हतुं ते समयांतरे घट ध्वंस थये कपालनुं ज्ञान थाय, तेवारें घटप्रति भासना ध्वंस, कपाल प्रतिभासनो उत्पाद, अने ज्ञाननो ध्रुवपणो एम दर्शनादि सर्व गुणनो प्रवर्त्तन जाणवो.

तथा धर्मास्तिकायने विषे जे समये संख्यात परमाणुनो चलन सहकारिपणो हतो, फरी समयांतरे असंख्यात परमाणुने चलनसहकारीपणो करे तेवारें संख्याता परमाणु चलनसहकारतानो व्यय अने असंख्येय परमाणुने चलनसहकारतानो उत्पाद अने चलनसहकारीपणे ध्रुव छे. एमज अधर्मास्तिकायादिकने विषे पण सर्व गुणनी प्रवृत्ति थाय छे. ए रीते द्रव्यने विषे अनंता गुणनी प्रवृत्ति छे. इहां कोइ पुछशे जे धर्मास्तिकाय

मध्ये अनंता जीव तथा अनंता परमाणु ते चलणसहकारी थाय एटलो चलनसहकारी छे, तो थोडा जीव अने थोडा परमाणुनें चलणसहकार करता बीजो गुण कयो अणप्रवर्त्यो रह्यो ? एम कहे तेने उत्तर के निवारण जे द्रव्य छे तेनो गुण अप्रवर्त्यो रहेज नही अने जीव पुद्गल जे आवी पहोता तेने सहकारें सर्व चलन सहकारी गुणना पर्याय ते प्रवर्ते ज छे, केमके अलोकाकाशमध्ये जो अवगाहक जीव पुद्गल नथी तोपण अवगाहक दान गुण तो प्रवर्ते ज छे. तेम धर्मास्तिकायादिकमा जीव पुद्गल थोडाने पोचवे पण गुण तो बधे प्रवर्त्ते ज छे एम धारवो ए रीतें गुण पर्यायनो उत्पाद व्यय ध्रुवरूप धर्म कहेवो चोथुं रूप कह्युं.

तथा सर्वे पदार्थाः अस्तिनास्तित्वेन परिणामिनः तत्रास्ति भावाना स्वधर्माणा परिणामिकत्वेन उत्पादव्ययौ स्त' नास्ति भावानां परद्रव्यादिनां परावृत्तौ नास्तिभावानां परावृत्तित्वेनाप्युत्पादव्ययौ ध्रुवत्व च अस्तिनास्तिद्वयौ इति पञ्चम ॥

अर्थ–तथा सर्व द्रव्यमा अस्ति तथा नास्ति ए बे स्वभाव परिणमि रह्या छे. तिहा जे अस्ति स्वभाव छे ते स्वद्रव्यादिकनो छे. ते जेवारें ज्ञानगुण घट जाणतो हतो तेवारें घट ज्ञाननी अस्तिता हती, अने तेज घटध्वस थये कपाल ज्ञान थयु ते वारें घट ज्ञाननी अस्तितानो व्यय थयो, अने कपाल ज्ञाननी अस्तितानो उत्पाद थयो, ए रीते अस्तितानो उत्पाद व्यय छे तेज रीतें नास्तितानो पण उत्पाद व्यय जाणवो. जे पहेली घट

नास्तिता हती ते पछे घटध्वंसे कपाल नास्तिता थइ, एम पर-द्रव्यने पलटवे नास्तिता पलटे छे, ते स्वगुणने परिणामिक कार्यने पलटवे करीने अस्तिता पलटे छे, अने जिहां पलटवापणो तिहां उत्पाद व्यय थायज. एम द्रव्यमां सामान्य स्वभाव धर्म छे तेमां जेम संभवे तेम श्री प्रभुनी आज्ञायें उपयोग देइने उत्पाद व्ययपणो करवो अने अस्ति नास्तिपणे ध्रुव छे ए पांचमो अधिकार कह्यो.

तथा पुनः अगुरुलघुपर्यायाणां षड्गुणहानि-वृद्धिरूपाणां प्रतिद्रव्यं परिणमनात् नानाहानि-व्ययेवृद्ध्युत्पादः वृद्धिव्यये हान्युत्पादः ध्रुवत्वं चागुरुलघुपर्यायाणां एवं सर्वद्रव्येषु ज्ञेयं "तत्त्वा-र्थवृत्तौ" आकाशाधिकारे यत्राप्यवगाहकजीव-पुद्गलादिर्नास्ति तत्राप्यगुरुलघुपर्याय वर्त्तनया-वश्यत्वे चानित्यताभ्युपेया ते च अन्ये अन्ये च भवन्ति अन्यथा तत्र नवोत्पादव्ययौ नापे-क्षिकाविति न्यूनं एवं सल्लक्षणं स्यात् इति षष्ठः॥

अर्थ ॥ तथा के० तेमज वली सर्व द्रव्य तथा पर्याय ते अगुरुलघु धर्म संयुक्त होय द्रव्यने प्रदेशें अगुरुलघु अनंतो छे. ते अगुरुलघु समयें समयें प्रदेशें तथा पर्यायें कोइक वारें वृद्धि पामे कोइक वारें घटी जाय; ते वधुघट्ट थवो छ छ प्रकारें छे. १ अनंतभाग हानि, २ असंख्यात भाग हानि, ३ संख्यात भाग हानि, ४ संख्यात गुण हानि, ५ असंख्यात गुण हानि, ६ अनंत गुण हानि, ए छ प्रकारें हानि तथा १ अनंत भाग

वृद्धि, २ असंख्यात भाग वृद्धि, ३ संख्यात भाग वृद्धि ४ सख्यात गुण वृद्धि, ५ असंख्यात गुण वृद्धि, ६ अनंत गुण वृद्धि. ए छ प्रकारनी वृद्धि ते सर्व द्रव्यना सर्व प्रदेशें सर्व पर्यायमां थाय, एक प्रदेशमा कोइक समयें वधे छे कोइक समयें घटे छे. जेम परमाणुमा वर्णादिक वधे घटे छे तेम अगुरुलघुपणो पण वधे घटे छे. हानिनो व्यय छे तो वृद्धिनो उत्पाद छे. अथवा वृद्धिनो व्यय छे तो हानिनो उत्पाद छे, पण अगुरुलघु धुननो ध्रुव छे. एम सर्व द्रव्यने विषे जाणवो. तिहा तत्त्वार्थटीकामां आकाश द्रव्यना अधिकारे कह्यु छे ते लखियें छैयें.

जिहा अलोकाकाशमध्ये अवगाहक जीव पुद्गलादिक द्रव्य नथी तिहा पण अगुरुलघुपर्यायवतपणो अवश्य छे, ते अगुरुलघुनी अनित्यता अवश्य अगीकारे छे. अने ते अगुरुलघु ते पर्यायें तथा प्रदेशें अन्य अन्य के० बीजो बीजो थाय छे, एटले पूर्व समयें अगुरुलघुनो व्यय अने बीजे समयें नवा अगुरुलघुनो उत्पाद छे. जो ए रीते नवो उत्पाद व्यय गवेषियें नही तो अलोकाकाशनें विषे सल्लक्षण न्यून के० ओछो पडे, जे उत्पाद व्यय ध्रुवता संयुक्त ते सत् कहियें अने जे द्रव्य होय ते सत्पणा संयुक्तज होय. माटे अगुरुलघुनुं परिणमन सर्व द्रव्यमां, सर्व पर्यायमां, सर्व प्रदेशमा छे. ए अगुरुलघुनो उत्पाद व्यय कह्यो. ए छट्ठो अधिकार थयो.

तथा भगवतीटीकाया–तथा च–अस्तिपर्यायतः सामर्थ्यरूपा विशेषपर्यायास्ते चानन्तगुणास्ते प्रतिसमयं निमित्तभेदेनपरावृत्तिरूपा. तत्र पूर्वविशेषपर्यायाणां नाशः अभिनवविशेषपर्याया-

णामुत्पादपर्यायवत्त्वे ध्रुवत्वं इत्यादि सर्वत्र ज्ञेयं इति सप्तमः ॥

अर्थ ॥ तेमज वली अस्तिपर्यायथी विशेष पर्याय जे सामर्थ्यरूप ते अनंतगुणा छे. ए भगवती सूत्रनी टीका मध्ये कह्यो छे. जे अस्ति पर्याय ते ज्ञानादि गुणना अविभागरूप पर्याय छे. जे पर्यायमां सर्व ज्ञेय जाणवानुं सामर्थ्य छे ते विशेष पर्याय छे. तथा महाभाष्ये—"आवंतो ज्ञेयास्तावंतो ज्ञानपर्यायाः" ए सामर्थ्य पर्याय गवेष्या छे, ए सामर्थ्य पर्याय ते ज्ञेयनें निमित्ते छे, ते ज्ञेय तो अनेक उपजे छे ने अनेक विणशे छे, तेवारें विशेष पर्याय पण पलटे छे ते प्रतिसमयें निमित्त भेदनी परावृत्ति पलटवेथी पूर्व विशेष पर्याय नाश थाय तथा अभिनव विशेष पर्यायनो उपजवो छे अने पर्यायनी अस्तिता ध्रुव छे, एम गुणपर्यायनो उत्पाद व्यय ध्रुवपणो ते सातमो छे. ए अस्तिनास्ति स्वभाव वखाण्या.

नित्यताऽभावे निरन्वयता कार्यस्य भवति कारणाभावता च भवति अनित्यताया अभावे ज्ञानकतादिशक्तेरभावः अर्थक्रियासंभवः तथा समस्तस्वभावपर्यायाधारभूतभव्यदेशानां स्वस्वक्षेत्रभेदरूपाणामेकत्वपिण्डीरूपापरत्यागः एकस्वभावः ॥ क्षेत्रकालभावानां भिन्नकार्यपरिणामानां भिन्नप्रभावरूपोऽनेकस्वभावः एकत्वाभावे सामान्याभावः ॥ अनेकत्वाभावे विशेषधर्माभावः स्वस्वामित्वव्याप्यव्यापकताप्यभावः

अर्थ ॥ एमज सर्व द्रव्यमा नित्यता तथा अनित्यता छे, ए नित्य अनित्यपणा विना द्रव्य कोइ नथी, जो द्रव्यमा नित्यता न होय तो कार्यनो अन्वय कोने होय ? एटले अमुक कार्य ते अमुक द्रव्ये करयो एम कह्यो जाय नही, माटे द्रव्यमां नित्यता मानवाथीज अमुक द्रव्ये अमुक कार्य करयो एम कहेवाय छे. माटे जो द्रव्यने नित्यपणेज मानियें तो गुणनुं कार्य ते द्रव्यनो कहेवाय, अने गुण ते द्रव्य न कहेवाय. अने जो द्रव्य नित्य होय तो कारणपणानो अभाव थाय माटे द्रव्यमां नित्यता मानवी. अने जो द्रव्यमां अनित्यपणो न मानियें तो जाणंग आदे देइनें सर्व द्रव्यना गुणरूप कार्यनो अभाव थइ जाय, अर्थ क्रिया संभवे नही, एटले कोइ अनित्यपणो होय तो अर्थ क्रियाने कर केमके करवापणो कोइक बीजापणो एटले नवापणो निपजाववो ते पूर्व पर्यायनो ध्वंस थयेथी थाय अने ते एकनो ध्वंस अने कोइक बीजा नवानो नीपजवो ते द्रव्यमा अनित्यपणो छे. एटले नित्य स्वभाव तथा अनित्य स्वभाव ओलखाव्या. हवे एक स्वभाव तथा अनेक स्वभाव ओलखावे छे

तथा के० तेमज समस्त के० सर्व जे स्वभाव अस्तित्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघु आदिक समस्त पर्याय गुणाविभागादिक ते सर्वनु आधारभूत क्षेत्र ते प्रदेश छे ते स्व के० पोताना जे क्षेत्र ते सर्व भेदरूप जुदा जुदा छे, एटले सख्याता प्रदेश भिन्न छे पण ते एक पिंडपणो किवारें तजता नथी, सर्व प्रदेशमा अंतराल क्षेत्रपणो कोइवारं पामतो नथी जे अनता स्वभाव, अनंत पर्याय, ते असंख्यात प्रदेश रुप तेनुं प्रमाण फिरतु नथी एवो जे द्रव्यने विषे समुदाय पिंडपणो रहे छे ते एक स्वभाव कहियें. ते पचास्तिकायमध्ये १ धर्म, २ अधर्म, ३ आकाश, ए

त्रण द्रव्य एकेक छे. अने जीव द्रव्य अनंता छे तेथी पुद्गल परमाणुओ अनंत गुणा छे. ते एक जीव अनेक रूप नवा नवा करे पण अन्तर पडे नही ते माटे द्रव्यमध्ये एक स्वभाव छे.

क्षेत्र असंख्यात प्रदेश काल उत्पाद व्ययरूप भाव पर्याय गुणना अविभाग ते पोताना भिन्नकार्ये परिणामी छे, ते सर्वनो भिन्न प्रवाह छे. एटले सर्वना कार्यपणो भिन्न छे. ते माटे द्रव्यने सर्व स्वभाव पर्याय भेदे विचारतां द्रव्यमां अनेक स्वभाव पण छे. जो वस्तुमां एकपणाना अभाव मानियें तो सामान्यपणो रहे नही अने गुणनो पर्यायनो स्वामी आधार ते कोण थाय? अने आधार विना गुणादि आधेय ते क्यां रहे? ते माटे द्रव्यनो एकपणो छे. जो वस्तुमां अनेकपणो न मानियें तो द्रव्य ते विशेष रहित थई जाय, तेथी गुणनो अनेकपणो शी रीते द्रव्यने विषे पामियें? माटे द्रव्यमां गुणकार्यनो अनेकपणो पण छे तथा स्वस्वामित्व व्यापक व्यापकभाव केम ठरे? जे गुण पर्याय ते स्व के० धन अने द्रव्य ते तेनो स्वामी छे अथवा द्रव्य ते व्याप्य अने गुण पर्याय ते व्यापक छे ए रीते द्रव्यमां एक स्वभाव तथा अनेक स्वभाव जाणवा.

स्वस्वकार्यभेदेन स्वभावभेदेन अगुरुलघुपर्यायभेदेन भेदस्वभावः अवस्थानाधारताद्यभेदेन अभेदस्वभावः भेदभावे सर्वगुणपर्यायाणां सङ्करदोषः गुणगुणीलक्षलक्षणः कार्यकारणतानाशः अभेदाभावे स्थानध्वंसः कस्यैते गुणाः को वा गुणी इत्याद्यभावः॥

अर्थ ॥ स्वस्व के० पोतपोताना कार्यने भेदें करी एटले जीवद्रव्यमां ज्ञानगुण ते जाणवानु कार्य करे, अने दर्शनगुण देखवानु कार्य करे तथा चारित्रगुण थिरतारमणतारूप कार्य करे,' तथा पुद्गलद्रव्य ते रूपपणो भिन्न कार्य करे, तथा वर्णपणो, गंधपणो, रसपणो अने स्पर्शपणो, सर्व कार्य भिन्न छे. तथा स्वभाव भेद ते अस्तिस्वभाव छति रूप छे, नित्य स्वभाव अविनाशीपणो छे, अनित्यपणो ते पलटण रूप छे, एकपणो ते ते पिंडरूप छे, अनेकपणो ते प्रदेशादिक छे. इत्यादि स्वभाव भेद तथा अगुरुलघुपर्याय प्रदेशे गुणाविभागें जूदो जूदो छे. कोई कोईनो तुल्य नथी, हानिवृद्धिरूप परिणमन छे. इत्यादि प्रकारे द्रव्यमां भेद स्वभाव छे.

तथा सर्व धर्मनो अवस्थान के० रहेवो तेने आधारपणो कार्यनी तुलना के० सरिखापणो केवारें भिन्न पडतो नथी, ते माटे द्रव्यमा अभेद स्वभाव छे

जो द्रव्य गुणपर्यायमा भेद स्वभाव न होयतो सर्व संकर-एकपणो थाय तेवारें कार्यनो भेद केम पडे ? ते माटे सर्व द्रव्य गुणपर्यायमां भेद स्वभाव छे जीवते चेतना लक्षणवत अजीव ते चेतना रहित अभेद छे. अजीवमध्ये जे धर्मास्तिकाय द्रव्य ते चलनसहकारनें करे छे, पण बीजा अजीवद्रव्य ते ए कार्य करता नथी एम धर्मास्तिकाय थिरसहायगुणन करे छे. आकाश अवगाहदाननें करे छे. पुद्गलरूपी आवरण स्कंधादि परिणमन करे छे. एम सर्व द्रव्यनें भेद छे तोज भिन्न भिन्न द्रव्य कहेवाय छे. इहा कोइ कहेशे के जीव अनता तेतो सरिखा छे तो सर्व जीवनें एकद्रव्य शावास्ते न कह्यो ? तेने उत्तर जे रूपैया सोना-रूपापणे अथवा धवळापणे तोलपणे सरिखा छे, पण वस्तुना

पिंडपणे भिन्न छे, ते माटे सोने पण भिन्न भिन्न कहियें छैयें. तेम जीवने पण भिन्न भिन्न कहियें. वली उत्पाद व्ययनो फिरवो सर्वमां तेज रीतनो छे. पण पलटण ते एक रीतनो नथी, तथा अगुरुलघुनी हानिवृद्धिनो फिरवो पण सर्व द्रव्यमां पोतपोताने छे, तेथी सर्व जीव तथा सर्व परमाणु भिन्न छे, ए भेद स्वभाव जाणवो.

"तन्मयतावस्थानाधारताद्यभेदेन अभेद स्वभावः" तथा तन्मयना अवस्थानतानो अभेद छे अने आधारतानो पण अभेदपणो छे ते अभेद स्वभाव छे.

तथा भेदनो जो अभावपणो मानियें एटले वस्तुमां भेदपणो न मानियें तो सर्व गुण तथा पर्यायनो संकर के० एकमेकपणो ए दोष लागे, ता गुणी कोण ? तथा गुण कोण ? द्रव्य कोण ? एम गुणपर्यायने केइ द्रव्यनो कयो पर्याय एम वेहेंचण थाय नही. गुण तथा गुणी तथा जे ओलखवा योग्य लक्षण तेनुं चिन्ह तथा कारणधर्म तथा कार्यधर्मता ए वे जुदा पडे नहीं. कार्यधर्म तथा कारणधर्मनो नाश थाय माटे वस्तुमां भेद स्वभाव मानवो.

तथा जो वस्तुमां अभेदपणो न मानियें तो स्थानध्वंस थाय छे. ते स्थान कोण ? अने ते स्थानकमां रहे ते कोण ? इत्यादिकनो अभाव थाय छे. एम विचारतां सर्वथा एकपणो मानतां कोण गुणी ? अने कोण गुण ? एम ओलखाण न थाय. ए रीतें भेदाभेद स्वभाव वस्तुमां मानवा.

परिणामिकत्वे उत्तरोत्तरपर्यायपरिणमनरुपो भव्यस्वभावः तथा तत्त्वार्थवृत्तौ इह तु भावे द्रव्यं

भव्य भवनमिति गुणपर्यायाश्च भवनसमवस्थान-
मात्रका एव उत्थितासीनोत्कुटकजागृतशयि-
तपुरुषवत्तदेवच वृत्यतरव्यक्तिरूपेणोपदिश्यते,
जायते, अस्ति विपरिणमते, वर्द्धते, अपक्षीयते,
विनश्यतीति पिण्डातिरिक्त वृत्यतरावस्थाप्रकाश-
ताया तु जायते इत्युच्यते सव्यापारैश्च भवनवृत्तिः
अस्ति इत्यनेन निर्व्यापारात्मसत्ता ऽऽख्यायते
भवनवृत्तिरुदासीना अस्तिशब्दस्य निपातत्वात्
विपरिणमते इत्यनेन तिरोभूतात्मरूपस्यानुछि-
न्नतथावृत्तिकस्य रूपान्तरेण भवन यथा क्षीर
दधिभावेन परिणमते विकारान्तरवृत्या भवन-
वत्तिष्ठते वृत्यन्तरव्यक्तिहेतुभाववृत्तिर्वा विपरि-
णामः वर्द्धत इत्यनेन तूपचयरूपः प्रवर्त्तते यथा-
ङ्कुरो वर्द्धते उपचयवत् परिणामरूपेण भवन-
वृत्तिर्व्यंजते अपक्षीयते इत्यनेन तु तस्यैव परि-
णामस्यापचयवृत्तिराख्यायते दुर्वलीभवत् पुरु-
षवत् पुरुषवदपचयरूप भवनवृत्यन्तरव्यक्तिरु-
च्यते विनश्यति इत्यनेनाविर्भूतभवनवृत्तिस्तिरो-
भवनमुच्यते यथा विनष्टो घटः प्रतिविशिष्टस-
मवस्थानात्मिकाभवनवृत्तिस्तिरोभूता नत्वभा-

वस्येव जाता कपालाद्युत्तरभवनवृत्यन्तरक्रमावि-
च्छिन्नरूपत्वादित्येवमादिभिराकारैर्द्रव्याण्येवम-
वनलक्षणान्यपदिश्यन्ते, त्रिकालमूलावस्थाया
अपरित्यागरुपोऽभव्यस्वभावः, भव्यत्वाभाववि-
शेषगुणानामप्रवृत्तिः अभव्यत्वाभावे द्रव्यान्त-
रापत्तिः

अर्थ ॥ हवे भव्य स्वभाव तथा अभव्य स्वभाव कहे छे. जीवाजीवादिक द्रव्य छे ते परिणामि छे. समये समये नवा नवा परिणामें परिणमे छे. तिहां पूर्वपर्यायने विनाशे अने उत्तरोत्तर नवा नवा पर्यायने प्रगटावे एवी जे द्रव्यनी परिणति तेनुं मूल कारण ते भव्य स्वभाव कहियें. तिहां तत्त्वार्थ टीका मध्ये कह्यो छे. इहां द्रव्यानुयोगने विषे भाव धर्मने विषे एटले गुण पर्यायने विषे द्रव्य ते भव्य के० भवन थयो, एटले नवो निपजवो ते भवन इति के० एम वस्तुना गुणपर्याय जे छे ते भवन के० नवो थवा रूप समवस्थान मात्र छे, एटले नवा नवा थवा-रूप छे. तिहां दृष्टांत कहे छे, जे पुरुष उत्थित के० उठ्यो आसीन के० फरि तेहिज वेठो, वेसवुं ते पद्मासन कहियें, अथवा उकडवुं ते आसन सहित सूवुं जेम इत्यादिक पर्यायें ते पुरुष थाय छे तेम तेहज वृत्यंतर के० पूर्व पर्यायनो विनाश अने उत्तर पर्यायनो उपजवो ते वृत्यंतर कहियें, वृत्यंतर व्यक्तिरूपपणे उपदेशे छे ते भवनधर्मनी प्रवृत्ति कहे छे, जायते के० नवो उपजे अस्ति के० छतिपणे रहे. विपरिणमते के० बीजापणे परि-

णमे वली सामर्थ्य धर्म वधे अने अपक्षीयते के० घटे वितश्यति के० विनाश पामे पिंड के० समुदायपणो तेथी अतिरिक्ति के० बीजी वृत्ति जे गुणनी प्रवृत्त्यंतरनी अवस्थाने प्रकाश थवे करीने जे भवनपणो थाय एटले जे ठेरी जे भवनवृत्ति ते सव्यापार छे पण निर्व्यापार नथी.

अस्ति ए वचने निर्व्यापार आत्मशक्ति छे ते कहियें छैयें. ते पण भवनवृत्तिथी उदासीन छे एटले भवनवृत्तिने ग्रहण करती नथीं. अस्ति शब्दने निपातपणो छे, विपरिणमते ए वचने तिरोभूत के० अणप्रगटी जे वस्तु तेमां तद्रूपपणे अनुच्छिन्न के० विच्छेद गइ. तथा वृत्तिकस्य के० ते रीतें वर्तति आत्मशक्ति तेनो रुपातर थवो ते भवन कहियें. तिहा दृष्टांत–जेम क्षीर ते दूध दधिभावें परिणमे, विकारातरे थवो ते रीतें रहे ए भवनधर्म कहियें जे ज्ञानादिपर्यायमां अनतज्ञेय जाणवानी शक्ति छे पण जे ज्ञेय जे रीतें परिणमे ने रीतें ज्ञानगुण प्रवर्त्ते ए ज्ञानगुणनुं पवर्त्तन ते प्रतिसमयें विपरिणामपणे परिणमन छे. ए पण भवन धर्म छे वली वृत्त्यंतरवर्तने अन्यपणे व्यक्तिने हेतु करणे जे भवांतरे वर्तवो ते विपरिणाम कहियें. तथा वली वर्द्धते के० वधे ए वचने उपचयरूपपणे प्रवर्ते जेम अंकुर वधे छे तेम वर्णादिक पुद्‌गलना गुण उपचयपणे वधे ए उपचयरूप भवनता वृत्ति व्यज्यते के० प्रगट करियें छैयें

एम गुणने कार्यांतरपणे परिणमने द्रव्यमां भवन धर्म छे " अपक्षीयते " ए वचने करीने तु के० वली तेहिज परिणामनो ऊणो थवो अथवा टलवो कहियें, दुर्बल थता पुरुपनी परें जेम पुरुप दुर्बल थाय तेम पर्यायने घटवे द्रव्य प्रमाणादिक तथा ते समयें अगुरुलघु पर्याय घटवे ते दुर्बल थवु ते रूप जे भवन

वृत्तिने अंतरे व्यक्ति के० प्रगटता कहि छे ' तथा विनश्यति ' एम कहेवाथी आविर्भूत के० प्रगट थयो जे भवन धर्मनो वर्तवो तेनो तिरोभाव थयो कहियें. जेम विणस्यो घट जे मृत्पिंडने विषे ते चक्रादि कारणे प्रगट थयो, जे घट तेने प्रध्वंसे विनाश कहियें. एम द्रव्यने विषे कार्य करवारूप जे पर्याय तेने तिरो-भावें अन्यपणे कार्यकरण रीते समवस्थान जे रहेवुं ते समयें ते भवनवृत्ति कहियें. तथा तिरोभावपणाने अभावें थावुं जे कपा-लादिक उत्तर भवन तेपणे वर्त्तवुं ए पण भवन धर्म छे. एम अनुक्रमे अविच्छिन्न निरंतर रूपें इत्यादिक अनेक आकारें द्रव्य तेज भवन लक्षण कहियें. ए भव्य स्वभाव जाणवो. द्रव्यने विषे जे अस्तित्व, वस्तुत्व, प्रमेयत्व, अगुरुलघुत्वादिक धर्म ते त्रणे कालमां मूल अवस्थाने अपरित्यागे के० तजता नथी. तेहिज रूपपणे रहे. एहवा जेटला धर्म ते अभव्यस्वभाव जाणवो, जे अनेक उत्पाद व्ययने परिणमने–फिरवे फिरे पण जीवनो जीवपणो पलटाय नही, तेमज अजीवनो अजीवपणो पलटाय नही ए सर्व अभव्य स्वभाव जाणवो.

हवे ए बे स्वभाव जो द्रव्यमां न मानियें तो शो दोष थाय ? ते कहे छे. जो द्रव्यने विषे भव्यपणो न मानियें तो द्रव्यना जे विशेष गुण गतिसहकार, स्थितिसहकार, अवगाह दान, ज्ञानयका, वर्णादि जे पंचास्तिकायना विशेष गुण तेनी प्रवृत्ति न थाय, अने प्रवृत्ति विना कार्यनो करवो न थाय अने कार्यने अणकरवे द्रव्यनो व्यर्थपणो थाय, ते माटे भव्य स्वभाव छे.

जो द्रव्यने विषे अभवनरूप अभव्यस्वभाव न होय अने एकलो भवन स्वभावज होय तो नवा नवापणे थवे ते द्रव्य पल-

टीने अन्य द्रव्य थइ जाय, ते माटे द्रव्यत्व, सत्य, प्रमेयत्वादि धर्मे अभव्यपणो छे तेथीज द्रव्य पल्टतो नथी, तेमनो तेमज रहे छे ए अभव्यस्वभाव छे.

वचनगोचरा ये धर्मास्ते वक्तव्या, इतरे अवक्तव्याः । तत्राक्षराः सख्येया तत्सन्निपाता असख्येयाः तद्गोचरा भावा भावश्रुतगम्या अनन्तगुणाः वक्तव्याभावे श्रुताग्रहणत्वापत्तिः अवक्तव्यभावे अतीतानागतपर्यायाणा कारणतायोग्यतारुपाणामभावः सर्वकार्याणां निराधारताऽऽपत्तिश्च सर्वेषां पदार्थानां ये विशेषगुणाश्चलनस्थित्यवगाहसहकारपूर्णगलनचेतनाद - यस्ते परमगुणा ॥ शेषा साधारणा, साधारणासाधारणगुणास्तेषां तदनुयायीप्रवृत्तिहेतु परमस्वभाव इत्यादय सामान्य स्वभावा ॥

अर्थ ॥ आत्मानो वीर्यनामा गुण तेना अविभाग जे वीर्यांतराय कर्म्म आवर्या छे, तेज वीर्यांतरायने क्षयोपशमें तथा क्षय थवाथी प्रगट्यो जे वीर्यधर्म तेने भाषापर्याप्ति नामकर्मने उदये लीवराणाजे भाषावर्गणाना पुद्गल ते शब्दपणे परिणमे ते शब्द पुद्गल खध छे, पण श्रोताजनने ज्ञानना हेतु छे पटले जेमा जे गुण न होय ते गुणनुं कारण पण थाय नही एम जे कहे छे ते मृषा छे, केमके जे निमित्त कारण होय तेमा गुण

होय किंवा न पण होय, अने उपादान कारणमां ते गुणना कारणतापणे तथा योग्यतापणे नियामक छे ते वचनयोगेंज ग्रहवाय, एवा जे वस्तुमां धर्म छे तेने वक्तव्य धर्म कहियें. अने तेथी इतर के० जूदा जे धर्मास्तिकाय द्रव्यमां अनेक धर्म छे ते वचनमां ग्रहवाता नथी, तेवा सर्व धर्म अवक्तव्य कहियें. ते वक्तव्य धर्मथी अवक्तव्य धर्म अनंतगुणा छे. वचनतो संख्याता, छे पण ते वचनोमां एवो सामर्थ्य छे जे अवक्तव्य धर्म सर्वनो ज्ञानपणो थाय. उक्तं च 'अभिलप्पा जे भावा, अणंतभागो उ य अणभिलप्पाणं, अभिलप्पसाणंतो, भाग सुए निवद्धो अ ॥ १ ॥ तत्र के० तिहां अक्षर संख्याता छे, ते अक्षरना सन्निपात संयोगीभाव असंख्याता छे, ते अक्षर संन्निपातने ग्रहवाय एवा जे पदार्थादिकना भाव ते अनंतगुणा छे, तेथी अवक्तव्य भाव अनंतगुणा छे, जे मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अभिलाप्यभावनो परोक्षप्रमाणे ग्राहक छे. अवधिज्ञान ते पुद्गलनो प्रत्यक्ष प्रमाणे जाणंग छे, पण एक परमाणुना सर्व पर्यायने जाणे नही. केटलाक पर्यायने जाणे ते पण असंख्यात समयें जाणे, अने केवलज्ञान ए छ द्रव्यना सर्व पर्यायने एक समयमां प्रत्यक्ष जाणे. माटे जो द्रव्यमां वक्तव्यपणो न होय तो श्रुतज्ञाने ग्रहण थाय नही अने जे ग्रंथाभ्यास, उपदेशादिक सर्व काम थाय छे तेतो एम नथी माटे द्रव्यमां व्यक्तव्यपणो छे.

अवक्तव्याभावे के० अवक्तपणाने न मानियें तो अतीतपर्याय ते वस्तुमां कारणतानी परंपरामां रह्या छे, तथा अनागतपर्याय सर्व योग्यतामां रह्या छे ते सर्वनो अभाव थाय, ते वारें वस्तुमां वर्तमान पर्यायनी छति पामियें तेथी अतीत अनागतनो ज्ञान थाय नही, माटे अवक्तव्य स्वभाव अवश्य मानवो अने

वर्त्तमान सर्व कार्य ते निराधार थइ जाय, अने द्रव्यमा एक समयमां अनंता कारण छे, ते अनंता कारणना अनता कार्य धर्म छे, अने अनंता कार्यना अनता कारण परंपरानुं ज्ञान ते केव-लीने छे, अने वर्त्तमानकाले कारण धर्म तथा कार्य धर्मथी अनंतगुणा कारण कार्यनी योग्यरूप सत्ता छे ते कोइना अवि-भाग नथी, पण अविभागी जे ज्ञानादिक गुण तेमा अनता कारणधर्म, अनंता कार्यधर्म ऊपजवानी योग्यतारूप सत्ता छे ते सर्व अवक्तव्यरूप छे.

हवे परम स्वभावनुं स्वरूप कहे छे. सर्व जे धर्मास्तिका-यादिक पदार्थ तेना विशेष गुण जे धर्मास्तिकायनो चलन सह-कारीपणो तथा अधर्मास्तिकायनो स्थितिसहाय, आकाशास्ति-कायनो अवगाहक तथा पुद्गल द्रव्यनो पूरणगलन, जीव द्रव्यनो चेतना लक्षण, ए सर्व द्रव्यना विशेष गुण कह्या. एम लक्षणरूप तथा द्रव्यातरथी भिन्न पाडवानुं मूल कारण ते परम प्रकृष्ट गुण कहिये. ए प्रधान गुणने अनुयायी बीजा जे साधारण गुण ते गुण पंचास्तिकायमा पामिये. तेना नाम अविनाशीपणो, अखंडपणो, नित्यत्वादिक ए पंचास्तिकायमा सरिखा छे ते माटे साधारण गुण, तथा पंचास्तिकायमा कोइक अस्तिकायमा पामिये, कोइकमा न पामीये ते गुणने साधारण असाधारण कहिये, ते सर्व गुणने विषे विशेष गुणने अनुयायि प्रवर्त्ते छे ते प्रवर्त्तनना कारण द्रव्यमा एक परमस्वभावपणो छे, ते परम स्वभावने परिणमने द्रव्यना सर्व गुण मुख्य गुणने अनुरागेज प्रवर्त्ते. ते परमस्वभाव सर्व द्रव्यने विषे छे. एटले तेर सामान्य स्वभाव कह्या. वली अनेकांतजयपताकामा कह्या छे

तथास्तित्व, नास्तित्व, कर्तृत्व, भोक्तृत्व, अस-

र्वगतत्व, प्रदेशवत्त्वादिभावाः पुनः तत्त्वार्थटीकायां पुनरप्याादिग्रहणं कुर्वन् ज्ञापयत्यत्रानन्तधर्मवत्त्वं तत्राशक्ताः प्रस्तारयन्तु सर्वे धर्माः प्रतिपदं प्रवचनत्वेन पुंसा यथासंभवमायोजनीयाः क्रियावत्त्वं पर्यायोपयोगिता प्रदेशाष्टकनिश्चलता एवंप्रकाराः संतिभूयांसः अनादिपरिणामिका भवन्ति जीवस्वभावा धर्मादिभिस्तु समाना इति विशेषः ॥

. अर्थ ॥ तेमज अस्तिपणो, नास्तिपणो, कर्त्तापणो, भोक्तापणो, गुणवंतपणो, असर्वव्यापिपणो, प्रदेशवंतपणो, इत्यादि अनंत स्वभाववंत द्रव्य छे. तेमज तत्त्वार्थ टीकामध्ये परिणामिक भावना भेद वखाणतां कह्यो छे. पुनरपि आदि शब्दना ग्रहण करतां एम जणावे छे जे वस्तु अनंत धर्मवंत छे ते सर्व विस्तारी शके नही तो पण द्रव्य द्रव्यने विषे प्रवचनना जाण पुरुषें जेम संभवे तेम धर्म जोडवा. तथा क्रियावंतपणो जे ज्ञानादिक गुण ते लोकालोक जाणवाने प्रति समयें प्रवर्ते छे. श्री भाष्यकारे ज्ञानादि गुण ते करण अने तेज गुणनी प्रवृत्ति ते क्रिया जाणवी. तथा देखवो ते कार्य एम धर्मास्तिकायादिकना सरवे गुण ते त्रण परिणतिये परिणामी छे, ते माटे पंचास्तिकाय ते अर्थ क्रिया करे छे, ते क्रियावंतपणो जाणवो. सर्व पर्यायनो उपयोगीपणो ए पण जीव स्वभाव छे तथा प्रदेशाष्टकनी निश्चलता ए पण जीवनो स्वभाव छे. तिहां धर्माधर्म अने आकाश ए त्रण अस्तिकायना प्रदेश अनादि अनंतकाल अवस्थितपणे

छे. पुद्‌गलने चलपणो सदा सर्वदा छे. पुद्‌गलपरमाणु तथा पुद्‌गलस्कंध ते संख्यातो काल अथवा असंख्यातो काल एक क्षेत्रे रहे पण पछे अवश्य चल थाय. तथा जीवद्रव्यने सकर्म्मा संसारीपणे क्षेत्रथी क्षेत्रांतर गमन, भवथी भवांतर गमनरूप चलता छे, ते जीवने सम्यक्‌दर्शन सम्यक्‌ज्ञान अने सम्यक्‌चारित्रने प्रगटवे सर्व परणावभोगीपणो निवारवे आत्म स्वरुप निरधारण स्वरूप भासन स्वरूप परिणमने करवे, स्वरूप एकत्वें, स्वधर्मकर्त्ता, स्वधर्मभोक्तापणे, सकल पर भाव तजवे, निरावरण, निःसग, निरामय, निर्द्वंद्व, निष्कलंक, निर्मक, स्वीय अनतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतचारित्र, अरूपी,' अव्याबाध, परमानदनयी, सिद्धात्मा, सिद्धक्षेत्रे रह्या ते सादि अनंतकाल स्थिर छे, सकल प्रदेश स्थिर छे अने संसारी जीव तेना आठ प्रदेश सदा सर्वदा स्थिर छे. ते आठ प्रदेश निरावरणे तथा आचारागनी टीका शिलागाचार्यकृतना लोकविजयाध्ययनने प्रथमोद्देशके तदनेन पचदशविधेनापि योगेनात्मा अष्टौ प्रदेशान् विहाय तप्तभाजनोदकवदुद्वर्त्तमानैः सर्वैरेवात्मप्रदेशैरात्मप्रदेशावष्टब्धाकाशस्थ कार्मणशरीरयोग्यं कर्मदलिकं यद् बध्नाति तत् प्रयोकर्मेत्युच्यते.

एटले आ अष्ट प्रदेशे कर्म लागतां नथी इहां कोइ पुछे जे आठ प्रदेश निरवाण छे तो लोकालोक केम जाणता नथी ? तिहा उत्तर जे आत्म द्रव्यनी जे गुणप्रवृत्ति ते सर्व प्रदेश मिले प्रवर्ते तो तेमा ए आठ प्रदेश अल्प छे तेथी आठ प्रदेशमा सर्व गुण निरावरण छे पण कार्य करी शकता नथी जेम अग्निनु अत्यत सूक्ष्म कणीयुं होय तेमा दाहक, पाचक, प्रकाशक गुण छे पण अल्पता माटे दाहकादिकार्य करी शकतुं नथी.

३ आधाराधेयता, ४ जन्यजनकता तत्त्वार्थवृत्ति मध्ये छे. तथा अगुरुलघुता, विभुता, करणता, कार्यता, कारकता, ए शक्तिनी व्याख्या श्रीविशेषावश्यके छे, भावुकता तथा अभावुकता शक्ति ते श्री हरिभद्रसूरिकृत भावुक नामे प्रकरण मध्ये कहि छे.

एम केटलीक शक्ति जैनना तर्कग्रन्थो जे अनेकांतजयपताका सम्मति प्रमुखमां छे, तथा ऊर्ध्व प्रचयशक्ति अने तिर्यक् प्रचयशक्ति, ओघशक्ति, समुचितशक्ति, ए सर्व संम्मतिग्रन्थने विषे छे. तथा जे द्विगुणी आत्मा माने ते सर्व धर्म शक्तिरूपज माने छे. तेणे दानाधिकलब्धि अव्याबाध सुख प्रमुख शक्ति मानी छे. इहां व्याख्यांतरे जे गुणकरण छे तेने कर्त्तादिकपणो ते सामर्थ्य छे, जाणवो देखवो ते कार्य छे, केटलीक शक्ति जीवमांज छे, अने केटलीक पंचास्तिकाय मध्ये छे. तथा देवसेनकृत नयचक्रमध्ये जीवने अचेतन स्वभाव, मूर्त स्वभाव, तथा पुद्गल परमाणुने चेतन स्वभाव, अमूर्त स्वभाव कह्या ते असत् छे, एतो आरोपणपणे कोइक कहे ते कथनमात्र जाणवो. पण ए वात छतीमां नथी. जे धर्म आरोपें तथा उपचारें गवेषाय ते वस्तुनो धर्म नथी. उपाधिथी थाय छे, ते माटे जे उपाधि ते वस्तुनी सत्ता नथी एम धारवुं.

धर्मास्तिकाये अमूर्ताचेतनाक्रियगतिसहायादयो गुणाः अधर्मास्तिकाये अमूर्त्ताचेतनाक्रियस्थितिसहकारादयो गुणाः। आकाशास्तिकाये अमूर्ताचेतनाक्रियावगाहनादयो गुणाः। पुद्गलास्तिकाये मूर्ताचेतनसक्रियपूर्णगलनादयो वर्णगन्ध-

रसस्पर्शादयो गुणाः । जीवास्तिकाये ज्ञानदर्शनचारित्रवीर्याऽव्याबाधामूर्त्ताऽगुरुलघ्वनवगाहादयो गुणाः। एव प्रतिद्रव्य गुणानामन्तरवं ज्ञेयम् ॥

अर्थ ,। धर्मास्तिकायना गुण चार १ अरूपी, २ अचेतन, ३ अक्रिय, ४ गतिसहाय इत्यादि अनतगुण छे. अधर्मास्तिकायना गुण चार १ अरूपी, २ अचेतन, ३ अक्रिय ४ स्थितिसहाय, इत्यादि अनतगुण छे. आकाशास्तिकायना गुण चार १ अरूपी, २ अचेतन, ३ अक्रिय, ४ अवगाहनादिक अनंतगुण छे, पुद्गलास्तिकायना गुण चार छे १ रूपी, २ अचेतन, ३ सक्रिय, ४ पूर्णगलन. १ वर्ण, २ गंध, ३ रस, ४ स्पर्श इत्यादिक गुण अनता छे. जीवास्तिकायने विषे १ ज्ञान, २ दर्शन, ३ चारित्र, ४ वीर्य, ५ अव्याबाध, ६ अरूपी ७ अगुरुलघु, ८ अनवगाहादिक अनतगुण छे, ए रीते अनंतागुण जाणवा.

पर्यायाः षोढा द्रव्यपर्याया असख्येयप्रदेशसिद्धत्वादयः । १ द्रव्यव्यञ्जनापर्याया. द्रव्याणां विशेषगुणाश्चेतनादयश्चलनसहायादयश्च, २ गुणपर्यायाः गुणा विभागादय. ३ गुणव्यञ्जनपर्याया ज्ञायकादय कार्यरुपा मतिज्ञानादय ज्ञानस्य, चक्षुर्दर्शनादयो दर्शनस्य, क्षमामार्दवादयः चारित्रस्य, वर्णगन्धरसस्पदर्शायो मूर्त्तस्य इत्यादि ४ स्वभावपर्याया अगुरुलघुविकारा ते च द्वादश-

प्रकाराः षट्गुणहानिवृद्धिरूपाः अवाग्गोचराः एते पञ्चपर्यायाः सर्वद्रव्येषु, विभावपर्यायाः जीवे नरनारकादयः ॥ पुद्गलेद्व्यणुकतोऽनन्ताणुकपर्यन्तोस्कन्धाः

अर्थ ॥ हवे नयज्ञान करवानो अधिकार कहे छे. तिहां द्रव्यास्तिकायना मूल बे भेद छे. १ शुद्ध द्रव्यास्तिक, २ अशुद्ध द्रव्यास्तिक, अने देवसेनकृत पद्धतिमां द्रव्यास्तिकना दश भेद कर्या छे ते सर्व ए बे भेद मध्ये समाय छे, तथा ते सामान्य स्वभावमां समाणा छे ते माटे इहां न वखाण्या.

हवे पर्यायना छ भेद कहे छे. तिहां प्रथम १ जे द्रव्यने विषे एकत्वपणे रह्या जे जीवादिकना असंख्याता प्रदेश तथा आकाशना अनंता प्रदेश ए द्रव्य पर्याय कहिये, २ सिद्धत्वादिक अखंडत्वादिक तथा द्रव्यनो व्यंजक के० प्रगटपणो जे माने छे ते द्रव्य व्यंजन पर्याय कहियें.

द्रव्यनो विशेष गुण जे अन्य द्रव्यमां नथी तेने विशेष गुण कहिये. ते जीवने चेतनादिक अने धर्मास्तिकायमां चलण सहकार तथा अधर्मास्तिकायमां स्थिरसहकार, आकाशमां अवगाहदान, पुद्गलमां पूरणगलणरूप ए सर्व द्रव्यनी भिन्नताने प्रगट करे छे ते माटे ए धर्मने व्यंजन पर्याय कहिये.

३ एक गुणना अविभाग अनंता छे तेनो पिंडपणो ते गुणपर्याय कहिये ४ गुणव्यंजन पर्याय ते ज्ञाननो जाणंगपणो तथा चारित्रनो स्थिरतापणो इत्यादिक अथवा ज्ञानगुणना भेदांतर ज्ञानना भेद जे मतिज्ञानादिक पांच तथा दर्शनगुणना चक्षुदर्शनादिक भेद तथा चारित्रगुणना क्षमादिक भेद, पुद्गलनो

अरूपी गुणना अवन्ने, अगंधे, अरसे, अफासे, इत्यादिक चार चार जाणवा ते गुण व्यंजन पर्याय, ५ स्वभाव पर्याय ते वस्तुनो कोइक स्वभावज एवो छे जे अगुरुलघुपणे ६ प्रकारनी वृद्धि तथा ६ प्रकारनी हानि एवी रीते बारप्रकारे परिणमे छे. इहा कोइ प्रेरकनो योग नथी. वस्तुने मूल धर्मनो हेतु छे. एनुं स्वरूप पूरुं वचनगोचर नथी. अनुभव गम्य नथी. केमके श्रीठाणांगसूत्रनी टीका मध्ये श्रुतज्ञान वृद्धिना सात अंग छे. तिहा प्रथम सूत्रअंग बीजु निर्युक्तिअग. ३ भाष्य अंग, ४ चूर्णिवालो सूत्रादि सर्वना अर्थ कहे छे. ५ टीका व्याख्या निरन्तर ए पाच अग तो ग्रथरूप छे. तथा छट्ठो अग परपरारूप छे तथा सातमुं अंग अनुभव ए साते कारणे विनय सहित भणता सुणता थका, साचा अर्थ पामीने आत्मानु निर्मल ज्ञानथाय. श्री भगवतीसूत्रे "गाथा" "सुत्तत्थो खलु पढमो बीओ निजुत्तिमिसिओ भणीओ, तइयो अ निरवसेसो, एस विहि होइ अणुओगो," ए पाच पर्याय कह्या ते सर्व द्रव्य मध्ये छे.

६ विभाव पर्याय ते जीव तथा पुद्गल मध्येज छे, ते विभाव पर्याय जीवने नरनारकीपणु पामवुं ते तथा पुद्गलनो द्वयणुक त्र्यणुकादि खधनो मिलवु, अनंतागुण पर्यंत अनतपुद्गल स्कधरूप ते विभाव पर्याय कहियें.

मेर्वाद्यनादिनित्यपर्याया. चरमशरीरत्रिभागन्यूनावगाहनादय सादिनित्यपर्याया सादिसान्तपर्याया भवशरीराध्यवसायादय अनादिसान्तपर्याया भव्यत्वादय तथा च निक्षेपा·

सहजरुपा वस्तुनः पर्यायाः एवं चत्वारो वत्थुपज्झाया इति भाष्यवचनात् नामयुक्ते प्रति वस्तुनि निक्षपचतुष्टयं युक्तम् उक्तंचानुयोगद्वारे जत्थ य जं जाणिज्झा, निरक्खेवं निरिखवे निरवसेसं, जत्थ य नो जाणिज्झा, चउक्कयं निरिकवे तत्थ, तत्र नामनिक्षेपः स्थापनानिक्षेपः द्रव्यनिक्षेपः भावनिक्षेपः तत्र नामनिक्षेपो द्विविधःसहजः साङ्केतिकश्च स्थापनाऽपि द्विविधा सहजा आरोपजा च, द्रव्यनिक्षेपो द्विविधः आगमतो नोआगमतश्च तत्र आगमतः तदर्थज्ञानानुपयुक्तः नोआगमतो ज्ञशरीरभव्यशरीरतद्व्यतिरिक्तभेदात्रिधा, भावनिक्षेपोद्विविधः आगमतो नो आगमतश्च तद्ज्ञानोपयुक्तः तद्गुणमयश्च वस्तुस्वधर्मयुक्तं तत्र निक्षेपा वस्तुनः स्वपर्याया धर्मभेदाः

अर्थ ॥ पुद्गलनुं मेरु प्रमुख ते अनादि नित्य पर्याय छे, जीवनी सिद्धावस्था, सिद्धावगाहनादिक, ते सादि नित्य पर्याय छे, तथा भाव अने शरीर तथा अध्यवसाय ए त्रण प्रकारना योगस्थान जे वीर्यना क्षयोपशमथी ऊपना तेमां कषायस्थान जे चेतननो क्षयोपशम कषायना उदयथी मिल्या अने संयमस्थान

जे चारित्रनो क्षयोपशम परिणमी जे चेतनादिक गुण ए सर्व अध्यवसायस्थानक ते सादि सांत पर्याय छे, तथा सिद्धिगमन योग्यता धर्म ते भव्यपणो. ए पर्याय ते अनादि सांत छे, जे सिद्धत्वपणो प्रगटे भव्यत्वपर्यायनो विनाश छे ते माटे अनादिकालनो छे पण अंत थवा सहित छे, माटे अनादि सांतपर्याय छे, एम पर्याय अनेक जाणवा.

तथा वस्तुमां सहजना जे चार निक्षेपा छे, ते पण वस्तुना स्वपर्याय छे, ते श्रीविशेषावश्यकनी भाष्यमध्ये कह्यो छे. " चत्तारो वत्थुपज्जाया " ए वचन छे ते माटे स्वपर्याय कहिये. वली श्री अनुयोगद्वारसूत्रमां कह्यो छे, जिहा जे वस्तुना जेटला निक्षेपा जाणिये तिहा ते वस्तुना तेटला निक्षेपा करिये. कदाचित् वधता निक्षेपा भासनमा न आवे तोपण १ नाम, २ स्थापना, ३ द्रव्य, ४ भाव, ए चार निक्षेपा तो अवश्य करवा. तेमां नामनिक्षेपाना बे भेद छे.

१ सहजनाम, २ सांकेतिक नाम, ते कोइनो कर्यो नाम, तथा स्थापनाना बे भेद छे. १ सहजस्थापना ते वस्तुनी अवगाहनारूप, २ आरोपस्थापना ते आरोपथी थइ माटे कृत्रिम कहिये, आरोपजा कहिये. हवे द्रव्य निक्षेपाना बे भेद छ ते कहे छे, १ आगमथी द्रव्य निक्षेपो ते जे पुरुष स्वरूपने जाणे पण हमणा ते उपयोगे नथी ते आगमद्रव्यनिक्षेप. जे वस्तु ते गुण सहित छे पण हमणा तेपणे वर्तता नथी. तेने नो आगम कहिए तेहना त्रण भेद छे. १ ज्ञशरीर जेहना हता पण मरण पाम्या तेथी तेनु शरीर जे ऋषभदेवना शरीरनी भक्ति श्रीजंबूद्वीप पन्नतीमा छे, २ भव्य शरीर ते हमणा तो गुणमय नथी

पण गुणमय थशे, जेम अयमंतामुनि, ए भव्यशरीर जाणवो, ३ तद्व्यतिरिक्त जे ते गुणे वर्ते छे पण ते उपयोगे इमणां वर्तता नथी.

भावनिक्षेपाना बे भेद १ आगमथी भावनिक्षेपो ते आगमना अर्थनो जाण वली ते उपयोगें वर्ते छे, २ नोआगमथी भावनिक्षेपो ते जेपणे ज्ञ वर्ते छे तेज रूप छे, ए रीते निक्षेपा कहेवा.

ए चार निक्षेपामां पहेला त्रण निक्षेपा ते कारणरूप छे, अने चोथो भावनिक्षेपो ते कार्यरूप छे, ते भावनिक्षेपाने निपजावतां पहेला त्रण निक्षेपा प्रमाण छे नहीं तो अप्रमाण छे. पहेला त्रण निक्षेपा द्रव्यनय छे. एक भावनिक्षेपो ते भावनय छे. भावनिक्षेपाने अणनिपजावतां एकली द्रव्यनी प्रवृत्ति ते निष्फल छे. एम श्री आचारांगनी टीकामां लोकविजय अध्ययने कह्युं छे ते लखीये छैये. " फलमेव गुणः फलगुणः फलं च क्रिया भवति तस्याश्च क्रियायाः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररहिताया ऐहिकामुष्मिकार्थं प्रवृत्तायाः आनात्यंतिकोऽनैकान्तिको भवेत् फलं गुणोप्यगुणो भवति सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्रक्रिया यास्त्वेकान्तिकानाबाधसुखाख्यसिद्धिगुणोऽवाप्यते एतदुक्तं भवति सम्यग्दर्शनादिकैव क्रियासिद्धिः फलगुणेन फलवत्यपरा तु सांसारिकसुखफलाभ्यास एव फलाध्यारोपान्निष्फलेत्यर्थः "

एटले रत्नत्रयी परिणमन विना जे क्रिया करवी ते थकी संसारीक सुख थाय ते क्रिया निष्फल छे ए पाठ छे माटे भाव निक्षेपाना कारण विना पेहेला त्रणे निक्षेपा निष्फल छे निक्षेपा तो मूलगी वस्तुना पर्याय छे द्रव्यनो स्वधर्मज छे.

नयास्तु पदार्थज्ञाने ज्ञानांशाः तत्रानन्तधर्मा-

त्मके वस्तुन्येकधर्मोन्नयनं ज्ञाननयः तथा "रत्नाकरे" नीयते येन श्रुताख्यप्रमाणविषयीकृतस्यार्थस्यांशस्तदितरांसौदासीन्यत स प्रतिपत्तुरभिप्रायविशेषो नयः स्वाभिप्रेतादंशापलापी पुनर्नयाभासः, स व्याससमासाभ्यां द्विप्रकारः व्यासतोऽनेकविकल्पः समासतो द्विभेदः द्रव्यार्थिकः पर्यायार्थिकः तत्र द्रव्यार्थिकश्चतुर्धा १ नैगम, २ सङ्ग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्रभेदात् पर्यायार्थिकस्त्रिधा, १ शब्द, २ समभिरूढ, ३ एवंभूतभेदात्.

अर्थ ॥ जे नय छे ते पदार्थना ज्ञानने विषे ज्ञानना अंश छे. तिहां नयनुं लक्षण कहे छे. अनंत धर्मात्मक जे वस्तु एटले जीवादिक एक पदार्थमां अनंता धर्म छे तेनो जे एक धर्म गवेष्यो तो पण अन्य के० बीजा अनंता धर्म तेमां रह्या छे तेनो उच्छेद नही अने ग्रहण पण नही. एक धर्मनी मुख्यता करवी ते नय कहियें. ते नयना व्यास के० विस्तारथी अनेक भेद छे. अने समास के० संक्षेपथी बे भेद छे १ द्रव्यार्थिक, २ पर्यायार्थिक, ते रत्नाकरावतारिकाग्रन्थथी लखीये छैये " द्रवति द्रोष्यति अदुद्रवत् तांस्तान् पर्यायानीति द्रव्यं तदेवार्थः सोऽस्ति यस्य विषयत्वेन स द्रव्यार्थिकः "

जे वर्त्तमान पर्यायने द्रवे छे अने आगामिककाले द्रवशे तथा अतितकाले द्रवतो हतो ते द्रव्य कहियें तेज छे अर्थ प्रयोजन

विषयपणे जेने ते द्रव्यार्थिक कहियें. एटले पर्याय ते जन्य अने द्रव्य ते जनक कह्यो तथा द्रव्य ते ध्रुव अने पर्याय ते उत्पाद विनाशरूप छे उक्तं च.

" पर्येति उत्पादविनाशौ प्राप्नोतीति पर्यायः स एवार्थः सोऽस्ति यस्यासौ पर्यायार्थिकः " जे उपजवा विणशवानो परि के० नवा नवापणे एति के० पामे तेज अर्थ प्रयोजन तेने पर्यायार्थिक कहियें. ते द्रव्यार्थिक पर्यायार्थिक ए बे धर्मने द्रव्य तथा पर्याय कहियें.

इहां कोइक पुछे जे त्रीजो गुणार्थिक केम कहेता नथी ? ते वली रत्नाकरावतारिका मध्ये कह्यो छे " गुणस्य पर्याये एवान्तर्भूतत्वात् तेन पर्यायार्थिकेनैव तत् सङ्ग्रहात्. "

जे गुण ते पर्यायने विषे अंतर्भूत छे ते पर्यायार्थिक मध्येज संग्रह्यो छे. ते पर्याय बे भेदे छे, एक सहभावि बीजो क्रमभावि. तेमां सहभावि ते गुण छे ते पर्यायने विषे अन्तर्भूत छे, तिहां द्रव्य पर्यायथी व्यतिरिक्त सामान्य विशेष ए बे धर्म छे माटे सामान्य विशेष बे नय वक्ता केम कहेता नथी ? एम कोइ पुछे तेने उत्तर.

जे " द्रव्यपर्यायाभ्यां व्यतिरिक्तयोः सामान्यविशेषयोरप्रसिद्धेः तथाहि द्विप्रकारं सामान्यमुक्तमूर्ध्वतासामान्यं तिर्यक्सामान्यं च तत्रोर्ध्वसामान्यं द्रव्यमेव तिर्यक्सामान्यं तु प्रतिव्यक्तिसदृशपरिणामलक्षणं व्यञ्जनपर्याय एव. " ए पाठथी ऊर्ध्व सामान्य ते द्रव्यनो धर्म छे अने तिर्यक्सामान्य ते पर्याय धर्म छे " विशेषोऽपि वैसादृश्यविवर्त्तलक्षणं पर्याय एवान्तर्भवति नैताभ्यामधिकनयावकाशः "

विशेषपणे अनेक रीतें वर्तवानो लक्षण छे ते पर्यायने विषे अंतर्भाव छे ते माटे भिन्न नयनो अवकाश नथी. ए बे नय मध्येज अंतर्भाव छे. तेमा वली द्रव्यार्थिकना चार भेद छे १ नैगम, २ सग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्र तथा पर्यायार्थिकना त्रण भेद छे १ शब्द, २ समभिरूढ, ३ एवभूत.

विकल्पान्तरे ऋजुसूत्रस्य पर्यायार्थिकताप्यस्ति स नैगमस्त्रिप्रकार· आरोपाशङ्कल्पभेदाद् विशेपावश्यके तूपचारस्य भिन्न ग्रहणात् चतुर्विध । न एकेगमा आशयविशेपा यस्य स नैगम तत्र चतु.प्रकार आरोप· द्रव्यारोपगुणारोपकालारोपकारणाद्यारोपभेदात् तत्र गुणे द्रव्यारोप· पञ्चास्तिकायवर्तनागुणस्य कालस्य द्रव्यकथन एतद्गुणे द्रव्यारोप· १ ज्ञानमेवात्मा अत्र द्रव्ये गुणारोप· २ वर्त्तमानकाले अतीतकालारोप· अद्य दीपोत्सवे वीरनिर्वाण, वर्तमाने अनागतकालारोप अद्यैव पद्मनाभनिर्वाण, एवं पड् भेदा· कारणे कार्यारोप वाह्यक्रियाया धर्मत्व धर्मकारणस्य धर्मत्वेन कथन। सङ्कल्पो द्विविध स्वपरिणामरूप कार्यान्तरपरिणामश्च अशोऽपि द्विविध भिन्नोऽभिन्नश्चेत्यादि शतभेदो नैगम·।

अर्थ ॥ वली विकल्पांतरे ऋजुसूत्र ते पर्यायार्थिकमां पण कह्यो छे. केमके ए विकल्परूप नय छे ते माटे. तेमां नैगमना त्रण भेद छे. १ आरोप, २ अंश, ३ संकल्प तथा विशेषावश्यकमां चोथो भेद पण उपचारपणे कहे छे, नथी एक गमो अभिप्राय जेनो ते नैगमनय कहियें. एटले अनेक आशयी छे ते नैगमनयना चार भेद छे ते मध्ये आरोपना चार प्रकार छे. १ द्रव्यारोप, २ गुणारोप, ३ कालारोप, ४ कारणाद्यारोप.

१ तिहां गुणादिकने विषे द्रव्यपणो मानवो ते द्रव्यारोप. जेम वर्तना परिणाम ते पंचास्तिकायनो परिणमन धर्म छे तेने कालद्रव्य कही बोलाव्यो, ए काल ते भिन्न पिंडरूप द्रव्य नथी पण आरोपे द्रव्य कह्यो छे माटे द्रव्यारोप, अने द्रव्यने विषे गुणनो आरोप करवो–जेम ज्ञानगुण छे पण ज्ञान तेज आत्मा एम ज्ञानने आत्मा कह्यो ते गुणनो आरोप कर्यो माटे गुणारोप. तथा जेम श्रीवीरनिर्वाण थया तेने तो घणो काळ गयो छे; पण आज दीवालीना दीवसे वीरनो निर्वाण छे एम कहेवुं ए वर्तमानमां अतीतनो आरोप कर्यो. अथवा आज श्रीपद्मनाभ प्रभुनो निर्वाण छे, एम कहेवुं तेम वर्त्तमानने विषे अनागत कालनो आरोप छे एवी रीतें. वली अतीतना बे भेद छे, तथा एवीज रीते अनागतना बे भेद छे. अने वर्तमानना बे भेद उपर कह्या ते सर्व मली कालारोपना छ भेद जाणवा.

वली कारण विषे कार्यनो आरोप करवो ते कारण चार छे. १ उपादान कारण, २ निमित्त कारण, ३ असाधारण कारण, ४ अपेक्षा कारण, तेमां बाह्यद्रव्यक्रिया ते साध्यसापेक्षवालाने धर्मनुं निमित्त कारण छे, तो पण एने धर्म कहियें. तेमज

श्रीतीर्थंकर मोक्षनुं कारण छे तेथी तेने तारयाणं कह्यो ते कारणने विषे कर्त्तापणानो आरोप कर्यो, एम आरोपता अनेक प्रकारें छे ते कारणारोप. वली सकल्पनैगमना वे भेद छे, १ स्वपरिणामरूप जे वीर्यचेतनानो जे नवो नवो क्षयोपशम ते ते लेवो. बीजो कार्यांतरे नवे नवे कार्ये नवो नवो उपयोग थाय ते, ए बे भेद थया. तथा अंशनैगमना पण बे भेद छे, १ भिन्नांश ते जूदो अंश स्कंधादिकनो, बीजो अभिन्नांश ते जे आत्माना प्रदेश तथा गुणना अविभाग इत्यादिक. ए सर्वं नेगमनयना भेद जाणवा एटले नैगमनय कह्यो.

सामान्यवस्तुसत्तासङ्ग्राहक सङ्ग्रह. स द्विविध सामान्यसङ्ग्रहो विशेषसङ्ग्रहश्च, सामान्यसङ्ग्रहो द्विविधः मूलतउत्तरतश्च, मूलतोऽस्तित्वादिभेदत षड्विध. उत्तरतो जातिसमुदायभेदरूप जातित गवि गोत्व, घटे घटत्व, वनस्पतौ वनस्पतित्व, समुदयतो सहकारात्मके वने सहकारवन, मनुष्यसमुहे मनुष्यवृद,इत्यादि समुदायरूप अथवा द्रव्यमिसि सामान्यसङ्ग्रह' जीव इति विशेपसङ्ग्रह तथा विशेपावश्यके " सगहण सगिन्हइ सगिन्हतेवतेण ज भेया तो सगहो सगिहिय पिंडियत्थ वउज्जास्स " सग्रहणं सामान्यरूपतया सर्ववस्तुनामाक्रोडन सङ्ग्रह अथवा सामान्यरूपतया

सर्वं गृह्णातीति सङ्ग्रहः अथवा सर्वेऽपि भेदाः सामान्यरूपतया सङ्गृह्यन्ते अनेनेति सङ्ग्रहः अथवा संगृहीतं पिण्डितं तदेवार्थोऽभिधेयं यस्य तत् सङ्गृहीतपिंडितार्थं एवंभूतं वचो यस्य सङ्ग्रहस्येति सङ्ग्रहीतपिण्डितं तत् किमुच्यते इत्याह संगहीय मागहीयं संपिंडियमेगजाइमाणीयं ॥ संगहीयमणुगमो वा वइरेगोपिंडियं भणियं ॥ १ ॥ सामान्याभिमुख्येन ग्रहणं सङ्गृहीतसङ्ग्रह उच्यते, पिण्डितं त्वेकजातिमानितमभिधीयते पिण्डितसङ्ग्रहः अथ सर्वव्यक्तिष्वनुगतस्य सामान्यस्य प्रतिपादनमनुगमसङ्ग्रहोऽभिधियते व्यतिरेकस्तु तदितरधर्मनिषेधाद् ग्राह्यधर्मसङ्ग्रहकारकं व्यतिरेकसङ्ग्रहो भण्यते यथा जीवोजीव इति निषेधे जीवसङ्ग्रह एव जाताः अतः १ सङ्ग्रह, २ पिण्डितार्थ, ३ अनुगम, ४ व्यतिरेकभेदाच्चतुर्विधः अथवा स्वसत्ताख्यं महासामान्यं संगृह्णाति इतरस्तु गौत्वादिकमवान्तरसामान्यं पिण्डितार्थमभिधीयते महासत्तारूपं अवान्तरसत्तारूपं " एगं निच्चं निरवयवमक्कियं सव्वगं च

सामन्न® एतत् महासामान्य गवि गोत्वादिक मवातरसामान्यमिति संग्रहः ॥

अर्थ ॥ हवे सग्रहनय कहे छे. सामान्ये मूल सर्व द्रव्य व्यापक नित्यत्वादिक सत्तापणे रह्या जे धर्म तेनो जे संग्रह करे ते सग्रह कहिये. तेना बे भेद छे १ सामान्य संग्रह. २ विशेष संग्रह. वली सामान्य सग्रहना बे भेद छे १ मूल सामान्य सग्रह, २ उत्तर सामान्य संग्रह वली मूल सामान्य सग्रहना अस्तित्वादिक छ भेद छे ते पूर्वे कह्या छे. तथा उत्तरसामान्यना बे भेद छे १ जातिसामान्य, २ समुदायसामान्य. तिहां गायना समुदायमा गोत्वरूप जाति छे तथा घटसमुदायमां घटत्वपणो अने वनस्पतिने विषे वनस्पतिपणो ते जातिसामान्य कह्यो. अने आंबाना समूहने विषे अंबवन कहे तथा मनुष्यना समूहमा मनुष्य ग्रहण थाय ते समुदाय सामान्य. ए उत्तर सामान्य ते चक्षुदर्शन तथा अचक्षुदर्शनने ग्राहीक छे, अने मूल सामान्य ते अवधिदर्शन तथा केवल दर्शनथी ग्रहवाय छे. अथवा १ सामान्यसग्रह, २ विशेषसग्रह. तिहां छ द्रव्यना समुदायने द्रव्य कह्यु ए सामान्य संग्रह. इहां सर्वनो ग्रहण थयो छे. अने जीवने जीवद्रव्य कही अजीव द्रव्यथी जूदो भेद पाड्यो ए विशेष सग्रह. ए विशेष संग्रहनो विस्तार घणो छे तथा विशेषावश्यकथी संग्रहनयना चार भेद ते लखियें छैयें मूल पाठमा कहेली गाथानो अर्थ छे

एक सामान्य सर्वत्र तस्यैव भावात् तथा नित्य सामान्य अविनाशात् तथा निरवयव अदेशत्वात्, अक्रिय देशान्तरगम नाभावात् सर्वगतं च सामान्य अक्रियत्वादिति ॥

संग्रहणं के० एकठो एकवचन मध्ये एक अध्यवसाय उपयोगमां समकालें ग्रहेवुं सामान्यरूपपणे सर्व वस्तुनो आक्रोडण ग्रहण करवो ते संग्रह कहियें अथवा सामान्यरूपपणे सर्व संग्रह करे ते संग्रह कहियें, अथवा जेथकी सर्व भेद सामान्यपणे ग्रहियें तेने संग्रह कहियें, अथवा संगृहीतं पिण्डितं के० जे वचनथी समुदाय अर्थ ग्रहवाय ते संग्रह वचन कहियें. तेना चार भेद छे. १ संगृहीत संग्रह, २ पिण्डित संग्रह, ३ अनुगम संग्रह, ४ व्यतिरेक संग्रह.

१ सामान्यपणे वर्हेंचण विना ग्रहण थाय एवो जे उपयोग अथवा एवुं वचन अथवा एवो धर्म कोइपण वस्तुने विशे होय तेने संगृहीत संग्रह कहियें.

२ अने एकजाति माटे एकपणो मानिये ते एकमध्ये सर्वनो ग्रहण थाय जेम "एगे आया" "एगे पुग्गले" इत्यादि वस्तु अनंति छे पण जाति एक माटे ग्रहवाय छे ते बीजो पिंडित संग्रह कहियें.

३ जे अनेक जीवरूप अनेक व्यक्ति छे ते सर्वमां पामियें, जेम सत्‌चित्‌मय आत्मा एटले सर्व जीव तथा सर्व प्रदेश, सर्व गुण ते जीवनां लक्षण छे. एने अनुगम संग्रह कहियें.

४ तथा जेने ना कहेवे तेथी इतरनो सर्व संग्रहपणे ज्ञान थाय ते जेम अजीव छे तेवारें जे जीव नही ते अजीव कहियें एटले कोइक जीव छे एम व्यतिरेक वचने ठेर्यो तथा उपयोगें जीवनो ग्रहण थाय छे ते व्यतिरेक संग्रह कहियें.

अथवा संग्रहनय बे भेदें कहेवाय छे? महासत्तारूप, २ अवांतरसत्तारूप. ए रीतें पण संग्रहनो स्वरूप कह्यो छे.

"सदिति भणियम्मि जम्हा, सव्वत्थाणुप्पवत्तए बुद्धी । तो सव्व सत्तामत्त नत्थितदत्थतर किंचि ॥१॥ यत्रस्मात् सदित्येव भणिते सर्वत्र भुवनत्रयांतर्गतवस्तुनि बुद्धिरनुप्रवर्तते प्रधावति नहि तत् किमपि वस्तु अस्ति यत् सदित्युक्ते झगिति बुद्धौ न प्रतिभासते तस्मात् सर्वं सत्तामात्र न पुनः अर्थांतरं तत् भुतसामर्थ्यात् यत् सग्रहेन संगृह्यते तेन परिणमनरूपत्वादेव संग्रहस्येति" एटले त्रणे भुवनमां एहवी वस्तु कोइ नथी जे संग्रहनयने ग्रहणमां आवती नथी जे जे वस्तु छे ते सर्व सग्रहनयमा ग्रहवाणी ज छे ए संग्रहनय कह्यो.

सग्रहगृहीतवस्तुभेदान्तरेण विभजन व्यवहरण प्रवर्त्तन वा व्यवहार., स द्विविधः शुद्धोऽशुद्धश्च । शुद्धो द्विविध वस्तुगतव्यवहार धर्मास्तिकायादिद्रव्याणा स्वस्वचलनसहकारादिजीवस्य लोकालोकादिज्ञानादिरूप स्वसपुर्णपरमात्मभावसाधनरूपो गुणसाधकावस्थारूप गुणश्रेण्यारोहादिसाधनशुद्धव्यवहार. । अशुद्धोपि द्विविध. सद्भूतासद्भूतभेदात् सद्भूतव्यवहारो ज्ञानादिगुणः परस्पर भिन्न., असद्भूतव्यवहार. कपायात्मादि मनुष्योऽहं देवोऽह । सोऽपि द्विविध. सश्लेपिताशुद्धव्यवहार. शरीरं मम अहं शरीरी । असश्लेपितासद्भूतव्यवहार पुत्रकल-

त्रादिः तौ च उपचरितानुपचरितव्यवहारभेदाद् द्विविधौ तथा च विशेषावश्यके " ववहरणं ववहरए स तेण व वहीरए व सामन्नं । ववहारपरो व जओ विसेसओ तेण ववहारो ॥ " व्यवहरणं व्यवहारः, व्यवहरति स इति वा व्यवहारः, विशेषतो व्यवाह्रियते निराक्रियते सामान्यं तेनेति व्यवहारः लोको व्यवहारपरो वा विशेषतो यस्मात्तेन व्यवहारः । न व्यवहारास्वस्वधर्मप्रवर्तितेन ऋते सामान्यमिति स्वगुणप्रवृत्तिरूपव्यवहारस्यैव वस्तुत्वं तमंतरेण तद्भावात् स द्विविधः विभजन, १ प्रवृत्ति, २ भेदात् । प्रवृत्तिव्यवहारस्त्रिविधः वस्तुप्रवृत्तिः १ साधनप्रवृत्तिः लौकिकप्रवृत्तिश्च, ३ साधनप्रवृत्तिस्त्रेधा लोकोत्तर, लोकिका, २ कुप्रावचनिक, ३ भेदात् इति व्यवहारनयः श्रीविशेषावश्यके ॥

अर्थ ॥ हवे व्यवहारनयनी व्याख्या करे छे. संग्रहनयें ग्रहित जे वस्तु तेने भेदांतरे विभजन के० वहेंचवुं ते व्यवहारनय. जेम द्रव्य एवुं सामान्य नाम कह्युं तेमां वली वेंहेचण करियें जे द्रव्यना बे भेद छे. १ जीव द्रव्य, २ अजीव द्रव्य, वली तेमां पण वेंहेंचण करिये जे जीवना बे भेद १ सिद्ध बीजा

संसारी एम वेईचण करवी ते सर्व व्यवहारनयनो स्वभाव जाणवो, अथवा व्यवहार के० प्रवर्त्तन ते व्यवहारनय तेना वे भेद छे. १ शुद्ध व्यवहार, २ अशुद्ध व्यवहार, वली शुद्ध व्यवहारना वे भेद छे. १ सर्व द्रव्यनी स्वरूपरूप शुद्धप्रवृत्ति जेम धर्मास्तिकायनी चलणसहायता तथा अधर्मास्तिकायनी स्थिरसहायता तथा जीवनी ज्ञायकता इत्यादिकने वस्तुगत शुद्ध व्यवहार कहिये, २ द्रव्यनो उत्सर्ग निपजवा माटे रत्नत्रयी शुद्धता गुणस्थाने श्रेणीआरोहणरूप ते साधनशुद्ध व्यवहार कहिये.

वली अशुद्ध व्यवहारना वे भेद छे. १ सद्भूत, २ असद्भूत. तेमां जे क्षेत्रे अवस्थाने अभेदें रह्या जे ज्ञानादि गुण तेने परस्पर भेदें कहेवा ते सद्भूतव्यवहार

तथा जेम क्रोधी हुं, मानी हुं, अथवा देवता हुं, मनुष्य हुं, इत्यादि देवतापणो ते हेतुपणे परिणमता ग्रह्या जे देवगतिविपाकी कर्म तेने उदयरूप परभाव छे ते पण यथार्थ ज्ञान विना भेदज्ञानशून्य जीवने एक करी माने छे ते अशुद्ध व्यवहार कहिये. तेना वे भेद छे. १ सश्लेपित अशुद्ध व्यवहार ते जे शरीर मारु हु शरीरी इत्यादिक सश्लेपित असद्भूत व्यवहार, २ असंश्लेपित अशुद्ध व्यवहार ते आ पुत्र मारो, धनादिक मारा, एम कहेवु ते असश्लेपित असद्भूत व्यवहार. तेना उपचरित, अनुपचरित ए वे भेद जाणवा

तथा विशेषावश्यक महाभाष्यमां कह्यु छे जे व्यवहारनयना मूल वे भेद छे. एक वेंहेचणरूप व्यवहार वीजो प्रवृत्ति व्यवहार. ते वली प्रवृत्तिना त्रण भेद छे, १ वस्तु प्रवृत्ति, २ साधन प्रवृत्ति, ३ लौकिक प्रवृत्ति. तेमां वली साधन प्रवृत्तिना त्रण

भेद छे, १ जे अरिहंतनी आज्ञाये शुद्ध साधनमार्गे इहलोक संसार पुद्गलभोग आशंसादि दोष रहित जे रत्नत्रयीनी परिणति परभावत्याग सहित ते लोकोत्तर साधन प्रवृत्ति, २ जे स्याद्वाद विना मिथ्याभिनिवेश सहित साधनप्रवृत्ति ते कुप्रावचनिक साधनप्रवृत्ति, ३ अने जे लोकना स्वस्वदेश कुलनी चाले प्रवृत्ति ते लोकव्यवहार प्रवृत्ति ए त्रण प्रवृत्ति कहिये. ए व्यवहारनयना भेद जाणवा. तिहां द्वादशसार नयचक्रमां एकेक नयना सो सो भेद कह्या छे ते जैनसासन रहस्यना जाण .जीवे ते ग्रंथमांथी धारवा ए व्यवहारनय कह्यो.

उज्जं ऋजुं सुयं नाणमुज्जुसुयमस्स सोऽमुज्जुसुओ । सुत्तयइ वा जमुज्जुं वत्थुं तेणुज्जुसुत्तोत्ति ॥ १ ॥ उऊंतिऋजुश्रुतं सुज्ञानं बोधरूपं ततश्च ऋजु अवक्रमश्रुतमस्यसोऽयमृजुश्रुतं वा अथवा ऋजु अवक्रं वस्तु सूत्रयतीति ऋजुसूत्र इति कथं पुनरेतदभ्युपगतस्य वस्तुनोऽवक्रत्वमित्याह ॥ पच्चुपन्नं संपयमुप्पन्नं जं च जस्स पत्तेयं । तं ऋजु तदेव तस्सत्थि उ वकम्मन्नंति जमसंतं ॥ २ ॥ यत्सांप्रतमुत्पनं वर्त्तमानकालीनं वस्तु, यच्च यस्य प्रत्येकमात्मीयतदेव तदुभयस्वरूपं वस्तु प्रत्युत्पन्नमुच्यते तदेवासौ नयः ऋजु प्रतिपाद्यते तदेव च वर्तमानकालीनं वस्तु

तस्यार्जुसूत्रस्यास्ति अन्यत्र शेपातीतानांगत परकार्यं च यद्यस्मात् असदविद्यमान ततो अ- सत्वादेव तद्वक्रमिच्छत्यसाविति। अत एव उक्त निर्युक्तिकृता "पच्चुपन्नगाही उज्जुसुनयविही मुणेयव्वोत्ति" यतः कालत्रये वर्तमानमतरेण वस्तुत्व उक्त च यतः अतीत अनागत भवि- ष्यति न साप्रत तद् वर्तते इति वर्त्तमानस्यैव वस्तुत्वमिति अतीतस्य कारणता अनागतस्य कार्यता जन्यजनकभावेन प्रवर्त्तते अतः ऋजुसुत्र वर्तमानग्राहक तद्वर्तमान नामादिचतुःप्रकार ग्राह्यम् ॥

अर्थ ॥ हवे ऋजुसूत्रनय कहे छे ऋजु के० सरल छे श्रुत के० बोध ते ऋजुसूत्र कहिये, ऋजु शब्दें अवक्र एटले समो छे श्रुत जेने ते ऋजुसूत्र कहिये. अथवा ऋजु अवक्रपणे वस्तुने जाणे कहे ते ऋजुसूत्र कहिय. ते वस्तुनो नक्रपणो केम जाणियें ते कहे छे. साम्रत के० वर्तमानपणे उपनो जे वर्तमानकालें वस्तु ते ऋजु- सूत्र कहियें. अन्य जे अतीत अनागत ते ऋजुसूत्रनी अपेक्षाये अछतो छे केमके अतीत तो विणसी गयो छे अने अनागत आव्यो नथी तेवारें अतीत अनागत ए बे अवस्तु छे, अने जे वर्तमान पर्याये वर्ते ते वस्तुपणो छे जे पूर्वकाल पश्चात्काल लइ वस्तु कहेशे ते नैगमनय छे. आरोपरूप छे तिहा कोइ पूछे जे संसारीकर्मा जीवने सिद्धसमान कह्या छो ते तो अनागतकाले सिद्ध थशे तो तमे अनागतने अवस्तु केम कहो छो तेनो उत्तर

जे हे भव्य ! ए अनागत भावि माटे कहेता नथी ए तो वर्तमान सर्व गुणनी छति आत्मप्रदेशे छे ते आवरण दोषे प्रवर्तती नथी तेथी तिरोभावीपणा माटे संग्रहनये कहिये पण वस्तुमां सर्व केवलज्ञानादि गुण छता वर्त्ते छे ते माटे सिद्ध कहिये छैयें.

अने जे वस्तु ते नामादिक पर्याय सहित वर्ते छे माटे नामादि निक्षेपा ते सर्व ऋजुसूत्रनयना भेद छे, तथा नामादिक त्रण निक्षेपा तो द्रव्य छे अने भाव ते भाव छे. ए व्याख्याकारण कार्यभावनी वेंचण करीये ते माटे छे पण वस्तुमां सहज चार निक्षेपा ते भाव धर्मज छे. तथा ए स्वस्वकार्यना कर्त्ताज छे. ए ऋजुसूत्रना वे भेद दिगंवर कहे छे, १ सूक्ष्मऋजुसूत्र, २ स्थूल-ऋजुसूत्र. जे वर्तमानकालनो एक समय तेने सूक्ष्मऋजुसूत्र कहिये, अने जे बहुकालि ते स्थूलऋजुसूत्र ए पण कालापेक्षी भाव छे. तथा ए भावनय छे अने योगावलंवीपणो ते बाह्य छे ते पण द्रव्य माटे एक द्रव्य मध्ये गणे छे. ए ऋजुसूत्रनय कह्यो.

'शप आक्रोशे' शपनमाह्वानमिति शब्दः, शपतीति वा आह्वानयति शब्दः, शप्यते आहूयते वस्तु अनेनेति शब्दः, तस्यशब्दस्ययो वाच्योऽर्थस्तत्परिग्रहात्तत्प्रधानत्वान्नयशब्दः यथा कृतकत्वादित्यादिकः पंचम्यंतः शब्दोऽपि हेतुः। अर्थरूपं कृतकत्वमनित्यत्वगमकत्वान्मुख्यतया हेतुरुच्यते उपचारवस्तु तद्वाचकः कृतकत्वशब्दो हेतुरभिधीयते एवामिहापि शब्दवाच्यार्थ-

परिग्रहादुपचारेण नयोऽपि शब्दो व्यपदिश्यते इति भावः । यथा ऋजुसूत्रनयस्याभीष्ट प्रत्युत्पन्न वर्त्तमान तथैव इच्छत्यसौ शब्दनयः । यद्यस्मात्पृथुबुध्नोदरकलितमृन्मय जलाहरणादिक्रियाक्षम प्रसिद्धघटरूपं भावघटमेवेच्छत्यसौ न तु शेषान् नामस्थापनाद्रव्यरूपान् त्रीन् घटानिति । शब्दार्थप्रधानो ह्येष नय., चेष्टालक्षणश्च घटशब्दार्थो 'घट चेष्टाया' घटते इति घटः अतो जलाहरणादिचेष्टा कुर्वन् घटः । अतश्चतुरोऽपि नामादिघटानिच्छत ऋजुसूत्राद्विशेषिततर वस्तु इच्छति असौ । शब्दार्थोपपत्तेर्भावघटस्यैवानेनाभ्युपगमादिति अथवा ऋजुसूत्रात् शब्दनयः विशेषिततर' ऋजुसूत्रे सामान्येन घटोऽभिप्रेत., शब्देन तु सद्भावादिभिरनेकधर्मैरभिप्रेत इति ते च सप्तभङ्गा. पूर्वं उक्ता इति ॥

अर्थ ॥ हवे शब्दनयनु स्वरूप कहिये छैये शपति के० बोलावे तेने शब्द कहियें. अथवा शपियें-बोलाविये वस्तुपणे ते शब्द कहियें. ते शब्दें जे वाच्य अर्थ तेने ग्रहे एहवो छे प्रधानपणो जे नयमा तेपण शब्दनय कहियें. जेम कृतक ते , जे

कर्यो तेनो हेतु जे धर्म ते जे वस्तुमां होय ते बोलाय एटले शब्दनुं कारण तो वस्तुनो धर्म थयो. जेम जलाहरण धर्म जेमां छे तेने घट कहियें छैयें एम इहां पण शब्दें वाच्यअर्थ ग्रहे ते माटे ते नयनो नाम पण शब्द कहेवाय. जेम ऋजुसूत्रनयने वर्त्तमान-कालना धर्म इष्ट छे तेम शब्दादिकनयने पण वर्त्तमानताना धर्म ज इष्ट छे.

केमके पेटे पृथु के० पहोलो बुध्न के० घोल संकोचित उदरकलितयुक्त जलाहरणक्रियाने समर्थ प्रसिद्ध घटरूप भावघट तेनेज घट इच्छे छे पण शेष नाम स्थापना अने द्रव्यरूप त्रण घटने ए शब्दनय घट माने नहीं. घट शब्दना अर्थने ते संकेतनेज घट कहे. घट धातु ते चेष्टावाची छे अतःकरणात् के० ए कारण-पणा माटे ए शब्दनय ते चेष्टाकर्त्तानेज घट कहे एटले ऋजुसूत्र-नय चार निक्षेपा संयुक्तने घट माने अने शब्दनय ते भावघटने ज घट माने एटलो विशेषपणो छे. शब्दना अर्थनी जिहां उप-पत्ति होय तेनेज ते वस्तुपणे कहे एटले ऋजुसूत्रनयें सामान्य घट गवेष्यो अने शब्दनयें सद्भाव जे अस्तिधर्म तथा असद्भाव जे नास्तिधर्म ते सर्व संयुक्त वस्तुने वस्तुपणें कहे.

एटले वस्तुने शब्दें बोलावतां सातभांगे बोलाववो माटे ए सप्तभंगी जेटलाज शब्दनयना भेद जाणवा. ते सप्तभंगीनुं स्वरूप पूर्वे कह्युं छे. ए शब्दादिकनय वस्तुना पर्यायने अवलंबीने वस्तुना भावधर्मना ग्राहक छे, ते माटे वस्तुना भाव निक्षेपा ए नयें मुख्य छे. घुरना चार नयमां नामादिक त्रण निक्षेपा मुख्य छे ए शब्दनयनुं स्वरूप कह्युं.

गाथा ॥ ज ज सण्ण भासइ ॥ त त चिय समभिरोहइ जम्हा ॥ सण्णतरत्थविमुहो, तओ नओ समभिरूढोत्ति ॥ १ ॥ या या सज्ञा घटादिलक्षणां भाषते वदति ता तामेव यस्मात्सज्ञान्तरार्थविमुखः समभिरूढो नय नानार्थनामा एव भाषते यदि एकपर्यायमपेक्ष्य सर्वपर्यायवाचकत्वं तथा एकपर्यायाणा सङ्कर. पर्यायसङ्करे च वस्तुसङ्करो भवत्येवेति मा भूत्सकरदोष., अत पर्यायान्तरानपेक्ष एव समभिरूढनय इति ॥

अर्थ ॥ हवे समभिरूढनयनी व्याख्या [कहिये छैये. जे शब्दनय ते इंद्र, शक्र, पुरंदर इत्यादिक सर्व इन्द्रना नामभेद छे, पण एक इन्द्र पर्यायवन्त इन्द्र देखी तेना सर्व नाम कहे, " उक्तं च विशेषावश्यके "एकस्मिन्नपि इन्द्रादिके वस्तुनि यावत् इन्द्र न शक्र न-पुरदारणादयोऽर्था घटन्ते तद्वशेनेन्द्रशक्रादिबहुपर्यायमपि तद्वस्तु शब्दनयो मन्यते समभिरूढस्तु नैव मस्यते इत्यनयोर्भेद "

जे एक पर्याय प्रगटपणे अने शेषपर्यायने अणप्रगटये शब्दनय तेटला सर्वनाम बोलावे पण समभिरूढनय ते न बोलावे एटलो शब्दनय तथा समभिरूढनयमा भेद छे माटे हवे समभिरूढनय कहे छे

घटकुंभादिकमा जे संज्ञानो वाच्य अर्थ देखाय तेज संज्ञा कहे जेमां सज्ञातर अर्थने विमुख छे तेने समभिरूढनय कहिये जो एक सज्ञामध्ये सर्व नामातर मानिये तो सर्वनो सकर थाय

तेवारें पर्यायनो भेदपणो रहे नही अने जे पर्यायांतर होय तेतो भेदपणोज होय तेथी पर्यायांतरनो भेदपणोज रह्यो ते माटे लिंगादिभेदने सापेक्षपणे वस्तुनो भेदपणोज मानवो. ए समभिरूढनय वखाण्यो. ए नयमां पण भेदज्ञाननी मुख्यता छे.

एवं जह सद्दत्थो संतो भूओ तदन्नहाभूओ॥ तेणेवं भूयनओ, सद्दत्थपरो विसेसेणं॥ १ ॥ एवं यथा घटचेष्टायामित्यादिरूपेण शब्दार्थो व्यवस्थितः तहत्ति तथैव यो वर्त्तते घटादिकोऽर्थः स एवं सन् भूतो विद्यमानः 'तदन्नहाभूओत्ति' वस्तु तदन्यथा शब्दार्थोल्लंघनेन वर्त्तते स तत्वतो घटाद्यर्थोपि न भवति किंभूतो विद्यमानः येनैवं मन्यते तेन कारणेन शब्दनयसमभिरूढनयाभ्यां सकाशादेवंभूतनयो विशेषेण शब्दार्थनयतत्परः। अयं हि योषिन्मस्तकारूढं जलाहरणादिक्रियानिमित्तं घटमानमेव चेष्टमानमेव घटं मन्यते न तु गृहकोणादिव्यवस्थितं। विशेषतः शब्दार्थतत्परोयमिति। वंजणमत्थेणत्थं च वंजणेणोभयं विसेसेइ। जह घडसद्दं चेट्ठावया तहा तंपि तेणेव ॥१॥ व्यंज्यते अर्थोऽनेनेति व्यञ्जनं वाचकशब्दो घटादिस्तं चेष्टावता एतद्वाच्येनार्थेन विशिनष्टि स एव घटशब्दो यच्चेष्टावन्तमर्थं प्रतिपादयति, नान्यम् इत्येवं

शब्दमर्थेन नैयत्ये व्यवस्थापयतीत्यर्थः। तथार्थमप्युक्तलक्षणमभिहितरूपेण व्यञ्जनेन विशेषयति चेष्टापि सैव या घटशब्देन वाच्यत्वेन प्रसिद्धा योपिन्मस्तकारूढस्य जलाहरणादिक्रियारूपा, न तु स्थानतरणक्रियात्मिका, इत्येवमर्थं शब्देन नैयत्ये स्थापयतीत्यर्थः इत्येवमुभय विशेषयति शब्दार्थौ नार्थः शब्देन नैयत्ये स्थापयतीत्यर्थः। एतदेवाह यदा योपिन्मस्तकारूढश्चेष्टावानर्थो घटशब्दोनोच्यते स घटलक्षणोऽर्थः स च तद्वाचको घटशब्दः अन्यदा तु वस्त्वतरस्येव तच्चेष्टाभावादघटत्व, घटध्वनेश्चावाचकत्वमित्येवमुभयविशेषक एवंभूतनय इति ॥

अर्थ ॥ हवे एवंभूतनयनो स्वरूप कहिये छैये. एव के० जेम घटचेष्टावाची इत्यादिक रूपे शब्दनयनो अर्थ कह्यो छे ए रीते जे घटादिक अर्थ वर्त्ते ते एव के० एमज जे विद्यमानपणे शब्दना अर्थने ओलंघीने वर्त्ते ते ते शब्दनो वाच्य नथी अने शब्दार्थपणो जेमा न पामिये ते वस्तु ते रूपे नही माटे जो शब्दार्थमाथी एक पर्याय पण ओछो होय तो एवभूतनय तेने ते पणो कहे नही. ते माटे शब्दनयथी तथा समभिरूढनयथी एवं भूतनय ते विशेषांतर छे.

ए एवभूतनय ते स्त्रीने मस्तके चढयो, पाणी आणवानी क्रियानो निमित्त मार्गे आवतापणानी चेष्टा करतो होय तेने

घट माने, पण घरने खूणे रह्यो जे घट तेने घट करी माने नही. केमके ते चेष्टाने अणकरतो छे ते माटे. जे थकी अर्थने व्यंजीये के० प्रगट करीयें तेने व्यंजन कहियें. व्यंजन ते वाचक शब्द छे ते अर्थने कहे ते क्रियावंत थको तेनेज ते वस्तु कहे बीजाने न कहे, अने तेहिज अर्थे कह्युं जे लक्षण ते कह्याने रूपें विशेष थाय जेम चेष्टा घट शब्द वाचे प्रसिद्ध छे. योषित् के० स्त्रीने माथे पाणी लावतो ते घट तथा स्थानकें रह्यो अथवा तरण क्रिया करताने एवंभूतनय घट कहे नही. ए शब्दें अर्थ तथा अर्थे शब्दने थापे छे, एनुं ए रहस्य छे जे स्त्रीने मस्तकें चढ्यो चेष्टावंत अर्थ ते घट शब्दें बोलावे तेथी अन्यथा तेने तेपणे बोलावे नही, जेम सामान्य केवली जे ज्ञानादिक गुणे समान छे तेने समभिरूढनय अरिहंत कहे पण एवंभूतनय तो समवसरणादि अतिशय संपदा सहित तथा केवली ते इंद्रादिकें पूजतां युक्त होय तेनेज अरिहंत कहे ते विना न कहे. वाच्य वाचकनी पूर्णताने कहे, ए स्वरूपें एवंभूतनय जाणवो.

ए साते नयना भेद ते विशेषावश्यकने अनुसारे कह्या. तेमां नैगमना दश भेद, संग्रहना छ भेद अथवा बार कह्या. व्यवहारना भेद आठ अथवा चउद कह्या. ऋजूसूत्रना चार अथवा छ कह्या. शब्दना सात भेद कह्या. समभिरूढना बे भेद अने एवंभूतनो एक भेद कह्यो. ए रीते सर्वना भेद कह्या. वली नवचक्रमां नयना भेद सातसो कह्या छे ते पण जाणवा.

एवमेव स्याद्वादरत्नाकरात् पुनर्लक्षणत उच्यते नीयते येन श्रुताख्यप्रामाण्यविषयीकृतस्यार्थस्य शस्तादितरांशौदासीन्यतः सम्प्रतिपत्तुरभिप्राय-

विशेषोनयः। स्वाभिप्रेतादेशादपरांशापलापी पुनर्नयाभासः। स समासतः द्विभेदः द्रव्यार्थिकः पर्यायार्थिकः आद्यो नैगमसंग्रह व्यवहार ऋजूसूत्र-भेदाच्चतुर्द्धा केचित्ऋजुसूत्रं पर्यायार्थिक वदन्ति ते चेतनाशत्वेन विकल्पस्य ऋजुसूत्रे ग्रहणात् श्रीवीरशासने मुख्यत परिणतिचक्रस्यैव भाव-धर्मत्वेनागीकारात् तेषां ऋजुसूत्रः द्रव्यनये एव धर्मयोर्धर्मिणोर्धर्मधर्मिणोश्च प्रधानोपसर्जन आ-रोपसङ्कल्पा शादिभावेनानेकगमग्रहणात्मको नै-गम सत्चैतन्यमात्मनीतिधर्मयोः गुणपर्यायवत् द्रव्यमिति धर्मधर्मिणोः क्षणमेको सुखी विषया-सक्तो जीव इति धर्मधर्मिणोः सूक्ष्मनिगोदीजी-वसिद्धसमानसत्ताकः अयोगीनो ससारीति अश-ग्राही नैगम धर्माधर्मादीनामेकान्तिकपार्थ क्याभिसन्धिनैगमाभ्यासः

अर्थ ॥ हवे स्याद्वाद रत्नाकरथी नयस्वरूप लखियें छैयें. नोयते के० पमाडीयें जे थकी श्रुतज्ञान स्वरूप प्रमाणे विषये कीधो जे पदार्थनो अंश ते अंशथी इतर के० बीजो जे अश ते थकी उदासीपणो तेने पडिवर्जवा वालानो जे अभिप्राय विशेष तेने नय कहिये. एटले वस्तुना अशने ग्रहे अने अन्यथी उदासीनपणो ते नय कहिये. एक अंशने मुख्य कराने बीजा

अंशने उत्थापे ते नयाभास कहियें. ते नयना बे भेद छे एक द्रव्यार्थिक बीजो पर्यायार्थिक तेमां द्रव्यार्थिकना १ नैगम २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्र ए चार भेद छे. केटलाक आचार्य ऋजुसूत्रने विकल्परूप माटे भावनय गवेषे छे ते रीते द्रव्यार्थिकना त्रण भेद छे.

हवे नैगमनयनुं स्वरूप कहे छे. जे धर्मने प्रधानपणे अथवा गौणपणे अथवा धर्मीने प्रधानपणे अथवा गौणपणे तथा धर्म धर्मी ए बेउने प्रधानपणे तथा गौणपणे जे गवेषवो एटले धर्मोनी प्राधान्यता ते वारे पर्यायोनी प्रधानता थइ अने जिहां धर्मीनो प्रधानपणो तिहां द्रव्यनो प्रधानपणो तेमज गौणपणो तथा धर्म धर्मीनो प्रधान गौणपणो ए रीते जे द्रव्य पर्यायनो गौण प्रधानपणानी गवेषणा रूप ज्ञानोपयोग ते नैगमनय जाणवो तेना बोधने नैगम बोध कहिये. तेना उदाहरण कहे छे.

सत् के० छतापणे चैतन्य के० जाणपणो ए बे धर्म मध्ये एक धर्म पक्ष मुख्यपणे गणे अने बीजाने गौणपणे न गवेषे ए रीतें नैगमनय जाणवो. इहां चैतन्य नामे जे व्यंजन पर्याय तेने प्रधानपणे गणे केमके चैतन्यपणो ते विशेष गुण छे अने सत्वनामा व्यंजन पर्याय छे ते सकल द्रव्य साधारण छे ते माटे तेने गौणपणे लेखवे ए नैगमनो प्रथम भेद कह्यो.

तथा वली "वस्तु पर्यायवद् द्रव्यं" एम बोलवुं ते धर्मीनो नैगम छे इहां "पर्यायवत् द्रव्यं" एम वस्तु छे. इहां द्रव्यनो मुख्यपणो वली वस्तुने पर्यायवंत कहेवु ते वस्तुनो गौणपणो अने पर्यायनो मुख्यपणो इहां उभयगोचरपणा माटे. ए नैगमनो बीजो भेद कह्यो.

" क्षणमेकः सुखी विसयासक्तो जीव इति धर्मधर्मिणोरिति " इहां विषयासक्त जीवाख्य जे धर्मिना मुख्यताना विशेषपणाथी सुखलक्षण धर्मनी प्रधानता ते विशेषपणे करीने धर्मधर्मिने आलंबने ए त्रीजो नैगम. जेवारे धर्म तथा धर्मि ए बेने अवलंबे-ग्रहण करे तेवारे सपूर्ण वस्तुनो ग्रहण थयो, तेवारे ए ज्ञानने प्रमाण कह्यो. तिहां उत्तर द्रव्य पर्याय ते बेहुने प्रधानपणे अनुभवता ते ज्ञान प्रमाण थाय. इहां बे पक्षने विषे एकनी गौणता बीजानी मुख्यता लइने ज्ञान थाय छे ते माटे नय कहियें तथा वली सूक्ष्मनिगोदि जीव ते समान सत्तावत छे अथवा अयोगी केवली जिन तेने संसारी कहेवु ते अशनैगम. "

हवे नैगमाभास कहे छे. वस्तुमा धर्म अनेक छे ते एकात माने पण एकबीजाने सापेक्षपणे न माने एटले एक धर्मने माने अने बीजा धर्मने न माने ते नैगमाभास कहियें. ए दुर्नय जाणवो. केमके अन्य नयने गवेषे नही माटे, जेम आत्माने विषे सत्व तथा चैतन्य ए धर्म भिन्नभिन्न छे तेमा चैतन्यपणो न माने ते नैगमाभास कहियें एटले नैगमनय कह्यो.

यथाऽऽत्मनि सत्त्वचैतन्ये परस्पर भिन्ने सामान्यमात्रग्राही सत्तापरामर्शरूपसङ्ग्रह. स परापरभेदाद् द्विविध तत्र शुद्धद्रव्य सन्मात्र ग्राहक परसङ्ग्रह चेतनालक्षणो जीव इत्यपरसङ्ग्रहः सत्ताद्वैत स्वीकुर्वाण.सकलविशेषान् निराचक्षाणः सङ्ग्रहाभास. सङ्ग्रहस्यैकत्वेन, 'एगे आया' इत्यभिज्ञानात् सत्ताद्वैत एव आत्मा, ततः सर्व-

विशेषाणां तदितराणां जीवाजीवादिद्रव्याणामदर्शनात् द्रव्यत्वादिनावान्तरसामान्यानि मन्वानस्तदभेदेषु गजनिमिलिकामवलम्बमानः परापरसङ्ग्रहः धर्माधर्माकाशपुद्गलजीवद्रव्याणामैक्यं द्रव्यात्वादिभेदादित्यादिद्रव्यत्वादिकं प्रतिजानानस्तद्विशेषान् निन्हुवानस्तदाभासः यथा द्रव्यमेव तत्त्वं तत्त्वपर्यायाणामग्रहणाद्विपर्यास इति सङ्ग्रहः

अर्थ ॥ हवे संग्रहनय कहे छे. सामान्य मात्र समस्तविशेष रहित सत्यद्रव्यादिकने ग्रहवानो छे स्वभाव जेनो ते सं के० पिंडपणे विशेषराशीने ग्रहे पण व्यक्तपणे न ग्रहे स्वजातिना दीठा जे इष्ट अर्थ तेने अविरोधें करीने विशेष धर्मोने एकरूपपणे जे ग्रहण करवो ते संग्रहनय कहियें ए भावना छे. तेना बे भेद छे १ परसंग्रह. २ अपरसंग्रह तेमां " अशेषविशेषोदासीनं भजमानं शुद्धद्रव्यं सन्मात्रमभिमन्यमानः परसङ्ग्रह इति " जे समस्त विशेष धर्म स्थापनानी भजना करतो एटले विशेषपणाने अणग्रहतो थको शुद्धद्रव्य सत्तामात्रप्रतें माने जेम द्रव्य ए परसंग्रह विश्व एक सत्पणा माटे एम कह्याथी छतापणाना एकपणानुं ज्ञान थाय छे एटले सर्व पदार्थनो एकपणे ग्रहण छे ते परसंग्रह कहियें.

तथा जे सत्तानो अद्वैत स्वीकारे अने द्रव्यांतरभेद न माने समस्त विशेषपणाने ना कहेता थको जे ग्रहण करे ते अद्वैतवादि वेदांत तथा सांख्यदर्शन ए परसंग्रहाभास छे, केमके जे भेद धर्म छता देखाय छे तथा द्रव्यांतपरणो तेने न माने माटे परसंग्रहाभास कहियें. अने जैन तो विशेष सहित सामान्यने ग्रहे छे माटे संग्रहनय कहियें.

" "द्रव्यत्वादिनयातरसामान्यानि मत्वा तद्भेदेषु गजनिमीलिकामवलंबमानः अपरसग्रहः" द्रव्य जे जीव अजीवादिक जे अवांतर सामान्यने मानतो अने जीवने विषे प्रति जीवनो विशेष भेद भव्य, अभव्य, सम्यक्त्वी, मिथ्यात्वी, नरनारकादि जे भेद तेने गजनिमीलिका के० मस्ताइयें न गवेषवो ते अपरसंग्रह कहियें. अने द्रव्यने सामान्यपणे माने पण स्वद्रव्यनी परिणामिकतादिक धर्मने माने ते अपरसग्रहाभास कहियें ए सग्रहनयनुं स्वरूप कह्युं.

सङ्ग्रहेण च गोचरीकृतानामर्थाना विधिपूर्वकमवहरण येनाभिसन्धिना क्रियते स व्यवहारः, यथा यत् सत् तत् द्रव्यं पर्यायश्चेत्यादि, यः पुनरपरमार्थिक द्रव्यपर्यायप्रविभागमभिप्रैति स व्यवहाराभास. चार्वाकदर्शनमिति व्यवहारदुर्नयः ।

अर्थ ॥ हवे व्यवहारनय कहे छे. संग्रहनयें ग्रह्या जे वस्तुना सत्त्वादिक धर्म तेनेज गुणभेदें वेहेंचे, भिन्नभिन्न गवेषे, तथा पदार्थनी गुणप्रवृत्ति तेनेज मुख्यपणे गवेषे ते व्यवहारनय कहियें. जेम द्रव्य छे तेना जीव पुद्गलादिक पर्यायना क्रमभावी तथा सहभावी ए रीतें बे भेद छे, तेमां वली जीव बे प्रकारें १ सिद्धना, २ ससारी. तेमज पुद्गलना बे भेद परमाणु तथा खध. इत्यादिक कार्यभेदें भिन्न माने तथा क्रमभावी पर्यायना बे भेद एक क्रियारूप बीजो अक्रियारूप. इम वेहेंचण जे सामर्थ्यादिक गुणभेदें भेद पडे ते सर्व व्यवहारनय जाणवो अने जे परमार्थ विना द्रव्यपर्यायनो विभाग करे ते व्यवहाराभास जाणवो.

जे कल्पना करी भेदें वहेंचे ते चार्वाकमत ए व्यवहार प्रमुखनयनो दुर्नय छे. जेम चार्वाक प्रमाणपणें छतो जीवपणो लोकप्रत्यक्षमां दृष्टिगोचर नथी आवतो ते माटे जीव नथी एम कहे, अने जगतमां पंचभूतादिक वस्तु नथी एम कल्पना करी स्थूललोकने कुमार्गे प्रवर्तावे ते व्यवहारदुर्नय कहियें. ए व्यवहारनुं स्वरूप कह्युं.

ऋजु वर्तमानक्षणस्थायिपर्यायमात्रप्राधान्यतः सूत्रयति अभिप्रायः ऋजुसूत्रः। ज्ञानोपयुक्तः ज्ञानी, दर्शनोपयुक्तः दर्शनी, कषायोपयुक्तः कषायी, समतोपयुक्तः सामयिकी। वर्तमानापलापी तदाभासः यथा तथागतमत इति॥

अर्थ॥ हवे ऋजुसूत्रनय कहे छे ऋजु के० सरलपणे अतीत अनागतने अणगवेषतो अने वर्त्तमानसमय वर्त्तता जे पदार्थना पर्यायमात्र तेने प्रधानपणे सूत्र के० गवेषे ते ऋजुसूत्र कहियें। ते ज्ञानने उपयोगें वर्तताने ज्ञानी कहे, दर्शनोपयोगें वर्तताने दर्शनी कहे, कषायपणे वर्तता जीवने कषायी कहें, समताने उपयोगें वर्तता जीवने सामायिकवंत कहे. इहां कोइ पुछे जे उपर कह्या मुजब तो ऋजुसूत्र तथा शब्दनय ए बे एकज थाय छे तेने उत्तर कहे छे जे विशेषावश्यकनां कह्युं छे " कारणं यावत् ऋजुसूत्रः " एटले ज्ञानने कारणपणे वर्ततो ते ऋजुसूत्र ग्रहे छे अने जे जाणपणारूप कार्यपणे थाय ते शब्दनय कहियें ए फेर छे.

वर्तमानकालने पण ग्रहण करे ते ऋजुसूत्राभास कहियें, जे छता भावने अछता कहे अथवा विपरीत कहे जेम जीवने अजीव कहे, अजीवने जीव कहे इत्यादिक. ते तथा गत के० बौद्धनो मत छे जे छतो सर्वदा वर्ततो जीवादि द्रव्य तेना पर्यायने पलटवे

सर्वथा द्रव्यने विनाशि माने तेने ऋजुसूत्रनयाभासोभिप्राय जाणवो. ए ऋजुसूत्रनय कह्यो.

एकपर्यायप्रागुभावेन तिरोभाविपर्यायग्राहकः शब्दनयः, कालादिभेदेन ध्वनेरर्थभेद प्रतिपाद्यमानः शब्द., जलाहरणादिक्रियासमर्थ एव घटः, न मृत्पिंडादौ, तत्त्वार्थवृत्तौ शब्दवशादर्थप्रतिपत्तिः तत्कार्यधर्मे वर्तमानवस्तु तथा मन्वानः शब्दनयः। शब्दानुरूप अर्थपरिणत द्रव्यमिच्छति त्रिकालत्रिलिंगत्रिवचनप्रत्ययप्रकृतिभिः समन्वितमर्थमिच्छति तद्भेदे तस्य तमेव समर्थमाणस्तदाभासः।

अर्थ ॥ हवे शब्दनय कहे छे. जे वस्तुना एक पर्यायने प्रगट देखवे बीजा शब्द वाचकपर्यायने तिरोभावें अणप्रकटवें पण ते पर्यायने ग्रहे अथवा काल त्रण, वचन त्रण, लिंग त्रण तेने भेदें शब्दनो भेद पडे ते भेदेंज अर्थने कहे अथवा जलाहरणादि समर्थने घट कहे तथा कुंभादिक चिन्ह पर्याय जेटला छे तेटलानो अर्थ वर्ततो न देखाय तो पण तेने नाम कही बोलावे एम जेमां कार्यनो सामर्थ्यवंतपणो छे तेने ग्रहे पण माटीना पिंडने घट कहे नही ते शब्दनय कहियें. अने जे संग्रह तथा नैगमनयवालो कहे ते सत्ता-योग्यता अंशना ग्राहक छे तथा तत्त्वार्थटीका मध्ये शब्दवशथी अर्थ पडिवजवो ते शब्दे बोलातो होय जे अर्थ ते वस्तुमा धर्मपणे प्रगट देखाय तेनेज ते वस्तु माने. ए नयने शब्दानुयायी अर्थे परिणमति जे वस्तु,तेने वस्तु कहे छे काललिंगादिभेदें

अर्थनो भेद छे ते भेद तेम ते धर्मे वस्तु माने ते शब्दनय कहियें; अने ते अर्थ विना ते वस्तुमध्ये तेपणो वर्ततो देखातो नथी तेने ते वस्तुपणे समर्थन करे ते शब्दाभास कहिजे. एटले शब्दनय कह्यो.

एकार्थावलंबिपर्यायशब्देषु निरुक्तिभेदेन भिन्नमर्थं समभिरोहन् समभिरूढः। यथा इंदनादिंद्रः; शकनाच्छक्रः, पुरदारणात् पुरंदरः इत्यादिषु। यथा पर्यायध्वनिनामाभिधेयनानात्वमेव कक्षीकुर्वाणस्तदाभासः; यथा इंद्रः शक्रः पुरंदर इत्यादि भिन्नाभिधेये.

अर्थ ॥ हवे समभिरूढनय कहे छे. जे एक पदार्थने अविलंबी जेटला सरिखा नाम तेटला पर्याय नाम थया, ते पर्याय नाम जेटला होय तेटला निरुक्ति-व्युत्पत्ति भिन्न होय ते अर्थनो पण भेद होय ते अर्थने सं० के० सम्यक् प्रकारें आरोहतो एटले एटला सर्व अर्थ संयुक्त जे होय ते समभिरूढनय कहियें. जेम इद् धातु परमैश्वर्यने अर्थे छे ते परम ऐश्वर्यवंतनें इंद्र कहियें, तथा शकन कहेतां नवि नवि शक्तियुक्तने शक्र कहियें, पुर के० दैत्यने दरे के० विदारे ते पुरंदर, अने शचि जे इंद्राणी तेनो पति स्वामी ते शचिपति कहियें. एटला सर्व धर्म ते इंद्रमां छे ते माटे जे देवलोकनो धणी छे तेने इंद्र एवे नामें बोलावे छे बीजा नामादिक इंद्रने ए नामे न बोलावे. जेटला पर्याय नाम छे तेनाजे अर्थ थाय ते सर्वने भिन्न भिन्न अर्थ कहे छे पण एकार्थ न जाणे ते समभिरूढाभास कहियें. एटलें समभिरूढनय कह्यो.

एवं भिन्नशब्दवाच्यत्वाच्छब्दानां स्वप्रवृत्तिनि-

मित्तभूतक्रियाविशिष्टमर्थं वाच्यत्वेनाभ्युपगच्छन्नेवभूतः । यथा इदनमनुभवन्निद्र., शकनाच्छक्रः, शब्दवाच्यतया प्रत्यक्षस्तदाभासः । तथा विशिष्टचेष्टाशून्य घटाख्यवस्तुनः घटशब्दवाच्य घटशब्दद्रव्यवृत्तिभूतार्थशून्यत्वात् पटवदित्यादि

अर्थ ॥ हवे एवभूतनय कहे छे. शब्दनी प्रवृत्तिनो निमित्तभूत जे क्रिया ते विशिष्ट संयुक्त जे अर्थ तेने वाच्य जे धर्म तेने जे पहोचतो होय एटले ते कारण कार्य धर्म सहित तेने एवंभूतनय कहियें तथा ऐश्वर्य सहित ते इंद्र, शक्रूरूप सिंहासने बेशे ते शक्र, शचि के० इद्राणीने साथे बेठो ते वारें शचीपति कहे, एटले जे शब्दना जेटला पर्याय ते सर्व तेमा पहोचता भावने ते नाम कहि बोलावे अने जे पर्याय पहोचतो देखे नही ते पर्यायनी ना कहे, जिहा सुधी एक पर्याय ऊणो छे तिहा सुधी समभिरूढनय कहियें, अने सर्व वचन पर्यायने पहोचे ते वारें एवभूतनय कहियें जे पदार्थनो नामभेदनो भेद देखीने पदार्थनी भिन्नता कहे ते एवंभुतनयाभास कहिजे, नामभेदें ते वस्तुज भिन्न जेम हाथी, घोडा, हिरण्य भिन्न छे तेम भिन्नपणो माने जेम अर्थ भिन्नपणा माटे घटथी पट भिन्न छे तेम इद्रपणाथी पुरंदरपणो भिन्न माने ते एवंभूतनयनो दुर्नय जाणवो, एटले एवभूतनय कह्यो, ए रीते सातनयनी व्याख्या कही.

अत्र आद्यनयचतुष्टयमविशुद्ध पदार्थप्ररूपणाप्रवणत्वात्, अर्थनया नामद्रव्यत्वसामान्यरूपा नयाः । शब्दादयो विशुद्धनयाः शब्दावलवार्थ-

मुख्यत्वादाद्यस्ते तत्त्वभेदद्वारेण वचनमिच्छंति शब्दनयास्तावत् समानलिंगानांसमानवचनानां शब्दानां इंद्रशक्रपुरंदरादीनां वाच्यं भावार्थमेवाभिन्नमभ्युपैति न जातुचित् भिन्नवचनं वा शब्दं स्त्री दाराः तथा आपो जलमिति समभिरूढवस्तुप्रत्यर्थं शब्दनिवेशादिंद्रशक्रादिनां पर्यायशब्दत्वं न प्रतिजानीते अत्यंतभिन्नप्रवृत्तिनिमत्तत्वादभिन्नार्थत्वमेवानुमन्यते घटशक्रादिशब्दानामिवेति एवंभूतः पुनर्यथा सद्भाववस्तुवचनगोचरं आपृच्छतीति चेष्टाविशिष्ट एवार्थो घटशब्दवाच्यः चित्रालेख्यतोपयोगपरिणतश्च चित्रकारः। चेष्टारहितस्तिष्ठन् घटो न घटः, तच्छब्दार्थरहितत्वात् कूटशब्द्वाच्यार्थवन्नापि भुंजानः शयानो वा चित्रकाराभिधानाभिधेयश्चित्रज्ञानोपयोगपरिणति शून्यत्वाद्गोपालवदेवमभेदार्थवाचिनो नैकैकशब्दवाच्यार्थावलंबिनश्च शब्दप्रधानार्थोपसर्जनाच्छब्दनया इति तत्त्वार्थवृत्तौ। एतेषु नैगमः सामान्यविशेषोभयग्राहकः, व्यवहारः विशेषग्राहकः द्रव्यार्थावलंविऋजुसूत्र विशेपग्राहक एव एते चत्वारो द्रव्यनयाः शब्दादयः पर्यायार्थिकविशेषावलंवि भावनयाश्चेति

शब्दादयो नामस्थापनाद्रव्यनिक्षेपानवस्तुतया जानन्ति परस्परसापेक्षाः सम्यकूदशनिप्रतिनय भेदानां शत तेन सप्तशत नयनामिति अनुयोगद्वारोक्तत्वात् ज्ञेय.

अर्थ ॥ ए सात नयमा आद्यना चार नय जे छे ते अविशुद्ध छे शा माटे के जे पदार्थ के० द्रव्य तेने सामान्यपणे कहेवाना अधिकारी छे. ए नयनुं किहा एक अर्थनय ए पण नाम छे ते अर्थ शब्दे द्रव्य लेवु. तथा शब्दादिक त्रण नय ते शुद्ध नय छे केमके शब्दना अर्थनी एने मुख्यता छे. पेहेला नय ते भेदपणे वचनने वाळे छे अने शब्दादिक नय ते लिंगादिके अभेद वचने अभेद कहे तथा भिन्न वचने भिन्नार्थ कही माने अने समभिरूढ ते भिन्न शब्द तेने वस्तु पर्याय न माने तथा एवभूत ते भिन्नगोचर पर्यायने भिन्न माने. जे चेष्टा करतो होय तेने घट कहे पण खुंणे पडयो घट कहे नही, चित्राम करतो होय तथा तेज उपयोगें वर्ततो होय तेने चित्रकार कहे पण तेज चित्रकार सुतो होय अथवा खावा बेठो होय तेने चित्रकार न कहे केमके ते उपयोगें रहित छे माटे. ए नय ते शब्द तथा अर्थने भेदपणो माने छे अने अर्थथी शून्य शब्द ते प्रमाण नथी अने शब्द प्रधान अर्थ ते द्रव्यने गौणपणे वर्तता शब्दादिक त्रण नय छे एम तत्त्वार्थ टीका मध्ये कह्यो छे.

ए सात नयने विषे पहेलो नैगमनय ते सामान्य विशेष बेहुने माने छे, संग्रहनय ते सामान्यने माने छे, व्यवहारनय विशेपने माने छे अने द्रव्यार्थावलंबी छे, तथा ऋजुसूत्र तो विशेष ग्राहक छे. ए चार ते द्रव्यनय छे, अने पाछला शब्दादिक त्रण

नय ते पर्यायार्थिक विशेषावलंबी भावनय छे; तथा शब्दादिक नय ते नाम, स्थापना, द्रव्य ए पेहेला त्रण निक्षेपाने अवस्तु माने छे "तिण्हं सद्दनयाणं अवत्थु" ए अनुयोगद्वार सूत्रनुं वचन छे, ए साते नय परस्पर सापेक्षपणे ग्रहे ते समकिति जाणवा, अने जो ए नय परस्पर विरोधी होय तो मिथ्यात्वी जाणवा. तथा एकेका नयना सो सो भेद थाय छे, एम साते नयना मळी सातसो भेद थाय छे. ए अधिकार श्रीअनुयोगद्वार सूत्रथी कह्योछे.

पूर्वपूर्वनयः प्रचुरगोचरः। परास्तु परिमितविषयाः। सन्मात्रगोचरात् संग्रहात् नैगमो भावाभावभूमित्वाद्द भुरिविषयः, वर्त्तमानविषयाद्द ऋजुसूत्राव्द्यवहारस्त्रिकालविषयत्वात् वहुविषयकालादिभेदेन भिन्नार्थोपदर्शनात् भिन्नऋजुसुत्रविपरीतत्वान्महार्थः। प्रतिपर्यायमशब्दमर्थभेदमभीप्सितः समभिरूढाच्छब्दः प्रभुतविषयः। प्रतिक्रियां भिन्नमर्थं प्रतिजानानात् एवंभूतात् समभिरूढः महान् गोचरः। नयवाक्यमपि स्वविषये प्रवर्त्तमानं विधिप्रतिषेधाभ्यां सप्तभंगीमनुव्रजति। अंशग्राही नैगमः, सत्ताग्रही संग्रहः, गुणप्रवृत्तिलोकप्रवृत्तिग्राही व्यवहारः, कारणपरिणामग्राही ऋजुसूत्रः, व्यक्तकार्यग्राहीशब्दः, पर्यायांतरभिन्नकार्यग्राही समभिरूढः तत्परिणमनमुख्यकार्यग्राही एवंभूत इत्याद्यनेकरूपो नय-

प्रचारः । "जावंतिया वयणपहा ॥ तावतिया चेव-हुंति नयवाया" ॥ इति वचनात् उक्तो न-याधिकारः ॥

अर्थ ॥ ए प्रकारे पूर्वे के० पूर्वलो जे नैगम नय तेनो विस्तार घणो जाणवा अने तेथी ऊपलो नय तेनो परिमित विषय छे एटले थोडो विषय छे केमके सत्तामात्रनो ग्राहक सग्रहनय छे छति सत्ताने संग्रहनय ग्रहे अने नैगम ते छता भाव अथवा संकल्पपणे अछता भाव सर्वने ग्रहे अथवा सामान्य विशेष बे धर्मने ग्रहे ते माटे नैगमनो विषय घणो छे. तथा सग्रहनय ते सत्तागत सामान्य विशेष बेहुने ग्रहे छे, अने व्यवहार ते सत् एक विशेषनेज ग्रहे छे माटे संग्रहनयथी व्यवहारनयनो विषय थोडो छे अने व्यवहारनयथी सग्रहनय ते बहुविषयी छे. तथा ऋजुसूत्रनय ते वर्तमान विशेष धर्मनो ग्राहक छे, अने व्यवहारथी ऋजुसुत्रनय ते कालविषयनो ग्राहक छे, ते माटे व्यवहार बहु-विषयी छे अने व्यवहारथी ऋजुसुत्र अल्पविषयी छे. ऋजुसूत्र ते वर्तमानकाल ग्रहे, अने शब्दनय कालादि वचन लिंगथी वेहेंचता अर्थने ग्रहे, अने ऋजुसुत्रनय ते वचन लिंगने भिन्न पाडतो नथी, ते माटे ऋजुसूत्रथी शब्दनय अल्पविषयी छे, ऋजुसूत्र बहुविषयी छे अने शब्दनय सर्व पर्यायनो एक पर्यायने ग्रहता ग्रहे, अने समभिरूढ ते जे धर्म व्यक्त ते वाचक पर्यायने ग्रहे, ते माटे शब्दनयथी समभिरूढनय ते अल्पविषयी छे. केमके समभि-रूढ ते पर्यायनो सर्वकाल गवेष्यो छे, अने एवंभूतनय ते प्रति-समये क्रियाभेदें भिन्नार्थपणो मानतो अल्पविषयी छे, ते माटे एवभूतथी समभिरूढ बहुविषयी जाणवो अने एवंभूत अल्प-विषयी जाणवो.

जे नय वचन छे ते पोताना नयने स्वरूपें अस्ति छे, अने परनयना स्वरूपनी तेमां नास्ति छे; एम सर्व नयनी विधिप्रतिषेधें करीने सप्तभंगी ऊपजे, पण नयनी जे सप्तभंगी ते विकलादेशी ज होय अने जे सकलादेशी सप्तभंगी ते प्रमाण छे पण नयनी सप्तभंगी न ऊपजे.

उक्तं च रत्नाकरावतारिकायां "विकलादेशस्वभावा हिनय सप्तभंगी वस्त्वंशमात्रप्ररूपकत्वात्, सकलादेशस्वभावास्तु प्रमाणसप्तभंगी संपूर्णवस्तुस्वरूपप्ररूपकत्वात्" ए वचन छे. एटले यथायोग्यपणे नयनो अधिकार कह्यो.

सकलनयग्राहकं प्रमाणं, प्रमाता आत्मा प्रत्यक्षादिप्रमाणसिद्धः चैतन्यस्वरूपपरिणामी कर्त्ता साक्षाद् भोक्ता स्वदेहपरिमाणः प्रतिक्षेत्रभिन्नत्वेनैव पञ्चकारणसामग्रीतः सम्यग्दर्शनज्ञानचारि[illegible]र्या [illegible]न् साधयते सिद्धिः। स्वपरव्यवसायि[illegible]ान[illegible]: मह[illegible] तद् द्विविधं प्रत्यक्षपरोक्षभेदात्स्पष्टं [illegible]र्त्तमानं वि[illegible]मन्यत् अथवा आत्मोपयोगत[illegible] अंशग्राही प्रवर्तते न यज्ज्ञानं तत्प्रत्यक्षं, अवधिम[illegible]ौ देशप्रत्यक्षौ, केवलज्ञानं तु सकलप्रत्यक्षं, मतिश्रुते परोक्षे; तच्चतुर्विधं अनुमानोपमानागमार्थापत्तिभेदात्, लिङ्गपरामर्शोऽनुमानं लिङ्गं चाविनाभुतवस्तुकं नियतं

ज्ञेय यथागिरिगुहिरादौ व्योमावलम्बिधूम्रलेखां दृष्ट्वा अनुमान करोति, पर्वतो वह्निमान् धूमवत्त्वात्, यत्र धूमस्तत्राग्निः यथा महानस, एव पञ्चावयवशुद्ध अनुमान यथार्थज्ञानकारण सदृश्यावलवनेनाज्ञातवस्तुनां यज्ज्ञान उपमानज्ञान, यथा गोस्तथा गवय. गोसादृश्येन अदृष्टगवयाकारज्ञान उपमानज्ञान यथार्थोपदेष्टा पुरुष आप्त. स उत्कृष्टतो वीतराग. सर्वज्ञ एव। आप्तोक्त वाक्य आगम, रागद्वेषाज्ञानभयादि दोपरहितत्वात् अर्हत्त वाक्य आगमः, तदनुयायिपूर्वापराविरुद्धं मिथ्यात्वासयमकषायभ्रान्तिरहित स्याद्वादोपेत वाक्य अन्येषा शिष्टानामपि वाक्य आगम. । लिङ्गग्रहणाद् ज्ञेयज्ञानोपकारक अर्थापत्तिप्रमाण, यथा पीनो देवदत्तो दिवान भुक्ते तदा अर्थाद्रात्रौ भुक्ते एव, इत्यादि प्रमाणपरिपाटीगृहीतजीवाजीवस्वरूप. सम्यक्ज्ञानी उच्यते

अर्थ ॥ हवे प्रमाणनुं स्वरूप कहे छे. सर्व नयना स्वरूपने ग्रहण करनारो तथा सर्व धर्मनो जाणगपणो छे जेमा एहवु जे ज्ञान तेने प्रमाण कहिये. जे प्रमाण ते मापवानु नाम छे. त्रण जगत्‌ना सर्व प्रमेयने मापवानु प्रमाण ते ज्ञान छे, अने ते प्रमा

णनो कर्त्ता आत्मा ते प्रमाता छे. ते प्रत्यक्षादि प्रमाणे सिद्ध के० ठहेर्यो छे, चैतन्य स्वरूप परिणामी छे, वली भवन धर्मथी उत्पाद व्ययपणे परिणमे छे, ते माटे परिणामिक छे. तथा कर्त्ता छे तथा भोक्ता छे, जे कर्त्ता होय तेज भोक्ता होय. भोक्तापणा विना सुखमयी कहेवाय नहि ते चैतन्य संसारीपणे स्वदेह परिमाण छे. प्रतिक्षेत्र के० प्रत्येकें शरीर भिन्नपणा माटे भिन्न जीव छे, ते जीव पांच कारणनी सामग्री पामीने सम्यग्दर्शन, सम्यक्ज्ञान, सम्यक्चारित्रने साधवाथी संपूर्ण, अविनाशी, निर्मल, निःकलंक, असहाय, अप्रयास, स्वगुण निरावरण, स्वकार्य प्रवृत्ति, अक्षर, अव्याबाद, सुखमयी, एवी सिद्धता निष्पन्नता नीपजे एज साधन मार्ग छे.

स्व शब्दें करी आत्मा, परशब्दे परद्रव्य. स्व आत्माथी भिन्न अनंता पर जीव धर्मादिक तेना व्यवसायी व्यवच्छेदक जे ज्ञान तेने प्रमाण कहिये. तेना मूल बे भेद छे, एक प्रत्यक्ष बीजो परोक्ष. तिहां स्पष्ट ज्ञान ने प्रत्यक्ष कहिये तेथी इतर के० बीजो जे अस्पष्ट ज्ञान ते परोक्ष कहिये. अथवा आत्माना उपयोगथी इंद्रियनी प्रवृत्ति विना जे ज्ञान ते प्रत्यक्ष कहिये. तेना बे भेद छे. एक देशप्रत्यक्ष बीजो सर्वप्रत्यक्ष. तेमां अवधिज्ञान तथा मनःपर्यवज्ञान ते देशप्रत्यक्ष छे. केमके अवधिज्ञान एक पुद्गल परमाणुने द्रव्यें तथा क्षेत्रें अने कालें तथा भावें केटलाक पर्यायने देखे. तथा मनःपर्यवज्ञानी मनना पर्यायने प्रत्यक्ष जाणे पण बीजा द्रव्यने न जाणे माटे बेहु ज्ञानने देशप्रत्यक्ष कहिये. कारण के देशथी वस्तुने जाणे पण सर्वथी न जाणे माटे, अने केवलज्ञान ते जीव तथा अजीव रूपी तथा अरूपी सर्व लोकालोकना त्रण कालना भावने प्रत्यक्षपणे जाणे माटे सर्व प्रत्यक्ष कहियें.

तथा मतिज्ञान अने श्रुतज्ञान ए बे अस्पष्ट ज्ञान छे माटे परोक्ष छे, ते परोक्ष प्रमाणना चार भेद छे १ अनुमान प्रमाण, २ उपमान प्रमाण, ३ आगम प्रमाण, ४ अर्थापत्ति प्रमाण. तिहां चिन्हे करीने जे पदार्थने ओलखवुं तेने लिंग कहियें. ते परामर्श के० संभालवाथी जे ज्ञान थाय तेने अनुमानज्ञान कहियें. लिंग ते जे विना ते वस्तु होयज नही ते वस्तुनुं लिंग जाणवु ते लिंगने देखवाथी वस्तुनो निर्धार करवो ते अनुमान प्रमाण जाणवो.

जेम गिरि गुहिरने विषे आकाशावलंबी धूमनी रेखा देखीने अनुमान करे जे ए पर्वत अग्नि सहित छे ए पक्ष तथा साध्य कह्यो. जे पक्ष ते पर्वत, अने साध्य ते अग्निमन्तपणो, साधवो ते हेतु जे धूम्रवंतपणा माटे एटले जिहां धूम्र होय तिहां अग्नि अवश्य होयज. आकाशने पहोचती जे धूम्र रेखा ते अग्नि विना होय नही तिहां दृष्टांत कहे छे.

जेम महानसे के० रसोडाने विषे रसोइयाए धूम्र तथा अग्निने भेला दीठा ते रहा आ अमुक पर्वतने विषे धूम्र छे तो तिहा निश्चेथी अग्नि छेज एहवी व्याप्ति निर्धारीने ज्ञान करवो ते पंचावयवें शुद्ध अनुमान प्रमाण कहिये. ते अनुमान प्रमाण मतिज्ञान तथा श्रुत ज्ञाननु कारण छे ते अनुमाने जे यथार्थ ज्ञान थाय तेने मान के० प्रमाण कहियें अने जे अयथार्थ ज्ञान थाय ते प्रमाण नही.

तथा सरिखाइ ओपणे अजाणी वस्तुनो जे जाणपणो थाय जेम गो के० बलद तेम गवय के० गवो ए गो सरिखो गवयनु ज्ञान थयु ते उपमान प्रमाण कहियें.

यथार्थ भावनो उपदेशक जे पुरुष ते आप्त कहियें ते

उत्कृष्ट आप्त वीतराग रागद्वेषरहित सर्वज्ञ केवलज्ञानी ते आप्तनो कह्यो जे वचन तेने आगम कहियें. जे राग द्वेष तथा अज्ञान ए दोषे आघो पाछो, अधिको ओछो बोलाय छे ते आगम नही अने राग, द्वेष, भय, अज्ञान रहित जे अरिहंत तेनुं वचन ते आगम प्रमाण जाणवो.

तथा वली अरिहंतना वचनने अनुयायी पूर्वापर अविरोधि मिथ्यात्व, असंयम, कषायथी रहित ते भ्रांति विनास्याद्वादं युक्त तथा जे साधक ते साधक, बाधक ते बाधक, हेय ते हेय, उपादेय ते उपादेय, इत्यादिक वहेचण सहित जे होय तेनो कह्यो ते आगमप्रमाण जाणवो. उक्तं च " सुत्तं गणहररइयं, तहेव पत्तेयबुद्धरइयं च ॥ सुअकेवलिणा रइयं अभिन्नदशपुव्विणा रइयं ॥ १ ॥ " इत्यादिक सदुपयोगी भवभीरु जगत् जीवोना उपकारी एवा श्रुत आम्नायधर जे श्रुतने अनुसारे कहे तेनो वचन पण प्रमाण मानवुं.

तथा कोइक फलरूप लिंगे करीने जे अजाण्या पदार्थनो निर्धार करियें ते अर्थापत्ति प्रमाण कहियें. जेम देवदत्तनो पीन के० पुष्ट शरीर छे पण ते देवदत्त दिवसनो जमतो नथी तेवारे अर्थापत्तिथी जाणीयें जे रात्रे जमतो हशे माटे पुष्ट शरीर छे. एम अर्थापत्ति प्रमाण जाणवो. ए प्रमाण ते जाते अनुमाननो अंश छे ते माटे श्रीअनुयोगद्वारमां प्रथम कह्यो नथी.

इहां दर्शनांतरीयो जे प्रमाण माने छे ते सत्य नथी, जेम छ प्रकारना इंद्रिय सन्निकर्षथी ऊपनो जे ज्ञान तेने नैयायिक प्रत्यक्ष प्रमाण कहे छे, अने परब्रह्मने इंद्रिय रहित माने छे ज्ञानानंदमयी माने छे तेवारे इंद्रिय रहित ज्ञान ते अप्रमाण थाय छे. इत्यादिक अनेक युक्ति छे ते माटे ते प्रमाण नही. तथा चार्वाक

मतवाला मात्र एक इंद्रियप्रत्यक्षनेज प्रमाण माने छे. एम दर्शनां-तरीयना अनेक विकल्प टालीने सर्व नय निक्षेप सप्तभंगी स्याद्वादयुक्त जे वस्तु जीव तथा अजीवनो सम्यक् ज्ञान जेनामां होय तेने सम्यक् ज्ञानी कहियें. ए ज्ञाननु स्वरूप कह्यु.

तत्त्वार्थश्रद्धान सम्यग्दर्शन । यथार्थहेयोपादेयपरीक्षायुक्तज्ञान सम्यग्ज्ञान। स्वरूपरमणपरपरित्यागरूप चारित्र । एतद्रत्नत्रयीरूपमोक्षमार्गसाधनात्साध्यसिद्धिः । इत्यनेनात्मनः ज्ञानदर्शनोपयोगलक्षण एवात्मा छद्मस्थाना च प्रथम दर्शनोपयोग. केवलिना प्रथम ज्ञानोपयोग. पश्चाद्दर्शनोपयोग. सहकारीकर्तृत्वप्रयोगात् उपयोगसहकारेणैव शेषगुणाना प्रवृत्त्यभ्युपगमात् इत्येवं स्वतत्वज्ञानकरणे स्वरूपोपादान तथा स्वरूपरमणध्यानैकत्वेनैव सिद्धि. ॥

अर्थ ॥ हवे श्रीवीतरागना आगमथी जाण्यो जे वस्तु स्वरूप तेने हेयोपादेयपणे निर्धार करवो ते सम्यक दर्शन कहियें. तिहा तत्त्वार्थने विषे कह्यो छे के जे तत्त्वार्थश्रद्धान सम्यग् दर्शनम । उक्त च उत्तराध्ययने जीवा "जीवा य बंधो ॥ पुन्न पावासवो तहा ॥ संवरो निज्जरा मुक्खो ॥ सति एतिहिया नव ॥ १ ॥ तिहियाण तु भावाणं सद्भावे ऊवएसण ॥ भावेण सद्दहतम्स ॥ समत्तं तिवियाहिय ॥ २ ॥ इत्यादिक दशरुचिथी

सर्व जाणवुं जे तत्वार्थ जीवादि पदार्थनो श्रद्धान निर्धार ते सम्यक् दर्शन कहियें, अने जे सम्यक् दर्शन ते धर्मनुं मूल छे. तथा जे हेय ते तजवा योग्य, अने उपादेय ते ग्रहण करवा योग्य, एहवी परीक्षा सहित जे जाणपणो ते सम्यक् ज्ञान छे. जेमां हेयोपयोग संकोच अकरण बुद्धी नथी; पण उपादेयने उपयोगें एहवी चितवणा थाय जे हवे किवारे करुं ? ए विना केम चाले ? एहवी जो बुद्धी नथी तो ते संवेदन ज्ञान छे तेथी संवर कार्य थाय एवो निर्धार नथी.

तथा स्वरूप रमण परभाव राग द्वेष विभावादिकनो त्याग ते चारित्र कहियें, ए रत्नत्रयीरूप परिणाम ते मोक्षमार्ग छे. ए मार्गने साधवाथी साध्य जे परम अव्याबाधपद तेनी सिद्धि निष्पत्ति थाय. जे आत्मानो पोतानुं रूप ते यथार्थ ज्ञान छे. तथा चेतना लक्षण तेज जीवपणो छे, अने ज्ञाननो प्रकर्ष बहुलपणो ते आत्माने लाभ छे; ज्ञान तथा दर्शननो उपयोग लक्षण आत्मा छे. तिहां छद्मस्थने प्रथम दर्शनोपयोग पछे ज्ञानोपयोग छे, अने केवलीने प्रथम ज्ञानोपयोग पछे दर्शनोपयोग छे; जे सर्व जीव नवो गुण पामे तेनो केवलीने ज्ञानोपयोग ते कालें थाय ते माटे प्रथम ज्ञानोपयोग वर्त्ते.

अने सहकारी जे कर्तृताशक्ति ते जेम हतो तेमज छे. एक गुणने साह्य करे अने बीजा गुणनो उपयोग सहकारें वर्त्ते छे. सहकार ते ज्ञानोपयोग विशेष धर्मने जाणे ते जाणतां विशेष ते सामान्यने आधारे वर्ते छे ते सहित जाणे एटले विशेष ते भेला सामान्य ग्रहवाणा अने सामान्य ग्रहतां सामान्य ते विशेषताजन कहेतां सहित जाणे ते माटे सर्वज्ञ सर्वदर्शीपणो जाणवो ए

रीते स्वतत्त्वनुं ज्ञान करवुं. तेथी स्वधर्मनो उपादान के० लेवापणुं थाय, पछे स्वरूपने पामने स्वरूपमां रमण थाय, ते रमण थकी ध्याननी एकत्वता थाय, एटले निर्भे ज्ञान, निर्भे चारित्र, तथा निर्भे तपपणो थाय जे थकी सिद्धि के० मोक्ष निपजे ए सिद्धांत जाणवो.

तत्र प्रथमत ग्रन्थिभेद कृत्वा शुद्धश्रद्धानज्ञानी द्वादशकषायोपशम', स्वरूपैकत्वध्यानपरिणतेन क्षपकश्रेणीपरिपाटीकृतघातिकर्मक्षय., अवाप्तकेवलज्ञानदर्शनः, योगनिरोधात् अयोगीभावमापन्न, अघातिकर्मक्षयानंतर समय एवास्पर्शवद्गत्या एकातिकात्यतिकानाबाधनिरूपाधिनिरूपचरित्रानयासाविनाशिसपूर्णात्मशक्तिप्राग्भावलक्षण सुखमनुभवन् सिध्यति साद्यनंतकाल तिष्ठति परमात्मा इति । एतत् कार्यं सर्वं भव्याना ॥

अर्थ ॥ ते प्रथम ग्रंथिभेद करने शुद्धश्रद्धावान् तथा शुद्ध ज्ञानी जे जीव ते प्रथम त्रण चोकडीनो क्षयोपशम करीने पाम्यो जे चारित्र ते ध्यानें एकत्व थइने क्षपकश्रेणि माडी अनुक्रमे घातिकर्म क्षय करीने केवलज्ञान केवलदर्शन पामे. पछे ए सयोगी गुणठाणे जघन्यथी अंतर्मुहूर्त अने उत्कृष्टो आठ वरश उणापूर्वकोडी रहीने कोइक केवली समुद्घात करे, कोइक केवली समुद्घात न करे, पण आवर्ज्जिकरण सव केवली करे. ते आवर्ज्जिकरणनुं स्वरूप कहे छे–इहा आत्मप्रदेशे रह्या जे

कर्मदल ते पहेला चले छे, पछे उदीरणा थाय छे, पछे भोगवी निर्जरे छे. तिहां केवलीने जिवारे तेरमे गुणठाणे अल्पायु रहे तिवारें आवर्ज्जिकरण करे छे. ते आत्मप्रदेशगत कर्म्मदलने प्रति समयें असंख्यातगुण निर्ज्जरा करवी छे तेटला दलने आत्मवीर्यें करीने सर्व चलायमान करी मूके एवुं जे वीर्यनुं प्रवर्तन ते आवर्ज्जिकरण कहियें. एम करतां त्रण कर्म्मदल वधतां रह्या तो समुद्घात करे नहीतो न करे, ते माटे आवर्ज्जिकरण सर्व केवली करे. पछे तेरमा गुणठाणाने अंते योगनो रोध करीने अयोगी अशरीरी, अनाहारी अप्रकंप घनीकृत आत्मप्रदेशी थको, पांच लघु अक्षर जेटलो काल अयोगीगुणठाणे रहीने शेषसत्तागत प्रकृति वेद्यमान तथा अवेद्यमानस्तिवुक संक्रमें सत्ताथी खपावी, सकल पुद्गल संगपणाथी रहित थयो, तेहिज समयें आकाश प्रदेशनी वीजी श्रेणिने अणफरसतो थको लोकांते सिद्ध कृतकृत्य संपूर्ण गुण प्राग्भावी पूर्ण परमात्मा परमानंदी अनंत केवलज्ञानमयी, अनंत दर्शनमयी, अरूपी सिद्ध थाय. उक्तं च उत्तराध्ययने " कहि पडिहया सिद्धा, कहिं सिद्धा पयठ्ठिया ॥ कहि वोंदिं चइत्ताणं ॥ कत्थ गंतूण सिज्झई ॥ अलोए पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पइठ्ठिया ॥ इह वोंदि चइत्ताणं तत्थ गंतूण सिज्झई ॥ " इत्यादि ते सिद्ध एकांतिक, आत्यंतिक, अनाबाध, निरुपाधि, निरुपचरित, अनायास, अविनाशी, संपूर्ण आत्मशक्ति प्रकटरूप सुखमते अनुभवे. अव्याबाध सुख ते प्रदेशें प्रदेशें अनंतो छे. उक्तं च उववाइसूत्रें " सिद्धस्स सुहोरासि ॥ सव्वद्धा पिण्डियं जह वज्जा ॥ सोणंतवग्गोभइयो ॥ सव्वागासे न माइज्जा ॥ १ ॥ " इति वचनात् ए रीतें परमानंद सुख भोगवता रहे छे. सादि अनंतकाल पर्यंत परमात्मापणे रहे छे. तो एहिज कार्य सर्व भव्यने करवो, ते कार्यनो पुष्ट कारण

श्रुताभ्यास छे ते श्रुताभ्यास करवा माटे ए द्रव्यानुयोग नय स्वरूप लेशथी कह्यो. ते जाणपणो जे गुरुनी परंपराथी हुं पाम्यो ते गुर्वादिकनी परंपराने संभारुं छु.

काव्य

गच्छे श्रीकोटिकाख्ये विशदखरतरे ज्ञानपात्रा महान्तः, सूरिश्रीजैनचद्रा गुरुतरगणभृतशिष्य-मुख्या विनीता ॥ श्रीमत्पुण्यात्प्रधाना सुमतिजलनिधिपाठका साधुरगाः, तच्छिष्या पाठकेद्रा. श्रुतरसरसिका राजसारा मुनींद्रा ॥१॥

तच्चरणाम्बुजसेवालीनाः श्रीज्ञानधर्मधराः ॥ तच्छिष्यपाठकोत्तमदीपचद्राः श्रुतरसज्ञाः ॥२॥ नयचक्रलेशमेतत्तोपा शिष्येण देवचंद्रेण ॥ स्वपरावबोधनार्थं कृत सद्भ्यासवृद्ध्यर्थं ॥ ३ ॥ शोधयन्तु सुधियः कृपापरा शुद्धतत्त्वरसिकाश्च पठन्तु ॥ साधनेन कृतसिद्धिसत्सुखाः परममगलभावमश्नुते ॥ ४ ॥ इति श्रीनयचक्र विवरण समाप्तम् ॥

दोहा

सुक्ष्मबोध विणु भविकने । न होये तत्व प्रतीत ॥
तत्वालबन ज्ञान विण । न टले भवभ्रमभीत ॥१॥
तत्वते आत्मस्वरूप छे । शुद्धधर्म पण तेह ॥
परभावानुग चेतना । कर्मगेह छे एह ॥ २ ॥
तजी परपरिणतिरमणता । भज निजभाव विशुद्ध ॥

आत्मभावथी एकता । परमानन्द प्रसिद्ध ॥ ३ ॥
स्याद्वाद गुणपरिणमन । रमता रमतासंग ॥
साधे शुद्धानंदता । निर्विकल्प रसरंग ॥ ४ ॥
मोक्षसाधन तणु मूल ते । सम्यग्दर्शनज्ञान ॥
वस्तुधर्म अवबोध विणु । तुसखंडन समान ॥५॥
आत्मबोध विणु जे क्रिया । ते तो बालकचाल ॥
तत्वार्थनी वृत्तिमें । लेजो वचन संभाल ॥ ६ ॥
रत्नत्रयी विणु साधना । निष्फल कहा सदीव ॥
लोकविजय अध्ययनमें । धारो उत्तमजीव ॥ ७ ॥
इंद्रिविषय आसंसना । करता जे मुनिलिंग ॥
खूता ते भवपंकमें । भाखे आचारांग ॥ ८ ॥
इम जाणी नाणी गुणी । न करे पुद्गल आस ॥
शुद्धात्मगुणमें रमे । ते पामे सिद्धिविलास ॥ ९ ॥
सत्यार्थ नयज्ञान विनुं । न होये सम्यग्ज्ञान ॥
सत्यज्ञान विणु देशना । न कहे श्रीजिनभाण ॥१०॥
स्याद्वादवादी गुरु । तसु रस रसिया शीष्य ॥
योग मिले तो निपजे । पुरण सिद्ध जगीस ॥११॥
वक्ता श्रोता योगथी । श्रुतअनुभव रस पीन ॥
ध्यानध्येयनी एकता । करता शिवसुख लीन ॥१२॥

इम जाणी शासनरुचि । करजो श्रुतअभ्यास ॥
पामी चारित्रसपदा । लेहेसो लीलविलास ॥१३॥
दीपचन्द्र गुरुराजने । सुपसायें उल्लास ॥
देवचन्द्र भवीहितभणी । कीधो ग्रन्थप्रकाश ॥१४॥
सुणसे भणसे जे भविक । एह ग्रन्थ मनरग ॥
ज्ञानक्रिया अभ्यासतां । लहेशे तत्वतरग ॥ १५ ॥
द्वादससार नयचक्र छे । मल्लवादिकृत वृद्ध ॥
सप्तशति नय वाचना । कीधी तिहां प्रसिद्ध ॥१६॥
अल्पमतिना चित्तमें । नावे ते विस्तार ॥
मुख्यथूलनयभेदनो । भाष्यो अल्प विचार ॥१७॥
खरतर मुनिपति गच्छपति ॥ श्रीजिनचन्द्रसूरीश ॥
तास शीष्य पाठकप्रवर। पुन्यप्रधान मुनीश ॥१८॥
तसु विनयी पाठकप्रवर । सुमतिसागर सुसहाय ॥
साधुरंग गुणरत्ननिधि । राजसार उवज्झाय ॥१९॥
पाठक ज्ञानधर्म गुणी । पाठक श्रीदीपचद ॥
तास शीष्य देवचंद्रकृत ॥ भणता परमानद ॥२०॥

इति श्रीनयचक्रविवरण समाप्त ॥



॥ ॐनमःसिद्धम् ॥

श्रीमद्देवचन्द्रकृतः

गुरुगुणषट्त्रिंशत्षट्त्रिंशिकाबालावबोधः ॥

आर्यावृत्तम्.

वीरस्स पए पणमिअ, सिरिगोयमपमुहगणहराण च ।
गुरुगुणछत्तीसीओ, छत्तीस कित्तइस्सामि ॥ १ ॥

टवार्थकारनु मङ्गल-अभिधेयादि-

प्रणम्य परमात्मानं, शुद्धस्याद्वाददेशकम् ।
श्रीवीर शासनाधीशं, विश्वेशं प्रणमाम्यहम् ॥१॥
श्रीमदाचार्यवर्याणां, गुणानां षट्त्रिंशिका ।
टवार्थं शिष्यबोधाय, देवचन्द्रेण प्रोच्यते ॥२॥

श्रीवीर चोवीसमा परमेश्वर त्रिशलानदन मोहमल्लजीपवाने महावीर अभयें परीसहोवसगाण तेण कए महावीरे, एहवा श्रीमहावीर स्वामी तेहना 'पए' चरणारविंद प्रणमी-नमस्कार करीने तेहना प्रथम गणधर श्रीगौतम जेहना दीक्षित पचास हजार ५०००० मुनि मोक्षानंदने पाम्या ते प्रमुख अग्निभूति आदिक जे गणधर ते सर्वने प्रणाम करीने आत्माने

परमानंदतत्त्व निष्पत्तिनो मूळ शुद्ध श्रद्धान छे, ते शुद्ध श्रद्धान देवतत्त्व, गुरुतत्त्व, धर्मतत्त्व, एहनी शुद्ध ओळखाण प्रतीत करे थाय, तिहां देव जे श्रीअरिहंत सिद्धस्वरूपभोगी स्वगुणपर्याय प्राग्भाव करवे निर्मलीकृत स्वसत्तावंत स्वरूपकर्त्ता, स्वरूप-भोक्ता, जेहने अवलंबी अनंताजीव शुद्धसत्ता करे पिण पोताना, परना सत्ताना कर्त्ता नथी, ते देवतत्त्व. ने एहवो शुद्धानंद पूर्ण-प्राग्भावताना रुचि तेहना ज्ञायक ते स्वरूपरमणी, सर्व आश्रवना त्यागी, विषयकषायथी विरक्त, ते गुरुतत्त्वथी आचार्य तेह छत्तीस गुणे विराजमान छे, ते छत्तीस छत्तीसी भिन्नभिन्नपणे छे तेहनो स्वरूप 'कित्तइस्सामि' कहीश्युं, भव्योने, गुरुतत्त्व यथार्थ ओळखावा माटे. [१]

तिहां हवे प्रथम छत्रीसी कहे छे—

× ४ ४ ४ ४ ४
चउदेसणकहकुसलो, चउभावणधम्मसारणाइरओ।
चउविहचउज्झाणविऊ, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥२॥

टबार्थ—इहां आचार्य ते जे रत्नत्रयी परिणम्या अने आत्मार्थी जीवने शुद्ध धर्मनी प्ररूपवाने माटे जे छत्रीसी कहेवी ते सर्व रत्नत्रयीमयीज कहेवी, ते माटे प्रथम गुण जे उपदेशक ते माटे प्रथम छत्रीसीमां च्यार ४ देशना कहेवा मध्ये कुशळ माहीयार (होंशीयार). आक्षेपिणी १. विक्षेपिणी २. संवेदनी ३. निर्वेदनी ४. आक्षेप कहेतां जे आत्मा मोहनीय उदयवश पड्यो तेहने आक्षेप करी कहेवो जे रे जीव! तुने अनंतकाल परभावरंगीपणे वर्त्ततां गयो कर्म करी रडवडतां अनंत-काल गयो ते हवे तुं ए परभाव तजी परधर्म संगी न था,

×पाठांतरम्—चउविहदेसणकहा, धम्मभावणासारणाइकुसलमइ ॥

आत्मधर्मरंगी था, जेहथी ताहरो स्वरूपानंद ते तु भोगवे ते आक्षेपिणी कहीये. १. तथा–विक्षेपिणी–ते जे विषय, कषाय, आश्रव, अविधि आशातनानां फल पाडुआं (खराब) छे. ते उपर विषयवशें रावण, ब्रह्मदत्त, कीचकादिक कुगतें गया, कषायवशें दुर्योधन, तंदुली मत्स्य, प्रमुखना दृष्टांत कहे, आश्रव सेवतां दुःखविपाकी वसुराजा प्रमुख दुर्गतें गया, अविधि आशातनाए अनेक जीव भम्या ते माटे अविधि न करवी इम उपदेश देइने जे आत्माने दोषथी अरुची उपजाववी ते विक्षेपिणी देशना कहेवी. २ संवेदनी जे मोक्ष निःकर्मापद अरूपी, अबाध, आत्मानंदनी रुचि उपजाववानी जे देशना देवी ते संवेदनी देशना जाणवी. ३ निर्वेदनी–जे देशना देव मनुष्यना सुख ते औदयिक भाव आवरण रुप छे ते माटे ते सुखथी जे उदासीनपणो ते निर्वेद कहीये. ४. ए देशनामें कुशल. । कथा ४. अर्थकथा–धन उपजाववानी कथा. १. कामकथा–इन्द्रिय विषयनी कथा २ धर्मकथा–जे दान, सील, तप, भावनानो स्वरूप कहेवो ते धर्मकथा. ३. अने ए सर्व भेळो कहेवो ते संकीर्णकथा. ए ४ कथामध्ये अर्थकथा, कामकथा ते तजवा योग्य, धर्मकथा ते कहेवा योग्य, संकीर्णकथा ते जाणवा योग्य. । भावना ४–ज्ञानभावना, १. जे आत्माने ज्ञानी थवा माटे भणवो, सांभळवो, विचारवो, वाचनादि पाच सज्झायनो करवो, ते ज्ञानभावना, २, बीजी दर्शन भावना, ३, त्रीजी चारित्र भावना, ४, चोथी वैराग्य भावना. ए च्यार भावना, वळी मैत्री भावना, १. प्रमोद २, करुणा, ३ मध्यस्थ भावना ४ ए च्यार। च्यार धर्म–दान, शील, तप, भावरूप.। सारणा १, वारणा २, चोयणा ३, पडिचोयणा, ४, ना जाण। च्यार ध्यान–आर्त्तध्यान १, रौद्रध्यान २, धर्मध्यान ३, शुक्लध्यान ४, ए च्यार ध्यान, प्रथम बे ध्यान

(आर्त्त रौद्र) त्यजवां अने धर्मध्यान, शुक्लध्यान करवा योग्य तेहना पाया १६ ए छत्तीस गुणे विराजमान ते गुरु जाणवा॥२॥

पणविहसम्मचरणवय-ववहारायारसमिइसज्झाए ।
इगसंवेगे अ रओ, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥३॥

टबार्थ–'पणविहसम्म' पांच प्रकारे समकीत-उपशम १ क्षयोपशम २, क्षायिक ३, सास्वादन ४, वेदक ५, एहना परिणामना जाण। पांच चारित्र–सामायिक १, छेदोपस्थानीय, २ परिहारविशुद्धि ३, सूक्ष्मसंपराय ४, यथाख्यात ५, ए पांच चारित्र. स्वरूपरमण, पररूप त्याग, व्रत–महाव्रत पांच–प्राणातिपातविरमणादिक। पांच व्यवहार–आगम व्यवहार, चाद पूर्वथी मांडी अधिक ज्ञानीने श्रुतव्यवहार, वहु श्रुतने आज्ञाव्यवहार, शेषमुनिने धारणा व्यवहार, आलोयण प्रमुखे, जीतव्यवहार भद्रक संघने छे.। पांच आचार–ज्ञानाचारादिक.। पांच समिति इर्य्यासमित्यादिक.। पांच सज्झाय–वायणा, पुछणा, परियट्टणा, अणुप्पेहा, धम्मकहादिक, एटला कार्यमां रक्त पिण **संवेग**– मोक्षाभिलाष सहित, एटलें ए छत्रीस बोलमें मग्न छे पिण ए निर्विकल्प परमानंदमयी जे मोक्ष तेहने अभिसंवेग कहीये ते मध्ये रक्त छे. एटले वीजी छत्रीसीऐं करी विराजमानने जाणीने एहवा गुणवंत ते आचार्य गुरुतत्त्व करी सद्दहवा. ए बीजी छत्रीसी. ॥ ३ ॥

इंदियविसयपमायासवनिद्दकुभावणापणगछक्को ।
×छज्जीवेसु सजयणो, छत्तीसगुणो गुरु जयउ ॥४॥

× पाठान्तरम्–छसु कायेसु.

टवार्थ–इन्द्रिय पाच । तथा पाच इन्द्रियना विषय जे वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, शब्द, ए पाच मूळ विषय। प्रमाद पांच–प्रमादकता अहंकारनी, विषय इन्द्रियना कषाय क्रोधादि, निद्रा आलस्यरूप, विकथा राजकथादिक ए पाच मूळ प्रमाद. । आश्रव पांच–प्राणातिपात १, मृषावाद २, अदत्तादान ३, मैथुन, ४, परिग्रह, ५, ए आश्रव पाच. । निद्रा १ निद्रानिद्रा २, प्रचला ३, प्रचलाप्रचला ४, थीणद्धी ५, । कुभावना पाच–कदर्पभावना १, किल्बीषी भावना २, अभियोगी भावना ३, असुरी भावना ४, संमोही भावना ५, । ए छ पांच त्रीस ३० बोलथी जे विरम्या अने छ कायना जीवनी जयणावंत छे एहवी त्रीजी छत्रीसीए करी विराजमान माहरा गुरु तत्त्व जाणरा. ३ ॥४॥

छव्वयणदोसलेसांवस्सयसद्दवत्तकंभासांण ।
परमत्थजाणणेण, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥५॥

टवार्थ –हवे चोथी छत्रीसी कहे छे–तिहा छ दोष वचनना तेहथी विरम्या होय, अलीक जे जूठु बोलता नथी १, हीलना थाय ते बोलता नथी, २, खिंसित–जे बोल्ये लोक खिहाहिसा करे (खिंसा) ते बोलता नथी. ३, कर्कस–कठोर जे बोलवाथी दुःख उपजे ते बोलता नथी. ४, गर्हणीय, जे लोकमें गर्हा थाये ते बोलता नथी. ५, शमितो धिकरणोदीरणा रूप जे शम्यो उपशम्यो जे अधिकरण–कषाय ते वळी उदीरे ते. ६, ए छ वचनथी निवर्त्या छे. । तथा लेश्या ६. कृष्ण १, नील २, कपोत ३, ए त्रण अप्रशस्तलेश्याथी निवर्त्या छे, तेजो ४, पद्म ५, शुक्ल ६ ए तीन प्रशस्त जाणी प्रवर्त्ते छे।

तथा छ ६ आवश्यक-सामायिक १, चोविसत्थय २, वंदन ३ पडिक्कमण ४, काउसग्ग ५, पच्चक्खाण ६, तेहना कारण कार्यपणे परिणमवावंत छे तथा द्रव्य ६ छ धर्मास्तिकाय १. अधर्मास्तिकाय २, आकाशास्तिकाय ३, पुद्गलास्तिकाय ४. काल ५, ए पांच अजीव. छट्टो जीव। तथा तर्क ६ (दर्शन) जैन १, मीमांसक २, बौद्ध ३, नैयायिक ४, वैशेषिक ५, सांख्य ६। तथा भाषा ६ छ-संस्कृत १. प्राकृत २, अपभ्रंश-३, सौरसेनी ४, मागधी ५, पिशाची ६ ए छ-छ छत्तीस बोलना परमार्थना जांण ते माहरा गुरु तत्त्वजाणवा. ४. ॥ ५॥

सगभयरहिओ सगपिंडपाणएसणसुहेहिं संजुत्तो।
अट्ठमयट्ठाणरहिओ, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥६॥

टबार्थ--हवे पांचमी छत्रीसी कहे छे। सातभय-इहलोकभय १, परलोकभय २, असरणभय ३, मरणभय, ४ चोरभय ५, अकस्मात्भय ६, आदानभय ७, ए सात भय रहित छे। तथा पिंडेसणा ७ तथा पाणेसणा ७-संसट्ठा १ मसंसट्ठा २ उद्धिय ३ तह अप्पलेणिया ४ चेव। उग्गहिया ५ पग्गहिया ६ उज्झिय धम्माय ७ सत्तमिहा. १-प्रथम पिंडेषणा-संसृष्ट खरडेला हाथ तथा पात्रादि असंसृष्ट हस्त असंसृष्ट पात्र एटले दही अखरडित एहवो पिंड ग्रहता अभिग्रह धारीने प्रथम पिंडेषणा १, संसृष्ट बीजी २, गाथामां व्यत्यये आण्युं छे ते सुखोच्चारण मात्र माटे असंसृष्ट हाथ संसृष्टपात्र वा असंसृष्ट पात्र, संसृष्ट हाथ एहवी भीक्षा ग्रहताने त्रीजी पिंडेषणा ३, अल्पलेपा ते श्युं ? अल्प ते अभाववादी निर्लेप पृथक्यादि ग्रहताने चतुर्थी पिंडेषणा ४, अवग्राहीता नाम भोजनकाति शरावलादिकने

विषे थाप्यु जे भोजन जाति तेहवी भिक्षा लेवी ते पाचमी पिंडेषणा ५, गृहीता नाम-भोजनबनाइ देताने उजमाल थाते करादिकथी पडयु ते भोजन जात (च) ते, भोगववाने काजें करादिके जे ग्रह्यु ते छट्ठी पिंडेषणा ६, उजझीतमतिश्यु छाडवा योग्य भोजन जात द्विपदादिकं पण नवां छे ते वळी अर्द्धत्यक्तावशेषमात्र रेहताने सातमी पिंडेषणा ७। पाणेषणा पिण इमज सात प्रकारें ते म ये चोथी पिंडेषणा अप्पलेवा मांहे नानापणु आयाम सोवीरकादि निर्लेप जाणवु. इम १४ भेदना जाण. । तथा सात प्रकारना सुखें संयुक्त-१-संतोष, २, करण-ईंद्रिय तेहनो जीपवो ते सुख बीजुं, ३-प्रसन्नचित्तता, ४-दयालुपणो, ५-सत्यपणो, ६-पवित्रपणो ७-दुर्जनथी वेगळो रहेवो ते सुख सातमु ऐ २८. तथा आठ मदना स्थानकथी रहित जातिमद १, कुलमद २, लाभमद ३, बलमद ४, ऐश्वर्यमद ५, रुपमद ६ विद्यामद ७ अने तपमद ८ ए आठ मदथी रहित, ए पाचमी छत्रीसी ए गुणतत्व रीते विराजमान ते माहरा गुरु जाणवा.॥६॥

अट्ठविहनाणदंसण चारित्ताचारवाइगुणकलिओ।
चउविहबुद्धिसमेओ, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥७॥

टवार्थ--अट्ठविह-आठ जातिना ज्ञानादिक आचार-काले १ विणए २ बहुमाणे ३ उवहाणे ४ तह, अनिह्नवणे ५ वंजण ६ अत्थ ७ तदुभये ८ अट्ठविहो नाणमायारो ॥ १.॥ तथा दर्शनाचार ८-निस्संकिय १ निक्कंखिय २ निव्वित्तीगिच्छा-३ अमूढदीठि अ ४। उववृह ५ थिरीकरणे ६ वच्छल ७ प्पभावणे ८ अट्ठ ॥ २ ॥ ए सोळ तथा चारित्राचारना ८ भेद ते पाच समिति, त्रण गुप्ति, ए २४ बोल थया. वळी आचार-

वंत १, आहारवंत २, व्यवहारवंत ३ विहारवंत ४ अपरिश्रा-
विवंत ५, निर्जरावंत ६ अपायदर्शी ७ एषणावंत ८ ए आठ
गुणवंत गुरु. वळी च्यारबुद्धि ४ औत्पातिकी १ वैनयिकी-
२ कार्मिणिकी ३ पारिणामिकी ४ ए सर्व मळी ३६ छत्रीस
गुणे विराजमान म्हारा गुरु जाणवा. ए छट्ठी छत्रीसी.
गाथा ॥ ७ ॥

अट्ठविहकम्म, अट्ठंग जोगमहसिद्धिजोगदिट्ठिविउ ।
चउविहअनुओगनिउणो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥८॥

टवार्थ--हवे सातमी छत्रीसी कहे छे-आठ कर्म ज्ञाना-
वरणादिक तेहना सूक्ष्म भावना जांण. ८ । वळी अष्टांगयोग-
यम १, नियम २, आसन ३, प्राणायाम ४, प्रत्याहार ५,
धारणा ६, ध्यान ७, समाधि ८ ए अष्टांगयोग कहीये-तेमां
यम ते प्राणातिपातविरमणादि महाव्रत १. नियम-शौच, संतो-
षादि २, आसन-पद्मासनादि ३, प्राणायाम श्वासनिरोधादिक
चार अंग स्थिरता वधारवा माटे अभ्यास करवो ४, पछी प्र-
त्याहार जे आत्माने विषयथी खेंचीने स्वरूप सन्मुख करवो ते. ५,
धारणा जे ध्येय अरिहंतादिक शुद्ध निमित्त अथवा आत्म-
स्वरूप ते ध्येय छेतेहने विषे पोताना उपयोगनी एकाग्रता
करवी ते धारणा ६, ते धारणायें अंतर्मुहूर्त्त सीम स्थिरता रहेवी
ते ७, ध्यानप्रतें ध्यानना सुख मध्ये लीन ते समाधि ८, ए आठ
योगना अभ्यासी. ८ । वळी आठ महासिद्धि अणिमादिक ।
तथा आठ योगद्रष्टि-मित्रा १ तारा २ बला ३ दीप्रा ४ स्थिरा
५ कान्ता ६ प्रभा ७ परा ८. इहां पेहेली ४ च्यार द्रष्टि मध्ये
मार्गानुसारीथी मांडीने ग्रंथी भेदी सीम पुहचे संवेदन ज्ञानथी

यद्यपि वेद्य संवेद्य पदने पुहचे नही, स्थिरादिमें आव्यो समकित पामे, पछी ते स्पर्शना ज्ञानी थको अनुभव ज्ञान थकोते भेद रत्नत्रयी परिणमी अभेद रत्नत्रयीने वलें घनघाती खपावीने केवली थाये, तिवारे आठमी द्रष्टि पहोत्यो कहीये. ए गुणें युक्त। तथा चार ४ अनुयोगमा निपुण–द्रव्यानुयोग १, गणितानुयोग २, चरणकरणानुयोग ३, धर्मकथानुयोग ४ ए सर्व मळी ३६। ए सातमी छत्रीसी जाणवी। अथवा मूळ अनुयोग, उपक्रम जे ते पणे थवानो उद्यम (उद्योग) १. वस्तुने विषे समकालीद्योतक गुण ते निक्षेप २, वस्तुनो स्वरूपार्थ–फलार्थ प्रमुख अर्थनो कहेवो ते अनुगम ३. वस्तुना अवस्थांतरीभाव कथक ते नय ४ ए पिण च्यार अनुयोग बीजा जाणवा. ७ ॥ ८ ॥

नवतत्तँण्णु नववभगुत्तीगुत्तो नियार्णँनवरहिओ।
नवकँप्पकयविहारो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥९॥

टबार्थ—हये आठमी छत्रीसी कहे छे–नव तत्त्वना जाण। नववाड ब्रह्मचर्यनी तेना पालक. एकली स्त्री संघातें एकला ब्रह्मचारीयें एक वसतिमें रात्रे वसवो नहीं १ स्त्रीना शृंगार विलास विलापनी कथा न कहेवी २, जे पाट, बाजोठे स्त्री बेठीं होय ते थानके बे घडी माहे पुरुषे बेसवो नहीं, पुरुषने आसने स्त्रीये बे तथा ४ घडी सीम बेसवो नहीं ३, स्त्रीनो मनोहर गुह्य इन्द्री जोवो नहीं ४, ज्या स्त्री पुरुष भोगवता हुवे ते कालना शब्दविलास साभळवा नही ५, ब्रह्मचारी पेहेला भोग भोगव्या सभारवा नहीं ६. ब्रह्मचारीयें चीकणा आहार करवा नहीं ७, ब्रह्मचारीयें अतिमात्रायें आहार करवो नहीं ८ ब्रह्मचारीयें शरीरनी शोभा न करवी ९ ए नववाडी पाळे.

१८। नव निआंणा ९ रहित. २७. अने नव कल्पी विहारना करणहार—चोमासानो एक विहार, शेष कालना ८ महिनाना आठ विहार ए नव विहारे वसति गोचरी स्थंडिल, सर्व पालटवी; क्षीण जंघाबल गीतार्थने विहारनो नियम निह्रीं "**वाससयंमि वसंता, मुणिणो आराहगा भणिया**" इत्युपदेशमाला वचनात्। ए आठमी छत्रीसीना धरणहार ते माहरा गुरु जाणवा. ॥ ९ ॥

दसभेय अ संवरँ, संकिलेसँउववॉयविरहिओनिच्चं।
हासाईछक्करहिओ, छत्तासगुणो गुरू जयउ ॥१०॥

टवार्थ—हवे नवमी छत्रीसी कहे छे—दस १० प्रकारना संवर संयुक्त—पांच इंद्रि वश ए पांच संवर, तीन योग रोकवा ए ३, औघिक, उपग्राहिक, उपधिनो मान ए दश संवर। दस १० प्रकारनो संक्लेश—१ उपधि संक्लेश, २ वसति संक्लेश, ३ कषाय संक्लेश, ४ आहार संक्लेश, ५ ६—७— तीन योगनी चपलता ते संक्लेष, ८ अज्ञान संक्लेश, ९ अदर्शन संक्लेश, १० अचारित्रक्रियानो संक्लेश. ए १० दश संक्लेशथी रहित। तथा संजमना १० दश उपघातथी रहित. "**दस संजमोवघाया, उग्गम १ उप्पायणे २ स ३ परिकम्मे ४। परिहरण ५ नाण ६ दंसण ७ चरित्त ८ अचिअत्त ९ संरक्खे १० ॥१॥**" वळी हास्य, रति, अरति, शोक, भय, दुगंछा. ए छ थी रहित। ए नवमी ३६ सी गुणे युक्त म्हारा गुरु जाणवा. ॥ १० ॥

दसविहसामायॆंरी, दसचित्तंसमाहिठाणलीणमणो।
सोलसकसायॆंचाई, छत्तीसगुणो गरू जयउ ॥११॥

टबार्थ—दशमी छत्रीसी कहे छे. दस समाचारी–इच्छाकार १ मिच्छाकार २ तहकार ३ छदणा ४ निमतणा ५ पुच्छणा ६ आपुच्छणा ७ आवस्सही ८ निस्सीही ९ उपसपदा १० ए दस सामाचारी साधुनी नित्यनी। चित्तनी समाधिना स्थानक, नव वाडि ९ दशमो परिचय। ए २०। अनतानुबधी आदि १६ सोळ कपायना त्यागी एटले दश समाधि लीन, सोळ कपायत्यागना सत्रमी ते गुण ३६ सी विराजमान म्हारा गुरु जाणवा। ए दशमी छत्रीसी जाणवी. ॥११॥

पडिसेवॆंसोहिंदोसे, दसदसविणयाइचउसमाहीओ।
चउभेयाउॆं मुणतो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥१२॥

टबार्थ—दश प्रकारनी प्रतिसेवा–दर्पे १, प्रमादे २, अणाभोगे ३, आतुरतायें ४, आपदायें ५, संकिए ६, सहसात्कारे ७, भयें ८, प्रदोषें ९, विचारणायें १० ए दशे कारणे दोष लागे १०. ते लगाडता नथी। दश शोधि दोष– "आकपइत्ता १, अनुमाणइत्ता २, ज दिट्ठं ३ बायर ४ च ५ सुहुम ६ वा। छन्न ७ सद्दाउलय ८ बहुजण ९ अव्वत्त १० तस्सेवी ॥१॥" ए दस एव २०। विनय समाधिना भेद ४ तप समाधिना भेद ४, श्रुत समाधिना भेद ४, आचार समाधिना भेद ४ ए १६ मिल्या ३६ ना जाण ते माहरा गुरु जाणवा ए ११ मी छत्रीसी. ॥१२॥

दसविहवेअवच्चं, विणयं धम्मं च पडु पयासंतो ।
वज्जियअकप्पछक्को, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥१३॥

टबार्थ—दश प्रकारनो वेयावच्च–" आयरिय १ उवज्झाए २, तवस्सि ३ सेहे ४ गिलाण ५ साहुस्सु ६ । समणुन्न ७ संघ ८ कुल ९ गण १०—वेयावच्चं हवइ दसहा ॥१॥" तथा दश प्रकारनो विनय–अरिहंत १ सिद्ध २ चेइय ३, सुए ४ य धम्मे ५ य साहुवग्गे ६ य । आयरिय ७ उवज्झाए ८, पवयणे ९ दंसणे १० विणओ ॥ १ ॥ " एवं २० । तथा दशविध यतिधर्मने विषे सदा उद्यमी छे.–खंती १ मद्दव २ अज्जव ३, मुत्ती ४ तव ५ संजमे ६ य बोधव्वे । सच्चं ७ सोयं ८ अकिंचणं च ९ बंभं १० च जइधम्मो ॥ " एवं ३० पडु प्रकाशक । तथा दशवैकालिके कह्यो जे अकल्प्य छक्क तेना वर्जवावाळा । ए ३६ गुणे युक्त म्हारा गुरु जाणवा. ए बारमी छत्रीसी. ॥१३॥

दसभेयाइ रूईए, दुवालसंगेसु बारउवंगेसु ।
दुविहसिक्खाइ निउणो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ॥१४॥

टबार्थ—दश १० रुचिवंत–" निसग्गुवएसरुई, आणरुईसुत्तबीयरुइमेव । अभिगमवित्थाररुई किरिया संखेवधम्मरुइ ॥१॥ " १० । अंग बार–"आ-

यारो १ सूयगडो २ ठाण ३ समवायो ४ विवाहपन्नत्ती ५ णायाधम्मकहाओ ६ उवासगदसाओ ७ अंतगडदसाओ ८ अणुत्तरोववाइयदसाओ ९ पण्हावागरण १० विवागसुअ ११ दिट्ठिवाओ १२" इति १२ बार अंग। तथा बार उपांग–उववाइ १, रायपसेणी २, जीवाभिगम ३, पन्नवणा ४, जंबूद्वीपपन्नत्ती ५, चंदपन्नत्ती ६, सूरपन्नत्ती ७, (निरयावलिय) पुप्फीय ८, पुप्फचूलिया ९, कप्पीआ १०, कप्पवडसीया ११, वण्हीदसा १२ ए पांच सूत्र मिळी एक निरयावळी कहेवाय छे. एम १२ उपांगना जांण। तथा बे शिक्षा–ग्रहणाशिक्षा जे शुभज्ञाननो भणवो १, आसेवना शिक्षा जे सर्वक्रियानो शीखवो २. ए छत्तीस गुणे करी शोभित ते आचार्य गुणवंत जाणवा, ए तेरमी छत्रीसी युक्त म्हारा गुरु जाणवा. ॥१४॥

एगारसउवासगपडिमा, वारसवयं[2] तेरकिरियट्ठाणेय[3]।
सम्म उवएसंतो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥१५॥

टबार्थ—अगीयार प्रतीमा श्रावकनी–"दंसण १ वय २ सामाइय ३, पोसह ४ पडिमा ५ अबंभ ६ सच्चित्ते ७। आरंभ ८ पेस ९ उद्दिट्ठवज्जए, १० समणभूए ११ अ ॥१॥" श्रावकना व्रत बार १२–स्थूल प्राणातिपातविरमणादि पांच अणुव्रत ५, त्रण गुणव्रत ३, ४ च्यार शिक्षाव्रत, एवं बार। तथा तेर किरिया स्थानक सूयगडांगे कह्या ते–"अट्ठा १ ऽणट्ठा २ हिंसा ३ ऽकम्हा ४

दिट्ठि ५ य मोस ६ दिन्ने ७ अ। अज्जत्थ
८ माण ९ मित्ते १० माया ११ लोहे १२ रि-
यावहिया १३ ॥१॥" सम्यग् प्रकारे उपदेश देता ते
छत्रीसगुणे विराजमान म्हारा गुरु जांणवा। १४ ए चौदमी
छत्रीसी जांणवी. ॥१५॥

बारस[12]उवओगविऊ, दसविह[10]पच्छित्तदाणनिउणमई।
चउदस[14]उवगरणधरो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥१६॥

टबार्थ—बार उपयोगना जाण. पांच ज्ञान, तीन अज्ञान,
च्यार दर्शन ए बार उपयोग। दश प्रायश्चित्त "तं दसवि-
हमालोयण १ पडिक्कमणो २ मय ३ विवेगे ४
तहेव उस्सग्गे ५। तव ६ छेय ७ मूल ८ अण-
वट्ठिए ९ अपारंचिए १० चेव ॥१॥ ए दश १० प्राय-
श्चित्तना दातार निपुण बुद्धिमंत. । तथा १४ चौद उपकरणना
धरणहार तेमां ७ पात्रनां उपकरण—"पत्तं १ पत्ता-
बंधो २, पायट्ठवणं ३ च पायकेसरिया ४। पड-
लाइं ५, रयत्ताणं ६, गुच्छओ पायनिज्जोगो॥१॥
ए ७ पात्रना उपकरण, अने सात ७ शरीरना—"मुहणंत १
रयोहरणं २, कंबले ३ कप्पग ४ चोलपट्टो य ५
उत्तरपट्टो छट्ठो ६, सत्तमो पायपूंछणयो ॥ १ ॥"
ए १४ उपगरण सूजता मानोपेत धरे, वधता न राखे, कारणें

पाढेरु राखे, औपग्रहिक उपगरणनो मान नथी । एहवा गुणवंत ते माहरा गुरु जाणवा. ॥१६॥

ारसभेयमि तंवे, भिक्खू पंडिमासु भावणासु च।
निच्च च उज्जमतो, छत्तीसगूणो गुरू जयउ ॥१७॥

टवार्थ—हवे सोळमी छत्रीसी कहे छे—बारभेदें तप—छ बाह्य तप—" अणसण १ मूणोयरिया २, वित्तीसखेवण ३ रसच्चाओ ४ । कायकिलेसो ५, सलीयणा ६ य बज्झो तवो होइ, ॥ १ ॥ " तथा छ ६ अभ्यंतरतप—" पायच्छित्त १ विणओ २, वेयावच्च ३ तहेव सज्झाओ ४ । झाण ५ उस्सग्गोवि य ६, अब्भिंतरओ तवो होइ ॥ २ ॥ " ए बार तप । तथा भिक्षुनी—साधुनी प्रतिमा बार—पेहेली १ मासनी, बीजी बे मासनी, त्रीजी त्रण मासनी, इम यावत् सातमी सात मासनी, जघन्य एकांतरोपवास, उत्कृष्ट यथाशक्ति दीठे दंडाशनादिक आसने आतापना रात्रें काउस्सग्ग, ए रीतें करवानी आठमी सत्तमसत्तमिया, नवमी नवमनवमीया, दसमी दसमीया, इग्यारमी एकअट्ठमनी—त्रीनरात्रिनी, बारमी एक अहोरात्रिनी । अने बार १२ भावना—" पढममणिच्च १ मसरण २, ससारो ३, एगयाय ४, अन्नत्त ५ । असुइत्त ६ आसव ७ सवरा य ८ तह निज्जरा नवमी ९ ॥१॥ लोगसहावो १० बोही ११ दुल्लहा धम्मस्स सा-

हगा अरिहा १२ । एआओ भावणाओ, भायेय-
व्वा पयत्तेणं ॥ २ ॥" ए सर्व मळी ३६ छत्रीस बोलना उद्यमी ते माहरा गुरु जांणवा । ए सोळमी छत्रीसी जांणवी. ॥ १७ ॥

चउदसगुणठाणनिउणो; चउदसपडिरूवपमुहगुणकलिओ ।
अट्ठसुहुमोवएसी, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥१८॥

टवार्थ—चौद १४ गुणठांणाना जांण, ते गुणठांणानां नाम—मिच्छे १ सासण २ मीसे ३, अविरय ४, देसे ५, पमत्त ६, अपमत्ते ७, नियट्टि ८, अनियट्टि ९, सुहुम १०, उवसम ११, खीण १२, सयोगि १३, अयोगि १४ गुणा ॥ १ ॥" ए १४ । तथा प्रतिरूपादिक चौद गुण सहित—"पडिरुवो १, तेयस्सी २, जुगप्पहाणागमो ३, महुरवक्को ४ । गंभीरो ५, धीमंतो ६, उवएसपरो य ७ आयरिओ ॥ १ ॥ अपरिस्सावी ८, सोमो ९, संगहसीलो १०, अभिग्गहमई अ ११ । अविकत्थणो १२, अचवलो १३ पसंतहियओ गुरू होइ १४ ॥ २ ॥ ए १४ मळी २८ । तथा अष्टांग निमित्त—दिव्य १, उत्पात २, आंतरिक्ष ३, भोमं ४, अंग ५, स्वर ६, लक्षणं ७, व्यंजनं ८, ए आठ अंग निमित्तना जाण पण निमित्तने प्रकाशे नही. ८ । ए सर्व मळी ३६

छत्रीसीना धरणहार ते माहरा गुरुतत्त्व जाणवा. । ए सत्तरमी छत्रीसी जांणवी. ॥ १८ ॥

पन्नरदेसजोगसन्नौ–कहणेण तिगारवाण चाएण ।
सल्लतिगवज्जणेण, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥१९॥

टवार्थ—पन्नर योग " **सच्चेयरमोसअसच्चमीसमण ४ वय ४ विउव्व २, आहार २, उरल २, मीस कम्मण १ इय योगा पन्नरभेएण ॥१॥** " १५ । तथा संज्ञा पन्नर १५—आहारसंज्ञा १, भयसंज्ञा २, मैथुनसंज्ञा ३, परिग्रहसंज्ञा ४, क्रोधसंज्ञा ५, मानसंज्ञा ६, मायासंज्ञा ७, लोभसंज्ञा ८, लोकसंज्ञा ९, ओघसंज्ञा १०, सुखसंज्ञा ११, दुखसंज्ञा १२, मोहसंज्ञा १३, दुगंछासंज्ञा १४, शोकसंज्ञा १५, ए सर्व मळी १५ पन्नर संज्ञाए धर्मने धर्ममें गिणता नथी. एहवा प्ररूपणाना धणी छे । गारव तीन ३—सातागारव १, रिद्धिगारव २, रसगारव ३ ए ३ ना त्यागी छे. ३३ । तथा सल्य तीन ते मायासल्य १, नियाणसल्य २, मिथ्यात्वसल्य ३ ए तीन सल्य रहित. । एह ३६ गुणे युक्त ते माहरा गुरुतत्त्व जाणवा. । १८ ए अढारमी छत्रीसी जाणवी. ॥१९॥

सोलससोलसउग्गम-उप्पायणदोसविरहिवाआहारे ।
चंउहाभिग्गहनिरओ, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥२०॥

टवार्थ—सोल उद्गम दोष–१६–**सोलस उग्गमदोसा आहाकम्मु १ देसीय २ पूइयकम्मे ३ य**

* पाठांतरम् (चउविह)

मीसजाए ४ अ । ठवणा ५ पाहुडिआए ६ पाओयर ७ कीय ८ पामिच्चे ९ ॥ १ ॥ परिअट्टिए १० अभिहडु ११--ब्भिन्ने १२ मालोहडे १३ य अछिज्जे १४ अणिसिट्ठ १५ ज्झोयरए १६ सोलस पिंडुग्गमे दोसा ॥ २ ॥" १६ । तथा सोल उत्पादना दोष १६-"धाई १ दूइ २, निमित्ते ३, आजीव ४, वणीगमे ५; तिगिच्छा य ६ । कोहे ७ माणे ८ माया ९, लोभे १० अ हवंति दस एए ॥ १ ॥ पुव्विं पच्छा ११ संथव १२, विज्जा १३ मंतेय १४ चुण्ण १५ जोगे अ, उप्पायणाइदोसा १६; सोलसमे मूलकम्मे य ॥ २ ॥" ए दोष रहित आहारना लेणहार. एम ३२ । तथा द्रव्य, १ क्षेत्र २, काल ३, भाव ४ रूप च्यार भेदें अभिग्रहना धरणहार ए ३६ गुणना धणी ते माहरा गुरुतत्त्व जांणवा । ए आगणीसमी छत्रीसी जांणवी. ॥२०॥

सोलसवयणविहिन्नू; सत्तरसविहसंजमम्मि उज्जुत्तो ।
तिविराहणाविरहिओ, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥२१॥

टबार्थ---सोल वचन विधिना जांण, १६--कालतिअं ३ लिंगतिअं ३ वयणतिअं ३ तहपरुक्ख १० पच्चक्खं ११ । उवयणाइचउक्कं १५, अज्झत्थं १६ चेवसोलसमं ॥ १ ॥ तथा सत्तरंविधसंजम-१७-पंचाश्रवथी विरमण ए पांच, पंचेन्द्रियनिग्रह ए १०, कषाय ४ अने दंड ३

नी विरतिरूप ए १७, अथवा–पुढवि–दग–अगणि–मा-
रुअ–वणस्सई विति चउ पणिंदि अजीवे १०
पेहापेह पमज्जण, परिठवण मणो वएकाए ॥ १॥"
ए पण १७ एम ३३। तथा तीन विराधना ते ज्ञान विराधना १, दर्शन विराधना २, चारित्र विराधना ३ रहित.। ए छत्रीस गुणे विराजमान ते माहरा गुरुतत्व जाणवा ए वीसमी छत्रीसी जांणवी. ॥ २१ ॥

नरदिक्खदोस अट्ठारसेव अट्ठार पावठाणाइं ।
दूरेण परिहरंतो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥ २२ ॥

टबार्थ––नर जे पुरुषना दीक्षाना दोष अढार १८ तेहना जाण-*वुड्ढो १ जड्डो २ कीवो ३ हठजुत्तो ४ तहय गहिलो ५ अविणीओ ६ अभीरु ७ इत्यादिक आवश्यक निर्युक्तिथी जाणजो अढार ए १८। अने अढार पापस्थानक-प्राणातिपात १ मृषावाद २, अदत्तादान ३, मैथुन ४, परिग्रह ५, क्रोध ६, मान ७, माया ८, लोभ ९, राग १०, द्वेष ११, कलह १२ अभ्याख्यान १३, पैशून्य १४, रति अरति १५, परपरिवाद १६, माया मृषावाद १७, मिथ्यात्व-शल्य १८ ए अढार पापस्थान दूरें परिहरता ए छत्रीस गुणे विराजमान ते आचार्य गुणवंत जाणवा. ॥२२॥

---

* बाले १ वुड्ढे २ नपुंसे ३ य, कीवे ४ जड्डे ५ य वाहिए ६। तेणे ७ रायावगारी ८ य, उम्मत्त ९ य अदसणे १० ॥ १ ॥ दासे ११ दुट्ठे १२ य मूढे १३ य, अणत्ते १४ जुंगिए १५ इय। उयट्ठिए १६ य भइए १७, सेहनिप्फेडिया १८ इय ॥ २ ॥

सीलंगसहस्साणं, धारंतो तह य बंभभेआणं ।
अट्ठारसगमुयारं; छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥ २३ ॥

टवार्थ—अढार हज्जार सीलांगरथना धरणहार—ब्रह्मचर्यना भेद १८—"ओरालियं च दिव्वं; मणवयणकाएण करणयोएणं; अणुमोयण कारवणे करणे भेयट्ठारस्स ॥ १ ॥ ए अढार अब्रह्मथी निवृत्या छे-एथी अढार बंभचेर उदार कहीये ते ३६ ना धारणहार ते माहरा गुरु जाणवा. २२-॥२३॥

उस्सग्गदोसगुणवीस=वज्जओ सत्तरभेअमरणविहिं ।
भवियजणे पयडंतो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥२४॥

टवार्थ—काउस्सग्गना १९ ओगणीस दोष रहित—घोडग १ लय २ खंभाई ३ मालू; इत्यादि भाष्यथी जाणी लेवा. १९ । तथा मरण समाधिना सत्तर भेद १७ भगवतीथी जांणज्यो। इत्यादिक अर्थ भव्य जनने उपदेशें प्रगट करवा ए तेवीस २३ मी छत्रीसी गुणे विराजमान ते गुरु जाणवा. ॥२४॥

वीसमसमाहिट्ठाणे, दसेसणा पच गासदोसे य ।
मिच्छत्तं च चयंतो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥२५॥

टवार्थ—वीस असमाधि स्थानकना निवारक—"दवदवचारि १ पमज्जिय २, दुपमज्जियं ३ रित्तसिज्ज ४ आसणिए ५ । रायणियपरिभासी ६, थेर ७ भूओघाई

८ य ॥ १ ॥ सजलण ९ कोहणे १० पिट्ठमंसिये ११ भिक्खभिक्खमाहारी १२ । अहिगरणकरोदीरण १३, अकालसज्झायकारी ४ य ॥२॥ ससरक्खपाणिपाए १५, सद्दकरे १६ कलह १७ झझकारी १८। य । सूरप्पमाणभोई १९, वीस इमे एसणासमिए २० ॥३॥ " तथा दश एषणा दोष-"संकीय १ मक्खिय २ निखित्त ३ पिहिय ४ साहरिय ५ दायगु ६ म्मीसे ७। अपरिणय ८ लित्त ९ छड्डिअ १०, एसणदोसा दस हवंति ॥ १ ॥ " तथा ग्रासदोष पाच-धूमागारक प्रमुख, एकविध मिथ्यात्व तेनो त्याग, ए छत्तीसगुणे सहित ते गुरु जाणवा. ए चोवीस छत्रीसी थइ. ॥ २५ ॥

इगवीससबलेंचाया, सिक्खासीलेंस्स पनरठाणाणि।
अंगीकरणेण सया, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥ २६ ॥

टबार्थ—एकवीस सबलना त्यागी ते गाथा-" त जहओ हत्थकम्म कुवते मेहुणु च सेवंते रीइ भुजमाणो आहाकम्म च भुजते ॥ १॥ तत्तो य रायपिंडकीय पामिच्चय, अभिहडं छिज्ज भुजते, सबलेउपच्चक्खिय ॥ २ ॥ छम्मासब्भितरओ, गणागणे सकम करेमाणे, मासब्भितरतिन्निऊ-

दग लेवाइ करेमाणे. ॥३॥ गिह्लंते अ अदिक्खं, आउट्टि तहा अणंतरहीयाए; पुढवीयठाण सिज्जं, निसहायं वा वि चेयंते ॥ ४ ॥ मासब्भिंतर ओस्सायट्ठाणाइतिन्निकूकंतो पाणायवाउट्टीं कुव्वंते, मुसावयं तेय. ॥५॥ एवं सस्सिणद्धाए ससरक्खाचित्तमंतगसिलले लूंकोलावासपइट्ठाकोलथुणा ते सीया वासो. ॥ ६ ॥ सडंसपाणस वीए जीवउवसंताणउ भवे तह्यठाणाइ; वेयमाणे सवले आऊट्टिआए अ ॥ ७॥ आऊट्टि मूलकंदे; पुप्फेय फले अ वीयहरिये य; भुंजंते सबलेऊ, तहेव संवच्छरस्संतो ॥ ८ ॥ दस दगदग लेवे कुव्वमाइट्ठाणाइ दसयवरिसतेचऊदियसीऊदगवग्घारीयहत्थमत्तेणं. ॥ ९ ॥

दव्वाइ भाययणेणं, वंदिज्जत्तभत्तपाणधित्तूणं भुंजइ सबलो एसो, इगवीसमो होइ नायव्वो ॥ १० ॥ " ए २१ तथा शिक्षाशीलनां पन्नर स्थानक-

*अह पन्न रसठाणेहिं—सुविणीएत्ती, वुच्चइ नियावित्ती अचवले अमाइ अकुतुहले. ॥१॥ अप्पं चाहिक्खिवई पवंधं च न कुव्वई, मित्तिज्जमाणो

* अह पनरसठाणेहिं, सिक्खासिलुत्ति वुच्चइ। नीयावित्ती अचवले, अमाई अकुतूहले ॥ इति पाठांतरम्-

भयई, सुअ लद्धु न मज्जई, ॥ २ ॥ न य पाव-
परिक्खेवी, न य मित्तेसु कुप्पइ १० । अपिप्प-
स्साविमित्तस्स, रहे कल्लाणभासई ॥ ३ ॥ क-
लहडमरवज्जए, बुद्धेअभिजाइए । हरिम १४
पडिसलीणे १५ सुविणीऊत्ति वुच्चइ ॥ ४ ॥"
ए छत्तीसगुणे विराजमान गुरु जाणवा. ए पचवीसमी छत्रीसी
जाणवी. ॥ २६ ॥

वावीसपरीसहहियासणेण, चाएण चऊदसह्नं च ।
अब्भितरंग थाण, छत्तीसगुणो गुरू जयऊ ॥२७॥

टवार्थ—बावीस परीषह सहेवाने समर्थ तेना नाम—
खुहा १ पिवासा २ सी ३ ऊह्न ४, दसा ५ ऽचेला
६ रइंर्त्थिओ ८ । चरिया ९ निसीहिया १०
सिज्जा ११, अक्कोस १२ वह १३ जायणा १४
॥ १ ॥ अलाभ १५ रोग १६ तणफासा १७,
मल १८ सक्कार १९ परीसहा । पन्ना २० अ-
न्नाण २१ सम्मत्त २२, इअ बावीस परीसहा
॥ २ ॥" तथा चौद अभ्यंतर ग्रंथिना त्यागी तेना नाम-
' रागो दोसो य मिच्छत्त ७ कसाया ४ हास-
छक्कग ६ । अंगो वेउत्तिमे गथा, अतरगा चउ-
दस ॥ १ ॥" ए चौद अभ्यंतर ग्रंथीना त्यागी ए छत्री-
समी छत्रीसी गुणे विराजमान ते मारा गुरुराज जाणवा. ॥२७॥

पणवेइयाविसुद्धं; छद्दोसविमुक्कं पंचवीसविहं ।
पडिलेहणं कुणंतो; छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥२८॥

टबार्थ—पांच वेदिका वांदणां देतां—बे हाथ जानुं विचें राखवा ए शुद्धवेदिका, १. बीजी च्यार ४ अशुद्धवेदिका. ए पांच वेदिकाएं विशुद्ध । वळी छ दोपथी विमुक्त--+आरभडा संमद्दा; वज्जयव्वा य मोसली तइया; पप्फोडणा चउत्थी विक्खित्ता अवेइया छट्ठा ॥ १ ॥ ए ६ छ दोष रहित वळी पचवीस पडिलेहणाना करता—दिट्ठिपडिलेहणेगा; छउपक्खोडतिगतिगंतिरिया । अक्खोडपमज्जणाया; नवनव× मुहपत्ति पणवीसं. १ ए पचवीस मुहपत्तीनी पडिलेहणाना करता ए सत्तावीसमी छत्रीसीगुणे करी सहित ते माहरा गुरु जाणवा. २७ ॥ २८ ॥

सत्तावीसविहेहिं; अणगारगुणेहिं भूसियसरीरो ।
नवकोडिसुद्धगाही; छत्तीसगुणो गुरु जयउ ॥२९॥

टबार्थ—साधु मुनिराजना २७ सत्तावीस गुणें युक्त—" वयछक्कमिंदियाणं च निग्गहो भावकरणछक्कं

+आरभडा १ संमद्दा २, मोसलि ३ पप्फोडणा ४ य वक्खित्ता ५। नच्चाविय ६ ति पडिलेहणाए वज्जिज्ज छद्दोसे ॥

× पाठांतरे—पणवीस पडिलेहा.

च । समणा विरागयाचि य, मणमाईण निरो-
हो अ ॥ १ ॥ कायाण छक्कजोगम्मिजुत्तयावेय-
णाहियासणया । तह मारणंति अहियासणा
एए अणगारगुणा ॥ २ ॥ " एटले साधुजीने गुणें करी शोभायमान छे शरीर जेहनो तथा नव ९ ते मन, वचन कायाए करूं नही, कराबुं नहि करतांने अनुमोदु नहीं ए नवकोटि विशुद्ध आहार, वसति, पात्र, उपगरणना ग्राहक छे निर्दोष छे. ए छत्रीस २७–९ गुणे करी विराजमान ते माहरा गुरु जाणवा. २८ ॥ २९ ॥

२८
अडवीसलद्धिपयडण–पउणो लोए तहा पयासंतो ।
अडविहपभावगत्त, छत्तीसगुणो गुरू जयऊ ॥३०॥

टबार्थ–अठ्ठावीस महालब्धि प्रगट करवा महा निपुण छे तेहना नाम–" सम्माणुसव्वविरइ, मल विप्प-मोसखेल सव्वुसहीविऊव्वि आसीविसओही रिउविउल केवल संभिन्न, चक्कि जिण हरिबल चारण पुव्व गणहर पुलाए आहारग महु घय खीरे आसवो कुट्ठबुद्धीय वीयमइ पयाणुसारी

२८. आठ प्रकारना प्रभावकना गुणे विराजमान तथा– " पावयणी १ धम्मकही २, वाई ३ नेमित्तिओ ४ तवस्सी ५ अ । विज्जा ६ सिद्धो ७ अ कई ८ अट्ठेव पभावगा भणिया ॥ १ ॥ " ए छत्रीस विराजमान ते गुरु जाणवा. २९ ॥ ३० ॥

ऐगूणतीसभेअे, पावसुँए दूरओ विवज्जंतो ।
सगविहसोहिगूँणण्णू, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥३१॥

टवार्थ—एगूणत्रीस २९ पापश्रुतनी प्रवृत्तिना वर्जक छे– " अट्ठनिमित्तंगाइं, दिव्वुपायंतरिक्खभोमं च । अंगं सरलक्खण वंजणं च तिविहं पुणिक्किकं ॥ १ ॥ सुत्तं वित्ती तह वत्तियं च पावसुअमउणतीसविहं । गंधव्वनट्टवत्थू—माउं धणुवेयसंजुत्तं ॥ २ ॥ " ए ओगणत्रीस २९ पापश्रुतना उपदेश रहित । अने सात ७ शुद्धिना गुणे गुणी. (तं) लहुया ? ऽऽल्हाईजणणं २, अप्पपरनियत्ति ३ अज्जवं सोही ४ दुक्करकरणं ५ विणओ ६, निस्सल्लतं च सोहिगुणा ७ ॥ १ ॥" ए त्रीसमी छत्रीसी गुणें विराजमान ते माहरा गुरु जाणवा ३० ॥ ३१ ॥

महमोहबंधठाणे, तीसं तह अंतरारिछक्कं च ।
लोए निवारयंतो, छतीसगुणो गुरू जयउ ॥३२॥

टवार्थ—त्रीसमोहनी ७० कोडाकोडी सागरस्थितिबंधनां स्थानक जेणे वार्यां छे– " वारिमज्झेऽवगाहित्ता, तसे पाणेवि हिंसइ १ । छाएइ मुहं हत्थेणं, अंतोनायं गलेरवं २ ॥ १ ॥ सीसावेढेण वेढिता संकिलेसेण मारइ ३। सीसंमिजे य आहंतु दुहमारेण हिंसइ ४ ॥ २ ॥ बहुजणस्स नेयारं, दीवं

नाण च पाणिण ५। साहारणे गिलाणम्मि पहु-
किच्च न कुव्वइ ६ ॥३॥ साहूण धम्मकम्माओ,
जो भसेइ उवट्ठिय, । नेआउयस्स, मग्गस्स, अव-
गारंमि वट्टइ ८ ॥४॥ जिणाण णतनाणीण, अवण्ण
जे पभासइ ९। आयरिय उवज्झाए, खिंसई मद-
वुद्धिए १० ॥५॥ तेसिमेव य नाणीण, सम्म नो
पडितप्पइ ११। पुणो पुणो अहिगरण, उप्पाए ति-
त्थभेयए १२ ॥६॥ जाण आहम्मिए, जोए पउ-
जइ पये पये १३। कामे वमित्ता पत्थेइ, इहंमि
भविये इय १४ ॥७॥ अभिक्खण अ वहुस्सुत्त, जे
भासति वहुस्सुए १५ तह य अतवस्सी य, जे त-
वस्सिन्ति अह वए १६ ॥८॥ जायतेयेण वहुजण,
अतो धूमेण हिंसई १७। अकिच्चमप्पणा काउ,
कयमेएण भासइ १८ ॥९॥ नियडुवहि पणिहीए,
पलिउंचे साइजोगजुत्ते य १९। वेइ सव्व मुस
वयसि, अज्झीण झंज्झए सया २० ॥१०॥ अद्धा-
णमि पविसित्ता, जो धण हरइ पाणिण २१। वी-
स भित्ता उवाएण, दारे तस्सेव लुप्पइ २२ ॥११॥
अभिक्खमकुमारेउ, कुमारेहिं च भासए २३।
एवमवभयारीउ, वभयारित्तिऽहं वए २४ ॥१२॥

जेणे वेसरियं नीए, विच्ते तस्सेव लुब्भइ २५।
तप्पभावुट्ठिए वावि, अंतराय करेइ से २६ ॥१३॥
सेणावइं पसत्थारं, भत्तारं च विहिंसइ २७।
इट्ठस्स वावि निगमस्स, नायगं सिट्ठिमेव वा
२८ ॥१४॥ अपस्समाणे पस्सामि, अहं देवत्ति
वा वए २९। अवण्णेणं च देवाणं, महामोहं
पकुव्वइ ३० ॥१५॥ ए ३० त्रीस महामोहनी स्थानक
रहित तथा अंतरंगवेरी छ ६ थी रहित–काम १, क्रोध २,
लोभ ३, हर्ष ४, मान ५, मद ६ ए छना त्यागी ते एकत्रीसमी
छत्रीसीना छत्रीसगुणे विराजमान ते माहारा गुरु जाणवा. ।३२।

इगहियतीसविहाणं, सिद्धगुणाणं च पंच नाणाणं।
अणुकित्तणेण सम्मं, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥३३॥

टबार्थ—श्रीसिद्धभगवंतना इगतीस ३१ गुण यथा–
"पडिसेहण संठाणे ५, वण्ण ५, गंध २, रस ५,
फास ८, वेऐ ३, य। पण पण दु पणट्ठ तिहा,
इगतीसमकायसंगरुहा ॥१॥ अहवा कम्मे–"न-
व दंसणम्मि चत्तारि आउए पंच आइमे अंते।
सेसे दो दो भेया, खिणभिलावेण इगतीसं
॥२॥" ए एकत्रीस गुण तथा पांच ज्ञान–मतिज्ञान १, श्रुत २,
अवधि ३, मनःपर्यव ४, केवलज्ञान ५, ए सर्वना कहेवावाळा
सम्मं–भले प्रकारें ए छत्रीस गुणे करी विराजमान ते माहरा
गुरु जाणवा, ए बत्रीसमी छत्रीसी जांणवी. ॥ ३३ ॥

तह बत्तीसविहाण, जीवा॒ण रक्खणम्मि कयचित्तो।
जियचउव्विहोवसॅग्गो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ॥३४॥

टवार्थ—तिमज जीवभेद बत्रीस तत्रथा—" सुहुमेयर-पुढविजलानलवाउवणणत दस पत्तेया वितिच-उसन्निथरयुआ, सोलस पज्जेयर बत्तीस ॥१॥ " ए बत्रीस भेद जीवना तेनी दयाना अधिकारी, अथवा आ-लोयण—निरुवलावेआवइमुहढधम्मयाअनिस्सीओ-वहीणे, असिक्खानिप्पडिकम्मया ॥१॥ अन्ना-यया अलोभे अनिभिक्खाअज्जवेसुइसम्मदिट्ठी समाहीअ, आहारे विणओवए ॥२॥ धिइमइअ संवेगे पणहा सुविहि संवरे अत्तदोसोवसहारे, सव्वकामविरत्तया ॥३॥ पच्चक्खाणविउस्सग्गो, अपमाए लवालवे। झाणसंवरयोगे अ उदए मारणतीए, ॥४॥ संगाण च परिन्नाए, पायच्छि-त्तकरणे इय। आराहणाय मरण, बत्तीसयोग संगही ५, ए ३२ योगना जाण। अने जीत्या छे ४ च्यार गतिथी उपना उपसर्गादि तेथी ए ३२—४ छत्रीसीना पात्र ते जगमतीर्थे महागुणसमुद्र मोक्षमार्गोपदेशक ते माहरा गुरु जाणवा. ए तेत्रीसमी छत्रीसी जाणवी. ॥३४॥

बत्तीसदोसविरहिय, वदणदा॒णस्स निच्चमहिगारी।
चउविहविगहॅविरत्तो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥३५॥

टबार्थ—वांदणांना बत्रीस दोषना त्यागी तेहनी गाथा–

दोसमणाढी १ थद्धीअ २ पविद्ध ३ परिपिंडियं च ४ टोलगइ ५ अंकुस ६ कच्छभ ७ रिंगीय ८ मच्छु ९ ठ्वतं १० मणपउट्ठ ११ वेइअ १२ बद्ध १३ भयंतं १४ भयगारव १५, मित्तकारणातिन्नं १६ पडणीय १७ रुद्ध १८ तज्जीय १९ सढ २० हील, २१ विपलिअं २२ अंचीअं २३ दिट्ठमदिट्ठ २४ संगं २५ करत २६ म्मोअण, २७ आलिद्धणालिद्धं, २८ ऊणं, २९ उत्तरचूलिअ, ३० मूअंढढ्ढर ३१ चुडलीअ, ३२ बत्तीसदोससुद्धं.

ए ३२ दोषना टाळनार । तथा ४ विकथाना त्यागी ते राजकथा १, देशकथा २, भक्तकथा ३, स्त्रीकथा ४. एम .ए ३२–४–३६ छत्रीसगुणे विराजमान ते माहरा गुरु जांणवा. ए रीतें ए चोत्रासमी छत्रीसी जाणवी. ए पांत्रीसमी गाथानो अर्थ जाणवो. ॥३६॥

तित्तीसविहासाँयण–वज्जणजुग्गो अ वीरियायाँरं ।
तिविहं अणिगूहंतो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥३६॥

टबार्थ—तेत्रीस ३३ आशातनाना वर्जक छे–" पुरओ पक्खा सन्ने गंता चिट्ठण निसीयणायमणे । आलोयण पडिसुणणे, पुव्वालवणे अ आलोए ॥१॥ तहउवदंस निमंतण. अद्धायायणे तहअप-

डिसुणणे। अद्धत्तीय तत्थगए, किंतु मतज्जायनो सुमणे ॥२॥ एव एय होउ कहकह, तस्स न सुमणो हवइ। तज्जाएण हीलइ, पुणो पुणो निट्ठुर भणइ ॥३॥ नो सिरसिकह छित्ता, परिसभित्ता अणुट्ठिआइ। कहे सथारपाय घट्टण, चिट्ठुच्च समासणे यावि ॥४॥ अहवा अरिहंताण आसायणाए सिजाए किंचिनाहीय। जा कंठ सुसुद्दिट्ठा तित्तीसासायणा इति ॥५॥" ए ३३ अने तीन प्रकारना वीर्य जिनशासनरे कामे गोपवता नथी. ए छत्रीसी विराजमान ते परमोपकारी माहरा गुरु तत्त्व जाणवा। ए पांत्रीसमी छत्रीसी जाणवी. ॥ ३६ ॥

गणिसपँयट्ठ चउविह, बत्तीस तेसु निच्चमाउत्तो।
चउविहविणयँपवितो, छत्तीसगुणो गुरू जयउ ॥३७॥

टवार्थ—गणिसपदा ८—"आहार १ सुअ २ सरीरे ३ वयणे ४ वायण ५ मइ ६ पओग ७ सइ ८ ए सपया खलु अट्ठमि सगह परिन्ना ॥१॥ ए एकेकना च्यार ४ भेद मिल्या ३२ बत्रीस भेद थाये ते ८×४=३२—आचारे १, श्रुते २, विनयें ३, व्यासेपे ४, ए च्यार विनययुक्त इम छत्रीसमी छत्रीसीना धरणहार मोक्षमार्गना साधक, परभावविरक्त निर्मल शुद्धाध्यात्मभावध्यानी सपूर्णानदरसी सारणा—वारणा चोयणा—पडिचोयणा—दक्ष,

साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविकाना परम धर्माधारभूत वर्त्तमान आगमधर ते आचार्य माहरा गुरु जाणवा. एम छत्रीस छत्रीसीना १२९६ वारसें छन्नु गुण जाणवा. ॥ ३७ ।

जइवि हु सूरिवराणां, सम्मं गुणकित्तणं करेउं जे।
सक्कोवि नेव सक्कइ, कोहं पुण गाढमूढमई ? ॥३८॥

टबार्थ—यद्यपि आचार्य यथार्थ धर्मप्ररूपक यथार्थ मार्गे वरतता जे सूरि कहेतां आचार्य वर कहेतां प्रधान तेहना गुण क्षयोपशमी, क्षायकी, उपशमी, तथा औदयिक, सोमकारी, परोपकारीनो कांइ अंत नथी. ते गुणनो कीर्तन करवाने इन्द्र पण समर्थ नहीं तो हुं जे गाढ मूढता सहित छे मति जेहनी ते किम संपूर्ण गुण कही शकुं ? पिण मोटकाना गुण कहेतां आत्मा गुणीरागथी एकत्व पाम्यो ते गुणनो अर्थी थाये, गुणार्थी थयो. आत्मा स्वगुणने प्रगट करे ते माटे चेतना पोतानी गुणीना गुण गावा जगाडवी—जागृत करवी. ॥ ३८ ॥

तहविहु जहा सुआओ, गुरुगुणसंगहमयाउ भत्तीए।
इअ छँत्तीसं छत्तीसीआउ, भणियाउ इह कुलए॥३९॥

टबार्थ—तो पिण यथासूत्रे कह्युं छे. गुरु जे शुद्धतत्त्वना कथक तेना गुणनी छत्रीसीओ कही. ए कुलकने विषे पोताना गुणना संग्रह करवा निमित्ते तथा भक्तिएं गुणनी छत्रीस छत्रीसी करतां १२९६ बोल थया ते कह्या. इति ॥ ३९ ॥

सिरिवयरसेण सुहगुरु—सीसेणं विरइअं कुलगमेयं ।
पढिऊणमसढभावा, भव्वा पावंतु कल्लाणं ॥ ४० ॥

इति गुरुगुणछत्तीसी समत्ता ॥

टवार्थ—श्रीयुगप्रधान दश पूर्वधर संपूर्ण सूत्र अर्थना धारक, आकाशगामिनी प्रमुख महालब्धिना पात्र श्रीवज्रस्वामिना शिष्य जगत्रय उपकारी श्रीवज्रसेनगणि तेहना शिष्य जे गुणरागीमतिपणे ए कुलक रच्यो ते भणीने असठभावी एटले जिनशासनभावितमती जीव भव्यात्मा पामे कल्याणनी परंपरा प्रत्यें. ए ४० मी गथानो अर्थ. ॥ ४० ॥

इये टवाकारप्रशस्ति—

श्रीमत्खरतरगच्छे, पाठका राजसारसत्सञ्ज्ञाः।
तच्छिष्यपाठकोत्तम धीरा· श्रीज्ञानधर्माह्वाः॥१॥
तेषा शिष्यप्रवरा·, पाठका दीपचद्राभाः।
तेषा शिष्येणाय, बालबोधो विनिर्मित· ॥ २ ॥
मुनिगुणस्मरणालकृत , विशुद्धचित्तेन देवचद्रेण।
भव्यजनानुग्रहकृते, कृतः सदभ्यासरसिकेन ॥३॥

इति श्रीगुरुगुणषट्त्रिंशिकाबाधबोधार्थः समाप्त ।



अथ

श्रीमद्देवचन्द्रजीकृतः

कर्म्मग्रन्थस्य टबार्थः

मूलगाथा—

सिरिवीरजिण वंदिय, कम्मविवाग समासओ वुच्छं ।
कीरइ जिएण हेउहिं, जेण तो भण्णए कम्मं ॥१॥

अर्थ—प्रणिपत्य जगन्नाथ, वर्द्धमान गिरांपतिम् ।
गणभृद्गौतमं पूज्य, देवेन्द्रसूरिमुत्तमम् ॥ १ ॥
राजसार गुरु नत्वा, ध्यात्वा वाग्देवता वराम्
सुखार्थं कर्मग्रंथस्य टबार्थं क्रियते मया ॥ २ ॥

श्री चोत्रीस अतिशयें सहित वीरजिणं–महावीर भगवत मतें वंदिय–वादीन–शासननायक महावीर छे तिणे कारणे महावीर स्वामी मतें वंदिय कहेता वांदीने कम्म–आठ कर्मना विवाग विपाकफल समासओ–संक्षेपें वुच्छं–कहु छुं. जे कर्म्म ते किस्यु जे ते कहे छे–कीरइ–कीजीये–आरभीयें छे जिएण–जीवें हेउहिं च्यार ४ हेतु ए करीने ते हेतु कहे छे–मिथ्यात्व १, अविरति २, कषाय ३, योग ४, करीनें जेणें तओतिको भण्णए–कहीजे. कम्म कहता कर्म्मं. ए प्रथमगाथार्थ. ॥ १ ॥

ते कर्म्मना च्यार भेद छे—

पयइठिईरसपएसा त चउहा मोयगस्स दिट्ठंता ।
मूलपगइट्ठउत्तरपगईअडवन्नसयभेअ ॥ २ ॥

अर्थ—प्रकृतिबंध-कर्मनो स्वभाव १, स्थितिबंध-कालनो मान २, रसबंध-चीकणाइ ३, प्रदेशबंध-दलनो मान ४, तं तिको कर्म च्यार भेदें छे. मोदकने दृष्टांते छे-जिम मोदक कोइक वायने हरे, कोइक पुष्ट करे, तिम कर्म पण ज्ञानावरणी ज्ञानने हरे, दर्शनावरणी दर्शननें हरे, इत्यादिक. स्थिति लाडूनी जेम दश दिन प्रमुख तिम कर्मनी स्थिति त्रीस कोडाकोडी आदि. रस लाडू, मेथी प्रमुखमां मीठो, कडवा कल्पाय छे तिम एकठाणीयो प्रमुख. प्रदेश दलमान एवं तिहां प्रथम प्रकृतिबंध कहे छे. मूलप्रकृति आठ छे-कर्म आठ छे, अने उत्तर प्रकृति-आठ कर्मना उत्तरभेद १५८ एकसो अट्ठावन छे, आप आपणो कर्मस्वभाव छे. ॥२॥

हवे इहां आठ कर्मनां नाम कहे छे—

इह नाण[1]दंसणावरण[2]वेय[3]मोहा[4]उ[5]नाम[6]गोया[7]णि ।
विग्घं च पणनवदुअट्ठवीसचउतिसयदुपणविहं ॥३॥

अर्थ—प्रथमज्ञानावरणीय कर्म कहीए १. बीजो दर्शनावरणीय कर्म २. अने वेय त्रीजो वेदनीयकर्म ३. मोह चोथो मोहनीयकर्म. आऊ पांचमो आउखा कर्म. नाम छट्ठो नामकर्म. गोयाणि सातमो गोत्रकर्म-आठमो अंतरायकर्म. ज्ञानावरणीयकर्म ज्ञानगुणने आवरे, दर्शनावरणीय दर्शनगुणने आवरे. वेदनीयकर्म अव्याबाध अनंतसुख गुणने रोके, मोहनीय कर्म सम्यक्त्व अने चारित्रगुणने रोके, आउखा कर्म अनवगाह गुणने रोके-(अक्षयस्थिति गुणने रोके) नामकर्म अरुपी गुणने रोके, गोत्र कर्म गुरुलघुगुणने रोके. अंतराय कर्म वीर्य्य गुणने रोके; ए आठ नाम कह्या. हवे एहनी उत्तरप्रकृतिनो १५८ नो थडो कह्यो कहे

छे—ज्ञानावरणीयनी पांच प्रकृति, दर्शनावरणीयनी प्रकृति नव ९, वेदनीय कर्मनी बे प्रकृति २, मोहनीय कर्मनी अठावीस प्रकृति २८, आउखा कर्मनी ४ च्यार प्रकृति, नामकर्मनी एकसो त्रण १०३ प्रकृति, गोत्रकर्मनी बे प्रकृति २. अंतराय कर्मनी पांच प्रकृति ५ एव सर्वप्रकृति १५८ एकसो अठावन छे. ॥३॥

मइसुयओहीमणकेवलाणिनाणाणि तत्थ मइनाण ।
वंजणवग्गहं चउहा मणनयणविणिंदियचउक्का ॥४॥

अर्थ—हवे प्रथम ज्ञानावरणीय कर्म तेहना भेद कहेवा ते ज्ञानावरणीय ज्ञानने रोके. तिणे प्रथम ज्ञानना भेद मंगलिक रुप वखाणे छे. ज्ञानना भेद पांच छे, मइ—मतिज्ञान, सुअ—श्रुतज्ञान, ओही—अवधिज्ञान, मण—मनःपर्यवज्ञान केवलाणि—केवलज्ञान. नाणा णि ए पाच ज्ञान जाणीये. वस्तुस्वरूप जाण्याथी ते ज्ञान कहीजे. हवे तिहां मतिज्ञानना भेद २८ कहे छे. मननी विचारणारूप ज्ञान ते मतिज्ञान कहीजे. (इंद्रियोनी अपेक्षापूर्वक व्यंजनावग्रह जे इंद्रियोना विषय मिल्यां थका जे अव्यक्त उपयोग असंख्यसमयात्मक ते व्यंजनावग्रह कहीजे. तेहना भेद ४ छे. मन नयन कहीता आख्य मन विना च्यार इंद्रियने व्यंजनावग्रह छे. जे कारणथी मन, आख्य अप्राप्यकारी छे. अने च्यार इंद्रियने प्राप्यकारी छे. स्पर्शेद्रियव्यंजनावग्रह १ रसनेंद्रियव्यंजनावग्रह २ घ्राणेंद्रियव्यंजनावग्रह ३ श्रोत्रेन्द्रियव्यंजनावग्रह. ४॥४॥

अत्थुग्गहेईहावायधारणा करणमाणसेहिं छहा ।
इय अट्ठवीसभेय चउदसहा वीसहा व सुयं ॥५॥

अर्थ—अत्थुग्गह—अर्थावग्रह—किंचित् ज्ञान ते अर्थावग्रह, तेहना भेद छ छे. इहा—विचारणा, तेहना भेद ६ छे

अवाय-इहितज्ञानना निश्चय ते अपायना भेद ६ छे. अविस्मरण ज्ञान ते धारणा, तेहना भेद ६ छे (पांच इंद्रि मन करी एक एकना छ भेद छे.) स्पर्शनेंद्रिय अर्थावग्रह १ रसनेंद्रिय अर्थावग्रह २ घ्राणेंद्रिय अर्थावग्रह ३ चक्षुरिंद्रिय अर्थावग्रह ४ श्रोत्रेंद्रिय अर्थावग्रह ५ मन अर्थावग्रह ६. स्पर्शनइहा १ रसनइहा २ घ्राणइहा ३ चक्षुइहा ४ श्रोत्रइहा ५ मनइहा ६. स्पर्शनअवाय १ रसनअवाय २ घ्राण अवाय ३ चक्षुअवाय ४ श्रोत्रअवाय ५ मन अवाय ६. स्पर्शनधारणा १ रसनधारणा २ घ्राणधारणा ३ चक्षुधारणा ४ श्रोत्रधारणा ५ मनधारणा ६. (एम ए सर्व मळी २८ भेद मतिज्ञानना जाणवा.)

हवे श्रुतज्ञानना भेद कहे छे-**चउदसहा** १४ भेदे छे-श्रवणेंद्रिय अने श्रुतज्ञानस्युं थाय ते श्रुतज्ञान कहीजे. **वीसहा** वळी वीस पण भेद छे. ॥ ५ ॥

तेमां पेहेला १४ भेद कहे छे.

अक्खर[1] सन्नी[2] सम्मं[3] साइयं[4] खलु सपज्जवसियं[5] च।
गमियं[6] अंगपविट्ठं[7] सत्तवि एए सपडिवक्खा ॥६॥

अर्थ-अक्षरश्रुत-अक्षर बावनें करी अवबोध ते १. अक्षर विना ज्ञान थाय, अंकादिक थकीज ते अक्षरश्रुत २, संज्ञीपंचेंद्रीने जे श्रुत ते संज्ञाश्रत ३ हवे असंज्ञीनुं श्रुत ते असंज्ञीश्रुत ४ समकितीनुं श्रुत ते सम्यग्श्रुत ५ मिथ्यात्वीनुं श्रुत ते मिथ्यात्वीश्रुत ६ सूत्रें करी गणधर नवां रचे तिणे सादीश्रुत ७ महाविदेहमां वर्ततुं श्रुतज्ञान ते अनादिश्रुत ८ तिमज सूत्रें करी तीर्थविच्छेदे भरते ऐरवतमें विनाश छे तिणे सपर्यवसितश्रुत ९ अर्थे

करी महाविदेहक्षेत्रमें सूत्रें पण विच्छेद नही तिणे अपर्यवसित श्रुत छे १० गमिय–सरखा पाठ नये करी ते गमिकश्रुत कहीये ११ अने सामान्यपाठ ते अगमिकश्रुत कहीइं अगमी ते वार श्रुत कहीये १२ द्वादशागी सिद्धात ते ए मूळअंग तेमांही जे अर्थ ते अंगप्रविष्टश्रुत १३ अने द्वादशांगी विना आवश्यकादि अनंग प्रविष्टश्रुत १४ सात मूलभेद सूत्रमांहि कह्या अने सात तेना प्रतिपक्षीभेद एम १४ थया. ॥ ६ ॥

पज्जयअक्खरपयसंघाया पडिवत्तितह य अणुओगो ।
पाहुडपाहुडपाहुड वत्थुपुव्वा य ससमासा ॥ ७ ॥

अर्थ–पर्यायश्रुत ते सूक्ष्मलब्धी अप० निगोदने भव प्रथम समयथी बीजे समये वृद्धि पामतु श्रुत ते पर्यायश्रुत १ अनेक पर्याय जाणे ते पर्यायसमासश्रुत कहीये २. अक्षरना ३ भेद–संज्ञाक्षर १ लब्ध्याक्षर २ व्यंजनाक्षर ३ एमाहि एकभेद जाणे ते अक्षरश्रुत ३ सर्व अक्षरभेद जाणे ते अक्षर समासश्रुत ४ पद अधिकार विशेष ते एक जाणे ते पदश्रुत कहीये ५ सर्व अनेकपद जाणे ते पद समासश्रुत कहीये ६ मार्गणा एक जाणे ते संघातश्रुत कहीये ७. सर्व मार्गणा जाणे ते सघात समासश्रुत ८ बासठ मार्गणाए करी योगादि एकबोलजाणे ते पडिवत्तीश्रुत कहीये ९. हवे बासठ मार्गणाए योगादि सर्व बोल जाणे ते पडिवत्तिसमास–श्रुत कहीये १०. उपक्रम, निक्षेप, अनुगम, नय, ए चार अनुयोगमाहि तथा सतपदादी नव योगमांहे एक अनुयोग जाणे ते अनुयोग श्रुत कहीये ११ सर्व अनुयोग जाणे ते अनुयोग समास श्रुत कहीये १२. पूर्वने विषे पाहुड–अधिकार, विशेष ते एक जाणे ते पाहुड श्रुत १३ घणा जाणे ते पाहुड

समास श्रुत कहीये १४ पाहुड पाहुड पण अधिकार विशेष तेहना भेद पण इम वे जाणवा १६ वस्तुश्रुत १७ वस्तुसमास श्रुत १८ पूर्वश्रुत १९ पूर्व समास श्रुत २० ए सर्व अधिकार विशेष छे. ए वीस भेद छे। ईम वीजा क्षिप्रादिक अनेक भेद छे ते नंदीथी जाणजो. इहां न कह्या छे संक्षेपार्थ माटे. दश नाम सूत्रमें कह्या अने तेहिज दस समासपद जोडयां वीस थयां।७।

अणुगामि[1] वड्ढमाणय[2]पडिवाई[3]यरविहा छहा ओही।
रिउमई[1] विउलमई[2] मणनाणं केवलमिगविहाणं॥८॥

अर्थ—हवे अवधिज्ञानना भेद कहे छे-जिहां उपनो तिहांथी पछी सर्व साथे चाले ते अनुगामी अवधि १ अने जे उपना पछी वधतो होय ते वर्द्धमान अवधि कहीजे २ जे उपना पछी जाय ते पडिवाई अवधि कहीजे ३ त्रण भेद इतर प्रतिपक्षी लेवा. साथे न चाले ते अननुगामी अवधि कहीये ४ घटतो जाय ते हीयमान अवधि कहीये ५ जे उपना पछी जाय नही ते अप्रतिपाति अवधि कहीये ६. एवं ६ छ भेद अवधिना जाणवा. यद्यपि अवधिज्ञानना भेद असंख्याता छे; पर इहां मोटा भेद लीधा छे.

मनःपर्यवज्ञानना भेद बे. ते मनना वर्गणा जाणे ते मनः पर्यवज्ञान जाणवो. जे अढी अंगुल उणी अढाई द्वीप मास निरधारना मनोगतभाव जाणे. सामान्यपणे चरमशरीरीनो नियम नही ते ऋजुमति मनःपर्यव १. अने संपूर्ण अढाइ द्वीपना मनोगतभाव जाणे, विशेषपणे तद्भव मोक्षगामीने विपुलमति मनःपर्यवज्ञान २ ए बे भेद मनः पर्यवज्ञानना जाणवा. यद्यपि मनना वात अवधिज्ञानी पण जाणे पण सूक्ष्म मननी वात मनःपर्यवज्ञाना जाणे.

अने केवल–असहाई निरावरण सर्व जाणे ते केवलज्ञान त्रिणकाल त्रिणलोक छए द्रव्यना गुण पर्याय जाणे, ते केवलज्ञान. ए ज्ञानना पांच भेद कह्या सिद्धान्तमां. ॥ ८ ॥

एसिं ज आवरणं, पडु चक्खुस्स त तयावरण ।
दसणचँउ पण निद्दा वित्तिसम दंसणावरण ॥ ९ ॥

अर्थ—ए पांचज्ञानने आवरे–ढाके ते ज्ञानावरणीय कर्म. आंख्यने जेम पाटो तिम तेहनो आवरण कहीजे. मतिज्ञानने आवरे ते मतिज्ञानावरणीय कर्म १ श्रुतज्ञानने आवरे ते श्रुत ज्ञानावरणीय २ अवधिज्ञानने आवरे ते अवधिज्ञानावरणीय कर्म ३ मन पर्यवज्ञानने आवरे ते मन पर्यवज्ञानावरणीय कहीये ४ केवलज्ञानने आवरे ते केवलज्ञानावरणीय कहीजे ५. एव पाच भेद एटले ज्ञानावरणीय कर्मना भेद कह्या

हवे दर्शनावरणीय कर्मना भेद कहे छे. तेमा दर्शनावरणीय च्यार भेदे ठे अने पाच प्रकारनी निद्रा एवं नव ९ भेद छे. वित्ति–छडीदार समान दर्शनावरणीय कर्म जाणवो. ॥९॥

चक्खुदिट्ठिअचक्खूसेसिदियँओहिकेवलेहि च ।
दसणमिह सामन्न तस्सावरण तय चउहा ॥१०॥

अर्थ—चक्षुदर्शन दृष्टि जे आख्यथी सामान्य उपयोग १ अचक्षुदर्शन जे स्पर्शन, रसन, घ्राण, श्रोत्ररूप च्यार इद्रियनो जे सामान्य उपयोग ते अचक्षुदर्शन कहीये २ अवधिज्ञानीने सामान्य उपयोग ते अवधिदर्शन कहीये ३ केवलज्ञानीने जे सत्ता ग्राहक सामान्योपयोग ते केवल्दर्शन कहीये ४ इहा मन पर्यवज्ञानने दर्शन न कह्यो ते इण कारण–दर्शन इहां सामान्यनो

उपयोग अने मनःपर्यवज्ञान ते विशेप उपयोगे ज छे तिणे दर्शन न कह्यो ते च्यार दर्शनने आवरे ते च्यार भेदे छे. चक्षुदर्शनावरणी १ अचक्षुदर्शनावरणी २ अवधिदर्शनावरणी ३ केवलदर्शनावरणी ४ ए च्यार भेद छे. ॥ १० ॥

सुहपडिबोहा निद्दा[1] निद्दानिद्दा[2] य दुक्खपडिबोहा ।
पयला[3] ठिओवविट्ठस्स पयलपयला[4] उ चंकमओ॥११॥

अर्थ--हवे निद्राना पांच भेद छे ते कहे छे सुखे थोडे खरके जागे पण तरत जागे ते निद्रा कहीजे १ दुःखे घणे साद करे अत्यंत पोकार करे कुकुआ करे जागे ते निद्रानिद्रा कहीये २ अने बेठां उभां निंद आवे ते प्रचला त्रीजी कहीजे ३ चालतां उंघे घोडानी पेरे ते प्रचलाप्रचला कहीजे ४. घोडो जेम बाजरी खाते कांकरो आवे त्यारे जागे तिम ते काम पडे जागे. ॥ ११ ॥

दिणचिंतियत्थकरणी थीणद्धी[5] अद्धचक्किअद्धबला ।
महुलित्तखग्गधारालिहणं व दुहा[2] उ वेयणियं ॥१२॥

अर्थ—अने दिननो चिंतव्यो काम रात्रे करे, निद्रामां जेम लघु चेले हाथीना दांत रात्रे काढया तिम दिनचिंती तेहने कहीजे, ते थीणद्धी निद्रा पांचमी कहीजे. एहनो बल अर्द्धचक्रवर्ति जे वासुदेव तिणथी आधोबल होवे, निद्रामांही व्रतव्रतां करे.

हवे वेदनीय कर्मनो स्वरूप कहे छे—मधु सहतथी लेपी खडगनी धारा तेहनो जे चाटवो ते समान छे. जिम मीठास लागे ते सातावेदनी १ अने चाटतां कटाइ जे ते आसातावेदनी २ दुहा उ—दोइ भेदें वेदनीयकर्म छे. अव्याबाधगुणत्वं रोके छे वेदयकर्मना स्वरूप छे. ॥१२॥

ओसन्न सुरमणुए सायमसाय तु तिरियनरएसु।
मज्ज व मोहणीयं दुविहं दसणचरणमोहा ॥१३॥

अर्थ—उसन्न-प्राये देवगतिने मनुष्यगतिमा सातावेदनीनो प्रबल उदय छे, अने तिर्यंच नारकीने असाता प्रबल छे. इहा जिन भगवानना जन्म समये नारकीने पण साता थाय छे, अने गजरत्न अश्वरत्न तिर्यंचने पण साता छे, पण ते कदा कालें थाय छे, सदा नही तेणे न गणी.

हवे मोहनीयकर्मनो स्वरूप कहे छे—मदिरापान समान मोहनीयकर्म छे. जिम मदिरापान कीधां माणस गहेलो—विव्हल थाय तिम मोहनीयकर्मथी पण जाणजो ते मोहनीयकर्मना बे भेद छे—एक दर्शनमोहनी जे दर्शन समकितगुणने मुझावे ते दर्शनमोहनी १ अने चारित्रविरतिने मुंझावे ते चारित्रमोहनी कहीजे.१३

दसणमोह तिविहं सम्म मीसं[२] तहेव मिच्छत्तं[३]।
सुद्धं[१] अद्धविसु [२] अविसुद्धं[३] तं हवइ कमसो ॥१४॥

अर्थ—तिहा दर्शनमोहनीना त्रण भेद छे, त्रिणे गुण समकीतने रोके छे, यद्यपि समकितमोहनीना उदयथी क्षयोपशमसमकीत छे, तोपण मिथ्यात्वना शुद्ध दल वेदे छे (वेढि छे) ते सम्यक्त्वमोहनी १ मिश्रमोहनी २ तेमज त्रीजी मिथ्यात्व मोहनी त्रीजी कही. इहा ग्रंथिभेद करता प्रथम यथाप्रवृत्तिकरण थाय. सात कर्मनी स्थिति एक कोडाकोडी जाझी रहे त्यारे. बीजो अपूर्वकरण एक अंतर्मुहूर्त प्रमाण करे. त्रीजो अनिवृत्तिकरण करीने सम्यक्त्व फरसे इहा मिथ्यात्वने चरम समये त्रीण पुंज करे. एक शुद्ध पुंज, बीजो अर्द्धविशुद्ध पुंज, त्रीजो अशुद्ध-

श्याम पुंज. ए स्थितिना त्रण पुंज करे. शुद्ध पुंजनो दल वेदे ते सम्यक्त्व मोहनी १. अर्द्धविशुद्ध पुंज वेदे ते मिश्रमोहनी. २ अशुद्धश्याम दलने वेदे ते मिथ्यात्वमोहनी ३ ॥१४॥

जिय¹अजिय²पुन्न³पावा⁴सव⁵संवर⁶वंध⁷मुक्ख⁸निज्जरणा⁹ ।
जेणं सद्दहइ तयं सम्मं खइगाइबहुभेयं ॥ १५ ॥

अर्थ—जीवतत्त्व चेतनालक्षण स्वरूपमय १. अजीवतत्त्व चेतना रहित शुष्क काष्टादि २. **पुन्न**—पुण्य शुभ कर्म ३. **पाव**—पाप अशुभ कर्म ४ आश्रव कर्मआवरणनो हेतु ५. संवर नवां कर्म आवतां रोके ६. वंध—जीव प्रदेश कर्म एकतारूप ७. सकल कर्म क्षय थावे ते मोक्षतत्त्व कहीए ८. पूर्वकृतकर्मनी निर्जरा ते निर्जरातत्त्व कहीये ९. ए नवतत्त्व सूधा जाणे—निश्चये करी जाणे, व्यवहारे करी प्रवर्ते ते निश्चय सम्यक्त्व कहीजे. ते समकीतना घणा भेद छे. क्षायक १ क्षयोपशम २ उपसम ३ वेदकादि भेदें करी. ॥ १५ ॥

मीसा न रागदोसो जिणधम्मे अंतमुहु जहा अन्ने ।
नालियरदीवमणुणो मिच्छं जिणधम्मविवरीयं ॥१६॥

अर्थ—मिश्रदृष्टिने राग नही द्वेष नही **जिणधम्मे**—जिन वीतरागना धर्मउपरें रागद्वेष नही ते मिश्रदृष्टि, अंतर्मुहूर्त्त एहनी स्थिति ज होय **अन्ने जहा**—जेम अन्न उपरे नालियेर द्वीपवासी मनुष्यने अन्न कदी आंखे नहीं दीठो, तिणे तेहने अन्न उपरे राग नथी द्वेष पण नथी, इम मिश्रमोहनीवंतने जिनधर्म उपर रागद्वेष नथी. मिथ्यात्व जे ते जिनधर्मथी विपरीत जे अज्ञान-

शुद्रित थको जीव कुश्रद्धान, जीवादि पदार्थेशुं अरोचकबुद्धि ते मिथ्यात्व. ॥ १६ ॥

सोलस कसाँय नव नोकसाँय दुविंहं चारित्तमोहणिय।
अर्णं अप्पच्चक्खाणाँ पच्चक्खाणा यँ संजलर्णा ॥१७॥

अर्थ—हवे चारित्रमोहनीना २५ भेद कहे छे–तिहां चारित्रमोहनीना दोय भेद छे. एक कषायमोहनी १ अने बीजो नोकषायमोहनी २ ते कषायमोहनीना १६ नोकषायमोहनीना ९ भेद छे. ए दोनु मोहनीना २५ पचवीस भेद छे. चारित्र गुणने रोके तिणे चारित्रमोहनी कहीजे. तिहां कषायना सोल १६ भेद छे **अण** अनंतानुबंधीना ४ भेद–अनंतानुबंधी क्रोध १ अनंतानुबंधी मान २ अनंतानुबंधी माया ३ अनंतानुबंधी लोभ ४। अप्रत्याख्यान देशविरतिने रोके. तेहना ४ भेद–अप्रत्याख्यानी क्रोध १ अप्रत्याख्यानी मान २ अप्रत्याख्यानी माया ३ अप्रत्याख्यानी लोभ ४। प्रत्याख्यान सर्वविरतिने रोके. प्रत्याख्यान क्रोध १ प्रत्याख्यान मान २ प्रत्याख्यान माया ३ प्रत्याख्यान लोभ ४। संजलन ते यथाख्यात चारित्रने रोके–संजलनो क्रोध १ संजलनो मान २ संजलनी माया ३ संजलनो लोभ ४ ॥१७॥

जाजीववरिसचउमासपक्खगा नरयतिरियनरअमरा।
सम्माणुसव्वविरईअहक्खायचरित्तघायकरा ॥ १८ ॥

अर्थ—हवे एहनो दृष्टांत स्थिति कहे छे–कर्मस्थिति तो सोलकषायनी जघन्य अंतर्मुहूर्त्तनी, उत्कृष्टी ४० कोडाकोडी सागर छे. ए परिणामरूप स्थिति जाणवी अनंतानुबंधीनी जावजीव स्थिति, अप्रत्याख्याननी वरस १ स्थिति, प्रत्याख्याननी **चउमास** ४ मास स्थिति छे, संजलननी पक्ष १ स्थिति छे,

अनंतानुवंधीने परिणामे मरे तो नरकगतिए जाय १. अप्रत्या-ख्यानना परिणामे मरे तो तिर्यंचगतिमांहे जाय २. प्रत्याख्यानना परिणामे मरे तो मनुष्यगतिमांहे जाय ३. संजलनने परिणामे मरे तो देवगतिमांहे जाय ४. अनंतानुवंधी समकीतने घात करे १. अप्रत्याख्यान अणुव्रतनो-देशविरतिनो घात करे २. प्रत्याख्यान सर्वविरतिनुं घात करे, साधुव्रतनुं घात करे, आवण देवे नहीं ३ संजलन यथाख्यातचारित्रनुं घात करे ४. एटले इंणि कषाय उदय थकां इतला गुण प्रगटे नहीं. ॥१८॥

जलरेणुपुढविपव्वयराईसरिसो चउव्विहो कोहो ।
तिणिसलयाकट्ठट्ठिय । सेलत्थंभोवमो माणो ॥१९॥

अर्थ—संजलनो क्रोध जलरेखा समान छे. जिम जलनी रेखा तरत मिटे, तिम संजलनो क्रोध तरत मिटे, प्रत्याख्याननो क्रोध रेणु-वेलूनी रेखा समान वाय(पवन) प्रमुख लागे मिटे. तिम नमति खमति कीधां उतरे, अने अप्रत्याख्यानी क्रोध पुढवी-माटीचीकणीनी रेखा समान छे, जे चीकणीमाटीनी रेखा मेह प्रमुख वूठे मीटे, तिम घणे उपाये अप्रत्याख्यान क्रोध उतरे. अनंतानुवंधी क्रोध पर्वतरेखा समान छे. जिम पर्वतनी रेखा पडी पछी फरी मळे नहीं; तिम अनंतानुवंधी क्रोध जावजीव त्यांइ मिटे नही, ते अनंतानुवंधी ४. संजलनो मान नेतरनी छडी समान, जे तरत नमे. प्रत्याख्यान मान काष्ट लाकडी समान छे जे किणही कारणे नमे. अप्रत्याख्याननी मान अट्ठी-हाड समान छे-घणे जतन कीयां नमे, तिम ते मानी पिण घणां जतन कीयां नमे. अनंतानुवंधी मान सेल-पथ्थरना थांभा समान छे, जे किमही नमे नहीं; तिम अनंतानुवंधीमानवंत किमहि मान छोडे नही. ॥ १९ ॥

मायावलेहिगोमुत्तिमिढसिंगघणवसिमूलसमा ।
लोहो हलिद्दखजणकद्दम किमिरागसारिछो ॥२०॥

अर्थ—संजलनीमाया वलेली-वांसनी छोल समान, जे तरत वाक छोडे. प्रत्याख्यानी माया गोमूत्रिका समान, जे किणही कारणे कपट छाडे. अप्रत्याख्यानी माया मिंढारा सिंग समान छे, किणही कारणे करी वाक छोडे. अनंतानुबन्धी माया वसमूल-वासनी जड समान छे, अति गूढ-चक्र छे, बळ्या पण वांक छोडे नहीं एहवी माया अनंतानुबंधीनी सजलणो लोभ हलदरना रंग समान छे, जे लालचें थाय ते, तरत लालच छोडे, प्रत्याख्यानी लोभ खंजण-गाडीनी वागण रंग समान छे, जे जेने कीया ते रग उतरे. अप्रत्याख्यानीयो लोभ नगर कर्दमना रंग समान छे, अनंतानुबधी लोभ किमिराग-कृमजी रग समान छे, एटले सोले कषायना भेद कह्या ते सद्दहवा. ॥२०॥

जस्सुदया होइ जिअे हास रई अरइ सोग भयं कुच्छा ।
सनिमित्तमन्नहा वा त इह हासाइमोहणिय ॥२१॥

अर्थ—हवे हास्यादिक छ भेद कहे छे-जे कर्मप्रकृतिने उदयथी होवे, जीवने हास्य घणो ते हास्यकर्मउदयथी १. रति-हर्षकर्म २. अरतिकर्म ते दिलगीरी ३. सोग-मरणादिक करे, रुदनादि करे ते शोककर्म ४. भयकर्म-डर घणो थाय ५. कुच्छा-दुगछा जे अशुभपुद्गलादिकशु दुगंछा ६. ए छए कार्य निमित्तकारण मिळ्या पण उदय आवे, किणहो न निमित्त विना पिण उदय आवे, ते इहा हास्यादिक मोहनी कहीजे. हास्य १

+ 'समाणो' इति पाठातरम

रति २ अरति ३ सोग ४ भय ५ दुगंछा ६. ॥ २१ ॥

पुरिसित्थितदुभयं पइ अहिलासो जव्वसा हवइ सोउ ।
थी[1]नर[2]नपुं[3]वेउदओ फुंफुम[1]तण[2]नगर[3]दाहसमो ॥ २२ ॥

अर्थ—पुरुषनो अभिलाष थाय जेहने ते स्त्रीवेद कहीये १ अने जेने स्त्रीनो अभिलाष थाय ते पुरुषवेद कहीजे २ अने स्त्री पुरुष विहुनो अभिलाष धरे ते नपुंसक वेद कहीजे ३. तिणे करी एटले स्त्रीने पुरुषस्युं विहु साथे विषयनी चाह थाय अने पुरुषने स्त्रीसेव्यानी चाह थाय, स्त्री अने पुरुषसुं विषयनी चाह घणी थाय. ए तीननो अभिलाष ते शाथी थाय? इम जे कर्मना उदयथी थाय ते कर्म वेद कहीये. तिहां प्रथम स्त्रीवेद १, वीजो पुरुषवेद २, त्रीजो नपुंसकवेद ३, एहनी तृष्णा-ज्वाला एहवी छे के स्त्रीवेदनी अगनि फूंफुम कोउनी दाह समान छे १ अने पुरुषवेदनी अगनि तृणानी आग समान छे. जे दीसति झाळा दिसे पण टके थोडी; तिम पुरुषदाह तरत मिटे, अने नपुंसकवेदनी अग्निदाह नगरदाह समान छे, जिम नगरनो दाह कदेइके बूझे नही; तिम नपुंसकवेदनी दाह कदी मिटे नहीं. एटले मोहनीयकर्मनी २८ प्रकृति कही. ॥२२॥

सुर[1]नर[2]तिरि[3]निरयाऊ[4] हडिसरिसं नामकम्मचित्तिसमं ।
बायाल[42]तिनवइ[93]विहं, तिउत्तरसयं[103] च सत्तट्ठी[67] ॥२३॥

अर्थ—हवे आउखाकर्मनी च्यार प्रकृति कहे छे-तिहां **सुर** देवतानो आउखो १ **नर**-मनुष्यनो आउखो २ तिर्यंचनो आउखो ३ **नरय**-नरकनो आउखो ४ ए च्यार भेद छे. **हडि**-

सरिस-खोडा समान छे, जिम खोडामा पग पड्या पछी काढ्यो ज नीकळे, तिम आउखो कर्म भोगव्या छूटे.

हवे नामकर्मनो स्वरूप कहे छे-नामकर्म चीतारा समान छे-तेहना अनेक भेद अनेक प्रकारना छे ते जाणवा, हवे तिहां बेतालीस ४२ भेद पण छे, तिनवइ त्रयाणु ९३ भेद पिण छे. अने १०३ एकसोतीन भेद छे, वळी सडसठि ६७ भेद पण छे. ॥ २३ ॥

गइजाइतणुउवगा बंधणसंघायणाणि संघयणा ।
संठाणवन्नगंधरसफासअणुपुविविहगगई ॥ २४ ॥

अर्थ—हवे प्रथम बेतालीस भेद कहे छे-गति १ जाति २ तणु-शरीरभेद ३ उपांगभेद ४ बंधनभेद ५ संघातनभेद ६ संघयणभेद ७ संस्थानभेद ८ वर्णभेद ९ गंधभेद १० रसभेद ११ फरसभेद १२ अनुपूर्वीभेद १३ विहायोगतिभेद ते १४. ॥२४॥

पिंडपयडित्ति चउदसपरघाऊसासआयवुज्जोय ।
अगुरुलहुतित्थनिमिणोवघायमिय अट्ठ पत्तेया ।२५।

अर्थ—पिंडप्रकृति ए चौद छे पिंड-जेहनी एक प्रकृतिना घणा भेद थाय ते पिंडप्रकृति कहीजे. ते चउदभेदे पराघातनामकर्म १ ऊसासनामकर्म २ आतापनामकर्म ३ उद्योतनामकर्म ४ अगुरुलघुनामकर्म ५ तीर्थंकरनामकर्म ६ निर्माणनामकर्म ७ उपघातनामकर्म ८ ए आठप्रकृति प्रत्येक प्रकृति कहीजे. ए प्रकृतिनो उत्तरभेद कोइ थाय नहीं. ॥२५॥

तसबायरपज्जत्तं पत्तेअथिरंसुभं च सुभगं च ।
सुसरआइज्जजसं तसदसगं थावरदसं तु इमं ॥२६॥

अर्थ—त्रसनामकर्म १ बादरनामकर्म २ पर्याप्तनामकर्म ३ प्रत्येकनामकर्म ४ स्थिरनामकर्म ५ शुभनामकर्म ६ सुभगनामकर्म ७ सुस्वरनामकर्म ८ आदेयनामकर्म ९ जसनामकर्म १० ए त्रसदशक जाणवो. जाणणहारने हवे थावरदशक कहे छे बीजो. ॥ २६ ॥

थावरसुहुमअपं साहारणमथिरमसुभं भगाणि ।
दूसरणाइज्जाजसमिय नामे सेयरा वीसं ॥ २७ ॥

अर्थ—प्रथम थावरनामकर्म १ सूक्ष्मनामकर्म बीजो २ अपर्याप्तनामकर्म त्रीजो ३ साधारणनामकर्म चोथो ४ अथिरनामकर्म पांचमो ५ अशुभनामकर्म छट्टो ६ दुर्भगनामकर्म सातमो ७ दुःस्वरनामकर्म आठमो ८ अनादेयनामकर्म नवमो ९ अपजसनामकर्म दसमो १० ए थावरदशक कह्युं बीजुं. एटले त्रसदशक थावरदसक मिळ्यां २० थयां. हवे १४ पिंडप्रकृति ८ प्रत्येक २० सेयरा ए सर्व मिळ्वा ४२ भेद प्रकृति थाय. एटले नामकर्मना ४२ बेतालीस भेद विवरीने कह्या छे. ॥ २७ ॥

तसचउथिरछक्कंअथिरछक्कं सुहुमतिगथावरचउक्कं ।
सुभगतिगाइविभासा, तयाइसंखाहि पयडीहिं ॥२८॥

अर्थ—हवे संज्ञाविशेष कहे छे—तसचउ—त्रसचतुष्क कही त्रस १ बादर २ पर्याप्त ३ प्रत्येक ४ ए प्रकृति लेवी. थिरछक्कं—थिरछक्क कह्या—१ थिर, २ शुभ, ३ सुभग, ४ सुस्वर, ५ आदेय, ६ यस ए छ प्रकृति लेवी, एने थिरछक कह्या. हवे अथिरछक्क—

अथिर ७ कह्या १–अथिर, २ अशुभ ३ दुर्भग, ४ दुःस्वर, ५ अनादेय, ६ अजस ए छ प्रकृति लेवी सूक्ष्म १ अपर्याप्त २ साधारण ३ ए त्रण प्रकृति सूक्ष्मत्रिक कहीजे. थावर १ सूक्ष्म २ अपर्याप्त ३ साधारण ४ ए थावरचतुष्क कहीजे. सुभग १ सुस्वर २ आदेय ३ ए त्रण सुभगत्रिक कहीजे, दुर्भग १ दुःस्वर २ अनादेय ३ ए दुर्भगत्रिक कहीजे जे प्रकृति लाधी होये ते प्रकृतिथी आगली संख्या प्रमाण गणी लीजे, तिवारे संख्याप्रमाण ठरे २८

वन्नचउ अगुरुलहुचउ तसाइ दुतिचउरछक्क इच्चाइ ।
इअ अन्नावि विभासा तयाइसखाहि पयडीहिं ॥२९॥

अर्थ–वर्णादिक च्यार ४ अगुरुलघुप्रमुख ४ च्यार. त्रसादि बे २, त्रसादि त्रण ३, त्रसादिक ४ च्यार, त्रसादिक ६ छ, तेटली संख्या लेताहि तेहवो संकेत. हवे थीणद्धीत्रिक जिहां कह्यु तिहा थीणद्धी १ निद्रा २ प्रचला ३ ए तीन लेवी. विशेष जाणवा माटे कह छे–वर्णचतुष्क सामान्ये कह्या ते वर्ण १ गंध २ रस ३ स्पर्श ४ ए ४ ने वर्णचतुष्क कहीये, अने अगुरुलघुनाम १ उपघातनाम २ पराघातनाम ३ ऊसासनाम ४ ए अगुरुलघुचतुष्क कहीये. त्रस १ बादरनाम २ ए त्रसद्विक कहीजे १ त्रस, २ बादर, ३ पर्याप्त ए त्रसत्रिक लीजे, अने त्रस १ बादर २ पर्याप्त ३ प्रत्येक ४ ए ४ने त्रसचतुष्क कहीजे. अने त्रस १, बादर २, पर्याप्त ३, प्रत्येक ४ स्थिर ५ शुभ ६ एछने त्रसषट्क. एम जेटली प्रकृति होय ते त्रसादिनामथी जोड्ये ॥२९॥

गइयाईण उ कमसो चउपणपणतिपणपचछछक्क ।
पणदुगपणट्ठचउदुग इय उत्तरभेयपणसट्ठी ॥३०॥

अर्थ—हवे ९३ त्रांणु प्रकृति कहे छे—गति आदिक १४ पिंडना उत्तरभेद कहे छे—गति भेद च्यार. जातिना पांच भेद, शरीरना पांचभेद, उपांगना तीनभेद, बंधनना पांच-भेद, संघातनना पांचभेद, संघयणना छ भेद, संस्थानना छ भेद, वर्णना पांच भेद गंधना दो भेद रसना पांच भेद फरसना आठ भेद, आनुपूर्वीना च्यार भेद, विहायो-गतिना बे भेद. एटले करी उत्तरभेद सर्व मिळयां पांसठ भेद थया. पिंडप्रकृतिना ए उत्तरभेद कह्या. ॥ ३० ॥

अडवीसजुया तिनवई संते वा पनरबंधणे तिसयं।
बंधणसंघायगहो तणुसुसामन्नवन्नचऊ ॥ ३१ ॥

अर्थ—इणे ६५ भेदमें आठ प्रत्येक, त्रसदस, थावरदस, ए अट्ठावीस २८ भेद थया ए लीजे त्यारे त्रांणु भेद थाय. ए ९३ सत्तामे गणीये, अथवा बंधन पेहेलां पांच गण्याथी तिण ठामे पन्नरे १५ गणीये, तिवारे एकसोतीन भेद पिण थाय. ते सत्तामे गणीये; अथवा एकसोतीन भेदमां पंनर बंधन, पांच संघातन ए वीस प्रकृति शरीरमांहे गणीजे, एटले वीस काढीजे, ए शरीरना ज उत्तरभेद छे. अने वर्णादिकना २० वीस भेद छे, ते इहां सामान्य च्यार ४ भेद लेवा. वर्ण १ गंध १ रस १ फरस १ एवं ४ बाकी १६ काढवा. ॥ ३१ ॥

इय सत्तट्ठी बंधोदए य न य सम्ममीसया बंधे।
बंधोदयसत्ताए, वीसदुवीसट्ठवन्नसयं ॥ ३२ ॥

अर्थ—तिवारे ३६ प्रकृति काढयां सडसठि ६७ रहे बंधे पण सडसठि ६७ छे. बंधोदय कहेतां बंध अने उदयमे पण

६७ सदसदि छे वळी मोहनीकर्मनी २८ प्रकृति छे, तेमांहि सम्यक्त्वमोहनी १ मिश्रमोहनी २ ए बे प्रकृति बंधमां न गणवी, तिवारे मोहनीकर्मनी बंधे २६ छवीस प्रकृति छे एटले सरवाळे पांच ५ ज्ञानावरणी, नव ९ दर्शनावरणी, बे २ वेदनीय, २६ छवीस मोहनी, ४ आउखो, ६७ नाम, बे गोत्र, पांच ५ अंतराय, ए १२० एकसोवीस बांधे छे, तिहां मिश्रमोहनी २ मेळीजे, तिवारे उदयमे १२२ छे, अने तिणमें नामकर्मनी सर्व १०३ गणीजे, तिवारे सत्ताए एकसो अठावन १५८ छे. ॥३२॥

निरयेतिरिनैरसुरगई इगेवियतियचउ पणिदिजाईओ।
ओरालविउव्वाहारगतेयकम्मणपणसरीरा ॥ ३३ ॥

अर्थ—हवे गतिनामकर्मना च्यार भेद कहे छे-नरकगति १ तिर्यग्गति २ मनुष्यगति ३ देवगति ४। एकेंद्री जाति १ बेंद्रीनी जाति २ तेंद्रीनी जाति ३ चौरेंद्रीनी जाति ४ पंचेंद्रीनी जाति ५. ए पाच जाति जाणवी. औदारिक शरीर १ वैक्रिय शरीर २ आहारक शरीर ३ तेजस शरीर ४ कार्मण शरीर ५. ए पाच शरीर जाणवां. ॥ ३३ ॥

बाहूरु पिट्ठि सिर उर उयरग उवग अगुलीपमुहा।
सेसा अगोवगापढमतणुतिगस्सुवगाणि ॥ ३४ ॥

अर्थ—बांह्य दोय २, साथळ दोय २, पुठ १, सिर (मस्तक) १ हीयुं १ पेट १ ए आठ अंग छे अने आंगळी प्रमुख उपाग छे. शेष-बाकी नख, केशादिक सर्व अगोपांग जाणवा,ते अंगोपाग पहेला त्रण शरीरना छे.—औदारिक उपाग १ वैक्रिय उपांग २ आहारक उपांग ३. ए त्रण उपांग कह्यां. ॥३४॥

उरलाइपुग्गलाणं, निवद्धवज्झंतयाण संवंधं।
जं कुणइ जउसमं तं उरलाईवंधणं नेयं ॥ ३५ ॥

अर्थ—औदारिकादिक पांच शरीर पुद्गल केइक वांध्या पूर्वे शरीरपणें परिणमाव्या अने वीजां नवां वांधतां जे पुद्गल तेहने जे संवंध एकमेक करवो जेणे करीने ते वंधन कहीजे. कर्मनो उदय ते लाखनी पेरें जिम लाख लाकडीने एकमेक करे, चोटाडि राखे, तिम वंधन पुद्गलने ग्रहि राखे छे. ते वंधन औदारिक १ वैक्रीय वंधन २ आहारक वंधन ३ तेजस वंधन ४ कार्म्मण वंधन ५. ए पांच वंधन जाणवां. ॥३५॥

जं संघायइ ऊरलाइ–पुग्गले तणगणं व दंताली।
तं संघायं[५] बंधणमिव तणुनामेण पंचविहं ॥३६॥

अर्थ—जे कर्मना उदयथी संघात कहेतां भेळा करे, औदारिकादि पुद्गलोने जिम तृण गणना प्रतें जिम दंताली भेळा करे, तिम पुद्गलने भेळां करे, ते संघातन कहीइं छे. जिम बंधनना पांच भेद कह्या तिम संघातनना पांच भेद कहेवा. औदारिक संघातन १, वैक्रिय संघातन २, आहारक संघातन ३, तेजस संघातन ४, कार्मण संघातन ५. ॥३६॥

ओरालविउव्वाहारयाणं सगतेयकम्मजुत्ताणं ।
नव बंधणाणि इयर–दुसहियाणं तिन्नि तेसिं च ॥३७॥

अर्थ—हवे १५ वंधन कहेछे. औदारिक औदारिकवंधन १, वैक्रिय वैक्रिय वंधन २, आहारक आहारक वंधन ३. ए त्रिण **सग** पोतांना बंधनथी जाणवा, अने ३ शरीरथी तेजस जोडिये, वळी कार्मणने जोडीये, तिवारे नव वंधन थाय. औदारिक तेजस वंधन ४, वैक्रिय तेजस बंधन ५, आहारक तेजस

बंधन ६, औदारिक कार्मण वधन ७, वैक्रिय कार्मण बंधन ८, आहारक कार्मण वधन ९, ते ३ शरीरथी तेजस कार्मण जोडीये. औदारिक तेजस कार्मण बंधन १०, वैक्रिय तेजस कार्मण वधन ११, आहारक तेजस कार्मण वधन १२, कार्मण कार्मण बंधन १३, तेजस तेजस वधन १४, तेजस कार्मण वधन १५, ए वधन जाणवा. एव १५ पंदर बधन थया.

सघयणमट्टिनिचओ, त छद्धा वज्जरिसहनाराये ।
तह य रिसहनारांय, नाराँय अद्धनाराँय ॥३८॥

अर्थ—सघयण कहेतां हाडनो समूह-हाडनो माहोमाहे सबध ते सघयणना छ भेद जाणवा. वज्रऋषभनाराच पहेलो संघयण. महाबलवत खीली पाटो मर्कट बधन छे १. तिम बीजो ऋषभनाराच. जे माहे खीला नहीं, पाटो मर्कट बधन छे २. त्रीजो नाराच जेहने मर्कट बधन छे ३. चोथो अर्द्धनाराच ४ जेहने एकपासे मर्कट बधन छे. ॥३८॥

कीलिअँछेवट्टं इह, रिसहो पट्टो य कीलियावज्ज ।
उभओ मक्कडबधो, नाराय इममुरालगे ॥ ३९ ॥

अर्थ—पाचमो कीलीका सघयण. जेहने खीली छे. ५ छट्ठो छेवठो सघयण. जिहा सर्वथा निर्बल छे ६ ऋषभ-पाटो-पट्टो दोइ हाडनो सपुट मर्कटबध उपर पाटो छे, वज्र कहेता खीली-मर्कट बधने दोनु पासे कीली कहेता खील्ली छे. उभओ-दोनु पासे हाडनो आटो ते मर्कटबध कहीजे. ए सर्व पहेले सघयणमें छे. महाबल्वत थाय, ए संघयण फर्म औदारिक शरीर धारीने उदय आवे एटले तिर्यच मनुष्यने छे, देवना नारकीने नथी ॥३९॥

समचउरंसे[१]निग्गोहे[२]–साइ[३]खुज्जाइ[४]वामणं[५] हुंडं[६] ।
संठाणा वण्णा किण्ह–नीललोहियहलिद्दसिआ ॥४०॥

अर्थ—समचोरस संस्थान जे च्यार दोरी पर्यंकासन बेठां बराबर थाय, अति सुंदर छे १. निग्रोध संस्थान उपर त्रिग सुंदर छे, हेठलो त्रिक दुर्बल छे २. सादि संस्थान त्रीजो नीचलो सुंदर छे ३. कुब्जसस्थान जे कुबडो होये ४. वामन संस्थान जे देहमान छोटो होवे ५. हुंडक संस्थान सर्वथा लक्षण रहित होवे ६. ए छ संस्थान कह्यां. हवे वर्ण पांच काळो भमरनो, नीलो सूडानी पांख सरीखो, रातो हिंगळोक सरीखो. पीळो कंचन सरीखो, श्वेत–धोळो रूपा सरीखो. ॥४०॥

सुरही[१] दुरही[२] रसा पण, तित्त[१]कडु[२]अ कसाय[३]अंबिला[४]महुरा[५] ।
फासा गुरु[१]लहु[२]मिउ[३]खर[४]–सी[५]उण्ह[६]सिणिद्ध[७]रुक्खट्ठ[८] ॥४१॥

अर्थ—सुरभिगंध १, दुरभिगंध २. रस पांच–तीखो ते लविंग सरीखो १, कडवो ते गळो सरीखो २, कसायलो ते हरडे सरीखो ३, खाटो ते लिंबु आंवळी सरिखो ४, मीठो ते खांड सरीखो कह्यो ५. हवे स्पर्श आठ कहे छे. **गुरु**–भारे लागे १, **लहू**–हलुओ २, **मिउ**–सुकुमाल ३, खरखरो ते कठोर ४, **सी**–टाढो ५, **ऊण्ह**–उन्हो ६, **सिणिद्ध**–चीकणो ७, **रुक्खट्ठ**–लूखो ए आठ फरस जाणवा. ॥४१॥

निलकसिणं दुगंधं, तित्तं कडुअं गुरुं खरं रुक्खं ।
सीअं च असुहनवगं, इक्कारसगं सुभं सेसं ॥४२॥

अर्थ—प्रथम नीलवर्ण १, कीसन–काळो वर्ण २, दुरभिगंध ३, तिखो रस ४, कडुओ रस ५, गुरु–भारी स्पर्श ६,

खरखरो ७, शीतल ८, लूखो ९, ए नव ९ अशुभ जाणवा. बाकी रह्या ए इग्यार वर्ण आदिक जे ते शुभ जाणवा ए वचन प्रायिक निश्चयें नहीं. ॥४२॥

चउहगइव्वणुपुव्वी गइपुव्विदुग तिग निआऊजुअ ।
पुव्वीऊदओ वक्के, सुहअसुहवसुट्टविहगगई ॥४३॥

अर्थ—च्यारगतिनी पेरे आनुपूर्वी जाणवी. नरकानुपूर्वि १ तिर्यंचानुपूर्वि २, मनुष्यानुपूर्वि ३, देवानुपूर्वि ४, गतिआनुपूर्व्वि मिळ्या द्विक कहीजे. जिम देवद्विक–देवगति १, देवानुपूर्वि २, नरकदुग–नरकगति १, नरकानुपूर्वि २. इमज मनुष्यदुग–मनुष्य गति १ मनुष्यअनुपूर्व्वि २. ए द्विकमाहि ते गतिनो आऊखो भेळीजे तिवारे त्रिक थाय जिम देवत्रिक ते देवगति १ देवानुपूर्व्वि २ देवआऊखो ३ इम नरकादिक त्रिक जाणवो. आनुपूर्व्विनो उदय वक्रगतिमे छे. जे भवातरे जेवारे जीव जाय, तिवारे आनुपूर्विकर्म उदय आवे छे शुभविहायोगति १ जेथी जीवनी चाल्य शुभ थाइ, वृषभ गज हंसनी पेरे सुंदर चालि होवे १. अशुभविहायोगति. जे अशुभ चालि जे उट रासभ सरखी चाल चाले, महा असुदर. ॥४३॥

परघाऊदया पाणी, परेसिं वलिणपि होइ दुद्धरिसो ।
ऊससिणलद्धिजूत्तो, हवेइ ऊसासनामवसा ॥४४॥

अर्थ—पराघात नाम कर्मने उदयेथी प्राणी जीवने **परेसि** अन्य वैरी बलवतने पिण होवे दुर्धर्ष होये जे ते जीवने फोइके आक्रमसगे नही ते पराघात नामकर्म. १ उसास लेवानी लब्धि थाये एटले उसास पर्याप्तिना उदयथी श्वासोच्छ्वास मुखे ले, ते उसास नामकर्म कहीजे ॥४४॥

रविबिंबे उ जिअंगं, तावजुअं आयवाउ नउ जलणे।
जमुसिणफासस्स तहीं,लोहियवण्णस्सउदउत्ति॥४५॥

अर्थ---सूर्यना मंडळमां जे प्राणीना जीवना अंग छे, सूर्य विमानमे जे पृथ्वीकायना जीव ते ताप सहित छे-तावडो करे छे ते आतापना नामकर्मनो उदय जाणवो; पण अग्निने विषे आताप नही. ता श्युं जे छे ? जे कारणे अग्निमें फरस्यं उन्हो छे अने **लोहिअ** रातावर्णनो उदय छे. आतपनो उदय नहीं. ॥ ४५ ॥

अणुसिणपयासरूवं, जिअंगमुज्जोअए इहुज्जोआ।
जइ देवुत्तरविक्किअ--जोइसखज्जोअमाइव्व ॥ ४६ ॥

अर्थ---अणुसिण-उन्हो नहीं, अने प्रकाशरूप अजुवाळो करे छे, जीव प्राणीनो अंग शरीर उद्योत करे, ते उद्योतनामकर्म कहीजे. यदि-जिवारे देवता उत्तरवैक्रिय करे, ज्योतिषी चंद्र, ग्रह, नक्षत्र, ताराप्रमुखने यतिने आदिशब्दथी मणी, मोती, हीरा, माणिक्य प्रमुखने उद्योतनामकर्मनो उदय छे, ते थकी तेज ज्योति छे. ॥ ४६ ॥

अंगं न गुरु न लहुअं, जायइ जीवस्स अगुरुलहुउदया।
तित्थेण तिहुअणस्स वि, पुज्जो से उदओ केवलिणो॥४७॥

अर्थ—जे कर्मथी जिण जीवनो शरीर घणो भारी न थाइ, न घणो हलको पणि थाइं. मध्यम शरीर थाइ जेहनो ते अगुरुलघुनामकर्म उदयपणि जाणवो. **तित्थय**-तीर्थंकरनामकर्मना उदयथी जीव तीन भुवनने पूजनीक थाय, चोत्रीस अतिशय, पांत्रीस वाणी, अष्ट प्रातिहारज होवे ते तीर्थंकरनामकर्मनो उदय केवलीने थाय; केवलज्ञान उपन्या पछी ते उदये आवे. ॥४७॥

अगोवगनियमण, निम्माण कुणइ सुत्तहारसम ।
उवघाया उवहम्मइ, सतणुवयवलबिगाईहिं ॥४८॥

अर्थ—अगोपाग, नासिका, आंख, कान प्रमुख सखरा ठामने ठाम निपजावे. **निम्माण**—ते निर्म्माणनामकर्म कहीये सूत्रधार सरखो कहीजे. जिम सूत्रधार पूतळी घडे ते समी—अगोपांग सुदर घडे. उपघातनामकर्मथी जीवनो शरीर हणाय, आपणे शरीरे वधती आगुली जीम-पडजीभी रसोळी प्रमुख उपजे, तिणे शरीर कुरूप होवइ. कुरूप दीसई. ॥४८॥

बितिचउपर्णिदियतसा, वायरओ वायरा जिआ थूला
नियनियपज्जत्तिजुआ, पज्जत्ता लद्धिकरणेहिं ॥४९॥

अर्थ—**बितिचउ**-बेंद्री, तेंद्री, चौरेंद्री, पचेंद्री, जीव सर्वे चाले हाले छे, तिणे ते त्रस कहीजे. बादरनामकर्मना उदयथी जीव दीर्घपणु पामे. आप आपणी पर्याप्ति पूरी करे ते पर्याप्त नाम कहीजे. **पज्जता**—ते पर्याप्ति बे प्रकारनी छे—लब्धि पर्याप्त १ अने करण पर्याप्त २ तिहा आपणी पर्याप्त पूरी पामस्ये ते लब्धिपर्याप्त १, जे पर्याप्त पूरी करी रह्या ते करणपर्याप्त २ ॥४९॥

पत्तेअतणुपत्ते-उदएण दतअट्ठिमाइ थिर।
नाभुवरिसिराइसुह, सुभगाउ सव्वजणइट्ठो ॥५०॥

अर्थ—जे एक शरीरे एक जीव ते प्रत्येकनामकर्म कहीजे. जेहना उदयथी दात, हाड थिर रहे ते थिरनामकर्म कहीजे. नाभि उपरे मस्तकतांइ जे उपरलो त्रिक ते शुभ कहीजे, सुभगनामकर्मथी सर्व जगतने वल्लभ थाय, मोहनकारी थाय. ॥ ५० ॥

सुसरा महुरझुणी, आइज्जा सव्वलोगगिज्झवओ ।
जसउ जसकित्तीओ, थावरदसगं विवज्जत्थं ॥५१॥

अर्थ—सुस्वरनामकर्मथी मीठी सुखकारी ध्वनी थाय, कंठ खरो कोयलना सरिखो थाय. **आइय**—आदेयनामकर्मथी सर्व लोकने तेहनो वचन माननीक थाय. जसनाम कर्मथी जस थाय, कीर्त्ति थाय अने लोकमें जस थाय. ए त्रसदसक थयो. इणथी थावरदसक विपरीतार्थ छे. थावर एकेंद्री १, सूक्ष्म—दृष्टि न दीसे २, अपर्याप्त—पर्याप्त पूरी न करे ३. अनंता जीवे एक शरीर ते साधारण ४. हाड दांत हाले ते अथिर ५, हेठलो त्रिक ते अशुभ ६—दुर्भग—लोकमे दोहाग थाय ७, दुस्वर—कंठ सारो न होय. ८, अनादेय—वचन कोइ न माने ९, अजस पणि—जस न होय दस. ए थावरदसक कहीजे. ॥ ५१ ॥

गोअं दुहुच्चनीयं, कुलाल इव सुघडभुंभलाईअं ।
विग्धं दाणे लाभे, भोगुवभोगेसु वीरिए अ ॥५२॥

अर्थ—गोत्र कर्मना दोय २ भेद छे—प्रथम उच्चगोत्र १, वीजो नीचगोत्र २, ए बे भेद जाणवा. **कुलाल**—कुंभारसमान छे. जिम कुंभार सुंदर घडो पणि करे अने असुंदर घडो पणि करे तिम. हवे अंतरायकर्मना पांच भेद कहे छे, दानांतराय १, लाभान्तराय २, भोगान्तराय ३, उपभोगांतराय ४. वीर्य्यांतराय ५. ॥ ५२ ॥

सिरिहरिअसमं एअं, जह पडिकुलेण तेण रायाई ।
न कुणइ दाणाईयं, एवं विग्घेण जीवो वि ॥५३॥

अर्थ—श्रीगृहक-भंडारी समान अंतराय कर्म जाणवो. जिम भंडारी अपूठे थकां जिम राजानी दान देवानी बुद्धि हवे पणि ते पालितो दान देइ शके नही, इम अंतराय कर्मने उदये जीव दानादिक देइ शके नहीं. ॥ ५३ ॥

हवे आठ कर्मबंधनां कारण कहे छे.

पडिणीअत्तणनिन्हव–उवघायपओसअंतराएण ।
अच्चासायणयाए, आवरणदुग जिओ जयइ ॥५४॥

अर्थ—तिहां पहेला ज्ञानावरणो दर्शनावरणीनां बंध कारण कहे छे-प्रत्यनीकपणे जिनमतनो अपूठो करे, निन्हव-सिद्धान्तनां वचन उथापे, उपघात-ज्ञाननी प्रति मुख फाडे, भणता होय ते उपरे द्वेष धरे, द्वेष करे ते पओस कहीये. वळी भणता अंतराय करे, सिद्धांत, गुरु, प्रतिमाना अति आशातना करे, तो जीव अंतराय बांधे. आवरण दोय ज्ञानावरण १, दर्शनावरण २, दर्शनावरणी कर्म जीव इतरे कारणे बांधे. ॥५४॥

गुरुभत्तिखतिकरुणा-वयजोगकसायविजयदाणजुओ।
दढधम्माई अज्जइ, सायमसाय विवज्जयओ ॥५५॥

अर्थ—गुरुभक्ति करता, क्षमा करतां, दया पाळतां, व्रत पाळतां, योग वश करे, कषाय वश करे, दान देवे, दृढधर्मि होवे, धर्म उपरे स्थिर प्रतीत उपार्ज–बांधे सातावेदनी मर्त्ये, अने एथी विपरीत जे हिंसा, अव्रत, कषायथी असातावेदनी बांधे. ॥ ५५ ॥

उम्मग्गदेसणामग्ग–नासणादेवदव्वहरणेहिं ।
दंसणमोह जिणमुणि–चेइअसंघाइपडिणीओ ॥५६॥

अर्थ—उन्मार्ग—खोटो मार्ग देखाडे, मार्ग शुद्ध स्याद्वाद न आवे, एटले अशुद्ध मार्ग देखाडे देवद्रव्य—देहेरानो द्रव्य धन, साधारण द्रव्यनो हरवो, खावो, वावरे जीव दर्शनमोहनी कर्म बांधे. जिन, तीर्थंकर, साधु, चैत्य, देहरो. संघ चतुर्विध, तेहनो प्रत्यनीक जीव मिथ्यात्वमोहनी बांधे. ॥ ५६ ॥

दुविहंपि चरणमोहं, कसायहासाइविसयविवसमणो।
बंधइ निरयाउ महारंभपरिग्गहरओ रुद्दो ॥ ५७ ॥

अर्थ—दुविहं—दोइ भेदें चारित्रमोहनी जीव कर्म बांधे. कषाय क्रोधादिक हास्यादिक पांच इंद्रीनो विषय तेहथी परवश पड्यो एटले जे जीव विषयमें मस्त होवे ते चारित्रमोहनी बांधे. अने महारंभ—वावडी, कुआ, तळाव, कोट, बाग, खेत्र प्रमुख मोटा आरंभ करतो थको तथा मोटा परिग्रह धन धान्यमें मूर्छित थको परिणामे रौद्र (रौद्रध्यानी) ते नरक गति ज जाय. ॥ ५७ ॥

तिरियाउ गूढहियओ, सढो ससल्लो तहा मणुस्साउ।
पगइतणुकसाओ, दाणरुई मज्झिमगुणो अ ॥५८॥

अर्थ—तिर्यंचनो आउखो बांधे जे हीयानो महागूढ गंठीलो होवे, मूर्ख अज्ञानी होवे, साल (शल्य) सहित होवे. कूड कपट घणो करे ते तिर्यंचनो आयु बांधे. तिम तेणी रीते मनुष्यनो आउखो बांधे. जे जीव प्रकृति स्वभावे तणु—पातळो कषाय जेहने होवे, दान देवानी बुद्धि जेहने होवे, गुणे करी मध्यम गुणी होवे ते मनुष्यायु बांधे. ॥ ५८ ॥

अविरयमाइ सुराउ वालतवोऽकामनिज्जरो जयइ ।
सरलो अगारविल्लो, सुहनाम अन्नहा असुह ॥५९॥

अर्थ—अविरतिथी लेइ करीने सातमे गुणठाणे ताइ जीव देवतानो ज आउखो बांधे, वळी अज्ञानतप करतो जीव, अकामनिर्जरा करतो जीव देवतानो आउखो बांधे. सरलचित्त होवे, गर्व न करतो होय ते जीव नामकर्मनी शुभ प्रकृति बांधे अने कपटी अहंकार करतो होय ते नामकर्मनी अशुभ प्रकृति बांधे. ॥ ५९ ॥

गुणपेही मयरहिओ, अज्झयणज्झावणारुई निच्च ।
पकुणइ जिणाइभत्तो, उच्च नीय इयरहा उ ॥६०॥

अर्थ—गुणग्राही-गुणरागी, मद अहंकार रहित, माननो पक्ष नहीं, भणवा ने भणाववानी रुचि घणी होवे जेहने, एहवो सरलबुद्धि जीव होवे, वळी जे जीव जिन गुरु वचन बहु श्रुतनी भक्ति करतो होय, ते जीव उच्चगोत्र बांधे अने एहथी विपरीतपणे नीच गोत्रकर्म बांधे ॥ ६० ॥

जिणपूआविग्घकरो, हिंसाऽपरायणो जयइ विग्घ ।
इय कम्मविवागोय, लिहिओ देविंदसूरिहिं ॥६१॥

अर्थ—जिनपूजा करतां जे अंतराय करे ते अंतराय कर्म बांधे, वळी जे हिंसामा तत्पर -उजमाल होवे ते जीव अंतरायकर्म बांधे, एटले करी कर्मनो विपाक एटले एकसो अट्ठावन प्रकृति कही अने एहवा सिद्धात देखीने देवेन्द्रसूरि आचार्य रच्यो छे. ॥ ६१ ॥

इति कर्म्मविपाकनाम प्रथमकर्म्मग्रन्थटबार्थ संपूर्ण ।१।

अथ द्वितीयः कर्म्मग्रन्थः



तहथुणिमो वीरजिणं, जहगुणठाणेसु सयलकम्माइं ।
बंधुदयोदीरणया, सत्तापत्ताणि खवियाणि ॥ १ ॥

अर्थ—तह—तिम स्तवुं छुं, मन वचन कायाए करी, वीर महावीरजिन प्रत्ये नमुं; जह—जेम गुणठाणाने अनुक्रमे निरमल परिणामे सकल कर्म ज्ञानावरणादिक बंधपणे, उदयपणे, उदीरणापणे, सत्तापणे पाम्या जे कर्म ते सर्व खपाव्या जेणे ।ते महावीर प्रते वांदीने नमीने. ॥१॥

मिच्छे[1] सासण[2] मीसे[3], अविरय[4] देसे[5] पमत्त[6] अपमत्ते[7] नियट्टि[8]
अनियट्टि[9] सुहुम[10] उवसम[11] खीण[12] सजोगि[13] अजोगि[14] गुणा ॥२॥

अर्थ—हवे गुणठाणानो स्वरूप कहे छे—पेहेलो मिथ्यात्व गुणठाणो १, सास्वादन गुणठाणो २, मिश्र गुणठाणो ३, अविरति गुणठाणो ४, देशविरति गुणठाणो ५, प्रमत्त—गुणठाणो ६, अप्रमत्त गुणठाणो ७, अपूर्वकरण गुणठाणो—निवृत्ति बादर गुणठाणो ८, अनिवृत्तिबादर गुणठाणो ९, सूक्ष्मसंपराय गुणठाणो १०, उपशान्तमोह गुणठाणो ११, क्षीणमोह गुणठाणो १२, सजोगी केवली गुणठाणो १३, अजोगी केवली गुणठाणो १४. हवे गुणठाणानो परिणाम कहे छे. जे जिनधर्मशुं विपरीत ते मिथ्यात्व १, समकीतथ्युं पडी मिथ्यात्वमें आवे ते पडता काळने सास्वादन कहीजे २, जिनधर्म उपर न राग न द्वेष ते मिश्र कहीजे ३, नवतत्त्व सुधा सद्दहे ते अविरति समकित कहीजे, ४, समकीत सहित श्रावकव्रत पाळे ते देशविरति कहीजे ५, साधुना पंच महाव्रत पाळे पिण प्रमाद सेवे ते प्रमत्त कहीजे ६, प्रमाद सेवे नहीं ते अप्रमत्त कहीजे ७, प्रति समय अध्यव-

सायो भिन्न भिन्न होवाथी निवृत्तिबादर कहीजे ८, ज्यां क्रोध, मान, माया, उपशमावे अथवा खपावे ते अनिवृत्तबादर कहीजे ९, लोभ उपशमावे–खपावे ते सूक्ष्मसंपराय कहीजे १०, माह उपशमावे ते उपशान्त कहीजे ११, मोहनीकर्म खपावे ते क्षीण-मोह कहीजे १२, च्यार कर्म खपावे, केवलज्ञान पामे ते सजोगी केवली कहीजे १३, अघाती च्यार कर्म खपावे, मोक्ष जाय ते अजोगी केवली कहीजे १४. हवे चौद गुणठाणानी स्थिति कहे छे–मिथ्यात्वगुणठाणानी स्थिति अभव्यने अनादि–अनत, भव्य ग्रथि भेदे नहीं तेने अनादिसांत, समकीतथु पडी मिथ्या-त्वमे पडे तेहने जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट अनंतो काल १, सास्वादननी स्थिति ६ छ आवली छे २. मिश्रनी स्थिति जघन्यने उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त ३. सम्यक्त्व गुणस्थाननी उत्कृष्ट ३३ सागर. देशविरतिनी उ० देशूण पूर्व क्रोड वर्ष. प्रमत्त एहनी जघन्य अतर्मुहूर्त उत्कृष्ट देशे उणी पूर्व क्रोड. (सर्व स्थिति एकत्र करतां) आठमे गुणठाणे (तथा अप्रमत्तना जघन्य समय ने उत्कृष्ट स्थिति अंतर्मुहूर्तने प्रवाहापेक्षाए देशूण पूर्व क्रोड वर्ष) थी माडी बारमा ताइ (सुधी) पाच गुणठाणानी जघ-न्य एक समय. बारमानी जघन्य अंतर्मुहूर्त उत्कृष्ट प्रत्येके अथवा सर्वनी एक अंतर्मुहूर्त, तेरमा गुणठाणानी स्थिति जघन्य अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्टी देशे ऊण पूर्वकोडी. १४ चउदमे गुणठाणे स्थिति जघन्य उत्कृष्ट पाच लघु अक्षर प्रमाण छे. ए गुणठाणानो स्वरूप कह्यो. ए सिद्धांतमत छे. ॥२॥

हवे चौद गुणठाणाने विषे बंध कहे छे

अभिनवकम्मग्गहण, बंधो ओहेण तत्थ वीससय ।
तित्थयराहारगदुगवज्ज मिच्छमि सतरसय ॥ ३ ॥

अर्थ—नवां कर्मनो ग्रहण–लेवो, एटले जीवने नवां कर्म लगाववां ते बंध कहीजे. ते बंधे सर्व सामान्ये एकसोवीस प्रकृति छे. पांच ज्ञानावरणी, नव दर्शनावरणी, बे वेदनी, छवीस मोहनी, ४ आउखो, ६७ नामकर्मनी, बे गोत्रकर्मनी, पांच अंतरायकर्मनी एवं १२० प्रकृति बांधे; तिणमे तीर्थंकर नामकर्म १, आहारक शरीर २, आहारक उपांग ३. ए तीन प्रकृति शुभ छे, समकीत सर्वविरति विना बंधाय नहिं, तिणे ए तीन प्रकृति मिथ्यात्व गुणठाणे न बांधे, तिवारे बाकी मिथ्यात्व-गुणठाणे ११७ एकसो सत्तर प्रकृति कही तेटली बांधे; तेमां ए तीन प्रकृति नामकर्मनी टाली छे. ॥३॥

नरयतिग जाइथावरचउ हूंडायवछेवट्ठनपुंमिच्छं।
सोलं तो इगहिअसयं सासणि तिरिथीणदुहगतिगं ४॥

अर्थ—हवे सास्वादन गुणठाणो कहे छे–**नरयतिग**–नरकगति १, नरकानुपूर्व्वी २, नरकआउखो ३। जाति ४ एकेंद्री १, बेंद्री २, तेंद्री ३, चउरेंद्री ४। थावर १, सूक्ष्म २, अपर्याप्त ३, साधारण ४. ए ११, हुंडक संस्थान १२, आतापनाम १३, छेवठो संघयण १४, नपुंसकवेद १५, मिथ्यात्वमोहनी १६, ए सोले प्रकृति अशुभ छे. मिथ्यात्वगुणठाणे जीव जे होय ते बांधे बीजा न बांधे, तिणे सास्वादन गुणठाणे न बांधे तिवारे सोले प्रकृति वळी काढी; तिवारे सास्वादनगुणठाणे एकसोएक प्रकृति रही ते बांधे छे. २ हवे मिश्रगुणठाणो कहे छे–**तिरितिग** तिर्यंचगति १, तिर्यंचनी आनुपूर्व्वी २, तिर्यंचनो आउखो ३. **थीणद्धीतिग**–निद्रानिद्रा १, प्रचलाप्रचला २, थीणद्धी ३. दुर्भगतिग–ते दुर्भग १, दुःस्वर २, अनादेय ३. एवं नव ते उपरांत वळी ॥ ४ ॥

अणमज्झागिइसघयणचउ निउज्जोअकुखगइत्थिचि।
पणवीस तो मीसे, चउसयरि दुहाउअबंधा ॥५॥

अर्थ—अनतानुबंधी क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४. मध्यसंस्थान चार. न्यग्रोध १, सादि २, वामन ३, कुब्ज ४. मध्यसंघयण ४ रिषभनाराच १, नाराच २, अर्द्धनाराच ३, कीलिका ४ ए ४ । नीचगोत्र १, उद्योतनाम १, अशुभविहायोगति १, स्त्रीवेद १. ए पचवीस २५ प्रकृति मिश्रगुणठाणे न वांधे त्यारे मिश्रगुणठाणे ए टाळवी. तिवारे मिश्रगुणठाणे ७४ चौहुत्तर प्रकृति बांधे. १०१ माथी पचीस काढया तो छहोत्तर ७६ होवे, तिवारे दोय आउखा. मनुष्यनो आउखो १, देवतानो आउखो २ ए दोय टळी न बांधे तिवारे ७४ रहे. ॥५॥

सम्मे सगसयरि जिणाउवधिवइरनरतिअविअक-
सायो ।
उरलदुगतो देसे सत्तट्ठी तियकसायतो ॥ ६ ॥

अर्थ—हवे चोथो समकित गुणठाणो कहे छे—समकीत ठाणे ७७ सतहत्तरि प्रकृति बांधे. इहां तीर्थंकरनामकर्म १, मनुष्यनो आउखो २, देवतानो आउखो ३, ए तीन प्रकृति पहेलां काढी ते पछी मेळीजे तिवारे ७७ सतहत्तुर बांधे. हवे पाचमो देशविरतिगुणठाणो कहे छे—वज्रऋषभनाराचसघयण १, मनुष्यगति २, मनुष्य आनुपूर्वी ३, मनुष्यनो आउखो ४, बीजी चोकडी ते अप्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ ४ उरलदुग - औदारिक शरीर १, औदारिक उपाग २. ए दश १० प्रकृति देशविरतिगुणठाणे न बांधे, तिवारे ए १० काढीजे तिवारे ६७ सतसठी प्रकृति बांधे हवे प्रमत्तगुणठाणो कहे छे—त्रीजी चोकडी

ते प्रत्याख्यानी क्रोध १, मान २, माया, ३, लोभ ४ ए च्यार काढीजे. ॥ ६ ॥

तेवट्ठि पमत्ते सोगअरइअथिरदुगअजसअस्सायं ।
वुच्छिज्ज छ च्च सत्तव नेइ सुराउं जयानिट्ठं ॥ ७ ॥

अर्थ—त्यारे ६३ त्रेसठ रहे, ते प्रमत्त छट्ठे गुणठाणे बांधे. हवे सातमो अप्रमत्तगुणठाणो कहे छे—सोग १, अरति २, अथिर ३, अशुभ ४, अजस ५, असातावेदनी ६, किणीक जीवनें ए छ ६ काढीजे अने किणहिने तो सात काढीजे; जे देवनो आउखो काढीजे, देवतानो आउखो खपाव्यो होवे अथवा न बांधतो होवे तो सात काढीजे. ॥ ७ ॥

गुणसट्ठि अप्पमत्ते, सुराउ बंध तु जइ इहागच्छे ।
अन्नह अट्ठावन्ना, जं आहारगदुगं बंधे ॥ ८ ॥

अर्थ—जो छ काढीजे तो अप्रमत्तगुणठाणे गुणसट्ठि ५९ रहे, जिण कारणथी देवतानो आउखो जे जीव बांधतो थको सातमे गुणठाणे आवे तेहने ५९ अने जे जाव देवतानो आउखो खपावे, सातमे गुणठाणे आवे तेहने अट्ठावन ५८ रहे. इहां तो दोय प्रकृति घटे छे; सत्तावन अथवा छप्पन्न थाय छे. तिणे आहारक शरीर १, आहारक उपांग २, ए दोय वळी घालीजे तिवारे गुणसठी ५९ तथा ५८ थाय. ॥ ८ ॥

अडवन्न अपुव्वाइम्मि निद्ददुगं तो छपन्नपणभागे ।
सुरदुगपणिंदिसुखगइतसनवउरलंविणुतणुवंगा ॥९॥

अर्थ—एहिज अट्ठावन ५८ अपूर्वकरण आठमे गुणठाणे तेहने पहेले भागे बांधे, पछी बीजे त्रीजे चोथे पांचमे छट्ठे ए

पांच भागे छप्पन्न ५६ प्रकृति बांधे. निद्रा १, प्रचला २, ए दोय प्रकृति काढीजे. पछी देवगति १, देवतानुपूर्वि २ पचेंद्री १. शुभविहायोगति १ त्रस १, बादर २, पर्याप्त ३, प्रत्येक ४, थिर ५, शुभ ६, सुभग ७, सुस्वर ८, आदेय ९. ए त्रस-नव तथा औदारिक विना ४ शरीर दोय उपांग—वैक्रिय शरीर १, आहारक शरीर २, तैजस ३, कार्मण शरीर ४. वैक्रिय उपांग १, आहारक उपांग २. ॥ ९ ॥

समचउरनिमिणजिणवन्नअगुरूलहुचउछल सितीसतो
चरमे छवीसबंधो, हासरइकुच्छभयभेओ ॥ १० ॥

अर्थ—समचतुरस्र संस्थान १, निर्माण १, जिननाम १, वर्ण १, गंध १, रस १, फरस १, अगुरुलघु १, उपघात १, पराघात १, उसास १, छठ्ठा भागने अंते ए त्रीस ३० प्रकृति काढीजे, तिवारे चरम छेहले सातमे भागे छवीस २६ प्रकृति बांधे. हवे नवमो अनिवृत्तिबादरगुणठाणो कहे छे-हास्य १, रति १, दुगछा १, भय १. ए च्यार काढीजे. ॥ १० ॥

अनियट्टिभागपणगे, इगेगहीणो दुवीसविहबंधो ।
पुमसंजलणचउण्ह, कमेण छेओ सतरसुहुमे ॥११॥

अर्थ—अनिवृत्ति गुणठाणाना पांच भाग छे. तिणमे पहेले भागे बावीस बांधे, पाछले भागे सर्व एकेक घटाडीये. बावीस मांहेथी घटाडीये. अनिवृत्तिकरणने बीजे भागे पुरुषवेद काढीजे तिवारे एकवीस. त्रीजे भागे संजलनो क्रोध काढीजे, तिवारे २० वीस, चोथे भागे सजलनो मान काढीजे तिवारे १९ ओगणीस. पांचमे भागे सजलनी माया काढीजे तिवारे अढार १८. हवे दशमो सूक्ष्मसंपराय गुणठाणो कहे छे—

तिणमांहीथी संजलनो लोभ काढीजे; तिवारे सत्तर दशमे गुण-ठाणे १७ बांधे.

चउदंसणुच्चजसनाणविग्धं दसगं ति सोलसुच्छेओ।
तिसुसायबंधछेओ, सजोगि बंधंतणंतो य ॥ १२ ॥

॥ बन्धो सम्मत्तो ॥

अर्थ—हवे इग्यारमो उपशांतमोह कहे छे–च्यार दर्शनावरणि. उच्चगोत्र, जसनामकर्म्म, पांच ज्ञानावरणि, पांच अंतराय ए दश ए सर्व सोळे प्रकृतिनो छेद कीजे; तिवारे इग्यारमे बारमे तेरमे ए तीन गुणठाणे बाकी १ एक सातावेदनी प्रकृति बंधमे रहे, पछे तेरमे सजोगी केवळीने छेडे तेपण खपावे, अबंध होवे, सर्व कर्मशुं रहित होवे. चौदमे गुणठाणे पछी अनंतो काल मोक्षपद पामे. १२ ए बंध अधिकार पूरो थयो छे.

उदओ विवागवेयणमुदीरणमपत्ति इह दुवीससयं।
सतरसयं मीच्छे मीससम्मआहारजिणणुदया ॥१३॥

अर्थ—हवे चौद गुणठाणे उदय कहे छे–उदय कहेतां कर्मनो विपाक फल तेहनो भोगवणो शुभ सातादिक. अशुभ असातादिक ते उदय कहीजे. अने उदय नाव्या कर्मने खेंची उदीरणकरणे करी–जोरावरें करी उदय आणे ते उदीरणा कहीजे. इहां उदयमें उदीरणामें सामान्य एकसो बावीस १२२ छे. मोहनीना २८ भेद लीजे, मिथ्यात्व गुणठाणे ११७ एकसो सत्तरनो उदय छे. जे कारणे पांच प्रकृति काढीजे–मिश्रमोहनी १, सम्यक्त्वमोहनी २, जिननाम ३, आहारक शरीर ४, आहारक उपांग ५. ए पांच काढीजे. ॥ १३ ॥

सुहुमतिगायवमिच्छ, मिच्छत्त सासणे इगारसय ।
निरयाणुपुव्विणुदया, अणथावरइगविगलअतो॥१४॥

अर्थ—हवे सास्वादन गुणठाणो कहे छे-सूक्ष्मत्रिक ते सूक्ष्म १, अपर्याप्त २, साधारण ३. आताप १ मिथ्यात्वमोहनी १. ए पाचनो उदय मिथ्यात्वमें छे, सास्वादनमें नहीं, तिवारे सास्वादनमें एकसो इग्यार प्रकृति उदय छे. सो एतो एकसो बारे रहो, तिवारे नरकआनुपूर्वि काढीजे तिवारे १११ रही. हवे मिश्रगुणठाणो कहे छे-अनतानुबंधि क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४, थावर ५, एकेंद्री ६, विकलेंद्री ते बेंद्री ७, तेंद्री ८, चौरेंद्री ९. ए नव काढीजे. ॥ १४ ॥

मीसे सयमणुपुव्वीणुदया मीसोदएण मीसतो ।
चउसयमजए सम्माणुपुव्वि खेवाबियकसाया ॥१५॥

अर्थ—तिवारे मिश्रगुणठाणे एकसो प्रकृति उदय छे. एतो एकसो दोय १०२ रही, तिवारे मनुष्यानुपूर्वि १, तिर्यंचानुपूर्वि १, देवानुपूर्वि १. ए तीन वली काढीजे, तिवारे ९९ रहे. वली मिश्रमोहनी मेळीजे, तिवारे पुरा सो १०० थाय

चोथो गुणठाणो कहे छे-मिश्रमोहनी काढीजे अने समकीतमोहनी १, आनुपूर्वि ४ च्यार, ए पाच प्रकृति मेळीजे, तिवारे चोथे गुणठाणे १०४ एकसोच्यार प्रकृतिनो उदय छे. पाचमो देसविरति गुणठाणो कहे छे-बीजी चोकडी कषायनी-अप्रत्याख्यानी क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४. ॥ १५ ॥

मणुतिरिणुपुव्वीवीउव्वट्ठ-दुहगअणाइज्जदुगसतरछेओ
सगसीइ देसि तिरिगइआउनिउज्जोअतिकसाया१६॥

अर्थ--मनुष्यानुपूर्वि १, तिर्यंचनी आनुपूर्वि १ वैक्रियाष्टक ते वैक्रिय शरीर १, वैक्रिय उपांग २, देवगति ३, देवानुपूर्वि ४, देवनो आउखो ५, नरकगति ६, नरकानुपूर्वि ७, नरकआउखो ८, ए आठ. दुर्भग १, अनादेय १, अजस १, ए सतरे प्रकृति काढीजे, तिवारे देशविरति गुणठाणे सत्यासी ८७ प्रकृतिनो उदय छे. हवे छट्टो प्रमत्त गुणठाणो कहे छे-तिरजंचगति १, तिरजंच आउखो १, नीचैर्गोत्र १, उद्योतनामकर्म १ त्रीजी चोकडी-प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ. ॥ १६ ॥

अट्ठछेओ इगसीइ, पमत्ते आहारजुअलपक्खेवा ।
थीणतिगाहारगदुगछेओ छसयरि अप्पमत्ते ॥१७॥

अर्थ--ए आठ प्रकृति काढीजे; तिवारे प्रमत्तगुणठाणे एकासी ८१ प्रकृति उदये छे. इहां गुणासी ७९ थाय छे; तिवारे आहारक शरीर १, आहारक उपांग २. ए दोय प्रकृति भेळीजे; तिवारे ८१ एकासी थाय छे. हवे सातमो अप्रमत्त गुणठाणो कहे छे-**थीणद्धीतिग**-निद्रानिद्रा १, प्रचलाप्रचला २, थीणद्धी ३, आहारक शरीर ४, आहारक उपांग ५; ए पांच प्रकृति काढीजे, तो छोत्तेर प्रकृति अप्रमत्तगुणठाणे उदय छे. ॥१७॥

सम्मत्तंतिमसंघयणतिगवुच्छेओ बिसत्तरि अपुव्वे ।
हासाइछक्कअंतो छसट्ठि अनियट्टि वेयतिगं ॥१८॥

अर्थ—हवे अपूर्वकरण कहे छे-समकीत मोहनी १ छेला तीन संघेण अर्धनाराच १, कीलिका १, छेवट्ठो १, ए च्यार प्रकृति काढीजे; तिवारे आठमे अपूर्वकरणगुणठाणे बहोत्तर ७२ प्रकृतिनो उदय छे. नवमो अनिवृत्ति बादर गुणठाणो कहे

छे. हास्य १, रति १, अरति १, सोग १, भय १, दुगंछा १, ए छ प्रकृति काढीजे, तिवारे छासठ प्रकृतिनो उदय छे, नवमे अनिवृत्ति गुणठाणे. हवे दसमो सूक्ष्मसंपराय गुणठाणो कहे छे-वेद तीन-पुरुषवेद १, स्त्रीवेद २, नपुसकवेद ३. ॥ १८ ॥

संजलणतिगछछेओ, सट्ठी सुहुममि तुरिअलोभतो।
उवसंतगुणे गुणसट्ठि, रिसहनारायदुग अंतो ॥१९॥

अर्थ—संजलणा तीन-संजलन क्रोध १, मान २, माया ३. ए छ ६ प्रकृति काढीजे, तिवारे दशमे सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे ६० साठ प्रकृतिनो उदय छे. हवे इग्यारमो गुणठाणो कहे छे-चोथो लोभ संजलणो लोभ १ ए एक प्रकृति काढीजे, तिवारे इग्यारमे उपशांतमोहगुणठाणे गुणसठि ५९ प्रकृतिनो उदय छे. हवे बारमो क्षीणमोहगुणठाणो कहे छे-तिहा क्षीणमोह गुणठाणाना बे भाग छे तिहा पेहेले भागे ऋषभनाराच १, नाराच २. ए बे काढीये. ॥ १९ ॥

सगवन्न खीणदुचरमि निद्दुगंतो चरमि पणपन्ना।
नाणंतरायदंसणचऊछेओ सजोगीबायाला ॥२०॥

अर्थ—तिवारे पेहेले क्षीणमोह गुणठाणाना उपान्त्यसमये सत्तावन ५७ प्रकृतिनो उदय छे, अने बीजे भागे निद्रा १ प्रचला १ ए दोय प्रकृति काढीजे, तिवारे क्षीणमोहने छेहडे पचावन प्रकृतिनो उदय छे. हवे तेरमो सजोगी केवली गुणठाणो कहे छे-**नाण**-ज्ञानावरणी पाच, अंतराय पाच, दर्शनावरणी ४ च्यार. ए १४ चौदे प्रकृति काढीजे, तिवारे तेरमे गुणठाणे **बायाला**-बेतालीस प्रकृति उदये छे. जो के थाय छे एकतालीस पण. ॥ २० ॥

तित्थुदया उरलाथिरखगइदुगपरित्तितिगछसंठाणा ।
अगुरुलहुवण्णचऊनिमिणतेअकम्माइसंघयण ॥२१॥

अर्थ--ए एकताळीस रही तिवारे तीर्थंकरनाम एमां भेळीजे. तीर्थंकरनामकर्मनो उदय ते केवळज्ञान उपन्या पछी होवे माटे ४२. हवे चौदमो अजोगी गुणठाणो कहे छे, तीस प्रकृति खपे ते कहे छे. औदारिक शरीर १, औदारिक उपांग २. अथिर १, अशुभ १. ए अथिरदुग तथा शुभविहायोगति १, अशुभविहायोगति १. ए खगतिदुग. प्रत्येक १, स्थिर १, शुभ १. ए प्रत्येकतिग. छ संस्थान ६ ते समचतुरस्त्र १, न्यग्रोध २, सादी ३, वामन ४, कुब्ज ५, हुंडक ६, ए छ. अगुरुलघु १, उपघात १, परावात १, उसास १, वर्ण १, गंध १, रस १, स्पर्श १, निर्माण १, तेजसशरीर १, कार्मणशरीर १. आदि ते प्रथम वज्रऋषभनाराच संघयण. १ ॥ २१ ॥

दूसरसूसरसायासाएगयरं च तीसवुच्छेओ ।
बारस अजोगी सुभगाइज्जजसन्नयरवेयणीअं ॥२२॥

अर्थ--दुःस्वर १, सुस्वर १, सातावेदनी अथवा असाता ए दोनु मांहिली एक वेदनी एवं त्रीस प्रकृति खपावे, तिवारे चउदमे अजोगीगुणठाणे बार प्रकृतिनो उदय रहे छे. ते बार प्रकृतिनां नाम कहे छे--सुभग १, आदेय १, जस १, अने साता असाता मांहेली एक वेदनी जे रही होय ते साता अथवा असाता. ॥२२॥

तसतिगपणिंदिमणुआउगइजिणुच्चंतिचरमसमयंता ।
। उदओ सम्मत्तो ।
ऊदऊव्वुदीरणया, परमपत्ताइ सगगुणेसु ॥ २३ ॥

अर्थ—त्रसत्रिक ते त्रस १, बादर २, पर्याप्त ३. पंचेंद्री जाति १, मनुष्यनो आउखो १, मनुष्य गति १, जिन–तीर्थंकरनाम १, उच्चैर्गोत्र १. बारे प्रकृति चउदसमे १४ में गुणठाणे तेहने छेहले समये खपाव तिवारे सर्व कर्म रहित होय तेथी मोक्ष पामे. एटले करी १४ गुणठाणे उदय अधिकार पूरो कह्यो, हवे उदीरणा ते उदयनी जेम जाणवी. उदीरणा १२२ नी छे. मिथ्यात्वे एकसो सतरनी उदीरणा छे, सास्वादने एकसो अगीयारनी छे, मिश्रे एकसो १०० नी छे, अविरते १०४ एकसो चारनी छे, देसविरते सत्यासी ळे. प्रमत्त गुणठाणे ८१ एक्यासी छे. इम छट्ठा गुणठाणा तांइ जाणवी सातमे अप्रमत्त गुणठाणेथी फेर छे, ते आगली गाथाए करी कहे छे ॥ २३ ॥

एसा पयडितिगुणा, वेयणीआहारजुअलथीणतिग।
मणुआउ पमत्तता, अजोगिअणुदीरगो भयव ॥२४॥

॥ उदीरणा सम्मत्ता ॥

अर्थ—ए तीन प्रकृति ऊणी कीजे ते प्रथम सातावेदनी १, असातावेदनी १, मनुष्यनो आउखो १. ए तीननो फेर छे. वेदनी २, आहारक २, थीणद्धीतीन, मनुष्यनो आउखो १, ए आठ काढीजे. उदयमे पाच नीकळे छे, उदीरणमे सातमे गुणठाणे ८ आठ काढीजे, तिवारे तिहुत्तर ७३ उदीरणा छे. आठमे गुणहत्तर ६९ छे. नवमे तेसठि ६३ उदीरणा छे. दसमे सत्तावन छे. इग्यारमे छप्पन्न ५६ छे. बारमे पेहेले भागे चोपन ५४ उदीरणा छे अने बीजे भागे बावन ५२ उदीरणा छे तेरसे गुणठाणे च्यालीस ४० उदीरणा ळे. अने चौदमे अजोगी गुणठाणे उदीरणा नथी अनुदीरक ळे. सिद्ध थाय ते अकर्म्मा छे. एटले चौदे गुणठाणे उदीरणा पूरी थइ. ॥ २४ ॥

सत्ता कम्माण ठिइ, बंधाइअलद्धअत्तलाभाणं।
संते अडयालसयंजाउवसमुविजिणुबीयतईए ॥२५॥

अर्थ—हवे चौदे गुणठाणे सत्ता कहे छे–तिहां सत्तानो अर्थ कहे छे–जे कर्मना स्थिति बांध्या पछी उदय विना अथवा उदय सहित जे जीवशुं लाग्या रहे; जिम घरनी नीमी तिम जे कर्म ते सत्ता कहीजे, जे बंधादिकपणे आत्माथी लोली-भाव पामे ते सत्ता जाणवी. हवे उपशमश्रेणिनी सत्ता कहे छे–जे जीव उपशम समकीती, उपशम चारित्री; तेहनी सत्तामें कांइ प्रकृति घटे नहीं, तेहने उपशम ११ इग्यारमे गुणठाणा तांइ एकसो अडताळीस १४८ नी सत्ता छे. इहां सत्तामे एकसो अट्ठावन १५८ छे. तिना नामकर्मना भेद १०३ एकसोतीन गुण्या छे. अने जो बंधन १५ पन्नर न गणीजे ने पांच गणीजे तो नामकर्मना भेद ९३ त्राणु थाय. जिवारे नामकर्मना तिनवे ९३ भेद गणीजे; तिवारे १४८ एकसो अड-ताळीस थाइ. ॥२५॥

अपुव्वाइअचउक्के अणतिरिनिरयाउविणुबियालसयं।
सम्माइचउसु सत्तगखयंमि इगचत्तसयमहवा ॥२६॥

अर्थ—हवे बीजो पक्ष कहे छे. जे उपशमश्रेणिवंत आठमे गुणठाणे अनंतानुबंधी चोकडी खपावे, एटले अपूर्वकरण आठमा गुणठाणाथो मांडी इग्यारमा उपशांतमोह गुणठाणा तांइ च्यार ४ गुणठाणे अनंतानुबंधी क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४.ए च्यार. तिर्यंचनो आउखो १, नरकनो आउखो. ए छ खपावे; तेहने इणे चारे गुणठाणे एकसोबेताळीस १४२ नी सत्ता छे. हवे कोइ जीव चोथे गुणठाणे सात प्रकृति खपावे,

एटले अनंतानुबंधी क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४, ए चार, समकित मोहनी १, मिश्र मोहनी २, मिथ्यात्व मोहनी ३. एम ए ७ सात प्रकृति जेणे खपावे ते जीव समकीतथी चारे गुणठाणे एकसो एकताळीस १४१ नी सत्ता छे. ए क्षायकसमकीती उपशमश्रेणि जीवने छे. ॥ २६ ॥

खवग तु पप्पचउसुवि,पणयालनिरयतिरिसुराऊविणा।
सत्तगविणु अडतीस, जा अनियट्टिपढमभागे ॥२७॥

अर्थ—क्षपकश्रेणीने मते च्यारे गुणठाणे अविरतिथी माडी अपूर्वकरण गुणठाणा ताइ एकसो पीसताळीसनी सत्ता छे. नरकनो आउखो, तिर्यंचनो आउखो ने देवायुष्य एम तीन आउखो खपावे, तिवारे १४५ एकसो पीस्ताळीसनी सत्ता छे. पछी अनंतानुबधी क्रोध, मान, माया, लोभ ४. समकीत मोहनी १, मिश्रमोहनी २, मिथ्यात्व मोहनी ३. ए ७ सात प्रकृति खपावे, तिवारे १४८ एकसो अडताळीसनी सत्ता रहे छे. अनिवृत्ति बादरने पेहेला भाग ताइ. अनिवृत्ति बादरना नव भाग छे. ॥ २७ ॥

थावरतिरिनिरयायव–दुगथीणतिगेगविगलसाहार।
सोलखओ दुवीससय, वियमि वियत्तिअकसाय तो।२८।

अर्थ—हवे अनिवृत्तिबादरनो बीजो भाग कहे छे— थावर १, सूक्ष्म १, तिर्यंचगति १, तिर्यंचानुपूर्वि १, नरकगति १, नरकानुपूर्वि १, आताप १, उद्योत १, निद्रानिद्रा १, प्रचलाप्रचला १, थीणद्धी १, एकेंद्री जाति १, बेंद्री १, तेंद्री १, चौरद्री १, साधारण १, ए सोळ प्रकृति सत्तामें खपे, तिवारे एकसो बावीस १२२ नी सत्ता छे, ए अनिवृत्ति बादरने

बीजे भागे १२२ नी सत्ता छे. हवे त्रीजे भागे कषायनी बीजी चोकडी अप्रत्याख्यान क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४. प्रत्याख्यानी क्रोध, मान, माया, लोभ. ए ८ आठ काढीजे. ॥ २८ ॥

तइआइसु चउदसतेरबारछपणचउतिहिअसयकमसो। नपुइत्थिहासछगपुंस तुरिअकोहमयमायखओ ॥२९॥

अर्थ—तिवारे अनिवृत्तिवादरने त्रीजे भागे ११४ एकसो चौदनी सत्ता छे. अनिवृत्तिकरणे चोथे भागे नपुंसकवेद खपे; तिवारे एकसो तेर ११३ नी सत्ता छे. पांचमे भागे स्त्रीवेद खपावे; तिवारे ११२ एकसो बारनी सत्ता छे. छट्ठे भागे हास्य १, रति १, अरति १, शोक १, भय १, दुगंछा १. ए छ प्रकृति खपावे; तिवारे एकसो छ १०६ नी सत्ता छे. सातमे भागे पुरुषवेद खपावे तिवारे एकसो पांच १०५ नी सत्ता छे. आठमे भागे संजलनो क्रोध खपावे; तिवारे एकसो च्यार १०४ नी सत्ता छे. नवमे भागे संजलनो मान खपावे; तिवारे एकसो तीननी सत्ता छे. ए नवमो गुणठाणो पूरो कह्यो पछी संजलनी माया खपावे तिवारे. ॥ २९ ॥

सुहुमि दुसयलोहंतो, खीणदुचरिमेगसयदुनिद्दखओ। नवनवइ चरमसमये, चउदंसणनाणविग्घंतो ॥३०॥

अर्थ—दशमे सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे एकसो दोय १०२ नी सत्ता छे. इहां क्षपकश्रेणि दशमे गुणठाणेथी बारमे गुणठाणे जाय. इग्यारमो न फरसे तिवारे बारमे गुणठाणे संजलनो लोभ खपावे; तिवारे क्षीणमोहने पेहेले भागे एकसो एक १०१ नी सत्ता छे. तिहां वळी निद्रा १, प्रचला १, ए दोय

२, प्रकृति खपावे, तिवारे क्षीणमोहने बीजे भागे नवाणुं ९९ नी सत्ता छे. हवे दर्शनावरणी चार ४, ज्ञानवरणी पांच, ए चौदे प्रकृति खपावे तिवारे. ॥ ३० ॥

पणसीइ सयोगी अयोगि, दुचरिमेदेवखगइगधदुगं।
फासट्ठवण्णरसतणु–बधणसघायपणनिमिण ॥३१॥

अर्थ—तेरमे सजोगी केवळी गुणठाणे पच्यासी ८५ नी सत्ता छे. हवे अजोगी चौदमे गुणठाणाने पेहेले भागे तो पंचासी ८५ नी सत्ता छे. अने बीजे भागे विहुतर खपावे ते कहे छे–देवदुग देवगति १, देवानुपूर्वि १. खगइदुग–शुभविहायोगति १, अशुभविहायोगति २, गधदुग–सुगंध १, दुर्गंध २, फास–फरस आठ ८, वर्ण पांच ५, रस पांच ५. शरीर पांच ५, संघातन ५ पांच, अने निर्माण नामकर्म. ॥ ३१ ॥

सघयणअथिरसठाणछक्कअगुरुलहुचउअपज्जत्त।
साय च असाय वा, परित्तुवगतिगसुसरनीयं ॥३२॥

अर्थ—संघयण छ ६, अथिर १, अशुभ १, दुर्भग १, दुःस्वर १, अनादेय १, अजस १ ए अथिर छ ६. सस्थान छ ६, समचउरसादि छ अगुरुलघु १, पराघात १, उपघात १, उसास १, अपर्याप्त १, साता अथवा असाता एक प्रत्येकतिग उपांग तीन औदारिक उपांग १, वैक्रिय उपांग २, आहारक उपांग ३. सुस्वरनामकर्म १, नीचैर्गोत्र ॥ ३२ ॥

विसयरिखओअ चरिमे, तेरसमणुअतसतिगजसाइज्जं।
सुभगजिणुच्चपणीदिय–सायासायेगयरछेओ ॥३३॥

अर्थ—ए बहोंतेर प्रकृति खपावे, तिवारे अजोगी केव-

छीने छेहेले भागे तेर प्रकृतिनी १३ नी सत्ता छे, ते तेर १३ प्रकृतिनां नाम कहे छे—मनुष्यगति १, मनुष्य आनुपूर्वि १, मनुष्य आउखो १, त्रस १, वादर १, पर्याप्त १, आदेय १, सुभग १, जिनतिर्थंकर १, उच्चैर्गोत्र १, पंचेंद्रीनी जाति १, साता असाता मांहेली एक प्रकृति जे रही होय ते पण ए तेरे छेल्ले समये खपावी मोक्ष पामे. ॥ ३३ ॥

नरअणुपूव्विविणावा, बारसचरमसमयम्मि जो खविओ
पत्तो सिद्धिं देविंद--वंदिअं नमह तं वीरं ॥३४॥

अर्थ—हवे मतान्तर कहे छे. मनुष्य आनुपूर्विं पहेलाइज काढीजे; तिवारे बाकी बार ज रहे ते चरमसमये खपावे, जिवारे सर्व कर्म खपावी मोक्ष पहोचे, अकर्मी थइ सिद्ध मोक्षगति पहोचे एहवा श्रीमहावीरस्वामी इणि अनुक्रमे मोक्ष पहोत्या. देवेन्द्र महाराजा अने देवेद्रन्सूरि आचार्य नम्यो एहवा महावीर भणी वांदु छुं. ॥ ३४ ॥

इति श्रीद्वितीयकर्म्मग्रन्थटबार्थ समाप्त ॥२॥

ॐ नमः सिद्धम्. ।

अथ तृतीयः कर्म्मग्रन्थ

वधविहाणविमुक्क, वदिअ सिरिवद्धमाणजिणचद ।
गईआइसु वुच्छ, समासओ वधसामित्त ॥ १ ॥

अर्थ—बधकर्म्मनो बधनि केरो विधान कहेता करणो तिणथी रहित एहवा श्रीमहावीर भगवत जिन सामान्यकेवलीमें चद्रमा समान तेहने वादीने गति आदिक ६२ वासठ मार्गणा विषे संक्षेपे करी वंधस्वामित्व—कोण जीव कितरी प्रकृति वाधे ते कहेशुं. ॥ १ ॥ हवे वासठ ६२ मार्गणाना नाम कहे छे.

गईइदियेंकाएं, जोएं वेएं कसायनाणे अ ।
सजमदसणलेसा, भवसम्मे सन्निआहारे ॥२॥

अर्थ—गति ४, ईंद्रिय ५, पृथ्वीआदिकाय ६, योग ३, मनयोग १, वचनयोग २, काययोग ३ वेद ३, पुरुष १, स्त्री २, नपुसकवेद ३, कषाय ४. क्रोध १, मान, २, माया ३, लोभ ४. ज्ञान ८. मतिज्ञान १, श्रुतज्ञान २, अवधिज्ञान ३, मनःपर्यवज्ञान ४, केवलज्ञान ५, मतिअज्ञान ६, श्रुतअज्ञान ७, विभंगज्ञान ८, सजम ७, दर्शन ४, लेश्या ६, भव्य १. अभव्य २, सम्यक्त्व ६, संज्ञी १, असंज्ञी २, आहारक १, अनाहारक २ ॥ २ ॥

जिणसुरविउवाहारदु, देवायुनिरयसुहुमविगलतिग ।
ऐगिंदिथावरा यवे, नपूमिच्छे हुडछेवट्ठे ॥३॥

अर्थ—हवे पहेली नरकगति मार्गणाए बंधस्वामित्व कहे छे-जिनतीर्थंकर नाम १, देवगति १, देवानुपूर्वि २, वैक्रिय शरीर १, वैक्रिय उपांग २, आहारक शरीर १, आहारकउपांग २, देवतानो आउखो १, नरकगति १, नरकानुपूर्वि २, नरक आयु ३, सूक्ष्मत्रिक-सूक्ष्म १, अपर्याप्त २, साधारण ३, विगलतिग-बेंद्री १, तेंद्री २, चौरेंद्री ३, एकेंद्रीजाति १, थावरनामकर्म १, आतापनामकर्म १, नपुंसकवेद १, मिथ्यात्वमोहनी १, हुंडकसंस्थान १, छेवट्ठो संघयण १. ॥३॥

अणमज्झागिइसंघयण–कुखगइनीइत्थिदुहगथीण-तिगं ।
उज्जोयतिरिदुगं, तिरिनराउनरउरलदुगरिसहं ॥ ४ ॥

अर्थ—अनंतानुबंधी क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४. मध्यसंस्थान ४. न्यग्रोध १, सादि २, वामन ३, कुब्ज ४. मध्यसंघयण ४, ऋषभनाराच १, नाराच २, अर्द्धनाराच ३, कीलिका ४, अशुभविहायोगति १, नीचगोत्र १, स्त्रीवेद १, दुर्भग १, दुःस्वर १, अनादेय १, निद्रानिद्रा १, प्रचलाप्रचला १, थीणद्धी १, उद्योत १, तिर्यंचगति १, तिर्यंचानुपूर्वि १; तिर्यंच आउखो १, मनुष्यआउखो १, मनुष्यगति १, मनुष्यानुपूर्वि २. औदारिक शरीर १, औदारिक उपांग २, वज्र ऋषभनाराचसंघयण १, ए दोय गाथाए करी पंचावन प्रकृति ५५ कही. ॥ ४ ॥

सुरइगुणवीसवज्जं इगसओ ओहेण बंधहिंनिरया ।
तित्थविणा मिच्छिसयं, सासणनपुचउविणा छनुई ॥५॥

अर्थ—सुरगति आदिक ओगणीस १९ प्रकृति काढीजे-

देवगति १, देवानुपूर्वि २. वैक्रिय २, आहारक २ देवायु १, नरकत्रिक ३, सूक्ष्मत्रिक ३, विगलत्रिक ३, एकेंद्रि १, थावर १, आताप १. ए १९ काढीजे. एकसोवीसमांथी १९ काढीये, त्यारे १०१ पेहेली तीन नरकमे एकसो एकनो ओघ—सामान्ये बंध छे. जे पूर्वे कहीजे १९ प्रकृति, तिणमे नारकी न उपजे, तिणमे एकसो एकमे तीर्थंकरनाम काढीजे, तिवारे मिथ्यात्व-गुणठाणे १०० एकसो प्रकृतिनो बंध छे. तिणमांहिथी नपूंसक वेद १, मिथ्यात्व १, हुंडक संस्थान १, छेवठो संघयण १, ए च्यार काढीजे, तिवारे सास्वादन गुणठाणे उन्नु ९६ प्रकृति बांधे ॥ ५ ॥ हवे वळी ते मांहीथी.

विणुअणछवीसंमीसे, बिसयरि सम्मम्मि जिणेनराउ जुआ ।
इयरयणाइसुभंगा, पंकाइसुं तित्थयरहीणो ॥ ६ ॥

अर्थ—अनंतानुबंधी ४, मध्यसंस्थान ४, मध्यसंघयण ४, अशुभविहायोगति १, नीचगोत्र १, स्त्रीवेद १, दुर्भग १, थीणद्धी ३, उद्योत १, तिर्यंच ३, मनुष्यनो आउखो १, ए छवीस काढीजे, तिवारे मिश्रगुणठाणे ७० सीत्तेरनो बंध छे, इणमांहे तीर्थंकर १, मनुष्यनो आउखो १, ए दोय प्रकृति मेळीजे, तिवारे अविरतिगुणठाणे ७२ बहोत्तरनो बंध छे. नारकीमे ४, च्यार गुणठाणा छे. ए ४ गुणठाणा रत्नप्रभा १, शर्करा प्रभा २, वालुप्रभा ३. ए त्रण ताइ जाणवा. पंकप्रभा, धूमप्रभा, तमःप्रभा ए तीन नरके ओघ सामान्यमांथी तीर्थंकर नाम काढीजे. त्यारे सोनो ओघ छे. इतले इणे नरकनो आव्यो तीर्थंकर न थाय. मिथ्यात्वगुणठाणे सो १०० प्रकृतिनो बंध छे.

सास्वादनमे ९६, मिश्रमे ७०, समकितमे ७१. एक मनुष्यनो आयु भेळोजे. ॥ ६ ॥

अजिण[१]मणुआउ[१] ओहे[९९], सत्तमिए नरदुगु[२]च्च[१]विणु[३]मिच्छे[९६]।
इगनवई सासणे[९१], तिरिआउ[१] नपुंस[४]चउवज्जं ॥७॥

अर्थ—सातमी नरके ओघमांहेथी जिननाम १, मनुष्यनो आउखो १, ए दोय काढीजे; तिवारे सातमी नरके ओघे नवाणुं ९९ नो वंध छे. अने मिथ्यात्वगुणठाणे मनुष्यगति १, मनुष्यानुपूर्वि १, उच्चगोत्र १, ए ३ तीन काढोजे; तिवारे मिथ्यात्वगुणठाणे ९६ छन्नुनो वंध छे. सास्वादन गुणठाणे एकाणुनो वंध छे. पांच प्रकृति काढोजे. तिर्यंचनो आउखो १, नपुंसकवेद १. मिथ्यात्व १, हुंडकसंस्थान १, छेवठोसंघयण १, ए पांच वर्जीजे—काढोजे एटले ९१. ॥ ७ ॥

अणचउवीसविरहिया, सनरदुगु[२]च्चा[१]य सयरि[७०] मीसदुगे।
सत्तरसओ[११७] ओहेमिच्छे, पज्जतिरियाविणुजिणाहारं[३] ॥८॥

अर्थ—अनंतानुवंधी ४, मध्यसंस्थान ४, मध्यसंघयण ४, अशुभविहायोगति १, नीचगोत्र १, स्त्रीवेद १, दुर्भग ३, थीणद्धी ३, उद्योत १, तिर्यंचगति १, तिर्यंचआनुपूर्वि १, ए चोवीस २४ काढीजे अने मनुष्यगति १, मनुष्यानुपूर्वि १, उंचगोत्र १. ए तीन भेळीजे; तिवारे मिश्रगुणठाणे ७० नो वंध छे, इतले नरकगति कही छे. पर्याप्ततिर्यंचने ओघे—सामान्ये एकसो सत्तर ११७, अने मिथ्यात्वगुणठणे ११७ नो वंध छे; केमके तीर्थंकरनाम १, आहारक शरीर २, आहारक उपांग ३, ए त्रण काढीजे. तिर्यंचगतिमे ए ३ नो वंध नही. ॥ ८ ॥

विणु निरयसोल सासणि[१०१] सुराउ अणअेगतीस विणुं मीसे।
ससुराउ सयरि सम्मे, बीअकसाए विणा देसे ॥९॥

अर्थ—नरकादि १६ सोले काढीजे—नरक ३, जाति ४, थावर ४, हुंडक १, आताप १, छेवठो संघेण १, नपुंसकवेद १, मिथ्यात्वमोहनी १. ए १६ विना सास्वादन गुणठाणे १०१ नो बंध छे. देवतानो आउखो १, अनंतानुबंधी ४, मध्यसंस्थान ४, मध्यसंघेण ४, अशुभविहायोगति १, नीचगोत्र १, स्त्रीवेद १, दुर्भगत्रिक ३, थीणद्धी ३, उद्योत १, तिर्यंच ३, मनुष्य ३, औदारिक २, वज्र ऋषभनाराचसंघेण १. ए बत्रीस ३२. (टबामां ४२ लखी छे) काढीजे. तिवारे मिश्र गुणठाणे गुणहत्तर ६९ नो बंध छे. वळी देवतानो आउखो भेळीजे, तिवारे समकीत गुणठाणे ७० सीतेर प्रकृतिनो बंध छे. वळी अप्रत्याख्यानी ४ काढीजे, तिवारे देशविरति गुणठाणे ६६ छासठ प्रकृतिनो बंध छे. ए तिर्यंचगति कही. ॥९॥

इअचउगुणेसु वि नरा, परमजया सजिणं ओहु[१२०] देसाइ
जिण इक्कारसहीण, नवसय अपज्जत्ततिरिअनरा[१०९] ॥१०॥

अर्थ—ए च्यार गुणठाण पेहेला मनुष्यगतिने, तिर्यंचगतिने समान जाणवा, परं एटलो विशेष छे जे ओघ सामान्ये सर्व छे. चोथे गुणठाणे जिननाम १ भेळीजे, इतले सामान्ये १२० एकसोवीस छे. मिथ्यात्वे ११७ एकसो सतरे बंध छे. सास्वादने १०१ एकसो एक छे. मिश्रे गुणहत्तर ६९ नो बंध छे. समकीते ७० सीत्येर छे. देसविरते ६७, प्रमत्ते ६३ छे. इम १४ गुणठाणे जाणवो. बीजा कर्मग्रंथथी यथायोग्य लेवो. अने अपर्याप्ततिर्यं-

चने अने अपर्याप्ता मनुष्यने १०९ एकसो नवनो सामान्ये वंध छे. जिणादि ११ प्रकृतिनो वंध नहि—जिन १, सुर २, वेद २, वैक्रिय २, आहारक २, देवतानो आउखो १, नरकत्रिक ३, ए इग्यारे ११ नहीं. ए तिर्यंच मनुष्य अपर्याप्तावस्थामें मरण पामे तेने मिथ्यात्व गुणठाणु होय. ॥१०॥

निरयव्व सुरा नवरं, ओहे मिच्छे इगिंदितिगसहिया।
कप्पदुगेवि अ एवं, जिणहीणो जोइ भवणवणे ॥११॥

अर्थ—जिम नारकीमे एकसो एक तिके देवताने पिण जाणवी, पिण सामान्यमें अने मिथ्यात्व गुणठाणे एकेंद्री १, थावर १, आताप १. ए तीन भेळीजे; तिवारे ओघे १०४ एकसो च्यारनो छे. मिथ्यात्वमें जिननाम काढीजे; तिवारे १०३ एकसो तीननो वंध छे. सास्वादने ९६, मिश्रे ७०, समकीते ७३, दोय पेहेले देवलोके सौधर्म इशान तांइ जाणवो अने ज्योतिषी, भवनपति, व्यंतर. एहने जिननामनो ओघ नहीं; तिवारे १०३, सामान्ये मिथ्यात्वे छे. सास्वादने ९६, मिश्रे सित्तेर ७०, समकीते ७१ इकोत्तर जाणवी. ॥ ११ ॥

रयणुव्व सणंकुमाराइ, आणयाइउज्जोअचउरहिआ।
अपज्जतिरिअव्वनवसयमिगिंदिपुढविजलतरुविगले॥१२॥

अर्थ—सनत्कुमारसुं सहस्रार तांइ ए ६ देवलोक तांइ रत्न प्रभानरकनी पेरे एकसो एक सामान्ये १०० मिथ्यात्वे, ९६ सास्वादने अने मिश्रे ७०, तथा समकीतमे ७२ जाणवी. आनतसुं उपरला च्यार देवलोक, नव ग्रैवेयक, पंचानुत्तरविमान एहने—उद्योत १, तिर्यंचगति १, तिर्यंचआनुपूर्वि १, तिर्यंच आउखो ए ४ काढीजे; तिवारे ९७ वेरा सामान्य छे. ९६

मिथ्यात्वे छे. वाणुं सास्वादने, सितेर मिश्र गुणठाणे, ७२ समकीत गुणठाणे, जिम अपर्याप्तें तिर्यंचमे १०९ एकसो नव प्र० नो वध सामान्ये अने मिथ्यात्वे कह्यो. तिमहीज एकसो नव प्रकृतिनो वंध १०९ नो वध एकेन्द्री मार्गणा १, पृथ्वीकाय मार्गणा अप्काय मार्गणा, वनस्पतिकाय मार्गणा. वेंद्री मार्गणा, तेंद्री मार्गणा, चौरेंद्री मार्गणा. इतली मार्गणामें एकसो नवनो सामान्य छे. एकसो नव मिथ्यात्वमें जाणवी ॥ १२ ॥

छनवइ सासणि विणुसुहुमतेरकेईपुणविंतिचउनवइ ।
तिरिअनराउहि विणा, तणु पज्जत्ति न जंति जओ ।१३।

अर्थ—सास्वादन गुणठाणे छन्नुनो ९६ वध छे. सूक्ष्मादिक तेरे काढीने—सूक्ष्म ३, विगल ३, एकेन्द्री १, थावर १, आताप १, नपु १, मिथ्यात्व १, हुंडक १, छेवठो १. ए १३ काढीजे. कोइक आचारज सास्वादन गुणठाणे ९४ चोराणुं कहे छे तिरजंच मनुष्यनो आउखो ए बे काढीजे जे कांइ एकेन्द्रि, बेन्द्री, तेन्द्री, चौरेन्द्री जीव सास्वादन गुणठाणे पूर्व भवथी लीधा आवे छे, ते आहारपर्याप्त ताइज सास्वादन भावमें वरते पछी शरीर पर्याप्त. मिथ्यात्व गुणठाणामें करे तेणे आउखो कोइ न बांधे, तिणे सास्वादनमें चोराणुनो वध कहेवो ॥ १३ ॥

ओहुपणिंदि[१२०] तसे गइ, तसे जिणिक्कार नरतिगुच्चविणा ।
मणवयजोगे[१०२] ओहो, उरले नरभगु तम्मिस्से ॥१४॥

अर्थ—पंचेन्द्रि मार्गणा त्रसकाय मार्गणाने ओघे सास्वादननी पेरे १४ गुणठाणे बीजे कर्मग्रन्थमे कह्या तिम जाणवा. एकसोवीसनो वध कह्यो छे. गतित्रस ते तेउकाय, वायुकायमें जिणादि ११ इग्यार काढीजे. जिन १, देव २, वैक्रिय २,

आहारक २, देवतानो आउखो १, नरक ३. ए ११. पछी मनुष्य ३, उच्चगोत्र १. एम १५ काढवी; तिवारे ओघे मिथ्यात्वे एकसो पांच १०५ नो वंध छे. एहनो गुणठाणो एक छे. मनोयोग १, वचनयोगमें १३ गुणठाणा १२० वंध वीजा कर्म ग्रंथने परे जाणवी. आदारिक शरीरमें मनुष्यगतिनी पेरे जाणवी. एकसोवीस ओघे ११७ मिथ्यात्वे, १०१ सास्वादने, ६९ मिश्रे, ७१ समकिते. इम तेर गुणठाणे जाणवी. ॥ १४ ॥

आहारछगविणोहे, चउदससैओ मिच्छि जिणपणगहीणं ।
सासणि चउनवइ विणा, नरतिरिआऊसुहुमतेर ॥१५॥

अर्थ--आहारक मिश्रकाय योगमें आहारक २, देवआउखो १, नरक २, ए छ काढीजे; तिवारे ११४ एकसोचौदे ओघ सामान्ये छे अने मिथ्यात्व गुणठाणे जिननाम १, देव २, वैक्रिय २, ए पांच काढीजे; तिवारे १०१ नो वंध मिथ्यात्व गुणठाणे छे. सास्वादन गुणठाणे चोराणुंनो वंध छे. सूक्ष्म ३, विगल ३, एकेन्द्री १, थावर १, आताप १, नपुंसकवेद १, मिथ्यात्व १, हुंडक १, छेवठो १, एवं १३. मनुष्य तिर्यंचनो आउखो. ए १५ पनरे काढीजे. ॥ १५ ॥

अणचउवीसाइ विणा, जिणपणजुअसम्मि जोगिणो सायं ।
विणु तिरिनराउकम्मे वि एवमाहारदुगिओहो ॥१६॥

अर्थ—अनंतानुवंधी ४, मध्यसंघेण ४, कुखगति १, नीचगोत्र १, स्त्रीवेद १, दुर्भगत्रिक ३, थीणद्धीत्रिक ३,

उद्योत १, तिर्यंच २, ए चोवीस काढीजे, अने जिननाम १, देव २, वैक्रिय २ ए पांच मेळीजे, तिवारे ७५ वध छे. समकित गुणठाणे छे. औदारिक मिश्रमें मिश्र गुणठाणो नहीं अने चोथें सु पाछला १२, बारताइ गुणठाणा नहीं अने १३ समुद्घात करतो छे, जिम औदारिक मिश्र तिमहीज कार्मण शरीरमे जाणवो. तिर्जंच मनुष्यनो आउखो सामान्यमें काढीजे, तिवारे एकसो ११२ वारनो सामान्य छे. एकसो सात मिथ्यात्वे, ९८ सास्वादने, पचहत्तर, समकित एक सयागी केवलीमे जाणवो. आहारक शरीर १, आहारक मिश्रमें छट्ठे गुणठाणे ते साठ ६० प्रकृतिनो वध छे, त्या एक छट्ठो गुणठाणो छे. ॥ १६ ॥

सुरओहो वेउव्वे, तिरिअनराउरहिओ अ तम्मिस्से।
वेअतिगाइमबिअतिअ--कसायनवदुचउपचगुणा।१७।

अर्थ--जे देवतानो ओघ कह्यो ते वैक्रिय शरीरमे जाणवो एकसो १०४ च्यारनो ओघ छे. वेक्रिय मिश्रमें तिर्यंच मनुष्यनो आउखो काढीजे, तिवारे १०२ एकसो बेना ओघ छे. गुणठाणा मिथ्यात्व, सास्वादन, अविरत समकित, ए तीन छे. वेद तीन मार्गणामे नव गुणठाणे छे. आदिम चोकडी अनंतानुबधी कषाय ४ च्यारमें दोय गुणठाणा छे, बीजी चोकडी अप्रत्याख्यानी कषाय च्यारमे धुरला च्यारमें धुरला ४ च्यार गुणठाणा छे, त्रीजी चोकडी प्रत्याख्यानी कषाय च्यारमें धुरला पाच गुणठाणा छे. इहा वधनो ओघ गुणठाणा जिम जाणवो. वेद ३ मे १२० वधे, अनतानुबधीमे ११७ वधे, पछी अप्रत्याख्यानीमे ११८ नो ओघे वध छे. गुणठाणा पूर्वलीपेरे जाणवा. ॥ १७ ॥

संजलणतिगे नव दस, लोहे चउअजइदुतिअनाणतिगे
बारस अचक्खुचक्खुसु, पढमा अहक्खायचरमचऊ।१८।

अर्थ—संजलना क्रोध १, मान २, माया ३, ए त्रणमे नव गुणठाणा धुरला. ओघे १२० प्रकृति वीजा सर्व वीजा कर्मग्रन्थनी पेरे जाणवो. संजलना लोभमें दस गुणठाणा धुरलां छे. अविरति मार्गणामे च्यार ४ गुणठाणा छे. ओघे ११८ मिथ्यात्वमे अज्ञान ३ मे गुणठाणा धुरला दोय अथवा तीन छे. अचक्षुदर्शनमे चक्षुदर्शनमें १२ धुरलां १२ गुणठाणा छे. यथाख्यात चारित्रमे इग्यार ११ मो, १२ वारमो, १३ तेरमो, १४ चौदमो. ए ४ चार गुणठाणा छे. वंध एक सातानो छे.॥१८॥

मणनाणीसग जयाइ, समइअछेअचउदुन्निपरिहारे।
केवलदुगि दोचरिमा, जयाइनवमइसुओहिदुगे ॥१९॥

अर्थ—मनःपर्यायज्ञानमें सात गुणठाणे जातां प्रथम गुणठाणासु मांडी १२ तांइ ओघ ६५ पांसठनो छे. छट्ठे वंध त्रेसठ ६३ नो छे. एवं सामायिक छेदोपस्थापनीय चारित्रमें छट्ठो, सातमो, आठमो, नवमो. ए ४ च्यार गुणठाणा छे. परिहारविशुद्धि चारित्रमें छट्ठो, सातमो दोय गुणठाणा छे. केवलज्ञान केवलदर्शनमें तेरमो, चौदमो ए दोय गुणठाणा छे. वंध एक सातावेदनीनो छे. मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, अवधिदर्शन मार्गणामे अजती चोथो अवरित गुणठाणासु मांडी १२ मो-क्षीणमोहतांइ नव गुणठाणा छे. ॥ १९ ॥

अड उवसमि चउ वेअगि, खइअे इक्कारमिच्छतिगिदेसे
सुहुमि सट्ठाणं तेरस, आहारगि निअनिअगुणोहो ॥२०॥

अर्थ—उपशमसमकितमे चोथेथी मांडी इग्यार ११ मा तांइ आठ ८ गुणठाणा छे, क्षयोपशम समकितमे चोथेथी मांडी सातमालगे च्यार गुणठाणा छे, क्षायकसमकितमें चोथेथी मांडी चादमा तांइ इग्यार ११ गुणठाणा छे. मिथ्यात्वमार्गणामे एक मिथ्यात्व गुणठाणो छे. सास्वादन मार्गणामे सास्वादन गुणठाणो छे. मिश्रमार्गणाए मिश्रगुणठाणो छे. देसविरति मार्गणाए देसविरति गुणठाणो छे. सूक्ष्मसपरायमार्गणाए सूक्ष्मसंपराय गुणठाणो छे. त्यां बन्धप्रकृति गुणठाणा प्रमाणे जाणवी. आहारकमार्गणाए अयोगीकेवळी टाळी तेरे गुणठाणा छे. प्रकृति ओघ सर्व गुण ठाणानी, जेम बीजे कर्मग्रथमे कह्यो, तिम जाणवा. ॥ २० ॥

परमुवसमि वट्टता, आऊ न बधति तेण अजयगुणे ।
देवमणुआउहीणो, देसाइसु पुणसुराउविणा ॥२१॥

अर्थ—हवे उपशमसमकीतमे जे फेर छे ते कहे छे—जे जीव उपशम समकितमे वरते छे, ते जीव आउखो कोइ न बाधे तिणे ओघे पचहुत्तर ७५ नो जाणवो. जे अविरत गुणठाणे सत्तहत्तर ७७ हती, पिण देवतानो मनुष्यनो आउखो ए दोय प्रकृति टाळी, तिवारें पचहत्तर ७५ रही अने देसविरति गुणठाणे देवतानो आउखो काढ्यो, तिवारे छासठि रही. प्रमत्ते बासठि, अप्रमत्ते अठावन्न. एव सर्वत्र जाणवो ॥ २१ ॥

ओहे अट्ठारसय, आहारदुगूणमाइलेसतिगे ।
तं तित्थोण मिच्छे, सासणाइसु सव्वहिं ओहो ॥२२॥

अर्थ—ओघे-सामान्ये १२८ एकसो अढार प्रकृति छे. आहारक दोय काढीजे, तिवारे ११८ एकसो अढारनो बध छे.

तीन लेश्या कृष्ण, नील, कापोतमे तीनमे तीर्थंकर नाम काढीजे; तिवारे मिथ्यात्वमे एकसोसत्तर ११७ नो वंध छे. सास्वादन प्रमुखमे वीजे कर्मग्रन्थमे कह्यो तिम जाणवो. ॥२२॥

तेउ निरयनवूणा, उज्जोअचउनिरयवारविणुसुक्का ।
विणु निरयबारपम्हा, अजिणाहारा इमा मिच्छे ॥२३॥

अर्थ—तेजोलेश्यामे नरक ३, सूक्ष्म ३, विकलेंद्री ३ ए ९ नव काढीजे; तिवारे एकसो इग्यार १११नो वंध छे. उद्योत १, तिर्यंच ३, ए च्यार ४. नरक ३, सूक्ष्म ३, विगल ३, एकेंद्री १, थावर १, आताप १; ए १२ मळीने १६ काढीजे; तिवारे शुक्ललेश्यामे १०४ एकसो च्यारनो वंध छे. अने नरकादिक १२ काढीजे; तिवारे पद्मलेश्यामे एकसो आठ १०८ नो वंध छे, ए तीने लेश्यामे जिननाम १, आहारक, २ ए तीन काढीजे. मिथ्यात्वमे १०८, तेजोमे १११ एकसो इग्यार, शुक्लमे १०४, पद्ममे १०८ जाणवो. ॥ २३ ॥

सव्वगुणभव्वसन्निसु, ओहुअभव्वाअसन्नि मिच्छसमा।
सासणि असन्नि सन्निव,कम्मणभंगो अणाहारे ॥२४॥

अर्थ—भव्यमार्गणामे, संज्ञीमार्गणामे सर्व गुणठाणा छे. वीजा कर्म्मग्रन्थनी पेरे वंधप्रकृति जाणवी. अभव्यमार्गणामे एक गुणठाणो प्रकृति ११७ वंध छे. असंज्ञीमार्गणामें मिथ्यात्वमें ११७ नो वंध छे. सास्वादन गुणठाणे १०१ नो बंध छे. जिम संज्ञीनो कह्यो तिम जाणवो. अनाहारक मार्गणामें कार्मणशरीरनी परे जाणवो. ११२ सामान्ये, ११७ मिथ्यात्वे, ९४ सास्वादने, ७५ समकितमे. तेरमे एकसाता १, अयोगिमे अवंध छे. ॥२४॥

तिसु दुसु सुक्काइगुणा, चउसगतेरत्ति वधसामित्तं ।
देविंदसूरिरइय लिहियं, नेय कम्मत्थय सोउ ॥२५॥

अर्थ—कृष्ण १, नील २ कापोत ३, ए तीन लेश्यामे पहेलां ४ च्यार गुणठाणा छे, तेजोलेश्या, पद्मलेश्यामे पहेला सात ७ गुणठाणा छे, शुक्ललेश्यामे एक तेरमु १३ मु गुणठाणुं छे. अयोगीगुणठाणे नहीं ए वधस्वामित्व त्रीजो कर्मग्रन्थ पूरो थयो. देवेन्द्रसूरि आचार्य लिख्यो छे. कर्म्मस्तव बीजो कर्मग्रन्थ भणीने पछी त्रीजो भणवो. ॥ २५ ॥

इति तृतीयकर्म्मग्रन्थ टवार्थसमेत समाप्त ॥३॥



ॐ नमः सिद्धम् ।

अथ चतुर्थः कर्म्मग्रंथः



॥ आर्य्यावृत्तम् ॥

नमिअ जिणं जियमग्गण-गुणठाणुवओगजोगलेसाओ।
बंधप्पबहुभावे, संखिज्जाइ किमवि वुच्छं ॥ १ ॥

अर्थ—नमस्कार करी जिन वीतराग देव प्रत्ये ते स्या भणी जे अबोधजीवने बुझव्या. जीवना १४ भेद छे, मार्गणाना ६२ बासठ भेद छे. गुणठाणां १४ चौद, उपयोग १२, योग १५ पंन्नर, लेश्या ते छ ६ छे, बंधादिक च्यार ४, बंधहेतु ५७ अल्पबहुत्व, भाव मूळ पांच, उत्तरभेदें ५३, संख्याता, असंख्याता, अनंतो ए बोल विस्तारीने कहेस्युं ते कहुं छुं. ॥ १ ॥

नमिअ जिणं वत्तव्वा, चउदसजिअठाणएसु गुणठाणा।
जोगुवओगो लेसा, बंधोदओदीरणासत्ता ॥

पाठान्तरम् ।

चउदसजिअठाणेसु, चउदसगुणठाणाणि जोगा य ।
उवओगलेसबंधो-दओदीरणसंतअट्ठपए ॥ २ ॥
तह मूलचउदमग्गण--ठाणेसु बासट्ठिउत्तरेसु च ।
जिअगुणजोगुवओगा, लेसप्पबहुत्त छट्ठाणा ॥

पाठान्तरम् ।

चउदसमग्गणठाणे–सुमूलपएसु बिसट्ठि इयरेसु ।
जिअगुणजोगुवओगा, लेसप्पबहुत्त छट्ठाणा ॥ ३ ॥

चउदसगुणेसु जिअजो–गुवओगलेसा य बंधहेऊ य।
बंधाइअचउअप्पा बहु, च तो भावसखाई ॥

पाठान्तरम्।

चउदसगुणठाणेसु, जिअजोगुवओगलेस्सबधा य।
बंधुदयुदीरणाओ,सतप्पबहुत्तदसट्ठाणा दारगाहाओ॥४॥

हवे पहेला जीवना चौद भेद कहे छे.

इह सुहुमबायरेगिंदि, बितिचउ असन्नीपचिंदी।
अपज्जत्ता पज्जत्ता, कमेण चउदस जियठाणा ॥५॥

अर्थ—सूक्ष्म एकेन्द्रिय ए एक भेद १, बादर एकेंद्रिय ए बीजो भेद २, बेंद्री ३, तेंद्रि ४, चौरेंद्री ५, असंज्ञी पचेन्द्री ६, संज्ञी पचेन्द्री ए सात ७ पर्याप्ता, अने ए ७ सात अपर्याप्ता ए अनुक्रमे ससारी जीवना १४ चौद स्थानक जाणवा. ॥ ५ ॥

हवे चौदे जीवस्थानके गुणठाणां कहे छे.

बायरअसन्निविगले, अप्पजिपढमबिअसन्निअपजत्ते
अजयजुअसन्निपज्जे, सव्वगुणा मिच्छसेसेसु ॥६॥

अर्थ—बादर एकेन्द्रिय अपर्याप्तो १. असज्ञी पंचेन्द्री अपर्याप्तो २, बेंद्री अपर्याप्तो ३, तेंद्री अपर्याप्तो ४, चौरन्द्री अपर्याप्तो ५, ए पाच जीवस्थानकभेदे पेहेलो मिथ्यात्व १, बीजो सास्वादन २, ए बे गुणठाणा छे अने सज्ञी पंचेन्द्री अपर्याप्तो इण एक जीवस्थानकमें तीन गुणठाणा छे. प्रथम मिथ्यात्व १, सास्वादन २, अने अविरति समकित ३ ए त्रण छे. संज्ञी पचेन्द्री पर्याप्तामें इणे एक जीवभेदमांहे सर्व १४ गुणठाणा छे. शेष बाकी

सूक्ष्म अपर्याप्तो १, सूक्ष्म पर्याप्तो १, वादर एकेन्द्री पर्याप्तो, बेन्द्री पर्याप्तो. तेन्द्री पर्याप्तो, चौरेन्द्री पर्याप्तो, असंज्ञी पंचेन्द्री पर्याप्तो, ए जीवस्थानक एक मिथ्यात्व गुणठाणो छे. ॥६॥

अपज्जत्तछक्कीकमुरल, मीसा जोगा अपज्जसन्नीसु। ते सविउव्वि मीसएसु, तेणु पज्जेसु उरलमन्ने ॥७॥

अर्थ—हवे १४ जीवस्थानके १५ योग कहे छे— सूक्ष्म अपर्याप्तो १, वादर अपर्याप्तो १, बेन्द्री अपर्याप्तो १, तेइन्द्री अपर्याप्तो १, चौरेन्द्री अपर्याप्तो १, असंज्ञी पंचेन्द्री अपर्याप्तो ए छ ६, जीवस्थानकमें कार्मण १, अने औदारिक मिश्र १. ए बे योग छे. अने संज्ञी पंचेन्द्री अपर्याप्तमें कार्मण १, औदारिकमिश्र २, अने वैक्रियमिश्र ए त्रण ३ योग छे. अने शरीरपर्याप्ति कीधां पछी औदारिक काययोग भेळे ए ४ चार योग छे. ॥ ७ ॥

सव्वे सन्निपज्जत्ते, उरलं सुहुमे सभासु तं चउसु। बायरि सविउव्विदुगं, पज्जसन्निसुबार उवओगा ॥८॥

अर्थ—संज्ञी पंचेन्द्री पर्याप्तामें सर्व १५ योग छे. सूक्ष्म पर्याप्तामें एक औदारिक योग छे. बेन्द्री पर्याप्तो, तेन्द्री पर्याप्तो चौरेन्द्री पर्याप्तो, असंज्ञी पंचेन्द्री पर्याप्तो, ए चार जीवस्थानकमें दोय २, योग छे. औदारिक काययोग १, असत्या अमृषा वचनयोग २, वादर पर्याप्तामें तीन योग छे. औदारिक १, वैक्रिय २, वैक्रियमिश्र ३, ए तीन योग छे, वादर वायुकायआश्रीने वैक्रिय छे.

हवे जीवस्थानके उपयोग कहे छे. संज्ञीपंचेन्द्रीपर्याप्तामें

बारे उपयोग छे १२. पांच ज्ञान, त्रिण अज्ञान, च्यार ४ द-र्शन. ए बार उपयोग कह्या. ॥ ८ ॥

पज्जचउरिंदिअसन्निसु, दुदसदुअनाणदससु चक्खु विणा ।
सन्नि अपज्जे मणनाण--चक्खुकेवलदुगविहूणा ॥९॥

अर्थ---चौरेन्द्री पर्याप्तामें, असंज्ञी पचेन्द्री पर्याप्तामें दोय दर्शन, चक्षुदर्शन १, अचक्षुदर्शन २. दोयअज्ञान--मति-अज्ञान १, श्रुत अज्ञान २. ए ४ च्यार उपयोग छे. सूक्ष्म पर्याप्तो १, सूक्ष्म अपर्याप्तो २, बादर पर्याप्तो ३, बादर अपर्याप्तो ४, बेन्द्री अपर्याप्तो ५, बेन्द्री पर्याप्तो ६, तेन्द्री अपर्याप्तो ७, तेन्द्री पर्याप्तो ८, चौरेन्द्री अपर्याप्तो ९, संज्ञी अपर्याप्तो १० ए दस जीवस्थानकभेदमें चक्षुदर्शनविना ३ त्रण ते मतिअज्ञान १ श्रुत-अज्ञान २, अचक्षुदर्शन ए तीन उपयोग छे. सज्ञी पंचेन्द्री अप-र्याप्ताने--मन पर्यवज्ञान १, चक्षुदर्शन २, केवलज्ञान ३, केवल-दर्शन ४, ए च्यार ४ उपयोग नहीं, बाकी त्रण ज्ञान ३, त्रण अज्ञान ३, दोय दर्शन २. ए आठ उपयोग छे. ॥९॥

सन्निदुगिछलेसअप--ज्जबायरे पढमचउतिसेसेसु ।
सत्तट्ठवधुदीरण--सतुदया अट्ठ तेरससु ॥१०॥

अर्थ---हवे जीवस्थानके लेश्या कहे छे--संज्ञीपंचेन्द्री अ-पर्याप्तो ए दोयमे ६, छ लेश्या छे, अपर्याप्त बादर एकेन्द्रीने पहेली च्यार ४ लेश्या छे--कृष्ण १, नील २, कापोत ३, तेजो ४, ए च्यार छे शेष ११, जीवस्थानके तीन लेश्या छे--कृष्ण १,

नील २, कापोत ३, एवं त्रण ३, हवे संज्ञीसूक्ष्म एकेन्द्रीथी मांडी संज्ञीपंचेन्द्री अपर्याप्तने पर्यंत १३ जीवभेद तांई सातकर्म आउखो न वांधे; तिवारे आठकर्म सहित दोय वंध छे. इम उदीरणा पण सातनी अथवा ८ आठनी ज छे. संज्ञीपर्याप्तामे मूळकर्म आठ वांधे. ॥१०॥

सत्तट्ठछेगबंधा, संतुदया सत्त अट्ठ चत्तारि ।
सत्तट्ठछपंचदुगं, उदीरणा सन्निपज्जत्ते ॥ ११ ॥

अर्थ—आउखा विना सात वांधे. मोहनी आयु विना छ ६ कर्म वांधे. दशमे गुणठाणे ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, नाम, मोहनीय, अंतरायनो वंध विच्छेद करे, माटे ते विना ११ मे १२ वारमे गुणठाणे एक वेदनी कर्म वांधे. संज्ञीपंचेन्द्री पर्याप्तामे उदय अने सत्ता आठनी, मोहनी कर्म विना सातनी, ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, अंतराय विना च्यार ४ नी जाणवी. संज्ञीपंचेन्द्रीपर्याप्तामे उदीरणामे आठनी, आउखा विना सातनी, आउखा वेदनी विना छनी, तिणमे मोहनी विना पांचनी, तिणमे ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी; अंतराय काढीजे; तिवारे दोयनी उदीरणा छे. ॥११॥

गइइंदिए अ काए जोए वेए कसायनाणेसु ।
संजमदंसणलेसा, भवसम्मे सन्निआहारे ॥१२॥

अर्थ—हवे १४ मार्गणा मूळ अने उत्तर मार्गणा ६२, तेनां नाम कहे छे–गति ४, इंद्रिय ५, काय ६, योग ३, वेद ३, कषाय ४, ज्ञान ८, इहां अज्ञानमे लीधा ते मार्गणा एकने वास्ते संयम ७, दर्शन ४, लेश्या ६, भव्य २, समकीत ६, सन्नि २, आहारक २, ए मार्गणानां नाम कह्यां. ॥ १२ ॥

सुरनरतिरिनिरयगई,इगविअतिअचउपणिंदि छक्काया।
भूजलजलणाऽनिलवण,तसा य मणवयतणुजोगा ॥१३

अर्थ—हवे गति ४ ना नाम कहे छे—देवगति १, मनुष्यगति २, तिर्यंचगति ३, नरकगति ४. हवे पाच इन्द्री कहे छे—एकेन्द्री १, बेन्द्री २, तेंद्री ३, चौरेन्द्री ४, पंचेन्द्री ५, हवे ७-काय कहे छे—पृथ्वीकाय १, अपकाय २, तेउकाय ३, वायुकाय ४, वनस्पतिकाय ५, त्रसकाय ६, तीन योगनां नाम कहे छे—मनोयोग १, वचनयोग २, काययोग ३. ॥१३॥

वेअनरित्थिनपुंसा, कसायकोहमयमायलोभत्ति ।
मइसुअओहिमणकेवल--विभंगमयसुअ अनाणसा-
गारा ॥१४॥

अर्थ—हवे वेद त्रणनां नाम कहे छे—पुरुषवेद १, स्त्रीवेद २, नपुंसकवेद ३, हवे कषाय ४ च्यारना नाम कहे छे—क्रोध १, मान २, माया ३, लोभ ४. हवे ज्ञान पाच, अज्ञान त्रण. तेनां नाम कहे छे. मतिज्ञान १, श्रुतज्ञान २, अवधिज्ञान ३, मनःपर्यवज्ञान ४, केवलज्ञान ५. मतिअज्ञान १, श्रुतअज्ञान २, विभंगज्ञान ३. ए आठ साकारोपयोग—विशेष उपयोग कहीजे. १४

सामाइयछेयपरिहार--सुहुमअहक्खायदेसजयअजया।
चक्खू अचक्खू ओही, केवलदंसण अणागारा ॥१५॥

अर्थ—हवे सात संयममार्गणाना नाम कहे छे—सामायक १, छेदोपस्थापना २, परिहारविशुद्धि ३, सूक्ष्मसंपराय ४, यथाख्यातचारित्र ५, देशविरति ६, अविरति ७. हवे ४ दर्शनना नाम कहे छे—चक्षुदर्शन १, अचक्षुदर्शन २, अवधिदर्शन ३, केवलदर्शन ४. ए च्यारे दर्शन अनाकार उपयोग—सामान्य उपयोग छे. ॥ १५ ॥

किण्हानीलाकाऊ--तेउपम्हा य सुक्क भव्विअरा।
वेअगखइगुवसममिच्छमीससासाण सन्निअरे ॥१६॥

अर्थ—हवे छ लेश्यानां नाम कहे छे–कृष्ण लेश्या १, नीललेश्या २, कापोतलेश्या ३, तेजोलेश्या ४, पद्मलेश्या ५, शुक्ललेश्या ६. हवे भव्य नाम कहे छे–भव्य १, अभव्य २. समकीतनां नाम कहे छे–क्षयोपशम समकीत १, क्षायक समकीत २, उपशम ३, मिथ्यात्व ४, मिश्र ५, सास्वादन ६. संज्ञी १, असंज्ञी २॥

आहारेअरभेआ, सुरनिरयविभंगमइसुओहिदुगे।
समत्ततिगे पम्हा, सुक्कासन्निसु सन्निदुगं ॥१७॥

अर्थ—आहारक १, अणाहारक २, ए वासठ मार्गणानां नाम कह्यां. हवे वासठ मार्गणाए १४ भेद कहे छे–देवगति १, नरकगति २, विभंग अज्ञान ३, मतिज्ञान ४, श्रुतज्ञान ५, अवधिज्ञान ६, अवधिदर्शन ७, उपशम ८, क्षायक ९, क्षयोपशम १०, पद्मलेश्या ११, शुक्ललेश्या १२, संज्ञी १३, ए तेर १३ मार्गणामें संज्ञीपंचेन्द्री पर्याप्तो अने संज्ञीपंचेन्द्री अपर्याप्तो ए बे जीवस्थानके लाभे, बीजा नही. ॥१७॥

तमसन्नि अपज्जजुअं, नरे सबायरअपज्जतेउए।
थावरइगिदि पढमा, चउबार असन्नि दुदु विगले।१८॥

अर्थ—अने मनुष्यगति मार्गणामें दोय तेहज अने असंज्ञी पंचेंद्री अपर्याप्तो भेळीजे तिवारे संज्ञीपंचेन्द्री पर्याप्तो १, अपर्याप्तो १, असंज्ञीपंचेन्द्री अपर्याप्तो १, ए तीन जीवमें भेद लाभे छे. मनुष्य असंज्ञी पर्याप्तो न थाय. १४ स्थानके उपजे परं अपर्याप्तोज मरे. तिणेतीन जीवभेद कह्या छे. तेजो लेश्यामें

सन्नीपंचेंद्री पर्याप्तो १, अपर्याप्तो १, ए दोय अने बादर एकेन्द्री अपर्याप्तो १, ए त्रण ३, जीवस्थानक छे, कारणके देवता मरीने एकेन्द्रीमे आवे तेने अपर्याप्तपणे तेजोलेश्या होय.

थावर पाच पृथ्वी, अप, तेउ, वाउ, वनस्पतिमे अने एकेन्द्रीमे सूक्ष्म अपर्याप्तो १, पर्याप्तो १, बादर एकेन्द्री पर्याप्तो १, अपर्याप्तो १. ए च्यार ४ जीवनस्थान लाभे. असन्नी मार्गणाए पहेलां १२ बारे जीवस्थान लाभे. बेन्द्री मार्गणा २ पर्याप्तो अपर्याप्ता, तेन्द्रीमे तेज दोय, चौरेन्द्रीमे तेना तेज दोय जीवस्थान छे. ॥ १८ ॥

दसचरिमतसे अजया-हारगतिरिंतणुकसायदुअनाणे।
पढमतिलेमाभविअर-अचक्खु नपुमिच्छसव्वेवि ॥१९॥

अर्थ—बेंद्री १, तेंद्री १, चौरेन्द्री १, असन्नी १, सन्नी १, ए पांच अपर्याप्ता ए दस जीवस्थानक त्रसकायमे लाभे. अविरति आदि मार्गणामें १४, जीवस्थानक कहे छे—अविरति मार्गणामें १, आहारक मार्गणामें २, तिर्यंचगति ३, काययोग ४, कषाय ४ च्यारनी च्यारे मार्गणाए ८, मतिअज्ञान ९, श्रुतअज्ञान १०, प्रथम त्रण लेश्या कृष्ण, नील, कापोत १३, भव्य १४, अभव्य १५ अचक्षुदर्शन मार्गणा ए १६ नपुसक मार्गणा ए १७, मिथ्यात्वमार्गणा १८ अढार मार्गणामे सर्व १४ जीवस्थानक छे.॥१९॥

पज्जसन्नी केवलदुग, संजममणनाणदेसमणमीसे ।
पणचरमपज्जवयणे, तिय छव पज्जियर चक्खुम्मि।२०।

अर्थ—वली केवलज्ञान १. केवलदर्शन १, सामायिक १, छेदोपस्थानीय १, परिहारविशुद्धि १, सूक्ष्मसंपराय १, यथाख्यात १, मनःपर्यवज्ञान १, देशविरति १ मनोयोग १, मिश्रदृष्टि १.

ए अगीयार ११ मार्गणामे पर्याप्तो संज्ञी जीवस्थानक ए एकज होय. वचनयोगे छेल्ला पांच पर्याप्ता जीवस्थान लाभे. बेंद्री १, तेंद्री २, चौरेन्द्री ३, संज्ञी ४, असंज्ञी पंचेन्द्री ५. ए पांचने भाषा छे, भाषापर्याप्ति कीधां पछी. चक्षुदर्शनमे त्रण अथवा छ जीवस्थान छे. चौरेन्द्री १, असंज्ञी पंचेन्द्री १, संज्ञी पंचेन्द्री १. ए तीन पर्याप्ता छे; अथवा एज ३ त्रण अपर्याप्ता अने पर्याप्ता ६ पिण जीवस्थान लाभे ते पछी चक्षुदर्शनमें १. ॥२०॥

थीनरपणिंदि चरमा, चउ अणाहारेदुसन्नि छ अपज्जा।
ति सुहुमअपज्जविणा, सासणिइत्तो गुणे वुच्छं ।२१।

अर्थ––स्त्री वेदमे १, पुरुष वेदमे १, पंचेन्द्रीमे १, छेहेला ४ च्यार जीवस्थानक छे. असंज्ञी पंचेन्द्री पर्याप्ता १, अपर्याप्ता १, संज्ञी पंचेन्द्री पर्याप्ता १, अपर्याप्ता १. ए ४ च्यार जीवस्थानक छे. स्त्रीवेद १, पुरुषवेदमें १. संज्ञी पंचेन्द्रीमे न थाय. असंज्ञीमे नपुंसकवेद छे. परं इहां मान्या छे ते आचार्य जाणे.

अनाहारकमार्गणामे संज्ञी अपर्याप्तो १, पर्याप्तो १, सूक्ष्म अपर्याप्तो १, बेन्द्री अपर्याप्तो १, तेन्द्री अपर्याप्तो १, चौरेन्द्री अपर्याप्तो १, असंज्ञी अपर्याप्तो १, बादर अपर्याप्तो १, ए आठ ८ जीवस्थानक छे. ए आठमेंथी सूक्ष्म अपर्याप्तो काढीजे; तिवारे सास्वादने ७ सात जीवस्थानक छे, बादर अपर्याप्तो १, बेन्द्री अपर्याप्तो १, तेन्द्री अपर्याप्तो १, चौरेन्द्री अपर्याप्तो १, असंज्ञी अपर्याप्तो १, संज्ञी अपर्याप्तो १, संज्ञी पर्याप्तो १. ए सात छे. एटले ६२ मार्गणाए जीव भेद कह्या. ॥ २१ ॥

हवे बासठ मार्गणाए गुणठाणा कहे छे.

पणितिरिचउसुरनरए, नरसन्निपणिदिभव्वतसिसव्वे
इगविगलभूदगवणे, दु दु एग गइतस अभव्वे ॥२२॥

अर्थ—तिर्यचमें पेहेला पाच गुणठाणा छे. सर्व देवता सर्व नारकीमां चार गुणठाणा छे. मनुष्यगतिमें १, संज्ञी मार्गणामे १, पंचेन्द्रीमे १, भव्यमार्गणामे १, त्रसकायमे ए पाच मार्गणामे सर्व गुणठाणा छे १४ गुणठाणा छे एकेन्द्रिय मार्गणामे, बेंद्रियमे, तेंद्रियमे, चौरेन्द्रियमे १, पृथ्विकायमे १, अप्कायमे १, वनस्पतिकायमे १, ए सात ७ मार्गणामे मिथ्यात्व १, सास्वादन २, ए बे गुणठाणा छे. गतित्रस ते तेउकाय १, वायुकायमें १, अभव्यमे १. ए त्रणमे एक १ मिथ्यात्व गुणठाणो छे. ॥ २२ ॥

वेअतिकसाय नवदस, लोभेचउ अजइदुतिअन्नाणतिगे
बारस अचक्खुचक्खुसु, पढमा अहक्खाइ चरमचउ॥२३

अर्थ—पुरुषवेद १, स्त्रीवेद १, नपुंसकवेद १, क्रोध १, मान १, माया १. ए छ ६ मार्गणामे मिथ्यात्वथु माडी अनिवृत्तिबादर पर्यंत नव गुणठाणा छे. लोभकषायमे मिथ्यात्व सूक्ष्मसपराय पर्यंत १० गुणठाणा छे अविरति मार्गणामे मिथ्यात्वथु अविरति ताइ ए ४ चार गुणठाणा छे मतिअज्ञान १, श्रुतअज्ञान १, विभंगज्ञान १. ए त्रण ३ मार्गणामे पेहेला बे अथवा त्रण ३ गुणठाणां छे. अचक्षुदर्शन १, चक्षुदर्शनमे १ मिथ्यात्वथु क्षीणमोहताइ बारे गुणठाणा छे. यथाख्यातचारित्रमे इग्यारमो बारमो तेरमो चौदमो ए चार ४ गुणठाणा छे. ॥ २३ ॥

मणनाणि सग जयाई, सामाइअछेअचउदुन्निपरिहारे।
केवलदुगि दोचरमा, जयाइ नवमइसुओहिदुगे ॥२४॥

अर्थ—मनः पर्यायज्ञानमे प्रमत्तगुणठाणेसु मांडी खीणमोह तांइ सात गुणठाणा छे. सामायिक १, छेदोपस्थापनीयमे छट्ठे प्रमत्त गुणठाणेसुं मांडी नवमा तांइ ४ चार गुणठाणा छे. **दुन्नि परिहारे**–परिहार विशुद्धिमां प्रमत्त अप्रमत्त ए दोय गुणठाणा छे. केवलज्ञान केवल दर्शनमे सयोग–अयोग ए दोय छेहेलां गुणठाणा छे. मतिज्ञान १, श्रुतज्ञान १, अवधिज्ञान १, अवधिदर्शन १. ए चार मार्गणामे अजइ अविर।त गुणठाणे सु मांडीने क्षीणमोह तांइ नव गुणठाणा छे. ॥ ३४ ॥

अड उवसमि चउ वेअगि, खइए इक्कारमिच्छतिग देसे
सुहुमे सट्ठाणं तेरस, जोगआहारसुक्काए ॥२५॥

अर्थ—उपशमसमकीतमे अविरतिसुं मांडी उपशांतमोह तांइ आठ गुणठाणा छे. क्षयोपशमसमकीतमे अविरतिसुं अप्रमत्त तांइ चार गुणठाणा ४ छे, क्षायिकसमकीतमे अविरतसुं मांडी अयोगी केवळी तांइ ११ अगीयारे गुणठाणा छे. मिथ्यात्वमे मिथ्यात्व गुणठाणो छे. सास्वादनमें सास्वादन गुणठाणो छे. मिश्रमे १ मिश्र गुणठाणो छे देशविरतिमे देशविरति गुणठाणो छे. सूक्ष्मसंपरायमे सूक्ष्मसंपराय गुणठाणो छे. मनोयोग १, वचनयोग १, काययोग १, आहारक १, शुक्ललेश्या १. ए पांच मार्गणामे मिथ्यात्वसुं मांडी सयोगीकेवळी तांइ १३ तेर गुणठाणा छे. ॥ २५ ॥

असन्निसुपढमदुगं, पढमतिलेसासु छच्च दुसु सत्त।
पढमंतिमदुगअजया, अणहारे मग्गणासु गुणा॥२६॥

अर्थ—असंज्ञीमार्गणामे मिथ्यात्व १, सास्वादन २. ए दोय गुणठाणा छे. पेहेली तीनलेश्यामे मिथ्यात्वसुं मांडी प्रमत्त

तांइ छ ६ गुणठाणा छे. तेजोलेश्यामे, पद्मलेश्यामे, मिथ्यात्वसु अप्रमत्त तांइ ७ सात गुणठाणा छे. हवे अणाहारक मार्गणाए-पहेलां दोय ते-१ मिथ्यात्व, २ सास्वादन, अतमे दुग-दोय ते सयोगीकेवली १, अयोगीकेवली १, (ए समुद्घातनी अपेक्षाए) अने पाचमो अजय अविरति समकीत ए पाच गुणठाणा अनाहारक मार्गणामे छे. एटले ए ६२ बासठ मार्गणामे गुणठाणा कह्या. ॥ २६ ॥

सच्चेअरमीस असच्च-मोस मणवय विउव्वि आहारे । उरल मीसा कम्मण,इअ जोगा कम्म अणाहारे ।२७।

अर्थ—हवे इहां पन्नरयोगना नाम कहे छे-सत्यमनोयोग १, असत्यमनोयोग २, मिश्रमनोयोग ३ असत्याअमृपामनोयोग ४, सत्यवचनयोग ५, असत्यवचनयोग ६, मिश्रवचनयोग ७, असत्याअमृपावचनयोग८, वैक्रियकाययोग ९, आहारककाययोग १०. औदारिककाययोग ११, वैक्रियमिश्रकाययोग १२, आहारकमिश्रकाययोग १३ औदारिकमिश्रकाययोग १४, कार्मणकायोग १५. ए पन्नर योगनां नाम कह्या. अनाहारक मार्गणामें एक १ कार्मण काययोग छे. ॥२७॥

नरगइपणिंदितसतणु—अचक्खुनरनपुंकसायसम्मदुगे सन्नि छलेसाहारग—भवमइसुओहिदुगे सव्वे ॥२८॥

अर्थ—मनुष्यगति १, पंचेन्द्री १, त्रसकाय १, काययोग १, अचक्षुदर्शन १, पुरुषवेद १, नपुसकवेद १, कषाय ४, क्षायिक समकीत १. क्षयोपशम समकीत १, सन्निमार्गणामे १, छ लेश्या मार्गणाए ६, आहारक १, भव्य १, मतिज्ञान १,

श्रुतज्ञान १, अवधिज्ञान १, अवधिदर्शन १, एटली मार्गणामे सर्व १५ पन्नर योग छे. ॥ २८ ॥

तिरित्थि अजय सासण-अनाणउवसमअभव्वमिच्छेसु
तेराहारकदुगूणा, ते उरलदुगूण सुरनरए ॥ २९ ॥

अर्थ—तिर्यंचगति १, स्त्रीवेद १, अविरति १, सास्वादन १; अज्ञान तीन ३ मे, उपशम समकितमे १, अभव्य मार्गणामे १, मिथ्यात्वमे १, एटली मार्गणामे १३ तेर योग छे. आहारक दोय आहारक शरीर १, आहारक उपांग २. ए बे काढीजे; तिवारे १३ रहे, तेमांथी वळी औदारिकद्विक—औदारिक शरीर १, औदारिक उपांग २. ए दोय काढीजे; तिवारें देवगति १, नरकगति १. ११ अगियार योग छे. ॥ २९ ॥

कम्मुरलदुगं थावर, ते सविउव्वि दुगपंच इगपवणे ।
छअसन्नि चरमवयजुय, तं विउव्विदुगूणचउविगले ॥३०

अर्थ—पृथ्वीकाय १, अप्काय १, तेउकाय १, वनस्पतिकाय १, ए ४ थावर मार्गणामे कार्मण १, औदारिक २, औदारिकमिश्र ३. ए तीन योग छे. एकेन्द्री मार्गणामे, वायुकाय मार्गणामे पांच योग छे. ते कार्मण १, औदारिक २, औदारिक मिश्र ३, वैक्रिय ४, वैक्रियमिश्र ५. ए पांच योग छे. असन्नी मार्गणामे चरम वचनयोग असत्याअमृषा भेळोजे; तिवारे पांच योग तेहिज एवं ६ छ योग छे. वळी ए छ मांहेथी वैक्रियद्विक काढीजे; तिवारे (विकलेन्द्री) बेन्द्री, तेन्द्री, चौरेन्द्रीने ४ च्यार योग छे. औदारिक १, औदारिकमिश्र २, कार्मण ३, असत्यअमृषा ए चार योग छे. ॥ ३० ॥

कम्मुरलमीसविणुमण-वयसमइअछेअचक्खुमणनाणे
उरलदुग कम्मपढमंतिममणवयकेवलदुगमि ॥३१॥

अर्थ—कार्मण १, औदारिकमिश्र ए दोय विना बाकी १३ तेर योग छे. च्यार मनना, च्यार वचनना, दोय वैक्रिय, एक औदारिक, दोय आहारक. ए तेर योग छे. मनोयोग १, वचनयोग १, सामायिक १, छेदोपस्थापनीय १, चक्षुदर्शन १, मनःपर्यवज्ञान १. ए छ ६ मार्गणाए तेर योग १३ छे उरलदुग—औदारिक १, औदारिकमिश्र २, कार्मण ए ३, तथा पेहेलो अने छेल्लो मन अने वचनयोग ते सत्य मनोयोग १, असत्य मनोयोग, १, सत्य वचनयोग १, असत्य वचनयोग १. ए सात योग ते केवलज्ञान १ अने केवलदर्शन १, ए बे मार्गणाए सात योग छे ॥ ३१ ॥

मणवय उरला परिहारि, सुहुमिनवतेउमीसिसविउव्वा
देसे सविउव्विदुगा, सकम्मुरलमीसअहक्खाए ॥३२॥

अर्थ—मनोयोगना च्यार भेद छे. वचनयोगना ४ चार भेद अने औदारिक काययोग एव नव ९ योग परिहारविशुद्ध संयममे छे सूक्ष्मसंपराय संयममें ते नवयोग छे. अने मिश्रदृष्टिमे नव तेहिज मनना ४, वचनना ४, औदारिक १ अने वैक्रिय काययोग मेळीजे, एटले ए दस १० योग छे देशविरतिमें नव योग तेहिज अने वैक्रिय दोय २ मेळीजे, एटले ११ योग छे. यथाख्यात चारित्रमे नव तेहीज अने कार्मण १, औदारिकमिश्र २, ए बे मेळीजे, तिवारे ११ योग यथाख्यातमे छे. ए ६२ बासठ मार्गणाए योग कह्या. ॥ ३२ ॥

तिअनाण नाणपण चउ-दंसण वार जिअलक्खणुव-
ओगा ।
विणु मण नाण दुकेवल-नव सुरतिरिनिरयअजएसु ।३३।

अर्थ—हवे वार उपयोग कहे छे–तीन अज्ञान ३ ते मति-अज्ञान १, श्रुतअज्ञान २, विभंगज्ञान ३. पांचज्ञान ते मति १, श्रुत २, अवधि ३, मनःपर्यव ४, केवळ ५. चार ४ दर्शन ते-चक्षु १, अचक्षु २, अवधि ३, केवल ४. ए वार जीवलक्षण उपयोग छे–मनःपर्यवज्ञान १, केवळज्ञान १, केवळदर्शन १, ए त्रण ३ विना वाकी ३ ज्ञान, ३ दर्शन, ३ अज्ञान ए नव उपयोग ९. देवगति १, तिर्यंचगति १, नरकगति १, अविरति १. ए चार मार्गणामे नव ९ उपयोग छे. ॥ ३३ ॥

तस जोय वेय सुक्का-हार नरपणिंदिसन्नि भवि सव्वे।
नयणेयर पण लेसा, कसाय दस केवलदुगूणा ॥३४॥

अर्थ—त्रसकायमे १, तीनयोग–मन १, वचन १, काय-योगमे तीनवेद–पुरुष १, स्त्रीवेद २, नपुंसकवेद ३, शुक्ललेस्या १, आहारक २, मनुष्यगति १, पंचेन्द्री १, संज्ञी १, भव्यमे १, ए तेर १३, मार्गणामे सर्व १२, वारे उपयोग छे–चक्षुद-र्शन ... पांच लेस्यामे–कृष्ण १, नील २, कापोत ३, तेज ४ पद्म ५, ... च्यार ४ कषायमें दश १०, उपयोग छे–केवलज्ञान १, केवलद... र्शन २, ए दोय उणा कीजे. ॥ ३४ ॥

चउरिंदि अ... सन्निदुअन्नाण, दंस इग बितिथावरि
अचक्खू ।
तिअनाण दंसण ... दुगं, अनाणतिग अभविमिछदुगे ।३५।

अर्थ—चौरेन्द्रीमें १, असंज्ञीमे १, मतिअज्ञान १, श्रुतअज्ञान १, चक्षुदर्शन १, अचक्षुदर्शन १, ए च्यार ४ उपयोग छे–एकेन्द्रीमें १, बेन्द्रीमें १, तेंद्रीमे १, पाच थावरमें ५, ए आठ मार्गणामे दोय २, अज्ञान १, अचक्षुदर्शन ए तीन ३ उपयोग छे. अने त्रण अज्ञान ३ मे अभव्यमें १, मिच्छदुगे मिथ्यात्वमे १, सास्वादनमे १, ए छ ६ मार्गणामे पांच उपयोग छे–३, अज्ञान अने बे दर्शन ए पाच मति अज्ञान १, श्रुतअज्ञान २, विभंगज्ञान ३ चक्षुदर्शन ४. अचक्षुदर्शन ५, ए पाच छे ॥ ३५ ॥

केवल दुगे निअदुग, नव ति अनाण विणु खईय अहक्खाए ।
दंसण नाणतिगं देसे, मीसिअन्नाण मीस त ॥३६॥

अर्थ—केवलदुगे–केवलज्ञान केवलदर्शनमे आपणा एहिज केवलज्ञान केवलदर्शन ए बे उपयोग छे हवे तीन अज्ञान विना बाकी नव उपयोग–पाच ज्ञान च्यारदर्शन ए ९ क्षायिक समकीतमें तथा यथाख्यातचारित्र २, ए बे मार्गणामे छे. दर्शन ३, चक्षु १, अचक्षु १, अवधि १, तीनज्ञान मति १, श्रुत २, अवधि ३, ए छ ६ उपयोग देसविरतिमें अने एहिज छ उपयोग अज्ञान मिश्रित कीजे, ज्ञान काढीजे एटले दर्शन तीन ३, अज्ञान तीन ३, ए छ ६ उपयोग मिश्रमें छे. ॥ ३६ ॥

मणनाण चक्खु वज्जा, अणहारे तिन्नि दंसचउ नाणा ।
चउनाण सजमोवसम वेअगे ओहि दसेय ॥ ३७ ॥

अर्थ—मनःपर्यवज्ञान १, चक्षुदर्शन १, ए दोय काढीजे

बाकी अनाहारकमें दश उपयोग १० छे. तीन दर्शन—चक्षु १, अचक्षु २, अवधि ३, च्यार ४, ज्ञान मतिज्ञान १, श्रुतज्ञान २, अवधिज्ञान ३, मनःपर्यवज्ञान ४, ए सात उपयोग ते च्यार ज्ञानमें ४, च्यार ४. संयममें ४, उपशम समकीतमें १, क्षयोपशम समकीतमे १, अवधिदर्शनमे १, ए इग्यारे ११, मार्गणामे पूर्वोक्त ७, सात उपयोग छे. हिवे मतान्तर कहे छे—मनोयोग जीवभेद पेहेली १ कह्यो छे. इहां सत्ताभावी गुण विचारतां जीवभेद बे २ छे. सन्नी पर्याप्तो अपर्याप्तो गुणठाणा तेर छे. ॥ ३७॥

दो तेरतेर बारस मणे, कमा अट्ठदु चउ चउ वयणे।
चउ दु पण तिन्निकाए, जिय गुणजोगोवओगन्ने।३८।

अर्थ—योग तेर छे. उपयोग १२ छे. मनोयोगमे अने वचनयोग पूर्वं कह्यो ते मनोयोग सहीत पण ग्रह्यो छे. इहां मनोयोग विना ग्रहे छे. तिणें जीवभेद ८, बेन्द्री २, तेन्द्रीना २, चौरेन्द्री २, असन्नी २, ए आठ ८ छे, जे सन्नीमे वचन छे. परं इहां न गण्या जे मुख्यता वचनयोगनी छे. गुणठाणा बे छे मिथ्यात्व १, सास्वादन २, योग ४ च्यार छे. चौरेन्द्रीने कह्या ते ते पण उपयोग ४, च्यार छे ते इहां वचनयोग मनोयोग विना ग्रह्यो छे. काययोग पूर्वं वचनसहीत मनसहीत लीधो छे. इहां एकलो काययोग लीधो ते तो एकेन्द्रीने हवे, तिणे जीवभेद ४, चार एकेन्द्रीना योग पांच उदारिक बे, वैक्रिय बे, कार्मण १, गुणठाणा बे, मिथ्यात्व १, सास्वादन उपयोग तीन, बे अज्ञान, १ अचक्षुदर्शन एवं ३ छे, श्रुतांतर २ छे, अन्य आचार्य इम कहे छे. ॥ ३८ ॥

छसु लेसासु सठाणं, एगिंदि असन्नि भूदग वणेसु।
पढमा चउरो तिन्निय, नारय विगलग्गिपवणेसु।३९।

अर्थ—हवे बासठ मार्गणाए लेश्या कहे छे.—तिहा छ लेस्या ६ मे आपआपणी लेश्या छे. कृष्णमे कृष्ण १, नीलमे नील २, कापोतमेकापोत ३, तेजमेतेज ४, पद्ममेपद्म ५, शुक्लमेशुक्ल ६ छे.

एकेन्द्रीमे १, असन्नीमे १, पृथ्वीकाय १, अप्काय १, वनस्पतिकाय १, ए पाच मार्गणामे पेहेली च्यार ४, ते कृष्ण १, नील २, कापोत ३, तेज ४ ए चार लेस्या छे. नरकगतिमे १, बेन्द्रीमे १, तेन्द्रीमे १, चौरेन्द्रीमे १, अग्निकायमे वायुकायमे ए छ ६ मार्गणामे पहेली तीन लेस्या छे, कृष्ण १, नील २ कापोत. ३. ॥ ३९ ॥

अहखाय सुहुमि, केवलदुगि सुक्का छाविसेसठाणेसु। नर निरयदेवतिरिआ, थोवा दु असखणतगुणा ॥४०॥

अर्थ—यथाख्यात चारित्रमें १, सूक्ष्मसंपरायचारित्रमें १, केवलज्ञानमे १, केवलदर्शनमें एक १, शुक्ललेश्या छे बाकीनी मार्गणा ४१ एकतालीसमें छए लेस्या छे ते ४१ मार्गणा ते ३, गति १, त्रस १, तेद्री योग ३, वेद ३, कषाय ४, ज्ञान ७ सजम पाच दर्शन ३, भव्य बे समकीत ६, सन्नी १, आहारक बे ए ४१, मार्गणाए ६ छ लेश्या छे. हवे अल्पबहुत्व कहे छे—मनुष्य थोडा छे-सख्याता छे. उत्कृष्टथी २९ आकताई छे. मनुष्यथी नारकी असख्यात गुणा छे नारकीथी असख्यातगुणा देवता छे देवताथी तिर्यंच अनतगुणा छे जे सूक्ष्म बादर एकेन्द्रीय सर्वमाहि गणना. ॥ ४० ॥

पणचउ तिदुएगिंदि, थोवातिन्निअहिया अणंतगुणा। तसथोव असखग्गी भूजलनिल अहियवणणता ॥४१॥

अर्थ--पंचेंद्री थोडा पंचेंद्रीथी चौरेंद्री अधिका. चौरेंद्रीथी तेंद्री अधिका, तेंद्रीथी वेंद्री अधिका, वेन्द्रीथी एकेंद्री अनंतगुणा छे. एवं पंचेंद्रीनी जाणवी, त्रसकाय थोडा छे, तिणसुं अग्निकाय असंख्यात गुणा छे, अग्निकायसुं पृथ्वीकायना जीव अधिका, पृथ्वीकायथी अपकाय अधिका, अपकायथी वाउकाय अधिका, वाउकायथो वनस्पतिकाय अनंतगुणा छे. ॥४१॥

मणवयणकायजोगी, थोवाअसंखगुण अनंतगुणा।
पुरिसाथोवा इत्थि, संखगुणा णंतगुण कीवा ॥४२॥

अर्थ--मनोयोगी थोडा छे, सन्नीजीव ग्रह्या छे, वचनयोगी असंख्यात गुणा बेंद्रीयादिक सर्व जीवग्रह्या छे, वचनयोगीथी काययोगी अनंतगुणा छे, एकेंद्री सर्व गण्या छे, पुरुषवेदी थोडा छे पुरुषवेदथी स्त्रीवेद संख्यात गुणा छे. जे तिर्यंचमें त्रिगुणी स्त्री छे. तीनथी वळी अधिकी मनुष्यमे २७ गुणी छे अने देवतामे ३२ गुणी छे स्त्रीवेदीसुं नपुंसक अनंतगुणा छे, एकेन्द्रीयादिक सर्व लेवा. ॥४२॥

माणी कोही माई, लोभी अहिअमणमाणिणोथोवा।
ओहि असंखामइसुअ, अहिअसम असंखविप्भंगा।४३।

अर्थ---कषायमे मानकषायी थोडा छे, मानकषायीथी क्रोधीसुं मायावी कपटी अधिका छे. मायाकषायीथी लोभी अधिका छे, मनः पर्याय ज्ञानी थोडा छे, जे मनःपर्यायज्ञान मनुष्य साधुमेज होवे. मनःपर्यायज्ञानीथी अवधिज्ञानी असंख्यात गुणा छे. जे च्यारगतिमे समकिते सर्व जीव छे. अवधिज्ञानीथी मतिज्ञानी श्रुतज्ञानी अधिका छे, जे च्यार ४ गतिना समकिती

सर्व लेवा अने मति श्रुत दोनु वरावर छे. तिणथी विभग ज्ञानी असंख्यातगुणा छे. मिथ्यात्वी देवता नारकी सर्व बीजा पण तीनथी ॥ ४३ ॥

केवलिणो णतगुणा, मइसुअ अन्नाणि णतगुणतुल्ला ।
सुहमाथोवा परिहार–सख अहखाइ सखगुणा ॥४४॥

अर्थ—केवली अनंतगुणा छे सिद्धभगवतमांहे गण्या छे तिणथीमति अज्ञानी श्रुतअज्ञानी अनतगुणा छे. एकेंद्रीयादि सर्व लेवा माहोमांही वरावर छे सूक्ष्मसपराय चारीत्रीया थोडा घणा उत्कृष्ट एकसो बासठ १६२ छे. परिहारविशुद्धि संख्य गुणा छे. नवसो उत्कृष्ट होय छे. यथाख्यात चारीत्रीया सख्यात गुणा छे. उत्कृष्टा नवकोडि छे. ॥४४॥

छेअ समईयसखा, देश असखगुण णतगुण अजया ।
थोवाअसख दुणता, ओहिनयण केवल अचक्खू ॥४५॥

अर्थ–तिणथु छेदोपस्थापनीय सख्यातगुणा छे. उत्कृष्टे नवकोडिसो छे. सामायिक सख्यातगुणा छे. नवसहस्रकोडि छे. देसविरति असंख्यातगुणा तिर्यंचगतिना मेळीजे. अविरति अनतगुणा छे. दर्शन ४ न्यारनो अल्पबहुत्व कहे छे–अवधि दर्शनी थोडा छे तिणथु चक्षुदर्शनी असख्यातगुणा छे तेथी केवलदर्शनी अनतगुणा छे. तेथी अचक्षुदर्शनी अनतगुणा छे. ॥४५॥

पच्छाणुपुव्वि लेसा, थोवा दो सख णत दो अहिया ।
अभविअर थोव णता, सासण थोवो वसम सखा ॥४६

अर्थ—लेश्यानो अल्पबहुत्व कहे छे–पश्चानुपूर्विए कहीजे. शुक्ललेश्यावंत थोडा छे. पद्मलेश्यामे असख्यगुणा छे. तेथी

तेजा लेशी असंख्यगुणा. तिणसु कापोतलेशी अनंतगुणा, तिणसुनीललेशो अधिका. तिणसु कृष्णलेशी अधिका छे. अभव्य थोडा. भव्य अनंतगुणा छे. सास्वादन समकीती थोडा. तिणसु उपसम समकीती संख्यातगुणा छे. ॥४६॥

मीसाऽसंखावेयग, असंखगुण खइअ मिच्छदु अणंता
सन्नि अर थोवणंता, णहार थोवे अर असंखा ॥४७॥

अर्थ—तिणसु मिश्र असंख्यातगुणा छे. तिणसु क्षायिकसमकीती अनंतगुणा छे. तिणसु मिथ्यात्वी अनंतगुणा छे. अनाहारक थोडा. आहारक असंख्यातगुणा. निगोदनो असंख्यातमो भाग सदा विग्रहगतिमे छे. तिणसु इति ६२, मार्गणाए अल्पबहुत्व कह्यो छे. ॥ ४७ ॥

सव्वजिअठाणमिच्छं, सग सासणि पण अपज्ज सन्नि दुगं
सम्मे सन्नि दुविहो, सेसेसुं सन्नि पज्जत्तो ॥४८॥

अर्थ—मिथ्यात्व गुणठाणे सर्व जीवना भेद छे. सास्वादन गुणठाणे ७ सात जीवना भेद छे. पांच अपर्याप्ता अने सन्निद्विक मळी सात ७—बादर एकेन्द्रीय अपर्याप्ता १, बेन्द्री अपर्याप्ता २, तेन्द्री अपर्याप्ता ३, चौरेन्द्री अपर्याप्ता ४, असन्नि अपर्याप्ता ५, सन्नि पर्याप्तो १, अपर्याप्तो २, ए सात समकीत गुणठाणामे जीवभेद बे छे—सन्नि पर्याप्तो १, सन्नि अपर्याप्तो १, ए दोय छे. सेसेसु—शेषमिश्र १, देशविरति पांचमुं प्रमत्त छठ्ठुं अप्रमत्त ७, अपूर्वकरण ८, निवृत्ति बादर ९, सूक्ष्मसंपराय १०, उपशान्तमोह ११, क्षीणमोह १२, सयोगीकेवळी १३, अयोगीकेवळी १४, ए सर्व गुणठाणे एक संज्ञीपं-

चेन्द्री पर्याप्तो जीव भेद लाभे. इणे गुणठाणे बीजो जीव चढे नही. हवे गुणठाणे पनर १५ योग कहे छे. ॥४८॥

मिच्छ दुगि अजइ, जोगाहार दुगुणा अपुव्वपणगेउ। मण वय उरलं सविउव्व, मीसि सविउव्व दुगदेसे।४९।

अर्थ—मिथ्यात्व, सास्वादन, अवरति, ए ३, गुणठाणे १३, तेर योग छे-आहारकद्विक २, नही. मनना च्यार, वचनना ४, वैक्रीयबे, उदारिकबे, कार्मण १, ए तेर योग छे. आहारक साधुने थाय. अपूर्वकरण ८ मुं, अनिवृत्ति बादर ९ मुं, सूक्ष्मसपराय १० मु, उपशान्तमोह ११ मुं, क्षीणमोह १२ मु, ए ५ पांच गुणठाणे ४ मनना ४ वचनना १ औदारिक ए नवयोग छे. मिश्र गुणठाणे नव तेहीज तेमां वैक्रिय १ भेळीजे तिवारे १० योग छे. देसविरतिमे नव तेहीज अने वैक्रीय बे भेळीजे तिवारे ११, योग थाय. ॥४९॥

साहारदुग पमत्ते, ते विउवाहार मीसविणु इअरे। कम्मुरल दुगताइम, मणवयण सजोगि न अजोगि।५०।

अर्थ—ए इग्यार योग मांहे आहारदुग-आहारक शरीर १, आहारकमिश्र ए बे भेळीजे तिवारे प्रमत्त गुणठाणे १३ तेर योग छे. इण तेरमे वैक्रियमिश्र, आहारकमिश्र काढीजे तिवारे अप्रमत्त गुणठाणे ११ इग्यारे योग छे. नवी लब्धि न फरे सातमो अप्रमादी छे, लब्धि प्रमादी फोरवे, कार्मण १, औदारिक बे अंत्य आदिम, मनवचने मेल्वे-सत्य मनोयोग, असत्यामृषा मनोयोग, सत्य वचनयोग, असत्यामृषा वचनयोग, ए ७ सात योग तेरमे सयोगी केवळी गुणठाणे छे. समुद्घात करतां कार्मण योग छे चौदमे अयोगी केवळी गुणठाणे योग एकपण

नथी अयोगी छे. ॥५०॥

ति अनाण दु दंसाइम, दुगे अजयदेसिनाण दंसतिगं
ते मीसिमीस समणा, जयाइ केवलि दुगंत दुगे॥५१॥

अर्थ—हवे गुणठाणे उपयोग कहे छे—मिथ्यात्व १, सास्वादन २, ए बे गुणठाणे त्रण ३ अज्ञान, बे दर्शन—चक्षु, अअचक्षु ए पांच उपयोग छे. अविरति समकीत, देशविरति गुणठाणे त्रण ज्ञान, त्रण दर्शन, एम छ मतिज्ञान १, श्रुतज्ञान २, अवधिज्ञान ३, चक्षुदर्शन ४, अचक्षुदर्शन ५, अवधिदर्शन ६, उपयोग छे, मिश्र गुणठाणे एहीज ६ उपयोग छे, अज्ञानसहीत छे, अने छट्ठे गुणठाणासुंमांडी बारतांइ ७ सात गुणठाणे चार ज्ञान तीन दर्शन ए सात उपयोग छे. तेरमे चौदमे गुणठाणे केवलज्ञान १, केवलदर्शन २, ए दोय उपयोग छे. ॥५१॥
हवे सिद्धांत अने कर्मग्रंथे जे भेद छे ते कहे छेः—

सासण भावे नाणं, विउव्वगाहारगे उरल मीसं ।
नेगिंदिसु सासाणो, नेहाहिगयं सुयमयंपि ॥५२॥

अर्थ—सिद्धांतमे सास्वादन गुणठाणे ज्ञान कह्यो छे, इहां सास्वादनमें अज्ञान कहे छे, अने वैक्रिय, आहारक शरीर नवो करतां मूळगे औदारिक शरीरे मिश्रता थाय छे, पण इहां न मान्यो छे, अने सिद्धांतमे एकेंद्रियमे सास्वादन गुणठाणो नहीं कह्यो छे, इहां कोइ उपशम समकीत वसतो सास्वादनपणो पामे, ते एकेंद्रियमे उपजे, तिणे एकेंद्रियमे सास्वादन थाय, एटले बोले सिद्धांतना वचननो अधिकार कीधो नथी, ते इहां पूर्वानुयोग मुख्य छे तिणे कह्यो छे. ॥५२॥

हवे लेश्या कहे छे—

छसु सव्वा तेउ तिगं इग छसु सुक्का अजोगिअल्लेसा।
बधस्स मिच्छ अविरइ, कसायजोगतिचउहेऊ ॥५३॥

अर्थ—छ गुणठाणामे छ लेश्या छे, अने एक सातमे गुणठाणे तेजो, पद्म, शुक्ल ए तीन ३ लेश्या छे, अने आठमा गुणठाणासुं माडी तेरमा ताइ ६ छ गुणठाणे एक शुक्ल लेश्या छे. अयोगी गुणठाणे लेश्या नथी. अलेशी छे. बधना च्यार ४ हेतु छे-मिथ्यात्व १, अविरति २, कषाय ३, योग ४ ए च्यार कारणें करी जीवने कर्म लागे छे. ॥ ५३ ॥

अभिगहिय मणभिगहिया, भिनिवेसिअ ससइय मणा भोग।
पण'मिच्छ वार अविरइ, मण करणानियमु छ जिय वहो ॥ ५४ ॥

अर्थ—मिथ्यात्वना पांच भेद छे-अभिग्रहमिथ्यात्व परपर मार्गज सत्य छे एम माने १ (आपणो कदाग्रह लेवे), बीजो अनभिग्रह मिथ्यात्व ते सर्वं धर्म सत्य माने २, अभिनिवेश-वीतरागवचननी खोटी प्ररूपणा करीने कदाग्रह छोडे नहि ३, संसय-वीतराग वचन उपर मनना संदेह आणे ४, अनाभोग-अज्ञानमिथ्यात्व एकेंद्रीसु माडी सर्व जीवने ए पांच मिथ्यात्व जाणवां बार प्रकारनी अविरति छे-स्पर्श अविरति १, रसन अविरति २, घ्राण अविरति ३, चक्षु अविरति ४, श्रोत्र अविरति ५, मन अविरति ६, पृथ्वीकाय हिंसा ७, अप्काय हिंसा ८, तेउकाय हिंसा ९, वाउकाय हिंसा १०, वनस्पतिकाय हिंसा ११, त्रसकाय हिंसा १२, ए बार अविरति कही ॥ ५४ ॥

नव सोल कसाया पनर, जोग इअ उत्तरा उ सगवन्ना
इग चउ पण ति गुणेसु, चऊ तिदु इग पच्चओ बंधो।५५।

अर्थ—नव नोकषाय हास्यादि ६ तीन वेद सोळे १६ कषाय अनंतानुबंधीयादिक ए पचीस २५ कषाय. १५ योग ४ मनना, ४ वचनना, ७ कायाना ए पन्नर योग ए सर्व मळी ५७ सत्तावन कर्म बंधनना हेतु छे. इणे प्रकारे जीव कर्म बांधे. एक मिथ्यात्व गुणठाणे च्यारे, मिथ्यात्व १, अविरति २, कषाय ३, योग ४ ए बंधहेतु छे. ४ गुणठाणे—सास्वादन, मिश्र, अविरति, देशविरति ए ४ गुणठाणे तीन बंधहेतु छे, मिथ्यात्वविना कषाय, अविरति, योग, ए ३ तीन छे. अने पांच गुणठाणे—प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण, निवृत्तिबादर, सूक्ष्मसंपराय ए पांच गुणठाणे दु—बे हेतु छे. कषाय अने योग ए बे बंधहेतु छे. अने उपशांतमोह, क्षीणमोह, सयोगीकेवळी ए तीन ३ गुणठाणे १ योग बंधहेतु छे. ॥५५॥

चउ मिच्छमिच्छअविरइ, पच्चईया सायसोल पणतीसा
जोगविणुतिपच्चइया, हारग जिण वज्ज सेसाओ ॥५६॥

अर्थ—एक सातवेदनी तो च्यारे प्रकारे करी बंधाय छे. अने नरक ३, जाति ४, थावर ४, हुंडक १, छेवठो १, आतप १, नपुंसकवेद १, मिथ्यात्व १, ए सोळ १६ प्रकृति एक मिथ्यात्व सुं बंधाय छे. मिथ्यात्व विना बीजो कोइ इणोनो बंध हेतु नथी. अने पांत्रीस ३५ प्रकृति—तिर्यंच ३, थीणद्धी ३, दुर्भग ३, अनंतानुबंधि ४, मध्यसंस्थान ४, मध्यसंघयण ४, कुखगइ १, नीचगोत्र १, उद्योत १, स्त्रीवेद १, वज्रऋषभनाराच १, मनुष्य त्रिक ३, बीजी चोकडी अप्रत्याख्यानी ४,

औदारिकद्विक २, ए पात्रीस प्रकृति मिथ्यात्वमे अने अविरतिमे बंधाय छे. अने योग विना तीन प्रत्ययथी एटले मिथ्यात्वथा, अविरतिथी, कषायथी ६५ पासठ प्रकृति बंधाय छे, ते कहे छे ते सांभळो–त्रीजी चोकडी ४, सोग २, अरति १, अथिर २, अयश १, असाता १, देवायु १, निद्रा २, वेद २, पचेन्द्री १, शुभविहायोगति १, त्रस ९ नवक, शरीर ३, उपांग १, समचउरस १, निर्माण १, वर्ण ४, अगुरुलघु ४, हास्य १, रति १, भय १, दुगंछा १, पुरुषवेद १, संजलण ४ दर्शनावरणि ४, ज्ञानावरणि ४, अंतराय ५, जस १, उंचगोत्र १, ए ६५ पासठ प्रकृति त्रिण्य ३, प्रत्ययथी बंधाय छे आहारकद्विक २, जिण १ ए त्रण्य ३ प्रकृति कषाय योगथी बंधाय छे, ए १२० प्रकृतिनो बंध छे. ॥ ५६ ॥

णपन्न पन्नतिय छहिय, चत्त गुण चत्त छ चउदुग वीसा
सोलसदस नवनव सत्त, हेउणो नउ अजोगम्मि ॥५७॥

अर्थ—हवे गुणठाणे हेतु कहे छे. मिथ्यात्व गुणठाणे ५५ पंचावन हेतु छे, सास्वादनमे पचास ५० हेतु छे. मिश्रमे त्रेतालीस हेतु छे. समकीत गुणठाणे ४६ छेताळीस बंधना हेतु छे. देशविरति गुणठाणे ३९ ओगणचालीस बंधहेतु छे. प्रमत्त गुणठाणे छवीस २६ बंधहेतु छे, अप्रमत्त गुणठाणे २४ चोवीस बंधहेतु छे. अपूर्वकरण आठमे गुणठाणे बावीस २२ बंधहेतु छे. अनिवृत्तिबादर गुणठाणे १६ सोळ बंधहेतु छे सूक्ष्मसंपरायमे दश १० बंधहेतु छे. उपशातमोहमे नव बंधहेतु छे. क्षीणमोहमे नव बंधहेतु छे. सयोगी केवळीमे सात बंधहेतु छे, अयोगी गुणठाणु अबंधक छे, तेथी त्यां कोइ बंधहेतु नथी. ॥५७॥

पणपन्न मिच्छहारग, दुगण सासाणि पन्नमिच्छविणा
मिस्सदुगकम्मअणविणुं, तिचत्तमीसे अहछचत्ता ।५८।

अर्थ—मिथ्यात्व गुणठाणे पंचावन हेतु छे, ते मूळे सत्तावन थाय तिणमांहे आहारक शरीर १, आहारकमिश्र २, काढीजे, तिवारे पंचावन बंध हेतु रहे ते छे. सास्वादन गुणठाणे पचास ५०, होय छे, ते पांच मिथ्यात्व काढवा तिवारे ५० पचास बंधहेतु छे. औदारिकमिश्र १, वैक्रियमिश्र २, कार्मण ३, अनंतानुबंधी ४. ए सात काढीजे तिवारे मिश्र गुणठाणे ४३ त्रेताळीश बंधहेतु छे. हवे छेताळीस होय छे ते कहे छे. ॥५८॥

सदुमीसकम्मअजए, अविरइकम्मुरलमीस विकसाए।
मुत्तुगुणचत्तदेसे, छवीस साहार दु पमत्ते ॥५९॥

अर्थ—समकीत गुणठाणे—औदारिकमिश्र १, वैक्रियमिश्र २, कार्मण ३, ए त्रण्य भेळीजे तिवारे ४६, छेताळीस बंधहेतु समकीत गुणठाणे छे. देसविरति गुणठाणे त्रसवधनी अविरति १, कार्मण १, औदारिक मिश्र १, अप्रत्याख्यानी ४, ए सात ७, काढीजे तिवारे ३९ गुणचालीस बंधहेतु छे. हवे प्रमत्त गुणठाणे छवीस २६ बंधहेतु छे—आहारक दोय भेळीजे एटले २६. ॥ ५९ ॥

अविरइ इगार तिकसाय, वज्जअपमत्तिमीसदुगरहिया
चउवीस अपुव्वे पुण, दुवीस अविउव्वाहारे ॥६०॥

अर्थ—अविरति इग्यारे ११, त्रीजी चोकडी ४, (प्रत्याख्यानीय) कषाय रहित छवीस हेतु होय आहारक दोय भेळीजे तिवारे छवीसनो बंध छे. अप्रमत्त गुणठाणे वैक्रिय-

मिश्र १, आहारकमिश्र १, ए दोय काढीजे तिवारे २४ बंध हेतु छे. आठमे अपूर्वगुणठाणे–आहारक दोय काढीजे तिवारे बावीस २२ बंधहेतु छे. ॥ ६० ॥

अछहाससोलबायरि, सुहुमेदसवेअसजलणतिविणा।
खीणुवसंति अलोभा, सजोगि पव्वुत्त सग जोगा॥६१॥

अर्थ—हास्यषट्क ६ विना सोळ १६ बंधहेतु बादर संपराये होय. सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे तीन वेद, तीन संजलणा–३–संजलण क्रोध १, संजलणमान २, संजलणी माया ३, ए छ काढीजे तिवारे दस १० बंधहेतु छे. उपशांत गुणठाणे अने क्षीणमोह गुणठाणे संजलननो लोभ काढीजे तिवारे नव ९ बंधहेतु छे. सयोगी गुणठाणे दोय मन, दोय वचन, दोय औदारिक, अने एककार्मण, ए पूर्वोक्त सात ७, योग छे अयोगी गुणठाणे बंधहेतु छे नहि ॥ ६१ ॥

अपमत्ततासचट्ठ, मीसअपुव्वबायरासत्त ।
बंधइ छ स्सुहुमो एग, मुवरिमाबंधगाऽजोगी ॥६२॥

अर्थ—हवे चौद गुणठाणे बंध उदय सत्ता कहे छे–अप्रमत्त गुणठाणा तांइ सात, ते आठ ८, कर्म बांधे मिश्रगुणठाणे अपूर्वकरण गुणठाणे, अनिवृत्ति बादर गुणठाणे, सात कर्मनो बंध छे सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे मोहनीकर्म स्वपाय तिवारे छ ६ कर्मनो बंध छे. इग्यारमे, बारमे, तेरमे गुणठाणे एक वेदनी (साता) कर्म बांधे छे. अने अयोगी अबंधक छे. ॥ ६२ ॥

आसुहुमंसतुदए, अट्ठवि मोह विणु सत्तखीणम्मि।
चउचरिमदुगेअट्ठउ, सते उवसंति सत्तुदए ॥६३॥

अर्थ—सूक्ष्मसंपराय १०, गुणठाणा तांइ सत्ता अने उदय पण आठ कर्मनो छे. सदा सर्व कर्म छे. मोहनी विना बारमा गुणठाणे सात कर्मनी उदय सत्ता छे. तेरमे चौदमे गुणठाणे ए बे गुणठाणे वेदनी १, नाम १, गोत्र १, आउखो १, ए च्यारनो उदय ने सत्ता छे. उपशांतमोह गुणठाणे उदय सात कर्मनो छे. सत्ता आठ कर्मनी छे. ॥ ६३ ॥

उइरंति पमत्तंता, सगट्ठ मीसट्ठ वेअ आउ विणा
छग अपमत्ताइ तओ, छ पंच सुहुमोपणुवसंतो ॥६४॥

अर्थ—उदीरणा कहे छे—मिथ्यात्व, सास्वादन, अविरति देशविरति, प्रमत्त, ए पांच गुणठाणे सात अथवा आठ कर्म उदीरे छे, मिश्र गुणठाणे आठ कर्म उदीरे छे. सदा उदीरणा छे. अप्रमत्त, अपूर्वकरण, अने बादर गुणठाणे वेदनी, आउखो विना ६ कर्म उदीरे छे. सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे छ कर्म पछी मोहनी खपावे पछी पांच कर्म उदीरे छे. उपशांतमोह गुणठाणे पांच कर्मनी उदीरणा छे. ॥ ६४ ॥

पण दो खीण दु जोगी, णुदीरगुअजोगि थोवउवसंता
संख ण खीण सुहुमा, आनअट्टि अपुव्वसम अहिआ॥६५॥

अर्थ—हवे क्षीणमोह गुणठाणे पहेलां पांच कर्म उदीरे छे. पछी ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, अंतराय, ए ३ तीन खपे तिवारे दोय २, नी उदीरणा छे. सयोगी गुणठाणे दोयनी उदीरणा छे. अयोगी गुणठाणे उदीरणा नथी. हवे गुणठाणे अल्पबहुत्व कहे छे—उपशांत ११, अगीयारमे गुणठाणे थोडा जीव छे. उत्कृष्ट ५४, चोपन जीव लाभे छे. तिणथ्री क्षीण-

मोह गुणठाणाना जीव संख्यात गुणा छे. तिणस्तु सूक्ष्मसपराय-
ना जीव, अनिवृत्ति बादरना जीव, निवृत्तिना जीव अधिका
छे. जे कारजे कारजअर्थि उपशम, क्षपक, श्रेणे बेउ ईणे गुण-
ठाणे छे अने माहोमांहे बराबर छे. ॥ ६५ ॥

जोगी अपत्तइअरे, सखगुणा देस सासणा मीसा ।
अविरय अजोगि मिच्छा, असख चउरो दुवेऽणंता ॥६६॥

अर्थ—तिणथी सयोगी केवली जीव संख्यातगुणा छे. तिणस्तु अप्रमत्त गुणठाणाना जीव सख्यात गुणा छे, तिणस्तु प्रमत्त गुणठाणाना जीव सख्यात गुणा छे, तिणस्तु देशविरतिना जीव असंख्यात गुणा छे. तिणथी सास्वादनना जीव संख्यात गुणा छे. तिणस्तु मिश्र जीव असख्यात गुणा छे. तिणस्तु अविरति समकीती जीव असख्यात गुणा छे. तिणस्तु अयोगी सिद्ध अनत गुणा, तेहथी मिथ्यात्वि जीव अनंतगुणा छे. ॥ ६६ ॥

उवसम खय मीसोदय परिणामा दु,नवट्ठारइगवीसा ।
तिअभेय सन्निवाइअ, सम्म चरण पढमभावे ॥६७॥

अर्थ—हवे पाच भाव कहे छे—उपशमभाव १, क्षायिक-भाव २, क्षयोपशमभाव ३, औदायिक भाव ४, पारिणामिकभाव ५, तिहा प्रथम उपशमभावना बे २ भेद छे, क्षायिक भावना नव भेद छे, क्षयोपशमभावना अढार भेद छे, औदयिकभावना एकवीस भेद छे. अने पारिणामिक भावना तीन भेद छे. ए पाच भाव मळ्या छता जे सयोगी भांगा उपजे ते सन्नि-पातिक भाव कहिजे. तिहा पहेला उपशमभावना दोय भेद.

१ उपसम भावनुं समकीत जे सात प्रकृति उपसमावे अने २ उपशम चारित्र जे पूर्वे मोहनीय कर्मनी प्रकृति उपसमावी छे ते. ॥ ६७ ॥

बीए केवल जुअलं, सम्मं दाणाइ लद्धि पण चरणं।
तइए सेसुवओगा, पण लद्धि सम्म विरइ दुगं ॥६८॥

अर्थ—बीजा क्षायिक भावना नव ९ भेद छे ते कहे छे. तिहां केवल ज्ञान १; केवल दर्शन २, क्षायिक समकित १, दानादिक पांच लब्धि–क्षायिकदान १, क्षायिकलाभ २, क्षायिकभोग ३, क्षायिक उपभोग ४, क्षायिकविरज ५ ए पांच अने क्षायिकचारित्र १ ए नव ९ भेद क्षायिकना जाणवा. त्रीजा क्षयोपशमभावना १८ अढार भेद छे ते कहे छे. जे च्यार ४ ज्ञान, मतिज्ञान १, श्रुतज्ञान २, अवधिज्ञान ३, मनःपर्यायज्ञान ४, तीन अज्ञान–मतिअज्ञान ५, श्रुतअज्ञान ६, विभंगज्ञान ७, तीन दर्शन–चक्षुदर्शन ८, अचक्षुदर्शन ९, अवधिदर्शन १० ए दशक्षायोपशमिक उपयोग कहीजे, पांच क्षयोपशमिक लब्धि, क्षयोपशमिक दान ११, लाभ, १२, भोग १३, उपभोग १४, वीरज १५, क्षयोपशमनु समकीत १६, देशविरति १७, सर्वविरति १८ ए अढारे क्षयोपशमभावना भेद जाणवा.।६८।

अन्नाण मसिद्धत्ता, ऽसंजम लेसा कसाय गई वेआ॥
मिच्छं तुरिए भव्वा, भव्वत्त जिअत्तपरिणामे ॥६९॥

अर्थ—चोथा उदयिक भावना २१ भेद छे ते कहे छे. अज्ञान १, असिद्ध संसारी २, असंजमी अविरति ३, छ लेश्या ९, कषाय च्यार, १३ गति च्यार. १७ वेद त्रण, २० मिथ्यात्व, २१ ए एकवीस भेद औदयिक भावना जाणवा.

पाचमा पारिणामिक भावना ३, तोन भेद-भव्यत्व १, अभव्यत्व १, जीवत्व १, ए त्रण भेद जाणवा. ॥ ६९ ॥

चउ चउ गईसुमीसग, परिणामुदएहिंचऊसखइएहिं। ऊवसमजुएहि वा चउ, केवल परिणामुदय खइए ॥७०॥

अर्थ—हवे सन्निपातिक भावना भागा कहे छे-तिहा केतलाइक जीवने मिश्र कहेता क्षयोपशम उपयोग १, परिणाम जीवपणो १, औदयिक गति लेश्या प्रमुख, क्षयोपशम १, परिणामिक १, औदयिक १, ए तीन भाव रूप १, एक रुप भांगो मूळ छे. ए भांगो च्यार गतिना जीवमे छे तिणे उत्तर भांगा च्यार ४ थया. अथवा किणही जीवमे क्षयोपशम १ औदयिक १, पारिणामिक १ ए तीन अने तिमहीज समकीत क्षायिक होवे तो ए ४ सयोगी मूळ भागो वीजो थयो, पण च्यार गतिना जीवमे छे तेणे उत्तरभग एहना ४ च्यार इतले आठ थया. **तिर्यंचगतिमे क्षायिकसमकितनो विसवाद छे.** पर इहां मान्यो छे. तथा क्षयोपशम, औदयिक, पारिणामिक तिमहिज जे जीवमे उपशम समकीत थाय तेहने पण चतुःसयोगी ए त्रीजो भागो थयो. ए पण च्यार गतिआश्रि ४ थया इतले उत्तर भांगा बारे थया. ए अने संसारी केवलीमे पारिणामिक जीवपणो, औदयिक लेश्यापणो १, क्षायिकज्ञान, दर्शन, चारित्र, ए त्रिकसयोगी १, भांगो छे तिवारे मूल भांगा ४ च्यार थया. उत्तरभागा तेर १३ थया. ॥ ७० ॥

खयपरिणामे सिद्धा, नराणपणजोगुवसमसेढीए। इअ पनर सन्निवाइअ, भेया वीस असंभविणो ॥७१॥

अर्थ—अने सिद्धमे ज्ञान क्षायिक थाय छे, जीवपणो पारिणामिक छे, ए सिद्धने द्विकसंयोगो एक भांगो छे. ए मूळ पांच भांगा थया, अने उत्तर १४ चौद थया. अने कोइ मनुष्य उपशमश्रेणे छे, पण क्षायिक समकीती छे, तेहने उपशम श्रेणिमे एक भांगो थयो एटले मूळभेद छ ६ थया. उत्तरभेद १५ पन्नर सन्निपातिक भावे थया. अने बीजा पण वीस भांगा सन्निपातिक उपजे, परं असंभावी भेद छे, जे कारणे किणही जीवमे लाभे नहीं तेणे असंभावी छे. ॥ ७१ ॥

मोहे वसमो मीसो, घाइसु अट्ठ कम्मसु असेसा।
धम्माइ पारिणामिअ, भावे खंधा उदइएवि ॥७२॥

अर्थ—उपशम भावतो मोहनीमेज थाय, बीजा कर्ममे नहि. क्षयोपशमभाव चार ४ घातिकर्ममें छे, बीजा केमां नही, अने औदयिक १ पारिणामिक १, क्षायिक १, ए त्रण भाव आठ कर्ममे छे. इतले मोहनीकर्ममे पांच भाव छे. ज्ञानावरणी, दर्शनावरणी, अंतराय ए तीन कर्ममे चार भाव छे, उपशमभाव न होय. वेदनी, नाम, गोत्र, आउखो, ए ४ चारे कममे तीन भाव छे. उपशम, क्षयोपशम नथी, बाकी ३ तीन भाव छे. धर्मास्तिकायादिक ६ छ द्रव्यमे एक पारिणामिक भाव छे, खंध, पुद्गलिक, शरीरमें १ एक औदयिक भाव ने १ पारिणामिक भाव पण छे. ॥७२॥

सम्माइ चउसुतिगचउ, भावा चउपणुवसामगुवसंते।
चउ खीणा पुव्वे तिन्नि, सेसगुणठाणगेगजिए ॥७३॥

अर्थ—समकीत १, देशविरति २, प्रमत्त ३, अप्रमत ४ ए चार गुणठाणे जीव छे ने क्षायोपशमिक समकीती छे तेहने ३ तीन भाव छे १ औदयिक, २ पारिणामिक, ३ क्षयोपशम ए ३ छे. अने

जे जीव उपशमी के क्षायिक समकीतो छे तेहने तीन ३ भाव तेहिज अने उपशम अथवा क्षायिक ए ४ चार भाव छे. उपशम समकीतीने उपशमश्रेणिये चार ४ भाव छे उपशम समकित चारित्र १, औदयिक २, पारिणामिक ३, क्षयोपशम उपयोग ए चार छे. अने क्षायिक समकिति उपशम श्रेणिमा होय तेने पाच भाव छे-अपूर्वकरण गुणठाणा ८ थी क्षीणमोह १२ मा ताइ चार ४ भाव छे-क्षायिक भाव १, औदयिक भाव २, क्षयोपशमिक ३ पारिणामिक ए ४ भाव छे शेष मिथ्यात्व, सास्वादन मिश्र ए ३ गुणठाणे पारिणामिक १ औदयिक २, क्षयोपशमिक ३, ए त्रण भाव छे. अने तेरमे चौदमे गुणठाणे पारिणामिक १ औदयिक २ क्षायिक ३ ए त्रण भाव छे. ए १४चौद गुणठाणे भाव कह्या. एक जीवआश्री गुणठाणे भाव कह्या ॥७३॥

संखिज्जेगमसंख, परित्त जुत्तनिय पय जुय तिविहं।
एव मणंतपि तिहा, जहन्नमज्झुक्कसा सव्वे ॥ ७४॥

अर्थ--हवे संख्यातादिकनो द्वार कहे छे. संख्यातादिकना जे भेद छे ते कहे छे-तेमां सख्यातानो एक भेद छे, अने असंख्याताना तीन भेद छे-१ प्रत्येकअसख्यातो, २ युक्तअसंख्यातो, ३ असंख्यातअसंख्यातो ए तीन ३ असंख्याता जाणवा इम अनताना तीन भेद छे. १ परित्तअनतो, २ युक्तअनतो, अने ३ त्रीजो अनंतानंतो छे. ए ७ सात थया तेना वळी एकेकना जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट ए त्रिण त्रिण भेदा छे जेमके जघन्य सख्यातो १, मध्यम सख्यातो २, उत्कृष्ट सख्यातो ३, एम सर्व त्रणगुणा करता २१ एकवीस भेद थया ॥ ७४ ॥

लहुसंखिज्ज दुच्चिय, अओ परं मज्झिम तु जा गुरुअ।
जंबुद्दीवपमाणय, चउपल्ल परूवणाइ इम ॥ ७५ ॥

अर्थ—जघन्य संख्यातो दोयने कहीजे, अने ३ त्रणथी उपरांत जतांइ (ज्यांसुधी) उत्कृष्ट न थाय त्यांतांइ (सुधी) मध्यम संख्यातो कहीजे. अने उत्कृष्ट संख्यातो जिवारे जंबुद्वीपप्रमाणे चारे ४ पल्यनी प्ररुपणा करतां जे थाय ते उत्कृष्टसंख्यातो कहीजे. ॥ ७५ ॥ तेहनो स्वरुप कहे छे.—

पल्लाणवट्ठियसिलाग-पडिसिलागमहासिलागक्खा ।
जोयणसहसोगाढा, सवेइअंता ससिहभरिया ॥७६॥

अर्थ—पल्य पेहेलो अनवस्थितपल्य १, वीजो सलागपल्य २, त्रीजो प्रतिसिलागपल्य ३ चोथो महासिलागपल्य ४ ए चारे पल्य एक लाख योजनना आयाम विखंभ छे, एक हजार योजन उंडा छे. वेदिका योजन आठ ८ तांइ छे ते पर्यन्त सरसवं करी भरीजे. एटले पेहेलो पल्य अनवस्थितभरीने. ।७६।

तोदीवुदहीसुइक्किक्क, सरिसवं खवियनिट्ठिएपढमे ।
पढवं व तदंतं चिअ, पुणभरिए तंमि तह खीणे ।७७।

अर्थ—ते अनवस्थित पल्य कोइक देवता उपाडे तेमांहिथी एक कण द्वीपें पछें एक कण समुद्रमें नांखतो जाय तिवारे केतलाइक द्वीपमां नांखतां पेहेलो पल्य जिणे द्वीपें पूरो खाली थया ते द्वीपने प्रमाणे बीजो नवो पल्य कल्पीइं ते पण सरसवें करी भरीजे ते पण एक कण द्वीपें एक कण समुद्र नाखीजे, जिवारे ते पल्य खाली थाय, तिवारं एक सरसव सिलागापल्य मांहे घालीजे. तिहां कोइ कहेजे ते मांहेथी एक घालीजे. केइक नवो १ एक घालीजे. ॥ ७७ ॥

खिप्पइसिलागपल्लेगु, सरिसवो इअसिलागखवणेणं ।
पुण्णो बीओअ तओ, पुव्वंपि व तंमि उद्धरिए ।७८।

अर्थ—इम सिलागापल्यमें एक दाणो मुक्यो पछी वळी त्रीजो अनवस्थित भरीजे, ठेहेले द्वीप समुद्र प्रमाणे तेपण खाली थाय तिवारे बीजो दाणो सिलाकामध्य घालीजे, वळी जिणे द्वीपे समुद्रे त्रीजो अनवस्थित पूरो थयो छे तेटलो चोथो अनवस्थित कल्पीजे, ते वळी एक कण द्वीपे एक कण समुद्रे नांखतो खाली थाय, तिवारें एक त्रीजो कण सिलाकामे भेळीजे इणे भांते (एवी रीते) नवनवा अनवस्थित भरीने खाली करी एक कण सिलाकामें भेळतां सिलाकपल्य पूरो भराणो, तिवार पछी ते शिलाकपल्य पण पूरो उपाडीजे इमहीज द्वीप समुद्रे एक एक कण नांखतां खाली थाय तिवारें एक कण प्रतिसिलाकापल्यमें घालीजे. वळी तिहाथी नवनवा अनवस्थित करी भरीजे, खाली थाय तिवारे एक एक सिलाकामें घालीजे, वळी अनवस्थित काजे एक कण सिलाकामाही घालीजे, इम अनवस्थित नवनवा करी सिलाका बीजीवार भरीजे, तेपण उपाडीजे, द्वीपे समुद्र ठेलाइजे. ॥७८॥

खीणेसिलागतइए, एव पढमेहिं वीयय भरसु ।
तेंहि तइय तेहिय, तुरिय जा किर फुडा चउरो ॥७९॥

अर्थ— सिलाका खाली थाय तिवारे एक दाणो वळी प्रति सिलाकपल्य माहे मुकीजे, इम अनवस्थितें करी सिलाका भरी, सिलाका खाली करी एक दाणो प्रतिसिलाकामांहे घालीजे, इम करता प्रतिसिलाका भरीजे, ते प्रतिसिलोका उपाडीजे, इमही जे द्वीपें समुद्रे खाली कीजे, तिवारे एक दाणो महासिलाकामाहे घालीजे, वळी नवनवा अनवस्थितें करी सिलाका

भरीजे, सिलाका खाली करी एक दांणो प्रतिसिलाकामांहे भेळीजे, इम अनवस्थिते करी सिलाका भरीजे; सिलाका करी प्रतिसिलाका भरीजे, प्रतिसिलाका खाली करीने एक महा सिलाकामें कण घालीजे, इम अनवस्थितेथी सिलाका भरीजे, सिलाकाथी प्रतिसिलाका भरीजे, प्रतिसिलाकाथी महासिलाका भरीजे, इम चारे पल्य भराय ए प्ररुपणाथी जाणवो. ॥७९॥

पढमतिपल्लुद्धरिआ, दीवुदहीपल्लचउसरिसवाय ।
सव्वोविएसरासी, रूवुणो परमसंखिज्जं ॥ ८० ॥

अर्थ—हवे ते सर्व त्रिण्ये ३ पल्ये करी नांख्या हता, जे सरसव ते सर्व भेळा कीजे, अने लाख लाख जोजनना ३ पल्य वळी अनवस्थितनाए ४ पल्यना सरसवना वळी भरी मांहे नांखीजे, तिवारे ते भेळा ढिग कीजे, ए सर्व रासी एकठी थाय तिवारे रासीमांहीथी एक सरसव काढीजे, तिवारे उत्कृष्टो संख्यातो थाय. ॥ ८० ॥

रूवजुअं तु परित्ताऽसंखलहुअस्सरासिअब्भासे ।
जुत्ताऽसंखिज्जंलहु, आवलिया समयपरिमाणं ॥८१॥

अर्थ—अने जे एक सरसव काढ्यो हतो ते भेळीजे, तिवारे जघन्य परित्त असंख्यातो थाय १ ए प्रथम असंख्यातो, ए परित्त असंख्याताना रासि छे तेहनो अभ्यास कीजीये तिवारे चोथो जघन्य युक्तअसंख्यातो थाय. इहां ए अभ्यासनी असत् कल्पना कहे छे ते किहां एक पांचनी एक रासी होवे, तेमांहे पांच जुदा करी मांडीजे, तेहनो धडो थाय ते सर्वनी नीचे मांडीजे ५ ५ ५ ५ ५ पछी मांहोमांहे ए गुंणा कीजे—पांचो पंचा पचवीस,

पचवीस पचो १२५ थया, तेने पांचगणा कीजे ६२५ थया, एहना पाचगुणा कीजे ते कीधे ३१२५ थया, ए पाचनो अभ्यास थयो इम परित्त असंख्यातनी रासी अभ्यास करतां जे थाय ते युक्त असंख्यातो जघन्य कहीजे. आवली एकमाहे जे समय छे ते ए चोथा असंख्याता प्रमाणे छे. ॥ ८१ ॥

वितिचउपचमगुणणे, कमासगासख पढमचउसत्ता- णता ते रूव जुया, मज्झारूवुण गुरु पच्छा ॥८२॥

अर्थ––हवे मतांतर कहे छे–जे मूल सातभेदनी अपेक्षाए द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ ने पचम राशीनो गुणणे–राशि अभ्यास करता २१ उत्तरभेदनी अपेक्षाए सातमुं असंख्यातुं जघन्य असंख्यातासंख्यात, प्रथम अनंत ते जघन्य प्रत्येकानंत, चतुर्थ अनत ते जघन्ययुक्तानंत, ते सप्तम अनंत ते जघन्य अनतानत अनुक्रमे थाय.

ए सर्व जघन्य कह्या. एहमां एकरूप मेळीजे तिवारे सर्व मध्यप थाय, अने चोथे जघन्य अनंतेपु एक उणो कीजे तिवारे पेहेलो परित्तअनंतो उत्कृष्टो थाय, तिवारे अने उत्कृष्टमुं एकरुप काढतांई पिण मध्यराशि कहीजे. ॥८२॥

इअसुत्तुत्त अन्ने, वग्गिअमिक्कसि चउत्थयमसख । होउ असखाऽसख, लहुरूवजुय तु त मज्झ ॥८३॥

अर्थ––इय–इतले ए सूत्रोक्त पिण ए मान लघु थयो, तिणे पूर्वोक्तानुसारे मान कहे छे–जे चोथे जघन्ययुक्त असंख्याताने एकवार वर्गित कीजे, तिवारे सातमो जघन्य असंख्यात- असंख्यातो थाय, इहा वर्गित कहेता जे राशि छे ते रासिने तेटला गुणो कीजे ते वर्ग कहीजे, जिम च्यारनो वर्ग १६,

सोळ एम जाणवो ए जघन्य असंख्यातअसंख्यातो कह्यो. ए जघन्य असंख्यातअसंख्याता मांहे एकरूप भेळीजे, तिवारे मध्यम असंख्यातअसंख्यातो थाय. ॥ ८३ ॥

रूवुण माइमं गुरु, तिवग्गिउं तत्थिमे दसक्खेवे ।
लोगागासपएसा, धम्माऽधम्मेगजियदेसे ॥ ८४ ॥

अर्थ—जाताइ (ज्यांसुधी) पेहेलो अनंतो एकरूप उणो होवे, तिवारे उत्कृष्टो असंख्यातअसंख्यातो थाय. जघन्य असंख्याताने तीन वर्ग कीजे, अने दश असंख्याताना बोल भेळीजे, तिवारे पेहेलो जघन्य परित्त अनंतो थाय नहीं, तिवारे लोकाकाशना प्रदेश १, धर्मास्तिकायना प्रदेश २, अधर्मास्तिकायना प्रदेश ३, अने एक जीवना प्रदेश ४, वळी ॥ ८४ ॥

ठिइबंधज्झवसाया, अणुभागा जोगछेयपलिभागा ।
दुण्ह य समाण समया, पत्तेअ निगोअए खिवसु ॥८५॥

अर्थ—स्थितिबंधना अध्यवसाय ५, रसबंधनां स्थानक ६, योगना सूक्ष्मछेद—जेहनो वळी भाग न थाय तेहवा ७, उत्सर्पिणी अवसर्पिणीना समय ८, प्रत्येक वनस्पतिना जीव ९, सूक्ष्मनिगोदीनां शरीर १०, ए दश १० असंख्याता भेळीजे. ॥ ८५ ॥

पुणरवि तंमि तिवग्गिय, परित्तणंत लहु तस्स रासीणं
अब्भासे लहुजुत्ता—,णंतं अभव्व जिअमाणं ॥८६॥

अर्थ—वळी तीनवार वर्ग कीजे तिवारे पेहेलो परित्त अनंतो जघन्य थाय, ए परित्तअनंतानी राशिनो अभ्यास कीजे, तिवारे जघन्ययुक्त अनंतो थाय, जेटली जघन्ययुक्त अनंतामे

संख्या छे एतला अभव्य जीव छे. ॥ ८६ ॥

तव्वग्गेपुणजायइ, णंताणतलहु तं च तिक्खुत्तो ।
वग्गसु तहवि न तं हो-इणत खेवे खिवसु छ इमे॥८७॥

अर्थ—ए जघन्ययुक्त अनताने वर्गित कीजे तिवारे जघन्य अनंतानंतो सातमो थाय. ए सातमो जघन्य अनतानंतने तीनवार वर्गित कीजे, अने एमा छ अनता बोल मेळीजे ते कहे छे. ॥ ८७ ॥

सिद्धा निगोयजीवा, वणस्सई काल पुग्गला चेव ।
सव्वमलोगनहं पुण, तिवग्गिउ केवलदुगंमि ॥८८॥

अर्थ—सिद्धजीव १, सूक्ष्मनिगोदना सर्वजीव २, वनस्पतिकायना सर्वजीव ३, तीनकालना सर्वसमय ४, पुद्गल परमाणुआ सर्व ५, सर्व अलोकना आकाश प्रदेश ६, ए छ बोल मेळीजे, वळी तीनवार वर्गित कीजे, अने केवळज्ञान केवलदर्शनना पर्याय मेळीजे. ॥ ८८ ॥

खित्तेणताणत, हवेइ जिट्ठतु ववहरइ मज्झं ।
इअ सुहुमत्थवियारो, लिहिओ देविंदसूरीहिं ॥८९॥

अर्थ—एटला मेळ्यां उत्कृष्ट अनतानंत नवमो थाय. उत्कृष्ट अनंतानतो थाय छे, परं जगत्रयनी सर्व वस्तु मध्यम आठमा अनताइ छे (व्यवहारमा प्रवर्ते छे), नवमा अनता प्रमाणे वस्तु कांइ छे नहि. (माटे निष्प्रयोजन छे) ए चोथो कर्मग्रन्थ "सूक्ष्मार्थ विचार" नामे संपूर्ण थयो लिख्यो जोड्यो देवेन्द्रसूरि आचार्य ज्ञान हेते. ॥ ८९ ॥

इति श्रीषडशीतिक (सूक्ष्मार्थ विचार) चतुर्थो कर्म्मग्रन्थ टवार्थसमेतं सुसमाप्तम् ॥४॥छ॥

ॐ नमः सिद्धम् ।

अथ शतकनामा पञ्चम कर्म्मग्रंथः



नमियजिणं धुववंधो-दयं[2] सत्ता[3] घाइ[4] पुन्न[5] परियत्ता[6]।
सेयर[12] चउह विवागा[11], वुच्छं वंधविहि[8] सामी[25] य ॥१॥

टवाकार-मंगलम् ।

प्रणम्य वीरं सद्वारं ज्ञानामृतपयोधरं ।
टवार्थं शतकाख्यस्य, देवचंद्रः करोम्यहं ॥१॥

अर्थ—नमस्कार करीने जिनवीतराग प्रत्ये, निर्मोहीप्रत्ये, ध्रुववंध हेतु सद्भावे च्यार ४ गतिमे नियमा वांधीए तेथी ध्रुववंधी कहीये १. जे हेतुहोते वंधाय अथवा न वंधाय ते अध्रुववंधी कहीये २. च्यार गतिमे मिथ्यात्व गुणठाणे थकां सर्व जीवने उदय होवे ते ध्रुवोदय कहीजे ३. चार गतिमे सामग्री योगे पिण उदय होवे अथवा न हुवे ते अध्रुवोदयी कहीजे ४. चार ४ गतिना जीवने सदा सत्ता पांमीये ते ध्रुव सत्ता कहीये ५. कोइ गतिमे सत्ता हुवे न हुवे ते अध्रुव सत्ता कहीये ६. जे आत्माना गुण अनंता छे परं मुख्य गुण आठ छे, ते मध्ये ४ च्यार गुण ते प्रगट थयां सिद्धता पामीए, परं अन्य गुण ते प्रगट करवानां कारण थाय नहीं अने ज्ञान १, दर्शन २, चारित्र ३, वीर्य ४ ए च्यार ४ गुण अनंतगुण प्रगट करवाना कारण छे, ते माटे ४ च्यार गुणने आवरे तेहने घातिकर्म कहीजे ७. शेषकर्मने अघाति कहीजे ८. उदये आव्यां जे कर्म शुभ-मीठां आल्हादकारी होय ते पुन्य प्रकृति कहीजे ९. जे उदय आव्यां

कडुआ-दुःखकारी विपाक आवे ते पाप प्रकृति कहीजे १०. जे प्रकृति परावर्तनपणे थाय ते परावर्तन कहीजे ११. अने जे न थाय ते अपरावर्तन १२ एम मूलमा कहेल ६ छ ने इतर पदे भेळतां १२ द्वार थया. च्यार ४ विपाक जे प्रकृतिओनो विपाक मुख्यताए जीवनेज प्रवर्ते ते जीवविपाकी १. जे प्रकृतिबंध बाधतां जे बाधी, ते उदय आवतां नवा औदारिकादिक पुद्गल नवां लेइने उदय आवे ते पुद्गलविपाकी कहीजे २. गतिना अंतरालमां उदय आवे ते क्षेत्र विपाकी कहीये ३. जे भव-नारकादिक म ये उदय आवे, ते भवविपाकी कहीजे ४. एवं सोळ द्वार थया बंधना विधिभेद ४ प्रकृतिबध १, स्थितिबध २ रसबंध ३, प्रदेशबध ४, इतले २० द्वार थया. स्वामी-प्रकृतिबध स्वामि १, स्थितिबंध स्वामी २, रसबध स्वामी ३ प्रदेशबंध स्वामी ४ च कहेतां उपशमश्रेणि १, क्षपकश्रेणि २, एव २६ छवीस द्वारें करी शतकनामे कर्मग्रन्थ कहीशु १ तिहा प्रथम ध्रुवबंधि द्वार कहे छे. ॥ १ ॥

वन्नचउतेयकम्मा, ऽगुरुलहुनिमिणोवघाय भयकुच्छा
मिच्छ कसाया वरणा, विग्ध ध्रुवबधि सगचत्ता ॥२॥

अर्थ—वर्णादिक ४ च्यार, वर्ण १, गंध २, रस ३, स्पर्श ४ ए समुदाये ध्रुवबंधी छे. श्वेतादिक भिन्न वर्ण ते अध्रुवबंधी छे, पर एक वर्ण हरकोइ नियमा बधाय. तैजस शरीर १, कार्मण शरीर २, अगुरुलघुनामकर्म ३, निर्माणनामकर्म ४, उपघात-नामकर्म ५, ए नव नाम प्रकृति छे भयमोहनी १, कुच्छा कहेता दुगच्छा मोहनी २, मिथ्यात्व मोहनी ३, कषाय १६ अनतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ, ४ एम अप्रत्याख्यानी ४ पछी प्रत्याख्यानी ४ सज्वलन ४, १४२ वर्णना-

वरणी ४, अंतराय ५, ए सर्वे सुडताळीस ४७ प्रकृति ध्रुववंधि छे. ए मध्ये नव नामकर्मनी ९ ओगणीस मोहनीनी १९ पांच ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी चार ४, पांच अंतराय ५, एवं ४७ सुडताळीश ध्रुववंधी जाणवी. द्वार १. ॥ २ ॥

तणुवंगा[३]गिइ[६]संघयण, जाइ[५] गइ[४] खगइ[२] पुंवि[४] जिणसासं।
उज्जोया[१] यवे[१] परघा[१], तसवीसा[२०] गोये[२] वेयणियं ॥ ३ ॥

अर्थ—हवे अध्रुववंधि ७३ कहे छे, तिहां तणु कहेतां शरीर औदारिक १, वैक्रिय १, आहारक १ (तैजस, कार्मण) ध्रुववंधिमे गण्या छे माटे इहां न कह्या. उपांग ३, अने संस्थान ६ संघयण ६, जाति ४, गति ५, खगति कहेतां विहायोगति २, आनुपूर्वी ४, जिननाम १, उश्वास १, उद्योतनाम १, आतप १, पराघात १, त्रस दशक थावरनी दस एवं वीस गोत्र २. वेदनीयकर्म २, हास्य रतिनो जोडो १, अरति शोकनो जोडो १, एवं जुगल ॥ ३ ॥

हासाइजुयलदुगं[४], वेय[३] आउ[४] तेवुत्तरीअध्रुववंधी[७३]। दारं[२]।
भंगा अणाइ साइ, अणंत संतुत्तरा चउरो ॥ ४ ॥

अर्थ—हास्यादि जुगल २, वेद ३, आउखां ४ च्यार ए ७३ अध्रुववंधि ते कोइवार वंधाय कोइवार न वंधाय, ए मध्ये ७ प्रकृति मोहनीनी, २ वेदनीयनी, २ गोत्रनी ४ आयुनी, ५८ नामकर्मनी छे, एवं ७३ छे. अने ध्रुववंधि ४७ अध्रुववंधी ७३ मिळ्यां १२० एकसोवीस प्रकृति थइ. हवे चउ ४ भंगी अणाइ कहेतां अनादि १, साइ—सादि २ तथा अनंत तथा सांत जोडीये, तिवारे अनादिअनंत १ प्रथमभंग, अनादि सान्त ए द्वितीयभंग, सादि अनंत ए त्रीजो भंग,

सादिसान्त ए चोथो भंग, ए चोभंगी जाणवी. ॥ ४ ॥

पढमबियाधुवउदइसु, धुववंधिसु तइय वज्जभग तिग।
मिच्छंमि तिन्निभंगा, दुहावि अधुवा तुरिय भंगा ॥५॥

अर्थ—तिहां ध्रुवउदयी प्रकृतिमध्ये प्रथम १, तथा २, बीजो ए बे भांगा छे–अनादि सान्त भव्यमे २, ए बे भगा छे. तथा ध्रुववधि प्रकृतिनेविषे त्रीजो वर्जीने तीन भंग छे. तिहां अभव्य आश्रयि अनादि अनत छे. जे कारणे अनादिकाल बाधे छे, अने ते सदाकाल बाधे तिणे अनतबंध छे. भव्यजीवने अनादि सान्त छे, ए योग्यतानो सूत्र छे. सादि अनन्त ए भंग कर्म स्वरूपे संभवे नहीं, अने सादिसान्त भंग जीव उपशम श्रेणिए चढी इग्यारमे गुणठाणे सर्व प्रकृतिनो अबंध थयो ते वळी पाछो पडीने सर्व बध करे ते सादि, अने ते जीव वळी कर्म क्षय करीने सिद्ध थाय तिवारे सान्त थाय, ए तीन भंग छे, मिथ्यात्वने ध्रुवोदये तीन एहिज भंग छे, तथा अध्रुवबध तथा अध्रुवोदयनेविषे एक चोथो भांगो सादिसान्त छे. ॥ ५ ॥

निमिणे थिरे अथिरे अगुरुये, सुहे असुहे तेअ कम्म चउवन्नाँ।
नाणंतराये दंसणे, मिच्छे धुवउदय सगवीसाँ ॥६॥

अर्थ—निर्माण नाम १, स्थिरनाम १, अगुरुलघु नाम १. शुभ नाम १, अशुभनाम १, तैजसशरीर १, कार्मण शरीर १, वर्णनाम १, गंधनाम १, रसनाम १, स्पर्शनाम १, एवं १२, बार नाम कर्मनी प्रकृति पाच ज्ञानावरणी ५, पांच अंतराय ५, च्यार दर्शनावरणी ४, एक मिथ्यात्व मोहनी १,

ए सत्तावीस २७ प्रकृति ध्रुवउदयी जाणवी. ते मध्ये वर्ण गंध रस, स्पर्श, ४, नी ए रीत छे, जे पांच वर्ण मध्ये कोइक वर्ण नियमा मुख्यताए उदय होवे, तिणे ध्रुवउदयी, इम गंधादिकनो जाणवो. ए सत्तावीस मध्ये ज्ञानावरणी पांच, अंतराय पांच, दर्शनावरणी ४, मोहनी १, नाम कर्मनी १२, एवं २७ छे. ॥६॥

थिर[1] सुभि[1] अर[1] विणु अधुव–,बंधा[६९] मिच्छ विणुमोह धुवबंधा[१८] ।

निदो[५] वघाय[१] मीसं सम्मं पण नवइ[९५] अधुवुदया ॥७॥

अर्थ—हवे अध्रुवोदयी कहे छे–जे अध्रुवबंधि प्रकृति ७३, ते मध्ये थिर १, अथिर २, शुभ ३, अशुभ ४ ए ४, च्यार विना ६९ लेवी, अने मोहनीनी १९ ध्रुवबंधि कही छे, तेमांथी मिथ्यात्व मोहनी वरजीने शेष १८, रहे ते पिण अध्रुवोदयमे गणी छे. शरीर ३, उपांग ३, संस्थान ६, संघयण ६, जाति ४, गति ४, विहायोगति २, आनुपूर्वि ४, जिननाम १, श्वासोच्छ्वास १, उद्योत १, आतप १, पराघात १, थिर १, शुभविना त्रसादि ८, अथिर अशुभविना थावरादि ८, गोत्र २, वेदनीय २, हास्य १, रति १, अरति १, शोक, १, वेद १, आउ ४, ए ६९ सोळ कषाय भय १, दुगंछा १, निद्रा ५, उपघात १, मिश्र १, सम्यक्त्वमोहनी १, ए ९५ अध्रुवउदयी सर्व गतिना जीवने सर्वकाले उदय न हुवे ते माटे अध्रुवकहीजे. ए मध्ये दर्शनावरणी, ५, वेदनीय २, मोहनीय २७, आयु ४, नामकर्मनी ५५, गोत्र २, ए ९५, अध्रुवोदयि जाणवी. ॥७॥

तसवन्नवीसं[२०]–सगतेयकम्मं[७] धुवबंधिसेसं[४१] वेयतिगं[३] ।

आगिइतिगं[१७] वेयणियं[२], दुजुयलं[४] सगउरलं[७] सासचउ ।८।

अर्थ—हवे ध्रुवसत्ता-त्रसवीस कहेतां त्रस १०, थावर १०, वर्णादि २०,-५ वर्ण २, गंध ५, रस ८, स्पर्श, एवं २०, तैजसकार्मण ७. तैजसशरीर, तैजसबंधन २, तैजससंघातन ३, कार्मणशरीर ४, कार्मणबंधन, ५, कार्मणसघातन ६, तैजसकार्मणबधन ७, शेष ध्रुवबंधि ४१, ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी नव ९, मोहनीय १९, अगुरुलघु १, निर्माण १, उपघात १, अतराय ५, एव ४१, वेद ३, आकृतिनिक ३, तेहनी प्रकृति १७, संस्थान ६, सघयण ६, जाति ५, एवं १७, वेदनीय २, हास्य १, रति १, अरति १, शोक १, ए च्यार औदारिक सात-औदारिक शरीर १, औदारिकउपाग २, औदारिकबधन ३, औदारिक तैजसबधन ४, औदारिक तैजसकार्मणबधन ५, औदारिक सघातन ६, औदारिककार्मणबधन ए ७, एवं सात श्वासोच्छवासथी चार ८,-श्वासोश्वास १, उद्योत १, आतप १, पराघात १, ए चार ॥ ८ ॥

खगई तिरिदुगं नीयं, धुवसत्तां सम्मीसमणुयदुग ।
विउव्विक्कारजिणाउ, हारसगुच्चा अधुवसत्ता ॥ ९॥

अर्थ—खगतिदुग-शुभविहायोगति १, अशुभविहायोगति २, तिरिदुग कहेता तिर्यचगति १, तिर्यचानुपूर्वी २, नीच गोत्र १, एकसोत्रीस ध्रुवसत्ता जाणवी. ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी ९, वेदनी २, मोहनीय २६, नामकर्मनी ८२, गोत्र १, अंतराय ५, एव १३० ध्रुवसत्ता जाणवी. ध्रुव जे च्यार ४ गतिना जीवमा सदा छती पामीये ते ध्रुव कहीजे. हवे अध्रुवसत्ता २८ ना नाम कहे छे समकीत मोहनी १, मिश्र मोहनी २, मनुष्यगति १, मनुष्यानुपूर्वी २ वैक्रिय शरीर १, वैक्रिय उपाग २, वैक्रिय बधन ३, वैक्रियतैजसबधन ४,

वैक्रियकार्मणबंधन ५, वैक्रियतैजसकार्मण बंधन ६, वैक्रिय संघातन ७, नरकगति १, नरकानुपूर्वी २, देवगति १, देवानुपूर्वी २, एवं ११, जिननाम १२, आयु ४, आहारक ७, आहारकशरीर १, आहारक उपांग २, आहारक संधातन ३, आहारक बंधन ४, आहारकतैजसबंधन ५, आहारककार्मणबंधन ६, आहारक-तैजसकार्मणबंधन एवं ७ मिळयां २८ अट्ठावीस अध्रुवसत्ता. ए मध्ये २ मोहनी, २१ नामकर्मनी, ४ आउखो, १, गोत्र, एवं २८ अध्रुवसत्तानी प्रकृती जाणवी. ॥ ९ ॥

पढमतिगुणेसुमिच्छं, नियमा अजयाइ अट्ठगे भज्जं । सासाणे खलु सम्मं, संतं मिच्छाइ दसगे वा ॥१०॥

अर्थ—हवे सत्तामें भांगा कहे छे-**पढमतिगुणेसु**-पहेलां तीन गुणठाणा मध्ये मिथ्यात्वमोहनीनी सत्ता नियमा छे, एतले मिथ्यात्व गुणठाणे मिथ्यात्वनो उदय नियमा छे, तेहनी सत्तापिण नियमा छे, सास्वादन गुणठाणे २८ नी सत्ता नियमा छे. ने मिश्र गुणस्थाने २८, २७ ने २४ ए त्रण सत्तामां मिथ्यात्व अवश्य होय माटे, तथा अयत कहेतां चोथा गुणठाणाथी ११ मा गुणठाणा लगे आठ गुणठाणे भजना जाणवी. तिहां उपशम समकीतीने तथा क्षयोपशमसमकीतीने मिथ्यात्वनी सत्ता छे. अने क्षायिक समकीतीने सप्तक क्षय गयो छे तेहने ए मिथ्यात्वनी सत्ता नथी. सास्वादन गुणठाणे समकीत मोहनी नियमा सत्तायें होय. हवे मिथ्यात्वथी मांडी उपशांतमोह पर्यंत दस गुणठाणे समकीत मोहनी सत्तानी भजना जाणवी. तिहां अनादि मिथ्यात्व तथा समकीत मोहनी उद्वेली हुवे ते जीवने मिथ्यात्व गुणठाणे वर्त्तते समकीत मोहनीनी सत्ता नथी, अने

जे त्रिपुंजीकरण करीने मिथ्यात्वे आव्या छे तेहने छे. सम्यक्त्व-मोह उवेलीने जे मिश्र गुणठाणे आव्या छे, त्या तेहने समकीत मोहनीनी सत्ता नथी. उवेलया विना जे मिश्र गुणठाणे आव्या छे, तेहने सत्ता छे. अने चोथा गुणठाणाथी इग्यारमा पर्यंत, तथा उपशमीने समकीत मोहनीनी सत्ता छे. क्षायिकसमकीतीने त्रणे मोहनीनी सत्ता नथी ते माटे भजना जाणवी. ॥ १० ॥

सासणमीसेसु धुव, मीस, मिच्छाइ नवसु भयणाए।
आइदुगे अणनियमा, भइया मीसाइ नवगंमि ॥११॥

अर्थ—सास्वादन गुणठाणे, मिश्र गुणठाणे ध्रुव नीश्चयथी मिश्रमोहनीयनी सत्ता छे, जे कारणे कृतत्रिपुंजी जीव ए गुणठाणे आवे, अने मिथ्यात्व १, अविरति समकीतथी उपशा ८ उपशान्तमोह सुधी एवं ९ नव गुणठाणे भजना जाणवी. हवे न होवे. तिहा अनादि मिथ्यात्वी छवीस सत्तावन्त छे, तेहने मिथ्यात्व गुणठाणे छता मिश्रमोहनीनी सत्ता नथी, अने जे त्रिपुंजीकरण करीने पड्या जे मिथ्यात्व गुणठाणे आव्या छे, तेहने मिथ्यात्वनी सत्ता हुवे ए भजना, ए अविरति समकीतथी माडी उपशान्तमोह पर्यंत ८ गुणठाणे उपशम समकीतीने मिश्रनी सत्ता होय. क्षायिक समकीतीने सम्यक् क्षय थयो छे, ते माटे मिश्रमोहनीनी सत्ता नथी, ते माटे भजना जाणवी आईदुगे-मिथ्यात्व, सास्वादन ए बे गुणठाणे अनन्तानुबंधीनी सत्ता नियमा होवे, अने मिश्रादिक नव गुणठाणे भजना जाणवी तिहा मोहनी कर्मनी २४ सत्तावाळो क्षयोपशमसम कीती मीत्र चोथाथी पडीने मिश्रे आव्यो, तेहने मिश्र गुणठाणे अनंतानुबंधीनी सत्ता नथी, अने जे २८ अट्ठावीस सत्तावंत

क्षयोपशमसमकिती चोथाथी पडी मिश्रे आव्यो, ते अथवा २८ सत्तावंत मिथ्यात्वी मिथ्यात्व मुकी मिश्रे आव्यो, तेहने अनंतानुबंधीनी सत्ता छे, तथा अविरतिथी उपशान्तमोह सुधी क्षायिकसमकीतीने नथी, तथा उपशमीने छे ए भजना जाणवी.

आहारगसत्तगंवा, सव्वगुणेवितिगुणे विणा तित्थं ।
नोभयसंतेमिच्छो, अंतमुहुत्तं भवे तित्थे ॥ १२ ॥

अर्थ—आहारकसप्तकनी सत्ता सर्व गुणठाणे १४ गुणठाणाने विषे वा कहेतां भजना–होय अथवा न होय. जे जीव ७ तथा ८ आठ गुणठाणे आहारक वांधीने ते पड्यो अथवा चड्यो, तेहने तो आहारकनी सत्ता होय, अने जे जीव आहारक वांध्याविना पडे अथवा चडे तेहने न होय. अथवा आहारक वांधीने उद्वलनाकरणे करी उवेली काढ्यो तेहने पण आहारक ७ नी सत्ता नथी. तथा **तित्थे**—तिर्थंकर नामनी सत्ता बीजे सास्वादने त्रीजे मिश्र गुणठाणे सर्वथा नथी. मिथ्यात्व तथा अविरति समकीती प्रमुख अयोगी पर्यंत १२ बार गुणठाणे भजना जाणवी. जिणे जीव चोथे, पांचमे, छट्ठे, सातमे तथा आठमें गुणठाणे जिननाम वांधी ए १२ गुणठाणे आव्या होवे, तेहने जीननामनी सत्ता पामीजे. जिणे बांध्यो न होय अथवा बांधीने उवेली आव्यो होय, तेहने जिननामनी सत्ता न होये. तथा जिननाम, आहारकनी युगपत् सत्ता जेहने होय, ते उभय सत्तावंत मिथ्यात्व गुणठाणे न आवे. तथा जेहने तिर्थंकर नाम विपाकी सत्ता होय, ते जो मिथ्यात्व गुणठाणे (नरकायुना) निकाचित उदय माटे आवे, ते पिण अंतर्मुहूर्तकाल मिथ्यात्वपणे रहे, पिण वधतो काळ रहे

नहीं इम जाणवो. ॥ १२ ॥

केवलजुयलावरणा, पणनिद्दा बारसाइमकसाया ।
मिच्छ ति सव्वघाइ, चउनाणं ति दसणावरणा॥१३॥

अर्थ--हवे घातीमध्ये २०, सर्व घाती कहे छे-केवल-जुगल कहेता २, केवलज्ञान १, तथा केवलदर्शन २, तेहना आवरण-केवलज्ञानावरणी १, तथा केवलदर्शनावरणी २, पाच निद्रा ५, आदि धुरला १२ कषाय, अनतानुबंधी ४, अप्रत्याख्यानी ४, प्रत्याख्यानी ४, ए १२, मिथ्यात्व १, ए २० वीस सर्वघाती जाणवी, तथा देशघाती २५, पचीस प्रकृति छे ते कहे छे. ज्ञानावरणी ४, दर्शनावरणी ३. ॥ १३ ॥

सजलण नोकसाया, विग्घ इअ देसघाइयं अघाई।
पत्तेय तणुट्ठाऊ, तसवीसा गोअदुग वण्णा ॥१४॥

अर्थ—संजलणा ४, नोकषाय ९, अतराय ५, एम पूर्वोक्त मेळवता २५, पचीस ए देशघाती छे. तथा अघाती ७५, छे तिहा पराघात १, उश्वास १, आतप १, उद्योत १, निर्माण १, अगुरुलघु १, तिर्थंकर १, उपघात १, तणु आठनी प्रकृति ३५, शरीर ५, उपाग ३ संस्थान ६, संघयण ६, जाति ५, गति ४, खगति २, आनुपूर्वि ४, आउखा ४, त्रस १०, थावर दस १० गोयदुग—बे गोत्र २, वेदनी बे २, वर्ण १, गंध २, रस ३ स्पर्श ८, ए ७५, अघाती प्रकृति जाणवी, जे गुणनो घात न करे ते अघाती कहेवी. ॥१४॥

सुरनरतिगुच्चसाय, तसदसं तणुवगं वइर चउरसं ।
परघासगं तिरिआउ, वन्नचउ पणिंदि सुभखगई॥१५

अर्थ—हवे पुन्यप्रकृतिना ४२, भेद कहे छे-सुरत्रिक-देवगति १, देवायु २, देवानुपूर्वि ३, तथा मनुष्यगति १, मनुष्यानुपूर्वि २, मनुष्यायु ३, नरत्रिक मळी ६, उच्चगोत्र ७, सातावेदनी ८, त्रसदशक, १८, शरीर पांच २३, उपांग त्रण २६, वज्ररुषभनाराच २७, समचोरस संस्थान २८, पराघात सप्तक पराघात २९, उश्वास ३०, आतप ३१, उद्योत ३२, अगुरुलघु ३३, निर्माण ३४, तीर्थंकरनामकर्म ३५, तिर्यंच-आयु ३६, शुभवर्ण ३७, गंध ३८, रस ३९, स्पर्श ४०, पंचेन्द्री जाति ४१, शुभविहायोगति ४२, ए ४२, बेताळीस पुन्यप्रकृति जाणवी. जेहना विपाक भोगवतां मीठा लागे ते पुन्यप्रकृति. ॥ १५ ॥

बायालपुन्नपगँई[४२], अपढम संठाणे[५] खगइ[१] संघयणा[५] ।
तिरिदुग[२] असाये[१] नीअे[१]-वघाय[१] इग[१] विगल[३] निरयतिगं[३]

अर्थ—४२ पुण्यप्रकृति थइ. हवे ८२, पाप प्रकृति कहे छे, **अपढम**-पेहेलुं संस्थान, पेहेली **खगति**-विहायोगति, संघयण ए ३ वर्जिने बीजी सर्वे पाप प्रकृति छे. न्यग्रोध संस्थान १, सादि, २, वामन, ३, कुब्ज, ४, हुंड ५, ए पांच संस्थान, तथा, अशुभविहायोगति ६, रुषभनाराच संघयण ७, नाराच ८, अर्धनाराच ९, कीलिका १०, छेवट्ठो ११, **तिरिदुग**-तिर्यंचगति १२, तिर्यंचानुपूर्वि १३, असातावेदनी १४, नीचगोत्र १५, उपघात १६, एकेन्द्रीनी जाति १७, **विगलतिग** द्वीन्द्रिय १८, त्रीन्द्रिय १९, चौरेन्द्रीनी जाति २०, नरकत्रिक ते नरकगति २१, नरकानुपूर्वि २२, नरकायु २३ ॥१६॥

थावर दसँ वन्नचउक्क, घाइपणयाँलैसहिअ वासीई।
पावपयडिति दोसुवि वन्नाइगहा सुहा असुहा ॥१७

अर्थ—थावरनो दशक ३३, अशुभवर्ण ३४, रस ३५, गंध ३६, स्पर्श ३७, तथा घातीनी ४५, ते ज्ञानावरणी ५, दर्शनावरणी मोहनी २६, अंतराय ५, एवं ४५, सहीत करीये, एटले ८२, प्रकृति पापनी जाणवी. इहां पापना ८२, भेद, तथा पुण्यना ४२ भेद, ते मेळतां १२४, प्रकृति थइ, ते बधनी तो १२०, छे ? तेहनो उत्तर–जे शुभवर्णादि ४, पुन्यमे गवेष्या, अशुभवर्णादि पापमे गवेष्या, ते माटे दुवारे (बे वार) गणतां १२४, थाय छे इमज. ॥ १७ ॥

नामधुववधिँ नवग, दसणँ पणनाणँ विग्घँ परघायं।
भयकुच्छ मिच्छ सास, जीणगुणतीसा अपरिअत्त॥१८।

अर्थ—हवे अपरावर्त्तमान प्रकृति कहे छे–नामनी ध्रुव बंधी ९, वर्णादि ४, निर्माण १, अगुरुलघु १, उपघात १, तैजस १, कार्मण १, ए ९, तथा दर्शनावरणी ४, पणनाण –ज्ञानावरणी पांच विग्घ–अंतराय पाच, पराघात १, भय, दुगछा, मिथ्यात्व, उश्वास, जिननाम ए इगुणत्रीस २९, ए अपरावर्त्तमान जाणवी. अपरावर्त्तमान एटले जे प्रकृति कोनो बंध तथा उदय रोक्या विना पोताना हेतु सद्‌भावे बंधाय, तथा उदय आवे, ते अपरावर्त्तन कहीये. ॥ १८ ॥

तणुँअट्ठ वेअँ दुजुअँल, कसाँय उज्जोअ गोअँदुगनिद्दाँ।
तसँवीसा उँ परित्ता, खित्तविवागाणुपुव्वीओ ॥१९॥

अर्थ— परावर्त्तमान प्रकृति ९१, कहे छे, जे तणुअट्ठ -शरीर ३, उपांग ३, संस्थान ६, संघयण ६, जाति ५, गति ४, खगति २, आनुपूर्वी ४, एवं ३३, तथा वेद त्रण ३६, दुजुयल-हास्य रति, तथा शोक अरति ४०, कषाय सोळ ५६, उद्योत ५७, आतप ५८, गोत्र वे ६०, वेदनीय बे ६२, निद्रा पांच ६७, त्रस थावरना दसकानी मळी वीस ८७, चार आउखा ९१, ए एकाणुं परावर्त्तमान प्रकृति जाणवी. जे ए बंध तथा उदयमां एकने रोकीने बंधाय अथवा उदये आवे ते परावर्त्तमान कहीजे. हवे क्षेत्रविपाकी-क्षेत्र कहेतां आकाश तिहां जेहनो विपाक जे ते क्षेत्रविपाकी च्यार ४, आनुपूर्वि छे, जे एक भवथी बीजे भव जतां वाटे विपाके उदय पामीये छीए, जो प्रदेशोदय न मानीये तो एहनी स्थिति किहां भोगवाये. ते माटे, ॥ १९ ॥

घणघाई[४७] दु गोअ[४] जिणा[१], तसिअर[३]तिग[३] सुभग[४] दुभग[४] चउ सासं।
जाइ तिगे[११] जियविवागा[७८], आउ चउरो भवविवागा[४]॥२०॥

अर्थ—हवे जीवविपाकीनी ७८, प्रकृति कहे छे. तिहां जे कार्मण वर्गणापणे जेंबांध्यो कर्म, ते मुख्यपणे जीवनेज विपाक देखाडे, ते जीवविपाकी कहीये. तिहां घनघाती ४७, जे ज्ञानावरणी पांच दर्शनावरणी नव, मोहनी अठ्ठावीस, अंतराय पांच ए ४७, दुगोाय बे गोत्र, बे वेदनीय ४, जिननाम १, त्रसत्रिक त्रस १, बादर २, पर्याप्त ३, इअर-थावरत्रिक. थावर१,

सूक्ष्म २, अपर्याप्त, ३, सुभगचउ-सुभग १, सुस्वर २, आदेय ३, जश ४, दुभगचउ-दुर्भग १, दुःस्वर २, अनादेय ३, अजश ४, श्वासोश्वास १, जातित्रिक कहेतां—जाति ५, गति ४, खगति २, ए ११ इग्यार ए सर्व मिळी ७८ प्रकृति जीवविपाकी जाणवी. तथा आउखां च्यार ४ भवविपाकी जाणवां. आउखा पोताना भवमेज उदये आवे, पण बीजे भवे संक्रमण तथा प्रवेशपणे पिण उदय न आवे, ते माटे भवविपाकी कह्यां. ॥ २० ॥

नामधुवोदय चउतणु, वघाय साहारणियर जोयतिग।
पुग्गलविवागि बंधो, पयइट्ठिइ रस पएसत्ति ॥२१॥

अर्थ—नामकर्मनी ध्रुवोदयी १२ वर्णादि ४, तैजस १, कार्मण १, निर्माण १, अगुरुलघु १, थिर १, अथिर १, अशुभ १, ए १२ चउतणु-शरीर ३, उपांग ३, संस्थान ६, संघयण ६, ए १८ तथा उपघात १, साधारण १, प्रत्येक १, उद्योतत्रिक-उद्योत १, आतप २, पराघात ३ एवं ३६ छत्रीस प्रकृति पुद्गलविपाकी जाणवी. पुद्गलविपाकी कहेता जे बंधकाले कार्मण वर्गणापणे बांध्या, ते उदयकाले शरीरप्रत्ये विपाक देखाडे, ते पुद्गलविपाकी कहीजे. इहां कोई पूछस्ये जे कार्मणनी तो वर्गणा नवि लेवाये, ते पिण सोलगुणी छे, तो ऊश्वासनीपरें जीवविपाकीमें का गणता नथी ? तेहने उत्तर जे—कार्मणवर्गणा तो आहारपर्याप्तिने बले लेवाये ते माटे पुद्गल विपाकी छे. श्वासोश्वास, सुस्वर, ए तो उश्वासपर्याप्ति

तथा भाषा पर्याप्तिने उदय वले ले छे ते माटे जीवविपाकी गणी छे. हवे बंधना भेद ४ च्यार कहे छे. प्रकृतिबंध १, स्थितिबंध, २, रसबंध ३, प्रदेशबंध ४ तिहां पहेलां प्रकृतिबंधना भेद कहे छे. ॥ २१ ॥

मूलपयडीण अड सत्त, छेगबंधेसु तिन्निभूगारा ।
अप्पत्तरा तिअ चउरो, अवट्ठिआ न हु अवत्तव्वा ॥२२

अर्थ—मूळ कर्म आठ छे, तिहां मूळ आठ प्रकृति एक समे एक जीव बांधे, जे नवा भवनो आउखो बांधतो हुवे ते आठ बांधे, जे जीव आउखो न बांधतो हुवे ते सात बांधे, तथा दशमे गुणठाणे वर्त्तता मुनिने आउखो, मोहनी न बांधे तिवारे छ ६ बंधाये. तथा इग्यारमे, बारमे, तेरमे गुणठाणे एक सातवेदनीय बांधे, ते माटे एकविध बंध छे. एटले मूळ बंधना थानक ४ च्यार छे. इहां तीन ३ भूयस्कार जाणवा, इग्यारमे गुणठाणे एक बंधक हतो, ते इग्यारमांथी पडी दशमे आवी ६ छ बांधे, तिवारे एक भूयस्कार वळी नवमे गुणठाणे आवे तिवारे ७ सात बांधे, ते बीजो भूयस्कार, तथा ते जीव जीवारे आठ बांधे तिवारे त्रीजो भूयस्कार जाणवो. अल्पतर तीन छे, ते जे आठनो बंधक ते सात बांधे तिवारे एक अल्पतर, सातथी छ बांधे ते बीजो अल्पतर, अने छथी एक बांधे तिवारे त्रीजो अल्पतर, ए तीन अल्पतर जाणवा, तथा आठनो १ अवस्थित, सातनो बीजो अवस्थित, छनो त्रीजो अवस्थित, एकनो चोथो अवस्थित, ए ४ च्यार अवस्थित जाणवा. मूळ बंधे अवक्तव्य बंध नथी, जे मूळथी अबंधक थइने पाछो बंधक थतो नथी. ॥ २२ ॥

एगादहिगे भूओ, एगाईऊणगम्मि अप्पतरो ।
तम्मत्तोऽवट्ठियओ, पढमे समये अवत्तव्वो ॥२३॥

अर्थ–एकादिक अल्पबंधथी जे अधिको बध बांधे ते भूयस्कार बध कहीये जिम एक बंध करतो तिणे वळी एक अधिको बांध्यो, तिणे पहेले समये भूयस्कार कहीये, अने जे पूर्व बधथी एक तथा घणा पिण उणा बांधे ते अल्पतर. जिम आठनोबध करतो ते सात बाधे ए अल्पतर जाणवो. अने जे थानक बांधतो हतो तेहिज बीजे समे बांधे, ते अवस्थित कहीये, ते मात्र ते ते प्रमाणेज बाधे ते अवस्थित बंध जाणवो, अने अबंध थइ प्रथम समये जे बांधे तेहने अवक्तव्य कहीये, जिम दशमे, इग्यारमे, मोहनी कर्मनो अबंधक हतो, ते पडता नवमे गुणठाणे आवे एक बाधे एहने अवक्तव्यबध कहीये, कोयथी अधिको नथी. तिणे भूयस्कार नही, कोयथी उणो नथी, तिणे अल्पतर नथी. तेनो ते पण नथी ते माटे अवस्थित पण नथी ए अवक्तव्य कहीये. ॥ २३ ॥

नव छ चउ दसे दु दु, तिदु मोहे दु इगवीस सत्तरस।
तेरस नव पण चउ तिदु, इक्को नव अट्ठ दस दुन्नि।२४।

अर्थ—हवे दर्शनावरणी कर्मनां बंधस्थानक ३ तीन छे. पेहेलो नवनो स्थानक छे, ए मिथ्यात्व, सास्वादन गुणठाणे छे, पछे सास्वादनने अंते थीणद्धी तीन काढीजे, तिवारे मिश्रथी माडी आठमा गुणठाणा सीम छनो बध स्थानक छे, तथा आठमाना बीजा भागथी माडी दसमा गुणठाणाना सीम च्यार ४ नो बंध इम थानक चार ४ नो छे, दर्शनावरणी कर्मने भूयस्कार बे छे. जे दसमे गुणठाणे चार ४ बाधतो हतो ते आठमे

आव्ये ६ छ वांधे ते एक भूयस्कार, छथी सास्वादनमे आवी नव वांधे ते वीजो भूयस्कार, ए वे भूयस्कार जाणवा. अथवा नव वांधी छ वांधे ए पेहेलो अल्पतर, तथा ६ वांधी, ४ वांधे ते वीजो अल्पतर, तथा ९, तथा ६, तथा ४ ए तीन अवस्थित, तथा कोइ जीव इग्यारमे गुणठाणेथी पडी १० मे आवे ते अवंधक थइ च्यार ४ वांधे ते पेहेलो अवक्तव्य, अथवा इग्यारमे मरण पामीने चोथे आवी ६ वांघे ए वीजो अवक्तव्य जाणवो.

हवे मोहनीय कर्मनां वंधस्थानक १० छे, ते प्रथम २२ नो, वीजो २१ नो, त्रीजो १७ नो, चोथो १३ नो, पांचमो ९ नो, छट्ठो ५ नो, सातमो ४ नो, आठमो ३ नो, नवमो २ नो, दसमो १ नो, ए दस वंधस्थानक जाणवां. इहां नव भूयस्कार वंध छे. तिहां एकथी वे वांधे ते पेहेलो भूयस्कार, वेथी तीन वांधे ते बीजो भूयस्कार, तीनथी च्यार वांधे ते त्रीजो भूयस्कार, च्यारथी पांच वांधे ते चोथो भूयस्कार, पांचथी नवनो पांचमो, नवथी तेरनो छट्ठो, तेरथी सत्तरनो सातमो, सत्तरथी एकवीसनो आठमो, एकवीसथी २२ नो नवमो भूयस्कार जाणवो, अल्पतरमां वावीसथी २१ एकवीसनो वंध करे नहीं, जे माटे मिथ्यात्वथी सास्वादन गुणठाणे जीव न आवे, ते माटे बावीसथी सत्तरनो पेहेलो अल्पतर, सत्तरथी १३ नो वीजो, तेरथी ९ नो त्रीजो, नवथी पांचनो, पांचथी ४ नो, ४ थी ३ नो, ३ थी वेनो, वेथी एकनो, ए ८ अल्पतर जाणवा. तेह दस स्थानक तें दस अवस्थित जाणवा. ते जे मुनि इग्यारमें चढी मोहनीकर्मनो अवंधक थयो, ते पडतो नवमे आवी पेहेले समये १ लोभ वांधे, ते माटे एकनो अवक्तव्य वांधे ते पेहेलो अवक्तव्य, एह कोथी अधिको नथी, अल्प नथी, अने अवंध थइ

प्रथम वाध्यो ते माटे १ नो अवक्तव्य कहीये, तथा जे जीव इग्यारमें काल करे ते चोथे गुणठाणे आवी १७ सत्तर बांधे ए वीजो अवक्तव्य, इहा भूयस्कार, तथा अल्पतर, तथा अवक्तव्य वंधनो एक समय काल छे शेप सर्व अवस्थितनो काल छे. ।२४।

ति[३२] पण[२५] छ[२६] अट्ठ[२८] नव[२९]हिया,वीसातीसेगं[३०,३१]ती स ईग[१]नामे
छ[१]स्संग[२] अट्ठ[३]तिं[४] बधा, सेसेसु य ठाण मिक्किकं ॥२५॥
पयडिवंधो समत्तो ॥

अर्थ—हवे नामकर्मना स्थानक ८ आठ छे, तिहां पेहेलो त्रेवीसनो, बीजो २५ नो, त्रीजो २६ छवीसनो, चोथो अट्ठावीस २८ नो, पाचमो २९ नो, छट्ठो ३० नो, सातमो एकत्रीसनो ३१ नो, आठमो एक १ नो, ए भूयस्कार ६ छ जाणवा, तेवीसथी पचवीसनो पेहेलो भूयस्कार, पचवीसथी २६ नो बीजो, २६ थी २८ नो त्रीजो, २८ थी २९ नो चोथो, २९ थी ३० नो पाचमो, ३० थी ३१ नो छट्ठो, भूयस्कार छे. अल्पतर ७ छे ते ३१ थी १ नो पेहेलो अल्पतर, ३१ थी ३० नो बीजो अल्पतर, इहा कोइक जीव ३० थी १ नो वध करे, पिण ते एकना अल्पतर मध्येज गण्यो तिणे जुदो गणवो नथी, तथा ३० थी २९ नो त्रीजो, २९ थी २८ नो चोथो, २८ थी २६नो पाचमो, २६थी २५ नो छट्ठो, २५ थी २३ नो सातमो अल्पतर जाणवो, वधस्थानक तेहज ८ अवस्थित जाणवा. इहा अवक्तव्य ३ तीन छे—ते जे मुनि इग्यारमे गुणठाणे नामकर्मनो अवंधक छे, ते इग्यारमाथी पडथा १० मे आवी १ बांधे, ए पेहेलो अवक्तव्य, तथा जे इग्यारमें काल करे ते चोथेआवे ते देवप्रायोग्य २८ बाधे ए वीजो, अथवा कोइक जीव २९ जिननाम सहित

बांधे ए त्रीजो अवक्तव्य, ३१ थी १ नो पहेलो, ३१ थी ३० नो बीजो, ३० थी २९ नो त्रीजो, ए नामकर्मना ३ अवक्तव्य जाणवा. शेष जे ज्ञानावरणी, आयु, वेदनीय, गोत्रकर्म, अंतराय, ए पांच कर्मनो एकेक बंधस्थानक, वेदनीय विना ४ च्यार कर्मने अवस्थित तथा अवक्तव्य ए बे बंध छे, वेदनी कर्मने एक अवस्थित बंध छे, वेदनीयनो अबंधक थइ बंध करे नहीं, ते माटे अवक्तव्य नथी. ए प्रकृतिबंध अधिकार कह्यो, इति प्रकृति-बंध समाप्त. द्वा० १७. ॥२५॥

वीसयरकोडिकोडी, नामे गोण्य सत्तरी मोहे ।
तीसयरचउसुउदही, निरय सुराउंमि तित्तीसा ॥२६॥

अर्थ—हवे मूळ कर्म आठ त्हेनी उत्कृष्ट स्थिति छे ते कहे छे-**वीसयर**-वीसकोडाकोडी सागर नामकर्म तथा गोत्र-कर्मनी उत्कृष्टी स्थिति छे, मोहनी कर्मनी सीत्तेर कोडा कोडी सागरनी उत्कृष्टि स्थिति छे, **चउसु**-ज्ञानावरणी १, दर्शनावरणी २, वेदनीय ३, अंतराय ४, ए च्यार ४ कर्मनी ३० कोडाकोडी सागरनी उत्कृष्टी स्थिति जाणवी. नरकना आयु तथा देवताना आउखानी उत्कृष्टी स्थिति, तेत्रीस सागरोपमनी जाणवी. उत्कृष्ट स्थिति उत्तर प्रकृतिनी पिण इहांथी गणज्यो. हवे मूल कर्मनी जघन्य स्थिति कहे छे, **मुत्तु**-अकषायवेदनीयनी स्थिति वर्जिने, शेष सकषायीजीव वेदनीय कर्मनी स्थितिजघन्यें अंतमूहूर्त्तनी बांधे छे. अथवा १२ मूहूर्त्तनी बांधे छे. ए दसमे गुणठाणे बांधे. इहां दसमा गुणठाणाना आदि अध्यवसायें. ॥२६॥

मुत्तुंअकसायठिइं, बारमुहुत्ता जहन्न वेअणिए ।
अट्ठट्ठनामगोए-सु सेसएसु मुहुत्तंतो ॥ २७ ॥

अर्थ–अकषायी ते ११ मुं, १२ मुं, १३ मु, ए ३ गुणठाणामां काषायिक स्थिति जे छे तेने मुकीने एटले १० दसमे गुणठाणे जे जीव छे ते जीवने वेदनीयनी स्थिति बार मुहूर्त्त जघन्यथी होय, दसमा गुणठाणाना पेहेले अध्यवसाये मुहूर्त्त मोटो लेवो, अंत्यअध्यवसायें मुहूर्त्त न्हानो लेवो, तथा क्षपकथी उपशमश्रेणिमां बिमणो बंध जाणवो, नामकर्म, गोत्रकर्मनी जघन्य स्थिति आठ मुहूर्त्तनी छे. शेष जे ज्ञानावरणी तथा दर्शनावरणी, आउखो तथा मोहनी, तथा अंतरायनी जघन्य स्थिति १ एक अंतर्मुहूर्त्तनी जाणवी. ॥ २७ ॥

विग्घौ वरणें असाए, तीस अट्ठार सुहुम विगलतिगे। पढमागिई संघयेणे, दसदुसुचरिमेसु दुगवुड्ढी ॥२८॥

अर्थ––हवे उत्तर प्रकृतिनी उत्कृष्ट स्थिति जणावे छे. अंतराय पाच ५, ज्ञानावरणी पाच, दर्शनावरणी नव एवं आवरण १४ असातावेदनीय १ ए वीस प्रकृतिनी तीस कोडाकोडी सागर उत्कृष्ट स्थिति जाणवी. तथा सूक्ष्मत्रिक, विकलत्रिक, ए छ प्रकृतिनी अढार कोडाकोडी, प्रथम संघयण वज्रऋषभनाराच, प्रथम संस्थान समचउरंसनी उत्कृष्ट स्थिति दस कोडाकोडी सागर, पछी उपरले एक संघयणे एक संस्थाने दुग केहेतां बे कोडाकोडी सागरनी स्थित वधारवी, एटले ऋषभनाराच संघयणे तथा न्यग्रोध संस्थाने बार कोडाकोडी सागरनी स्थिति, तथा नाराच संघयणे, सादि संस्थाने चउद १४ कोडाकोडी सागरनी स्थिति, अर्द्ध नाराचसंघयणे, वामनसस्थाने १६ सोळ कोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति, किलीकासंघयणे, कुब्ज संस्थाने अढार १८ कोडाकोडी सागरनी स्थिति, छेवट्ठु संघयण, हुंडक

संस्थाननी स्थिति वीस कोडाकोडीनी जाणवी. ए गाथा मध्ये ३८ प्रकृतिनी स्थिति कही. ॥ २८ ॥

चालीसकसाएसु, मिउ लहु निद्धुण्ह सुरहि सिय महुरे ।
दस दोसड्ढ समहिआ, ते हालिद्दंबिलाईणं ॥२९॥

अर्थ—सोळ १६ कषायनी स्थिति ४० चालीस कोडाकोडी सागरनी स्थिति जाणवी, **मिउ**-मृदु, स्पर्श, सित, उजळो वर्ण, मधुर-मीठो, रस, ए छ प्रकृतिनी दस कोडाकोडी सागरोपमनी उत्कृष्ठी स्थिति जाणवी, तथा हवे एक वर्णे एक रसे अढो कोडाकोडी वधारवी एटले **हालिद्द**—पीळोवर्ण, **अंबिल**—खाटो रस तेहनी साडाबार कोडाकोडी सागरनी स्थिति जाणवी, रातो वर्ण कसायेलो रस, तेनी पन्नर कोडाकोडि स्थिति, नीलो वर्ण, कडवो रस तेहनी साडासत्तर कोडाकोडी सागर स्थिति, काळोवर्ण, तीखो रस तेनी वीस कोडाकोडी सागरोपमनी स्थिति जाणवी. ॥ २९ ॥

दससुहविहगइ उच्चे, सुरदुगथिरछक्कपुरिसरइहासे ।
मिच्छे सत्तरि मणुदुग, इत्थीसाएसु पण्णरस ॥३०॥

अर्थ—शुभ विहायोगति १, उच्चगोत्र १, **सुरदुग**—देवगति, देवतानुपूर्वि २, **थिरछक्क**—थिर १, शुभ २, सुभग ३. सुस्वर ४, आदेय ५, यश ६, ए छ थिरछक. पुरुषवेद १, रति १, हास्य १, ए १३, तेर प्रकृतिनी दस कोडाकोडी सागर उत्कृष्टी स्थिति छे, मिथ्यात्व मोहनीनी सित्तेर ७० कोडाकोडी सागरनी उत्कृष्टि स्थिति छे, मनुष्यगति, मनुष्यानु

पूर्वि, स्त्रीवेद, सातावेदनी ए ४ नी पन्नर १५ सागर कोडा-कोडी स्थिति छे. ॥ ३० ॥

भयकुच्छ अरइ सोए, विउव्वि तिरि उरल निरयदुग निए।
तेयपण अथिर छक्के, तस चउ थावर इगपणिंदि।३१।

अर्थ—भयमोहनी १, कुच्छा-दुगंछा १, अरति १, शोकमोहनी १, वैक्रिय शरीर, वैक्रिय उपाग, ए बे, तिर्यंचगति तिर्यंचानुपूर्वी, ए बे, औदारिक शरीर, औदारिक उपांग ए बे नरकगति, नरकानुपूर्वि ए बे, नीचैर्गोत्र १, तैजस पांच-तैजस १, कार्मण २, अगुरुलघु ३, निर्माण ४, उपघात ५, ए पांच अथिरछक्क ते अथिर १, अशुभ २, दुर्भग ३, दुःस्वर ४, अना-देय ५, अजस ६, ए छ त्रस ४, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक ए च्यार ४, थावर १ एकेन्द्री १, १ पचेन्द्री १. ॥ ३१ ॥

नपुकुखगइसासचउ, गुरु कक्खड रुक्खसीय दुग्गधे।
वीस कोडाकोडी, एवइआबाहवाससया ॥ ३२ ॥

अर्थ—नपुंसकवेद १, अशुभविहायोगति १, श्वासोश्वास चतुष्क-४, उश्वास १, उद्योत १, आतप १, पराघात १, गुरु -भारे फरस १, कर्कश फरस १, रुक्ष-लुखो फरस १, शीत-टाढो फरस १, दुर्गंध १, ए ४२ बेताळीस प्रकृतिनी उत्कृष्टी स्थिति वीस २० कोडाकोडी सागरनी जाणवी. **एवइया** एटलां **वरस सय**-सो वर्ष अबाधा जाणवी. एटले जे कर्मनी जेटली कोडाकोटी स्थिति तेटला सो वरसनी अबाधा. बांध्या पछी तेटला सो वरस सीम (सुधी) उदय न आवे ते अबाधा कहिये.॥ ३२ ॥

गुरु कोडि कोडिअंतो, तित्थाहाराणभिन्नमुहुवाहा ।
लहुठिइसंखगुणूणा,नरतिरियाणाउपल्लतिगं ॥३३॥

अर्थ––गुरु कहेतां उत्कृष्टी अंतो केहेतां मांही एटले कांइक उणी एक कोडाकाडी सागर तीर्थंकर नामनी तथा आहारक दुगनी स्थिति उत्कृष्टी जाणवी. तथा अवाधा प्रदेशोदयनी भिन्नमुहु–अंतर्मुहूर्त्तनी जाणवी. जधन्य स्थिति संख्यात गुण ऊणी ते जे अतः कोडाकोडी स्थिति छे. तेहने संख्यात गुणी ऊणी करीये, जेटली थाय तेटली ऊणी जघन्य स्थिति जाणवी. एटले असंख्याता अध्यवसायनो फेर पडे छे. नर–मनुष्यनुं आयु तथा तिर्यंचायुनी उत्कृष्टी स्थिति तीन ३ पल्योपमनी जाणवी. ॥ ३३ ॥

इगविगलपुव्वकोडिं,पलियाऽसंखंस आउचउअमणा ।
निरुवकमाण छ मासा, अवाह सेसाण भवतंसो ।३४।

अर्थ––हवे जे जीवो आवता भवनो आयु जेटलो बांधे ते कहे छे. एकेन्द्रि तथा विकलेन्द्रिय आवता भवनुं, आयुः उत्कृष्ट बांधे तो पूर्वकोडि १ एकनो बांधे एथी अधिक न बांधे. तथा अमणा असंज्ञि पंचेन्द्रितिर्यंच पर्याप्ता च्यार ४ गतिनो आउखो बांधे तो उत्कृष्टो पल्योपमने असंख्यातमे भाग प्रमाण बांधे, निरुपक्रम आउखावाळा देवता तथा नारकी तथा युगलिया एटला छ मास शेष थकी नवा भवनो आउखो बांधे शेष जे सोपक्रमी तथा निरुपक्रमी मनुष्य तिर्यंचनु आयुष्य ते भवने त्रीजे भागे शेषे बांधे पिण पेहेला बे भाग मध्ये न बांधे, जो त्रीजे भागे न बंधाय तो नवमा भागे, अथवा २७ मे भागे इम त्रिभाग करतां शेष अंतर्मुहूर्त्त पिण बांधे. वर्णादिक वीसनी

जुदी स्थिति कही. तिणे एकसो छत्रीस प्रकृतिनी उत्कृष्टी स्थिति कही. हवे जघन्य स्थिति कहे छे. ॥ ३४ ॥

लहु ठिइबधो सजलण, लोहपणविग्घनाण दसेसु।
भिन्नमुहुत्त ते अट्ठ, जसुच्चे बारस य साए ॥३५॥

अर्थ—जे संज्वलन लोभ १, तथा पाच अतराय ५, तथा पाच ज्ञानावरणी तथा दसेसु चार ४, दर्शनावरणी १५ पंनर. प्रकृतिनी जघन्य स्थिति अतर्मुहूर्तनी जाणवी. तथा जसनामकर्म, उच्चैर्गोत्र १ नी आठ मुहूर्त्तनी जघन्य स्थिति जाणवी. सातावेदनीयनी जघन्य स्थिति बार मुहुर्त्तनी ते दसमे गुणठाणे बाधे, इग्यारमे, बारमे, तेरमे गुणठाणे साता बधाय ते बे समयनी बधाय ॥ ३५ ॥

दो इग मासो पक्खो, सजलणतिगेपुमट्ठवरिसाणि।
सेसाणुक्कोसाओ, मिच्छत्तठिईए ज लद्ध ॥ ३६ ॥

अर्थ—सज्वलनना क्रोधनी जघन्य स्थिति मास बेनी छे. सज्वलननामाननो १ एक मासनी छे, सज्वलन मायानी पक्ष १ ते पन्नर दिवसनी छे. तिहा जे प्रकृति नवमे गुणठाणे वेहेली खपे तेहनी स्थिति जघन्यपणे कही, हवे जे मोडी खपे तेहनी जघन्य स्थिति थोडी जाणवी. पुरुषवेद खपे तिहा सर्व प्रकृतिनी स्थिति एटलीज बधाय छे, पुरुषवेदनी स्थिति जघन्य छे, हवे शेष जे एकसोएक प्रकृति वर्णादिक बीसनी उत्कृष्टी स्थितिने मिथ्यात्वनी उत्कृष्टी स्थितिथी भाग आपतां ज्या जे आवे ते त्या प्रकृतिनी जघन्य स्थिति जाणवी. तिहा निद्रा पाचनी जघन्य स्थिति सागर एकना जे सात भाग एहवा तीन भागनी जाणवी असातावेदनीय पिण सात इया तीन भागनी जाणवी,

बार कषायना जघन्ये सातइया चार भागनी जाणवी. हास्य १ रतीनी सातइया बे भाग. बे भाग. भय, दुगंछा, अरति, शोक ए च्यार ४ प्रकृतिनी जघन्य स्थिति बे भाग, नपुंसकवेदनी स्थिति सातइया बे भाग, स्त्रीवेदनी स्थिति सातइया दोढ भाग, नामकर्ममध्ये देवगति देवानुपूर्विनी एक हजार भाग, नरकगति, नरकानुपूर्विनी सातइया बे हजार भाग, मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्विनी दोढ भाग एकेन्द्री, जाति, पंचेन्द्री जातिनी जघन्य स्थिति सातइया बे भाग, विकलत्रिकनां सातइया पोंणा बे भाग झाझेरा, औदारिक शरीर, औदारिक उपांगनी बे भाग, वैक्रिय शरीर वैक्रिय उपांगनी बे हजार भाग, तैजसकार्मणना बे भाग, प्रथम संघयण प्रथम संस्थाननी सातइयो १, एक भाग. बीजो संघयण बीजा संस्थाननी स्थिति ३५ इया छ ६ भाग, त्रीजो संघयण त्रीजो संस्थान ३५ इया ७ भाग, चोथे संघयणे चोथे संस्थाने पांत्रीसइया (३५ या) ८ भाग, पांचमो संघयण पांचमो संस्थानना पांत्रीसइया नव ९ भाग, छठो संघयण, छठो संस्थानना पांत्रीसइया दस भाग, एटले सातइया बे भाग, श्वेतवर्ण मधुररसनी १ भाग, पीतवर्ण खाटा रसनी सवा भाग, रातावर्ण कसायला रसनी दोढ भाग, नीलोवर्ण कडुवो रस पोणाबे भाग, काळोवर्ण तीखारसनी बे भाग सातइया, सुरभिगंध, मृदुस्पर्श, लघुस्पर्श, स्निग्धस्पर्श, उष्णस्पर्शनो सातइया १ भाग, शुभविहायोगतिनो जघन्य सातइया १ भाग, अशुभविहायोगति, पराघात, उश्वास, आतप, उद्योत, अगुरुलघु, निर्माण, उपघात, त्रस, अथिरछक, थावरनाम ए सर्वना सातइया बे भाग, आहारक शरीर, आहारक उपांगनी, जिन नामनी एक कोडाकोडी सागर केटलाएक सागरोपमना सेंकडा ओछा, सूक्ष्मत्रिकनी सातइया पोंणा बे भाग झाझेरा, थिर ५ नो सातइया १, भाग जघन्य स्थिति जाणवी. ॥३६॥

अयमुक्कोसो गिंदिसु, पलियाऽसखस हीणलहुवधो।
कमसो पणवीसाए, पन्नासय सहस्स सगुणिओ॥३७॥

अर्थ–एक भाग, छ भाग, तीन भाग प्रमुख स्थिति कही ते एकेन्द्रीने उत्कृष्ट स्थिति जाणवी, बादर पर्याप्तो उत्कृष्टी बाधे, ए जे एकेन्द्रीयनी उत्कृष्ट स्थिति कही, ते मांहेथी पल्योपमनो असख्यातमो भाग हीण कहेतां ओछो करीये, तिवारे एकेन्द्रीयनी जघन्य स्थिति जाणवी. **कमसो** अनुक्रमे **पणवीसाए** एकेन्द्रीयथी बेन्द्री पचवीस गुणी स्थिति बाधे, तेन्द्री पचासगुणी स्थिति बाधे, चोरेन्द्री १०० सोगुणी बाधे, अने असंज्ञि पंचेन्द्री हजारगुणी स्थिति बाधे. ॥ ३७ ॥

विगलि असन्निसुजिट्ठो, कणिट्ठओ पल्लसखभागूणो
सुर निरयाउ समादस, सहस्स सेसाउखुड्ड भव ॥३८॥

अर्थ—विकलेन्द्री (बेन्द्री, तेन्द्री, चौरेन्द्री) ने, असज्ञिने ए स्थिति उत्कृष्टी जाणवी **कणिट्ठओ**–जघन्य स्थिति पल्यनो संख्यातमो भाग ऊणी करवो, ते पल्यनो सख्यातमो भाग उणो कीजे तिवारे बेन्द्रीयादिकनी जघन्य स्थिति जाणवी. **सुर**–देवतानो आउखो, **नरय**–नारकीना आउखानी जघन्य स्थिति १० दस हजार वरसनी जाणवी, **शेष** जे मनुष्य तिर्यंचना आउखानी जघन्य स्थिति क्षुल्लक भव प्रमाण, क्षुल्लक भव २५६ आवलीनो छे ते जघन्य जाणवी. ॥३८॥

सव्वाणवि लहुवधे, भिन्नमुहु अबाह आउजिट्ठेवि
केइ सुराउसमजिण, मतमुहू विंति आहार॥ ३९॥

अर्थ—सर्व प्रकृतिना जघन्य स्थितिबंधे जघन्य अबाधा

अंतर्मुहूर्त्तनी जाणवी. एटले सर्वजघन्य स्थितिनी जघन्य अबाधा अंतर्मुहूर्त्तनी, ते उपर स्थिति कंडक एक वधे, एक समय अबाधा वधे, इम उत्कृष्ट स्थितिमां उत्कृष्ट अबाधा जाणवी, अने आउखा च्यारनी उत्कृष्टी स्थिति जघन्य अबाधा हुवे, इहां चौभंगी छे, आउखो उत्कृष्टे अबाधा उत्कृष्टी १, आउखे उत्कृष्टे अबाधा जधन्य २, आउखो जघन्य अबाधा उत्कृष्ट ३, आउखो जघन्य अबाधा जघन्य ४ जाणवी. वळी वाचनान्तर कहे छे. कोइक आचार्य जिन नामनो जघन्य स्थितिबंध देवताना आयु प्रमाण जाणवो, एटले आठमा गुणठाणाना छठ्ठा भागना चरम समये जिननामकर्मनो जघन्य स्थितिबंध १० हजार वर्ष प्रमाणनो होय छे. आहारक दुगनी विपाकनी जघन्य स्थितिबंध अंतर्मुहूर्त्तनी छे, जे आठमा गुणठाणाना छठ्ठा भागना चरम समये आहारकनो जघन्य स्थितिबंध अंतर्मुहूर्त होय छे. ॥ ३९ ॥

सत्तरसमहियाकिर, इगाणुपाणंमिहुंतिखुड्डभवा ।
सगतीस सयतिहुत्तर, पाणू पुण इग मुहुत्तंमि ॥४०॥

अर्थ—हवे क्षुल्लकभवनो मान कहे छे. एक आणपाण श्वासोश्वास मध्ये सत्तर भव पुरा, अढारमा भवना १३९५ भाग अधिक एटले सत्तर भव झाझेरा एक श्वासोश्वास मांहे थाय. ए क्षुल्लक भव जाणवो, क्षुल्लक एटले सर्वथी न्हानो भव, ए भाग उश्वासना ३७७३ भाग करीये तेहवा १३९५ भाग लेवा, सडत्रीससे तिहुत्तर ३७७३ पाणू, पुण कहेता श्वासोश्वास गये एक मुहूर्त थाय. ॥ ४० ॥

पणसट्ठि सहसपणसय, छत्तीसाइगमुहुत्त खुड्डभवा ।
आवलियाणं दोसय, छप्पन्ना एग खुड्डभवे ॥४१॥

अर्थ—एक मुहूर्त ते बे घडी प्रमाणमे पेंसठ हजार पाचसे छत्रीस भव थाये, सूक्ष्मनिगोदीयाथी मांडी समुर्च्छिम मनुष्य पर्यंत ए प्रमाण जाणवो, तथा क्षुल्लक भव मध्ये आवली, २५६ जाये एटले मुहूर्तमे एक कोडि सडसठ लाख सित्तोत्तर हजार दोयसेने सोळ आवली जाणवी. ॥ ४१ ॥

अविरयसम्मोतित्थ, आहारदुगामराउ अपमत्तो ।
मिच्छद्दिट्ठि बंधइ, जिट्ठ ठिइ सेस पयडीण ॥४२॥

अर्थ—हवे उत्कृष्टी स्थितिबंधना स्वामी कहे छे तीर्थंकर नामनी उत्कृष्टी स्थिति अविरति समकीतीबंधक, समकितथी मांडी अपूर्वकरणना छट्ठा भाग पर्यंत छे, ते सर्व जीवथी अधिक कषायी अविरति समकिति छे, ते अधिक कषायी तेथी स्थिति ते उत्कृष्टी बांधे आहारकदुग–२ आहारक शरीर तथा उपांग ए बे अमर–देवतानो आउखो उत्कृष्ट स्थिति अप्रमत्त गुणठाणे बांधे, तिहां आहारक अप्रमत्त अति संक्लेशना अध्यवसाये बंधक उत्कृष्ट स्थिति बंधे, देवायु अप्रमत्त विशुद्धाध्यवसाये उत्कृष्ट स्थिति बांधे, शेष प्रकृति वर्णादिक वीस भिन्नगवेखेतो, १३२, तथा वर्णादि ४, गवेखीयेतो ११६, नी उत्कृष्टी स्थिति संज्ञीपचेन्द्री पर्याप्तो मिथ्याद्रष्टि बांधे ॥ ४२ ॥

विगलसुहुमाउतिग, तिरिमणुया सुरविउव्वि निरयदुग
एगिंदिथावरायव, आईसाणा सुरुक्कोस ॥ ४३ ॥

अर्थ—हवे मिथ्यात्वे चार ४ गतिना छे ते ते मध्ये जे बांधे ते लिखीये छे. विगल ३ सूक्ष्म ३ तिर्यंचायु १, मनुष्यायु १, नरकायु १, ए ३ आउखा देवगति १ देवानुपूर्वि, १ ए देवद्विक, वैक्रिय शरीर, वैक्रिय उपांग, ए बे वैक्रियदुग, नरकगति

नरकानुपूर्वि, ए नरकद्विक, ए १५ प्रकृतिनी उत्कृष्टी स्थिति संज्ञिपंचेन्द्रीपर्याप्तमिथ्यात्वी तिर्यंच मनुष्य वांधे एना बंधक एज छे. तथा एकेन्द्रीजाति, थावरनाम, आतपनाम, ए तीन प्रकृति **आइसाणा**-भवनपति, व्यंतर, ज्योतिषी, सुधर्म, इशान देवलोक पर्यंतना देव उत्कृष्टी स्थिति वांधे, आकरे तीव्र अशुद्धताए परिणम्यो ए जीव एकेन्द्रीपणो उपार्जे, वीजी हीणी गतिमां एने जवु नथी ते माटे. ॥ ४३ ॥

तिरिउरलदुगुज्जोअं छिवट्ठ सुरनिरय सेसचउगइया।
आहारजिणमपुव्वो, अनियट्टि संजलण पुरिसलहु।४४।

अर्थ—तिर्यंचदुग, औदारिकदुग, उद्योतनाम, छेवठो संघयण, ए ६ प्रकृतिनी उत्कृष्टी स्थिति मिथ्यात्वी देवता अथवा मिथ्यात्वी नारकी वांधे, शेष १०८ एकसो आठ, प्रकृतिनी उत्कृष्टी स्थिति चार गतिना मिथ्यात्वी बांधे, संज्ञिपर्याप्ता वांधे.

अथवा जघन्य स्थितिना स्वामी कहे छे. आहारक तथा जिननामनी जघन्य स्थिति अपूर्वकरण गुणठाणे बांधे, ए प्रकृतिना बंधक मध्ये अति निर्मल परिणाम अहींज छे. अनिवृत्ति गुणठाणे संजलना कषाय चार पुरुषवेद, ए पांच प्रकृतिनी जघन्य स्थिति बांधे ॥ ४४ ॥

सायं जसुच्चावरणा, विग्घं सुहुमो विउव्वि छ असन्नि
सन्नीवि आउ बायर, पज्जेगिंदी उ सेसाणं ॥४५॥

अर्थ—सातावेदनीय १, जसनाम २, उच्चैर्गोत्र १, ज्ञानावरणी पांच ५, दर्शनावरणी ४, अंतराय पांच ५, ए १७ प्रकृतिनी जघन्य स्थिति सूक्ष्मसंपराय दसमे गुणठाणे बांधे.

देवद्विक २, नरकद्विक २, वैक्रियद्विक २, ए ६ ७ प्रकृतिनी जघन्य स्थिति असज्ञिपचेन्द्री पर्याप्तो बांधे, जे कारणे एहनो प्रथमबंध एहिज छे, आउखा ४, नी जघन्य स्थितिनो बंधक संज्ञी पण छे असज्ञा पिण छे. एहनो बंध परिणामनी तीव्रमदताये छे, शेष १०१, अथवा ८५, प्रकृतियोनी जघन्य स्थितिना बंधक बादरपर्याप्ता एकेन्द्री जाणवा. स्थितिबंधमें सूक्ष्मसंपरायी साधुथी बीजे थोले स्थितिबंधक एकेन्द्री पर्याप्तो छे. ॥४५॥

उक्कोसजहण्णीयर, भंगासाई अणाइ धुवअधुवा।
चउहा सग अजहन्नो, सेसतिगे आउ चउसु दुहा॥४६॥

अर्थ—हवे स्थितिबंधना भांगा कहे छे—तिहां उत्कृष्ट १, जघन्य १, इतर अनुत्कृष्ट अजघन्य १, ए ४, च्यार भांगा छे. तिहां जे प्रकृतिनी जे उत्कृष्ट स्थिति छे ते बांधे ते उत्कृष्टबंध कहेवाय, उत्कृष्टबंध एक जीवने लागट रहे तो अंतर्मुहूर्त रहे ते माटे ए सादि अध्रुव छे, तथा जे प्रकृतिनी जघन्य स्थिति जे बांधे ते जघन्य बंधक कहीये. ते एकएक समयमात्र बांधे, एहने पिण सादि अध्रुव भेदज लागे, तथा उत्कृष्टी नही ते अनुत्कृष्ट, ते इहां उत्कृष्टोबंध सादि अध्रुव जे हुवे पर ए अर्थ इहां लीधो नथी. (टबामां लीधो नथी एम छे) इहां तो जघन्य बंधकथी बीजो बंध ते सर्व अजघन्यमें गवेष्यो छे, अने प्रथम अर्थ करीये तो पिण अनादि सूक्ष्मनिगोदीया जीवने सदा अजघन्य बंध छे. जे जघन्य बंध तो बादर एकेन्द्रीने छे, अथवा गुणाधिकने छे ते माटे ए भांगे ४, भेद भासे छे, सातकर्म (आउखा विना) अजघन्य स्थिति बांधेनो सादि एक १, अनादि २, ध ३, अध्रुव ४, ए च्यारभेदे बांधे. जे ७ कर्मनो जघन्य बंध १०, मे गुणठाणे, मोहनी कर्मनो जघन्य बंध नवमे गुणठाणे

अंत्य अध्यवसाय क्षपकश्रेणिने, अने उपशमश्रेणि ते क्षपकथी वमणी स्थितिबांधे, ते माटे अजघन्य बंधक छे, तेहने इग्यारमे आव्ये अबंध थयो, ते अध्रुव, पाछो पडी वळी बांधे ते सादि, ए गुणठाणे आव्यो नथी तेहने अनादि, अभव्यने ध्रुव भव्यने अध्रुव ए रीते जाणज्यो १, सर्व जीवने अजघन्य बंध ते ए गुणठाणे चढ्या पड्याने सादी, चडस्ये तेहने अध्रुव, तथा अभव्यने अनादि ध्रुव छे, तेथी एज सात कर्म उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य ए तीन भांगे सादि अध्रुव बंध छे, ए ३, ना बंधनो काल अल्प छे, तया आउखो कर्म उत्कृष्ट जघन्य, अजघन्य, ए ४, च्यारे भांगे स्थिति बांधे तो सादि अध्रुवकालज बांधे, जे कारणे भवमें आयु एकवार तथा अंतर्मुहूर्त सीम बंधाय ते माटे वे भेदज छे, शेष तीन उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट जघन्य १, अनुत्कृष्ट भांगे बांधे तो सादि अध्रुवकालसीम बांधे, जे कारणे जघन्यबंधनो एक समय काल छे, उत्कृष्टबंधनो १, समयकाल छे, अनुत्कृष्ट ते उत्कृष्ट पछी थाय ते माटे सादि अध्रव छे, उत्कृष्ट थी एक समये ऊणबांधे ते अनुत्कृष्ट बंध कहीये ए पिण उत्कृष्ट बंधक थया पछी बांधे ते माटे सादि अध्रुव लाभे, तथा जघन्यबंधक थइने एक समय अधिक अधिक बंधाय ते अजघन्य गणीये तो ॥ ४६ ॥

चउभेओ अजहन्नो, संजलणावरणनवगविग्घाणं ।
सेस तिगिसाइ अधुवो, तहचउहा सेसपयडीणं॥४७॥

अर्थ—अजघन्यबंध च्यार भेदे पामीये, संजलण च्यार ४, ज्ञानावरणी पांच, दर्शनावरणी ४, ए नव, अंतराय पांच, ए १८ प्रकृतिनी अजघन्य स्थिति च्यार ४, भेदे छे, जे ए १८ प्रकृतिनो जघन्यबंध नवमे, दसमे, गुणठाणे छे तेहथी बीजा जीव

सर्वे अजघन्यबंधक छे, तेहमां जे ए गुणठाणे चढी पड्या छे तेहने सादि अध्रुव छे, अभव्यने अनादि ध्रुव छे एहिज अढार प्रकृतिना शेष, **तिग**-शेष ३ भांगा सादि १, अध्रुव २, भेदे छे, भावना पूर्ववत् शेष १०२ प्रकृतिनी उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्य, ए च्यार ४ प्रकारनी स्थिति सादि अध्रुव भागे बंधाय, तिहां ७३ प्रकृति तो अध्रुव बंधिज छे. ते माटे किवारे बंधाये किवारे न बंधाये ते माटे सादि अध्रुव छे, २९ ध्रुवबंधि-मांहेली छे ते सदा बंधाय, पिण ए २९ नो जघन्यबंधक पिण एकेन्द्रीय छे, ते एकेन्द्रीयपणामे जघन्यबंध करे ते माटे जघन्य कर्या पछी अजघन्यबंध ते पिण सादि अध्रुव छे, ते माटे ए २९ प्रकृतिने सादि अध्रुव छे. ॥ ४७ ॥

साणाई अपुव्वते, अयरतो कोडि कोडिओ नहिगो, बंधो न हु हीणो नय, मिच्छे भविअयर सन्निंमि॥४८॥

अर्थ—हवे गुणठाणे स्थिति कहे छे. सास्वादन गुणठाणाथी मांडी अपूर्वकरण पर्यंत **अयर**-सागरोपम **अंतो**-कोडाकोडी एक काइक उणी स्थिति बांधे, एटले ए ७ गुणठाणे १ कोडाकोडी देशे ऊणी स्थिति बांधे, पिण **नहिगो**-अधिकी न बांधे, समकीतीथी देश विरति नवपल्य ओछी बांधे, तेथी सर्वविरति केटला सागर ओछी बांधे, तेथी अपूर्वकरण संख्याता सागरना सेंकडा ओछी बांधे, तथा मिथ्यात्व गुणठाणे अंत कोडाकोडीथी ओछी न बांधे, अनादि मिथ्यात्वी जघन्य अंतः कोडाकोडी, उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी बांधे ए मिथ्यात्वी भव्य तथा अभव्य संज्ञी आश्रयि कह्यो छे. ॥ ४८ ॥

जइ लहुबंधो बायर, पज्जअसंखगुण सुहुम पज्जाहिगो।
एसिं अपज्जाण लहू, सुहुमेअर अपज्जपज्जगुरु ॥४९॥

अर्थ--हवे ३६ बोलना स्थितिनो अल्पबहुल कहे छे. सर्वथी यती लहु-जघन्य स्थिति बंधके सूक्ष्मसंपराय चरमसमयी सर्वथी थोडी १ बांधे १ अंतर्मुहूर्त्त बांधे छे. तेहथी बादर पर्याप्तो जघन्य स्थितिबंधक असंख्यातगुणी बांधे, ए सागरना भागनो बंधक छे ते असंख्यातो काल छे ते माटे तेहथी सूक्ष्म एकेन्द्री पर्याप्तो जघन्यबंधक कांइक अधिकी बांधे, एहने थोडो काल वधे छे, एहज बे अपर्याप्ता लहु-जघन्यबंधकना बे बोल कहेवा. तेहथी बादर पर्याप्तो जघन्यबंधक स्थिति अधिकी बांधे ४, तेहथी सूक्ष्मअपर्याप्तो जघन्यबंधक अधिकी बांधे ५, तेहथी सूक्ष्म अपर्याप्तो उत्कृष्टबंधक अधिकी बांघे ६, तेहथी बादर अपर्याप्तो उत्कृष्ट स्थितिबंधक अधिकी बांघे ७, तेहथी सूक्ष्म अपर्याप्तो उत्कृष्टबंधक अधिकी बांधे ८, तेहथी बादर पर्याप्तो उत्कृष्टबंधक स्थिति अधिकी बांधे. एकेन्द्रीपणामे एज उत्कृष्टबंधक छे९. ॥ ४९ ॥

लहु बिअ पज्ज अपज्जे, अपज्जेयर बिअ गुरु हिगो एवं।
तिचउ असन्निसु नवरं, संखगुणो बिअ अमणपत्ते॥५०॥

अर्थ—लहु-जघन्यबंधक बेन्द्री पर्याप्तो संख्यातगुणी बांधे १० तेहथी बेन्द्री अपर्याप्तो जघन्यबंधक अधिकी बांधे, ११ तेहथी बेन्द्री अपर्याप्तो उत्कृष्टबंधक अधिकी बांधे. १२ तेहथी बेन्द्री पर्याप्तो उत्कृष्टबंधक अधिकी बांधे. १३ इहां एकेन्द्रीथी

बेन्द्रीने २९ गुणो बंध, ते माटे पेहेले बोले संख्यातगुणो कह्या पछी ते पल्यना असख्यातमे भागे वृद्धि छे, ते माटे अधिको बाधे. एवं-ए रीते ४ च्यार बोल कहेवा. तिहा १४ मे बोले तेन्द्री पर्याप्तो जघन्यबंधक स्थिति अधिकी बाधे, तेहथी १५ मे बोले तेंद्री अपर्याप्तो जघन्यबधक स्थिति अधिकी बांधे, तेहथी तेंद्री अपर्याप्तो उत्कृष्टबधक अधिकी बाधे, १६ तेहथी तेंद्री अपर्याप्तो उत्कृष्टबधक ते अधिकी बाधे. १७ तेहथी चौरेन्द्री पर्याप्तो जघन्यबधक अधिकी बाधे. १८ तेहथी चौरेंद्री अपर्याप्तो जघन्यबंधक अधिकी बाधे. १९ तेहथी चौरेन्द्री अपर्याप्तो उत्कृष्टबधक अधिकी बाधे २० तेहथी चौरेन्द्री पर्याप्तो उत्कृष्टबंधक अधिकी बांधे २१ तेहथी असंज्ञि पंचेंद्री पर्याप्तो जघन्य बं० सख्यात गुणबधक छे ते. २२ ए हजारगुणी बाधे ते चोरेन्द्रीथी नवगुणी साधिक थइ छे ते माटे तेहथी असंज्ञि पचेंद्री अपर्याप्तो जघन्यबधक अधिकी बांधे. २३ तेहथी असंज्ञि पचेंद्री अपर्याप्तो उत्कृष्टबंधक अधिकी बाधे. २४ तेहथी असंज्ञि पंचेंद्री पर्याप्तो उत्कृष्टी बधक अधिकी बाधे २५ नवर-विशेष एटलो फेर छे जे बेन्द्री तथा असज्ञि पर्याप्तो तेनो पाठ ते संख्यात गुणो कहेवो. ॥ ५० ॥

तोजइ जिट्ठो वंधो, सखगुणो देसविरयहस्सिअरो।
सम्मचउ सन्निचउरो, ठिइबधाऽणुकम सखगुणा॥५१॥

अर्थ—तेहथी प्रमत्त गुणठाणे वर्तमान ते मुनिपणामे उत्कृष्ट बंधक छे संख्यात गुणी स्थितिबाधे २६। केटलाएक सागर उणी एक कोडाकोडीना बधक छे, तेहथी देशविरति जघन्यबंधकनी सख्यातगुणी स्थिति वृद्धि तो थोडी छे ते पर

स्थितिस्थानक कषायनी चोकडीना वध्या, माटे असंख्यातगुणा वधे छे ते माटे असंख्यातगुणपणे लीधी:छे २७। तेहथी देशविरति उत्कृष्ट बंधक असंख्यात गुणी वांधे २८। तेहथी समकतीना च्यार बोल कहेवा, तिहां समकिति पर्याप्तो जघन्य बंधक संख्यातगुणी वांधे २९। तेहथी समकिति अपर्याप्त जघन्य बंधकने संख्यातगुणी बंधाय ३०। तेहथी समकिती अपर्याप्तो उत्कृष्ट बंधक संख्यातगुणी वांधे ३१। तेहथा समकिती अपर्याप्तो उत्कृष्टबंधक संख्यातगुणी ३२। तेहथी समकीति पर्याप्तो उत्कृष्ट बंधक अधिकी बांधे, तेहथी संज्ञी पर्याप्तो जघन्यबंधक संख्यातगुणी वांधे ३३। तेहथी संज्ञी अपर्याप्तो जघन्यबंधक संख्यातगुणी बांधे ३४। तेहथी संज्ञी अपर्याप्तो उत्कृष्टबंधक संख्यातगुणी बांधे, ३५। तेहथी संज्ञी पर्याप्तो उत्कृष्टबंधक संख्यातगुणी बांधे ३६। एम स्थितिबंध संख्यातगुणा छे ॥५१॥

सव्वाणवि जिट्ठठिई, असुहा जं साइ संकिलेसेणं।
इअरा विसोहिओ पुण मुत्तुं नरअमर तिरिआउं ॥५२॥

अर्थ—सर्व प्रकृतिनी **जिट्ठ**—उत्कृष्टी स्थिति ते अशुभ जाणवी, जे **साई**—ते अति संक्लेश परिणामे एटले जिननामनो बंध चोथा गुणठाणाथी मांडी आठमा गुणठाणा लगे छे, पिण चोथे स्थिति उत्कृष्टी बांधे तेमें शुद्ध परिणाम छे ते माटे जघन्य बांधे. ए सर्व प्रकृतिनी **ईअरा**—जघन्य स्थितिने विशुद्ध परिणामे बांधे, एक तीन प्रकृति **नर**—मनुष्यायु, देवायु, तिर्यंचायु, ए तीन प्रकृति मूकीने, एटले ए तीन प्रकृतिनी जघन्य स्थिति संक्लेश परिणामे बांधे, उत्कृष्टी स्थिति विशुद्ध परिणामे बांधे. ॥ ५२ ॥

सुहुमनिगोआइखणप्प-जोगबायर यविगलअमणमण
अपज्जलहु पढमदुगुरु, पजहस्सिअरो असखगुणो॥५३॥

अर्थ—हवे २८ बोलना योगबलनो अल्पबहुत्व कहे छे सूक्ष्मनिगोदादि प्रथम क्षणे प्रथम समये उपनो अपर्याप्त पणाथीज आव्यो तेहनो सर्वथी योगबल अल्प जाणवो. १ तेहथी बादर एकेंद्री अपर्याप्तो प्रथम समय उपनो अपर्याप्तो अपर्याप्तपणाथीज आव्यो, तेहनो सर्वथी योगबल अल्प जाणवो. १. तेहथी बादर एकेंद्री अपर्याप्तो प्रथम समय उपनो जघन्य-योगीनो योगबल असख्यात गुणो, २ तेहथी बेंद्री अपर्याप्ता जघन्ययोगीनो योगबल असंख्यातगुणो, ३ तेथी तेंद्री० ४ तेथी चोरेन्द्री०, ५ तेहथी **अमण**–असज्ञि अपर्याप्तानो जघन्य योगबल असंख्यातगुणो, ६ तेहथी **मणा**–सज्ञि अपर्याप्तानो जघन्य योगबल असंख्यातगुणो, ७ तेहथी **पढम**–पेहेला बे बोल गुरु–उत्कृष्टपक एटले सूक्ष्म अपर्याप्तानो उत्कृष्ट योगबल असंख्यातगुणो, ८ तेहथी बादर अपर्याप्तानो उत्कृष्ट योगबल असंख्यातगुणो, ९ सूक्ष्म पर्याप्त जघन्य योगीनो योगबल असंख्यातगुणो, १० तेहथी बादर पर्याप्त जघन्य योगीनो योगबल असंख्यातगुणो, ११ तेहथी सूक्ष्म पर्याप्त उत्कृष्ट योगीनो योगबल असंख्यातगुणो. १२ तेहथी बादर पर्याप्त उत्कृष्ट योगीनो योगबल असंख्यातगुणो. १३ ॥ ५३ ॥

असमत्ततमुक्कोसो, पज्जजहन्नियर एव ठिइठाणा ।
अपज्जेयर सखगुणा, परमऽपजबीए असखगुणा ॥५४॥

अर्थ—**असमत्त**—अपर्याप्त ५, नो उत्कृष्ट योगीनो योगवल असंख्यातगुणो. ते पछी त्रस ५. पर्याप्ता जघन्य योगीनो योगवळ असंख्यातगुणो, तेथी त्रसना ५, पर्याप्ता उत्कृयोगीनो असंख्यातगुणो योग छे ते कहे छे—चौदमे वोले अपर्याप्त वेंद्री उत्कृष्टयोगीनो योगवल असंख्यातगुणो १५, तेहथी अपर्याप्त चौरेन्द्रीनो उत्कृष्टयोग असंख्यातगुणो, १६. तेहथी अपर्याप्त असंज्ञिपंचेंद्रिनो उत्कृष्ट योगवल असंख्यातगुणो, १७ तेहथी अपर्याप्त संज्ञिपंचेन्द्रीनो उत्कृष्टयोग असंख्यातगुणो, १८ तेहथी पर्याप्त बेइंद्रिनो जघन्ययोग असंख्यातगुणो, १९ तेहथी पर्याप्त तेइन्द्रिनो जघन्ययोग असंख्यातगुणो, २० तेहथी पर्याप्ता चौरेन्द्रिनो जघन्ययोग असंख्यातगुणो, २१ तेहथी पर्याप्ता असंज्ञिपंचेन्द्रिनो जघन्ययोग असंख्यातगुणो, २२ तेहथी पर्याप्ता संज्ञिपंचेन्द्रिनो जघन्य योग असंख्यातगुणो, २३ तेहथी पर्याप्त बेन्द्रिनो उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणो, २४ तेहथी तेन्द्रिपर्याप्तो तेनो उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणो, २५ तेथी चौरेन्द्रि पर्याप्तानो उत्कृष्ट याग असंख्यातगुणो, २६ तेहथी असंज्ञिपंचेन्द्रि पर्याप्तानो उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणो, २७ तेथी संज्ञिपंचेन्द्रि पर्याप्तानो उत्कृष्ट योग असंख्यातगुणो २८. ए रीते स्थिति स्थानकनो अल्पबहुत्व २८ वोलनो जाणवो, वीर्यनी वृद्धिए स्थितिनी तीव्रमंदताना भेद पडे ते इहां लेज्यो.

अपर्याप्ताथी **इअर**—पर्याप्तानां स्थितिस्थानक असंख्यातगुण छे, इहां जीव भेद एकें स्थिति जघन्य मिथ्यात्वनी एकसागर पल्यने असंख्यातमे भागें ऊणी बांधे, पिण कोइक तीव्र बांधे, कोइक जीव मंद तथा मंदतर रीतें एक स्थितिस्थानकमें ते स्थिति वांधवाना अध्यवसाय स्थानक असंख्यात थाये. एहवा

एक जीवभेद सूक्ष्म अपर्याप्ताने बांधवाना अध्यवसाय स्थानक असंख्यात छे तेहथी सूक्ष्मपर्याप्ताना बंधाध्यवसाय संख्यातगुणा छे, तेथी बादर अपर्याप्ताना संख्यातगुणा छे, तेथी बेइन्द्रिय अपर्याप्ताना बंधाध्यवसाय असंख्यातगुणा छे, तेथी बेन्द्रिपर्याप्ताना बधाध्यवसाय सख्यातगुणा छे इम १४ जीवभेदें कहेता पण एटलो भेद जे बेइन्द्रि अपर्याप्ताना असंख्यातगुणाज. त्रसपणानो वीर्य तेहने वाध्यो ते माटे तथा इहा स्थिति अपेक्षाए पहेला (?) ॥ ५४ ॥

पइ खण मसखगुणविरिय, अपज्जपइठिइमसखलोगसमा ।
अज्झवसाया अहिया, सत्तसु आउसु असखगुणा ।५५

अर्थ—हवे जीवने क्षयोपशमी वीर्य जे उपजवाने प्रथम समये छे ते असंख्यातो छे. ते पछी पइखण-प्रतिसमये एटले समये समयमे असंख्यातगुणो वीर्य वध. पण अपर्याप्तावस्थासीम वीर्यवृद्धि जाणवी. एटले पेहेला समयथी बीजे समये असंख्यातगुणो वीर्य वधे, त्रीजे समये असंख्यातगुणो वीर्य वधे, अने वळी पइठिइ-प्रतिस्थितिए (स्थिते) अध्यवसाय असंख्याता छे, ते अलोकमध्ये लोक जेहवा असख्याता खड कल्पीये तेहना प्रदेश जेटला एक स्थितिस्थानक स्थितिवधना अध्यवसाय छे, ते ए सर्व जीवभेदें जाणज्यो. कषायना तरतमयोगें अध्यवसायना भेद जाणवा. ए अध्यवसाय अनंतजीवमा पण पामीये. अने कोइक वेळा असख्याता अध्यवसाय जीव रहित पिण पामीये. हवे सात कर्मनी जघन्य स्थिति बाधे तेहना

अध्यवसाय असंख्याता छे, अने एक समयाधिक बांधे तेहना पुंठली स्थितिना अध्यवसायथी कांइक अधिक जाणवा. इम तृतिय समयाधिकना अध्यवसाय अधिका इम वधारते २ उत्कृष्ट स्थितिस्थानकसीम अधिकाधिक कहेवा, आउखाकर्मना जघन्य स्थिति स्थानकथी समयाधिकना जे स्थितिस्थानक तेहना अध्यवसाय असंख्यातगुणा कहेवा, सर्व वर्त्ततो आउखो बांधे पिण आउखानी स्थिति थोडी तिणे स्थितिस्थानक थोडां अने कषायस्थानने वहेंचतां असंख्यातगुणा आवे, इम सात कर्मने पण स्थिति स्थानके करी कषायस्थानकनो अल्प वहुत्व कहेवो, हवे जे प्रकृति जेटला काल अवंध रहे ते प्रकृतिनो अवंधकाल कहे छे, तिहां ४७ प्रकृति तो ध्रुववंधि छे ते निरंतर वंधाये छे, तेथी बीजानी भावना करीए छे. ॥५५॥

तिरिनिरय ति जोयाणं, नरभव जुअ स चउ पल्ल तेसट्ठं
थावर चउ इग विगलाय–, वेसु पणसीइ सयमयरा ।५६

अर्थ—तिहां तिर्यंच ३, नरक ३, उद्योतनामकर्म ए ७ सात प्रकृतिनो उत्कृष्ट मनुष्यभवयुक्त पल्योपम च्यार अने एकसो तेसठ सागरोपम पर्यंत बांधे नही, तिहां भावना–कोइ युगलपणे तीन पल्योपम रही सौधर्म देवलोके एक पल्यने आउखे उपनो, तिहां समकित रहीत, ते माटे ए प्रकृति, ७ न वांधी तिहांथी मनुष्यपणे समकित सहित विरतिपणे रही अच्युतनो २२ सागरनो आउखो वांधी देवलोक गयो, तिहांथी मनुष्य वळी बारमे देवलोक, तिहांथी मनुष्य, वळी ३१ सागरने आउखे नवमे ग्रैवेयके, तिहांथी मनुष्य, ३३ सागरने आउखे अनुत्तर विमाने,इम एकसोत्रेसठ १६३ सागर पल्य ४च्यार केटलाएक मनुष्यभव अधिककालसीम ए सात प्रकृति न बांधे.

तथा थावर ४, एकेन्द्रिजाति १ विगल ३ आतपनाम ए नव प्रकृति एकसो पच्यासी १८५ सागर पल्य ४ केटलाएक मनुष्यभव अधिककालसीम न बांधे. तिहां भावना-जे छठी नर्के नारकीपणे २२, सागरने आउखे समकीतीपणे रही त्यांथी चवी मनुष्य थयो ते युगलीयो पल्य ३ ने आउखे, तिहाथी पल्य १ ने आउखे देवता, तिहांथी मनुष्य, तिहाथी अच्युत, एम एकांतरे ३ वार मनुष्य, ३ वार अच्युतें जइ मनुष्य थइ ३१ सागरने आउखे नवमाग्रैवेयके जाय. तिहाथी मनुष्य थइ ३३ सागरने आउखे विजयादिविमाने जाय. इम सर्व भवें १८५ एकसो पंच्यासी सागर, पल्य ४ नरभव अधिककाल सीम ए नव प्रकृति जाणवी. ॥ ५६ ॥

अपढमसंघयणागिइ, खगई अण मिच्छ दुभगथीण तिग।

नियनपु इत्थि दुतीस, पणिदिसु अबध ठिइ परमा।५७

अर्थ—पेहेला संघयण विना पाच संघयण, पेहेला संस्थान विना पाच संस्थान, अशुभविहायोगति १, अनतानुबंधी ४, मिथ्यात्वमोहिनी १, दुभंग ३, थीणद्धी ३, नीचगोत्र १, नपुसकवेद १, स्त्रीवेद १, ए पचीस प्रकृति १३२ सागर, पल्य ४ नरभव अधिककालसीम न बांधे तिहा कोइक युगलिओ पल्य ३ आयुवालो ते देवता पल्य १ ने आउखे उपजे, ते मनुष्य थइ तीनवार बारमे देवलोकें २२ सागरने आउखे जाय, ए ६६ सागर थाय. वली मनुष्यभव करी विजयादिविमाने जाय, इम सर्व भवे एकसोबत्रीस सागर पल्य ४ मनुष्यभव प्रमाण अधिककाल थाय. ए सर्व पचेन्द्रीपणे रहे ते जोवने ए प्रकृति ४१ नो अवध स्थिति **परमा**—उत्कृष्टी कही जघन्ये सर्वनो अबधकाल एक समय १ नो छे, शेप प्रकृतिनो उत्कृष्ट काल

गवेख्यो नथी ते नीयमित नथी ते माटे इम धारवो. ॥५७॥

विजयाइसुगेविज्जे, तमाइ दहिसय दुतीस तेसट्ठं ।
पणसीइ सयय वंधो, पल्लतिगं सुरविउव्वि दुगे ॥५८॥

अर्थ—**विजयाइसु**—बे भवे विजयादिविमाननी, आदि शब्दथी तीन भव अच्युतना भेळा करीये तो १३२ सागर कालमान थाय, ते बारमाना २ भव कर्या पछी १ भव नवमा ग्रैवेयकनो थाय तो एकसोत्रेसठ सागरनो मान थाय, अथवा **तमाइ**—तमा ६ छठी नरकथी आदि भव मांडी अच्युतना ३ भव, ग्रैवेयकनो १ भव विजयादिकना बे भव, इम गवेखायतो १८५ एकसोपंच्यासी सागरमान काल थाय. ए रीते सर्व भावज्यो. हवे ७३ अध्रुववंधोनो **सतत**—निरंतर वंधकालनो मान कहे छे—तिहां **सुर**—देवदुग, वैक्रियदुग, ए ४ प्रकृतिनो पल्य ३ तीन सीम निरंतर वंधाये, जे ३ पल्यने आउखे युगलिया तेहने बीजी गति, जावो नथी ते माटे निरंतर ए ४ प्रकृति बांधे. ॥ ५८ ॥

समयादसंखकालं, तिरिदुगनीएसुआउअंतमुहू ।
उरलि असंखपरट्टा, सायट्ठिइ पूव्वकोडूणा ॥५९॥

अर्थ—**समया**—जघन्ये १ समय उत्कृष्ट असंख्यातो-काल तिरिदुग २, नीचगोत्र, ए तीन प्रकृति निरंतर बंधाय, जे कारणे सातमी नरकनो नारकी ३३ सागर सीम ए प्रकृति निरंतर बांधे, जे मिथ्यात्वी होय तेहने बीजी गति, उंच-गोत्रनो बंध नथी, आउखो जघन्ये तथा उत्कृष्टे अंत मुहूर्त्त सीम निरंतर बांधे जघन्य मुहूर्त्तथी उत्कृष्ट मुहूर्त्त मोटो

जाणवो, औदारिक शरीर, असंख्याता पुद्गल परावर्त्त सुधी निरंतर बांधे, सूक्ष्म, बादर, निगोद प्रत्येक, एकेन्द्रि मळीने गवेखी जोज्यो. जासीम (ज्या सुधी) वेदनीयनो बंध तांसीम अंतर्मुहूर्तथी अधिककाल ए बे माहेली प्रकृति बंधाय नहीं परावर्त्तन छे ते माटे, सातवेदनी देशेउणी पूर्वकोडि सीम निरंतर बांधे ए सयोगी केवली गुणठाणानी अपेक्षाए छे ॥ ५९ ॥

जलहिसय पणसीयं, परघुस्सासे पणिदितसचऊगे ।
बत्तीस सुहविहगइ, पुम सुभगतिगुच्च चउरंसे॥६०॥

अर्थ—पूर्वे रीते १८५ एकसोपंच्यासी सागर, पल्य ४ नरभव अधिक कालमान सीम पराघात, उश्वासनाम, पचेन्द्रि जाति, त्रसच्यार ४, (त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक) एम ए ७ प्रकृति निरंतर बंधाये. तथा आगळ कहेशे ते प्रकृति एकसोबत्रीस कालमान निरंतर बांधे. १३२ सागरोपम पूर्वोक्त रीते निरंतर बांधे शुभविहायोगति १, पुरुषवेद १, सुभगत्रिक ३, उचगोत्र १, समचौरंस १. ॥ ६० ॥

असुहखगइ जाइ आगिइ, संघयणाहारनिरयुजोयदुग
थिरसुभजसथावरदस, नपुइत्थीदुजुअलमसाय ॥६१॥

अर्थ—अशुभविहायोगति १, एकेन्द्रि, विकलत्रिक, ए जाति ४ अशुभ संस्थान पांच, अशुभ संघयण पांच आहारकद्विक, नरकद्विक. २ उद्योत, आतप. २, स्थिरनाम १, शुभनाम १, जसनाम १, थावरदसक १०, नपुंसकवेद १, स्त्रीवेद १, दुजुयल–हास्य, रति, २. अरति, शोक, २ ए ४ असाता वेदनीय १. ॥ ६१ ॥

समयादंतमुहुत्तं, मणुदुगजिणवइरउरलुवंगेसु,
तेत्तीसयरा परमो, अंतमुहू लहु वि आउ जिणे ॥६२॥

अर्थ—ए सुडतालीस (टवामां ४१ लखी छे) प्रकृति जघन्य एक समये बांधे, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तमान काल बांधे, मनुष्य दुग–मनुष्य गति, मनुष्यानुपूर्वी २, जिननाम १, वज्रऋषभनाराच संघयण १, औदारिक उपांग १, ए पांच प्रकृति तेत्रीस सागरोपम सीम निरंतर बांधे, समकिती सर्वार्थसिद्ध विमाने रह्यो निरंतर बांधे, ते अपेक्षाए उत्कृष्ट काल जाणवो, जघन्य बंधकाल आउखा ४, जिननाम १, ए पांच प्रकृति, जघन्य पण एक अंतर्मुहूर्त्त कालमान जाणवो. शेष प्रकृति ६८ नो जघन्य बंधकाल एक समय जाणवो. ॥ ६२ ॥

ए स्थितिबंध अधिकार पूरो थयो. हवे रसबंध अधिकार कहे छे. इति सततबंधः द्वा० १८.

तिव्वो असुहसुहाणं, संकेसविसोहिओविवज्जयओ
मंदरसो गिरि महिरय, जलरेहा सरिसकसाएहिं ॥६३॥

अर्थ—**तिव्वो**–तिव्र उत्कृष्टो अशुभनो तीव्ररस संक्लेश परिणामे बांधे, शुभनो तीव्ररस विशुद्ध परिणामे बांधे, विपर्ययपणे मंदरस बांधे, जिहां अशुभनो तीव्ररस बांधे तिहां शुभनो मंदरस बांधे, जिहां शुभनो तीव्र बांधे तिहां अशुभनो मंदरस बांधे, इहां दृष्टांत जे अनंतानुबंधि कषाय गिरिरेखा समान तेथी चोठाणीयो रस, तथा अप्रीयाख्यान कषाय महीरेखा समान एथी त्रिठाणीयो रस, प्रीयाख्यानी रजरेखा समान एथी बेठाणीयो रस, संज्वलननो जलरेखा समान तेथी

एकठाणीयो रस जाणवो. ए दृष्टाते जाणवो ॥ ६३ ॥

चउठाणाई असुहो, सुहन्नहा विग्घ देसघाइआवरणा।
पुम सजलणिग दुति-चउट्ठाणरसासेस दुगमाई॥६४॥

अर्थ—चउट्ठाणि–चोठाणीयादि (प्रमुख) रस अशुभनो तेथी अन्यथा बीजी रीते शुभ, एटले जिहां अशुभनो चोठाणीयो तिहा शुभनो बेठाणीयो, जिहा अशुभनो त्रिठाणीयो तिहा शुभनो बेठाणीयो, जिहा अशुभनो बेठाणीयो तिहा शुभनो त्रिठाणीयो, जिहा अशुभनो एकठाणीयो तिहा शुभनो चोठाणीयो एम भाववु.

तिहां विग्घ–पांच अतराय, तथा देशघाती आवरण ज्ञानावरणी ४, दर्शनावरणी ३, ए सात, पुरुषवेद १, संजलणा-कषाय ४ ए १७ प्रकृति तेनो एकठाणीयो रस बाधे, तथा बेठाणीयो बाधे, तथा त्रिठाणीया बांधे, चोठाणीयो बांधे, शेष–बाकी रहि जे १०३ प्रकृति, तेहनो दुगमाइ–बे ठाणीयो त्रिठाणीयो, चोठाणीयो, ए ३ जातिनो रस बाधे. ॥ ६४ ॥

निंवुइक्खुरसो सहजो, दु तिचउ भाग कढिइक्क भागतो।
इगठाणाई असुहो, असुहाण सुहो सुहाण तु ॥६५॥

अर्थ—अशुभ प्रकृतिनो रस लींबडाना रससमान जाणवो तथा शुभ प्रकृतिनो रस इक्षु सेलडीना रससमान जाणवो, तिहां सहज मूलगो रस ते इकठाणीयो जाणवो, ते मध्ये बे भाग कढीय–उकाल्यो एटले अर्द्ध उकाल्यो, अर्द्ध रह्यो ते बेठाणीयो रस जाणवो. तथा तिठाणीयो रस ते तीन भाग

कढी उकाळ्यो ने १ भाग रह्यो ते तिठाणीयो रस, अने चउभाग—जे मध्ये च्यार ४ भाग उकाळ्यो अने एक भाग रह्यो ते चोठाणीयो रस जाणवो, ए अशुभ कर्मनो जेम रस वधे तेम अशुभ थाय, शुभ कर्मनो रस शुभ थाय, ए सर्व अशुभ कषाये अशुभ रस बांधे, शुभ कषाये शुभ रस बांधे. ॥ ६५ ॥

तिव्वमिग थावरायव, सुरमिच्छाविगल सुहुम निरय-तिगं।
तिरिमणुआउ तिरि नरा, तिरि दुग छेवट्ठ सुरनि-रया ॥६६॥

अर्थ——हवे उत्कृष्ट रसबंध स्वामी कहे छे—तीव्र उत्कृष्टो रस एकेन्द्री जाति १, थावर नाम १, आतप नाम, ए तीन प्रकृतिनो सुरमिछ्छा—मिथ्यात्वी देवता उत्कृष्ट रस बांधे, तथा विगल ३, सूक्ष्म ३, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण ए ३, नरकगति १, नरकानुपूर्वी २, नरकायु ३, ए नरकत्रिक तथा तिरिआयु १, मनुष्यायु, १, ए ११, प्रकृतिनो उत्कृष्टो रस तिर्यंच तथा मनुष्य मिथ्यात्वी बांधे, तथा तिर्यंच दुग—तिर्यंच गति १, तिर्यंचानुपूर्वि ए बे अने छेवठो संघयण ए ३ प्रकृतिनो उत्कृष्ट रस देवता, नारकी मिथ्यात्वी बांधे ॥ ६६ ॥

विउवि सुराहारग दुग, सुखगइ वन्न चउतेयजिण सायं
समचउपरघा तसदस,पणिदि सासुच्च खवगाउ॥६७॥

अर्थ——वैक्रिय दुग—वैक्रिय शरीर १, वैक्रिय उपांग २, देवद्विक २, आहारकद्विक २, शुभ विहायोगति १, वर्णादि

-४, तैजस शरीर १, कार्मण १, अगुरुलघु १, निर्माण १, जिननाम १, सातावेदनीय १, समचौरस संस्थान १, पराघात १, त्रसनो दशको १०, पंचेन्द्री जाति १, श्वासोश्वास १, उच्चगोत्र १, ए बत्रीस ३२ प्रकृतिनो उत्कृष्ट रस **खवगाउ**–क्षपकश्रेणिमा बांधे तिहां सातावेदनीय १, उच्चगोत्र १, यशनाम १, ए ३ तीन प्रकृतिनो सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे उत्कृष्ट रस बांधे, शेष २९ प्रकृतिनो उत्कृष्ट रस अपूर्वकरण गुणठाणे बांधे. ॥६७॥

तमतमगा उज्जोय, सम्मसुरा मणुय उरलदुग वइर अपमत्तो अमराउ, चउगइमिच्छा उ सेसाणं ॥६८॥

अर्थ—उद्योतनामकर्मनो उत्कृष्टरस **तमतमगा**–तमतमा नरकना नारकी बांधे, मनुष्यदुग २, औदारिकदुग २, वज्रऋषभनाराचसंघयण १, ए पांच प्रकृतिनो उत्कृष्ट रस समकिती **सुरा**–देवता उत्कृष्ट रस बांधे, तथा **अमराउ**–देवतानो आउखो उत्कृष्टरसे अप्रमत्त गुणठाणे बांधे, शेष ६४ प्रकृतिनो उत्कृष्ट रस च्यार ४ गतिना मिथ्यात्वी तीव्रकषायी बांधे. ए उत्कृष्ट रसना स्वामी कह्या. ॥ ६८ ॥

थीणतिग अण मिच्छं, मंदरसं संजमुम्मुहो मिच्छो। बियतिय कसाय अविरय, देसपमत्तो अरइ सोए॥६९॥

अर्थ—हवे जघन्य रसना स्वामी कहे छे–थिणद्धी तीन निद्रानिद्रा १, प्रचलाप्रचला २, थिणद्धी ३, ए तीन, अनंतानुबंधी ४, मिथ्यात्वमोहनी १, ए आठ प्रकृति मंदरसे संयमने सन्मुख मिथ्यात्वी बांधे, एह प्रकृतिना बंधकमें विशुद्ध परिणामी एहिज जीव छे, **बियकषाय**–बीजो कषाय **अविरय**

—अविरति समकीती बांधे, त्रीजो कषाय जघन्य रसे देशविरति बांधे, अरति, शोक, ए बे प्रकृति प्रमत्त गुणठाणे मुनि जघन्यरसे बांधे. ॥ ६९ ॥

अपमाइ हारगदुगं, दुन्निद्द असुव न्न हास रइ कुच्छा।
भयमुवघायमपुव्वो, अनियट्टी पुरीससंजलणे ॥७०॥

अर्थ—अप्रमत्त गुणठाणाना आदि समये आहारकदुग जघन्यरसे बांधे, बे निद्रा, निद्रा १, तथा प्रचला २, अशुभवर्णादि ४, हास्य, रति, दुगंछा, भय, उपघात, ए इग्यार ११ प्रकृतिनो अपूर्वकरण गुणठाणे जघन्यरस बांधे. पुरुषवेद, संजलणा ४, ए पांच प्रकृति अनिवृत्तिवादर गुणठाणे जघन्यरसे बांधे. ॥ ७० ॥

विग्घावरणे सुहुमो, मणुतिरिआ सुहुम विगलतिगआउ
वेउव्वि छक्कममरा, निरया उज्जोय उरलदुगं ॥७१॥

अर्थ—विग्घ—अंतराय पांच, आवरण—ज्ञानावरणी पांच, दर्शनावरणी ४, ए ९, एम बधी मळी १४, चौद प्रकृतिनो **सुहुमो**—सूक्ष्मसंपराय गुणठाणे जघन्य रस बांधे, तथा सूक्ष्मत्रिक ३, विकलत्रिक ३, आउखां ४, वैक्रियछक—देवद्विक २, नरकद्विक २, वैक्रियद्विक २, ए ६, छ मली सर्व १६ प्रकृति **मणुतिरिय**—मनुष्य ने तिर्यंच जघन्यरसे बांधे, उद्योतनाम, औदारिक २, **अमरा**—देवता **निरया**—नारकी जघन्य रसे बांधे. ॥ ७१ ॥

तिरिदुग निअं तमतमा, जिण मविरय निरयविणिग थावरयं।
आसुहु मायव सम्मो, वसाय थिर सुह जसा सियरा७२

अर्थ—तिर्यंचद्विक २, नीचगोत्र १, ए ३ प्रकृतिनो जघन्य रस तमतमानारक ७ मीना नारकी वांधे, जिननामकर्मनो जघन्य रस अविरति समकीती वांधे, एकेन्द्री जाति थावरनामकर्म, नरकगतिविना तीन गतिना जीव जघन्य रसे वांधे, आतपनामकर्म आग्नुहुमा–सौधर्म देवलोक पर्यंतना देवता, जघन्य रसे वांधे, सौधर्म कहेवाथी इशान पिण ग्रहवो, **सम्मोवसय**–सातावेदनी १, थिरनाम १, शुभनाम १, जश १, ए ४, प्रकृति समकिती पडतो जघन्यरसे वांधे **सियरा**–एहथी इतर असाता, अथिर, अशुभ, अजश, ए ४, प्रकृति समकिती चढतो होय त्यारे जघन्यरसे वांधे ॥ ७२ ॥

तस वन्न तेअचउ मणु, खगइ दुग पणिदि सास परघुच्चं
संघयणा गिइ नपु थी, सुभगिअर ति मिच्छचउ गइआ ॥७३ ॥

अर्थ—त्रस, वादर, प्रत्येक, ए ४, तथा वर्णादि ४, तैजस, कार्मण, अगुरुलघु, निर्माण, ४ **मणुअदुग**–मनुष्यद्विक २, **खगईदुग**–शुभ, तथा अशुभविहायोगति, पचेन्द्रीनीजाति, श्वासोश्वास, परापात, उच्चैर्गोत्र, सत्रयण ६, सस्थान ६, नपुंसकवेद १, स्त्रीवेद १, सुभगत्रिक ३, **इअर**–दुर्भगत्रिक ३, एव ४० चालीस प्रकृति **मिच्छ**–मिथ्यात्वी च्यार गतिना जघन्य रसे वांधे इहां भावना कहीये छीये–शुभ प्रकृति जिहां प्रथमथी वंधाय तिहां उत्कृष्टरसे वाधे, अने अशुभप्रकृति प्रथम वधाये तिहां उत्कृष्टरसे वांधे. अने जिहां खपे तिहां जघन्य रसे वांधे, ए रीते विचारवो. ॥ ७३ ॥

चउ तेय वन्न वेअणि, अनामणुक्कोस सेस धुवबंधी
घाईणं अजहन्नो, गोए दुविहो इमो चउहा ॥७४॥

अर्थ--हवे उत्कृष्ट रसबंधना भांगा कहे छे-**चउतेय** तैजस च्यार ४ तैजस, कार्मण, अगुरुलघु, निर्माण, ए ४, तथा वर्णादि ४, च्यार ४, वेदनीय शब्दे साता वेदनीय, नाम कहेतां जसनाम **अणुक्कोस**-अनुत्कृष्ट बांधे तो **चउहा**-च्यारभेदे-सादि १, अनादि २, ध्रुव ३, अध्रुव ४, ए च्यार भेदे बांधे. तिहां ए प्रकृतिनो उत्कृष्टरस क्षपकश्रेणिए चढतो जीव बांधे, तथा बीजा जीव सर्व अनुत्कृष्टरस बांधे, ते अभव्यने अनादि ध्रुव छे. भव्यने घोलना परिणामे सादि छे, अने अबंध थशे ते माटे अध्रुव छे, ने घाती ध्रुवबंधी जे १९ ओगणीस अने मोहनी पांच, ज्ञानावरणी पांच, दर्शनावरणी ९, अंतराय पांच ए ३० नो, अजघन्यरस ४, च्यारेभेदे बंधाय, इहां पण जघन्यथी बीजो ते सर्व अजघन्य, ते ए ३८ प्रकृतिनो जघन्य बंध जिवारे प्रकृतिनो बंध टळे तेहथी प्रथम समये छे, ते तो एक समये बंध छे, तेहथी पहेलां अजघन्यरस बंध छे, ते अभव्य ने अनादि ध्रुव छे, भव्यने घोलना परिणामे सादि छे, अने अबंध थये अध्रुव छे, तथा गोत्रकर्ममध्ये उच्चगोत्रनो अनुत्कृष्टरस सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, पूर्वनीपेरे जाणवो, नीचगोत्र अजघन्यरसे सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, ए च्यार ४ भेदे छे, घातीनीपेरे भावना करवी. तथा इहां पयडीने आशये अर्थ लिखीये छीये-जे वेदनीय नामकर्म ए मूळकर्मनी अपेक्षाये अनुत्कृष्ठ रस च्यार ४ प्रकारे कहेवो. **पण**-उत्तर प्रकृतिमां वर्णादि ४, तैजस च्यार ४, ए आठनो अनुत्कृष्टरस

सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव, कहेवो, ध्रुवबंधी छे ते माटे. पण जशनाम साता वेदनीयना कोई भांगे चार ४, प्रकार न कहेवा अध्रुव बंधी छे ते माटे. बे सादि, अध्रुवपणोज पामीये, इम गोत्र कर्मनो पिण मूळकर्मनी अपेक्षाये चार ४, भेद कहेवा पिण उच्चगोत्र, नीचगोत्र, ए बे अध्रुवबंधी छे ते माटे सादि अध्रुव बे भेदे पामीये इम जाणवो, एटले सात मूळकर्मना चार भेद कह्या इम जाणज्यो. ॥ ७४ ॥

सेसम्मि दुहा (अनुभागबंधो समत्तो) इग दुग,
णुगाइजाअभवणंत गुणिआणु।
खंधा उरलोचिअवग्गणाउ, तह अगहणंतरिया ॥७५॥

अर्थ—**सेसम्मि**-तैजसादि १०, प्रकृतिनो उत्कृष्ट, जघन्य, ए तीन ३, भागे रस बांधे, ते दुहा सादि, अध्रुव, ए बे भेदे बांधे, जे एहनो बंधकाल अल्प छे ते माटे, तथा घाती ३८ नो उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्यरस, सादि, अध्रुव बे भेदे बंधाये. तथा उच्चगोत्रनो, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्यरस सादि अध्रुव बे प्रकारे बंधाय छे, तथा नीचगोत्रनो उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट, जघन्य ए तीन भागे रस बांधे ते सादि अध्रुव बांधे. तथा शेष प्रकृति ७२ नो जघन्य, अजघन्य, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट ए च्यारे ४, प्रकारनोरस ते सादि, अध्रुवभेदे बांधे, इहां पयडीने आशये शेषप्रकृति ७४ ग्रहे छे, गोत्रनी प्रकृति पिण अध्रुव बंधी छे ते माटे. तथा उपघात १, ध्रुवबंधी छे, परं ए प्रकृतिवर्ने ध्रुवबंधी छे ते माटे ए **अनुभाग** रसबंधनो अधिकार कह्यो.

हवे प्रदेशबंध अधिकार कहे छे-तिहां प्रथम वर्गणानु स्वरुप कहे छे-**इग**-एकपरमाणु **दुग**-बेपरमाणुआनो स्कंध, इम

त्र्यणुक, इम संख्याताणुक, असंख्याताणुक, अनंतापरमाणु मिळे ते अभव्यथी अनंतगुणा मिळे जे खंध नीपजे तिवारे **उरलो च्चिअ**–औदारिकने उचित कहेतां ग्रहेवा योग्य वर्गणा जघन्य थाय, **तह**–तिमहीज अंतरित–एथी पाछली ते सर्व अग्रहण जाणवी. ए औदारिक वर्गणा वादर वीसगुणी छे. ॥ ७५ ॥

एमेव विउव्वा हार, तेय भासा णुपाण मण कम्मे ।
सुहुमा कमावगाहो ऊणूणंगुल असंखंसो ॥ ७६ ॥

अर्थ—**एमेव**–इमही **विउव्व**–वैक्रिय वर्गणा, बीजी २, अने त्रीजी आहारक वर्गणा ३, तेजस वर्गणा ४, भाषावर्गणा ५, श्वासोश्वासवर्गणा ६, मनोवर्गणा ७, कार्मणवर्गणा ८, ए आठवर्गणा **कमा**–अनुक्रमे–सूक्ष्म छे–एटले औदारिकथी वैक्रिय सूक्ष्म, भाषाथी उश्वास सूक्ष्म, उश्वासथी मन सूक्ष्म, मनथी कार्मण सूक्ष्म जाणवी, अवगाहना एक वर्गणानी अंगुलने असंख्यातमे भागे छे, एकथी बीजी वर्गणानी तेहथी ऊंणी अवगाहना छे, एक एक परमाणु वधारतां जे औदारिक जघन्य ग्रहणयोग्य वर्गणा तेहने अनंतमे भागे जेटला परमाणुआ तेटला परमाणुआ वधे, तिवारे औदारिक उत्कृष्ट ग्रहणयोग्य वर्गणा थाय, ते वर्गणामध्ये एक परमाणु वधे ते वर्गणा औदारिकने मोटा पडे, वैक्रियादिकने न्हाना पडे ते माटे अग्रहणयोग्य जाणवी, इम औदारिक उत्कृष्ट ग्रहणयोग्य वर्गणाथी अनंतगुणा परमाणु वधे एहवो जे खंध ते वैक्रियनी जघन्य ग्रहण योग्य वर्गणा जाणवी. ते वैक्रिय जघन्य ग्रहणयोग्य वर्गणा एक एक परमाणुए वधतां (वधारतां) जिवारे वैक्रिय जघन्य वर्गणाथी अनंतमा भाग जेटला परमाणुआ वधे ते वैक्रीयने उत्कृष्ट ग्रहणयोग्य वर्गणा

थाये. तेहथी उपरांत ते अग्रहणयोग्य जाणवी. ते वैक्रिय उत्कृष्ट ग्रहण वर्गणाथी अनंतगुण परमाणुआ वधे, तिवारे आहारकनी जघन्य ग्रहणयोग्य वर्गणा थाये. आहारक जघन्य ग्रहणयोग्य वर्गणाथी अनतमे भांगे वधे तिवारे आहारकनी उत्कृष्ट ग्रहणयोग्य वर्गणा थाये, ते जिवारे अनतगुणी वधता साम अग्राह्य पछी तैजसनी ग्रहणयोग्य थाये, ए रीते ते कार्मणपर्यंत वर्गणा कहेवी ए मध्ये औदारिक १, वैक्रिय २, आहारक ३, तैजस ४, ए च्यारे, वर्गणा बादर बीसगुणी छे, अने भाषा, उश्वास, मन, कार्मण, ४ ए च्यार वर्गणा सूक्ष्म, सोलगुणी छे, स्पर्श-रुक्ष, स्निग्ध, शीत, उष्ण, ए ८ छे शेष ४ नथी. तैजसवर्गणा किहां-एक सुक्ष्म कही छे ॥ ७६ ॥

इक्किक्कहियासिद्धा-णतसो अतरेसु अग्गहणा ।
सव्वत्थ जहन्नुचिया, नियणतसाहिआ जिट्ठा॥७७॥

अर्थ—जे वर्गणा मोटी थाये ते पिण सिद्धने अनंतमे भागे जेटला परमाणुआ थाये एक वर्गणाना, एम अनतीवर्गणा जे एक समयमा अनत ममाण दलिक थाय एह अनंता दलिक एक समय मध्ये जीव ग्रहण करे, ग्रहणने आंतरे विचाले ते अग्रहण जाणवी, कार्मण उत्कृष्ट थाय पिण अधिका ते अग्रहण जाणवा. सर्व जघन्य वर्गणाथी निय-पोताने अनंतमे अंशे अधिक ते उत्कृष्ट वर्गणा जाणवी. ॥ ७७ ॥

अतिमचउफास दुगंध, पंचवन्नरसकम्मखधदल ।
सव्वजियणतगुणरस, अणुजुत्त मणतयपएसं ॥७८॥

अर्थ—हवे कर्मपणे जे परमाणुआ लेवराये तेहनो स्वरुप कहे छे-अंतिम छेहेला जे च्यार स्पर्श-टाढो, उन्हो, लूखो,

आवे, शेष रही जे ते जेटली देशघाती बंधाती हुवे तेटला भाग पडे, अंतरायने सर्वघाती नथी, तिणे एहना ५ भाग पडे. नामकर्मनो भाग जे काले २३ थी ३१ सुधीना बंधस्थानमां जेटली प्रकृतिनुं बंधस्थान वर्ते तेटला भाग पडे, तेमां बंधन संघातनने शरीर नामकर्ममांथी भाग मले, तथा वर्णादि मूल प्रकृतिना भागमां आवेलां दलिक ते पोतानी उत्तर प्रकृतिमांज वहेंचाय. कारणके एक समये सर्व वर्णगंधादि बंधाय छे. तथा गत्यादि पींड प्रकृतिओना भागमां आवेलुं दलिक ते सर्व एकेक प्रकृतिनुज होय, कारणके एक समयमां गत्यादि एकज प्रकृतिमां बंधाय छे. तथा गोत्र वेदनीयने आयुष्य ए त्रण मूल कर्मनो भाग बंधाती एकेक प्रकृतिनेज मळे. ए सर्व वहेंचण जे समये बांधे तेज समये करे छे एटले बंधसमयेज वहेंचे छे ते सर्व कार्य एक समये थाय छे.

सम्म देस (दर) सव्वविरई, उअणविसंजोअ दंस खवगेअ।
मोह सम संत खवगे, खीण सजोगीअर गुणसेढी८२

अर्थ—हवे ११ श्रेणि कहे छे—तिहां प्रथम **सम्म**—समकितथी श्रेणि १, बीजी देशविरतिनी श्रेणि २, त्रीजी **सव्वविरइ**—सर्व विरतिनी श्रेणि ३, चोथी **अण**—अनंतानुबंधो सत्तामांथी काढवा खपाववानी ते श्रेणि ४, पांचमी **दंस** दर्शनमोहनी ३ खपाववा रूप श्रेणि ५, तथा छट्ठी ते मोहनीनी २१ प्रकृति शमाववारुप आठमागुणठाणाथी दसमाना अंतलगें मोहशमरुप श्रेणि ६, सातमी सर्व मोह उपशमी रह्यो एहवी ११ गुणठाणारूप श्रेणि ७, आठमी **खवग**—मोहनीनी २१

प्रकृति खपाववारुप आठमाथी दसमापर्यंत श्रेणि ८, नवमी सर्वमोह खप्यो ते रुप क्षीणमोह गुणठाणारुप श्रेणि ९, दशमी सयोगीकेवली तेरमागुण ठाणा रुप श्रेणि १०, इग्यारमी अयोगीकेवलीयें चौदमा गुणठाणारुप श्रेणि ११ ए इग्यारे श्रेणि जाणवी. ॥ ८२ ॥

गुणसेढी दलरयणा णुसमयमुदया दसखगुणणाअे।
अेअगुणा पुण कमसो, असखगुण निज्जरा जीवा।८३।

अर्थ—गुणसेढी-गुणश्रेणि ते दलरचना कहीये, दलनो पहेंचवो एटले दलसंबधपणें हतो ते चल करी जुदा जावा योग्य करवा ते दलरचना कहीजे, तथा श्रेणिमध्ये जे दल उदय आवे ते प्रथम समयथी बीजे समये असंख्यातगुणा दल उदय करे अने श्रेणि वर्तते जीवने ज्ञानादिकने असख्यात गुणा वधारे निवारण थाये, वळी श्रेणि चढयो जीव प्रतिसमयें असख्यातगुण निर्जरा करे, इम श्रेणि पेहेलीथी बीजीए असंख्यातगुणी निर्जरा थाय, इम सर्वश्रेणिमां जाणज्यो. हवे गुणठाणानो अंतर कहे छे—१४ चौद गुणठाणामे बारमो, तेरमो, चौदमो गुणठाणो जीव एकवार पामे, बीजीवार कोइ जीवने स्पर्शवो न पडे, तिणे तेहने अनर न कहेवाये, अने ११ गुणठाणा एक जीव अनेकवार पामे ते माटे ते इग्यार गुणठाणानो अंतर कहुंछुं. ॥ ८३ ॥

पलियासखसमुहू, सासणइअरगुणअतरहस्स ।
गुरुमिच्छि वे छसट्ठी, इयरगुणे पुग्गलद्धतो ॥८४॥

अर्थ—पलियासखस-पल्योपमनोअसख्यातमो भाग

सासाणि—सास्वादन गुणठाणानो अंतर **हस्सं**—जघन्य आंतरो छे जे कारणे सास्वादनथी मिथ्यात्वे आवेला जीवने सम्यक-त्व ने मिश्रपुंज अवश्य सत्तामां होय, ते बन्ने पुंजने मिथ्या-त्वे प्रथम समयथी उवेलवा मांडे ते यावत पल्योपमना असंख्यातमे भागे उवेली रहे, ने ज्यांसुधी ए बे पुंज सत्तामां होय त्यां सुधी पुनः उपशम पामे नहि, ने सास्वादने पण न आवी शके ते माटे जघन्य अंतर पण पल्योपमनो असंख्यातमो भाग पडे तथा **इयरगुण**—बीजां जे गुणठाणां—मिथ्यात्व १, मिश्रादिक उपशान्तमोह पर्यंत नव १० गुणठाणे जघन्य अंतर अंतर्मुहूर्त्तनो पडे, जे कारणे ए गुणठाणे चढतो तथा पडतो पिण आवे ते माटे तथा **गुरु**—उत्कृष्टो अंतर मिथ्यात्व गुणठाणानो **बे छसट्ठी**—१३२ एकसोबत्रीस सागरोपमनो उत्कृष्टो अंतर पडे जे, कारणे छासठ सागर क्षयोपशम समकितपणे रहे, पछी अंतर्मुहू-र्त्त मिश्रपणे रही वळी छासठ सागरोपम क्षयोपशम समकित-पणे रहे तिवारे मनुष्यभव साधिक १३२ सागर काल पर्यंत मिथ्यात्व स्पर्श्यो नही, ते मिथ्यात्वनो अंतर **इयर**—सास्वादना-दिक दश गुणठाणानो उत्कृष्ट अंतर अर्द्ध पुद्गल परावर्त्तकाल देश उणो जे एटलो काल समकीतथी पड्यो मिथ्यात्वमें रही पछी पाछो समकित पामी मोक्षे जाय ते माटे अंतर कह्यो.

उद्धार अद्ध खित्तं, पलिय तिहा समयवाससयसमए
केस वहारो दीवो, दहि आउतसाइ परिमाणं ॥८५॥

अर्थ—हवे पुद्गल परावर्त्तननो मान कहेवा माटे पल्यो-पमनो स्वरुप कहे छे. पल्योपमना ३ त्रण भेद छे. उद्धार-पल्योपम १, अद्धापल्योपम २, क्षेत्रपल्योपम ३ ए पल्योपमना

३ तीन भेद छे, तिहां उद्धार पल्योपमनो मान समये समये एक केश-वालाग्र अवहारो-(काढता) योजननो कुवो खाली थये उद्धार (पल्योपम) थाय, तथा सो वरसे एक वालाग्र काढीये तो कुवो खाली थये अद्धा पल्योपम थाय तथा एक समये योजन प्रमाण कुवानो एक आकाश प्रदेश काढीये कुवो खाली थये क्षेत्र पल्योपम थाय. तिहा द्वीप समुद्रनो गिणवो ते उद्धार पल्योपमे करवो. पचवीस कोडाकोडी पल्योपमना जेटला समय थाय तेटला द्वीप समुद्र छे. आउखो ते अद्धा पल्योपमे गिणवो. त्रस जीवनो मान ते क्षेत्रपल्योपमे गिणवो, जिम पल्योपमना ३ तीन भेद तिम सागरोपमना तीन भेद जाणवा.

हवे पुद्गल परावर्त्तननो स्वरुप कहे छे.

दव्वे खित्ते काले, भावे चउह दुह नायरो सुहुमो ।
होइ अणतुस्सप्पिणि, परिमाणो पुग्गलपरट्टो ॥८६॥

अर्थ—ते पुद्गल परावर्त्तनना भेद आठ छे तिहा द्रव्य पुद्गल परावर्त्तन १, क्षेत्र पुद्गल परावर्त्तन २, काल पुद्गल परावर्त्तन ३, भाव पुद्गल परावर्त्तन ४, ए चार ४ भेद ते एकेकना बे भेद छे-द्रव्य पुद्गल परावर्त्तन वादर १, द्रव्य पुद्गल परावर्त्तन सूक्ष्म २. ए बे, इम क्षेत्र पुद्गल परावर्त्तन वादर १, क्षेत्र पुद्गल परावर्त्तन सूक्ष्म २, काल पुद्गल परावर्त्तन वादर १, काल पुद्गल परावर्त्तन सूक्ष्म २, भाव पुद्गल परावर्त्तन वादर १, भाव पुद्गल परावर्त्तन सूक्ष्म २, ए आठे भेद जाणवा, वादर पुद्गल परावर्त्तन ते न्हानो छे, सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्तन ते मोटो छे, अनत उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी प्रमाणे पुद्गल परावर्त्तनुं

मान थाये. ॥ ८६ ॥

उरलाइ सत्तगेणं, एग जिओ मुअइ फुसिय सव्वअणु
जित्तिअ कालि स थूलो। दव्वे सुहुमो सगऽन्नयरा॥

अर्थ--हवे द्रव्य पुद्गल परावर्त्तननो मान कहे छे. **उरलाइ**-औदारिकादिक सात वर्गणा, आहारक विना, तै एक विना ते एक जीव सर्व पुद्गल ए ७ सात वर्गणाए **फुसीय**-स्पर्शीने **मुइय**-मूक्या जे सर्व परमाणु पिण अनुक्रमे नहीं जिवारे जे फरसे ते तिवारे ते गणीये तेहनो जे काल लागे ते द्रव्ये बादर पुद्गल परावर्त्तन थाये. तथा परमाणु **सगन्नयरा**-सात वर्गणापणे अन्यतर एक वर्गणापणे फरसे ते विचें बीजी वर्गणापणे फरसे ते स्पर्शना गणवी नही, इम अनुक्रमे एक एक वर्गणापणे सर्व पुद्गल फरसी मुके तिवारे द्रव्यथी सूक्ष्म पुद्गल परावर्त्तन थाये. ॥ ८७ ॥

लोगपएसोसप्पिणि, समयाअणुभागबंधट्ठाणा य।
जह तह कममरणेणं, पुट्ठाखित्ताइथूलियरा ॥८८॥

अर्थ--लोकप्रदेश सर्व स्पर्शे क्षेत्रपुद्गलपरावर्त्त, उत्सर्पिणी अवसर्प्पिणीना समय स्पर्शे ते काल पुद्गल परावर्त्त, अनुभाग बंधनां स्थानक स्पर्शे ते भावपुद्गल परावर्त्त ते **जहतह**-जेम तेम स्पर्शे तो ए तीने **थूल**-बादर पुद्गलपरावर्त्त, अने अनुक्रमे स्पर्शे तो सूक्ष्म थाये ते देखाडे छे, जे लोकना प्रदेशमां लोकना अंतप्रदेशे मरण पामे, इम जेम तेम आगल पाछल करीने वधो लोक मरणे करी स्पर्शे तिवारे क्षेत्रथी **थूल**-बादर पुद्गलपरावर्त्तन थाजे, तेहज लोकने, अंत्यप्रदेशे

मरण करी वळी ते प्रदेशथी लगते प्रदेशे मरण करे ते भव गणवो, इम अनुक्रमे वधो लोक मरणे स्पर्शे ते आघा पाछा प्रदेशे जे मरण थाये ते गणीये, इम संपूर्ण लोक स्पर्शे त्यारे क्षेत्रथी सूक्ष्म पुद्‌गल परावर्त्त थाय. तथा एहनो जघन्य अंतर २५६, आवळीनो उत्कृष्ट अतर अनतकालनो तथा उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीने प्रथम समये जन्म पाम्यो, तेहिज वळी किहांक मरण पाम्यो, इम जे क्षेत्रे जे प्रदेशमे मरण पाम्यो, इम अनुक्रम विना जे हरकोइ स्थानको प्रदेश स्पर्श्यो, तिम उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीना समय मरणे स्पर्शे तिवारे कालथी बादर पुद्‌गल परावर्त्त थाये तेहज कोइ उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीना प्रथम समये मरे पछी जघन्ये वीस कोडाकोडी सागर जाय तिवारे वळी वीजा काल चक्रनो वीजो समय आवे तिवारे मरण पामे अथवा अनतकाले अनतमा कालचक्रने वीजे समये मरण, वळी जघन्येवीस कोडाकोडी सागर पछी अथवा अनंताकाल पछी त्रीजे समये मरण, इम अनुक्रमे मरण करता उत्सर्प्पिणी अवसर्प्पिणीना समयो मरणे करी स्पर्शे अनुक्रमे तिवारे कालथी सूक्ष्म पुद्‌गल परावर्त्तन थाये, इम रसवधना स्थानक जे मरणे करी जेम तेम स्पर्शे ते भावथी बादर पुद्‌गल परावर्त्त थाये, तेहिज रसवधना स्थानक अनुक्रमे मरणे स्पर्शे त्यारे भावथी सूक्ष्म पुद्‌गल परावर्त्त थाये. ते भाव पुद्‌गल परावर्त्त कोइ जीवने थयो नथी इम आठ भेद जाणवा। ॥ ८८ ॥

अप्परपयडिवधी, उक्कडजोगी अ सन्निपज्जत्तो ।
कुणइ पएसुक्कोस, जहन्नय तस्स वच्चासे ॥ ८९ ॥

अर्थ—जे जीव **अप्पयर**–अल्पतर थोडी प्रकृति बांधे, **उक्कडयोगी**–योगे उत्कृष्ट योगी हुवे अ कहेता च शब्दे

संज्ञि पर्याप्तो **कुणई**—करे, प्रदेशबंध उत्कृष्टपणे बांधे, एटले थोडी प्रकृति बांधे तेहने भाग थोडा. उत्कृष्ट योगबलवंत प्रदेश लेवे, घणा ते माटे, उत्कृष्टयोगवाला जे जीव ते अने अतिशये अल्प प्रकृति बंध करे. **जहन्नयं**—तेहथी विपर्यासे जघन्य प्रदेश बांधे, जे प्रकृति घणी बांधतो हुवे, योग मंद हुवे, असंज्ञि पर्याप्तो हुवे ते प्रदेशबंध जघन्य बांधे इम भाववो. ॥ ८९ ॥

मिच्छ अजय चउ आउ, विति गुणविणु मोहि सत्त मिच्छाइ ।
छण्हं सतरस सुहुमो अजया देसा वि ति कसाए।९०।

अर्थ—हवे प्रदेशबंध उत्कृष्टना स्वामी कहे छे—मिथ्यात्व गुणठाणे **अजयचउ**—चोथा गुणठाणाथी मांडी ४ च्यार गुणठाणा एटले मिथ्यात्व १, अविरति, १, देशविरति १, प्रमत्त १, अप्रमत्त १, ए पांच गुणठाणे आउखा कर्मनो उत्कृष्ट प्रदेश बांधे, बीजा त्रीजा गुणठाणा विना मिथ्यात्व १, अविरति १, देशविरति १, प्रमत्त १, अप्रमत्त १, अपूर्व १, अनिवृत्ति १, ए ७ सात गुणठाणे मोहनीकर्मना उत्कृष्ट प्रदेश बांधे. मूल कर्म छनो, तथा उत्तर प्रकृति ज्ञानावरणी पांच, दर्शनावरणी ४, चार अंतराय पांच, सातावेदनी १, उच्चगोत्र १, यशनाम १, ए १७ सत्तर प्रकृतिनो उत्कृष्ट प्रदेशबंध सूक्ष्म संपराय गुणठाणे बांधे, तथा अविरति गुणठाणे बीजी चोकडीनो उत्कृष्ट प्रदेश बांधे, देशविरति त्रीजी चोकडीनो उत्कृष्ट प्रदेश बांधे. ॥ ९० ॥

पणअनिअट्टी सुखगइ, नराउ सुर सुभगतिग विउव्विदुगं
समचउरंस मसायं, वइरं मिच्छो व सम्मो वा ॥९१॥

अर्थ—संजलणा ४, पुरुषवेद १, ए पांच प्रकृति अनिवृत्ति गुणठाणे उत्कृष्ट प्रदेशे बांधे, शुभविहायोगति १, मनुष्यायु १, सुरत्रिक ३, सुभगत्रिक ३, वैक्रियदुग २, समचौरस सस्थान १, असातावेदनीय १, वज्रऋषभनाराच संघयण १, ए १३ प्रकृतिनो उत्कृष्ट प्रदेशबंध मिथ्यात्वी बांधे अथवा समकिती बांधे. ॥ ९१ ॥

निद्दा पयला दुजुअल, भयकुच्छातित्थ समगो सुजई
आहारदुग सेसा, उक्कोस पएसगा मिच्छो ॥९२॥

अर्थ—निद्रा १, प्रचला १, दुजुअल-हास्य १, रति २, अरति १, शोक २, भय १, दुगंछा १, तीर्थंकर नाम १, ए नव प्रकृति समकीति उत्कृष्ट प्रदेशबंधे बांधे, सुजई-जे अपूर्वकरणी अथवा अप्रमत्त, आहारक दुगनो उत्कृष्ट प्रप्रदेशबंध बांधे, शेष ६६ छासठ प्रकृतिना उत्कृष्ट प्रदेश संज्ञि मिथ्यात्वी बांधे. ॥ ९२ ॥

सुमुणी दुन्नि असन्नी, नरयतिग सुराउ सुरविउव्वि दुगं।
सम्मो जिणे जहन्न, सुहुमनिगोआइखणि सेसा ॥९३॥

अर्थ—हवे जघन्य प्रदेशबंध बांधे ते कहे छे सुमुणी -भलो मुनि अप्रमोदी, दुन्नी-आहारक दुगनो जघन्य बंध बांधे, असंज्ञी बांधे, नरकत्रिक ३, देवत्रिक ३, वैक्रियदुग (टबामां सुराउनो अर्थ नथी लख्यो माटे देवत्रिकने ठेकाणे देवायु पछी देवद्विक अने वैक्रियद्विक, एम बेसे छे, तत्त्व बहुश्रुत जाणे) ए ६ प्रकृतिनो जघन्य प्रदशबंध असंज्ञी पर्याप्तो बांधे, जिन नामनो जघन्य प्रदेशबंध समकिती बांधे, शेषा-शेष १०९

प्रकृतिनो जघन्य प्रदेशबंध सूक्ष्म निगोदियो अपर्याप्तो बांधे ए-हने बंध स्वामीत्वे पण १०९ नो बंधज, शेषनो बंध नथी, जघन्ययोगी माटे जघन्य प्रदेश बांधे. ॥ ९३ ॥

दंसणछग भय कुच्छा, बि ति तुरिअ कसाय विग्घ-नाणाणं ।
मूलछगेऽणुक्कोसो, चउह दुहा सेसि सव्वत्थ ॥९४॥

अर्थ—दर्शनावरणी ६–चक्षु दर्शनावरणी १, अचक्षु दर्शनावरणी २, अवधि दर्शनावरणी ३, केवल दर्शनावरणी ४, निद्रा ५, प्रचला ६, ए छ भय १, दुगंछा २, वीजी चोकडी ४, त्रीजी चोकडी ४, चोथी चोकडी ४, पांच अंतराय ५, पांच ज्ञानावरणी ५, ए उत्तर ३० त्रीस मूळ ६ छ कर्मनो अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध चउहा–सादि १, अनादि २, ध्रुव ३, अध्रुव ४, ए ४ च्यार भेदे जाणवो. एहीज ३० त्रीस प्रकृतिनो जघन्यबंध, अजघन्यबंध, उत्कृष्ट प्रदेशबंध, सादि, अध्रुव, ए बे भेदे जाणवो, तथा शेष ९० नेवुने प्रकृतिनो, जघन्य, अजघन्य, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, ए ४ च्यार प्रकारनो प्रदेशबंध सादि, अध्रुव, भेदे पामीये, तिहां ७३ तो अध्रुवबंधी छे ते माटे बे बे पामीये, अने मिथ्यात्व १, अनंतानुबंधी ४, थीणद्धी ३, नामनी ध्रुवबंधी नव ९ ए १७ प्रकृति ध्रुवबंधी छे पिण प्रदेशबंध उत्कृष्टादिक कोइ ध्रुव नथी. ३० प्रकृतिनो अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध, गुणठाणे चढया विना जीवने ध्रुवबंध छे ते माटे. ॥९४॥

सेढिअसंखिज्जंसे, जोगट्ठाणाणिपयडिठिइभेआ ।
ठिइबंधज्झवसाया, णुभागठाणा असंखगुणा ॥९५॥

अर्थ—घनीकृत लोकनी सातराजनी एकप्रदेशी श्रेणि तेहने असख्यातमे भागे जेटला आकाश प्रदेश तेटलां योग स्थानक छे, तेथी प्रकृतिना स्थानक तीव्र मदता रुप असंख्यात गुणां छे, छे, तेथी स्थितिभेद स्थितिनां स्थानक असंख्यातगुणा छे, तेथी स्थितिबंधना अध्यवसाय जीवभेदें तीव्र मदतारुप ते असख्या गुणा छे, जे एकेके स्थितिस्थानके स्थितिबंधना अ यवसाय असंख्यात छे, ते माटे ४ तेथी रसबधना स्थानक असख्यातगुणा छे, जे छठाणवृद्धिरुप रसबधना स्थानक अग्निकायनी सुइ छ दिशा फरतीना आकाशप्रदेश प्रमाण छे. ॥९५॥

तत्तो कम्मपएसा, अनतगुणिया तओरसच्छेआ(या)।
जोगापयडिपएस, ठिइ अणुभाग कसायाओ ॥९६॥

अर्थ—ते माटे तेहथी कर्मवर्गणाना एकसमयगृहीत परमाणुआ अनतगुणा छे, ६ तेहथी कर्मबंधपणे जे परमाणुआ बधाणा तेमां जे एक परमाणु तेमाहे कषायप्रत्ययी रसना छेद ते अनतगुणा छे, जे कारणे सर्व जीवथी अनतगुणो रस हुवे (होय) तेहिज कर्मपणे बधाय. ७, ते माटे, तथा प्रकृतिबंध, १ ते योगथी बधाय, स्थितिबध तथा रसबंध ते कषायथी बाधे, मिथ्यात्व, अविरत ते दृढीकरणनो हेतु छे. ॥९६॥

चउदसरज्जूलोगो, बुद्धिकओ होइ सत्तरज्जु घणो।
तद्दीहेग पएसा, सेढी पयरो अ तव्वग्गो ॥९७॥

अर्थ—हवे श्रेणिनो स्वरुप कहे छे—चौदराज प्रमाण लोक छे, बुद्धियें करीये तिवारें सातराज प्रमाण थाय. तेहनी दीर्घ लाबी एकप्रदेशनी श्रेणिने सेढी कहीये, ते सेढीनो वर्ग एटले तद्गुणो—गुणाकार करीये ते प्रतर थाय, तेहने वर्ग करे घन थाय ॥९७॥

अणदंस नपुंसि त्थी, वेअ छक्कं च पुरिसवेअं च ।
दो दो एगंतरिए, सरिसे सरिसं उवसमेइ ॥९८॥

अर्थ--हवे उपशम श्रेणि कहे छे-इहां उपशम श्रेणें उपशमसमकिती लीधो छे, ने कहे छे-प्रथमथी चोथाथी मांडी सातमा गुणठाणा सीम अनंतानुबंधी ४ उपशमावे, पछे दर्शनमोहनी ३ तीन उपशमावे, पछी आठमे गुणठाणे आवी स्थिति घातादिक पांच ५ करण करीने नवमे गुणठाणे आवी नपुंसकवेद उपशमावे, १ पछी स्त्रीवेद उपशमावे १, पछी हास्यछक ६ उपशमावे, पछी पुरुषवेद उपशमावे, पछे बे बे कषाय उपशमावे, पछे एक उपशमावे (?) आंतरे अप्रत्याख्यानी प्रत्याख्यानी क्रोध २, उपशमावे, पछे संजलणो क्रोध, १ उपशमावे पछे अ अप्रत्याख्यानी प्रत्याख्यानी मान उपशमाव्या पछी संजलणमान उपशमावे पछी अप्रत्याख्यानी, प्रत्याखानी माया उपशमावे, पछी संजलणनी माया उपशमावे, पछी प्रत्याख्यानी अप्रत्याख्यानी लोभ उपशमावी, संजलना लोभनी किट्टी करे, तेहनो अनंतमो भाग संजलना लोभनो ते दसमे गुणठाणे उपशमावे ए रीते सरखुं सरखुं उपशमावे पछी उपशांतमोही थाय. हवे क्षपकश्रेणिनो क्रम कहे छे. ॥९८॥

अणमिच्छ मीससम्मं, तिआउ इग विगल थीण तिगुजोअं ।
तिरि निरय थावर दुगं, साहारायव अड नपुंत्थी॥९९॥

अर्थ--जे कोइ जीव लाधे स्वकल्प रसे संसारोद्विग्न आत्मालंबी थको चोथे तथा पांचमे, छठ्ठे, सातमे गुणठाणे क्षयो-

पशम, अनंतानुबंधी ४ खपावे, पछी मिथ्यात्वमोहिनी खपावे, पछी मिश्रमोहनी खपावे, पछी समकितमोहनी खपावे, पछी देवता १, नारकी १, तिर्यंच १, नां आउखा खपावे, खपावीने नवमे गुणठाणे चढे पछी नवमाने बीजे भागे इग–एकेन्द्रीजाति, विगल ३, थीणद्धी ३, उद्योत १, तिर्यंचद्विक २, नरकद्विक २, थावर, सूक्ष्मद्विक २, साधारण १, आतप १, ए १० सोळ प्रकृति नवमाने बीजे भागे खपे, अड–आठ कषाय खपावे, त्रीजे भागे, तेथी पछी चोथे भागे नपुंसकवेद खपावे, पांचमे भागे स्त्रीवेद खपावे. ॥९९॥

छग पुं संजलणा दो, निद्दाविग्घावरण खए नाणी।
देविंदसूरि लिहिअं,सयगमिणं आय सरणट्ठा ॥१००॥

इति शतकनामा पंचमकर्मग्रंथ समाप्त ॥५॥

अर्थ—पठे छट्ठे भागे हास्य ६ छ खपावे, पछी पुरुषवेद खपावे, पछी आठमे भागे संज्वलन क्रोध खपावे, नवमे भागे संज्वलन मान खपावे, नवमा गुणठाणाने अंते संज्वलननी माया खपावी दसमे सूक्ष्मसंपरायगुणठाणे आवी संज्वलननो लोभ खपावी बारमे गुणठाणे आवे तिहां बे निद्रा खपावे, पछी बारमाने अंते अंतराय, ५, ज्ञानावरणी, ५, दर्शनावरणी च्यार, ४, ए १४ चौदने खपे आत्मा नाणी–केवलज्ञानी थाये–लोकालोक प्रत्यक्ष देखे, ए देवेन्द्रसूरि आचार्य महाराजे लिख्यो शतक नामे कर्मग्रंथ पिण आय–पोताने सरणट्ठा–सभारवाने अर्थे. इति पंचम कर्मग्रंथ टबार्थः समाप्त १०

अथ टबाकार प्रशस्तिकार काव्यम्.

श्रीमत् पाठक राजसारकृतिनां शिष्या जिनाज्ञापराः ।
श्रीमत् पाठक ज्ञानधर्मप्रवरां श्रीदीपचन्द्राह्वयाः ।
अर्हन् मार्गसुपाठका गुणलया तद्वाक्यसेवानुगः ।
सत्रार्थं गणिदेवचन्द्रमतिमान् संदर्शयन् शोभते ॥१॥इति ॥५॥

संवत् १८६८ श्रावण शुक्लाष्टम्यां (श्रावण सुदि ८) रविवासरे लिपिकृते सकल पंडित शिरोमणि भट्टारक तपागच्छाधिराज पुरंदरप्रभु भट्टारक श्रीश्रीश्री १०८ श्रीश्रीश्रीश्रीश्रीश्री कीर्तिरत्नसूरीश्वरान चिरंजीवो तत्शिष्य पं०बुद्धिरत्नेन लिपिकृते तत् शिष्य मुनि कान्तिरत्न पठनार्थं पठितः श्रीसूर्यपुरवरे श्री शान्तिनाथचरणप्रसादात् श्रीकल्याणमस्तु. (ए जे उपरथी प्रेसकॉपी थइ ते प्रति लिख्यानी साल विगेरे तेमांथी लीधेल छे.)

इतिश्रीपंचम शतकाख्य कर्मग्रंथस्यटबार्थः समाप्तः ॥



॥ कर्मसंवेधप्रकरण ॥



॥६०॥ ऐंनमः॥ श्रीमज्जिनकुशलसूरिसद्गुरुभ्योनमः॥
सिरिवीरनाहनाण । वंदि अपब्भठकम्मरयगण । गुणमग्गणठाणेसु अ । भणामि कम्माणसंवेह ॥ १ ॥ नाणंतरायदुगभंग । दसेक्कार खीणमोहंजा । केवलदुगेअभावो । वेअणसत्ता अट्ठरकाए ॥ २ ॥ गोयम्मि सत्तभंगा । अठयभंगाइवतियेअणीए । पण नव नव पण भंगा । आउचउक्केवि अणुकमसो ॥ ३ ॥ चउछसुदुन्निसत्तसु एगेचउगिणसुवेअणीअभंगा । गोएपणचउदोतिसु । एगठसुदुन्निइक्कंमि ॥४॥ अट्ठच्छाहिगवीसा । सोलसवीसचवारछदोसु । दोचउसुतीसुइक्कं । मिच्छाइसुआउएभंगा ॥ ५ ॥ दोदोतिन्निअदोदो । दुगछगदुगसतखीणमोहजा । गुणपच्चईया भंगा । मग्गणठाणेसुणेयव्वा ॥ ६ ॥

दर्शनावरणीयभंगा			मार्गणास्थानेषुभंगा	
म ग. १ पचें १ त्रस १ यो. ३ चक्षु अचक्षु द. २ शुक्ल १ भव्य १ सज्ञी १ आहा १॥	१२	१८	अज्ञान ३ लेश्या ५ अनाहारक १ अ. १ गति ३ ॥ १३	४
वेद ३ कषाय ४ ॥	७	६	यथाख्यात १	४
ज्ञान ८ अ. द. १ क्षाय		९	केवल २	०

था. ९ इंद्रिय ४ अभ. १ असं. १ मि. १ सा. १॥१३	२	उपशम १	६
सामायक १ छेदोप. २	५	सूक्ष्म संपराय १	३
परिहारविशुद्धि १	२	वे. स. मिश्र. देशवि. ३	२

मार्गणासुवेदनीयभंगाः		
म. ग. पंचेन्द्रिय १ त्रस १ क्षायिक अनाहारक १ ॥ ५		८
केवल २ यथाख्यात १ ॥	३	६
सूक्ष्मसंपराय १		२
शेषमार्गणा ५३		४

बावीसइक्कवीसा। सत्तरस(स)तरसेवनवपंच। चउतिगदुगंचइक्कं। वंधठाणाणिमोहस्स ॥७॥ छवावीसेवेअति। हासदुगअरइदुगन्नतमगुणीआ। चउइगवीसिअसंढा। अणिछिदुगभंगसतरतिगे ॥ ८ ॥ पंचाइसु त्रिणुजुअङ्क। भंगेकं मोहणिङ्मउदयाइं। इग दो चउ पण छ सग अड नव दस इयपयाइं नव ॥ ९ ॥ दसवावीसे नव इग। वीसेसत्ताइं उदयठाणाणि। छाइनवसत्तरसे। तेरेपंचाइअठेव ॥ १० ॥ चत्तारिआइनवबंधएसु उक्कोससत्तमुदयंसा पंचहिंबंधगेपुण उदउदुण्हमुणेयव्वो ॥११॥ इत्तोचउबंधाई इक्किक्कुदयाहवंतिसव्वेवि बंधोचरमेवितहा उदयाभावेविवाहोज्झा ॥ १२ ॥ इक्कगछक्किक्कारस दससत्तचउक्कइ-

कंमचेव एए चउवीसगया चोवीसदुगिवंम्मिइक्कारा ॥ १३ ॥ मिछेसगाइचउरो सासणमीसेसगाइतिन्नुदया छपचचउरचउगाइ चउचउउदयापमत्तता ॥ १४ ॥ चउराइतिन्निपुव्वे दुगइक्कोवाय-रेइगोसुहुमे भंगाणंचपमाण पुव्विपुदिट्ठणनायव्वं ॥ १५ ॥ इक्कछ-डिक्कारिक्कारसेवइक्कारशेवतिन्नि एएचउवीसगया बारदुगिपंच-इकंम्मि ॥ १६ ॥ अठगचउचउचउरठ, गाय चउरोय हुंतिचोवी-सा, मिछइअपुव्वतो, बारसपणगचअनियट्टी ॥१७॥ अहट्ठीब-त्तीसं सट्ठिमेववावन्ना चोआलदोसु वीसा, गुणेसुपयसंखचोवीसा ॥ १८ ॥

मार्गणासु गोत्र भगाः		मार्गणासुआयुः कर्मभंगाः		
गति. २ इद्रि ४ थाव. ५ असं. १२	३	मनुष्यगति		९
		नरकगति		५
गतिदेव २ वे ३ ले. ५ अज्ञान ३ क. ४ अवि.१ अभ १ मि. १ १०	भं ५	तिर्यंचगति		९
		देवगति		५
म. ग. १ पंचद्रीय १ त्रस. १ भव्य अनाहारकी॥ ५	७	इन्द्रिय. ४ पृ. १ अप. १ वनस्पति १ ७		५
सा. १ छेद. १ परि. १ सूक्ष्म १ । ४	१	तेज १ वायु. १ २	२८	
यो ३ चक्षु १ अचक्षु. शुक्ल १ सन्नी, १ आहा. ८	६	पचेन्द्री १ त्रस १ योग ३ क. ४ दर्शं. २ लेश्या. ६ ज्ञान. ३ अच १ मि. १		
देसवि. मिश्र । २	२	भव्य १ अभ. संज्ञी. १॥ २५		

केवल. २ यथाख्यात १।३	२	ज्ञान. ३ अ. द. १ सम्यक्त. ३। ७	२०
ज्ञान ३ अद. उपशम ५	३	केवल २	१
क्षयोपशम १	२	सामा. ३ मनज्ञान १	६
क्षायिक १	४	देशविरति १	१२
मनप. ज्ञान १	२	सास्वादन	२६
सास्वादन १	४	सूक्ष्म. १ यथाख्यात १	२
		मिश्र	१६
		असंज्ञी १	९
		आहारक	२८
		अनाहारक	४

पु० २३	स्त्री० २३	नपुं० २३

वेयतिकसायचउगुण वारसतेजुअलदुगणचउवीसा चउरुदयंजा हुंतिअपयगुणीआहुंतिपयभेआ॥१९॥ उवसामगखवगेपुणवीसं चोवीससतरभंगायवेयगिसोलसकेवलदुगेआहारकायगेनत्थि।२०। सुहुमेगंसेसेसुअमग्गण ठाणेसुगुणभवानेआ चउवीसगायभंगा पयसंखाउदयपच्चइआ ॥२१॥ इतिउदयं ॥ अठयसत्तयछचउ तिगदुगएगाहिआभवेवीसा तेरसवारिक्कारस इत्तोपंचाइएगुणा

॥२२॥ संतस्सपयडिठाणाणि ताणिमोहस्सहुंतिपन्नरस गुणउदय-बंधठाणे भणामिसंतससवेह ॥२३॥ तिन्नेगेएगतिग मी सेपचच उसुतिगपुव्वे, इकारवायरम्मि, सुहुमेचउतिन्निउवसते ॥२४॥

मार्गणास्थानेशुमोहोदयभगाः			
म. ग. १ पं. १ त्रस १ यो. ३ वे ३ क. ४ च. १ अच.१ शुक्ल. १ भव्य. १ सज्ञी १ आ-हारक १ ॥१९॥	चो.५२ भं. १७	सामायक छेदोप. मति ज्ञान.	चो. २० १७
		परिहारविशुद्धि.	चो. १६
		सूक्ष्मसंपराय	भ. १
इन्द्रीय४ पृ. अप. वन. असंज्ञी १॥८	चो.१२	अविरति	चो. १४
तेज १ वायु १ अभ. मि. ४	चो. ८	लेश्या ३ आदि	चो. ४०
		लेश्यातेज १ पद्म	चो. ४८
देव–नारकी	चो.२४	क्षयोपशम	चो. १६
तिर्यंच	३२	उपशम	चो.२० १७
देशविरति	८।		
ज्ञान ३ अ. द. ४	चो. ३६ १७	क्षायिक	चो. २० १७
		मिश्र	चो. ४
अज्ञान ३	१६	सास्वादन	चो. ४
केवल २ यथाख्यात १॥२	०	अनाहारक	चो. २०

गुणस्थानेषु मोह सत्तास्थानानि.

मि.	२८।२७।२६	अप्र.	२८।२४।२३।२२।२१
सा.	२८	अपू.	२८।२४।२१
मि.	२८।२७।२४	अनि.	२८।२४।२१।१३।१२।११।५।४।२।१
अ.	२८।२४।२३।२२।२१	सूक्ष्म	२८।२४।२१।१
दे.	२८।२४।२३।२२।२१	उपश.	१८।२४।२१
प्र.	२८।२४।२३।२२।२१		

छवीसतिगंदसगे नवगेवावीसछक्कअडगेअ इगवीसाइसत्तग सत्तेछवीसविणुएए ॥२५॥ तेछपणगेछस्सगवीसविणुचउक्किइग-चउडवीसं अडचउइगवीसतेरस वारसइक्कारसंचदुगे ॥ २६ ॥ दुगतिगछगसगवीसं तेरसदुगंविणुइगेयसमसंता छवीसतिगदुवीसे इगवीसेअठवीसंति ॥ २७ ॥ विणुछव्वीसंइगवीसछक्क, सत्त-रसेतेरसेनवेपंच, सगवीसविणापणगे, अडचउइगवीसतेरतिगं ॥ २८ ॥ अडचउइगवीसतिगं इक्कारसपंचउचउगवंधे तिगवंधा-इसुतिगसंत, संतदुगखवगपच्चइआ ॥२९॥ नरतसपणंदिसुक्का, चक्खुदुआहारभवसन्नी, सुयोअकसाएवेए, सव्वेवंधुदयसंतंसा ॥ ३० ॥ बावीसिगवीसिवंधे, भूजलइगविगलतरुअसंन्नीसु, सगअडनवदसउदये, संतेअडसगछहिअवीसा ॥ ३१ ॥ गइत-समिछदुगवीसअठछवीसता, वंधेदुवीससंते छावीसिगसेसपुव ॥३२॥ नाणतिगओहिदंसे, बावीसिगवीसहीणअडवंधे दसविणु-वद्यासंते, तेरसकेवलदुगेनत्थि ॥३३॥ लेसतिगदेवनिरये अवि-

रइअणहारगेदवीसतिगं, छाईपणेगवीसाई, अछगुदयातेअअन्नाणे ॥३४॥ संतेचउवीसचउ तेउपम्हासुनवगजावने चउराईदसउदये इगवीसडवीस जा संते ॥३५॥ मणसामाइयछेए नवओइगजावनं-धइउदए इगसचंजासते, छवीससगवीसविणुसेसा ॥ ३६ ॥ परिहारेनवबंधो चोराइसतवेअइसंते, इगदुगतिगचउअडजुअवीसा सुहमेनवबंधस्स, ॥३७॥ उदयइगसंतेडग, चउअडयअवीसइग, अहरकाएअणुदयइगसतविणा, देसेबंधस्सतेरेव ॥ ३८ ॥ पंचाईअडउदए सतेइगदुत्तिचउठजुयवीसा तिरीएदुवीसओतेरपणओ दसएगवीसओवरिमा ॥३९॥ उवसमगेसत्तराई इगजावनेयएगओ-अडजा, चउअडवीसासते खवगे बंधुदयएमेव ॥४०॥ सतेदुगवीसाइ छाविणुसव्वेअवेअगेबंधो सतराईनवणओ नवजादुतिचउड-वीसंता ॥४१॥ मीसेसतरसबंधो सगअडनवउदयचउसगठयआ-वीसा वीसासंतेसापुण सासाणेनधइगवीस ॥४२॥ उदयएसगठ-नवगं संतेअडवीसमग्गणाठाणे, नवाइतिगमोहस्स भणिभंभंगाय-पुवुत्ता ॥४३॥ तेवीसपन्नवीसा छवीसाअडवीसागुणतीसा तीसे-गतीसमेग बंधठाणाणिनामस्स ॥४४॥ चउपणवीसासोलस नव-बाणुईसयायअडयाला एयालुत्तुरछायाल सयायइगिक्कबंधविही ॥४५॥ धुवबंधिनवगतिरिदुग एगिंदीअजाइउरलतणुहुड थावर-मपइक्कमथिर असुभमणाइक्कदुगवधे ॥ ४६ ॥ एगिंदिगमणजुगो थूलओपरित्तइयरवाजोगे वधडमिच्छेअणिरय सुहमओदेत्रविणुदु-गइ ॥४७॥ परघुस्सासक्खेवे पणवीसंइच्छपरित्तथूलाओ थिरसु-भजसइयरेसुं भंगठयतिगाइपन्चइया ॥४८॥ बायरसाहारणओ सु-हमपत्तेअईयरओभगा जमविणुचउइगजुग्गा दुगइआवीसमिच्छत्ते ॥४९॥ तेवीसबंधठाणे थावरएगिंदिविणुठविइसतस उवरिमजाइ-सुअणा छेवठोरलउवगच ॥ ५० ॥ चउभंगाजइहिंचउहिं तिरी-

आणतिरिदुगविहीणं मणुदुगजुत्तंमणुए एगंभंगापणअपज्झे २५वं। २५भं॥ ॥५१॥ बायरपरित्तपणवीस मज्झेआयावजुअछवीसंति अहवाउज्जोअजुअं भंगाअडदुगणइगजुग्गा ॥ ५२ ॥ धुवनवपणं-दितसचउ परघावेउविदेवदुगसुगइ समथिरइयरछगेवा देवडवीसेठ-पुव्वंता ॥५३॥ मिच्छेदसअपसत्थेहिं इगभंगोनिरयजुग्गअडवीसे षिववविअलेपणवीसे कुखगइपज्झत्तपरिघदुगदुसरं ॥५४॥ असम-त्तहीणनववीसा भंगाचोवीसवियलपच्चईया बंधइतिरिनरमिच्छा धुवतिरिपरघायउरलदुगं ॥५५॥ तसचउपणंदिवीसे, संघयणागि-इसुअन्नतमदुतयं थिरमथिरंवाछक्कं, खगईइगसव्वगुणतीसं ॥५६॥ यसओसगपयदुगणा संघयणगुणायआगइगुणआ छयालसयठभंगा तिरीएमणुएविएमेव ॥५७॥ देवडवीसेजिणजुअ भंमठगसम्मओ-अपुव्वंजा विअलपणंदीयतिरिजुग्ग गुणतीसेजोअजुअतीसं ॥५८॥ पुव्विवभंगसामीअ नरगुणतीसे सजिणअडभंगा सुरअडवीसेसाहार भंगमिगनरअपुव्वंजा ॥५९॥ आहारतीसजिणजुअ बंधइसुमुणी-अएगजसपगइ एगविहबंधठाणे, अपुव्वओसुहुमठाणंजा ॥६०॥ इगविगलथावरेसुं अडविसिगतीसएगविणुपंच, देवेसुतीसगुणतीस छवीसपणवीसतेवीसा ॥६१॥ तसजोअकसाएसुं चक्खुदुआहार-भव्वनरसंन्नी पंचंदीयविएसुं सव्वेदसेनवडवीसा ॥६२॥ तिरिअ विरयअन्नाणे आइतिलेसेअभव्वअणहारे मिच्छअसंन्निसुठाणा णेयाइगतीसएगविणा ॥६३॥ एगविणातेउए तिवीस छव्वीसही-णपम्माए-सासाणेअडवीसतिअं इगतीसजुयंचपरिहारे ॥६४॥ना-णचउओहिदंसे, उवसमषवगेअछेअसमाइए आइतिबंध विणायण एगविणावेअगेएए ॥६५॥ अहखायकेवलदुगे अबंधसुहुमेएगवि-हबंधो गुणतीसतीसनिरये-मीसेअडवीसगुणतीसं ॥६६॥

सुक्काएतेवीसगछवीसहीणाय तेउएभंगानिरविगलसुहमति-गेहीणाइगविणुपम्माअतिरिसुक्का ॥१॥ इति मा० बंधस्था० ॥

बधामा.	२३	२५	२६	२८	२९	३०	३१	१	
एकेन्द्रिय	४	२०	१६						
बेन्द्रिय		१			८	८			
तेन्द्रिय		१			८	८			
चौरिन्द्रिय		१			८	८			
तिर्यंचपच		१			४६०८	४६०८			
मनुष्य		१			४६०८	८		१	
देवता				८	८	८	१		
नारकी				१					
सर्व	४	२५	१६	९	९२४८	४६४१	१	१	१३९४५

इगविगलथावरेसुं अजिणविउव्वाअनाणतिरिएसुं भिच्छ-असंन्नीअभव्वे अजिणाहारा सजिणअजए ॥ ६७ ॥ अविगल-विउव्विनिरए अविरयजासम्मनाणुवहिदंसे चरणतिदेसेसुरजा अहरकायदुकेवलेनत्थि ॥ ६८ ॥ देवपरित्तजायर तिरिअनरासे-सयासुठाणभवा भंगामग्गणठाणे बधठाणाणनेयव्वा ॥ ६९ ॥ अणहारेनिरयभवा आहारगतणुभवायनोभंगा मणनाणेसामईआ-भगसंखासुणेयव्वा ॥ ७० ॥ मिच्छेतेवीसाइ । साणाइसुअट्ठवी-सओवघे । छतिन्निदोतिदोदो । चउपणसेसेसुजुसवधो ॥७१॥ मिच्छेअजिणाहारा । अवियलनिरछेवहुडसासाणे । दुहगतिसघ-यणागिइ । चउजिणुदुगुइज्जमीसदुगे ॥७२॥ सजिणासमत्ताओ, देसदुगेदेवजायसाहारा अपमत्तदुगेभंगा अनिअट्टिदुगेयइक्कि ॥ ७३ ॥ देवभवादेसदुगे अपमत्तदुगेअदेवनरजुगा.

वंधस्थानानिमार्गणासु	२३	२५	२६	२८	२९	३०	३१	१	
म. प. त्र. यो. ३ वे. ३ क. ४ दर्श. २ आहाभ. संज्ञा. १ शुल्क ॥ १६	४	२५	१६	९	९२४८		१	१	१३९४५
था. ५ इग १ विग. ३	४	२५	१६	०	९२४०	४६३२	०	०	१३९१७
ति. १ मि. असंअभ. ८ अज्ञा. ३	४	२५	१६	९	९२४०	४६३२	०	०	१३९२६
सम. ३ अवधि ७ द. नाण ३	०	०	०	८	१६	९	१	१	३५
देव. १	१	१	१६	०	९२१६	४६१६	०	०	१३८५०
नारकी. १	०	०	०	०	९२१६	४६१६	०	०	१३८३२

सामाय॰ छद्मस्थ ३	०	०	०	८	८	१	१	१	१९
परि॰ १	०	०	०	८	८	१	१	०	१८
सूक्ष्म	०	०	०	०	०	०	०	१	१
देस॰	०	०	०	८	८	०	०	०	१६
मिश्र॰	०	०	०	८	१६	०	०	०	२४
सासा॰	०	०	०	८	६४००	३२००	०	०	९६०८
लेश्या ३	४	२५	१६	९	९२४८	४६४१	०	०	१३९४२
लेश्या ते	१	१०	१६	८	९२२४	९६१७	१	०	१३८७७
अनाहारक	४	२५	१६	८	९२४८	४६४०	०	०	१३९४१
के॰ २ यथा	०	०	०	०	०	०	०	०	०
लेश्या प॰	०	२	०	८	८२२४	४६१७	१	०	१३८५२
लेश्या॰ शु॰	०	१	०	८	४६१६	९	१	१	४६३६
अवि॰	४	२५	१६	९	९२४८	४६४०	०	०	१३९४१

बंधस्थान	२३	२५	२६	२८	२९	३०	३१	१
मिथ्यात्व	४	२५	१६	९	९२४०	४६३२	०	०
सासा	०	०	०	८	६४००	३२००	०	०
मिश्र	०	०	०	८	८	०	०	०
अवि	०	०	०	८	१६	८	०	०
देस	०	०	०	८	८	०	०	०
प्रमत्त	०	०	०	८	८	०	०	०
अप्रमत्त	०	०	०	८	८	१	१	०
अपूर्व	०	०	०	८	८	१	१	१
अनिवृत्ति	०	०	०	०	०	०	०	१
सूक्ष्म	०	०	०	०	०	०	०	१

सजिणाहार।भंगा, अनिअट्टिदुगे अ इक्किक्कं ॥ ७३ ॥ वीसिगवीसाचउवीसगाउ,एगाहीआअइगतीसा उदयट्ठाणाणिभवे नवअट्ठयहुंतिनामस्स ॥ ७४ ॥ एगबियालिक्कारस तित्तीसाछस्सयाणितित्तीसा वारससत्तरससया णहिगाणिविपंचसीईहिं ॥७५॥ अउणीत्तीसिक्कारस सयाणहिअसतरपंचसट्ठीहिं इक्किक्कंगंचवीसा दट्ठुदयंतेसुउदयविही ॥ ७६ ॥ नामधुवोदयतिरिदुग थावरएगिंदिदुभगणाइज्जं सुहमेयरदुहअजसेण थूलपज्जत्तजस-

पंच ॥ ७७ ॥ एगिंदिअइगवीसे, अदुथावरइगनितसयूलजुअं पज्जेजसअजसेणय, अजसापज्जेविगलनवगं ॥७८॥ नामधुवोदयतिरिदुग पणिंदितसथूलओअ इगभंगोलद्धिपज्जे असमत्तदुभगणाइज्जअजसेण करणअपज्जेपज्जे असमत्तगचउगसेअरेणठ तिरिदुगठाणेनरदुग खेवेनवभगपुव्विव ॥८०॥ नामधुवमणुअपणतस थूलपज्जत्तसुभगआइज्जं जसवीसेभंगेगं कम्मणगेकेवलीअजिणे ॥ ८१ ॥ जिणजुअइगवीसंते भगेगतत्थमणुअइगवीसे अनरदुसुरदुगजोगे अडनिरयेअसुहइगभगो ॥८२॥ एगिंदिअ इगवीसे पुव्विविणुउरलहुंडउवघाया पत्तेगेअरवादस थुलपवणेविउव्विइग ॥८३॥ इगचउवीसेसपरीघ पणवीसंथूलओपरित्तिअरे जसअजसेचउसुहुमे परित्तजुअभगअडगंति ॥८५॥ एवंनरवेउव्वे अडसाहारेपसत्थइगभंगो देवेअडनिरयेइग भगाइगवीसवउव्व ॥८६॥ इगपणवीसेउसास अहदुउज्जोअवारपुव्विव पवणेइगईगवीसे विअलेतिरिपुव्विअवहारे ॥८७॥ उरलदुगहुडछेवह परित्तउवघायसहिअनवभगा तिरिइगवीसेपुव्वी हरखिवउवघायपत्तेअं ॥८८॥ उरलदुगागिइछक्के छगसंघयणेसुअन्नतमदुतयं संघयणागि इगुणिया अडभगादुसयअडसीइ ॥ ८९ ॥ अपजत्तेइगअसुहो एवंमणुए सुहुसयगुणनवइ वायरइगछव्वीसे आयवउज्जोअ अन्नछगं ॥ ९० ॥ वेउव्विअपणवीसे तिरिएपरघासुगइजुअअ इ एवनराभगा पणवीसुदउव्वनेअव्वा ॥९१॥ विअलछवीसेकुख गइ परयाजुअअठवीसभगछग तिरिछव्वीसेपरघाखगइसुअअन्न तमएगा ॥९२॥ सुब्बुतदुसयअडसीखगई दुगुणा वेउव्विसगवीसेतिरियेउसासेवा उज्जोएभगसोळसग ॥९३॥ तिरिअन्नउरलमणुए वेउव्वेसत्तवीसउस्सासे खित्तेअडउज्जोए इगआहारेदुभंगसुहा ॥९४॥ सुरसगवीसेउसास उज्जोएवासोलइगनिरयेउसा-

सेअपसत्थो १२०।२२८ गुणतीसेतिरिअजादुगुणा ॥ ९५ ॥
विअलेतिरिअडवीसे उसासोज्जोअअन्नतमखेत्ते वेउव्वीअतिरी-
एपुण सगवीसेसुसरऊसासे ॥९६॥ ऊसासेउज्जोए खित्तेवासोल
मणुअ अडवीसे ऊसासएपणसय छसयरिवेउव्वीए ॥९७॥ आ-
हार २ देव १६ निरए १ अठावीसुव्वभंग २९ तीसुदये विय-
लट्ठावीसेखिवसास १ सरअन्नचउभंगा ॥९८॥ भासाअपज्जत्ताणं
सासोज्जोएसुभंगदुगमेव भंगाद्वारसविअले सोसासेतिरिअगुण-
तीसे ॥९९॥ सुसरेवादुसरेवा सहीएबावन्नीगारसयभंगा पणस-
यछसयरि सुसरेसोज्जोएतिरिअगुणतीसे ॥१००॥ वेउव्विअसग-
वीसे सोसासोज्जोअसरपुअडभंगामणुएउज्जोअविणा बावनि-
क्कारसयभंगा १०१ वेउव्विअसगवीसे ऊसासोज्जोअसरयुअं एगं-
सुहभंगंआहारे एवंदेवेसुअडभंगा ३० ॥१०२॥ उज्जोअरहीअ-
तिसे उज्जोएणेवहोदुइगतीसं भंगाबारसविअले बावन्निकारस-
यतिरिए ३१ ॥१०३॥ केवलिअसमुग्घाए वीसेसुखविज्जउर-
लदुगरिसहं उववायंपत्तेअं संठाणछइयछवीसुदओ ॥ १०४ ॥
एसुहवंतिअतीसं परघा १ ऊसास ९ खगइसुरयोए वयणनिरो-
हेसरविणु २९ गुणतीसडवीससासविणा २८ ॥ १०५ ॥
इगवीससत्तवीसा इगतीसाजिणवराणतित्थजुआयोगनिरोहेतेसिं
तीसगुणतीसगानेआ ॥१०६॥ मणुअगईजाइतस बायरंचपज्जत्त-
सुभगआइज्जं जसतित्थयरंइयनव अडजिणरहीआअयोगगुणे
॥ १०७ ॥ उदयभंगासम्मत्ता ॥ बंधेउदयस्थानानि ॥ तिपणछ-
अहिअवीसेउदया ९ इगवीसओअडइगतीसा एवंगुणतीसतीसे
चउवीसविणायअडवीसे ॥१०८॥ इगतीसेएगेपुण तीसमबंधेसु-
सेसदसट्ठाणा चउपणवीसयरहिआ भंगानेआयपुव्वुत्ता ॥१०९॥
तिरिगइकसायअन्नाण८अचखुअविरयअभव्वचउसेसेमिच्छअसन्नी
असंढे १८ उदयानववीसअट्ठविणा ॥११०॥ तेचउवीसविणाअड-

प्रायोग्यउदय	२०	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८
एकेन्द्रिय	०	५	१	७	१३	६						
बेन्द्रिय	०	३			३		२	४	६	४		
तेन्द्रिय		३			३		२	४	६	४		
चौरेन्द्रिय		३			३		२	४	६	४		
प्रा. तिर्यंच		९			२८९		५७६	११५२	१७२८	११५२		
तिर्य. वैक्रि				८		८	१६	१६	८			
मनुष्य		९			२८९		५७६	५७६	११५२			
मनुष्यवैक्रि				८		८	९	९	१			
आहा				१		१	२	२	१			

केवली	१	१				१		१	१	१	१	१
देवता		८		८		८	१६	१६	८			
नारकी		१		१		१	१	१				
सर्व	१	४२	११	३३	६००	३३	१२०२	१७८५	२९१७	११६५	१	१

२३।२५।२६	२१।२४।२५।२६।२७। २८।२९।३०।३१
२८	२१।२५।२६।२७।२८। २९।३०।३१
२९।३०	२१।२४।२५।२६।२७। २८।२९।३०।३१
३१।१	३०
अबंध	२०।२१।२६।२७।२८। २९।३०।३०।३१।९।८

नाणतिगचक्खुओहिवेअदुगे उवसमवेअगसन्नीण्महाअसुए असगपणवीसा ॥ १११ ॥ विगले छगतेनिग्ये इगपणसगअठनवहिआवीसा देवेते ६ तीसयुआ सुहमेपरिहारगेतीसं ७ ॥ ११२ ॥ पण सगअडनवसहिआ वीसातीसंमणे १ दुसामईए २ देसेइगतीसयुआ ६ गुणतीसतिमीसमणवयणे ७ ॥ ११३ ॥ सव्वेभव्व १ नरतस पणिंदिखवरोस्रुनत्थिचउवीसं इगवीसाइज्झा सगवीसाइग थावरेपंच ११ ॥ ११४ ॥ दसचउपणदसविण केवलदुगिसुद्धसंजमेउदया वीसिगवीसंनवअठ ४ अणहारेसेस ८ आहारे ॥११५॥

सासाणेइगचउपण छनववीसायतीसइगतीसा विणुअडनवतणुयोए सुक्काएतेअचउवीसा ३ ॥११६ ॥ इतिमार्गणासुउदयस्थानानि ॥ अथमार्गणासुभंगका ॥ मणुआइचउगईसु । तिगईविणुनिअगईभवाभंगा एगिंदिअवायाला पुढवीगुण चत्तअविउव्वा ६ ॥११७॥ तावविणावणउदगे तेउसज्जोअहीणसत्तिउव्वा पवणेविअलेविअला तसेसुएगिंदिभंगविणा ८ ॥११८॥ इगविगलविणासगले कसायचउगे जिणहुभगविणा ससुएभगावयणे मणवेएतेअविगलविणा ७ ॥११९॥ इगविगलनिरयजिणविणु पुरिसेइत्थीसुहारविणुतेविआहारतित्थसुरविणु सढेतिगनाणुवहिदंसे ॥ १२० ॥ इगविगलिंदिअजिणविणु पज्जचउगइभवायसामईए छेएनरपज्जुसुहा मणपरिहारेअणाहारा ॥११॥१२१॥ सुहमेदुसयरितीसा सजिणाहक्खायगेअअन्नाणे २ मिच्छाभवेहारग तित्थविणासव्वभव्वसु ७॥१२२॥ केवलदुगिजिणज्झुगा तिरिनरसुहेदेससयमेभंगा मिच्छेभवपज्जत्ता इगविगलविणाविभंगम्मि ४ ॥१२३॥ अजिणाहाराअजए साहारालेसतिगअचक्खू सुचक्खुसुइगविवितिइंदियजिणविणु वेअगितिनाणुव्व ७॥१२४ खवगेतेजिणजुत्ता मीसदुगेठाणगायसन्नीसु जिणविणुपणंदिभंगा अडवीसंजानरअपज्जा ४ ॥१२५॥ सघयणागइपणविणु विउव्विविणुतिरिअपज्जअसंन्निसु सेलेससमुग्घायग तणुअपज्जअणाहारे २ ॥१२६॥ पम्हासुनिरयइगजिण विगलविणतिउगेअइगजुत्ता सुकासुसजिणइगविणु नाणुव्वाहारविणुवसमे ४ ॥ २७ ॥ नवअडविणुतणयोए मिच्छेआहारतित्थविणुवीए वायर २ विगल ६ गतिरि ८ नर ८ सुर ८ पज्जहूंतिवत्तीस॥१२८॥ दोपुणवायरपज्जा पणवीसेअट्ठदेवपञ्चेंइया छव्वीसे ५८२ एगिंदिय १३, अपज्ज ५ विणुनरइगुणतीसे ॥१२९॥ तिसेतिरि ११५२ नर ११५२ सुर ८ जा इगतीसेतिरयनायपज्जत्ता तईए अणेगविगला

मार्गणासुउदय स्थानानि	२०	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८	
मनुज १	१	१०	०	९	२८९	१०	५८७	५८८	११५५	१	१	१	२६५२
तिर्यंच १	०	२३	११	१५	३११	१४	५९८	११८०	१७५४	११६४	०	०	५०७०
देवता १	०	८	०	८	०	८	१६	१६	८	०	०	०	६४
नारकी १	०	१	०	१	०	१	१	१	०	०	०	०	५
एकेन्द्रिय	०	५	११	७	१३	६							४२
विगल		९			९		६	१२	१८	१२			६६
पंचेन्द्रिय	१	२८	०	२६	५७८	२७	११९६	१७७३	२८९१	११५३	१	१	७६८३
भू.	०	५	१०	६	१२	६							३९
जलवण		५	१०	६	१२	३							३६

तेज		५	१०	६	६								३३
पवन		५	१	७	७								३६
त्रस	१	३७	०	२६	५८७	२७	१२०२	१७८५	२९१७	११६५	१	१	७७४९
कषाय ४	०	४१	११	३३	६००	३२	१२०२	१७८४	२९११	११६४			७७८३
वचन								१७	२९११	११६५			४०९३
मन								१७	२८९१	११५३			४०६९
पु.	०	२६	०	२५	५७८	२५	११९५	१७७१	२८९८	११५२	०	०	७६७०
स्त्री		२६	०	२४	५७८	२४	११९३	१७६९	२८९७	११५२			७६६३
नपुसक १		३३	११	२४	६००	२३	११८४	१७६६	२९०७	११६४	०	०	७७१२
श्रा. ३अ.द. १वेदक १।५		२७		२६	५७६	२६	११९६	१७७२	२८९८	११५२	०	०	७६७५

मनपर्याय १				१	०		७४	७४	१४५				२९५
केवल २	१	१				१	१	२	२	१	१	१	१२
अज्ञान ३ मिछ १ अभव्वा ५	१०	४१	११	३२	६००	३१	१२००	१७८२	२९१५	११६६	०	०	७७७६
विभंग				१६		१६	२४	१७६९	२८९६	११५२	०	०	५८७३
सामा. छे.२	०	०	०	२	०	२	७६	७६	१४६				३०२
परिहार १									१४५				१४५
सूक्ष्म. १									७२				७२
यथाख्यात	१	१				१	१	२	७४	१	१	१	८४
देशविरति				२	०	२	१८४	२२०	३ २	१४४			८७८
अविरति	०	४१	११	३२	६००	३१	१२००	१७८२	११६४	११६४	०	०	७७७६

चक्षु	०	३०	०	२६	५८१	२६	११९८	१७६६	२९०४	११५६			७६५७
अचक्षुलेश्या३	०	४१	११	३३	६००	३२	१२०२	१७८४	२९१६	११६४	०	०	७७८३
तेज	०	३०	१०	३१	५९०	३१	११९५	१७७१	२८९८	११५२			७७०८
पद्म	०	२६	०	२५	५७८	२५	११९५	१७७१	२८९८	११५२			७६७०
शुक्ल	१	२७	०	२५	५७८	२६	११९५	१७७२	२८९९	११५३	०	०	७६७६
भव्य	१	४२	११	३३	६००	३३	१२०२	१७८५	२९१७	११६५	१	१	७७९१
उपशम	०	२७	०	२५	५७८	२५	११९४	१७७०	२८९७	११५२	०	०	७६६८
क्षायिक	१	२८	०	२६	५७८	२७	११९६	१७७३	२८९९	११२३	१	१	७६८३
मिश्र								१७७०	२९९७	११५२	०		५८१९
सा०	०	३२	२	८	५८२	०	०	९	२३१२	११५२			४०९७

संज्ञी	०	२७	०	२६	१२७८	२६	११९६	१७७२	२८१८	११५२			७६७५
असंज्ञी		३२	११	७	४०	६	३८	४४	६६	४४	०	०	२४८
आहार	०	०	११	३३	६००	३३	१२०२	१७८५	२९१७	११६५	०	०	७७४६
अनाहार	१	४२									१	१	४५
का. यो. १	१	४२	११	३३	६००	३३	१२०२	१७८५	२९१७	११६५		०	७७८९

अजएमेवदेसेवि ॥ १३० ॥ सुरनिरयतुहगतित्रिणा सुहसाहारामणुअजाछट्ठ अणहाराअपमत्ते पुव्वेसंघयण-तिविणाते ॥१३१॥ इक्किकगंचपरओ ठाणाइगवीस माइनवमिच्छे चउवीसविणासम्मे गुणतीसतिमीसिसा-साणे ॥१३२॥ इगवीसाइसत्तग सगट्ठवीसविणुएगतीसंजा देसेसगवीसाईं पणपणवीसेणयुत्ताते ॥ १३३ ॥ इगतीसविणुमाए गुणतीसदुअप्पमत्तगिअपुव्वा खीणंजातीसेगं अयोगिनवअट्ठदुगठाणा ॥ १३४ ॥ योगी जिणेवीसदुगं बावीसग पंचअट्ठठाणाइं अपज्जत्तभवाभंगा विविखिआनन्थिमयभेआ ॥१३५॥ तिदुनउईं-गुणनवई छलसीअसीइगुणसीइ अठयछपन्नत्तरिनवअट्ठयनामसंताणि ॥ १३६ ॥ तिनवसव्वेसम्मे जिणवज्जुवसंतजावदुनऊइ आहारचेगविणुगुण नवइअडसीइजिणरहिआ ॥ १३७ ॥ निरयसु-

दुगअहवसुरदुग रहिआछलसीइअहअसीईयूआनिरयसुरजव भस-ईउव्वलिआतेणछक्केण ॥१३८॥ तेअनरदुअडसयरी उवसमसंता-निरयतिरिदुचऊजाई थावरआयव दुग साहारणविणासीई॥१३९॥ जिणविणुतेगुणसीई ते आहारगरिहीणछस्सयरी जिणविणुतेप-णसयरी अडनवसताविउदउव्व॥१४०॥ तेवीसतिगेपणगं अडवी-सेचउगसत्तगुणतीसे तीसेगतीसइग इग बेनेअठसंतसा ॥१४१॥ उदयेसत्तास्थानानि ॥ दुगअडपणसगनवसग अडनवनवपणतिग-तिगचकमा बीसाइसुउदएसु सतठाणाणिनेआणि ॥१४२॥ तिदु-नउईगुणनउई अठयछलसीअसीईअडसयरी अविरयपणलेसासु-अतिनउईविणुमिछअन्नाणे १० ॥१४३॥ तेरिगुणनवई इगथा-वरविगलामणेसुतिरिए असन्नेतमपणभव्वे अणहारेनवदविणुयोए १८ ॥१४४॥ अडसयरिविणामणुए ११ नवठविणुदसकसायच-चरखुदुगे सुधाहारगसन्नीअ नेएसुय १३ नाणुवहिदसे ॥१४५॥ छलसीअडसयरीविणुअडपवेअगदेसदेवपरिहारे उवसमगेतिदुनउई गुणनउईचेवअडसीई ५ ॥१४६॥ दुआसीगुणसीई छपणसयरी-हिंसुहमसामईए तेएनवद्वासहीआ खवगाहक्खायगेनेआ ० ॥ १४७ ॥ तिनउईचउनिणुकेवल दुगिछठाणादुसासणेमीसे छोन-वईअडसीईगुणनउईयुआयतेनिरए ५ ॥१४८॥ अडसीछउसीसीई अडसयरीमिच्छसभवाभव्वे १ छगदुगदुगचउपचसु दुसुअडतिसु-चउछगमेग ॥१४९॥उदयुव्वुदीरणाए सामिचाएनविन्नईविसेसो मूत्तूणयइगुयालं सेसाणसव्वपयडीण ॥१५०॥ नवउदओअयोगे उईरणातेरगेअवुछिन्नामणुआउवेअणीए उईरणाअपमत्तंजा॥१५१॥ ससाणपयडीण छेअममयाउआलिगामोत्तूं पडिगमाणयसमग अपडिगहीयाणगिसमंति ॥१५२॥ अनिभागवग्गफड्डग अंतर ठाणंचकडगायकमा लोगामखगुणातेयोगठाणादलनिमित्त।१५३।

गुणस्थानेषुउदय-स्थाना.	२०	२१	२४	२५	२६	२७	२८	२९	३०	३१	९	८
मिथ्यात्व	०	४१	११	३२	६००	३१	१२००	१७८२	२९१५	११६४	०	०
सासादन	०	३२	२	८	५८२			९	२३१२	११५२	०	०
मिश्र.								१७७०	२८९७	११५२		
अविरत.	०	२८	०	२५	५७६	२८	११९४	१७७०	२८९७	११५२		
देशविरत.				२		२	१४८	२२०	३६२			
प्रमत्त.				२		२	७६	७६	१४६			
अप्रमत्त.								७२	१४४			
अपूर्व.									७२			
अनिवृत्ति.									७२			
सूक्ष्मसंपराय.									७२			
उपशांतमोह.									७२			
क्षीणमोह.									२४			
सयोगि.	१	१	१	१	१	१	१	२	२	१		
अयोगि.											१	१

सुहमनिगोआइखणप्पजोगवायरविगलअमणमणा अपज्जलहुप-ढमदुगुरु पज्जहस्सीअरोअसंखगुणो ॥१५३॥ असमत्ततसुक्को सो पज्ज जहन्नयरएवठिइठाणा इगओणंपएसा–अभव्वओणंतगुणी अदला ॥१५५॥ सिद्धाणणंतभाए उरलाईवग्गणातीअंगुणओ सव्वेतेअगभाई चउफासविहीणणंतगुणा ॥ १५६॥ धुवअधुवाय-अचित्ता सुन्नापत्तेअवायरेसुहुमे गुरुखंधेअवगाहो ऊणूणंगुलअ-संखसो ॥१५७॥ जंनाइलद्धदलीआ णंतसोसव्वदेसघाइणं तत्तो-अघायघाणं रसभेएअप्पवहुगंति ॥१५८॥ अप्पेपयडीवंधे योग ठाणेगुरूअगेगुरूओ लहुएलहुओअंधो दलमाणेदव्वमाणमिणं ॥ १५९ ॥ अवगाहणायखित्तं फुसणाअगुलअसखभागोअ सुहमा-उदयेसत्तास्थानानि.

२३।२५। २६	५	९२।८८।८६ ८०।७८
२८	४	९२।८९।८८ ८६
२९	७	९३।२२।८९ ८८।८६।८० ७८
३०	७	९३।९२।८९ ८८।८३।८० ७८
३१	१	९३
१	८	९३।९२।८९ ८८।८०।७९ ७६।७५।

२०	२	७९।७५
२१	८	९३।९२।८९।८८।८६ ८०।७८।७६
२४	५	९२।८८।८६।८०।७८
२५	७	९३।९२।८९।८८।८६। ८०।७८
२६	९	९३।९२।८९।८८।८६। ८०।७९।७८।७५
२७	७	९३।९२।८९।८८।८६। ८०।७६
२८	८	९३।९२।८९।८८।८६। ७९।७५।८०।
२९	९	९३।९२।८८।८६।८०। ८९।७९।७६।७५
३०	९	९३।९२।८९।८८।८६। ८०।७९।७६।७५
३१	५	९२।८८।८६।८०।७६
१	३	८०।७६।९
१	३	७९।७५।८

गुरूआलोआ कालोठिईठाणमाणंच ॥१६०॥ अंतरमबंधकालो अणुदयकालोअसंतकालोय सव्वाणुणंतभागे लोगस्सअसंखमेभागे ॥१६१॥ मोहेवसमोमीसो चउवाईमृअटकम्मगुअसेसा भावापुणजहसंभव मग्गणठाणेगुनेअव्वा ॥ १६२॥ चउदुगतिगपणचउतिग, तीसातीसासगठ दुगवीसा, वीसगुणवीसतेरस बारसभावा- गुणठाणे ॥१६३॥ थोवाणुगाउखंधे नामेगोएसमोअअहिओअ तत्तोविग्घावरण दअहिओमोहेतओअहीओ ॥१६४॥ ततोवयवे अणिज्जं अहिअंगुणमग्गणासुयोगाओ उद्धरीअसमयाओ कम्मसंवेहगंथमिणं ॥ १६५ ॥ इयकम्मबंधबद्धा तव्वेअणओअसुहदुहंपत्ता तत्थयसमभावत्थं कम्मसरूवविभावेज्जा ॥१६६॥ परमप्पानाणंपुण झाणठाणंचसिवपयनिहाणं तंपुणकम्मविवेगे कम्मविवेगोअतन्नाणे ॥१६७॥ अप्पगहोपरचाओ सज्झत्थत्तंचधम्मझाणंच आयमसुक्कंहवइ कम्मसरूवस्सनाणेण ॥१६८॥ अग्गायणीपुव्वाओ उद्धरीआपगेइसंगहागंथा तत्तोदेविंदेणं कम्मगंथाकयासुकया ॥१६९ ॥ तत्तोऊद्धरिऊणं बंधाइसुकम्मभंगसंवेहं सिरिजिणचंदमुनिसर रज्जेभणीअंसमासेणं ॥१७०॥ सुविहियखरयगच्छे ॥ युगवरजिणचंदसुरिसाहाए पाठगपुन्नपहाणा तस्सीसासुमइसागरापुज्जा ॥१७१॥ वरसाहुरंगवायग तस्सीसापाठगासुयसमुद्दा सिरिएयसारअज्जा पुज्जाविज्जानिहाणाणं ॥१७२॥ सुयवायगागुणड्ढा नाणधम्मा सुनाणधम्मधरा निवईणविसंपुज्जा रायहंसागणिप्पवरा ॥१७३॥ तस्सीसेणयभणीअं देवचंदेणआयसरणट्ठा नाणच्छं (पाययेपाय) सावगवरदेवरायस्स ॥१७४॥ इतिश्रीकर्मसंवेधभंगप्रकरणं समाप्तं॥ शुभंभवतु ॥ कल्याणमस्तु ॥

स १९७१ वर्षे द्वि. अषाढ सुदि १ दिने श्रीजेसलमेर
महादुर्गमध्ये लिखितं भोजक किशोरचद
श्रीमद् विक्रमपुरवास्तव्य,

श्रीमद् देवचंद्रजी कृत

विचार रत्नसार.



प्रणम्य श्रीमहावीर, शंकर परमेश्वर ।
विचाररत्नसारस्य, क्रियते बालबोधक ॥ १ ॥

श्री जीनवाणीमहिमा वर्णन

श्रीवीतरागनी वाणी भवनेलकृपाणी, संसारसमुद्र तारिणी, महामोहान्धकार दिनकरानुकारिणी, क्रोधदावानलोपशमिनी, मुक्तिमार्गप्रकाशिनी, कलिमलमलयिनी, मिथ्यात्वछेदिनी, त्रिभुवनपालिनी, पापविशोधिनी, मन्मथस्तंभिनी, अमृतरस आस्वादिनी, हृदय आल्हादिनी, आगमोद्गारिणी, चतुर्विध संघमनोहारिणी, भव्यजनकर्णामृतधारिणी, सकल कुमतिनिवारिणी, सर्वसंशय निवारिणी, योजनप्रमाण विस्तारिणी, एहवी श्रीवीतरागनी वाणी महा प्रभाविक अतिशयवंत जाणवी.

ते वाणी भव्य प्राणीओए अवश्य सद्गुरु पासे सांभळवी, केमके १ जीव, २ अजीव, ३ पुण्य, ४ पाप, ५ आस्रव, ६ संवर, ७ निर्जरा, ८ बंध, ९ मोक्ष, १० धर्म, ११ अधर्म, १२ हेय, १३ ज्ञेय, १४ उपादेय, १५ निश्चय, १६ व्यवहार, १७ उत्सर्ग, १८ अपवाद, १९ आस्रव, २० परिस्रव, २१ अतिचार, २२ अनाचार, २३ अतिक्रम, २४ व्यतिक्रम, इत्यादि सांभळ्या विना शास्त्रना भेद न जणाय. परंतु पुण्यानुबंधी पुण्य विना श्री जिनवाणी सांभळवानी रुचि जीवने थती नथी, केम

जे सुठाम, सुगाम, सुजात, सुभ्रात, सुतात, सुमात, सुवात, सुकुल, सुबल, सुस्त्री, सुपुत्र, सुपात्र, सुक्षेत्र, सुदान, सुमान, सुरुप, सुविद्या, सुदेव, सुगुरु, सुधर्म, सुवेश, सुदेश, ए बावीश प्रकारनी उत्तम जोगवाइ सुपुण्य विना न पमाय, अने ते पुण्य-बंध तो सत्संगसेवन तथा कुसंगना त्यागवडेज थाय छे; माटे सुमति, शीलवंत, संतोषी, स्वजन, साचाबोला, सत्पुरुष, सुमेला, सुलक्षण, सुकुलीन, गंभीर, गुणवंत, गुणज्ञ, एहवा पुरुषोनो संग करीए तो धर्म पामीए; तथा चुगल, चोर, छल-ग्राही, अधर्मी, अधम, अविनीत, अधिकबोला, अनाचारी, अन्यायी, अधीर, अधुरा, निःस्नेही, कुलक्षणा, कुबोला, कुपात्र, कूडाबोला, कुशीलिया, कुशासनी, कुलखंपण, भूंडा, मूंछ एहवा पुरुषोनो संग न कीजे.

प्रश्नोत्तर रत्नसार.

१ प्र०—जीव धर्म केम पामे ?

उ०—जीव त्रण प्रकारे धर्म पामेः—१ गुरुना उपदेशथी, २ पूर्वभवना अभ्यासथी, ३ सहज स्वभावे वैराग्यादि संयोगे पामे एम उपदेशसार नंदीपच्चीशीमां कह्युं छे.

२ प्र०—अभ्यास केटला प्रकारना छे ?

उ०—चार प्रकारनाः—१ सूत्रअभ्यास, २ अर्थ अभ्यास, ३ वस्तु अभ्यास, ४ अनुभव अभ्यास.

३ प्र०—जीवने पुण्य, पाप, अने वैर केवी रीते बंधाय छे, अने ते केवा फळरूपे परिणमे छे ?

उ०—जीवने दयावडे पुण्य उपजे छे, अने हिंसावडे पाप नीपजे छे, छकायना जीवने हणवाना परिणाम थाय, त्या पाप निपजे, ते छकायना जीवने त्रिकरण योगे हणता, वैर अने पाप ने निपजे, त्या पापना उदये अशाता, आकुळता, उद्वेगता, अस्थिरता उपजे, तथा वैरना योगे ते जीव आवी यथायोग पीडे.

४ प्र०—धर्म, पुण्य, अने पाप कर्म शाथी उपजे ?

त्रण प्रकारः—१ दर्शनमोहनीय कर्मना क्षयोपशमथी धर्म उपजे, २ चारित्रमोहनीयना उदयथी पुण्य पाप उपजे; तेमा अविरतिनो उदय मद थाय तथा क्षयोपशम थाय त्यारे विरतिनो उदय थाय, ते वारे षट्कायना जीव उपर दया परिणाम उपजे, तेथी पुण्य उपजे, ३ अविरतिना तीव्र उदये पाप निपजे.

हवे जे पुण्य पाप छे, ते चारित्रमोहनीयना उदयना मदपणाए तीव्रपणाए होय, अने धर्म, दर्शनमोहनीय कर्मना क्षयोपशम के क्षयथी होय, तथा पुण्य पापना फळ भोगवावे ते वेदनीय कर्म तेना उदय वेदावे (फळ देखाडे), तथा पुण्य पापनो वध पडे ते मोहनीय कर्मनी मुख्यपणे, पुण्य पाप परिणमे ते अंतराय कर्मने क्षयोपशमे.

ज्या राजा न्यायी अने सौम्यदृष्टि होय, अने आचार्य निस्पृही होय, त्या जैन धर्म विशेष प्रकार प्रवर्त्ते छे

५ प्र०—देशना कोने कहिये ?

उ०—ज्या मिथ्यात्वनी पुष्टि न थाय, मार्ग विरुद्ध न प्रकाशे, आत्मस्वरूप उपादेयरूपे प्ररूपे, तथा शुभ क्रियाने अत्यादरपणे प्ररूपे, शुभ क्रियाना फळनी

वांछा न करावे, पापनी आसेवना टाळे, तिरस्कार रखावे इत्यादि आगमोक्तरीते शुद्ध प्ररुपणा ते देशना कहीये.

६ प्र०—पुण्य क्रिया अत्यादरपणे सेववी, पण सेना फळनी वांछा न करवी तेनुं रहस्य शुं ?

उ०—जो पुण्यक्रिया शुभ व्यापारे शुभयोगे न आदरे तो मार्ग विरुद्ध थाय, परंपराए पण वितराग मार्गे न जोडाय; अने जो पुण्यना फळनी वांछा करे तो निदान (नियाणा) रूप मिथ्यात्व परिणमे; जो सहजस्वरूपे शुभ क्रिया करे तो कर्मनो काट निवारी शीघ्र मुक्तिपद पामे; ए रहस्य छे.

७ प्र०—हेय, ज्ञेय, उपादेय एटले शुं ?

उ०—समभावे हेय, यथार्थे ज्ञेयं स्वरूपे उपादेय; सारांश के आत्मा स्वभावमां रहेतां सर्व अनात्मिक परमावनो हेय एटले त्याग थाय छे; यथार्थ ज्ञान थये ज्ञेय एटले जाणवा योग्य पदार्थोनुं ज्ञान थाय छे; अने ज्ञान दर्शनादि गुणोने अनुयायी चेतना थये स्वरूप ग्रहणरुप उपादेय थाय छे; एटले आत्मानुं पोतानुं स्वरूप आत्माए ग्रहण करवुं ते उपादेयनो भावार्थ छे.

८ प्र०—काउस्सग्गनुं विशेष स्वरुप कहो ?

उ०—काउस्सग्ग द्रव्य अने भाव वे प्रकारे कह्यो छे. उववाइ सूत्रमां द्रव्य काउंस्सग्ग चार प्रकारना छेः—१ शरीर काउंस्सग्ग, २ उपधि काउस्सग्ग, ३ भत्तपाण काउस्सग्ग, अने ४ क्रोधादि चार कषायना त्याग रूप काउस्सग्ग. (कषायकायोत्सर्ग.)

भाव-काउस्सग्ग त्रण प्रकारे छे—१ कपाय काउस्सग्ग, २ ससार काउस्सग्ग, ३ कर्म काउस्सग्ग, ते मध्ये कपाय काउस्सग्ग क्रोधादि चार प्रकारना छे, संसार काउस्सग्गने (देव, मनुष्य, तिर्यंच, अने नरक ए गतिनी इच्छा रहितपणा रुप) चार प्रकारनो जाणवो, कर्म काउस्सग्ग आठ प्रकारनो, ते ज्ञानावरणीयादि आठ कर्मना भेदे आठ प्रकारनो जाणवो.

९ प्र०—विधि अने अविधिए करेली क्रिया यथाक्रमे केवा फळ रूपे परिणमे ?

उ०—शुभ क्रिया जे विधिनी छे ते स्वभावरूपे परिणमे, त्यां निर्जरा निपजे, तथा शुभ क्रिया जे अविधिनी छे ते बंधरूपे परिणमे, ते लौकिक यश सौभाग्यादि फळरुप परिणमे, तथा पुण्यरुप परिणमे ते बंधरुप थाय, अने तेथी ससार भ्रमण विशेष निपजे.

१० प्र०—जीवने खेद उपन्यो केम टळे ?

उ०—जीवने खेद निवारवाने अर्थे पूर्वकृत कर्म संभारीए. जेवा जीवे पूर्वे कर्म बांध्या छे, तेवा उदये आवे छे, ते मध्ये केटलाएक कर्म प्रदेशथी वेदीने खेरवे छे, केटलांएक निविड कर्म बाध्यां ते विपाके (रसोदये) वेदीने खेरवे, पण दृष्टिमान् ज्ञानी तो, ते कर्मोने समभावे भोगवतां थकां उदयने निष्फळ करे छे, आलोइ, निंदी, पश्चात्ताप करे, तेवारे अल्पबंध थाय, बहु निर्जरा करे, ते माटे बंध निवारवाने अर्थे उदय निष्फळ करे, एटले कर्मनो विपाक समभावे भोगवे, अने शुद्धोपयोगे स्वरूप विचार त्याग बंध अल्प करे.

११ प्र०—धर्म कथा केटला प्रकारनी ?

उ०—चार प्रकारनीः—१ आक्षेपिणी, २ विक्षेपिणी, ३ निर्वेदिनी ४ संवेदिनी; त्यां सत्य मार्गमे विषे जीवने जोडावे ते आक्षेपिणी, अने मिथ्यात्व मार्गथी निवर्तावे ते विक्षेपिणी, तथा निर्वेदिनी ते वैराग्य उपजावे एटले संसार जे विषयकषायनी मलीनपरिणति ते थकी जीवने उद्विग्न रखावे, अने संवेदिनी ते मोक्षाभिलाष उत्पन्न करावे.

१२ प्र०—भावथकी नव निधान कयां ?

उ०—केवळीआश्रिने नव क्षायिक लब्धि उपजे ते नव निधान जाणवां; अने मुनिआश्रि पांच इंद्रियना विषयना विकारथकी, तथा क्रोधादिक चार कषाय थकी जे निवर्त्या ते महाभागने भाव थकी अखुट नव निधान प्रगट्यां जाणवां.

१३ प्र०—पांच इंद्रियोना विकार मटे त्यारे कया गुण निर्मळ थाय ?

उ०—चक्षु इंद्रियनो विकार मटे त्यारे हृदयने विषे निर्मळ ज्ञानचक्षु प्रगटवारुप गुण निपजे; श्रोत्रेन्द्रियनो विकार मटतां जिन वचन श्रवण प्रीतिसहित प्रतीति पूर्वक थाय, जीव्हा इंद्रिय विकार मटतां आत्मिक अनुभव रसस्वाद प्रगटे; घ्राणेन्द्रिय विकार मटतां आत्मिक गुण सुवासना प्रगटे, स्पर्शेन्द्रिय विकार गये आत्मप्रदेशे स्वभाव परिणति स्पर्शन गुण प्रगटे.

१४ प्र०—क्रोध, मान, माया, लोभ गये कया गुण प्रगटे ?

उ०-क्रोध गये समता गुण प्रगटे, मान गये मार्दव गुण प्रगटे, माया गये आर्जव गुण प्रगटे, लोभ गये संतोष गुण नीपजे.

१५ प्र०-चार प्रकारे मिथ्यात्व छे ते केवी रीते ?

उ०-१ प्रदेश मिथ्यात्व, २ परिणाम मिथ्यात्व, ३ प्ररूपणा मिथ्यात्व, ४ प्रवर्तन मिथ्यात्व, ते मध्ये जीव व्यवहार समकित पामे त्यारे प्ररूपणा तथा प्रवर्तन मिथ्यात्व टळे, अने ग्रंथिभेद थई उपशम, क्षयोपशम समकित पामे त्यारे परिणाममिथ्यात्व टळे, अने क्षायिक समकित पामे त्यारे प्रदेश मिथ्यात्व टळे.

१६ प्र०-देशना केटला प्रकारनी छे ?

उ०-१ धर्म देशना, २ गति देशना, ३ बंधदेशना, ४ मोक्ष देशना, ते मध्ये धर्म एटले जीवनी शुद्धात्मपरिणति तेनी सन्मुख जीव जेथी थाय, तत्त्वाभिलाष जेथी प्रगटे, एवो उपदेश ते धर्म देशना, जे थकी जीवने विषय कषायनी मलीन परिणति वधे, चतुर्गति भ्रमण विस्तार पामे एवी सावद्य देशना ते गति देशना, जे उपदेशथकी जीवने नाना प्रकारना कर्मोनो बंध पडे एवी प्रवृत्ति करवानुं मन थाय ते बंध देशना, जे साभळवाथी जीव वैराग्य परमरस पामी, यथार्थ बोध लही पोतानुं शुद्ध आत्मस्वरूप जे सकळ कर्मथी रहित मोक्षरूप छे, ते निपजाववानी तीव्र रुचि प्रगटे ते मोक्ष देशना कहिए

१७ प्र०-अनर्थ दंडना चार प्रकार कया ?

उ०–१ अपध्यान एटले आर्त अने रौद्र ध्यान, २ प्रमादाचरण, ३ हिंसकशस्त्रप्रदान, अनर्थ दंड एटले जीव हिंसानां साधनो शस्त्रादि पूरां पाडवां ते, ४ पापनो उपदेश देवो.

१८ प्र०–आठ प्रकारना वचन परिसह कया ?

उ०–१, हीलणा परिसह ते मुनिनी पूर्व गृहस्थाश्रम अवस्था हीन जात्यादि दूषणो काढी कठोर मर्म वचने साधुने हीले निंदे ते; २ खिसणा परिसह ते साधुना पूर्व कृत कर्म (जनित) अवगुण उघाडा पाडी निंदे, ३ निंदण परिसह ते साधुपुरुषनो निरादर करे दुगंछादि दर्शावे, ४ गर्हणा परिसह ते साधुओना समक्ष छता अछता अवगुणो बोले, ५ ताडणा परिसह ते साधुने मारे, कुटे, ६ तर्जना परिसह ते साधु प्रत्ये अतिशय आक्रोश करी अत्यंत कठोर वचन कहे, भयंकरता दर्शावे, ७ पराभव परिसह ते साधुनां वस्त्र पात्रादिक संजम उपकरणो हरे, भांगे, तोडे, फोडे. ८ एषणा परिसह ते साधुने भातपाणी प्रमुखनो अंतराय पाडवानो भय देखाडी त्रास उपजावे, ए आठ वचन परिसह, साधु पुरुषे सम्यक् प्रकारे सहन करवां, पण धर्मथी चलायमान थवुं नहि.

१९ प्र०–१ सिज्झइ, २ बुज्झइ, ३ मुच्चइ, ४ परिनिव्वाइ एटले शुं ?

उ०–१ सिज्झइ एटले परिणामनी निर्मळतावडे कर्मनुं ओछुं करवुं, आत्मप्रदेशथकी कर्मांश पुद्गलो घटाडवा ते. बुज्झइ एटले वस्तु स्वरूपनुं तदनंतर ज्ञान थवुं ते.

३ मुच्चइ एटले कर्मपुद्गलोनुं आत्मप्रदेशथी क्षय थवुं, कर्म सत्तानो नाश थवो, फरी तेवो व न कदी न पडे तेवा परिणाम ते. ४ परिनिव्वाइ एटले आत्मा ठरणपणाने पाम्यो, निजस्वरुप आलंबि समाधिष्ठ थयो ते.

२० प्र०—बुद्धे, मुत्ते, पडिनिव्वुडे, अडगडे शब्दोनो भावार्थ कहो ?

उ०—१ बुद्धे एटले आत्मा संपूर्ण ज्ञानस्वरूपी थयो ते. २ मुत्ते एटले सर्व कर्मथी मुकाणो माटे मुत्ते. ३ पडिनिव्वुडे एटले सर्व कर्म शिथिलभूत एटले जरजरित थयां ते ४ अंडगडे एटले अंतकृते कहेता ससारनो अंत कर्यो भव स्थिति सदतर नाश करी ते.

२१ प्र०—चार प्रकार धर्म केवी रीते छे ? ते तेना फळ परिणाम सहित यथार्थ समजावो

उ०—१ आचार धर्म ते रुडा आचारनु सेवन करवु जेथी अनाचारनो त्याग थाय. २ दया धर्म ते सर्व प्राणीमात्रने आत्मवत् जाणी सर्व प्रत्ये समान मैत्रीभाव दर्शावी, यथाशक्ति उपकारादि करी, तेमनु निरंतर भलु चिंतववु, पण अंतर्मा कदापिकाळे अपराधी उपर पण बुरु चिंतववाना द्वेषपरिणाम न राखे, तेम बेपरवाइ प्रवृत्ति पण न दाखवे. ३ क्रिया धर्म ते सामायिक, पोसह, प्रतिक्रमण, पूजादि शुभ करणी विधिए आदर सहित कर, जेथी कर्मनो काट उतर, भवसंतति घटे, परपराये मुक्ति मार्गे जोडाय अने ४ वस्तुधर्म ते जे थकी वस्तु एटले आत्म स्वरुपानुगत पूर्ण बोध उपजे, स्वरूपाचरण स्वरूपरमण थाय अने शुभाशुभ समस्त

कर्म निर्जरे तेवो सर्वोत्तम धर्म, एम ए धर्मना चार प्रकार वस्तुगते परमात्माए प्रकाश्या छे, अने तेना कारणरूप चार व्यवहार धर्म ते दान, शियळ, तप अने भाव धर्मो छे, आ चार धर्मवडे अनाचार दूर थाय, लौकिकयश प्रतिष्ठा पामे, अन्य तीर्थिओ पण जैनधर्मनी प्रशंसा करे, जैनाचार अनुमोदे; माटे आचारः प्रथमो धर्मः इति वचनात्; दयाधर्मवडे हिंसक कर्म प्रवृत्ति टळे, शुभ पुण्य पुष्ट करी परंपराये जीव मुक्तिने योग्य थाय; ए रीते फळ परिणाम पूर्वक धर्मना चार प्रकारने यथाशक्ति सविनय सेवन करी कोइ परस्पर दुहवाय नहि, एम जे उत्तम प्राणी यथार्थ स्याद्वाद रीते जाणीने पाळे ते सुलभबोधी थइ वहेलो सिद्धि वरे; एवीज रीते जे प्राणी क्रियाविधि आदरे, ध्यानपूर्वक उपयोग शुद्ध राखे, ते प्राणीना सर्व मनोवांछित पूर्ण थवा साथे शीघ्र परमात्मस्वरूपने पामे.

२२ प्र०—त्रण प्रकारनां कर्मनुं स्वरूप समजावो ?

प्र०—द्रव्य कर्म ते ज्ञानावरणीयादि आठ कर्मोनी पुद्गलदलिक वर्गणा, २ नोकर्म ते औदारिकादि पांच शरीर, ३ भावकर्म ते आत्मानी अनादि काळनी प्रदेशे लागेली रागद्वेषनी अशुद्ध परिणति. ते मध्ये द्रव्यकर्म तथा नोकर्म पुद्गलाश्रित छे, भावकर्म आत्माश्रित छे; पहेलां बे कर्म विनाशी छे केमजे अनादि अनंत अभव्याश्रि अने भव्याश्रि अनादि तथा सादि सांत भांगे आत्मप्रवृत्तिरुप होवाथी छे, तथा हर्षोल्लास ते भावकर्म आश्रित छे. अहिं दृष्टांतथकी आ वात विशेष स्पष्ट थशे

तेथी कहीए छीए—के जेम एक चोखा नामना धान्यनी कोठी छे, तेमां धान्य जे छे ते द्रव्य कर्म, अने कोठी ते नोकर्म, अने चोखाने लागेलो जे भिणो ते समान भावकर्म चीकासरुप आत्मानी अशुद्ध परिणति जाणवी.

२३ प्र०—अरिहंतादि नव पदनो भावार्थ तथा ते प्रत्येकनुं तन्मय ध्यान करता थकां शुं शुं गुण निपजे ते भिन्न भिन्न कहो ?

उ०—अरिहंतादि पचपरमेष्ठिमहाराजनुं स्मरण करतां उदयकर्मनुं निवारण थाय, अरिहतादिनु द्रव्यथी शरण करे तो द्रव्यथी उदय आवतां सर्व पाप निष्फळ थाय, विपाक वेदना पण अल्प थाय, इत्यादि घणो गुण निपजे, सर्व द्रव्यपापनो नाश थाय, एम आत्मा आत्मानुं स्मरण करे, ध्यानगत् वज्रपिंजरवत् पोताने स्वरूपे परिणमे, त्यारे सर्व कर्मनो नाश करे, एम आत्मस्मरण तथा निमित्तस्मरणनुं स्वरूप जाणवुं, हवे अरिहतने संभारता, समरतां, परिणमतां आत्माने जे गुण निपजे ते कहिए छीए, १ अरि एटले रागद्वेषरूप भावशत्रु तेनो नाश थाय, अने वीतराग स्वरूप प्राप्त थाय, २ तेम सिद्धपदनुं तन्मय ध्यान धरता आत्मा निष्पन्न अरुपि परमात्मभावने पामे, ३ तेम आचार्यपदनुं ध्यान धरता शुद्ध पचाचार प्रवर्तन शुलभ उदय आवे, भवातर आचार्य गणधरादिपद पामे, ४ उपाध्यायपदनुं ध्यान धरता शास्त्रार्थ सूत्रार्थ सुलभ थाय, अध्यापक शक्ति भवातरे प्रगटे, ५ साधुपदनु ध्यान

धरतां मुक्तिमार्गनी साधना सुगम थाय, सुलभबोधिपणुं प्रगटे, वळी चारित्र सुकर थाय, गजसुकुमालनी पेठे शीघ्र मुक्तिपद पामे; ६, दर्शनपद आराधतां सम्यक्त्व निर्मळ करे, वस्तु प्रतीति दृढ थाय, परमात्मस्वरूपनो अवगाढ पुष्ट परिचय निपजे, ७ ज्ञानपद आराधतां बोधशुद्धि थाय, तत्त्वभासन प्रकाश विस्तरे, ८ चारित्रपद आराधतां निरतिचारपणे पंच महाव्रतनी शुद्ध प्रतिपालना पूर्वक सामायकादि पांच भावचारित्र परिणति थाय, स्वरूप रमणता सुलभ थाय, ९ तपपद आराधतां इच्छा निरोध थाय, समस्त पौद्गलिक पीपासा टळे, तृष्णा दाह उपशमे, अने ममत्वभाव मळ गळी जाय इति भाव.

२४ प्र०—कर्मनो उदय तथा बंध जीवने केवी रीते थाय छे? ते स्पष्ट समजावो.

उ०—बांध्यां कर्म उदय आवे छे; जेवे रसे बांध्यां होय, तेवेज रसे तथाविध द्रव्य, क्षेत्र, काळ, भाव पामीने, प्रदेशे तथा विपाके भोगवे; ते भोगवतां नवां बंधाय पण समभावे वेदेतो निर्जरा थाय, अने विषम भावे एटले रागद्वेषादि मलीनभावे वेदे तो नवां बंधाय तथा विषमभावे भोगवीने पछी पश्चात्ताप करे तो कर्मबंधनो रसघात करी चीकास मटाडे, ते उदयकाळे सुगमताथी खरी जाय. अने जो कर्म विषमभावे भोगवे, दुर्ध्यान करे तो उदयकाळे अत्यंत दोहिलां भोगवीने खपावे; वळी वेदतां थकां नवां कर्मनो गाढ बंध करे.

२५ प्र०-बोध अने समाधिनु स्वरूप समजावो।

उ०-सम्यक् ज्ञान, दर्शन, चारित्र, रत्नत्रयी सुगम प्राप्ति ते बोध, अने अहिं तेम भवांन्तरने विषे निर्वेदनपणे तेनी सुलभता ते समाधि, एटले चित्तनी स्थिरता विश्रांतिभाव जाणवो.

२६ प्र०-वैराग्य अने संवेगमां शो फेर ?

उ०-संसार एटले विषय कषायादि महा मलीनताना कारणरूप शरीर, स्वजन परिवार, भोग वैभवादिथकी विरक्त बुद्धि एटले रागनो त्याग तेने वैराग्य कहीए. अने एकांत मोक्षनीज अभिलाषा, शास्वत स्वाभाविक चिदानंदघनमय परमात्मप्राप्तिनीज इच्छा तेने संवेग कहीए, अने एवा संवेगे करीने सहित होय तेज खरा संवेगी जाणवा

२७ प्र०-दान, शील, तप अने भाव ए चार कया साधनना बळवडे प्राप्त थाय ?

उ०-दान, धनबळथी। शील, मनबळथी। तप, तनबळ वडे। अने भाव, सुज्ञान बळे.

२८ प्र०-कइ वस्तुनी प्राप्ति खरा भाग्योदयवडे थाय ?

उ०-१ सद्गुरूनी देशना, २ सुदेवनी सेवना, ३ अने सुधर्मनी आराधना

२९ प्र०-तिर्यक् परिचय अने ऊर्ध्व परिचय कोने कहिए ?

उ०-धर्मास्तिकायादि पांच द्रव्यो जे सप्रदेशी छे, तेनी तिर्यक् परिचय संज्ञा छे, अने अप्रदेशी एक काळद्रव्यने ऊर्ध्व परिचय संज्ञा छे.

३० प्र०—धर्मनुं स्वरूप चतुर्विध कह्युं छे ते केवी रीते ?

उ०—१ वस्तुनो मूळ स्वभाव ते धर्म, २ क्षमादि दशविध यति धर्म, ३ दर्शन ज्ञान चारित्ररुप रत्नत्रयीधर्म, ४ छकाय जीवनी रक्षारुप धर्म.

३१ प्र०—मुनिने चतुर्विध संयम छे ते शी रीते ?

उ०—१ प्राण संयम, ते षट्कायजीववधनी अविरति टळी माटे, २ इंद्रिय संयम ते पांच इंद्रियोना विषय विकारोने टाळे माटे, ३ कषाय संयम ते त्रण कषायनी चोकडीना उदय मट्या माटे, ४ मन संयमं ते द्रव्य तथा भाव मनना विकल्प संवर्यां माटे.

३२ प्र०—द्रव्य मन अने भावमननो अर्थ समजावो.

उ०—द्रव्य मन ते पांच इंद्रियोना विषयरुप, मनोवर्गणा दलिकने अवलंबन मनन शक्ति, मनोयोगद्वाराए चिंतन परिणाम, निर्विकारी निर्विकल्पी शक्ति विशेष ते केवळीने पण होय. भावमन ते व्यक्ताव्यक्त संकल्प विकल्परुप विकारी मोहजनित, शुभाशुभ परिणामरूप छे.

३३ प्र०—स्वभावे तथा विभावे आत्मानुं परिणमन थाय त्यां शुं शुं फळ निपजे.

उ०—आत्मा स्वभावे परिणमे तिहां सम्यक्त्व गुण निपजे, तेनां फळ ज्ञान अने आनंद ए बे उपजे; अने ज्यारे आत्मा देहगेहादि परभावे परिणमे तिहां मिथ्यात्व निपजे; तेनां फळ विषय कषायरूप मलीन परिणति, चतुर्गति भ्रमणरूप संसार संतति छे. सुख दुःखरूप छे, एम जाणी उत्तम जीवोए विभावद-

ज्ञानो त्याग करी जेम बने तेम सत्संगे रही स्व-आलंबन, स्वभाव परिणमन, शुद्धोपयोगे करवा प्रयत्न करवो.

३४ प्र०–जीवना द्रव्य गुण पर्यायना घातक कोण छे ?

उ०–१ अज्ञानपणुं ते आत्मद्रव्य घातक छे, २ मिथ्यात्व ते आत्मगुण घातक छे, ३ अविरति ते आत्मिक सुख पर्याय घातक छे, तथा ४ अज्ञान अने मिथ्यात्व ते आत्मानु जीवपणु दाबे छे, आत्मस्वभाव परिणति रुंधे छे, अने अविरति दोष आत्मिक सुख रुंधे छे

३५ प्र०–जीव द्रव्यनिर्जरा अने भावनिर्जरा केवी रीते करे ?

उ०–जीव शुद्ध ज्ञानोपयोगे भावनिर्जरा करे छे, अने वैराग्यभाव उदासीनताए द्रव्यनिर्जरा करे छे.

३६ प्र०–पौद्गलिक इच्छा तथा मूर्च्छाभावे करी जीव शुं पुष्ट करे ?

उ०–इच्छाए अज्ञानपणुं, अने मूर्च्छाए मिथ्यात्व पुष्ट करे.

३७ प्र०–गुण पर्यायना घातक कोण ? तेनु स्वरूप कहो.

उ०-आत्माना गुणपर्यायना घातकः–१ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, ३ मोहनीय, ४ अंतराय ए चार घनघाती कर्म छे अने शेष वेदनीय आदि मूळ तो अघाती छे, पण मोहमिश्रित थये ते पण घातकपणे परिणमे छे, ते मध्ये अतिप्रबळ मोह कर्म छे, तेनी अठ्ठावीस प्रकृतियो छे ते मोह, राग अने द्वेष ए त्रण भागे वहचीए त्या मोहशब्दे मिथ्यात्व मोहनीय जाणवी, राग, द्वेष शब्दे चारित्र मोहनीय जाणवी. प्रथमनी मिथ्यात्वमोहनीयनी त्रण प्रकृति छे, ते

निर्मळ सम्यक्त्व गुणनी घातक छे, अने बी ? दशविध
त्रमोहनीय कर्मनी पचीस प्रकृतियो छे, ते मध्ये
मान ए बे चार चोकडीनी लेतां आठ थाय, अने धर्म,
नोकषायमांथी अरति, शोक, भय अने दुगंछा ए चार
गणतां सर्वे मळी ए बार प्रकृति द्वेषना घरनी अथवा
रागद्वेष जनित छे, अने शेष माया लोभादि आठ
कषाय अने हास्य, रति, अने त्रण वेद ए पांच मळीने
तेर प्रकृतिओ रागना घरनी छे.

३८ प्र०—शरीरगति, परिणामगति, श्रद्धागति, जे रीते परिणमे
छे ते रीते कहो ?

उ०—१ शरीरनीगति औदयिकभावे वेदनीय मध्ये छे, २
परिणामगति, विषय कषायनी प्रवृत्ति मध्ये इष्टानिष्टरूपे
छे, ३ श्रद्धानी गति, तत्त्व अतत्त्व विवेचन कर्णरूपे छे.

३९ प्र०—जीवना द्रव्य, गुण, अने पर्याय शाथी समरे एटले
सुधरे ?

उ०—दर्शन, ज्ञान, अने चारित्र गुणे करी अनुक्रमे समरे.

४० प्र०—ते शी रीते छे, ते विस्तारथी स्पष्ट समजावो ?

उ०—आत्मा द्रव्य असंख्यात प्रदेशी छे, तेनो जि थाय त्यां
प्रतीते तथा अनुमाने करी अनुभव करे ते दर्श
परोक्ष अने प्रत्यक्षे जे प्रतीतात्मक धर्म भासन निपजे,
जे आत्मद्रव्य दर्शन द्वाराए भास्यो—दिठो ते ज्ञान अने
सम्यक्दर्शन गुणे करी आत्मद्रव्य समरे; सम्यक्दर्श ज्यांहां
गुण हेतु ते द्रव्य दर्शन; तथा ते प्रतीतात्मक धर्मरूप
अनंत गुणनुं जाणपणुं थयुं ते गुण हेतु सम्यक्ज्ञान
जाणवुं; तथा द्रव्य अने गुणरूपे जे उपयोगना पलटण-

पणा रूप परिणमन थाय तेने पर्याय कहिये, ते पर्या-
यनो हेतु स्वरूपाचरण चारित्र गुण हेतु छे, अर्थात्
जीवना पर्याय चारित्र गुणे करी समरे, अने ज्ञान गुणे
जीवना गुण समरे, तथा दर्शनगुणे आत्म द्रव्य समरे-
सुधरे ए भाव जाणवो.

४१ प्र०-जन्म, जरा, अने मरणनु दु'ख केम टळे ?

उ०-शुद्ध रत्नत्रयीनी प्राप्तिए, ते आवी रीते के जीवे पूर्वे सम्यक्त्व पाम्या पहेलां अनत पुद्गल परावर्तन काळ सुधी जन्म कर्या, ते हवे सम्यग्दर्शन पाम्यो, माटे उत्कृष्ट कदाच जन्म करे तोपण अर्ध पुद्गल परावर्तन काळ उपरात जन्म न करे, माटे दर्शनगुणे जन्मनी पीडा टळे, तथा जरा जे शुभाशुभ कर्म उदयागते आवे छे ते सुखदु खरूप वेदाने, वेदनीय विपाक सम्यग्ज्ञान गुणे टळे, अने स्वरूपाचरण एटले शुद्ध व्रताचरण रूप चारित्र गुणे मरण पर्याय-गत्यतर जन्तु टळे, एटले चारित्रगुणे मरण वेदना टळे, साराश जे सम्यग्दर्शने जन्मनी, ज्ञान गुणे जरावस्थानी, अने चारित्र गुणे मरणनी वेदना टळे छे, ए भाव जाणवो

१० उ०

प्र०-योगप्रत्ययिक सत्तागत, मिथ्यात्वप्रत्ययिक अने अविरति प्रत्ययिक बन्धकृतकर्मो शी रीते टळे ?

उ०-अशुभ योगे बांधेला कर्म तप संजमादि शुभ क्रिया व्यापारवडे, सत्तागत कर्मो शुद्धोपयोगे स्वद्रव्य पर्याय परिणाम वडे, स्वभावाचरण शुद्ध ध्यानालवनवडे निर्जरे, सम्यग्दर्शनवडे मिथ्यात्व प्रत्ययी टळे, अने

अविरति प्रत्यइयां विरति परिणामे टळे, ते विषे कह्युं छे जे:—

दुहा.

आगमे अध्यातमतणा, कह्या घणा प्रबंध;
द्रव्यगुणयोगे परिणमे, (तो) सोनुं अने सुगंध.

४३ प्र०—कषाय, प्रमाद, इंद्रियविषयराग, अने योग प्रत्यइयां बांधेलां कर्म टाळवाना उपाय कया ?

उ०—कषाय प्रत्यइयां, उपशमादि समताभावे टळे; प्रमादे बांधेलां अप्रमाद दशावडे टळे; विषय राग प्रत्यइयां तपस्यावडे टळे; अने योग प्रत्यइयां अयोगी दशाए—शैलेशीकरणे प्रवर्तता टळे.

४४ प्र०—निश्चयनय अने व्यवहारनय जीवने शुं गुणकारी छे ?

उ०—सम्यक्दृष्टि जीव श्री जिणप्रणीत स्याद्वादना जाण, जैनशैलिना उपयोगी बोधवान, भव्यप्राणीओने निश्चयनय दृढता—आस्तिकना करणहेतु छे; अने व्यवहारनय ते जीवना पर्याय शुभाशुभ कर्मरूपे जे भर्या छे, तेने संभारवाना हेतुरूप छे; व्यवहारनय केडे उद्यम छे, अने निश्चयनय केडे चित्तनी स्थिरता—दृढता छे; एम ए बे नयो आत्मद्रव्यने समारवामां समकाळे गौणता मुख्यताए गुणकारी छे; माटे एमांथी एकपण नयने उत्थापे के एकांते निषेधे तो जीव एकांतवादी—मिथ्यात्वी जाणवो, एम श्री जिनेश्वर भगवंतनी वाणी छे, ते यथार्थ सद्दहवी.

४५ प्र०—निश्चय अने व्यवहारनुं सम्यक् स्वरूप स्पष्ट समजावो ?

उ०—श्री जिनवाणी प्रतीते ग्रहिने षट् द्रव्यना यथार्थ-

पणे गुणपर्याय धार, अनुभव प्रत्यक्षे स्वरूपने वेदे, तथा गुणपर्यायनु विलेखन करे, तथा पुद्गलादिक कर्म पर्यायमा तदाकार न परिणमे, पाच इंद्रियना भोग विषयो इष्टानिष्टरूप न वेदे, पोताना स्वरूपने भेद रत्नत्रयीरूपे आराधे, तेने व्यवहार सम्यक्त्वी कहिये; तथा पोताना गुण गुणी पर्याय अभेदरूपे-रत्नत्रयरूपे निर्विकल्प समाधि परिणमे, तेहने निश्चय-सम्यक्त्वी कहीए, त्या व्यवहार सम्यक्त्व ते निश्चय सम्यक्त्वनुं कारण छे, अने निश्चय सम्यक्त्व ते केवल-ज्ञाननु कारण छे.

४६ प्र०–पूर्वोक्त उभय सम्यक्त्वीने व्यवहार प्रवृत्तिए शु लाभ थाय ?

उ०–नवतत्त्व, षड्द्रव्यादिकनु आस्तिकभाव दृढ श्रद्धान, देव गुरु धर्मनु यथार्थ श्रद्धान, तत्त्व बुद्धिना विशेष प्रकाशे करी तत्त्वातत्त्वनु नयभगरूपे, अनेकात मार्ग विशेष रीते अवलबन थता आगळ परपराए वस्तु व्यवहारसम्यक्त्व जे पूर्व कह्युं छे, ते रूपने मेळवी आपे

४७ प्र०–धर्म, कर्म, पुण्य अने पाप केवी रीते थाय छे, अने तेना भिन्न भिन्न फळ शा शा छे ? ते बराबर कहो

उ०–जीव शुद्धोपयोगे वर्तता एटले पोताना द्रव्यगुण पर्यायथी तन्मयपणे परिणमे त्या ते धर्म कर, अने रागद्वेषमय अशुद्धोपयोगे वर्तता कर्म बाधे, एम शुद्धोपयोगे धर्म अने अशुद्धोपयोगे कर्म निपजे छे, तथा शुद्धोपयोगे शुभयोगे पुन्य बाधे, अर्थात् मन वचन कायाना योग प्रशस्तभावे तथाविध गुणानुरागे पूजा, सामायक,

प्रतिक्रमण, पोसह, सिद्धांत श्रवण, अभ्यास, मनन, दानादि शुभ योग प्रवर्ततां जीव पुण्यानुबंधी पुण्यनो रस ढाळे, तेमज वळी अशुभ मन, वचन, कायाना यागे विषयादि प्रवृत्तिए, अप्रशस्तभावे, तदाकार अभिरूपे परिणमतां जीव निविड पापबंध करे, हवे तेनां फळ कहिये छीएः—पुन्यथी शुभ गति, शुभ सामग्री, शाता, अनुकुळतादि शुभ संयोग जीव पामे, तथा शुद्धोपयोगी धर्मवडे कर्मनी निर्जरा करी मुक्तिपद पामे; तथा अशुद्धोपयोगे वर्ततां पाप बांधे, तेथी जीव संसारमां घणो काळ रहे, घणा भव करे, अशुभोपयोगे कठीन पापबंध करीने जीव ज्यां त्यां घणी अशाता पामे; सारांश जे पापे अशाता, पुण्ये शाता, कर्मे संसार अने धर्मे मोक्ष थाय छे.

४८ प्र०—अल्प पापबंध अने अल्प कर्मबंध शी रीते थाय? ते तेनी चौभंगी सहित कहो.

उ०—पांच इंद्रिय अने त्रण योगना अशुभ व्यापारमां तदाकारपणे न परिणमे, सखेद प्रवर्ते तो अल्प पापबंध थाय; ते आलोयणे निंदा गर्हा करतां छूटे; तथा अशुद्धोपयोगे जे कर्म बंध नीपजे ते भोगवे छुटे; पाप प्रवृत्ति करतां तीव्र मलीन परिणामे तन्मय थतां तीव्ररसे घणां निविड कर्म बांधे; अने घणी अशुभ योगनी हलचले पाप पुद्गल घणां मेळवे, पण तदाकारपणे तीव्र कषाय अनुबंध न होय तो शिथिल बंध करे; एम कोइ जीवने पाप घणुं अने कर्मबंध अल्प, कोइने कर्मबंध बहु अने पाप अल्प, कोइने पाप घणुं

अने कर्मबंध पण बणो, अने कोइने पापबंध कर्मबंध एके नहि; एम कर्मबंध अने पापबंध आदि चौभंगी जाणवी.

४९ प्र०-धर्म, कर्म अने भर्म शाथी नीपजे ?

उ०-शुद्धोपयोगे धर्म, क्रियाए कर्म अने मिथ्यात्वे भर्म निपजे.

५० प्र०-पाप, पुण्य अने धर्म ए एक वस्तु छे के जुदी ?

उ०-धर्म, पुण्य अने पाप ए त्रणे वस्तु भिन्न, गति भिन्न, उपयोगे भिन्न अने फळपणे भिन्न भिन्न छे, धर्म क्षमादि दशविध यति धर्मरूप छे, शुद्धोपयोग परिणति ए संवररूप छे, अने तेनुं फळ मोक्ष छे, शुभ परिणामे करी पुण्य नव प्रकारे बंधाय छे, ते बेंताळीश भेदे अनुकुळपणे शाताफळरूप भोगवाय छे, पुण्य पौद्गलिक जड वस्तु सोनानी बेडी रूप विनाशी संसार हेतुरूप होवाथी मुनिने निश्चयनये त्याज्य छे, पाप अशुभ परिणामे अढार प्रकार बंधाय छे, बीयासी प्रकारे प्रतिकुळपणे अशाता फळरूपे दुःखदायिपणे लोढानी बेडी समान भोगवाय छे, ते तो सर्वथा प्रकारे हेय छे एम धर्म स्वभाव जनित आत्मिक छे, अने पुण्य पाप कर्म जनित पाद्गलिक छे, धर्म सर्वथा प्रकारे उपादेय छे, शुभ कर्म व्यवहारे अपवादे उपादेय छे, निश्चय स्वरूपे हेय छे, अने अशुभ कर्म तो सर्वथा प्रकारे बने नये हेय एटले त्यागवा योग्य छे.

५१ प्र० धर्म जीवने शाथी निपजे ?

उ०—ज्यां सुधी जीवना परिणाम संकल्प विकल्पमां वर्ते छे, त्यां सुधी शुभाशुभ कर्मबंध निपजे, अने ज्यारे निर्विकल्प दशामां परिणमे—प्रवर्ते त्यारे शुद्ध धर्म प्रगटे; एम विकल्पे कर्म लाभ अने निर्विकल्पे धर्म-लाभ जाणवो.

५२ प्र०—स्वाभाविक रत्नत्रयी गुणनुं लक्षण स्वरूप कहो ?

उ०—बोधप्रकाश अने विलक्षण विचक्षणता ए ज्ञाननुं स्वाभाविक लक्षण जाणवुं; दृढ आस्तिकता, प्रतीतात्मक श्रद्धानगुण ते स्वाभाविक दर्शन लक्षण जाणवुं; तथा चित्तनी स्थिरता, अनुकुळता, स्वरूप रमणता ते स्वाभाविक चारित्र लक्षण जाणवुं; एम ए सामान्य-पणे रत्नत्रयीनुं वस्तुगते लक्षण जाणवुं, विशेष प्रकारे-तो वस्तु अनंत धर्मात्मक सामान्य अने विशेष स्वभाववंत समकाळे छे, तेमां जे विशेषात्मक धर्म एटले वस्तुने जाति क्रियादि अनेक विशेषणोयुक्त यथार्थ जाणवी ते ज्ञानगुण; अने वस्तुगते सामान्यावबोध ते दर्शन गुण; तथा स्वपर वहेंचण भेदज्ञानरूप जे विवेक, सदाचरण, अपि तु स्वरूपाचरणज ज्ञानना फलरूप विरति परिणति गुण छे, ते चारित्र लक्षण जाणवुं.

५३ प्र०—धर्म सांभळवो, जाणवो, अने आदरवो ते केवी रीते ?

उ०—वीतरागनी वाणी स्याद्वादरूपे छे, तेने आत्मस्वरूप प्ररूपणानी मुख्यताए जे धर्मनो सद्गुरु महाराज उपदेश करे छे, ते धर्मने अत्यादर सहित सांभळवो, स्वसमय एटले स्वशास्त्रानुसार, अने परसमय एटले परशास्त्रावबोध, एम स्वपरज्ञान परीक्षापूर्वक जेम शुद्धा-

शुद्ध धर्मनो प्रकाश–भासन थाय, तेम ते शुद्ध रत्नत्रयी आराधनरूप धर्मने विवेक बुद्धिए जाणवो, तथा जेने पोताना द्रव्यगुण पर्याय पोतानाज शुद्धात्म द्रव्य गुण पर्याय परिणतिरूपे परिणम्या छे, तेनो प्ररु-पेलो धर्म आदरवो. इतिभाव.

५४ प्र०–चेतना एटले शुं ?

उ०–ज्ञान दर्शन स्वभावरूप आत्मलक्षण एटले सुखदुःखनुं जे भान थवु—चेतवु एटले सुखे दुःखे जे चेते तेने चेतना कहिये, ते जीवनु लक्षण छे. हवे ते चेतनाना मूळ बे भेद छेः—१ ज्ञानचेतना, २ अज्ञानचेतना, ते मध्मे अज्ञानचेतना बे प्रकार छे ते १ कर्मचेतना, २ कर्मफळ चेतना, तेमां कर्मचेतना ते रागद्वेषादिने विषे जीवनु परिणमन जाणवुं, अने शुभाशुभ कर्म-फळनु वेदवु ते कर्मफळ चेतना जाणवी, ज्ञानचेतनानो कोइ भेद छे नहि, ते आत्माना शुद्धोपयोगरुप शुद्ध परिणति स्पर्शन ज्ञानरूप छे, ते सम्यगदृष्टि आत्माने होय छे, अने अज्ञानचेतना अशुद्धोपयोगना धरनी विभाविक परिणतिरूप मोहित मिथ्यादृष्टि जीवने होय छे, ज्ञानचेतना जीवने प्रगटे त्यारे कर्मचेतना तथा कर्मफळ चेतनारूप अज्ञानचेतना टळे.

५५ प्र०–त्रणे काळे जीव जे पापकर्मनो बंध करे छे तेना निवा-रण हेतु कया ?

उ०–गया काळना पापकर्म ते प्रतिक्रमणे मटे, अने वर्त-मानकाळना पापकर्म ते आलोयणे मटे, अने अना-गतकाळना पापकर्म पच्चक्खाणे टळे.

५६ प्र०—चार प्रकारे व्यवहार छे ते कया ?

उ०—१ अनुपचरित सद्भूतव्यवहार ते अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत सुख, अनंत वीर्य आदे दइने आत्मानी अनंत गुणात्मक शुद्धतारूप जाणवो, २ उपचरित सद्भूत व्यवहार ते क्षयोपशमिक ज्ञान, दर्शन, चारित्रादिरूप जाणवो, ३ अनुपचरित असद्भूत व्यवहार ते जीवना अनादि कर्मसंबंध एटले ज्ञानावरणीयादि अष्ट कर्मपुद्गलोनुं आत्मप्रदेशे अवस्थान छे ते जाणवो, ४ उपचरित असद्भूत व्यवहार ते लौकिक मान्यतारूप देशाचार रुढिरूप, ज्ञाति, पंच विगेरेना कल्पित कायदा, नियमरूप, तथा अनादिकाळथी जीवने लागेली परवस्तुनेविषे मारापणानी बुद्धिरूप स्त्री, पुत्र, बंधु, माता, पिता, स्वजनपरिवार, मित्र, शत्रु, घर, हाट, वस्त्रादि सर्व परिग्रह ममतानी मिथ्या कल्पनारूप उपचरित असद्भूतव्यवहार जाणवो.

५७ प्र०—त्रिविध कर्मनुं स्वरूप समजावो ?

उ०—१ द्रव्यकर्म ते ज्ञानावरणीयादि आठ कर्मपुद्गलो जे आत्मप्रदेशे लागेलां छे ते, २ भावकर्म ते रागद्वेषादि आत्मानी अशुद्धविभाविक परिणति, ३ नोकर्म ते औदारिकादि पांच शरीररूप जाणवां.

५८ प्र०—चतुर्विध दयानुं स्वरूप कहो ?

उ०—१ द्रव्यदया ते मिथ्यादृष्टि अज्ञानी जीवने होय ते परपौद्गलिकभावरूप परहस्ते वेचाणी, रागद्वेषे हणाइ ते नथी जाणतो, एवी जे अनुपयोगरूप नाम मात्र दयास्वरूप ते द्रव्यदया एक रीते परदयामां पण

अतर्भवे छे, २ परदया ते खटकाय जीवरक्षारूप निरतिरंत जीवने होय, ते सम्यक्दृष्टि अने मिथ्यादृष्टि बनेने सभवे छे, ३ भावदया ते शुद्धात्मोपयोगरूप सम्यग्दृष्टिने ज होय, केम जे पोतानो आत्मा दयारूपज छे एम जाणीने ते प्रवर्ते छे, ४ स्वदया ते सम्यग्दृष्टि मुनि, क्षपकश्रेणि आरूढने होय छे

५९ प्र०–त्रिविध मोक्षभेद समजावो ?

उ०–१ भावमोक्ष सम्यग्दृष्टिने होय, २ द्रव्य मोक्ष साधुने होय, ३ गुणमोक्ष ते तेरमा चौदमा गुणस्थानि केवली भगवंतने होय.

६० प्र०–त्रिविध चेतना केवी रीते कोने होय ? ते कहो.

उ०–१ कर्मचेतना त्रसजीवने, २ कर्मफल चेतना एकेंद्रियादिकने, ३ ज्ञान चेतना सम्यग्दृष्टिनेज होय.

६१ प्र०–त्रिविध ससारी जीवनुं स्वरूप समजावो ?

उ०–१ भवाभिनंदी जीव ते जेने संसारने विषे देह, गेह, स्त्री, पुत्र, धनादि परिग्रह उपर तन्मय राग–आनंद वर्तनारूप ससारभिमुखपणु मस्तपणे होय, विषय कषायादिमलीनपरिणतिमा ऐक्यता वर्ते, अने धर्मध्यानादि साधनमा मंदभाव रहे एवु भवाभिनंदीपणु मिथ्यादृष्टि मोहमूढ जीवोने होय छे, तेना नामः– लोभी, कृपण, दयामणो, कपटी, मत्सरी एटले अदेखो, विकण एटले सदा भयवान, अज्ञानि जेना सघळा आरभ कामो निष्फळ थाय छे एवो ते कठोर जाणवो, २ पुद्गलानंदि जीव ते सम्यक्त्विने कहिये, केम जे

तेने शुभाशुभ कर्मोदयो पुद्गलने विषे रति वेदावे एटले उपरथी सारां लागे, पण अंतरमां सुखरूप वेदवापणुं न होय, खेद थाय, केम जे संसारमां तेने कांइपण खरेखरा आनंदरूप नथी, एम एणे जिनवचनानुसार अंतरंग प्रतीतिपूर्वक जाण्युं छे, माटे तेने संसार प्रवृत्ति करतां अनादि भववासना आवी जवारुप पुद्गलानंद होय पण भवाभिनंदिपणुं टळ्युं छे, माटे सम्यग्दृष्टि जीवने पुद्गलानंदि कहिये, ३ आत्मानंदि जीव ते जेने केवळ आत्मिक आनंद, शुद्ध रत्नत्रय धर्मे, तन्मयपणे, स्वरूप लीनताए, समस्त व्याकुळता रहित, सहजस्वभाव विलासिपणारूप मुनि महात्माओने–योगीश्वरोने होय छे.

६२ प्र०–सद्गति अने दुर्गति ते शाथी थाय छे? ते विस्तारथी स्पष्ट समजावो.

उ०–शुभोपयोगे सद्गति, अने अशुभोपयोगे दुर्गति, अशुभोपयोगे संसार लाभ अने शुद्धोपयोगे एटले स्वभाव परिणतिए तन्मयपणे परिणमतां मुक्ति थाय, कारण के शुभ प्रकृतिने उदये जीवना योग शुभ वर्ते, तेथी धर्म हेतु शुभ क्रिया साधना करे तेथी पुण्य बांधे, अने तेथी सद्गति थाय छे; तथा अशुभोपयोगे अशुभ कर्मनो उदय थतां योग अशुभ वर्ते, तेथी अशुभ क्रिया विषयादि सेवे, तेथी पाप बंधाय छे, अने तेथी दुर्गति थाय छे; ते माटे पुण्य पाप शुभाशुभयोगने आयत छे, अने धर्माधर्म ते शुद्धाशुद्ध उपयोगने आयत छे, अर्थात् राग, द्वेष, मोहजनित अशुद्धोपयोगे अधर्म

छे, तेज मिथ्यात्व छे, अने शुद्धोपयोग ते रत्नत्रयरूप शुद्धात्म परिणति, वीतरागभाव तेज धर्म छे, अने तेज सम्यक्त्व छे.

६३ प्र०–रोगातंक ते शुं ? अथवा रोग अने आतंक एटले शुं ?

उ०–घणो काळ रहे ते रोग कहिए, अने तत्काळ प्राणघात करे ते आतंक.

६४ प्र०–बळ, वीर्य, अने पराक्रममां शुं फेर ?

उ०–शारीरिक शक्ति ते बळ, अने आत्मिक शक्ति ते वीर्य अने शुभाशुभ कर्मोदयानुसार पराक्रम जाणवुं

६५ प्र०–सम्यक्त्वी अने मिथ्यात्वीने मोहादिकर्मनी स्थितिमां शो फेर छे ?

उ०–सम्यक्त्व ते जीवनी सत्तारूप स्वद्रव्य तत्त्वभूत छे, ते ज्यारे पोतानो समय पामीने पडे तोपण तेने मिथ्यात्व पर्याय, द्रव्यगुणरूपे न परिणमे तेथी तेने मोहादिकर्मनी उत्कृष्ट स्थिति बंधाती नथी, माटे तेने मिथ्यात्व पर्याय परिणमतां तीव्रकषायोदये पण सम्यक्त्व मात्रने एक कोडाकोड सागरोपम माठेरो स्थितिबंध थाय छे, एम समजाएल छे, पछीतो ज्ञानवंत बहुश्रुत कहे ते सत्य, अने अनादि गाढ मिथ्यादृष्टिने तो तिव्रकषायोदये उत्कृष्ट सित्तेर कोडाकोडी सागरोपमनो मोहनीयबंध पडे छे.

६६ प्र०–हवे पुद्गल ते कर्म छे, अने जीव ते पण कर्म छे, ते शी रीते ?

उ०–पुद्गल परमाणु विभावरूपे परिणमे त्यारे द्व्यणुकादि

स्कंधकर्म निपजे; अने जीवपण पोतानो स्वभाव म्हेलीने विभावरूपे परिणमे त्यारे ते पण कर्मरूप थइ पुद्गल कर्मवर्गणाने ग्रहे, तेथी जीव पण परमार्थे कर्मरूप जड अजीवज कहेवाय; ते ज्यारे सम्यक्त्व पामे त्यारे पोतापणुं ओळखे, परथी पोताने न्यारो लखे अने तेथी ते परंपराये अकर्मरूप थाय छे, माटे तेने पुद्गलकर्म पुद्गल प्रत्यइयां उदयआश्रि रह्यां पण आत्मप्रतइयां गयां ए भाव जाणवो.

६७ प्र०—चार प्रकारे नव तत्त्वनुं स्वरुप विस्तारथी कहो ?

उ०—१ नामथी एटले जीव, अजीव, पुण्य, पापादि नव तत्त्वनां नाम सूत्रथी गाथानुसार जाणे, २ गुणथी एटले जीवाजीवादि नव तत्त्वना गुण भेदादिक अर्थथी जाणे; ३ लक्षण, स्वरूप लक्षणथी एटले जीवनुं लक्षण चेतना, अजीवनुं लक्षण अचेतनपणुं इत्यादि लक्षण स्वरूपे नव तत्त्व ओळखे; ४ परिणामथी एटले जीव जीवरूपे परिणमे, अजीव अजीवरूपे परिणमे इत्यादि नवे तत्त्व आप आपणेरूपे परिणमे ते परिणामथी चोथो भेद जाणवो.

६८ प्र०—नवे तत्त्वोनुं टुंक लक्षण स्वरूप कहो.

उ०—१ जीव असंख्यात प्रदेशी, अनंत गुणमय ते शुद्ध चेतनागुण ते जीवनुं लक्षण जाणवुं, २ वर्णादि पांच अजीवना गुण ते जेम धर्मास्तिकायनो गुण चलण सहायकता अधर्मास्तिकायनो गुण स्थिति साहायकता आकाशास्तिकायनो गुण अवगाहन दान समर्थता, काळनो गुण समयवर्तना लक्षण अने पुद्गलास्तिकायनो

सडण, पडण, नाश, मिलण, विखरणादि वर्ण गंध रसादिरूप जाणवो, ३ तथा उ गति, इंद्रियसुख, शाता आपे ते पुण्यनो गुण, ४ अधोगति, संक्लेशरूप अशातादि दुःख आपे ते पापनो गुण, ५ शुभाशुभ कर्मनुं आववु ते आस्रवनो गुण, ६ शुद्धोपयोगे शुभाशुभ कर्म आश्रवनो निरोध ते संवरनो गुण, ७ नवा कर्म पूर्व कर्मनी साथे मळीने बंधाय ते बंधनो गुण, ८ शुभाशुभकर्म, आत्मप्रदेशथी माटन थाय, देशथकी ते निर्जरे ते निर्जरानो गुण, ९ आत्मप्रदेशथी सर्वांशे कर्म पुद्गलोनो क्षय ते मोक्षनो गुण जाणवो.

६९ प्र०-केवा श्रावकने स्वसमय परसमयना जाण कहिये ?

उ०-जीवाजीवादिक नवतत्त्वने यथार्थ जाणे एटले जीव, निर्जरा, संवर अने मोक्षने उपादेयरूपे जाणी आदर, अने अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव अने बंधने हेयरूप जाणी तेनो त्याग करे, तथा नव तत्त्वने चार प्रमाणे, साते नये, चार निक्षेपे, द्रव्य भाव भेदे, स्याद्वादगर्भलिए षट् द्रव्यादि तेना गुण पर्यायना यथार्थ स्वरूप भासन पूर्वक जेणे भले प्रकारे जाण्या छे तेने ज्ञानी श्रावक कहिये

७० प्र०-कर्ताए कर्म अने क्रियाए बंध ते शी रीते ?

उ०-जेवो कर्त्ता होय तेवु कर्म निपजे, तथा ज्या जेवा हतु त्या तेवी क्रिया थाय, अने ते शुभाशुभ क्रियाए शुभाशुभ कर्म बंध नीपजे; कह्यु छे केः-

दुहो

कर्ता परिणामी द्रव्य, कर्मरूप परिणाम,
क्रिया परजायकी फर, वस्तु एक त्रय नाम.

माटे श्री जैन दर्शन उपयोगे तथा अक्रियभावे छे. जैन दर्शन श्रद्धान शुद्धोपयोगे छे, अने शुद्धोपयोग आत्मभावे छे, अक्रियभावे छे, अने बीजा योगे क्रिया धर्म छे, एम स्याद्वाद शैली पूर्णतारूप सर्वोत्कृष्ट सर्वोत्तम रीते महा कल्याणदायक श्री जिनशासन जयवंतु वर्ते छे, तेने हे चेतन ! ! ! तृं अत्यंत आदरपूर्वक स्विकार !

७१ प्र०—संवरतत्त्वनुं स्वरूप द्रव्यथी अने भावथी कहो ?

उ०—योग प्रत्ययिक कर्मने मुनि तप संजमादिके करी निर्जरावे छे, अने बीजां आवतां कर्मनो रोध करे छे; तथा अशुद्धोपयोग प्रत्ययिक कर्मने रत्नत्रयीरूप आत्मिकधर्मने विषे प्रणमावी शुद्धोपयोगे करी आत्मसत्ताने शुद्ध करी कर्म मळथी मुक्त थाय छे. एम योगसंवर आराधक मुनि, उदय आवतां कर्मने निष्फळ करे-रोके ते द्रव्यसंवर; अने उपयोग संवरे करी मुनि आत्मसत्ता शोधे एटले प्रदेशथी कर्म क्षय करे ते भावसंवर, अर्थात् योग संवर ते द्रव्य अने उपयोग संवर ते भाव.

७२ प्र०—छद्मस्थ सम्यक्दृष्टि, प्रत्यक्ष स्वरूप केम देखे ?

उ०—परोक्ष प्रत्यक्ष अनुभवगोचर अनुमान प्रमाण प्रतीते प्रत्यक्ष वस्तु स्वरूप देखे एटले माने, ते आवी रीतेः— पोताना परीणाम जे शुभाशुभ कर्म जनित छे ते रागद्वेषद्वारे, सम्यक् बुद्धिमार्गे ते परिणामने पोते यथार्थ लखे; ते प्रत्यक्ष देखवुं कहिये, ते परिणाम आत्मद्रव्यथी शाथी उठे छे ? तो के जीव परिणामे द्रव्य छे, तेने संगे जीवने बुद्धिपूर्वक निज परिणाम देखायाः—वादळे

ढांकेलो सूर्य मेघ पटाए आच्छादित छे, तोपण सूर्य-प्रभा प्रगट अनुमाने करी जाणी लोको दिवस अने रात्रिनो विभाग समजी शके छे, तेथी सूर्य दीठो जेम कहिए, तेम आत्मा पण जिन वचन प्रतीतरुप अनुमान परिणामद्वाराए निर्मळ बुद्धिगम्य दीठो कहिए, वळी जेम धूम्र दिठे अग्नि दिठो कहीए, तेम परोक्ष प्रत्यक्ष आत्मा, सम्यग्दृष्टि, वीतराग वचननी प्रतीते यथार्थ अनुभवरूप देखे छे, तेनी शुद्धि, प्रतीति, श्रद्धान छे, एवीज रीते आत्मानुं जे यथार्थ भासन–जाणपणु थाय तेने सम्यग्ज्ञान कहिये, अने जेवो निज स्वरूप एकाते वस्तुगते जीव द्रव्य निष्कलंक जाण्यो, तेवोज रागद्वेष विकल्प रहित परिणमे तेवार स्वरूपाचरण चारित्र प्रगटे,

एआरिसु वयसहिय एणण जिणेहिं निद्दिट्ठ,
मोक्खोलविहीणो, परिणामो अप्पणोधम्मो ॥ १ ॥

ए स्वरूप चोथा गुणठाणेथी मांडीने आगळ विशुद्ध, विशुद्धतर, विशुद्धतम, यथायोग्य पामीये पाठान्तर (६३ प्रश्न)

७३ प्र०–निर्जरानु स्वरुप, द्रव्यथी तथा भावथी सम्यग्दृष्टि अने मिथ्यादृष्टिने जेम होय तेम कहो.

उ०–निर्जरा एटले कर्मनु साटन करवु–खपाववु, ते मध्ये मिथ्यादृष्टिने निर्जरा, आस्रवबंधपूर्वक होय, सम्यग-दृष्टिने संवरपूर्वक द्रव्यभावनिर्जरा होय, केमजे तेने ज्ञानशक्ति अने वैराग्यनु बळ छे तेथी, त्यां ज्ञानशक्ति ते शुद्ध स्वरूपनो अनुभव, अने वैराग्यबळ ते अशुद्धो-पयोगनु निवारण, इहां ज्ञानोपयोगे भाव निर्जरा थी

रीते थाय ? ते देखाडे छेः–राग, द्वेष मोहादि मलीन-परिणतिने घटाडवी ते भाव निर्जरा, अने कर्मवर्गणानुं घटाडवुं थाय त्यां द्रव्य निर्जरा जाणवी, एटले जे उदय आवे ते निर्जरे, तेवां पाछां न बंधाय, बंध अल्प अने निर्जरा घणी; एवी रीते ज्ञानशक्तिये वैराग्यबळे सम्यग्दृष्टि, द्रव्य भाव निर्जरा करे छे; मिथ्यादृष्टिने कर्म निर्जरा अल्प अने फरी बंध घणो थाय छे. मार्गानुसारी सन्मुखभावी पण कर्म निर्जरा अवसरे अल्प बंध करे, तोपण वस्तुगते सत्ता एटले कर्म शक्तिनी निर्जरा तो सम्यग्दृष्टिने ज थाय छे. (प्रश्न पा. ६४)

७४ प्र०–आत्मप्रदेशे गुण पर्यायनी घटना शी रीते छे ?

उ०–आत्माना असंख्यात प्रदेश छे; एकेक प्रदेशे अनंता ज्ञानादि गुणो, अनंत शक्ति छे, वळी एकेक प्रदेशे उपयोग पलटणरूप ज्ञानादि गुणोना अनंत पर्यायो छे, आवी शुद्धात्मप्रदेशे घटना जाणवी; अने अशुद्ध आत्मप्रदेशे पूर्वोक्त गुण पर्यायो एकेक प्रदेशे रहेली अनंत कर्म वर्गणायुक्त छे; तेथी अशुद्ध संसारीपणे वर्ते छे. (पा. प्र. ६५)

७५ प्र०–दर्शन, ज्ञान, चारित्रनी प्राप्ति आत्माना द्रव्य गुण पर्यायथकी सिद्ध करो.

उ०–आत्मद्रव्यमां द्रव्यनी शक्ति ते सम्यग्दर्शन, गुणनो प्रकाश ते सम्यग्ज्ञान, अने पर्यायनुं ठरणपणुं अर्थात् स्थिरता ते सम्यक्चारित्र जाणवुं, एमज दर्शन गुणे द्रव्य शक्ति प्रगटे, ज्ञानगुणे गुणो प्रकाशे अने चारि-

त्रगुणे स्थिरता गुण एटले स्वरूप रमणता प्रगटे-वने.

७६ प्र०-उपयोग एटले शुं ? ते केटला छे, वगेर फळ भेद स्वरूप स्पष्ट कहो.

उ०-चेतनानु शुद्धाशुद्ध परिणमन तेने उपयोग कहिये. ते बे प्रकारे छे, एक शुद्ध अने बीजो अशुद्ध; शुद्धोपयोगे सिद्धिगति एटले मोक्ष थाय, अने अशुद्धोपयोगना वे भेद छे, एक शुभ अने बीजो अशुभ, त्यां दान पूजादि परिणाम ते शुभोपयोग कहिये, तेणे करी पुण्यबंध थाय, अने तेथी सद्गति पामे, अने हिंसादि पापपरिणाम ते अशुभोपयोग कहिये, तेथी पापबंध थाय, अने तेथी जीव दुर्गति पामे (प्र. ६८)

७७ प्र०-पूर्वोक्त शुद्धाशुद्धोपयोग सम्यग्दृष्टि तथा मिथ्यादृष्टि आश्रि केवी रीते होय ? ते समजावो.

उ०-शुद्धोपयोग सम्यक्त्व पाम्या पछी होय छे, माटे ते सम्यक्दृष्टिने जाणवो, ते चोथा गुणठाणाथी बारमा सुधी शुभोपयोग मिश्रित होय छे, पछी तेरमे पूर्ण पद थाय छे, अशुद्धोपयोग सर्व संसारी मिथ्यादृष्टि जीवोने होय छे, ते मध्ये मिथ्यादृष्टिने शुभ क्रिया होय पण शुभोपयोग नहि, केमजे शुभोपयोग तो शुद्धना घरनो छे, ते तो सम्यग्दृष्टिने अणइच्छकरूपे निर्वंछकभावे होय छे, अने मिथ्यात्वीने शुभोपयोग शुभ क्रियारूप, शुभाचाररूप होय पण नियाणारूप एटले पौद्गलिक सुख वांछारूप होय, ते माटे अशुभ जाणवो. (प्रत्यन्तरमा प्र. ६९)

७८ प्र०-सम्यग्दर्शननु स्वरुप अनुमाने तथा लक्षणे सिद्ध करो.

उ०–श्री वीतराग देवना वचननी दृढ प्रतीति एटले श्री जिने भाख्युं तेज सत्य, ते कदापि काळे अन्यथा न होय, भले मारी बुद्धिमां नथी आवतुं तोपण वीतराग देवने मिथ्या कथन करवानुं कंइ पण प्रयोजन दिसतुं नथी, जेवुं पोते केवळज्ञाने दीठुं छे, तेवुंज योग्य प्राणियोने केवळ हित बुद्धिए परमकरुणाभावे प्रकाश्युं छे, माटे सुइनी अणी जेटला प्रदेशमां अनंता जीवो पण तेज वचन प्रतीतिरूप आगम अने अनुमान प्रमाणे सम्यक्त्वी माने छे, तेवीज रीते आत्मा पण साक्षात् दीठो माने छे, वळी जीव चेतना लक्षणवंत छे, चेतना ते सुख दुःखनुं भान, अने सुख दुःखनो अनुभव वेदनीय कर्म द्वारे प्रत्यक्ष छे, तेथी ते लक्षणे सुख दुःखनो जाणनार आत्मा छे, एम प्रतीति करे छे. एम अंश प्रत्यक्षे सर्व प्रत्यक्ष थयो; जेम एक मोटा टोपमां एक खांडी भात रंधायेल तैयार थयो छे, ते काचो छे के चढी गयो छे, ते जाणवा माटे ते टोपमांथी एक चोखो तपासी जोतां सर्वनी खात्री थाय छे, तेम लक्षणेलक्षित सम्यग्दर्शननुं स्वरूप जाणवुं.

७९. (प्रा. प्र. ७०) प्र०–सम्यग्दृष्टि देशविरति तथा सर्वविरति महात्माओ सम्यग्दर्शनवडे आत्मानो अनुभव केवी रीते करे ?

उ०–जेम वस्तु विचारतां, ध्यान धरतां मन विश्राम पामे छे, रस स्वाद सुख उपजे छे, परिणाम ठरे छे, ते अनुभव प्रत्यक्ष जाणवुं, जेम साकरना एक गांगडाने चाखी जोतां हजार मण साकरनो अनुभव थाय छे,

तेम सम्यग्दृष्टि जीव अंसे आत्माने केवली सदृश
प्रत्यक्ष अनुभवे. तेथीज कह्यु छे जे —

असे होर इहा अविनाशी पुद्गल जाल तमासीर,
चिदानंद घन मुजश विलासी, केम होय जगनो आसीरे.
ए गुण वीरतणो न विसारु, सभारु दिन रातरे,
पशु टाळी सुररूप करे जे, समकितने अवदातरे १

८० (प्रा. प्र. ७०)प्र०—मुनिने सम्यग्दर्शनना बळे आत्मा स्वरूप प्रत्यक्ष अनुभवगोचर केवी रीते होय ?

उ०—ज्या द्रव्य गुण पर्याय एकीभूत अभेद रत्नत्रयरूपे मुनि प्रणमे, त्या स्वरूप निजपद रूप प्रत्यक्ष देखे, स्वरूप रमण सुखास्वादन अनुभवे.

८१ प्र०—दर्शन अने ज्ञानमा मूळ शु फेर छे ? तथा छद्मस्थ सम्यग्दर्शनी अने केवळदर्शनी ए बेना देखवामां शो फेर ?

उ०—छद्मस्थने प्रथम देखवु एटले दर्शन उपयोग अने पछी जाणवु एटले ज्ञानोपयोग होय, छउमथ्थाण दसणपुव्वनाण ॥ दर्शन ते सामान्यावबोध, अने ज्ञान ते विशेषावबोध जाणवो, दर्शन ते सामान्यावबोध छे ज्ञात्काररूप प्रतिभास थाय, थोडो काल रहि पछे ज्ञान मांहि भले. ज्ञान विशेषावबोध छे, घणो काल रहे ते माटे. आत्मदर्शन जेणे कर्यु "तेणे मुच्यो भवभय कूपरे" एम श्रीयशोविजयजीए पण कह्यु छे. तथा "प्रवचन अंजन जो सद्गुरु करे तो देखे परमनिधान जिनेश्वर. एम श्री लाभानन्दजीए पण कह्यु छे छद्मस्थ सम्यग्दृष्टि आत्मस्वरूपने देखे. पण साक्षात् करामलकवत्

एटले हाथनी हथेळीमां रहेला पाणीमां जे हथेळीनी रेखाओ स्पष्ट देखाय तेम साक्षात् असंख्यात प्रदेशी, अरूपी आत्माने केवळदर्शनी ज देखे, पण छद्मस्थ तो प्रतीते, अनुमाने अनुभवे, स्वरूपे देखे एटले जिन-वचनप्रतीते आत्मद्रव्य स्वरूप दिठुं, अनुमाने चेतना-लक्षणगुणे प्रत्यक्ष दिठो, अनुभवे ते परिणमनपर्यायरूपे अने स्वरूपे ते अभेदरत्नत्रयात्मकनिजपदकंद दिठो. ए रीते आत्मस्वरूपनुं दर्शन छद्मस्थ सम्यग्दृष्टिने संभवे छे.

८२ प्र०—मुनिने त्रणयोग रत्नत्रयरूपे केवी रीते परिणमे छे ?

उ०—मनयोगे दर्शन श्रद्धानरूपे छे, जे वस्तुना निर्धारथी चळे नहि; वचनयोगे ज्ञान भणवुं, यथार्थ उपदेश करे छे, सत्य प्ररूपणा ज्ञानरूप परिणमन होय; तथा काय-योगे षट्कायनी दयारूपे जयणापूर्वक प्रवर्तन छे. जयंचरेजयंचिट्ठे, इत्यादि.

८३ प्र०—मुनि, रत्नत्रयना शुद्धाराधनथी जन्म जरा अने मर-णना भय शी रीते टळे ?

उ०—सम्यग्दर्शनथी घणा जन्म मटे, सम्यग्ज्ञानथी जरा दुःख जे वेदना ते मटे, तथा सम्यग्चारित्र गुणे मरण भय टळे, एम त्रण गुणे जन्म जरा मरणना भय मटे.

८४ (७१) प्र०—आगमप्रमाण, अनुमानप्रमाण, उपमाप्रमाण, अने प्रत्यक्षप्रमाणे, आत्मानी सिद्धि दाखवो, अने ते प्रत्येक प्रमाण मानतां जे फळ थाय ते कहो.

उ०—१ आगमप्रमाणे षड्द्रव्य, षड्कायस्वरूपे जे वीतरागे भाख्या छे ते वचनोने तहत्ति करी मानवां, पण संदेह

के युक्तायुक्तपणु न करवु, ते मानता आत्माने प्रतीतिरूप सम्यक्दर्शन गुणनी पुष्टि थाय, २ अनुमानप्रमाणे लक्ष्य लक्षणे निर्धार थाय, जेम सुख दुःख वेदता आत्मानु चेतना लक्षण जणाय छे, तथा जेम धूम्र दिठे अग्नि होयानी प्रतीति थाय छे, अहिं आत्माने वस्तुगते अनुभवीने वस्तुना गुणनो अंशे प्रत्यक्ष अनुभव थाय, ३ उपमा कहेवी ते, जेम " आजने काळे सम्यक्त्व पाम्यो ते जाणे केवलज्ञान पाम्यो " एम, ए मानता आत्माने विनयगुणनी पुष्टि थाय, ४ प्रत्यक्ष प्रमाणे जेवा परमात्माए कह्या छे, तेवाज अत्र पुण्य पापनां प्रत्यक्ष फळ देखीए छीए, इत्यादि जाणवु, ए मानता आत्माने भववैराग्यता गुणनी पुष्टि थाय, विषय कषायथकी निवर्त. एणी रीते चार प्रमाणे आत्माने गुण नीपजे

८९ प्र०—त्रिविध कर्मरोग कयो ?

उ०—१ द्रव्यकर्म ते आठ कर्मनी वर्गणा, २ भावकर्म ते अशुद्धोपयोग एटले आत्मानी रागद्वेषादि अशुद्ध परिणति, ३ नोकर्म ते औदारिकादि पांच शरीर, द्रव्यकर्मनी समीपे कारण कार्यभावे रह्या माटे तेने नोकर्म कहिये, ते त्रण कर्मरोगना वैद्य श्री परमात्मा तथा गणधरादि महात्माओ छे, तेओ पण त्रिविध औषधरूप त्रण प्रकारनी देशना आपे छे—१ यथार्थवाद, २ विधिवाद, ३ चरितानुवाद, तेनो अर्थ —१ यथार्थवाद देशनामध्ये जीवाजीवादिक स्वरूप धार्यो, परिणम्या तेथी वस्तु तत्त्वनो प्रकाश थाय, तेणे करी

भावकर्म रोग मटे, रागद्वेषादि विपर्यासपणुं टळे, अज्ञाननो उच्छेद थाय, २ विधिवाद देशना मध्ये देशविरतिपणुं, सर्वविरतिपणुं इत्यादि क्रियानो आदर, शुभोपयोगे आचरतां, प्राणीनो द्रव्यकर्म रोग नाबुद थाय, अनादि कर्मकाट उतरे, आत्मप्रदेश निर्मळता निपजे, तेथी जीवने घणी शांति प्रवर्ते, तथा ३ चरितानुवाद देशना मध्ये शरीर संबंधी काम, भोग, विषयकषायादि मलिनतानुं निवर्तन थाय, जेम जंबुस्वामी, सुदर्शन शेठ, मेनार्यजी आदि महात्माओना चारित्र सांभळे थके परम वैराग्य शांत रस प्रगटे, तेथी नोकर्मनो रोग टळे.

८६ प्र०—दर्शनादि अनंत चतुष्क प्राप्तिना कारण तथा स्थान कहो.

उ०—१ धर्म रूचिथी सांभळवो, तथा ज्ञानाभ्यासमां उद्यम रूचि होय तेटलाथी सम्यग्दर्शन गुण प्रगटे; २ तत्त्वातत्त्वगवेषक बुद्धि होय तेथी सम्यग् ज्ञानगुण प्रगटे, ३ पांच इंद्रिय विषय विकार, क्रोधादि कषाय, पांच प्रमाद इत्यादिनी जे त्याग बुद्धि हाय तेथी चारित्रगुण निपजे, ४ वस्तुगते, स्वरूपानुभव लग्नता, तल्लीनता होय तेथी वीर्यगुण प्रगटे. हवे ते चारेनां स्थान कहे छेः—दर्शनगुणनुं स्थान चक्षु, ज्ञानगुणनुं स्थान हृदय, चारित्रगुणनुं स्थान चरण, अने उत्साह इच्छादिरूप वीर्यगुणनुं स्थान बाहु छे.

८७ प्र०—अहिंसानुं स्वरूप तथा तेना विविधभेदो दृष्टांत सहित समजावो. (उ० मूळ जूनी हस्तलिखित प्रतिमां हिंसाना

भेदो संबंधी प्रश्न छे. स्वरूप हिंसा, अनुबंध हिंसा, द्रव्य हिंसा, भाव हिंसा, वाद्य हिंसा, परिणाम हिंसा, योग हिंसा, इत्यादि हिंसाना घणा भेद छे. साधुजी नदी उतर छे पण मोक्षवर्ति (मुख्यताए) हिंसाना परिणाम नथी तेथी ते स्वरूप हिंसा जाणवी. तथा सम्यगदृष्टिने देव पूजा, गुरुवंदना, साधुने आहारदान इत्यादि कार्ये हिंसा अल्पतरस्प छे, ते माटे ते स्वरूप हिंसा कहेवी. रागद्वेष परिणामे जे मंदबुद्धिथी छकाय जीवोने हणे ते तरतमअ यवसाये महाकर्मबंध करे, तेना अशुभ विपाक उदये आवे ते अनुबंध हिंसा जाणवी. अनुपयोगे द्रव्यहिंसा अने तीव्र परिणामे भाव हिंसा थाय. स्वरूप हिंसामांह भाव हिंसा तथा योग हिंसा मळे छे. तथा एक जीवमे हिंसा अल्प पण उदयकाले दुःख विशेष पामशे ते शेणे ? दुष्ट अ यवसायना प्रभावे उदय आव्या कर्म निष्फळ करे छे द्रढ प्रहारीनी पेठे. इत्यादि चोभंगीओ अहिंसा अष्टक ग्रन्थमा ये विस्तार छे. यथा एकस्याल्पाहिंसा ददाति काले तथा फलमनल्प अन्यस्यमहाहिंसा स्वल्पफलाभवतिपरिपाके इत्यादि)॥

उ०—१ स्वरूप अहिंसा, ते जीववध न करवो, तेनु बीजु नाम याद्य अहिंसा के योग अहिंसा पण छे, २ हेतु अहिंसा ते जयणाए प्रवर्तन, छकाय जीवनी रक्षा प्रवृत्ति, ३ अनुबंध अहिंसा ते रागद्वेषादि मलिन अध्यवसाय, तीव्र विषय कषायना परिणामे हिंसानो त्याग जेथी फळ विपाकरूपे आकरो कर्मबंध न पडे ते, ४ द्रव्यअहिंसा एटले अनुपयोग हिंसानो त्याग,

५ परिणाम अहिंसा के भाव अहिंसा ते उपयोग पूर्वक परिणमीने इरादाथी जे हिंसा करवी तेनो त्याग इत्यादि अनेक भेद जाणवा. हवे क्रिया फळ भेदरूप चोभंगी देखाडे छेः–१ हिंसा अल्प, फळ विपाक अल्प, २ हिंसा अल्प, फळ विपाक तीव्र, ३ हिंसा तीव्र, फळ विपाक अल्प, ४ हिंसा तीव्र, अने फळ विपाक तीव्र, ए भेद जीवना अध्यवसाय भेद विशेषे, विपाक फळनो पण भेद जाणवो, अहिं जमाली, द्रढप्रहारी, चिलाती पुत्र, कुरगडुजी इत्यादि द्रष्टांतो यथासंभवे भाववां.

८८ प्र०–इच्छादिक त्रण योगनुं स्वरूप समजावो.

उ०–१ इच्छायोग ते शुभ करणी व्रतादि आदरवानो उत्साह–इच्छा, दश प्रकारे यतिधर्म आदरवानी इच्छा २ शास्त्रयोग ते हेय, ज्ञेय अने उपादेय मध्येथी उपादेय ते अंगीकार करवुं ते प्रमाणे शास्त्रानुसार विधिपूर्वक व्रतादि पाळवुं ते, ३ सामर्थ्ययोग ते कोइ आत्मा, ज्ञान अने वैराग्यनी प्रबळ शक्तिये अनंत काळ भोगववा योग्य जे कर्म तेने थोडा काळमां भोगवी क्षय करे; योगदृष्टिसमुच्चय ग्रन्थे त्रण योगनी व्याख्या करी छे. श्री गजसुकुमालजीनी पेठे, कह्युं छे जेः––

दुहा.

क्रियायोग अभ्यास हे, फळ हे ज्ञान अबंध; १
दोनुंकुं ज्ञानी भजे, एकमति मतिअंध;

इच्छा शास्त्र समर्थता, त्रिविध योग ए सार,
इच्छा निज शक्ति करी, विकल योग व्यवहार. २
शास्त्रयोग गुणठाणको, पूरण विधि आचार,
पद अतीत अनुभव कर्यो, योग तृतीय विचार. ३
रहे यथावळ योगमें, गही सकळ नय सार,
भावजैनता सो लहे, चरे न मिथ्याचार ४

८९ प्र०—द्रव्य, गुण, पर्याय, शाथी वगडया छे ?

उ०—द्रव्य, ज्ञानावरणादि कर्मना आवरणे, तथा गुण, रागद्वेष विभावपरिणतिए, अने पर्याय, मनोयोग कल्पनाए विस्तारभावने पाम्या छे.

९० प्र०—मति तथा श्रुतज्ञानी अने अज्ञानी जे जिनवाणी साभळे तेने की रीते परिणमे ?

उ०—मति अज्ञानीने विकल्परूप तथा डामाडोळपणे परिणमे, तथा मतिज्ञानीने निर्विकल्पपणे तथा निर्धारितारूपे परिणमे, श्रुत ज्ञानीने वैराग्यरूप तथा आस्तिकपणे परिणमे, श्रुत अज्ञानीने विषयरूप तथा नास्तिकरूपे परिणमे, एटले (माटे) सम्यग्दृष्टि जीवो जिनवाणी साभळवाना अधिकारी जाणवा.

९१ प्र०—जीव कर्म साथे केवी रीते मळल छे ? ते दृष्टांत सहित समजावो.

उ०—द्रव्यार्थिकनये जीव, तुंबीमृत्तिका न्याये कर्म संगाथे मळेल छे, एटले जेम तुंबडी उपर माटीनो थर लाग्यो होय पण तुंबडीनी अंदर कंई बगाड न होय तेम आत्माने कर्मनो संबंध जाणवो, तथा पर्यायार्थिकनये

आत्मा, कर्म संगाथे खीरनीरपरे, एकरूपे लोलिभूत थयो थको चतुर्गति भ्रमण करे छे.

९२ प्र०—सोळ संज्ञा ते कइ अने तेमांथी कया जीवने केटली होय ते कहो ?

उ०—१ आहार, २ भय, ३ मैथुन, ४ परिग्रह, ५ क्रोध, ६ मान, ७ माया, ८ लोभ, ९ ओघ, १० लोक, ११ सुख, १२ दुःख. १३ मोह, १४ वितिगिच्छा, १५ शोक, १६ धर्म, ए सोळ संज्ञाओमांथी पेहेली दस संज्ञा एकेन्द्रियने, तथा ओघ सिवाय बाकीनी पंदर बेन्द्रियादिकने होय अने पंचेन्द्रियने सोळे संज्ञा होय.

९३ प्र०—क्रोधादि दोषोनी मुख्यता जीवभेद विशेपताए कहो.

उ०—चारगतिमां, क्रोध नरकमां, मान मनुष्यमां, माया तिर्यंचमां अने लोभ देवगतिमां मुख्य होय छे; हवे मनुष्य जातिमां क्रोध रजपुतने, मान क्षत्रियादि कुळवानने, माया गणिका तथा वणिकने, लोभ ब्राह्मणने, राग स्नेही मित्रादिने, खेद तथा द्वेष ते कायर क्लेशी, अदेखा, तथा दीनदुःखीआ सोगीने होय, शोक जुगारीने, चिन्ता चोरनी माताने, भय ते कायरने तथा कृपणादिने विशेष होय.

९४ प्र०—धर्म अने कर्म विषे यथायोग्य खुलासो करो.

उ०—धर्म ते आत्मभावे शुद्धोपयोगे होय, अने कर्म ते अशुद्धोपयोगे करणी क्रियाए तथा शुभाशुभभावे भवितव्यताए थाय; कर्म ते क्रियाए अने धर्म ते अक्रियारूपे होय. जेवी शुद्धोपयोगनी तीव्रता तेवी धर्मनी वृद्धि जाणवी.

९५ प्र०—जिनना चार निक्षेपाना स्थान शरीरमां क्या छे ?

उ०—नाम जिननु स्थान जीभमा छे, स्थापना जिननु चक्षुमा, द्रव्यजिननु मनोयोगमां, केम जे श्रद्धा मनमध्ये छे तेथी, अने भावजिननुं स्थानक हृदयमा छे.

९६ प्र०—द्रव्येंद्रिय तथा भावेंद्रियनो भेद समजावो तथा ते शाथी भरल छे ? ते कहो.

उ०—द्रव्येंद्रिय ते आकार विशेष जाणवी ते मळ, मूत्र, रुधिर, मांसादि अशुभ पुद्गलथी भरी छे, भावेंद्रिय ते इंद्रियद्वाराए उपलब्ध विकारी ज्ञान ते रागद्वेषादि विकारोथी भर्यु छे.

९७ प्र०—आहारादि चार संज्ञानु स्वरूप सविस्तर कहो

उ०—१ आहारसंज्ञाथकी जीव अनादिकालनो पुद्गल खानपानादि वासनाथी निरंतर भरलो अतृप्त वर्ते छे, २ भयसंज्ञाए चार गतिमा सदा कंपतो रहे छे, ३ मैथुनसंज्ञाए इंद्रिय विषयभिलाषिपणे भमतो फरे छे, ४ परिग्रहसंज्ञाए धन, स्त्री, पुत्रादिनी निरंतर ममताए मेरु मेरु करी रह्यो छे, तेणे करीनेज सदा कषायतापे तपलो, संसारमां ढोकळानी पठे सीजाय छे, छता सुख मानी रह्यो छे, ए चार संज्ञामध्येथी पहली आहारसंज्ञा ते वेदनीय कर्मजनित छे, शेष त्रण मोहनीयजनित छे, वळी आहारसंज्ञाए शरीरपरत्वे हिंसादि अनेक पापकर्म करतु प्रवर्ते छे, हिंसाथी कर्मो घणा थाय छे, एथी पापबंध करे छे, अने तेथीज अशाता वेदनीय प्रगट पामे छे, तथा भयसंज्ञाए कल्पना कर्मयोगे

व्यक्ताव्यक्तकर्म बंधाय छे; तथा मैथुनसंज्ञाए विषयना अने परिग्रहसंज्ञाए कषाय वृद्धिना घणा तीव्र कर्म बंधाय छे; एम चारने जोरे जीव अधोगतिए जाय छे, संसार परिभ्रमण घणो थाय छे; वळी बीजी रीते विचारीए तो आहारसंज्ञाए शरीरपुष्टि तेणे करी हिंसक प्रवृत्ति, तेणे करी दुःख प्राप्ति, तेथी आर्तध्याननी वृद्धि, तेथी दुर्गतिमां अनंतोकाळ जीव भमे छे, माटे उत्तम जीवोने आहार अने निद्रा अल्पज होय छे, एमज भयसंज्ञाए कल्पनाजाळ वधे छे, तेथी रागद्वेषादि मलिनपरिणति वधे छे, तेथी अष्टकर्मनो निविडबंध थाय छे, चतुर्गति-भ्रमण वारंवार थाय छे; तेमज मैथुनसंज्ञाए विषय सेवे, तेथी पोताना रत्नत्रयी गुणने आवरे, तेथी जीव संसा-रमां सर्वत्र हीणअकल, मूढ, दरिद्री थयो थको घणी अशाता सर्वत्र पामे; एवी रीते परिग्रह संज्ञाए कषायबंध घणो थाय, तेथी संसार दीर्घ थाय, एम आ संसारना मूळ हेतुरूप जीवने आ महा बाधककारी अनादि-काळनी लागेली भववासना डाकणीरूप चार संज्ञाओ छे, तेने जेम बने तेम उत्तम जीवे ज्ञान ने वैराग्य शक्तिये, परमात्माना शरणे जइने वश करवाना प्रयत्न करवो; ए चारमांथी पहेली वे आहार अने भय संज्ञा साधुने छठ्ठा सातमा गुणठाणाथी निवर्तेछे. मैथुनसंज्ञा नवमे गुणठाणे निवर्ते छे; अने परिग्रह, लोभ, ममतादि दसमे गुणठाणे निवर्ते छे; माटे गुणठाणानी विशुद्ध परिणति पामवा माटे ए चार संज्ञानी मंदता थवी जोइए; तेनी तीव्रताए जीव निगोद सुधी जाय छे; अने मंदताए उर्ध्वगतिए चढे छे; केम जे जीवने मूळ

ज्ञान, दर्शन अने चारित्र ए मुख्य गुण छे, तेमां दर्शन तो सामान्य अवबोधरूप होवाथी ते विशेष अवबोध-रूप ज्ञानगुणमां समाय छे, तेथी ज्ञान अने चारित्र बे रह्यां, तेमा ज्ञान ते निमित्त कारण, अने चारित्र ते उपादान कारणरूप छे, ने उपादान कारण सेवनरूपे चार सज्ञानी मंदताए जीव उंचो चढे छे

९८ प्र०–सिद्धना जीवने अनंता गुण छे, ते समपणे छे के विषमपणे छे ?

उ०–निरावरणआश्रयी समगुणे छे, पण आप आपणा गुणना पर्याय धर्माश्रयीविषमपणे छे.

९९ प्र०–प्राणेकरी जे जीवे तेने जीव कहिए तो सिद्धने जीव केम कहेवामां आवे छे ?

उ०–सिद्धने द्रव्यप्राण नथी, पण भावप्राण चार छे, तेनां नाम –१ अनंतज्ञान, २ अनंतदर्शन, ३ अनंतसुख, अने ४ अनंत वीर्य, ए चार भावप्राणे सिद्ध जीवे छे, तेथी सिद्धने जीव कहीए, ए भावप्राण आवरणे द्रव्यप्राण सांपडे छे, ते कर्मजनित छे. केम जे स्वाभाविक अनंतदर्शनरूप भावप्राणने आवरणे इंद्रियप्राण थया, तेमज स्वज्ञानरूप भावप्राणने आवरणे श्वासोश्वास प्राण उपज्यो, स्वाभाविकसुखरूप भावप्राणने आवरणे आयुप्राण उपज्यो, स्वाभाविक अनंतबळ, वीर्यप्राणने आवरणे मनोबळ, वचनबळ, कायबळ, ए विभाविक प्राण उपज्या ए अधिकार अध्यात्मसार ग्रन्थ मध्ये कह्यो छे.

१०० प्र०—लेश्या कया कर्मयोगे छे ?

उ०—लेश्या, योग प्रत्ययिक नामकर्मजनित छे, अने शुभाशुभ परिणामरूप लेश्या भावकर्मजनित छे.

१०१ प्र०—वीस विहरमान तीर्थंकरो संबंधी जघन्य, मध्यम, अने उत्कृष्ट, समकाळे जन्म दीक्षा, ज्ञानादि हकीकत सविस्तर समजावो.

उ०—महाविदेहक्षेत्रमां श्री विहरमान तीर्थंकरो केवळीपणे विचरे छे, वळी कोइ बाळकपणे, कोइ राज्यावस्थाए, कोइ गर्भमां होय, त्यारे जघन्यकाळे अढीद्वीपमां १६० विजयमां १६८० होय, हवे हाल वीस प्रभु छे, ते जेवारे जन्मथकी एक लाख पूर्व आयुना थाय त्यारे बीजा प्रभु जन्मे, वळी गर्भमां पण होय, एम गर्भना तीर्थंकर प्रभु न गणाय, तेथी चोरासी लाख पूर्वायुमां तीर्थंकरना जीवो बाल्यावस्थामां, युवावस्थामां, राज्यावस्थामां तथा श्रमणावस्थामां तथा केवळी अवस्थामां सर्वे मळी ८३ तीर्थंकरो होय, ते संख्याने वीसगुणा करीए त्यारे १६६० थाय, ते मध्ये वीस विचरता भेळीए त्यारे १६८० थाय, अने ज्यारे उत्कृष्टपणे अढी द्वीपमां १७० प्रभु केवलिपणे विचरे छे, त्यारे एकएकना अवतारमांहे ८३ तीर्थंकर उपजे, तेने १६० गुणा करिए त्यारे १३२८० थाय तेमां १७० वर्तता भेळीए त्यारे १३४५० थाय. एटलुं अंचलगच्छ नायके कह्युं छे, जिम सांभळ्युं तिम लख्युं छे. पछे तो जेम केवलज्ञानीए प्रकाश्युं तेम सत्य.

गाथा–सत्तरिसयमुक्कोस, जहन्नय वीस विहरमाण जिणा;
समयखित्ते दस वा, जम्मपइ वीसदसगं वा ॥ ए प्रवचन सारोद्धार ग्रन्थनी गाथा जाणवी. तथा दोहराथी गाथानो भाव जाणवो.

विहरमान जिन चैत्यवदन.

निवरो ए गाथातणो, कवि लेज्यो संभाल,
सित्तरिसो जिनवर हुवे, कहे के अड काल. १
चडते काळ उत्सर्पिणी, वारे अष्टम जिन,
एकसो सित्तर जिनवर हुवे, एणीपरे सुणो सज्जन २
पाच विदेहे मेळवी, साठसो विजय उप्पन,
भरतैरवत दस मीळे, सित्तेरसो होय जिन ३
पडते काळे अवसर्पिणी, सोलम जिन लगे हुत
भरतैवरते जिन हुवे, साठसो विदेह लहत ४
केवळी थइ वाळ परण्या, वयणे एहज सोय,
आठमा जिनथी सोलम लगे, विरह विदेह न होय. ५
सोलमा जिन साथे सहु, मुक्ते जाय जिन भाण,
विरहसमे सहु क्षेत्रमा, अक्षर एह पिछाण. ६
सत्तरमा जिन होय भरह, पच ऐरवत मली दश,
समयक्षेत्र दश कह्या, लेहवा एह अवश्य ७
सत्तर अढारह जिन वचे, जन्मे वीश विदेह,
वीस एकवीसमा वचे, सयम केवळ देह ८
भरतैरवत दश मळे, मध्यम सामत त्रीश,
चोवीशमा जिन शिव गये, विदेह विचर वीश. ९
अनागत चोवीशी सातमा, आठमा वचे निर्वाण,
विरह पडे सहु क्षेत्रमा, अष्टमे न होय जिनभाण. १०

आठमाथकी नथी वळी, एम सित्तेरादि थाय;
परंपरा पूर्वे जेम कही, लेवी एम सदाय. ११

दशवीशना एकण ससे, जिनवर जन्म कहात;
भरतैरवते दिन हुए, पांच विदेहे रात. १२

आगमे एणिपरे भाखियुं, च्यवन जन्म अधरात;
भरतैरवत रजनि होय, दिवस विदेह विख्यात. १३

त्रीश सिंहासन सहु, दोय मेरु पंच लाध;
दो दो पूर्व पश्चिमे, एक दक्षिण उत्तर साथ. १४

चार जन्म एक विदेह मध्ये, पांचे मळीने वीश;
भरतैरवते दश हुए, एक समये जन्म लहीश. १५

वीश वीश जन्मे विदेहे सही, साठसो विजय पुराय;
लाख चोराशी पूर्वायु तस, धनुष्य पांचशें काय. १६

चढते दोय पडते त्रणे, आरे धर्म कहाय;
भरतैरवत ते सही, विदेहे धर्म सहाय. १७

परावर्तन काळ भरहेरवय, लेखो इहांथी लेय;
चोथो नित्य विदेहमां, आणंदरुचि भणेय. १८

जिनवर ए नित्य समरतां, लहिये संपद कोड;
पंडित पुण्यरुचि गुरु, शिष्य कहे करजोड. १९

१०७ प्र०—चक्रवर्तिना १४ रत्न कयां अने ते क्यां उपजे ?

उ०—१ चक्र, २ असि, ३ छत्र, अने ४ दंड ए चार रत्नो आयुधशाळामां उपजे; ५ मणि रत्न, ६ कांगणी रत्न, ७ चर्म रत्न, ए त्रण निधानमां निपजे. ८ पुरोहित ९ सेनापति; १० गाथापति, ११ वार्धिक, ए चार रत्नो पोताने नगरे उपजे. १२ स्त्री-

रत्न ते राजकुळे उपजे, गजरत्न अने अश्वरत्न ए
बे वैताढ्य पर्वत उपर उपजे.

१०३ प्र०—नव निधान ते क्यां अने ते क्यां प्रगटे ?

उ०—गंगानदीने तटे नवनिधाननी नव पेटी प्रगटे छे, ते प्रत्येक पेटी १२ योजन लांबी, नव योजन पहोळी, अर्ध योजन उंची, ते योजन आत्मांगुल प्रमाण जाणवा, अने नवनिधि मंजुसने आकारे छे, वैडुर्य-मणिरत्नमय कमाड छे, तेना तथा तेमानीवस्तुना नाम कहे छे.—१ नैसर्पिक, तेमा नगर निवेस ग्रामादि उत्पादक विधि छे, २ पांडुक, तेमा धान्य बीजादिकनी सर्व संपत्ति छे, ३ पिंगल, तेमा नर नारी हय गयना विविध आभरणो छे, ४ महापद्म, तेमा चउदे जातिना रत्नो छे, ५ मल्लि, तेमां विविध प्रकारनी सुगंधि पुष्पादि विगेर वस्तुओ छे, ६ काळ, तेमा त्रिकाळ ज्ञाननां पुस्तको छे; ७ महाकाळ, तेमा सोनु, रुपु, झवेरात, लोह विगेर सर्व द्रव्य अखूट छे, ८ माणक नामे तेमा राजनीति, युद्धनीति अने सर्व हथीयार युद्धनी नीति छे, ९ सुखनिधि, तेमा चतुर्विध नाटकादि संगीत शास्त्रादिना ग्रंथो छे, ते प्रत्येक निधाने एक हजार व्यंतर देवो अधिष्टायक छे, तेनु आयु एक पल्योपमनुं छे.

१०४ प्र०—प्रभु ज्या पारणु करे त्या धनवृष्टि देवताओ केटली करे छे ?

उ०—जघन्यथी साडाबार लाख अने उत्कृष्टथी साडीबार क्रोड सोनैया वरसावे.

अद्धतेरस कोडी, उक्कोसा तत्थ होई वसुधारा।
अद्धतेरस लक्खा, जहन्निया होई वसुधारा ॥ १ ॥

१०५ प्र०–चउद मोटी विद्यानां नाम कहो?

उ०–१ नभोगामिनी, एटले आकाशमां गमन करवानी विद्या, २ परशरीर प्रवेशिनी, ३ रूप परावर्तिनी, ४ स्तंभिनी, ५ मोहिनी ६ सुवर्ण सिद्धि, एटले सोनुं बनाववानी विद्या, ७ रजत सिद्धि, एटले रुपुं बनाववानी विद्या, ८ रससिद्धि, एटले रसकूपिकादि रस करवानी विद्या, ९ बंध मोक्षिणी, एटले गमे तेवा बंधनमांथी मुक्त करवानी विद्या, १० शत्रु पराभविनी, ११ वश्य करणी, १२ भूतादि दमिनी, एटले सर्व अग्निना उपद्रवने समावनारी विद्या, १३ सर्व संपत्करी, १४ शिवपद प्रापिणी.

१०६ प्र०–आचार्य महाराज आत्मस्वरूप पंच प्रस्थानने ध्यावे एटले शुं?

उ०–ध्याननी पांच अवस्था साधवामां सावधान आचार्य भगवंत, पंचपद आराधे छे, तेनां नाम. १ अभय, ते अरिहंतनुं ध्यान, २ अकरण, ते सिद्धनुं ध्यान, ३ अहमिंद्र, ते आचार्यनुं ध्यान, ४ तुल्य एटले उपाध्यायनुं ध्यान, ५ कल्प एटले साधुनुं ध्यान, ते समान अवस्थाए पंच प्रस्थानमय आचार्यजी छे.

१०७ प्र०–जीवने मिश्रगुणठाणुं चढतां के पडतां कोने केवी रीते आवे ते कहो.

उ०–अनादि मिथ्यात्वी होय तेने चडतां न आवे. केमजे

ते प्रथम उपशम सम्यक्त्व पामे, ग्रंथिभेद करी चोथे आवे, माटे अनादि मिथ्यात्वी पहेलेथी चोथे आवे, माटे तेने त्रीजुं मिश्र चढतां न आवे, अने सादि मिथ्यात्वी जीव सम्यक्त्व पामीने पडयो होय ते पाछो क्षयोपशम सम्यक्त्व पामे, तेने त्रीजुं चढतां पडतां आवे.

१०८ प्र०—समोहिया, असमोहिया, मरण ते कोने कहीए?

उ०—समोहिया मरण ते जीव अहिंथी नीकळे त्यारे समकाळे सर्व प्रदेशे नीकळी परभवे जाय, जेम सीधो दडो फकतां दडाना प्रदेश एक वखते दडा साथेज जाय छे तेम जाणवु, अने असमोहियामरण ते जीवना प्रदेश श्रेणिबद्ध आगळथी जाय, एटले अहिं तथा परभवे आत्म प्रदेशनी मरणावसरे श्रेणि मंडाय ते जेम पतंगनी दोरी हाथने अने पतंगने लागेली छे तेनी पेठे जीव प्रदेश नीकळे ते

१०९ प्र०—जीवनो शुद्धोपयोग गुण जे सम्यक्त्व, तथा चरण गुण ते चारित्र तेने आवरवाने कोण बलवत्तर छे?

उ०—आत्मोपयोग गुण, आत्मवस्तु जीवन गुण जे सम्यक्त्व छे, तेने आवरवाने मिथ्यात्व समर्थ छे, अने एनु परिणमनसुख एटले स्थिरता गुण आवरवाने अविरति समर्थ छे, माटे मिथ्यात्वोदये समकित न पामे, अने अविरति उदये चारित्र गुणस्थान न पामे, पण ज्यारे जीवने तथाविध परिणमन उपयोग एकाग्रता थाय, त्यार ते सुखरूप ज्ञानचारित्रमय संपूर्ण धर्मने पामे.

११० प्र०—द्वादशांगीना केटलां पदो छे ?

उ०—" कोटीशतं द्वादशश्चै व कोट्यो लक्षाण्यशीति अधिकानिचैव पञ्चशदष्टौ च सहस्र संख्यामेतत्श्रुतं पञ्चपदंननामि " ॥ १ ॥ एटला पद छे,

" एकावन्नं कोडीओ, लक्खा अट्ठे व सहस्स चुलसिही । सयछक्कं साढा, एकवीस पयगंथा ॥ १ ॥ '
एटला एक पदना श्लोकनी संख्या जाणवी.

१११ प्र०—चौद पूर्वना नाम तथा ते प्रत्येकना पदनी संख्या कहो ?

उ०—१ उत्पाद पूर्व, पदसंख्या ११ क्रोड, २ अग्रायणीय पूर्व, तेमां ९६ लाख पद छे, ३ वीर्यप्रवाद पूर्व तेमां ७० लाख पद छे, ४ अस्ति नास्ति प्रवाद पूर्व, तेमां ६० लाख पद छे, ५ ज्ञान प्रवाद पूर्व, तेमां ३६ क्रोड पद छे, ६ सत्य प्रवाद पूर्व, तेमां एक क्रोड अने ६० लाख पद छे, ७ आत्म प्रवाद पूर्व, तेमां ३६ क्रोड पद छे, ८ कर्मप्रवाद पूर्व, तेमां एक क्रोड आठ लाख पद छे, ९ प्रत्याख्यान प्रवाद पूर्व तेमां ८४ लाख पद छे, १० विद्या प्रवाद पूर्व तेमां ११००१५००० पद छे, ११ कल्याण प्रवाद पूर्व, तेमां ६२ क्रोड पद छे, १२ प्राणवाद पूर्व, तेमां एक क्रोड ५६ लाख पद छे, १३ क्रियाविशाल पूर्व, तेमां नव क्रोड पद छे, १४ लोक बिंदुसार पूर्व, तेमां साडातेर क्रोड पद छे, त्यां एक पदमां ५१८८८४० अक्षर छे.

११२ प्र०—वीजे गुणठाणेजिननामकर्मसत्तावंत जीव केम न आवे ?

उ०—क्षयोपशम समकिती, जिननाम बांधी पडतां पहेले आवेछे, तेने सत्ताए १४८ प्रकृति होय छे, कर्मग्रंथनी अवचूर्णिमांये कह्यु छे. सतेअडयालसय जाउवसमविजिणु बियतइय.—अस्यार्थ सत्ता ए कर्मनी प्रकृति १४८ मिथ्यात्व गुणठाणाथाडी यावत ११ अगियारमा सुधी होय, पण वीजे त्रीजे गुणठाणे जिन नामकर्म विना १४७ प्रकृति सत्ताए होय ते केम ? तेनो अभिप्राय कहे छे चोथे गुणठाणे क्षयोपशम समकित छे ते जिन नामकर्म बांधे ते बाधीने पाछो पडे समकितथी पडेतो ते मिथ्यात्वे आवे पण वीजे त्रीजे गुणठाणे नावे. तेमाटे मिथ्यात्व गुणठाणे १४८ प्रकृति होय अने सासादन गुणठाणु ते उपशम भाव आश्रयी छे, अने उपशम समकित छता जिन नामकर्म न बांधे. चोथे गुणठाणे ज्यां सुधी उपशम समकित होय त्या सुधी जिन नामकर्म न बांधे. स्तोतकाल माटे, क्षयोपशम तथा क्षायिकसमकित छते जिननाम बांधे ते पाछो वमे ते क्षयोपशम समकितथी पडतो जिन नामकर्मवाळो प्रथम गुणस्थानके आवे पण वीजे त्रीजे नावे तिहा १४८ प्रकृति सत्ताए होय तेथी ते तेमज क्षायिकसमकितीने तथा क्षयोपशमसमकितीने वीजु त्रीजु न होय पण उपशमसमकिती पडता वीजे त्रीजे आवे तेने जिननामनो बंध नथी, वीजे त्रीजे सत्ताए १४७ प्रकृति होय, उपशम समकित

आखा भवमां पांच वखत आवे छे, तेमां चारवार श्रेणिगत अने पांचमीवार पडतां आठमे गुणठाणे अटकी क्षपकश्रेणि मांडीने केवळज्ञान पामे.

११३ प्र०—क्षयोपशम, उपशम अने क्षायिक सम्यक्त्वनुं स्वरूप तेना भेद सहित टुंकमां कहो.

उ०—क्रोधादि चार अनंतानुबंधी चारित्रमोहनी प्रकृति अने मिथ्यात्वमोहनीनी त्रण प्रकृति, ए सातने उपसमावे त्यारे उपशमसमकित अने सातेनो क्षय करे त्यारे क्षायिक अने सात प्रकृतिना उदयनो क्षय करे अने उदयमां न आवेलां उपशमावे तेने क्षयोपशम सम्यक्त्व कहे छे. हवे ते विषे जे कांइ विशेष जाणवा योग्य छे ते कहे छेः—

दुहा.

चार खपे त्रण उपशमे, पंच क्षय उपशम दोय;
षट् उपशम एक एम, क्षयोपशम त्रिक होय.

अथवा

क्षयोपशम वरते त्रिविध, वेदक चार प्रकार;
क्षायिक उपशम युगल युत, नवधा समकित धार.

दुहानो खुलासोः—

सात प्रकृति मध्ये चार चारित्रमोहनीनी छे. त्रण प्रकृति मिथ्यात्वमोहनीनी छे. ते मध्ये छ पहेली ते वाघण जेहवी छे, एक सम्यक्तमोहनी ते कुतरी सरीखी छे. तेहनो विवरो. ए सात प्रकृति जिहां उपशमे तिहां उपशम समकीत कहिए. ए

साते प्रकृति सत्तामांहिंथी क्षय कर तिहां क्षायिक समकीत. ए सातमाहिथी काईक खपे काई उपशमे तिहा क्षयोपशम समकित कहिए. ज्या ए सातमानी चार खपे, बे उपशमे, अने एक वेदे ते पहलो भेद, तथा ए सातमांनी पाच खपे, एक उपशमे अने एक वेदे ते बीजो भेद, एम बे प्रकार क्षयोपशम वेदक छे; तथा हवे त्रण प्रकार क्षयोपशम समकित छे, ते कहे छे ते आवी रीते -१. चार खपे त्रण उपशमे, २ पाच खपे बे उपशमे, ३ छ खपे एक उपशमे, एम ए त्रिविध क्षयोपशमसमकित अने पूर्वोक्त द्विविध वेदक भावना मळी क्षयोपशम पचविध स्वरूप कह्युं, हवे क्षायिकवेदकनो एक भेद ते किम ? छ खपाने, एक वेदे ते क्षायिकवेदक कहिये तथा छ उपशमावे अने एक वेदे ते उपशमवेदक कहिये, तथा सातने क्षये क्षायिक अने सातने उपशमे उपशमिक एम सम्यक्त्व नव प्रकार कह्यु.

११७ प्र०–मोहनीयकर्मनु लक्षणस्वरूप कहो

उ०–१ जे विभ्रमपणे आत्मस्वरूपने विपरीत जाणे, जेम छीपने रुपु कहे ते मिथ्यात्व मोहनी, २ मिश्र-मोहनी ते काइक डामाडोळपणे, संदेहयुक्त, अनि-र्धारपणे जाणे, पण आत्मज्ञान प्रते पामवा न दे, ३ सम्यक्त्व मोहनी ते सम्यग् वस्तु उपर मोह उपजावे, देवगुरु आदिपर मारापणारुप ममता करावे, जिनवचन मध्ये शकाकखादि काइक विभ्रमतारूप चित्त मलिनता करावे ते तथा अनतो छे अनुबंध कर्मविपाकरस जेनो तेने अनतानुबंधि कषाय कहिये.

११८ प्र०–सापेक्ष अने निरपेक्ष ते केवी रीते ?

उ०–सापक्ष एटले अपेक्षा सहित एटले कार्य पडे त्यारे

कदाच प्रसंगने लइने ताडना तर्जनादि करवुं पडे तोपण ते अंतर्थी के बहारथी निर्दयपणे, अविचारी रीते न करे, जीवने कोइ व्यथा न उपजे तेनी संभाळ राखीने काम जेटलो आक्रोशादि होय ते करे, अने तेथी विपरीतपणे, निर्दय रीते निष्कारण गमे तेम मार्ठु बोले तथा करे ते निरपेक्षव्यवहार जाणवो; वळी धर्मने विषे सापेक्ष एटले वस्तु स्वरूपनी अपेक्षा राखीने उत्सर्गने तथा निश्चयने पामवा माटे जे अपवाद के व्यवहारनुं सेवन करवुं ते, अने ते थकी रहित एकांत व्यवहारप्रवृति, अविवेक आचरे ते निरपेक्ष जूठो व्यवहार जाणवो, अने ज्यां व्यवहार जूठो छे, त्यां धर्म तो होयज क्यांथी ! ! ! कह्युं छे जेः—

वचन निरपेक्ष व्यवहार जूठो कह्यो,
वचन सापेक्ष व्यवहार साचो;
वचन निरपेक्ष व्यवहार संसार फळ,
सांभळी आदरी कांइ राचो.

११५ प्र०—समदृष्टिनुं स्वरूप उपादान अने निमित्तथी कहो.

उ०—सम्यक्दृष्टिने उपादानपणे रागद्वेषनी हलचलधारानुं समपणुं थयुं, परिणति मध्यस्थ थइ तथा निमित्तपणे पुण्य पापना उदय काळे हर्ष के खेद न करे, मध्यस्थ साक्षिरूप रहे.

११६ प्र०—जिननी चार निक्षेपे भक्ति शी रीते करवी ?

उ०—पवित्रताथी एकाग्रचित्तेआशातना टाळी, जिननुं नाम जपीए ते नाम निक्षेपे जिनभक्ति, २ स्थापना

निक्षेपे जिनप्रतिमाजीनी अष्ट प्रकारी, सत्तर भेदी आदि पूजा भक्ति विधिथी करता भावपूजा तन्मय थइ परिणमे ते, ३ तथा द्रव्यनिक्षेपे जिनभक्ति ते जिनना जीव तेना गुणे भावे जिनना जीव जाणी तेमने भावथकी वंदनादि करवुं ते, ४ तथा भाव निक्षेपे जिनभक्ति ते त्रिगडे बेठा समोसरणे अनेक भव्यजीवोने प्रतिबोध आपता एवा जेम हाल श्री सीमंधरादि स्वामी छे तेमने वंदना नमस्कार गुण स्तुति इत्यादि करवी ते.

११७ प्र०—जीवने कर्म संबंधी करज तथा कर्म जनित भावदरिद्रपणु केम टळे ?

उ०—जीव अनादि काळनो राग द्वेष मोहे परिणमे छे, तेने देवु, तथा दरिद्रपणु बेउ वने छे, ते टाळवानो उपाय ए छे जे समकित गुणनी प्राप्ति थए, शुद्ध रत्नत्रय धर्म प्रगटवाथी टळे; ते आवी रीते के दर्शनगुण थए द्वेषभाव टळे समभाव प्रगटे, तेथी ज्ञान गुण प्रगटे माटे, तेथी पुद्गलादि परवस्तु उपर मोह टळे, वैराग्य प्रगटे, तेथी चारित्रगुण प्रगटे, तेथी मोहनु दरिद्रपणु जाय, चरण करण गुण प्रगटे. ,तथा कर्मनु देवु एटले करज टळे ते आवी रीते के—दर्शनगुणे जन्म करवा रूप भवपरपरा मटे, ज्ञानगुणे जरानी वेदना मटे, चारित्रगुणे मरण भय मटे, तेथी अमरपद पामी सिद्धिवर, एम दर्शनगुणे ज्ञान चारित्र वेउ अनुक्रमे प्रगटे अने ए रत्नत्रयना लाभे जन्म-जरामरणादि भय टळे, जेम क्रोड निर्धनने लक्ष्मी

घणी मळे, त्यारे तेनुं देवुं अने दरिद्रपणुं बंने टळे छे, रत्नत्रय प्राप्तिथी आत्मधर्मरूप धन प्रगटे, रागद्वेष मोहरूप दरिद्रपणुं जाय, अने जन्म जरा मरणरूप करजना भय टळे.

११८ प्र०—मोहराजानो मूळ मंत्र कयो? अने तेथी जीव छ प्रकारे घणां कर्मो वांधे छे ते केवी रीते?

उ०—रागद्वेष ते जीवना परिणाममां वर्ते छे, तेथी कर्म वांधे, ते उदय आवे त्यारे आर्त्त अने रौद्र ध्यान थाय; तेथी विषय कषाय सेवे, तेथी तेने घणां कर्म बंधाय, तेथी भव परंपरा जीवने टळे नहि; ए मोहनो मूळमंत्रबीज जाणवो.

११९ प्र०—सम्यग्दृष्टिनो शब्दार्थ तथा लक्षण कहो.

उ०—सम्यक् कहेतां यथार्थ, दृष्टि कहेतां श्रद्धान, सम्यग् ज्ञान ते यथार्थ जाणवुं. सम्यक् चारित्र ते यथार्थ आचरवुं, तथा उदयकाळे सम्यक् प्रकारे सहन करे अने स्वरूपे जोवुं ए लक्षण सम्यग्दृष्टि श्रावक साधुना जाणवां.

१२० प्र०—गुणग्राही, गुणगवेषी, सहजकारी (सहायकारी) ते शुं?

उ०—१ गुणग्राही एटले जे जीव सद्गुरू पासे सूत्र सिद्धान्त सांभळीने घणी प्रशंसा करे, कीर्ति करे, गुर्वादिकना कोइ कर्म औदयिक अवगुण देखीने तेने द्वेष न उपजे, केमके जो खेद के अरूचि थाय तो भक्ति विनयादि रूचिकर मन भग्न थइ जाए, तेथी आगळ गुण थतो अटके, अने होय ते पण कदाच वमी नांखे; २ गुणगवेषी एटले गुर्वादिमांहे

कोइपण उपकारादि गुण होय ते संभारीने आक्रोशादिकने लीने खेदाय नहि, कदाच माठुं लागे पण पाछुं तेमनी हित बुद्धि, प्रीति, विश्वास, कृपादि अनेक निस्पृहिपणे करेला उपकारने संभारी मन निर्मळ थाय, अवगुण, दृष्टिमां न आवे, तेथी विनयादि भक्ति चूके नहि, ३ सहायकारि ते गुर्वादिकने अन्न, पाणी, वस्त्र; औषधादिथी घणी सहाय करे, पोते गाठथी, खरचे, गांठे न होय तो कोइ योग्य जीव पासेथी लावीने गुरुनी सहाय करे, तथा सेवा, भक्ति, वैयावच, पोते जाते त्रिकरण शुद्धिए करी महा शाता उपजावे, प्रसन्नता करावे, जेने परिणामे पोताने अनत पापनी निर्जरा अने ज्ञानादिकनी परम शुद्धि तथा वृद्धि थाय, जेम शिष्योमां गुर्वादि उपर अतरग प्रेम, भक्ति, रुचि, विशेष रसिकता सहित दीप्तिमान् दिन प्रतिदिन अधिकने अधिक थता जाय. तेम गुरु पण उत्तम परमारथी, शुभमति, एकांत निस्पृही, निर्ममत्वी, निराभिमानी, सपूर्ण रीते सरळ, प्रौढपणे गभीर, परमसमान, दृष्टिमत, दयाळु, कृपाळु, पोताना आश्रितोने विषे पूर्ण विश्वासी, सर्वमिथ्याभ्रम रहित थया थका सदानंदपणे प्रवर्तमान होय पण हा। इति खेदे आ विषम काळना प्रभावे उपर कह्या तेवा सुशिष्यो तथा सुगुरुओ मळवा दुर्लभ छे, अने ज्या होय त्यां तेओ निश्चय कल्पवृक्ष समान जाणवा.

१२१ प्र०–शाता, अशाता, सुख, दु:ख विषे निमित्त तथा

उपादान कारण समजावो.

उ०—शाताऽशातासुखदुःखयोश्चायं विशेषः शाताऽशाताऽनुक्रमेण उदयप्राप्तानां वेदनीयकर्मपुद्गलानां अनुभवरूपं तथा सुखदुःखेन परोदीर्यमाणवेदनीय अनुभवरूपं. शातादि पूर्वोक्त चारे अनुक्रमे उदयप्राप्त शातादि वेदनीय कर्मना पुद्गलोनो शाता, अशाता, सुख, दुःखरूप अनुभव छे; तथा सुख दुःखने उदयमां लावनारा उदीरणारूप जे मूळ हेतु ते वेदनीयकर्म अनुभवरूप शातादि उपादान कारण छे; अने शाता अशाता उदय आव्यां जे कर्मपुद्गलो तेनुं वेदवुं, भोगववुं ते अशुद्ध उपादानरूप छे, अने सुख, दुःख तेहनां फळ छे, ते फळ पाक्यां एटले उदय आव्यां ते वेदनीयकर्मनुं भोगववुं ते भोगवटो निमित्तरूप थयो, अर्थात् सुख दुःखने भोगवतां थकां जो हर्ष शोक करे, सदोन्मतता के झूर्णा करे तो फरी तेवांज शाता अशातारूप वेदनीकर्म बांधे, ते बंध उपादान कारण जाणवुं, अने पूर्वोक्त हर्ष शोकादि प्रवृत्ति ते निमित्त थयुं जाणवुं, एम कारण कार्यं निमित्तथी उपादान अने उपादानथी निमित्त एम जेवां वृक्ष तेवां फळ तथा जेम बीजमांथी वृक्ष अने वृक्षमांथी बीज नीपजे छे तेम कर्मथी शाता अशातादि जीव पामे छे, अने फरी अज्ञानपणे समभावे न रहेवाथी एवांज बांधी संसार परंपरामां भमे छे; शाता अशाता आत्माश्रित जीवविपाकी प्रकृति छे, अने सुख दुःख पुद्गलाश्रित होवाथी पुद्गलविपाकी प्रकृति छे.

१२२ प्र०—वेदना केटला प्रकारनी, कइ, तेनु स्वरूप दृष्टांतथी समजावो.

उ०—१ वेयणादुविहा, अभ्भोपगमिया उवक्कमिया, स्वयमभ्युपगम्यते वेद्यते यथा साधव केशलुञ्चनातापनादिभिः वेदयन्तीति अभ्युपगमिकी वेदना, उपक्रामिकी तु स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन च उदय उपनीतस्य वेद्यस्य अनुभव इत्यर्थः, जे वेदनीयकर्म काळ परिपाके स्वयमेव सहज उदय आवे ते समभावे वेदीने खपावे ते उपक्रामिकी, अने २ जेम साधुमहाराजा केशलोच आतापनादि परिषह वेदनाने पोते उदीरणाए उदीरी समभावे वेदी कर्मनी निर्जरा करे छे ते वेदनाने अभ्युपगामिकी कहिये तथा पाठान्तरे जूनी प्रतिमा नीचे प्रमाणे छे—एक वेदनीकर्मकाले पाकीस्वभावे उदय आवे ते समभावे वेदीने खपावे ते अभ्युपगामिनी वेदना अने एक उदीरणाई करी उदय लावीने वेदनीय कर्मना पुद्गल समभावे वेदी खपावे ते उपक्रामिकी वेदना जाणवी ए भाव.

१२३ प्र०—देशना शुद्ध स्याद्वादे जैनधर्मनी छे एम क्यारे कहेवाय ?

उ०—जिनवचनानुसार देशना चतुर्विध छेः—१ कारण कार्यरूप, २ निमित्त उपादान सहित, ३ द्रव्य भाव युक्त, ४ निश्चय व्यवहारनययुक्त.

१२४ प्र०—बावीस परिषहमा शीत केटला अने उष्ण केटला ? शीत अने उष्ण ते शु ? अनुकुळ अने प्रतिकुळ

१२९ प्र०—चार प्रमाणे करी वीर परमात्मा मळ्या क्यारे गणाय? ते सिद्ध करो.

उ०—जूनी प्रतिमां नीचे प्रमाणे पाठ छे. "तद्यथा अथ प्रमाण च्यार अनुयोगसूत्रे कह्या छे, अनुमान प्रमाण १, उपमान प्रमाण २, आगम प्रमाण ३, प्रत्यक्ष प्रमाण ४; ते मध्ये आज श्री वीर स्वामी प्रत्यक्ष प्रमाणे किम मले? ते थापना निक्षेपाथी मले ते किम? समभाव शांत मुद्रापर्यंकासननो उत्पाद अने रागद्वेषनो विनाश एहवी असलनी नकल (थापना) जिनप्रतिमा ते देखीने भावथी श्रीवीरस्वामी प्रत्यक्ष प्रमाणे मिले. जिन प्रतिमा ते जिन सरिखी ते जिनप्रतिमानी भक्ति जिनभावे कीधाना फल श्रावकने महानिसिथसूत्रे कह्युं छे. 'अयंकएसढो, इति वचनात्, तिहवारे जिन प्रतिमानी भक्ति कीधी ते जिननी कीधी इम 'कारणे कार्योपचारात्' इम जिननी स्थापनाथी आज प्रत्यक्ष प्रमाणे श्री वीर मल्या कहीए 'अत्र संदेहोनास्ति' इति भाव." तथा छापेली प्रतिमां नीचे प्रमाणे पाठ छे.

अविरोध, अस्खलित, अविसंवादि, निःस्वार्थ, एकांत, दयामय, संपूर्ण सत्य, मधुर, प्रिय, गंभीर, अमर्म प्रकाशक, सर्वज्ञ अने सर्वदर्शिपणाना लक्षणोए पूर्ण, तथा मुद्राकारे शांत सुधारसमय रागद्वेषादि चिन्ह रहित इत्यादि अनेकशास्त्रवचन गोचर वीरपरमात्मा आगमपणे सिद्ध करीए. २ अनुमान प्रमाणे जेम धूम्र दिठे अग्निनो निश्चय थाय तेम

पूर्वापर महात्माओना ऐतिहासिक संबंध तेना विध-विध उत्कृष्ट सदाचार प्रवर्त्तक पुरुषोना प्रमाणोए ज्यारे एसी नेवु वातो अनुभवथी सत्य सिद्ध थाय तो तेनी शेष दस वातो पण सत्यज मानी लेवाय छे अने हाय छे पण तेमज, एवीज रीते श्री वीर परमात्माना अनेक वचनो अत्यारे बीजा अन्य दर्शनिना वचनो करता सत्य, अविरोधी, अने प्रमाणभूत थाय छे, तो कोइक सूक्ष्म, अगम, अगोचर वात छद्मस्थ मदबुद्धिना ग्राह्यमा न आवी शके, तोपण बीजी घणी वात मळे छे तेने अनुमाने ने पण सत्यज होवी जोइए, एम वीरप्रभुना वचनो पण युक्ति तथा न्याय सिद्ध सत्य होवाथी वीरपरमात्मा अनुमानपणे पण सिद्ध थया, ३ उपमा प्रमाण–पुरिससिहाण एटले तप तेजे तथा परिषह उपसर्ग सहन करवामां निर्भय, साहसिक, केसरि सिंह-समान पराक्रमी, वीरपरमात्मा उपमा प्रमाणे पण सिद्ध थया जाणवा, ४ प्रत्यक्ष प्रमाण–जिनप्रतिमा जिन सरखी होवाथी वीरपरमात्मा–स्थापना निक्षेपे सिद्ध थया, कारण जे समभाव, शांत मुद्रा, विशुद्ध पर्यंकासन इत्यादिनो उत्पाद, रागद्वेषनो व्यय, अने मूळस्वरूप ध्रुव, सच्चिदानंद घनमय एवी असलनी नकल श्री जिनप्रतामाजी छे ते देखी भावथी श्री वीरपरमात्मा प्रत्यक्ष सिद्ध थया जाणवा, स्थापना-जीनी भक्ति ते साक्षात्‌नी बराबरज छे, कारणे कार्य उपचारे सत्य छे.

१३० प्र०—जीव अष्टकर्मवर्गणादलिक केवी रीते वहेंची आठे कर्मने आपे छे ?

उ०—समय समय जीव कर्मवर्गणा ग्रहे छे, ते आठे कर्मने वहेंची आपे छे ते आवी रीतेः—सर्वथी थोडां आयुकर्मने, तेथी विशेषाधिक नाम अने गोत्रने, ते बेउमां मांहोमांहे सरखां; तेथी १ ज्ञानावरणीय, २ दर्शनावरणीय, तथा ३ अंतराय ए त्रणने विशेषाधिक पण मांहोमांहे सरखां दळ आपे, तेथी मोहनीयने संख्यातगुणाधिक, तेथी वेदनीयने अधिक; एम वेदनीयकर्मने सर्वथी अधिक दळ मळे छे, केम जे वेदनीय विपाक जीवने थोडा दळे प्रगटपणे जणाय नहि तेथी. इति भगवतीसूत्रे कह्युं छे.

१३१ प्र०—जीव विग्रहगति करे तो तेनो उत्कृष्ट काळ केटलो ?

उ०—त्रसनाडी बहार एकेंद्रियथावरकायजीव विदिशीए उपजनारने पांच समय लागे छे.

१३२ प्र०—अभिसंधिवीर्य अने अनभिसंधिवीर्य ते शुं ?

उ०—अभिसंधि वीर्य ते उपयोग पूर्वक आत्मवीर्य; अने अनुपयोग आत्मवीर्य ते अनभिसंधिवीर्य.

१३३ प्र०—समकिती श्रावकने गृहस्थपणे छट्ठुं गुणठाणुं स्पर्शे के नही ?

उ०—सम्यग्दृष्टिए देशविरति गृहस्थावास छतां कोइ जाणस्ये जे ते चोथा पांचमा गुणठाणावालाने निर्मल अध्यवसाए ध्यानदशाए शुभयोगे शुभ धर्मध्याने छट्ठा सातमा गुणठाणाना परिणाम आवे पछे ते

कालान्तरे अंतर्मुहूर्तमात्र रहीने पडे मटी जाय. पोताना गुणठाणा माफक परिणाम रहे एवु कहे ते असत्य स्वमति कल्पना पण कोइ ग्रन्थोक्त नहीं. तत्रोत्तर चोथा पाचमाथी भावचारित्र गुण आवे चढते १३ मा १४ मा सुधी चढीने मरुदेव्यादिनीपर पुण्याढ्यराजानीपर सिद्धिवर, पाछो ते गुणठाणा फरसीने पडे नहि. गृहस्थवासी गमे तेवो उत्कृष्ट श्रावक होय, तोपण तेने गुणठाणुं पाचमुंज होय छे, पण छट्ठु सातमु न कहेवाय; केमजे गुणठाणानी प्राप्ति कषायना क्षयोपशमने आधीन छे, अने अध्यवसायनी निर्मळता ते निज परिणतिने आधीन छे, ते परिणति पोताना अध्यवसायनी निर्मळताए कषायनो क्षयोपशम करीने अधिक उचा गुणठाणानी परिणतिरूप करे तो अधिक गुणठाणी कहेवाय, नहि तो भावनी शुद्धाशुद्ध तारतम्यता कहेवाय

१३४ प्र०–सम्यक्त्व मोहनीयने कोण वेदे, अने क्या सुधी वेदे, अने तेनु स्वरूप शु ?

उ०–क्षयोपशम समकितीने समकित मोहनीनो उदय होय अने उपशमिक अने क्षायिकने ते न होय, तेमज वेदकने एक समयनोज अतिसूक्ष्म काळ होवाथी गणत्रीमा लीधु नथी, सम्यक्त्व मोहिनी ते क्षयोपशमीने होय तथा उपशमीने सत्ताए होय, तेथी प्रदेशे अने रसे अनुक्रमे, ते सकांक्षादि सहज विभ्रमता वेदे, कोइक जिनप्रणीत सूक्ष्म अर्थभाव मध्ये मुझाय ते सम्यक्त्वमोहनीयनु स्वरूप जाणवु.

१३५ प्र०—उत्सर्ग अने अपवादनुं शुं स्वरूप छे ?

उ०—उत्सर्ग ते व्यवहारमार्ग अपवाद ते निश्चयमार्ग यथा साधुने पृथ्वीकायादि षट्कायनी विराधना निषेधी छे. कदाचित् कारणे नदी उतरवी पडे तथा आहारादिकने अर्थे गुरुदेव वंदनाने अर्थे चालतां विराधना थाय ते उत्सर्ग. ते माटे अपवादे पच्चक्खाण महाव्रतना होई अने कांइक अण कारण पडे उत्सर्गमार्ग होय, तथा वाचनान्तरे कोइक ग्रन्थे उत्सर्ग ते उत्कृष्टो निश्चयमार्ग कह्यो छे, अने अपवाद ते कोमलमार्ग माटे व्यवहारमार्ग कह्यो छे, तेहनो स्वरूप आगे लख्यो छे ए भाव. उत्सर्ग मार्गनी चर्चा घणी छे, पण इहां तो अल्पबुद्धिए जेहवुं जाण्युं तेहवुं लख्युं छे. इति भाव.

१३६ प्र०—दीवा प्रमुख ज्योतिमय पदार्थोना प्रकाश पडे छे, ते दीवामध्ये रहेला अग्निकाय जीवना पर्याय छे ?

उ०—दीवा मध्ये जे अग्निना जीव छे, ते मांहेज परिणमी रह्या छे, पण दाहकरूप पर्याय छे ते वाहेर नीकळे नहि, तथा दीवाना प्रकाशरूप पुद्गल जे वाहेर दीसे छे, तेतो विस्रसा पुद्गलनी पर्याय छाया छे. तथा दीवानी वाहेर जे प्रकाशरूप पुद्गल दीसे छे ते, तथा प्रकाशरूप पुद्गलना निमित्ते, अपर विस्रसा पुद्गल श्रेणिबद्ध जमाव थाय छे ते अचित्त दीसे छे. पण ते अग्निकाय जीवना पर्याय नहि, तेना (अग्निना) गुण पर्याय तो दाहक रूपे छे, ते ज्यां व्यापे त्यां बाळी भस्म करे; माटे बाहिर पडतो प्रकाश विस्रसा पुद्गल पर्याय

(अचित) जाणवा, जेम आरसीमां मुख जोता आपणा शरीर समान सर्व प्रतिबिंब पुद्गल दीसे छे, ते कांइ आपणा शरीरना पर्याय आरसीमां जता नथी, पण ते आरसिनु निमित्त पामीने त्यां शरीर मुखादि जेवा विस्रसा पुद्गल तत्काल श्रेणिबद्ध तद्रूप परिणमिने जमाव थाय छे, पण ते जीवना पर्याय न जाणवा, एवीज रीते शरीरनी छाया विगेरे विस्रसा पुद्गलजमाव जाणवो, तेम दीवा प्रमुखना प्रकाशादिमा पण जाणवुं *

---

* श्रीमद् देवचन्द्रजीए दीवाना प्रकाशने विस्रसा पुद्गल मानी अचित कह्यो छे आ बाबतमां ए मत छे केटलाक मुनियो श्रीमद् देवचन्द्रजीनी पेठे दीपकना प्रकाशने विस्रसा पुद्गल मानी अचित गणे छे अने रात्रे उपाश्रयमां दीपकना प्रकाशमां पुस्तको वांचे छे शरीरपर प्रकाश पडे छे ते अशाश्वविस्रसा पुद्गलरूप छे एम माने छे अनन्त परमाणुओनो स्कंध बने छे तेनी अवश्य छाया होय छे अग्निकायना पुद्गलोनी, मणिनी छायानी पेठे छाया पडे छे दीवानी चारे तरफ प्रकाशमय विस्रसा पुद्गलो छे तेज अग्निना छाया-प्रतिबिंब पुद्गलो छे माटे छाया प्रतिबिंब पुद्गलो छे ते विस्रसारूप होइ अचित्त छे अन्य सचित्त मनुष्य वगेरे छायाना प्रतिबिंब छाया पुद्गलोनी पेठे ए प्रमाण आगमोनयुक्तियो अनेक जणाये छे श्रीमद् देवचन्द्रजी बहुश्रुत गीतार्थ द्रव्यानुयोगी हता तेमना गुरुआम्नो परंपरापण ए मान्यतावाळी होवी जोइए तपागच्छमां पण केटलाक मुनिवरोनी तेवी मान्यता तथा प्रवृत्ति समजाय छे बीजा पन्थवाळाओ दीवाना पुद्गलोनी उत्पत्ति माने छे तेओ अन्यथा पाठनी साक्षी आपे छे (तत्त्व केवलिगम्यम्)

१३७ प्र०—वक्ता तथा श्रोताना चौद चौद गुण कया कया छे ते कहो.

उ०—वक्ताना चौद गुणो :—१ आगमोक्त सोळबोलना जाण, २ शास्त्रार्थ विस्तारवंत, ३ वाणीमां मीठाश, ४ प्रास्ताविक अवसर ओळखे, ५ सत्य बोले, ६ सांभळनारना संदेह छेदे, ७ बहु शास्त्रवेत्ता गीतार्थ उपयोगी होय, ८ अर्थ विस्तारी संवरी जाणे, ९ व्याकरण रहित कठिनभाषा के अपशब्द न बोले, १० वाणीए सभाने रीझावे, ११ वाणी सांभळीने श्रोता रसस्वाद पामे, १२ प्रश्नार्थवंत, १३ अहंकार रहित, १४ संतोषादिधर्मवंत. श्रोताना चौद गुणो :— १ भक्तिवंत, २ प्रियभाषी, ३ निराभिमानी, ४ सांभळवा उपर रुचिवंत, ५ चपळता रहित एकाग्र चित्ते सांभळीने धारे, ६ जेवा सांभळ्या तेवा प्रगट अक्षर कही देखाडे तेवो स्मरण शक्तिवंत, ७ प्रश्ननो जाण, ८ विस्तारित शास्त्रार्थ रहस्य समजे, ९ धर्म कार्य आळसु न होय, १० धर्म सांभळतां निद्रारहित होय, ११ तात्त्विक बुद्धिवंत होय, १२ दातार होय, १३ धर्म सांभळनारा उपर प्रेम होय तथा तेनी पछवाडे तेना गुण प्रशंसे, १४ निंदा, विकथा, वाद, विवाद, कदाग्रह, ममतादि रहित विनयी सुशील होय.

१३८ प्र०—पुराणो केटलां छे ते जणावो.

उ०—पुराण अढार छे तेना नाम. १ ब्रह्मपुराण, २ पद्मपुराण, ३ विष्णुपुराण, ४ शिवपुराण, ५ भागवत-

पुराण, ६ नारदपुराण, ७ मार्कंडपुराण, ८ अग्निपुराण, ९ भारतपुराण, १० ब्रह्मावर्त्तपुराण, ११ लिङ्गपुराण, १२ वराहपुराण, १३ स्कंधपुराण, १४ वामनपुराण १५ कर्मपुराण, १६ मत्स्यपुराण, १७ गरुडपुराण, १८ ब्रह्मांडपुराण. ए पुराणना नाम जाणवा.

१३९ प्र०—पुद्गल परमाणुमा वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, शब्दादि गुणो छे, तेमा शब्दगुण ते क्याथी आव्यो, शक्ति होय तेनी व्यक्ति संभवे छे पण अहिं शक्तिरूपेज परमाणुमा शब्दगुण देखातो नथी, छतां शब्दवडेज काने साभळीए छीये ते जीवनो गुण छे के पुद्गलनो?

उ०—परमाणुमा बे स्पर्श छे, कर्मवर्गणामा चार स्पर्श छे ते शीत, उष्ण, स्निग्ध, अने लुखो, अने औदारिकादिशरीरमां आठे स्पर्श छे तो बीजा चार स्पर्श हलको, भारी, सुंवाळो अने खरचडो ए क्याथी आव्या? तेनो उत्तर जे संबंध बे प्रकारना छे:— १ समवायसबंध अने २ सयोगसंबंध, त्या समवाय सबंध ते सहचारी वस्तु गुणपर्यायादि जेम षट् द्रव्यमा छे तेम जाणवो, अने सयोगसंबध ते घणा भिन्न भिन्न पुद्गलो मळे थका प्रयोगे अपर नवीन गुण के भाव प्रगटे ते, जेम खारानी साथे हळदरनो सयोग थये रताशगुण नीपजे तेम जाणवु, एवीज रीते आत्मा अने पुद्गलने संयोगे शब्दनामा गुण प्रगट्यो तेम वर्णादिगुणवत कर्म परमाणुमा चार

स्पर्श समवायसंबंधे पुद्गलाश्रित हताज, अने पछी जीवशरीरादि संयोगसंबंधे आठ नीपज्या.

१४० प्र०–जीव परभव आयु केवा परिणामे बांधे ?

उ०–योग, कषाय, ध्यान अने लेश्या ए चारना शुभाशुभ यथायोग्य एकत्र संयोगे, जीवने परभवायु बंधाय छे.

१४१ प्र०–षट्द्रव्यना क्षेत्रकाळभावादि त्रीस भेद कया, तथा प्रकारांतरे पण द्रव्यादिक चार भेदनुं स्वरूप कहो.

उ०–षट्द्रव्य मांहेला प्रत्येकना पांच पांच गुण छे ते आ प्रमाणे—

१. धर्मास्तिकायः–१ द्रव्यथी एक, २ क्षेत्रथी लोकप्रमाण, ३ काळथी अनादिअनंत, ४ भावथी अरूपी (अवर्णादि), ५ गुण चलणसहायक.

२. अधर्मास्तिकायः–१ द्रव्यथी एक, २ क्षेत्रथी लोकप्रमाण, ३ कालथी अनादिअनंत, ४ भावथी अरूपी (अवर्णादि), ५ गुण स्थिरतासहायक.

३. आकाशास्तिकायः–१ द्रव्यथी एक, २ क्षेत्रथी लोकालोकप्रमाण, ३ कालथी अनादिअनंत, ४ भावथी अरूपी (अवर्णादि), ५ गुण अवकाशदानसमर्थ.

४. काळः–१ द्रव्यथी अनेक एटले अनंताअनंत, २ क्षेत्रथी मनुष्य लोक मध्ये, ३ कालथी अनादिअनंत, ४ भावथी अरूपी (अवर्णादि), ५ गुण नवा, पुराणा, वर्तना लक्षण.

५. पुद्गलास्तिकायः–१ द्रव्यथी अनेक एटले अनंता, २ क्षेत्रथी लोक मध्ये, ३ काळथी अनादिअनंत, ४ भावथी रूपी एटले वर्णादियुक्त, ५ गुण पुरण, गलण, मिलण, विखरण, सडण, पडण, वि घंसन, धर्मलक्षण.

६. जीवास्तिकाय–१ द्रव्यथी अनेक एटले अनत, २ क्षेत्रथी लोक म ये, ३ कालथी अनादि अनंत, ४ भावथी अरूपी (अवर्णादि), ५ गुण चेतनाउपयोगवत.

एवी रीते षट्द्रव्यना द्रव्यादि अपेक्षाए, त्रीश भेद दर्शाव्या, प्रकारांतरे निश्चयव्यवहारनये द्रव्य क्षेत्र काल भावे कथचित् सप्रदेशी, कथचित् अप्रदेशी, एम भजनाए विध विध अपेक्षाए अनेक भेद स्वरूप विस्तारित ग्रथांतरथी गुरुगम्य जाणी लेवु. जूनी प्रत्यन्तरे नीचे मुजब छे.

पुनरपि द्रव्यथी, क्षेत्रथी, कालथी, भावथी स्यु ? ते कहे छे १ द्रव्यथी अप्रदेशी, बीजु २ क्षेत्रथी अप्रदेशी, ३ त्रीजुं कालथी अप्रदेशी, ४ चोथु भावथी अप्रदेशी, हवे क्षेत्रथी ते नियमा अप्रदेशी ते द्रव्यथी स्यात् सप्रदेशी अप्रदेशी ४ हवे कालथी स्यात् सप्रदेशी अप्रदेशी कालथी पण भजना, क्षेत्रथी स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी, हवे भावथी स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी एणी रीते लेजो ए भाव, हवे जे द्रव्यथी सप्रदेशी ते क्षेत्रथी सप्रदेशी छे, जे कालथी सप्रदेशी छे ते भावथी सप्रदेशी छे ८. हवे सप्रदेशी ते क्षेत्रथी स्यात् सप्रदेशी, अप्रदेशी ते द्रव्यथी सप्रदेशी नियमा ते द्रव्यथी स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी ते द्रव्यथी सप्रदेशी होइने अप्रदेशी पण छे. हवे अप्रदेशी कालथी स्यात् सप्रदेशी, सप्रदेशी स्यात् अप्-

देशी, कालथी स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी, ते क्षेत्रथी स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी, हवे भावथी स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी भावथकी भजना भावथकी स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी ने कालथी पण स्यात् सप्रदेशी स्यात् अप्रदेशी इति भाव.

१४२ प्र०—षट्द्रव्यना गुणपर्यायनुं शुद्धाशुद्ध स्वरुप यथार्थ विस्तारे समजावो.

उ०—षट्द्रव्यमध्ये प्रथम जीवद्रव्य लइए, ए जीव बे प्रकारे छे, एक शुद्ध अने बीजो अशुद्ध; द्रव्यकर्म, भावकर्म अने नोकर्मादि सर्व कर्म कलंके रहित शुद्ध निष्पन्न स्वरूपी; सिद्धालये अनादि तथा सादि अनंत भांगे, लोकाग्रे विराजता सिद्धपरमात्माओना जीवद्रव्य शुद्ध जाणवा; तथा कर्मावरणे सहित मलिन आत्मप्रदेशी, रागद्वेषादि भाव मलिन परिणतिवंत, चतुर्गति भ्रमण लक्षणरूप अशुद्ध जीवद्रव्य जाणवा; हवे तेना गुण अने पर्याय विषे लखीए छीए:—जीवना गुण पण बे प्रकारे छे. १ शुद्ध, २ अशुद्ध, त्यां शुद्धगुण ते केवलज्ञानादि अनंतगुणलक्ष्मीरूप परम शुद्ध क्षायिक भावना गुण ते तथा मतिज्ञानादि दश भेद शुद्धाशुद्ध क्षायोपशमिक भावना गुण ते अशुद्ध जाणवा. हवे जीवना पर्याय पण बे भेदे छे, एक व्यंजनपर्याय अने बीजा अर्थ पर्याय, वळी व्यंजन पर्याय पण बे भेदे छे, एक शुद्ध अने बीजा अशुद्ध; त्यां शुद्ध व्यंजन पर्याय ते

चरम शरीर प्रमाण किंचित् उणी अवगाहनावंत, सिद्धावस्थावत ते शुद्ध व्यजन पर्यायवंत जीव जाणवा, तथा नरनारकादि चतुर्गतिरूप अशुद्ध व्यंजनपर्याय जाणवा, अर्थ पर्याय पण वे भेदे छेः—एक शुद्ध अने बीजा अशुद्ध, त्या आपणी गुणश्रेणि मध्ये षड्गुणहानिवृद्धिरूप अगुरुलघुपर्याय ते शुद्धअर्थ-पर्याय, अने मतिज्ञानादि अवलोकन अवस्थिति एक अक्षरने अनंतमे भागे पर्यायरूप जे ज्ञानादि चेतन उपयोग स्थिति ते अशुद्ध पर्याय जाणवो, तथा उत्पाद व्यय ध्रुवरूप जीवना शुद्धाशुद्ध द्रव्यगुणपर्याय जाणवा, जेम मतिज्ञान उपयोगनो व्यय, श्रुतज्ञानो-पयोगनो उत्पाद अने ज्ञानगुण ध्रुव ते शुद्ध भेद, तथा मनुष्यगतिनो व्यय, देवगतिनो उत्पाद अने जीवद्रव्य तो शाश्वत ध्रुवरूप छे, ते अशुद्धभेद जाणवो. हवे पुद्गलद्रव्यना गुणपर्याय विचारीए. त्या ते पुद्गलद्रव्य पण बे भेदे छे, एक शुद्ध अने बीजो अशुद्ध, आकाशप्रदेशे रहल शुद्ध अविभागी अच्छेद्य अभेदरूप परमाणुओ ते शुद्ध पुद्गलद्रव्य, अने द्व्यणुक त्र्यणुकादि परमाणुओना बनेला जे स्कंधो ते अशुद्ध पुद्गलद्रव्य, हवे पौद्गलिक गुण पण बे भेदे छे, एक शुद्ध अने बीजो अशुद्ध, त्या शुद्ध ते निर्विभागी वीसगुणयुक्त पुद्गलद्रव्यगुण जाणवा. वीसगुणादि सहित अनत गुणमिश्रित द्व्यणुकादि स्कंधरूप मुख्य गमन रूपान्तर गुणनी गौणता अने सत्तागुणनी मुख्यता तेने अशुद्धपुद्गल गुण कहीए, वळी पुद्गलपर्याय पण शुद्ध अने अशुद्ध एम बे भेदे

छे, ते पण व्यंजन अने अर्थना भेदे द्विविध छे, त्यां शुद्ध आकाशप्रदेशे अविभागी षट्गुणहानिवृद्धिरूप शुद्ध परमाणु पर्याय ते अने अशुद्धव्यंजनपर्याय ते स्थूल सूक्ष्म परिणामरूप द्व्यणुकादि स्कंध पर्याय ते; वळी शुद्धअर्थपर्याय ते पोतानी गुणश्रेणि मध्ये षट्गुणहानिवृद्धिरूप परिणमन पर्याय ते, तथा अशुद्धअर्थपर्याय ते द्व्यणुकादि स्कंधरूप गुणविगति, तीव्र मन्द तारतम्यभेद परिणमन पर्याय ते; जेम पूर्व स्कंधनो व्यय, वर्तमाननो उत्पाद अने पुद्गल द्रव्य तो शाश्वत छे, एटले जेम सोनानो कंदोरो भांगीने सोनाना बाजुबंध कराव्या त्यां कंदोरानो व्यय, बाजुबंधनो उत्पाद अने सोनुं ते ध्रुव. हवे धर्मास्तिकायना द्रव्य गुण पर्याय विचारे छे. धर्मास्तिकाय शुद्धद्रव्य लोकप्रमाण, असंख्यात प्रदेशी, अखंड, एक आकृतिरूप अरूपि शुद्धव्यंजनपर्यायरूप धर्मास्तिकायद्रव्य जाणवुं, तथा पोतानी गुणश्रेणि मध्ये षट्गुणहानिवृद्धिरूप परिणमन करे त्यां शुद्ध अर्थपर्याय धर्मास्तिकायना कहिये; गुण ते जीव पुद्गलने गतिसहायकरूप, तथा उत्पादव्ययध्रुवपणे षट्गुणहानिवृद्धिरूप पर्याय जाणवा:—जेम चलणगतिनो उत्पाद, स्थितिनो व्यय अने द्रव्यसत्ता ध्रुव शाश्वत जाणवी, एवीज रीते अधर्मादि बीजा त्रण द्रव्योनुं पण किंचित् स्वरूप लखीए छीए:—अधर्मनो गुण जे पुद्गलने स्थितिसहायक, असंख्यातप्रदेशी, लोकप्रमाण, अखंड, षट्गुणहानिवृद्धिरूप परिणाम, ते शुद्ध पर्याय, त्यां अखंडआकृतिरूप

शुद्ध व्यंजनपर्याय जाणवो अने ज्या षड्गुणहानिवृद्धि कर त्या शुद्ध अर्थपर्याय जाणवो, जेम स्थितिनो उत्पाद, गतिनो व्यय, अने द्रव्यसत्ता ध्रुव जाणवी, काळ द्रव्यनो गुण वर्तना लक्षण, पचद्रव्यनो वर्तना पर्याय सर्व द्रव्यनो पर्याय, असंख्यात लोकप्रमाण शुद्ध पर्याय कहीए. वर्तमान समयनो व्यय, अनागत समयनो उत्पाद द्रव्य सत्ता ध्रुव, उपचार एक काल-द्रव्य आकृति ते शुद्ध व्यजनपर्याय, हवे आकाश-द्रव्यनो गुण अवकाशदानलक्षण, लोकालोकप्रमाण, अनंतप्रदेशी, घटाकाशनो उत्पाद, पूर्वघटाकाशनो व्यय अने द्रव्य सत्ता ध्रुव जाणवी. तथा लोकालोक प्रमाण अखडआकृतिरूप शुद्धव्यजनपर्याय कहीये, एम षट्द्रव्यनुं पर्यायादि किंचित् स्वरूप कहिने तेमा जे काइ विशेष जाणवा योग्य छे ते कह छे —

गाथा —परिणामी जीवमुत्ता, सपएसा एगखित्तकिरियाय, णिच्चकारणकत्ता, सव्वगय इयर अप्पवेसे. ॥१॥

१ जीव अने पुद्गल परिणामी, शेष चार अपरिणामी, २ जीवद्रव्य ते जीव चेतनरूप अने शेष पाच अजीव अचेतन जडरूप छे, ३ पुद्गलरूपी मूर्तिमत छे, शेष पाच अरूपी छे, ४ काल, अप्र-देशी छे, शेष पाच सप्रदेशी छे, ५ धर्म, अधर्म अने आकाश ए त्रण एक अने शेष त्रण अनेक, ६ आकाश क्षेत्र छे, अने शेष पाच क्षेत्री छे, ७ जीव अने पुद्गल बे सक्रिय छे, शेष चार अक्रिय छे, ८ जीव अने पुद्गल बे व्यवहारथी अनित्य शेष चार

नित्य छे, ९ जीव अकारणरूप अने शेप पांच कारणरूप छे, १० जीव कर्ता अने शेप पांच अकर्ता छे, ११ आकाश सर्वगत छे, अने शेप पांच असर्वगत छे.

१४३ प्र०—वेदना संबंधी चौभंगी कहो.

उ०—१ अल्पवेदना अल्पनिर्जरा ते देवताओने, २ महावेदना अल्पनिर्जरा ते नारकीने, ३ महावेदना महानिर्जरा ते अप्रमत्त साधुने, गजसुकुमालनीपरे; ४ अल्पवेदना महानिर्जरा ते शैलेशीकारकमहात्मा चौदमा गुणठाणी परमात्मस्वरूप सन्मुखी जाणवा.

१४४ प्र०—सम्यक्त्व अने मिथ्यात्वनी चौभंगी भिन्न भिन्न जीवाश्रित कहो.

उ०—१ अनादिअनंतमिथ्यात्व अभव्यने; २ अनादिसांत मिथ्यात्व भव्यने; ३ सादिसांतमिथ्यात्व प्राप्त सम्यक्त्ववमनारने; ४ सादि अनंत भांगो शून्य छे.

१४५ प्र०—व्रतअंगीकार तथा पालनमां सिंहपणा तथा शियाळपणानी चौभंगी दृष्टांत सहित कहो.

उ०—१ सिंहपरे व्रत ग्रहे अने सिंहनी परे पाळे ते जंबुस्वामी स्थूलभद्रादिनी परे, २ सिंहपरे ग्रहे अने शियाळनी परे पाळे, ते मरिचादिवत्, ३ शियाळपरे ग्रहे अने सिंहनी परे पाळे, ते मेतार्यमुनिआदिवत्, ४ शियाळपरे ग्रहे अने शियाळपरे पाळे ते अंगारमर्दकाचार्य, कुलवालुकादिवत् जाणवा.

१४६ प्र०—चार अनुयोग ते कया.

उ०—१ द्रव्यानुयोग ते षट्द्रव्य विषयक गुणपर्याय स्वरूप कथनयुक्त आत्मद्रव्य विवेचनमुख्याधिकार, २ धर्मकथानुयोग, ते सता, सती महात्माओना चरित्रोनु कथन स्वरूप, ३ गणितानुयोग ते द्वीप, समुद्र, क्षेत्रादिनुं, क्षेत्रफळादिमापनु गणित कथन स्वरूप, ४ चरणकरणानुयोग ते क्रियानुष्ठान चारित्रादि व्रत पचखाण नियमादि विधि कथनस्वरूप

१४७ प्र०—जीव दुर्लभबोधिपणुं केटला कारणे पामे ?

उ०—छहिठाणेहिं दुल्लभ बोहिमाण कम्म पकरति अरिहंताणअवन्नंवयमाणे ॥ १ ॥ अरिहंत पन्नत्तस्सधम्मस्स अवन्नवयमाणे ॥२॥ आयरियाणंअवन्नवयमाणे ॥३॥ उवज्झायाण अवन्नवयमाणे ॥४॥ चाउवन्नस्स सघस्स अवन्नंवयमाणे ॥ ५ ॥ समद्दीठीदेवाणं अवन्नवयमाणे ॥ ६ ॥

१ श्रीअरिहंत, २ तथा तेमनो भाखेलो जे धर्म तथा तेमनी प्रतिमाजी तथा तेमना वचनरूप जे सिद्धात इत्यादिक अरिहंत सबंधी अवर्णवाद, निंदा, द्वेषादि मत्सरूप अविनयादि कारण थकी, ३ जिन आज्ञाकारी, जिनशासनस्थभरूप श्रीआचार्यभगवतनो अवर्णवाद करवा थकी, ४ श्रीसूत्रसिद्धातना पारगामी आचार्यपदने योग्य, अनेक शिष्योने सारणा वारणादि हित शिक्षा, सूत्रसिद्धातार्थ अभ्यासना दाता श्रीउपाध्यायजी भगवतनो अवर्णवाद करवाथकी, ५ ज्ञाने करीने एकात मोक्ष मार्गनाज साधक श्रीसाधु मुनिमहाराजानो अवर्णवाद करवा

थकी; ६ जिन आज्ञाकारी सुशील श्रीअरिहंतादिकने पण पूजनिक एवो श्रीचतुर्विधसंघ तेनो अवर्णवाद करवा थकी, जीव दुर्लभबोधिपणुं पामे, अर्थात् अनंतकाळ संसार परिभ्रमण करतां थकां पण धर्म सामग्रीनी जोगवाइ पामवी महादुर्लभ थइ पडे, तो पछी धर्म प्राप्तिनी दुर्लभतानी वातनुं तो कहेवुंज शुं ?

१४८ प्र०—आठ प्रकारना आत्मा ते कया ?

उ०—१ द्रव्यात्मा, एटले असंख्यातप्रदेशी शुद्धजीवद्रव्य स्वगुणपर्यायसहित सत्ताए छे ते शुद्ध द्रव्यात्मा, अने तेना ज्ञानदर्शनादि उपयोगे रहित ते अशुद्धद्रव्यात्मा कहीये; २ कषायात्मा, सोळ कषाय तथा नव नोकषाय प्रवर्तमान जीव ते कषायात्मा; ३ मनवचनादि योगप्रवर्तमान आत्मा ते योगात्मा; ४ ज्ञान अज्ञानादि उपयोगी आत्मा ते उपयोगात्मा; ५ ज्ञानात्मा एटले जीवाश्रित सच्चिदानंदघन ज्ञानस्वरूपे प्रवर्तमान आत्मा ते, ६ दर्शनात्मा ते सम्यग्दृष्टिजीव ते; ७ चारित्रात्मा ते सत्तागत स्वरूपरमणरूप स्थिरतागुणे प्रवर्तमान जे जीव ते; ८ वीर्यात्मा, मन वचन कायादिना बळ पराक्रमरूप अशुद्ध वीर्यात्मा कहीए, पण आत्मसत्तागत रहेल अनंतशक्तिनी स्फुरतिए शुद्धात्मोपयोगे प्रवृत्ति करी अनादि अनंतकाळना कर्म मळने निकंदन करणरूपशक्तिनी व्यक्ति ते शुद्धवीर्यात्मा कहीए.

१४९ प्र०—पूर्वोक्त अष्टविध आत्माओमांथी कइ गतिमां केटला होय ते कहो.

उ०-नारकी तथा देवताओ मध्ये सात आत्मा होय, पण चारित्रात्मा न होय, तथा एकेंद्रिय मध्ये छ आत्मा संभवे पण ज्ञानात्मा अने चारित्रात्मा नहि, तथा तिर्यचपंचेंद्रिय अने मनुष्यगतिमध्ये आठे आत्मा होय, तथा पंचमगतिमध्ये एटले श्रीसिद्धपरमात्माने अनंतगुणभाजनरूप शुद्ध जीवद्रव्य ते श्रीसिद्ध भगवन्तनु छे, तेने विषे चतुर्विधआत्मा छे, ते ज्ञानात्मा, दर्शनात्मा, उपयोगात्मा तथा शुद्ध द्रव्यात्मा.

१५० प्र०-अष्टविध त्रसजीवो छे ते कया ? ते दृष्टांत सहित कहो.

उ०-१ अंडजा ते पक्षीआदि, २ पोतजा ते गजादि, ३ जरादि ते गवादि, ४ रसजा ते कीटकादि, ५ स्वेदजा ते यूकादि, ६ समूर्च्छिम ते पतगादिक; ७ उद्भिज ते गिंगोडादि, ८ उत्पादिका ते देव नरकादि

१५१ प्र०-जीवना दस प्रकारना परिणाम ते कया ?

उ०-१ गति, २ इंद्रिय, ३ कषाय, ४ लेश्या, ५ योग, ६ उपयोग, ७ नान, ८ अज्ञान, ९ दर्शन, १० चारित्र. इति पन्नवणा सूत्रना १३ मा पद मध्ये छे।

१५२ प्र०-अजीवपरिणमन केटला प्रकारे छे ?

उ०-" बंधण १, गई २, सठाणा ३, भेय ४, वन्न ५, गंध ६, रस ७, फास ८, अगुरुलघु ९, शब्द १०, परिणामा ए दसहुतिअजीवा ॥ १ ॥

१ बंधन, २ गति, ३ संस्थान एटले आकृति, ४ जाति, ५ वर्ण, ६ गंध, ७ रस, ८ स्पर्श, ९ अगुरुलघु, १० शब्द, ए दस रीते परिणमे छे.

१५३ प्र०-अंतर्मुहूर्त कोने कहीए ?

१५६ प्र०–वारउपयोगमां रूपी केटला अने अरूपी केटला, अने ते शा माटे ?

उ०–केवलज्ञान अने केवलदर्शन ए वे आत्मगुणरूप होवाथी अरूपी छे; अने शेष दस आत्मपुद्गलाश्रित मिश्रित होवाथी रूपी छे.

१५७ प्र०–पांच समकितमां, रूपी केटलां अने अरूपी केटलां? ते कारण सहित कहो.

उ०–पांच मध्ये एक क्षायिक ते शुद्धात्मगुण प्राप्ति भणी अरूपी छे, अने शेषचार पुद्गल उपष्टंभी अल्पकालिक किंचित् पराधीनता भणी रूपी छे.

१५८ प्र०–छआवश्यकमध्ये केटला रूपी अने केटला अरूपी ? तथा तेमां संवरमां केटला अने निर्जरामां केटला ?

उ०–सामायिकादि पांचआत्मगुण भणी अरूपी छे, अने एक प्रतिक्रमण आवश्यक पापनिंदा, गर्हारूप आत्म सन्मुखी पण मंदता भणी रूपी छे; तथा सामायिक चउवीसत्थो तथा वांदणा ते त्रण संवरतत्त्वमां छे; अने शेष त्रण निर्जरातत्त्वमां छे.

१५९ प्र०–सर्वार्थसिद्ध विमानना देवताओ अने विजयविमानना देवताओ केटला भवमां सिद्धि पामे.

उ०–“ सव्वट्ठाओनियमाएगंसिभवंसिसिज्झईअवस्सं। विजयादिविमाणेट्ठियं, संखिज्जभवाओनायव्वा ॥ १ ॥

अर्थ—सर्वार्थसिद्धविमानवासि देवताओ निश्चयथी एक भवमां सिद्धि पामे छे. अने विजयादि विमान वासि देवोनी स्थिति संख्याताभवनी होय छे.

१६० प्र०–श्रावक जघन्य पदे केटला लाभे ?

उ०—क्षेत्रपल्योपमने असंख्यातमे भागे. इति आवश्यकनिर्युक्तौ जम्बूद्वीपमध्ये 'कीटिकानहव्य अथवा नरानहवः तत्रोत्तर यदासमूर्च्छिमाणां विरह तदाकीटिकास्तोकानरानहवः

१६१ प्र०—चार सामायिक ते कया, अने ते प्रत्येकमां कयु समकित तथा गुणठाणुं होय ते कहो.

उ०—१ श्रुतसामायिकमां दीपकसमकित अने पहेलुं गुणठाणुं होय, ते अभव्यने पण होय, कारण जे जिनवचनानुसार प्ररूपणा करे तेथी परने मार्ग दीपावे, धर्म पमाडे पण पोताने अंधारुं होय, अपितु श्रद्धा, पाप, श्रासादि न होय तेथी, २ दर्शन सामायिक सम्यग्दृष्टि चोथागुणठाणीने होय, ३ देशविरतिसामायिक पाचमे गुणठाणे श्रावकने होय, ४ सर्वविरतिसामायिक ते छट्ठेसातमेगुणठाणे वर्तता मुनिमहाराजने होय, ए सर्व गुणठाणानी परिणतिरूप कषायना क्षयोपशमने लीधे होय छे

१६२ प्र०—छकाय जीवोनी महाविराधनारूप पाच स्थान कया कह्या छे ?

उ०—१ घंटी स्थान, २ चूला स्थान ते रसोडु, ३ पाणीआरु, ४ वासिदु, ५ उखण मूसळादि खाडण पीसण स्थान, ए पाच छकाय हिंसाना स्थान, त्या उत्तमजीवो नि.शूकपणे न वर्तता अतियतनाए वर्ते छे, तेथी आकरो कर्मबंध पडतो नथी.

१६३ प्र०—आत्मस्वरूप सूचक केटलाएक अन्वय अने व्यतिरकभावे विशेषणो कहो

उ०–असंख्यातप्रदेशी, अनंतज्ञानमयी, अनंतदर्शनमयी, अनंतचारित्रमयी, अनंतदानमयी, अनंतवीर्यमयि, अनंतलाभमयी, अनंतभोगमयी, अनंतउपभोगमयी, अरूपी, अखंड, अगुरुलघुमयी, अक्षय, अजर, अमर, अशरीरी, अत्येन्द्री, अणाहारी अलेशी, अनुपाधिक, अरागी, अद्वेपि, अक्रोधी, अमानी, अमायी, अलोभी, मिथ्यात्वरहित, अविरतिरहित, कषायरहित, योगरहित, अयोगी, सिद्धस्वरूपी, संसाररहित, स्वात्मसत्तावंत, परसत्ता रहित, परभाव अकर्ता, स्वभाव कर्ता, परभाव अभोक्ता, स्वभाव भोक्ता, क्षायिक वेत्ता, स्वक्षेत्रावगाहि, परक्षेत्र अनावगाहि, लोकप्रमाण अवगाहनवंत, धर्मास्तिकायथी भिन्न, अधर्मास्तिकायथी भिन्न, आकाशास्तिकायथी भिन्न, पुद्गलथी भिन्न, परकालथी भिन्न, स्वद्रव्यवंत, स्वक्षेत्रवंत, स्वकालवंत, स्वभाववंत, अवस्थानपणे स्वगुणथी अभिन्न, कार्यभेदे भिन्न, अवस्थितसत्तावंत, परिणमनसत्तावंत, द्रव्यास्तिकपणे नित्य, पर्यायास्तिकपणे नित्यानित्य, द्रव्यपणे एक, गुण पर्यायपणे अनेक, अनंतद्रव्यास्तिकधर्मवंत, अनंत पर्यायास्तिकधर्मवंत इत्यादि स्वसंपदामयी चेतन लक्षणे लक्षित, स्वसंपदाए पूर्ण, परसंगे परिणम्यो थको संसार उभो कर्यो, स्वज्ञानादिगुणे परिणम्यो थको सिद्धता करे, एवा आत्मद्रव्यथी ओळखाण अनंतनये, अनंतनिक्षेपे थाय. ए रीते जे आत्मप्रतीति करे तेने जैनमार्गी जैनमार्गमां गणे छे, एवो आत्मा अनेकांतपणे जैनमार्गी छे; एनी जे प्रतीति ते सम्यगूदर्शन, एनुं

जे ज्ञान ते सम्यग्ज्ञान, एमा जे रमवु ते सम्यग्चारित्र कहीए.

१६४ प्र०–द्रव्यास्तिकनयना छ सामान्य स्वभाव कहो.

उ०–१ अस्तित्व, २ वस्तुत्व, ३ द्रव्यत्व, ४ प्रमेयत्वं, ५ प्रदेशत्वं, ६ अगुरुलघुत्वं

१६५ प्र०–वस्तुना अग्यार विशेष स्वभाव कहो.

उ०–१ नित्य, २ अनित्य, ३ एक, ४ अनेक, ५ सत्य, ६ असत्य, ७ वक्तव्य, ८ अवक्तव्य, ९ भेद, १० अभेद, ११ परम स्वभाव

१६६ प्र०–प्रकारांतरे बीजा नव आत्मवस्तुस्वभाव कहो

उ०–१ स्वप्रदेश, २ अप्रदेश, ३ चेतन, ४ अचेतन, ५ मूर्तिमंत, ६ अमूर्तिमत, ७ कर्तृत्व, ८ भोक्तृत्व, ९ परिणामिक

१६७ प्र०–षड्द्रव्यमध्ये प्रत्येकना चार चार गुण छे ते कहो.

उ०–१ धर्मास्तिकायना–अरूपी, अचेतन, अक्रिय अने गतिसहायक.

२ अधर्मास्तिकायना–अरूपी, अचेतन, अक्रिय, अने स्थिरसहायक.

३ आकास्तिकायना–अरूपी, अचेतन, अक्रिय, अने अवकाशदानवत.

४ पुद्गलास्तिकायना–रूपी, अचेतन, सक्रिय, अने पूरणगलण.

५ कालना–अरूपी, अचेतन, अक्रिय, अने वर्तना.

६ जीवना–अरूपी, चेतन, सक्रिय, चेतनालक्षणवत.

१६८ प्र०—पर्यायास्तिकनयना छ भेद कहो, तथा तेनुं किंचित् विशेपकथन गुणपर्यायस्वरूप कहो.

उ०—१ पर्यायत्वं, २ भव्यत्वं, ३ सिद्धत्वं, ४ अभव्यत्वं, ५ कारणत्वं, ६ कार्यत्वं.

वळी प्रकारांतरे गुणपर्याय स्वरूप कहे छेः—

द्रव्यव्यंजनपर्याय असंख्यप्रदेशत्वं, गुणपर्याय गुणांतरभेद क्षांत्यादिभेद, गुणव्यंजनपर्याय, एक गुणना अनंतपर्याय, स्वभाव पर्याय, ते पट्गुणहानि वृद्धिरूप, अने विभावपर्याय ते नर नरकादिपर्यायास्तिक सामान्य पारिणामिक, अखंड, अलख, असहायी, सक्रियना अनंतगुणपर्याय समुदायनो वादर द्रव्यभेद कहीए.

१६९ प्र०—द्रव्य अभेदी ते शुं ?

उ०—द्रव्यना वे भाग न थाय माटे.

१७० प्र०—भेद द्रव्य ते केम ?

उ०—गुण गुणना करनार जुजुवा भणी भेदस्वरूपी कहीए. जेम केः—ज्ञान गुण, दर्शन गुण, चारित्र गुण, सुख गुण, दान गुण, लाभ गुण, भोग गुण, वीर्य गुण, इत्यादि अनंतगुणभेदे भेदस्वरूपी कहीए.

१७१ प्र०—सम्यक्त्वनां पर्यायनामो कहो.

उ०—आस्ता, श्रद्धा, प्रतीति, निर्धार, रूचि, अभिलाष, वहुमान, अर्थिपणुं; तत्त्वइहा, गुण अद्भुतता, गुण गुणी आश्चर्यता, तद्‌विरहाकारकता, वस्तु प्रेम, तत्त्वार्थ सद्दहणा, इत्यादि.

१७२ प्र०—सम्यग्ज्ञाननां पर्यायनामो कहो.

उ०–अवलोकन, भासन, परिच्छेदन, विवेचन, अमूर्त्तिचेतनत्व, सर्ववेत्ता, अप्रतिपातित्व, निरावरणत्व, ज्ञायकता, स्वरूपओळखाण, स्वरूपानुभव इत्यादि.

१७३ प्र०–सम्यक्चारित्रना पर्याय नामो कहो.

उ०–स्थिरता, तत्त्वरमण, निश्चयत्वानुभूति, परमक्षमा, परममार्दव, परमआर्जव, परमनिर्लोभता, अकामता, अनासगता, सुख, स्वरूपविलास, ठरणता, संतोष, समता, स्वरूपस्वादता, स्वरूपानंद, सहजता, स्वाधीनता, इत्यादि

१७४ प्र०–सम्यक्त्वनी दशरुचि कहो

उ०–१ निसर्ग रुचि, २ उपदेश रुचि, ३ ज्ञान रुचि, ४ सूत्र रुचि, ५ बीज रुचि, ६ अभिगम रुचि, ७ विस्तार रुचि, ८ क्रिया रुचि, ९ संक्षेप रुचि, १० धर्म रुचि.

१७५ प्र०–सम्यक्त्वना पाच लक्षण कहो.

उ०–१ सम एटले उपशम कहेता पारमार्थिक अकषायिपणुं एटले अपराधि शत्रुनुं पण चित्तमा अंतरग परिणामे कदी माठु चिंतवे नहि, २ संवेग ते एकात शुद्ध परमात्मस्वरूपसुखनीज अभिलाषा, ३ निर्वेद ते ससार थकी उदासीनता तीव्रउद्विग्नता, ४ अनुकंपा, ते प्राणीमात्रने आत्मवत् लेखी कोइ उपर पण मारातारापणानो भिन्नभाव न गणे, लुखा व्यवहार वर्ते, अतरगथी सदा न्यारो ठरे छतां सर्व उपर आप समान दया भाव दृष्टि, ५ आस्तिकता ते शुद्ध जिनवचन उपर एकात दृढ चित्त प्रतिबंधरूप श्रद्धा, गाढ सत्य मान्यता.

१७६ प्र०–आत्मा बंधक छे, अबंधक छे, भोक्ता छे, अभोक्ता छे, कर्ता छे, अकर्ता छे ते शुं ?

उ०–निश्चयनये अबंधक, व्यवहारनये बंधक, एमज भोक्ता कर्तादि व्यवहारे आत्मा जाणवो, अने निश्चये एटले मूळस्वरूपे अपरिणामिकपणे एटले स्वरूपपरिणामे अभोक्ता, अकर्ता, स्वरूपभोक्ता स्वरूप कर्ताज कहिये.

१७७ प्र०–त्रणआत्मानुं मूळस्वरूप कहो.

उ०–१ बहिरात्मा ते देहादिकने आत्मबुद्धिए अहंभावे एकांते बाह्यदृष्टिए पोतारूप समजे, जेवुं देखे तेवुंज माने, पण अंतरंगदृष्टिए कंई विचारे नहि के समजे नहि ते एकांतमिथ्यादृष्टि पहेलेगुणठाणे जाणवा, २ अंतरात्मा ते आत्मा अने देहादिक पौद्गलिक भावने भिन्नभिन्न लखे, स्वरूप गवेखे, परथी उदासीनता चिंतवे इत्यादि भेदज्ञानी चोथेथी बारमा गुणठाणा सुधी जाणवा, ३ परमात्मा ते अतिनिर्मळशुद्धस्वरूपानुभवी, निष्कलंकी, निरावरणी सच्चिदानंदघनस्वरूपमय, अंतरात्माने ध्येय ध्यानरूप जाणवा.

जुनि प्रतिमां त्रण आत्मानुं स्वरूप नीचेप्रमाणे छे.

हवे आत्मानो स्वरूप लखे छे. आत्मा त्रण प्रकारे, ते आत्मानो स्वरूप सम्यगदृष्टिए धारवो, जेम स्थिरता थाय ते लखे छे, ते त्रण प्रकार ते कया ? एक बहिरात्मा १, एक अंतरात्मा २, एक परमात्मा ३. हवे बहिरात्मानुं स्वरूप कहे छे. शरीर, कुटुंब, माल, धन, घर, परिवार, नगर, देश, रागद्वेष, मिथ्यात्व, में

मार्यो, में जीवाड्यो, में सुखी कर्यो, में दुःखी कर्यो, संसेविमोहभसुख ए सर्व निजस्वभाव जाणे तेहने बहिरात्मा कहिए तेहने बहिर्दृष्टि होइ ते प्रथम मिथ्यात्वगुणठाणे होवे १. अथ अनरात्मानो स्वरूप कहे छे. प्रथम कर्मबांध्यानो कारण जाणे ते लखे छे, मिथ्यात्व ५ अविरति १२ कषाय २५ योग १५ ए सत्तावन हेतु ए जीव कर्मबांधे, ते वलतां भोगवे, ते भोगवतां मोहनीकर्मना जोर दुःख पामे, तिहार इम जाणे जे मारो स्वभाव नहि. किसी वस्तु जाइ तथा मरण आवे तिहार इम जाणिजे माहरा प्रदेशथी कांइ जातो नथी, हु सर्व वस्तुथी भिन्न छुं, किवार कुलाभ पामे तिवारे जाणे जे ए वस्तुथी सबर दव्यो छे, वेदनादिक दृष्टि आवे समभावे राखे, परभाव पुद्गलादिक आत्माथी भिन्न जाणवो, छडवानीखप-करी परमात्मानी वांछा कर, ध्यान सज्झाय विशेष करे, भावना लीणलीण भावे, सबर आदर, निज स्वभावे जे ज्ञान तेहने विशे इम मन रहे ते अंतरात्मा परमात्माने जोग्य चोथा गुण-ठाणाथी बारमा गुणठाणा सुधि अंतरात्मा जाणवो, एहवो ए अंतरात्मा ओलखे तिवारे परमात्मा पामे, परमात्मानो स्वरूप लखिए छीए. साक्षात पोतानो स्वरूप देखे, कर्मनी उपाधि रहित, ते परमात्मा तेरमे तथा चौदमे गुणठाणे होय, तथा सिद्ध जाणवा, ए परमात्मा ध्यान योग्य, अनरात्मा ध्याववा योग्य, ता ध्येय ते परमात्मा, ध्यान ते एकाग्रता एम त्रणआ-त्माना स्वरूप जाणवा इति भाव.

१७८ प्र०–सद्दहणा, फरसणा अने प्ररूपणा, संबंधी अष्टभंगी दृष्टांत सहित कहो.

उ०–सद्दहणा, फरसणा अने प्ररूपणा, एटले जाणे आदरे अने पाळे, ते भांगे श्री गौतमादि महात्मा जाणवा, २ सद्दहणा, फरसणा, पण प्ररूपणाए असमर्थ ते जे सामान्य साधु उपदेश देवाने असमर्थ छे, पण पोते पाळे छे तेने जाणवो; ३ सद्दहणा पण फरसणा, प्ररुपणा नहि, ते अनुत्तर विमानवासी देवने, जाणे न आदरे पण पाळे ते भांगे जाणवुं; ४ सद्दहणा तथा प्ररुपणा पण फरसणा नहि ते संवेगपाक्षिकने. जाणे, आदरे पण पाळवा असमर्थ ते भांगे जाणवुं. ५ फरसणा पण सद्द णा ने प्ररुपणा नहि, ते बाळ तपस्वी प्रमुखने–न जाणे पण आदरे अने पाळे ते भांगे जाणवुं; ६ प्ररुपणा होय पण सद्दहणा अने फरसणा नहि, ते आदरे पण न जाणे अने न पाळे ए भांगो असंजयति संन्यासी आदिने; ७ फरसणा तथा प्ररुपणा होय पण सद्दहणा नहि, ते न जाणे पण आदरे पाळे ते भांगो पासत्थादिकने तथा अभव्यदीपकसमकितीने पण होय; ८ असद्दहणा, अप्ररुपणा ते अनादिमिथ्यात्विने; न जाणे न आदरे न पाळे ए भांगो जाणवो, ते निगोदिया प्रमुख एकेंद्रियादिकने होय.

१७९ प्र०–श्रीतीर्थंकर प्रभुना दानाधिकार संबंधी छ अतिशयो वर्णवो.

उ०–प्रतिदिन एकक्रोड अने आठलाख सोनैया आपे, ते

सोनैयो आठरति के मतांतरे अेंसीरतिनो पण कह्यो छे, छ घडी दहाडो चढतां आपवा माडे ते पोणाबे-पहोर सुधी जमवानी वेळा पर्यंत मनवाछित दान सौने भाग्यप्रमाणे प्रभु आपे, सोनैयामां प्रभुनु तथा प्रभुना मातपिताना नाम होय, ते एक दिवसना दानना सोनैया नवहजार मण थाय, चालीस मणनुं एक गाडु भरतां कुल २२५ गाडा भराय, ते गाडा तथा मण वगेरे सर्वे माप जे जे समयमा प्रभु थया होय ते ते समय तथा ते ते देशना जाणवा, सवत्सरी दानना सोनैया सर्वे इंद्रोना आदेशे वैश्रमण देवता आठसमयमां निपजावी प्रभुना गृहभडारमा भरे, हवे ते दानना छ अतिशय करे छे'–१ तीर्थंकरना हाथने विषे सौधर्मेंद्र एवी स्थिति करे के जेथी प्रभु दान देता थाके नहि, जोके प्रभुतो अनत शक्तिना धणी छे, तोपण आ उत्सव अवसरे ए प्रथमइंद्रनो अधिकार लहावो लेवारूप छे, ते अनादिनी एवी मर्यादा जाणवी, इशानेंद्र सुवर्णमय रत्नजडित छडी, दड लइ उभो रहे अने चोसठइद्र सिवाय बीजा सामानिक प्रमुख देवोने दान लेतां निवारे, अने याचकना भाग्यानुसार इशानेंद्र तेना मुखे बोलावे अने २ चमरेंद्र तथा बलीन्द्र प्रभुनी मुठीमां वधारे होय तो पाडी नाखे, अने ओछुं होय तो पूरु करी आपे, सामानी प्राप्तिने अनुसारे मळे, ३ भुवनपति-देवता भरतक्षेत्रना मनुष्यने तेडी आवे, ४ अने वाण-व्यंतर देवो तेमने पाछा मूकी आवे, ५ ज्योतिषी देवो विद्याधरोने प्रभुना दाननी खबर ६

प्रभुना पिता त्रण मोटी दानशाळा करावे, एकमां भरतक्षेत्रना मनुष्यने अन्नपानादि सार वस्तु आपे. बीजीए वस्त्र आपे, अने त्रीजीए आभरण आपे.

१८० प्र०–हवे साधु सज्झाय करे छे, शुभयोगे व्रतादिकनी शुभक्रिया करे छे तथा शुद्धोपयोगे, शुद्ध स्वभावे 'अप्पाणंभावेमाणेविहरई' इम आत्मध्यान करे छे ते सर्व कर्म खपाववाने अर्थे, ते किहा कर्म खपावे, खपाववानां तो त्रण कर्म छे, उदयकर्म अने बंधकर्म ने सत्ताकर्म. उदीरणाकर्म तो उदयना पेटा मध्ये गवेस्यीए, तथा कर्म ते मध्ये उदय लेखे खपावे छे, तथा सत्ताकर्म लेखे शोषे छे, हवे बंधकर्म किम मटे ?

उ०–शुभयोगे पांच महाव्रत संवररूपक्रियाए नवा बंध पडे ते कर्मनिवारे ते माटे बंधकर्म निवारे ते व्रतादिक शुभक्रियाए, तथा पांच प्रकारना सज्झाय ध्याने उदयकर्म खपावे छे, ते निष्फल करे छे, तथा शुद्धोपयोगे आत्मध्याने सत्ताए जे कर्म छे ते सोषे खपावे. इम मुनि आत्मगुण निर्मल करी सिद्धि वरे ए भाव.

१८१ प्र०–ज्ञानीने आस्रव ते संवररूपे केवी रीते परिणमे छे.

उ०–ज्ञानीने शुद्धोपयोगे आत्मपरिणामे आस्रवना कारण ते संवररूपे थाय छे, आचारांग सूत्रना चोथा अध्ययने द्वितीयोद्देशके समकितना अध्ययन मध्ये "आसवा ते परिसवा" एवी गाथा छे.

१८२ प्र०–हवे श्रीजीवाभिगमसूत्र मध्ये निर्लेपपदे श्रीगौतमे पुछ्युं के स्वामिन् ? पांच स्थावरना जीव हमणां वर्तमानमां जेटला छे ते निर्लेप थाशे, गत्यन्तरे जाशे ?

उ०—एक वनस्पतिकायविना पांचकायना जीव निर्लेप थाशे. पृथ्वी, अप्प, तेउ, वाउ, त्रसकायना जीव सर्वस्थानान्तरे निर्लेप थाशे, पण वनस्पतिकाय निगोदगोलकना जीव निर्लेप "नत्थितत्थअत्थिअणता जीवा जेहिंनपत्तोतसाई परिणामो । उववन्तियचयंतियपुणोवितत्थेवतत्थेव ॥ १ ॥ एणे न्याये वनस्पतिकायना जीव निर्लेप न थाय ए भाव

१८३ प्र०—बादरअप्पकाय उपरदेवलोकमा क्या सुधी छे ? तथा तेउकाय केटले सुधी छे ?

उ०—बादरअप्पकाय बारमादेवलोक सुधी अने बादरतेउकाय तीर्छा मनुष्यलोकरुपअढीद्वीपमाह, उची मेरपर्वतनी चुलिका सुधी

१८४ प्र०—सातमी तथा छट्ठी नरकमा, कुंभिमा उपजवानु थाय छे के आलियामा थाय छे

उ०—सातमी तथा छट्ठी नरके आलीया छे जेम नदीनी भेखडे बील होय छे एटले सांकडा छे ते उपर शरीर विशाळ तिवार पडे एम साभळ्यु छे ए भाव.

१८५ प्र०—साधुनां १४ उपगरणो ते क्या क्या

उ०—पत्तपत्ताबधो, पायठवणचपायकेसरिया ।
पडलाईरयत्ताण, गोच्छओपायनिज्जोगो ॥ १ ॥
तिन्नेवयपच्छागा, रयहरणंचेवहोइमुहपत्ती ।
एसोदुवालसविहो, उवहीजिणकप्पियाणतु ॥ २ ॥
एएचेवदुवालस, मत्तगअइरगचोलपट्टोउ ।
एसोचउदसरुवो, उवहिपुणथेरकप्पमि ॥ ३ ॥

१ पत्तं कहेतां पात्रुं, २ पत्ताबंध ते झोळी, ३ पायठवणं ते कांबळीनो कडको, ४ पायकेसरीया ते चरवळो, ५ पडलाइ ते गोचरीए जातां पात्रा उपर कपडुं राखे ते, ६ रयत्ताणं ते पात्रवींटवानुं लूगडुं, ७ गुछओ ते कंबलमयखंड पात्राउपर वांटे छे ते, ए सात पात्राना उपगरणो जाणवा, तथा ८, ९, १० वे सुतराउ कपडां, अने एक उननुं मळी त्रण कपडां राखे, ११ ओघो, १२ मुहपत्ति, ए बार जिन कल्पिने होय, तथा १३ मातरीउं, १४ चोलपटो. एवं चउदस्थविरकल्पने जाणवा.

१८६ प्र०—श्री युगप्रधानआचार्यना विहार शोभा लक्षण कहो.

उ०—काव्यं. येषांहिवस्त्रे न पतंति यूका.

न राष्ट्रभङ्गो न च देशचिन्ता ।

गदाः प्रणश्यंतिपदोदकेन.

युगप्रधाना मुनिवृन्दपूज्याः ॥ १ ॥

उत्तम शारिरीकसौंदर्यबळयुक्त, आचार्यना छत्रीस गुणे सहित; तथा ज्यां विचरे त्यां अढीयोजन प्रमाण मरकीप्रमुखनो उपद्रव न थाय; उत्कृष्टपणे दशविध यतिधर्म पाळतां पळावतां, निजकाळने विषे सर्वथी श्रेष्ठपुरुष एकावतारी महातमा युग प्रधान आचार्य-भगवंत जाणवा.

१८७ प्र०—नीचे जणावेला शब्दोनो अर्थ कहो.

भावना, अध्यात्म, मुनि, मैत्री, कारुण्य, मध्यस्थ, अने प्रमोद भावनाओ.

उ०—जूनि प्रतिमां नीचे प्रमाणे लखेल छे.

दुर्गतौप्रपतज्जन्तून्धारयतीतिधर्मः,
संयमादिदशविधसर्वज्ञोक्तोभवति ॥ १ ॥

हवे-आत्मानभावयतीतिभावना, आत्मानंअधिकृत्यकरोतीति
अध्यात्म, मन्यतेजगत तत्त्वं, स मुनिः प्रकीर्तितः
सम्यक्त्वमेवतन्मौन, सम्यक्त्वतश्चमेव ॥ १ ॥
इतियोगबिन्दुग्रन्थे हरिभद्रसूरिणा अध्यात्मभावनाच-
तुर्धाकथिता यथा ॥

परहितचिंतामैत्री, परदुःखविनाशिनीतथाकरुणा ।
परसुखतुष्टिर्मुदिता, परदोषोपेक्षणमुपेक्षा ॥१॥ए भाव,
हवे छद्मस्थजीवानांध्यानंकथितं, अतमुहुत्तमित्तं,
चिंतावत्थाणमेगवत्थुमि, च्छउमत्थाणंज्झाणं, योग-
निरोहोजिणाणंतु इतिध्यानम् ।

आत्मामत्ये भाववु अने आत्मचिंत्वन करवु ते भावना, आत्माने अधिकारीपणे कार्य करनार ते अध्यात्मपंचास्तिकायरूपजगत्‌तत्त्वने जे यथार्थ माने तेने मुनि कहीए, परहित चिंता ते मैत्री भावना; परदु:ख विनाशनी इच्छा ते कारुण्य भावना, परसुखदिठे संतोष तथा प्रमोद आणे ते प्रमोद भावना, पर दोषनी उपेक्षा ते मध्यस्थ भावना.

१८८ प्र०-वर्तमानचोवीसजिनना मातापितानी गति कहो.

उ०-उसभपियानागेसु, सेसाणंसत्तहुतिईसाणे ।
अट्ठय सणकुमार, माहिंदे अट्ट बोधव्वा ॥१॥
अट्ठणं जणणीओ, तित्थयराण हुंति सिद्धिओ ।
अट्ठय सणकुमार, माहिंदेअट्ठबोधव्वा ॥२॥

प्रथमतीर्थंकरना पिता श्री नाभिराजा ते नागकुमार मध्ये, वीजाथी आठमा सुधीना प्रभुना पिताओ वीजा इशान देवलोके, अने नवथी सोळ सुधीना प्रभुना पिता त्रीजा सनत्कुमारदेवलोके, अने सत्तरथी चोवीस सुधीना पिता चोथा महेंद्रदेवलोके प्राप्त थया छे. प्रथमना आठजिननी माताओ मोक्षे, नवथी सोळसुधीना जिननी माताओ त्रीजा सनत्कुमार देवलोके, अने शेष सत्तरथी चोवीस सुधीना आठ जिननी माताओ चोथा महेंद्रदेवलोकने प्राप्त थएल छे.

१८९ प्र०—श्रीजिनवाणीश्रवण, चारघातीकर्मना क्षयोपशमे केवी रीते थाय ?

उ०—१ अंतरायकर्म तथा दर्शनावरणीयकर्मना क्षयोपशमे जिनवाणी सांभळवानी रुचि थाय, २ दर्शनावरणीय तथा ज्ञानावरणीयकर्मना क्षयोपशमे वाणी काने सांभळे तथा समजे, अने ३ मिथ्यात्वमोहनीयना क्षयोपशमे जिनवचन आत्मस्वरूप ज्ञानरूप यथार्थसद्दहणामां आवे.

१९० प्र०—श्री जिनवाणीनुं ध्यानरूप एकाग्रमणमन महाफल दायक क्यारे थाय ?

उ०—धर्मान्तरायना क्षयोपशमे संयमफलपामीने एकाग्रतारूपध्यानमांहि सिद्धि वरे, तथा चारकर्म क्षायिक भावे थये थके केवळज्ञान अने केवळदर्शनादि अनंतलक्ष्मी प्रगट करी महानंदपद पामे.

१९१ प्र०—चारप्रकारनी बुद्धिनुं स्वरूप टुंकमां दृष्टांत सहित समजावो.

उ०—१ औत्पातिकी बुद्धि ते मतिज्ञानावरणीयकर्मना क्षयोपशमे क्यांय पण न दिठुं होय न सांभळ्युं होय छता सहज स्वभावे पोतानी बुद्धिने जोरे समयसूचककार्य करी शके, ते अभयकुमार तथा रोहानी परे, २ वैनयिकी ते गुर्वादिकनो विनय बहुमान करतां मतिज्ञानावरणीयकर्मनो क्षयोपशम थइने बुद्धि उपजे ते नागार्जुनादिकनी परे, ३ कार्मणिकी ते विज्ञान, कळा, व्यापारादिनो अभ्यास करता करतां जे बुद्धि प्रगटे ते, ४ पारिणामिकी ते वृद्ध अनुभवी पुरुषोनी संगते रहेवाथी तथा वयना परिपाके जे बुद्धि उत्पन्न थाय ते.

१९२ प्र०—जातिस्मरणज्ञान अने विभंगज्ञान ते शामां समाय छे?

उ०—जातिस्मरणज्ञाननो मतिज्ञानमां समावेश थाय छे, अने विभगज्ञाननो अवधिज्ञानमां समावेश थाय छे.

१९३ प्र०—राशिगतसूर्य प्रश्न

उ०—मेषराशिनो सूर्य होय त्यारे कन्याराशिना सूर्यनी तथा चन्द्रनी चाल उत्तरभणी थाय, तथा तूलाराशि थकी माडी मीनराशि सुधिना चन्द्रनी चाल दक्षिणदिशा तरफ थाय छे

१९४ प्र०—मिथ्यात्वअविरतिना हेतुनो प्रश्नः,

उ०—जेहवो आत्मानो शुद्धोपयोग वस्तु आवरवाने जेम मिथ्यात्वबलवत्तर छे, तेम आत्माना परिणमन सुख - निवारवाने अविरति बलवत्तर छे, अविरतिनो उदय टळवाथी आत्मानुं विरतिपरिणमन थाय छे ने तेथी

सुखमय आत्मा स्वस्वरूपे परिणमे छे. अने आत्मिक-एकाग्ररूप परिणमे तिवारे ए सुखरूप सुखमय संपूर्ण-धर्म पामे ए भाव ।

१९५ प्र०—भावकर्म, द्रव्यकर्म, अने नोकर्म ते शुं ?

उ०—अनादिअशुद्धोपयोगरूप विभावतांई रागद्वेषमोहरूप आत्मा परिणमे ते भावकर्म, ते आकर्षणेकर्मरूप वर्गणा बंधाय ते द्रव्यकर्म, ते वर्गणा जेवारे पांच शरीररूपे परिणमे ते नोकर्म कहिए. एम त्रण प्रकारे कर्मनी वक्तव्यता जाणवी.

१९६ प्र०—अविरतिसमकिती, देशविरति तथा प्रमत्त अप्रमत्तादि मुनि सम्यक्त्व वमी मिथ्यात्वे जाए तो तेओ प्रत्येककर्मनी स्थिति उत्कृष्ट केटली बांधे ?

उ०—अविरतिसमकिती, वमीने मिथ्यात्वे उत्कृष्ट स्थिति आयुवर्जिने शेष सातकर्मनी एकपल्योपमने असंख्यातमेभागे अंतर्मुहूर्त्तन्यूनएककोडाकोडीसागरोपममांहे बांधे, तथा देचविरति उत्कृष्ट नव पल्योपमन्यूनएककोडाकोडीसागरोपम उत्कृष्ट बंध करे, पण तेथी अधिक न करे. जूनि प्रतिमां नीचे प्रमाणे छे. सम्यक्दृष्टिजीव मिथ्यात्वने उदये समकितवमीने पाछो मिथ्यात्वगुणठाणे जाय तोपण आयुवर्जित सातकर्मनी स्थिति पल्योपमने असंख्यातमेभागे ऊणी एककोडाकोडीसागरनो बंध करे, उत्कृष्टो बंध एटलो करे, देशविरति नवपल्योपम ऊणा एककोडाकोडीसागरनो बंध उत्कृष्टो करे तथा मुनिपणु पामीने पडे, पाछो मिथ्यात्वे जाय, तोपण

आयुवर्जित सातकर्मनो स्थितिबंध नवसागरे ऊणा एककोडाकोडीसागरोपमनो उत्कृष्ट बध करे तथा उपशमश्रेणिथी पडीने मिथ्यात्वे जाय तो पण आयुर्वर्जित सातकर्मनी उत्कृष्ट स्थिति बांधे तो नव हजारसागरोपमें ऊंणी एककोडाकोडीसागरनो उत्कृष्टो बध करे इति भुवनभानुचरित्रे कह्यु छे

१९७ प्र०–जीव मार्गाभिमुखथइ समकित क्यारे पामे ?

उ०–भवितव्यताने योगे अकामनिर्जराए कर्मखपावतां बे पुद्गलपरावर्तकाल संसार रहे, त्यारे जीव आस्तिकपणे जिनमार्गसन्मुखी थाय, पछी त्यांथी संसारपरिभ्रमण करतो जीव ऊंचो आवे त्यारे ते मार्गपतित दोढपुद्गलपरावर्तसंसार रहे त्यारे जिनोक्त मार्गे रुचिवत थाय, वळी कर्मयोगे त्याथी पडी ससारभ्रमण करतो ज्यार एकपुद्गलपरावर्तकाल ससार रहे, त्यारे जीव मार्गानुसारीपणु पामे, त्यां मित्रादिकदृष्टि प्रगटे, न्यायसपन्नविभवादि पांत्रीशगुणयुक्त थाय, त्या जिनोक्त मार्गे चाली मिथ्यात्व मंद करतो करतो नदी गोळपाषाण न्याये घचना घोळ परिणामे (एटले जेम नदी काठेथी छुटो पडयो एक पत्थर, ते जेम पाणीनी छोळमा अथडातो कुटातो पोतानी मेळे गोळ थइ जाए एम) ज्यार जीव अर्धपुद्गलपरावर्तकाल माहे आवे त्यार आर्यदेश, सज्ञीपचेन्द्रियमनुष्य, उत्तम जैनकुल सपन्न थइ सद्गुरुनां उपदेशे, के सहजस्वभावे कोइ निमित्त पामीने यथाप्रवृत्तिकरण लही उज्वल आत्मवीर्योल्लास थकी अपूर्वकरणे रागद्वेषनी ग्रंथि भेदी

मिथ्यात्वमोहनीयनी सातप्रकृतिने उपशमावतो अंतरकरणमां थइ अनिवृत्तिकरणे आवी सम्यग्दृष्टि थाय, त्यारे जीवने मार्गप्राप्त कहीए, वस्तुसत्ताधर्म अंशे प्रगट कर्यो त्यां तेनी केवी दृष्टि वर्ते तो कह्युं छे केः—

काव्य.

अंशे होय इहां अविनाशी, पुद्गल जाल तमाशी,
चिदानंदघन स्वरूप विलासी, केम होय जगनो आसी;
ए गुण वीरतणो न वीसारुं संभारुं दिन रातरे,
पशु टाली सुररूप करे जे, समकितने अवदातरे. ॥१॥

१९८ प्र०—साधुने जे त्रणयोग छे ते रत्नत्रयगुणे प्रणम्या छे ते केवी रीते ?

उ०—मनोयोग ते सम्यग्दर्शनगुणे दृढासक्ति रूपे परिणमे छे, तथा वचनयोग ते जिनवाणीमांहे ज्ञानगुणे प्रणम्यो छे, तथा काययोग ते चारित्रगुणे "जयंचरे जयंचिट्ठे जयंमासे जयंसये" इत्यादिकरूप प्रगटयो छे, तेथी यावज्जीवसुधि सावद्ययोगथी निवर्त्तीने मुनि संयमयोगे परिणमे छे. इतिभाव

१९९ प्र०—संसारमां जीव भव्यअभव्यादि त्रणप्रकारना छे ते कया ? तेनुं स्वरूप दृष्टांतसहित स्पष्ट समजावो.

उ०—१ भव्य, २ अभव्य, ३ भव्याभव्य अथवा जातिभव्य; त्यां भव्य त्रणप्रकारे छेः—निकटभवी, मध्यमभवी, अने दुर्भवी; निकटभवी सोहागण स्त्री समान, ते जेम सोहागणी स्त्री पतिसमागमे छ मासमां गर्भ प्राप्त थइ पुत्रप्राप्ति फळ लहे, तेम निकटभवी सद्गुरु उपदेश योगपामी शुद्ध श्रद्धा लही, शुद्ध चारित्र

पाळी, तत्काळ सिद्धि वरे, बीजा मध्यमभवी ते कोइ स्त्रीने पति समागमे बे चार वर्षे गर्भ रही पुत्र-प्राप्ति थाय तेम मध्यमभवी थोडा संख्याता भवमां सिद्धि वरे, अने त्रीजा दुर्भवि ते जेम कोइ स्त्रीने घणे कष्टे घणे काळे पतियोगे गर्भ रही पुत्र प्राप्ति थाय तेम धर्मविराधक, पडवाइ, बहुलकर्मी भारेकर्मी-पणाने लीधे घणे काले, घणे कष्टे, घणे उपदेशे कर्म-खपावी सिद्धि वरे.

२, अभव्यस्वरूप वाझणी स्त्री समान जाणवु, एटले जेम वंध्यादोषवत स्त्रोने पतिनो समागम छता पुत्र प्राप्ति थायज नहि, तेम अभव्यने मुक्तिगमन योग्य-तास्वभाव न होवाथी गमे तेटली धर्म सामग्रीनी जोगवाइ मळे, तोपण शुद्ध श्रद्धारूप खरेखरु संसार थकी उद्विग्नपणुं, स्वपरओळखाणपणु भेद ज्ञान न थाय पण पौद्गलिकआशीभावे चारित्रादिक पाळे, नवमा ग्रैवेयक सुधी जाय छे, पण तेनु सघलुं फोक निष्फळ जाय छे, केम जे तेना ज्ञानक्रियादि मोक्षने अर्थे यथार्थ न होय तेथी.

३. तथा भव्याभव्य जीवने सत्ताए भव्य समान योग्यता धरावे छे, तोपण कोइ भवितव्यताज ज्ञा-नीए एवी दिठेली के तेनो स्वभाव व्यवहारराशिमा आववारूप न थाय. अत्र गाथा—

" सामग्गी अभावाओ ववहाररासीअप्पवेसाओ ।
भव्वावितेअणंता, जे सिद्धिसुहनपावंति ॥ १ ॥ "

अर्थात् ते अव्यवहारराशियोज जीव रह्यो थको

अनंताअनंतकाळ बाळविधवा स्त्रीनी परें सूक्ष्मनिगोदादिमां जन्ममरण करतो रहे, जेम बाळविधवा स्त्रीने सुकुलीनताने लीधे कदी पण भरथारनो योग न थाय तेथी पुत्र प्राप्ति न संभवे एम जाणवुं.

२०० प्र०—अध्यात्मसारग्रन्थमां त्रण प्रकारना जीव कह्या छे ते कया ?

उ०—१ भवाभिनंदी ते मिथ्यादृष्टि २ बीजो पुद्गलानंदी, ते चोथा पांचमा गुणठाणावाळा सम्यग्दृष्टि, ३ आत्मानंदी ते मुनि, इतिभाव.

२०१ प्र०—वैराग्यना त्रणप्रकारनुं टुंक स्वरूप कहो.

उ०—दुखगर्भित वैराग्य, त्यां जीव संसारमां नानाविध दुःख क्लेश पामतो विषयकषायथी विरक्तबुद्धिवाळो थइ धर्मसन्मुखी थाय पण सम्यग्ज्ञान न होवाथी पाछुं पौद्गलिकसुख मळतां वैराग्य नष्ट थवानो संभव छे; तेने दुःखगर्भितवैराग्य कहीए; पण ते जो धर्म साधन करतां थकां सद्गुरु उपदेशयोगे भेदज्ञान पामे तो पछी तेनो वैराग्य सत्य, स्थायी, ज्ञानगर्भित कहेवाय, एटले ज्ञानगर्भित वैरागी परमार्थें संसारनो एकांत त्यागी होय, लूखी वृत्तिए संसारमां रहे अने पूर्णमोक्षाभिलाषी होय; ज्यारे मोहगर्भितवैरागी कोइ स्त्री, पुत्र, धनादि वस्तुना अभावे मोहमयविषयकषाययुक्त मलिन परिणतिवंत थयो थको मोहितदुःखना भारने लीधे संसारथी उद्विग्न रहे, पण ते साचो दुःखगर्भित वैराग्य भांगे पण न गणाय.

२०२ प्र०—चतुर्विध संसारी प्राणीनुं स्वरूप दृष्टांतथी समजावो.

उ०—१ सघनरात्रि समान, एटले घन कहेतां जे मेघनी घमघोर घटाए आच्छादित थएली अमासनी रात्रिमां कांइपण सूझ न पडे, तेम जीवने गाढमिथ्यात्वना उदये तीव्रमोहनी प्रबलताए कंइपण हिताहित, सत्यासत्य के कृत्याकृत्यनी सूझ न पडे, तेवा प्रथम गुणठाणी भवाभिनंदी मिथ्यात्वद्दष्टि जीव जाणवा, २ अघनरात्रि समान, ते जेम मेघना वादळां रहित रात्रिमां घटपटादिक सूझे, तेम जीव काइक मिथ्यात्वनी मंदताए मोहादिकना किंचित्क्षयोपशमे धर्ममार्गसन्मुखी मार्गानुसारीजीव अघनरात्रि समान जाणवा, ३ सघनदिन समान, ते जेम वादळाए आच्छादित सूर्यवाळा दिवसमां निर्मळ रात्रि करतां विशेष स्पष्ट घटपटादि पदार्थो सूझे छे, तेम मिथ्यात्वना क्षयोपसमादि गुणेकरी सम्यग्द्दष्टि चोथा गुणठाणाथी बारमा गुणठाणा सुधीना परमात्माना मार्गप्राप्त ज्ञानिमहात्माओ जाणवा, ४ अने अघनदिन समान, एटले मेघरहित निर्मळसूर्यवंत दिवसनी परे पूर्णज्ञान प्रकाशवत केवळज्ञानी भगवतो जाणवा.

२०३ प्र०—संसारीजीवने आठ द्दष्टि कहि छे तेना नाम कहो.

उ०—१ मित्रा, २ तारा, ३ बला, ४ दीप्रा, ५ स्थिरा, ६ कांता, ७ प्रभा, ८ परा, ए आठ द्दष्टि कहि तेनो विस्तार योगद्दष्टिसमुच्चयथकी जाणवो.

२०४ प्र०—सर्वपदार्थमात्रमां चारकारण छे ते द्दष्टांतथी कहो.

उ०—१ उपादानकारण, ते जेम घटमां मृत्तिका; २ निमित्तकारण, ते जेम घटनी उत्पत्तिमा चक्र, दंड, ची-

वरादि छे तेम जाणवुं; ३ असाधारणकारण, ते जेम घट निष्पन्न करवामां कुंभार हेतुभूत छे तेम जाणवुं; ४ अपेक्षा कारण, ते वस्तु जेम छे तेमनी तेम रहे, पण तेना आलंबने, सहायताए, आश्रये आपणुं कार्य करीए, जेम घट नीपन्यो तेमनो तेम रहे, पण तेहनी साहाये जलभरण पानरूप काम नीपजे, तथा जेम सूर्य दीपे छे, तेनी साहाये आपणा काम करीए छीए तेम जाणवुं; वळी बीजां पण त्रण कारण कह्यां छे:—१ समवायिकारण, ते सहचारी संबंध कारण, जेम घटनुं उपादान मृत्तिका छे तेम; २ असमवायिकारण, ते असहचारी भिन्ननिमित्त, जेम घटनी उत्पत्तिमां कुंभार छे तेम; ३ निमित्तकारण, ते चक्र, दंड, चीवरादिरूप जाणवुं.

२०५ प्र०—सर्ववस्तु, द्रव्यार्थिकनय अने पर्यायार्थिकनय वडे प्ररूपाय छे. ते मांहेथी सातनय ते कया ?

उ०—१ नैगम, २ संग्रह, ३ व्यवहार, ४ ऋजुसूत्र, ५ शब्द, ६ समभिरुढ, ७ एवंभूत. ए सात नय तेहना उपनय ए विस्तारनयचक्रथी जाणवो, तथा कषाय उपने पूर्वकोडिनुं पाल्युं चारित्र क्षय करे, ते उपर गाथा. आचारंगनी दीपिका मध्ये छे यतः “ सामणमणुंचरंतस्स, कसायाजस्सउक्कडाहुंति, मन्नामिईछुपुप्फव, निष्फलंतस्ससामण्णम ॥१॥ जंअजियंचरितं, देसूणएविपूव्वकोडीए तंपिकसायमित्तोहारेईनरोमुहुत्तेण ॥२॥ ”

२०६ प्र०—आंबिल एटले शुं ?

उ०–आवश्यकनी टीका म ये कह्युं छे के आय कहेतां ओसामण काढ्यु होय ते मध्येथी जेम अन्न काढीए ते रीते काढीने आहार करवो, अने जे आम्ल जे खाटोरस, पद्विगय ए बे वर्जिने ते आनिल कहिए.

२०७ प्र०–नियाणानो प्रश्न.

उ०–नियाणा नवप्रकारे दशाश्रुतस्कंध मध्ये कह्या छे, तथा १ नियाणुं समकितनुं छे, अने बीजु अव्रतनु छे ए बे मध्ये जे समकितनो घात करी नियाणुं बांधे ते समकित पामवो दुर्लभ करे, तथा अविरतनु भोगप्रतियुनियाणुं बांधे ते भोग पूरा थये व्रत उदये आवे, जेम द्रौपदीना जीवे भोगप्रतियुं नियाणु बांध्यु ते पाच भर्त्तारी थइ, भोग पुरा थया पछी व्रत उदये आव्यु ते माटे अविरतिआश्रीनियाणु कहीये पण ते समकितनो नथी. इत्यर्थः

२०८ प्र०–चार प्रकारना सामायिक कया ?

उ०–१ श्रुतसामायिक, २ समकितसामायिक, ३ देशविरतिसामायिक, ४ सर्वविरतिसामायिक. ते मध्ये श्रुतसामायिकनो लाभ ते भव्यमिथ्यात्विने होय, अभव्यने पण द्रव्यथी श्रुतनो लाभ थाय, तथा समकितसामायिक ते सम्यग्दृष्टिने होय, पाचमे गुणठाणे देशविरतिसामायिकनो लाभ होय, सर्वविरतिसामायिक ते छट्टा गुणठाणाथी मुनिने होय

२०९ प्र०–व्यवहार अने निश्चय समकितीनु टुक स्वरूप कहो.

उ०–जिनवाणी प्रतीतेग्रहीने प्रत्यक्षस्वरूपने वेदे, गुण पर्यायनो निरुछन कर, भेदरूप रत्नत्रयने आराधे,

तेने व्यवहारसमकिती कहीए, तथा जेने जिनवाणी गुण पर्यायअभेदरूपरत्नत्रये द्रव्य द्रव्यरूपे निर्विकल्प समाधिपणे परिणमे तेने निश्चयसमकिती कहीए, ते आगळ जतां व्यवहारे प्रवर्तंतां वस्तुधर्मरूप शुद्धात्मनिश्चयपरिणतिरूप समकितने मेळवे.

२१० प्र०—कया ज्ञानथी अने कइक्रियाथी मोक्ष थाय ?

उ०—क्रिया बेप्रकारनी छेः—१ योगक्रिया, ते शुभाशुभ बंधरूप छे, अने २ उपयोगक्रिया, ते पोताने स्वरूपे परिणमे, त्यां कर्म निर्जरा थाय, योगक्रिया जाते आस्त्रवरूप होइ कर्मबंध निपजावे, अने उपयोग क्रिया ते स्वरूप प्रकटावे, एटले योगक्रिया कर्म ग्रहण त्यागरूप सुलट पुलट छे, परंतु सर्वथा मोक्षार्थे नथी, केम जे सर्वथा मोक्षरूप धर्म ते शुद्धोपयोगे छे, माटे उपयोगशून्यक्रिया आस्त्रवरूप मोक्षनी एटले आत्मस्वरूपनी कत्तरणी एटले आच्छादन करनारी छे. (नाश करनारी छे.)

२११ प्र०—नवअनंताए जे जे पदार्थो छे ते कहो.

उ०—प्रथमना त्रणअनंते कोइ पदार्थ न होवाथी शून्य छे, अने चोथेअनंते अभव्यजीवराशि छे, पांचमे अनंते मध्यम भांगे सम्यक्त्व पडवाइ छे, वळी तेहज पांचमे अनंते शुद्ध सिद्धना जीवो छे, पण ते पूर्वोक्त पडवाइओथी अनंतगुणा जाणवा, पछी छठ्ठो अनंतो शून्य, सातमुं शून्य, पछी आठमे अनंते सर्व निगोदीयाजीवो, तथा तेथी अनंता अनंतगुणा पुद्गलपरमाणु, तेथी काळ, तेथी सर्व आकाश प्रदेश, तेथी

केवळज्ञान तथा केवळदर्शनना पर्याय, ए सर्वे एक एकथी अनंतगुणा, पण आठमे अनते छे, नवमेअनंते कोइ वस्तु विशेप नथी, माटे शून्य जाणवो.

२१२ प्र०–सर्व समकितमां पहेलुं कयु समकित उत्पन्न थाय छे?

उ०–सिद्धान्त आगममाहि प्रथम क्षयोपशम सम्यक्त्व पामे, उपशमनो तत नहि, ते श्री जिनभद्रगणि क्षमाश्रमणनी कीधेली समकित पचवीसी म'ये कह्युं छे, जे पहिलो क्षयोपशम सम्यक्त्व पामे उपशमनो तंत नहि, तथा कर्मग्रन्थम'ये पहिलो उपशम समकित पामे, त्यारपछी क्षयोपसमकित पामे, उपशमना तंत नहि, एहनो आचार्यनो मत छे. अथ त्यारपछी कालसित्तरी ग्रन्थमध्ये कालिकाचार्यें पण जुदा कह्या छे. तथा फलंकी थास्ये ए अधिकार पण कालसित्तरी मध्ये छे.

२१३ प्र०–स्थावर पर्याप्तानी निश्राए अपर्याप्त जीव केटला होय?

उ०–पृथ्वी, पाणी, अग्नि, वायु, वनस्पति प्रत्येक एटले स्थानके एकेका पर्याप्तानी निश्राए असख्याता अपर्याप्त होइ, पण सूक्ष्म निगोदीया पर्याप्तानी निश्राये अनंता अपर्याप्ता न होइ, ते अनता अपर्याप्तानां शरीर जदा, तेहनो पण आयु वसेछपन आवलिनु होय, पण अपर्याप्तो मर इम नहोय सर्वे शुल्लक भविया छे ते माटे, तथा पर्याप्तानु आयु एटलु पण तेटला माह पर्याप्ति पुरीने मर एहवु थायुं छे. इति तत्त्वम

वली भगवंतने ज्ञानावरणीयादि चार कर्मनी वर्गणा मूलथी गइ पण तोहि कार्मण शरीर छे, त्यारे ते अनुमाने अन्य कर्मनी वर्गणा भिन्न, कार्मण शरीर ते भिन्न, ईम कार्मण शरीरनो स्वरूप जाणवो, पछी तो जेम तीर्थंकर देवे कह्युं ते सत्य सद्दह्यो छे. इति भाव ।

२२१ प्र०—चतुर्विध बंध हेतु पूर्वक कहो.

उ०—योग अने कषाय प्रतैया बंध चार प्रकारे छे, त्यां एकला योगनी हलचले प्रकृतिबंध अने प्रदेशबंध थाय छे, अने कषाये करी स्थितिबंध अने रसबंध निपजे छे.

२२२ प्र०—केवली भगवंतने योग प्रतैयो शाताबंध छे, ते शी रीते ?

उ०—केवली भगवंतने कांइ शुभ संकल्परूप व्यवहार नथी, तेमने एक शुक्ल लेश्यानो उदय छे, ते योगद्वारे परिणमे छे, अने योगनुं परिणमन ते औदयिक भावे जइ परिणमे, केम जे पुद्गलने पुद्गलनो विश्राम छे, तेथी ते लेश्याए योग प्रत्यइक एक साता प्रकृतिनो एक समयनो बंध छे, ते बीजे समये संक्रमे, अने त्रीजे समये खेरवे अर्थात् उत्तम पुद्गल ग्रहे, बीजे समये तेने वेदे अने त्रीजे समये खेरवे एटले खपावे.

२२३ प्र०—सम्यग्दृष्टिने अने मिथ्यादृष्टिने शुभाचार अने शुभ उपयोग केवी रीते होय छे ?

उ०—मिथ्यादृष्टिजीवने शुभाचार होय पण शुभोपयोग न होय, अने सम्यग्दृष्टि जीवने शुद्धोपयोग होय,

तेहने शुभोपयोग आचरणरूपे होय पण आदर न होय, अने मिथ्यादृष्टि जीवने शुभाचाररूप होय पण अशुद्धोपयागना घरनो, अशुभोपयोग होय पण शुभोपयोग उपचारे कहिए इति भाव, हवे चोथे गुणठाणे सम्यग्दर्शन पामे, अनंतानुबंधिया रागद्वेष तथा मिथ्यात्वमोहनोक्षय तथा क्षयोपशम थाय.

२२४ प्र०—भामंडल करवानी शी जरूर छे ?

उ०—आणंद श्रावकनी संधि खरतरगच्छे मुनिश्रीसारनी कीधी गाथा त्रणसेने एकासीमी छे, ते मध्ये अष्ट प्रतिहार्य अधिकारे देवता भामंडल किम करे छे ? तत्र गाथा—तेज अरिहंत अतिघणो ए, खमी न शके नरनारी । ते तेज लइ सुरवर करए, पुठे भामंडल-सार ॥ १ ॥ परमउदारिक शरीरना तेज विशेष छे ते तेजना पुद्गल सहरीने प्रभुने पुठे भामंडल करे इति भाव ।

२२५ प्र०—आनन्द श्रावकने पाचसे हलवडे भूमि खेडवानु मान केवी रीते हतु ?

उ०—तत्र गाथा—क्षेत्र खेडु हल पाचस्ये, मुक्ने अविरति एतिर । घरधरती पण मोकली, एक सोनी धरती जेतिर ॥ १ ॥ तेनी विरतीनो अर्थ लखीए छीए. दशम. हस्तैरकोवंश विंशतिवंशैः एकोनिवर्तन पञ्चशतं निवर्तनैः एकहल इदवी हलभूमिका पञ्चशत-भूमीरघरीनी जाती एतट भूमिका घर रहवानी छे ढाकी, पांचमे हलभूमिका हल खेडवानी छे उगाडी. इतिभाव ।

२२६ प्र०—कर्मचतुर्थकतपनी विधि केवी रीते छे ?

उ०—पूर्व अष्टम १, चतुर्थ ८०, प्रान्ते अष्टम इति तपोदिन ६६, पारणक दिन ६२, उभयदिन मलीने दिन १२८ इति कर्मचतुर्थतपव्रतं वसुदेवहिंडौ सापउमाअज्जिया, तेनीज्जाएसयासोओ । कम्मचउत्थं उववणा, दुगितिरित्ताणी सठ्ठिचउत्थाणिति ॥ १ ॥ ते पदमाआर्याए ते त्रणे आर्याइने समीपे कर्म चउत्थतप कीधो, इति शान्तिनाथ भवाधिकारे, इंदुषेणबिंदुषेण भवाधिकारे गुणीकाने भवे ए तप कीधो. इतिभाव ।

२२७ प्र०—धर्मचक्रवाल तपनी विधि केवी रीते छे ?

उ०—अष्टम १, एकांतर चतुर्थ ३७, प्रांते अष्टमं इति धर्म चक्रवाल तपनी विधि जाणवी, अथ विधिः प्रथमं षष्ठं ततः एकान्तरोपवास ६ इति प्रकार द्वयेन धर्मचक्रवाल तपनीविधि. तत्र प्रथम प्रकारे दिन सर्वाग्र ८२ द्वितीय प्रकारे दिन सर्वाग्र १२३.

२२८ प्र०—तीर्थंकरनी माता चउद स्वप्नने मुखमां पेसतां देखे ?

उ०—शान्तिनाथ चरित्राधिकारे तीर्थंकरनी माता १४ स्वप्न मुखमांहे पेसता देखे. यतः चतुर्दश महास्वप्नान् सुख सुप्ता तदाचसा मुखे प्रविशतोपश्यन्ती तत्तस्याकारधारिणः, इतिश्री उत्तराध्ययने भावविजयनी टीका मध्ये तथा शान्तिनाथ चरित्राधिकारे कह्युं छे. आवश्य चूर्णौ, पञ्चाशकवृत्तौ, योगशास्त्रवृत्तौ, नवपदप्रकरण वृत्तौ, श्राद्धदिनकृतौ, श्राद्धविधि प्रमुखे छे ।

२२९ प्र०—श्रावकनो दिग्व्रत संबंधी प्रश्न ?

उ०–प्रथमं सामायिक पश्चात् इर्यापथिकी, श्रावकने दिग्व्रत होय पण साधुने नहीं, मेरुरुचक जवा माटे. इत्यर्थ ।

२३० प्र०–चोथे गुणठाणे सम्यक्त्व गुण प्रगटे अने खार, वैर, अने झेररूप अवगुण टळे ते शी रीते ?

उ०–सर्व गुणमा अग्रेसरी गुण सत्य स्थायी गुण, परपराए, परमात्म स्वरूपने पमाडनार, ज्ञान व्रतादि अनेक गुणने खेंची लावनार, अने ते गुणना प्रतिपक्षी अनेक दोषने टाळनार, जीवने परम हितकारी सदा सर्वदा एक सम्यग् दर्शनरूप समकित गुण छे, ते गुण प्रगटे थके खार टळे, सम्यग् ज्ञानगुणे वेरभाव टळे, अने मिथ्यात्व मोह अने चारित्रमोहना नाशवडे झेर टळे, वळी मुनिने छठ्ठा गुणठाणाथी आगळ विषयराग उदयमांथी टळे विषय, कषाय, उत्सूत्रप्ररूपणा दोषो दूर थाय, अने रागद्वेष अने मोह सत्तामांथी टळता आत्मा परमात्मा, वीतराग स्वरुपी, केवळज्ञानी, केवळदर्शी आदि अनंतगुणी अनंतसुखमय बने छे

२३१ प्र०–उद्वेगता, अस्थिरता, असाता, आकुळता ए चार जीवने शाथी उपजे छे ?

उ०–१ अज्ञान अने मिथ्यात्वना उदये उद्वेगता, २ वेदनी कर्मना उदये असाता, ३ अविरति तथा चारित्र मोहना उदये आकुळता अने ४ वीर्यांतरायना उदये अस्थिरता जीवने उपजे छे.

२३२ प्र०—१ अपात्रदान, २ कुपात्रदान, ३ पात्रदान, ४ सुपात्रदान ते कोने कहिए ?

उ०—१ अपात्रदान, ते श्वानादि पशु तथा बंदिवानादिने आपवुं ते, तेनुं फळ आ लोकनेविषेज यश, प्रतिष्ठारूप लेशमात्र फळ छे. २ कुपात्रदान, ते वेरागी, सन्यासी, कापडी, तापसादिकने आपवुं ते, तेनुं फळ परभवे राज्यादिक प्राप्ति करी पापानुबंधिपुण्य बांधी कुगति दळ मेळवी संसार भ्रमण वधारे, ३ पात्रदान, ते सम्यग्दृष्टि, देशविरति, साधर्मी प्रमुखने भक्ति बहुमानथी पोषवा ते, तेथी पुण्यानुबंधी पुण्य उपार्जन करी भवभ्रमण घटाडे, ४ सुपात्रदान, ते महामुनि गणधर तीर्थंकरादि योगी महात्मारूप पात्रने बहुमानथी अन्न पानादिनुं दान देतां थकां जीव महा पुण्यानुंबंधी पुण्य उपार्जीने देव मनुष्यादि उत्तम भव करतां थकां शीघ्र सिद्धि वरे.

२३३ प्र०—छकायनां गोत्रनां नाम कयां ?

उ०—१ इंदिथावरकाय, २ बंभीथावरकाय, ३ सिपिथावरकाय, ४ समुइथावरकाय, ५ असस्सिथावरकाय, ६ जंगम थावरकाय. इन्द्रियथावरकायनुं पृथ्वीकाय गोत्र, पीतवर्ण, पुढवीनाम जीव, इन्द्र देवता. बंभी थावरनो अपकायगोत्र, श्वेतवर्ण, ब्रह्म देवता, अपकाय जीव. सिपीथावरकायनो तेजसगोत्र, रक्तवर्ण, शिल्प देवता, तेउकाय जीव. समुइथावरकायनो गोत्रवायुकाय, हरितवर्ण, समुद्रदेवता, वायुकाय जीव. आवशाइथावर-

कायनो वनस्पतिगोत्र, नानावर्ण, पातालदेवता, वनस्पति जीव सात नरकनां गोत्रनी पंठे ए पण जाणवा.

२३४ प्र०—दश प्रकारना सत्य ते कया ?

उ०—१ जनपद सत्य, २ समय सत्य, ३ स्थापना सत्य, ४ नाम सत्य, ५ रूप सत्य, ६ प्रत्येय सत्य, ७ व्यवहार सत्य, ८ भाव सत्य, ९ योग सत्य, १० उपमा सत्य. गाथा—

जणावयण समयवणा, नामेरूवेपडुच्च सच्चे य ।
ववहारभाव जोए, दसमे उवमसच्चे य ॥

२३५ प्र०—पांच ईंद्रियोनी आकृति तेमनो विषय क्षेत्र, तथा विषय विकार, केटला अने कया कया छे ते कहो.

उ०—१ स्पर्शेन्द्रियनो आकार अनेक प्रकार छे, नव योजन प्रमाण अतर छेटेथी आवेला पुद्गलोनो अष्ट प्रकार स्पर्श छे, तेना विकारो ९६ छे, २ रसेन्द्रियनी आकृति सरपलो तथा कमळना पत्र सरीखी छे, नव योजन अतर वहेला पुद्गलोनो स्वाद वायुथी खेंचाइ आवे थके थाय, तेना छ रसरूप छ विषयना ७२ विकारो छे, ३ घ्राणेन्द्रियनी आकृति तलना फूल सरखी छे, तेनो विषय क्षेत्रफळ नव योजननो, तेना विषय २ अने विकार १२ छे, ४ चक्षुइंद्रिय, तेनी आकृति मसुरनी दाळ समान, एक लाख योजन विषय क्षेत्रफळ, तेना विषय पाच अने तेना विकार ६०, काननो बार योजन आत्मागुल प्रमाणे चार गाउनो योजन जाणवो, तथा सूर्यनो बिंब तो आत्मागुल प्रमाणे घणा लाख योजन थाय, ते माटे चक्षुनो एटलो विषय नथी तो सूर्यनो बिंब किम

देखाय छे. तत्रोत्तर, सूर्यनो विमान देवक्ता एक योजनना एकसठिया अडतालीस भागनो छे. तेना आपणा गाउ १३०० ने आशरे मोटो विमान छे, ते संपूर्ण आंखे देखातो नथी, पण तेना विमानना तलीयाना तेजनो आभा समान झलक–कांति दिसे छे, पण संपूर्ण विमान आंखे न देखाय ते माटे आत्मांगुल प्रमाणेनो लाख योजन विषय कहेवो. श्रोत्रेन्द्रियनी आकृति अगथीआ वृक्षना फूल समान, तेनो १२ योजन विषय क्षेत्र, तेना विषय ३ अने विकार १२. एम एकंदर पांच इंद्रियना विषय २३ अने विकार २५२. ते विकारो रहित मात्र इंद्रियोना आकार युक्त पोताना आत्मधर्मनुं एकांते प्रतिपालन करता थका, दशविध संयम धर्मनो उत्तम रीते निर्वाह करता, एवा जे महा मुनि महाराजो, तेमने मारो त्रिकरणशुद्धिये नमस्कार छे. त्रण प्रकारना शब्द शुभ, अशुभ भेदे छ भेद थया. राग अने द्वेष ए चार भेद. चक्षु इन्द्रियथी पांचवर्ण तेने शुभ अशुभ बे भेदे गुणतां दश, तेने सचित्त अचित्त ए त्रणे गुणतां ३०, रागद्वेषे गुणतां साठ थाय. सुरभि-दुरभिगंधने सचित्तादि त्रण भेदे गुणतां ६ थाय, तेने रागद्वेषे गुणतां बार भेद थाय. दशने शुभ अशुभे गुणतां बार थाय, तेने सचित्तादि त्रण भेदे गुणतां ३६ थाय, तेने रागद्वेषे गुणतां ७२ थाय. आठ प्रकारना स्पर्श तेने सचित्तादि त्रण भेदे गुणतां २४ थाय, तेने शुभाशुभे गुणतां ४८ थाय, तेने रागद्वेषे गुणतां ९६ थाय. सर्व संख्याए २५२ थाय.

गाथा–

बारसहिंतो सोतस्स, सेसाणं नवहिंजोयणेहिंतो।
गिण्हतोपत्तगथ्यं, एतो परतोनगिण्हति ॥

२३६ प्र०–पाच इंद्रियोनु द्रव्य तथा भावथी स्वरुप कहो.

उ०–१ द्रव्येन्द्रिय, बे प्रकार छे सूक्ष्म अने बादर, बादर ते बाहेर दिसे छे, आकृतिरूप छे ते, सूक्ष्म ते विषय ग्रहणव्यापार आभ्यतर प्रवृत्तिरुप, जघन्यथी अंगुळनो असख्यातमो भाग, अने उत्कृष्ट पूर्वे कहुं छे तेटलो विषय क्षेत्र जाणवु, २ भावेन्द्रियपणु, ते जीवने दर्शनावरणीकर्मना क्षयोपशमे शब्द, रूप, रस, गध, स्पर्शादि ग्रहण शक्ति उपजे, तेनी उपयोग उपलब्धि ते भावेन्द्रिय कहेवाय छे, अने आकृति ते द्रव्य इंद्रिय जाणवी एम पन्नवणामा कह्यु छे. मनुष्य थको सिजे तेने आठ इन्द्रिय जाणवी. नारकी थकी मनुष्य थइ सिजे तेने १६ सोळ इन्द्रिय जाणवी तिर्यचथकी तथा पृथिवीथकी मनुष्य थइ सिजे तेने १७ सत्तर इन्द्रिय, तथा देवताथकी पृथिवी मनुष्य थइ सिजे तेने १७ सत्तर इन्द्रिय जाणवी. तथा पृथिवी, पाणी वनस्पति माहेथी मनुष्य थइ सिजे तो ९ नव इन्द्रिय, तथा इम सर्व विचार पन्नवणा मध्ये कह्यो छे, पण एनो अर्थ आम्नाय गीतार्थगुरुथी जाणवो

२३७ प्र०–आत्मबोधरूप सम्यक्त्व प्राप्तिमा पाच लब्धिनी आवश्यकता छे, ते पाच लब्धिनु स्वरूप कहो.

उ०–१ काळ लब्धि, ते आयुवर्जित शेष सात कर्मनी

उत्कृष्ट स्थितिने घटाडी एककोडाकोडी सागर प्रमाण करे, एवा यथाप्रवृत्तिकरणपूर्वक चर्मावर्ते जीव आव्यो त्यारे काळलब्धि पाकी कहीए; पहेली लब्धिथी पाम्या पछी छेली एकठी एकसमे प्रगटे. २ इंद्रिय लब्धि, ते संज्ञि पंचेंद्रियपणुं; ३ उपदेश लब्धि, ते सद्गुर्वादिकना योगे उपदेश पामी बुझे; ४ उपशम लब्धि, ते निर्मळ परिणामनी धाराए चढतो विषय कषायनी उपशांति भावमां अपूर्वकरणे करी ग्रंथिभेद करे; ५ प्रयोग लब्धि, पछी अंतःकरण पूर्वक अनिवृत्तिकरणना परिणामे रह्यो थको स्वपर भेदज्ञानरूप सम्यक्त्व पामे, त्यारे वीतराग धर्मनी रुचिपूर्वक प्रतीतात्मक धर्मरूप शुद्ध तत्त्वार्थ श्रद्धाने आत्मस्वरूपनुं दर्शनज्ञान, स्वरूपाचरणरूपे जीवने थाय.

२३८ प्र०—आत्मांगुल, उत्सेधांगुल, प्रमाणांगुलनां मान क्यां केवां छे ?

उ०—आवश्यक निर्युक्तिमां तेनुं मान नीचे प्रमाणे कह्युं छे.

गाथा—उस्सेहंगुलमेगं, हवइ पमाणंगुलं सहसगुणं।

तंचेव दुगणीयंखलु, वीर सायंगुलं भणियं ॥१॥
आयंगुलंनवथ्थुं सरीर मुस्सेहंगुलेण तहा।
नग पुढवी विमाणाइं, मिणसुपमाणंगुलेणंतु ॥२॥

२३९ प्र०—मतिज्ञानना केटला भेद छे ?

उ०—मतिज्ञानना श्रुतनिश्रित अने अश्रुतनिश्रित ते मध्ये श्रुतनिश्रितना ४ भेद. अवग्रह १, ईहा २, अपाय ३, धारणा ४. अवग्रहना बे भेद १ व्यंजनाग्रह, २ अर्था-

वग्रह. व्यजनावग्रहना ४ भेद. १ स्पर्शेंद्रिय, २ रसेंद्रिय, ३ घ्राणेद्रिय, ४ श्रोत्रेंद्रिय. अर्थावग्रहना ६ भेद. पांच इन्द्रीय, छट्ठु मन. इम ईहा ६, अपाय ६, धारणा ६. एम छ चोक चोवीस करता एव २८ एम ऐकेकना १२ भेद थाय, १ वहु, २ अवहु, ३ वहुविध, अवहुविधादिक बार भेद, तिहा अनेक जीव वाजिंत्रना शब्द साभले छे ते म ये क्षयोपशमिक विचित्रताए करी कोइक जीव घणा शब्दग्रहे ते वहु १, कोइक जीव थोडाग्रहे ते अवहु २, कोइक शब्दना व्यापार मांहे इत्यादिक घणा विशेष जाणे ते वहुविध ३, कोइक थोडा विशेष जाणे ते अवहुविध ४, कोइक तुरतग्रहे ते क्षिप्र ५, कोइक शेषग्रहे ते चीर कहीये ६, कोइक धुमादिक लिंगे करी अग्न्यादिक जाणे ते सलिंग ७, तथा जे लिंग विना जाणे ते अलिंग ८, एक सदेहालो जाणे ते संदिग्ध कहीए ९, संदेह रहित जाणे ते असंदिग्ध १०, कोइकनेला कह्यु ते बीजीवेलाए अणकह्ये ते जाणे ते ध्रुव कहीए ११, कोइक वारवार जणावे जाणे ते अध्रुव १२, एम अवग्रहादिक २८ भेद ते वार गुणा करतां ३३६ भेद थाय, एटला श्रुतनिश्रितना भेद, तथा अश्रुतनिश्रितना ४ भेद, ते १ औत्पातिकीबुद्धि, २ वैनयिकीबुद्धि, ३ कम्मीया ते कार्मणिकीबुद्धि, ४ परिणामिया ते पारिणामिकीबुद्धि, एव ते अश्रुत निश्रित सर्वे मली मतिज्ञानना ३४० भेद कर्मग्रंथनी टीका मध्ये कह्या छे

२४० प्र०–ज्योतिष देवतामा कया जीवो न उपजे ?

उ०–पन्नवणा सूत्रना छट्ठा वकंतिपद मध्ये कह्युं छे के ज्योतिषि देवतामांहे संमूर्च्छिमसनुष्यअसंज्ञियो तथा तिर्यंच असंज्ञियो सम्रूर्च्छिम असंख्यात आयुष्यवाळा युगलिया पंखी तथा अंतरद्वीप युगलिया मनुष्य एटला मांहेथी आव्यो ज्योतिषि देवतापणे न उपजे.

२४१ प्र०–एक योजननुं प्रमाण परमाणुथी मांडीने शी रीते थाय छे ? ते कहो.

उ०–अनंता सूक्ष्म परमाणुए एक व्यवहार परमाणु; आठ त्रसरेणुए एक उर्ध्वरेणु; आठ उर्ध्वरेणुए एक रथ रेणु; आठ रथ रेणुए उत्तर कुरु युगलीयाना तुरत जन्मेला बाळकनो एक वाळाग्र; एवा आठ वालाग्रे एक महा हिमवन्त क्षेत्र युगलीक वाळ वाळाग्र; एवा आठ वाळाग्रे; एक महाविदेह क्षेत्र मनुष्य वाळाग्र; एवा आठ वाळाग्रे एक भरतक्षेत्र मनुष्य वाळाग्र, एवा आठ वाळाग्रे एक लीख, आठ लीखे एक जु, आठ जुए एक जव; आठ जव एक आंगळ; २४ आंगळनो एक हाथ, चार हाथनो एक धनुष, अने बे हजार धनुषे एक कोश, एवा चार कोशनो एक योजन जाणवो.

२४२ प्र०–षड्विध पल्योपमनुं स्वरूप कहो.

उ०–उद्धार, अद्धा, क्षेत्र पल्योपम, सूक्ष्म अने बादर भेदे करीने छ प्रकारे छे ते आवी रीतेः–१ पूर्वोक्त योजन चार प्रमाणे लांबो पहोळो, अने उंडो कुवो

कल्पिए तेने पल्य कहिए, तेनी छे उपमा ते जेने तेने पल्योपम कहिए, ते पल्यने देवकुरु उत्तरकुरु क्षेत्रना युगलिक तुर्त जन्मेला बाळकना वालाग्र एकना आठ आठ खंड सातवार करीए, ते वालाग्र खंडे करी ठासी ठासीने भरवो, एवो के ते उपरथी चक्रवर्तिनी सेना चाली जाय, तथा गंगा नदीनो प्रवाह पूर जोरथी ते उपरथी वहन करे, तोपण एक पण वालाग्र तेमांथी खसे नहि, एवो ठांसीने भरीए, पछी ते वालाग्रने समय समय एक एक काढना जेटला समयमा ते पल्य खाली थाय तेटला कालने एक बादरउद्धारपल्योपम कहिए, ते सख्यातो कहिए, केमके वालाग्रखड सख्याता थाय माटे, पछी ते वाळाग्रखंडना एक एकना असख्याताखंड कल्पिए, अने ते कल्पनाखंड समय समय काढतां जेटला काळमा खाली थाय तेटला समयने एक सूक्ष्मउद्धारपल्योपम कहिए, एवा पचीस कोडाकोडी उद्धारपल्योपम एक अढीउद्धारसागरोपम प्रमाणे तिर्च्छालोके द्वीप अने समुद्र असख्य छे, २ पछी पूर्वोक्त वाळाग्रखड एक एकने सो सो वरसे काढता ज्यार खाली थाय तेटला समयने एक बादरअद्धापल्योपम कहिए, अने ते वाळाग्रखडना असख्याताखड कल्पिने प्रत्येक खंड सो सो वरसे काढतां जेटला समयमा पल्य खाली थाय तेटला वखतने एक सूक्ष्मअद्धापल्योपम कहिए, तेवा दशकोडाकोडीपल्योपमे एक सागरोपम, तेवा दसकोडाकोडीसागरोपमे

एक अवसर्पिणी ने उत्सर्पिणी काळ; ते बे मळीने वीसकोडाकोडीसागरोपम प्रमाण एक कालचक्र, एवा अनंतकाळचक्रे एक पुद्गलपरावर्त्तनकाल प्रमाण. आ जीव संसार मध्ये निगोदादिकथी मांडीने जन्म मरण करतो करतो, अकाम निर्जराए कुटातो पीटातो, कोइ महापुण्यना उदये शुभपरिणामे करी, नदी गोळ पाषाणना घंचनाघोळ न्यायेकरी आ अत्यंतदुर्लभ एवो उत्तम कुळ संयोगवाळो उत्तम निरोगी देहसहित मनुष्यभव पाम्यो छे, छतां अनादिकाळना अज्ञान, मोह, मिथ्यात्व, प्रमदादिरूप भववासनाना जोरे आवी उत्तम योगवाइवाळा मनुष्यभवनुं लेशमात्र पण बहुमान नथी आवतुं, हा! इति खेदे केवी अफसोसनी वात छे, माटे हे चेतन! आ परमात्माना वचने करीने हवे चेत! अने जे कुळमां उत्तम कुळना प्रभावे करीने हिंसानो आचार नथी तेवा अहिंसक कुळनी प्राप्ति छतां श्रीजिनेश्वरभगवंतनो धर्म पाळवामां प्रमादने छोड, अने तारुं खरुं कर्तव्य आ मनुष्य भवमां शुं? छे, तेनो विचार करी विषयकषायनी प्रवृत्तिनो जेम बने तेम संकोच कर, अने तत्त्वमार्गने आदर, सुदेव, सुगुरु, अने सुधर्मने ओळख; अने ते ओळखाण पूर्वक शुद्धक्रियानुं सेवन कर; अने सरळता, कोमळता, विनयादि गुण धारण करतां शीख, जेथी परंपराये तारा आत्मानुं चिरंकाळ कल्याण थशे, तथास्तु शुभंभवतु, शांतिः शांतिः

शाति. । पूर्वोक्त सूक्ष्मअद्धा काळे करी आयुष्यमान, कर्मस्थिति, कायस्थिति, तथा अन्य काळमानादिनुं प्रमाण थाय छे, ३ पूर्वोक्त वाळाग्रखंड स्पर्श्या जे आकाश प्रदेश तेने प्रत्येकने समय समय काढता जेवारे पल्य वाळाग्रथी खाली थाय तेटला काळने बादरक्षेत्रपल्योपम कहिए, अने वाळाग्रने स्पर्श्या सर्व आकाश प्रदेश पल्यना समय समय खाली करता जेवारे पल्य निर्लेप थाय एटला काळने सूक्ष्मक्षेत्रपल्योपम कहिए, तेणे करी दृष्टिवादमा एकेंद्रिय के त्रसादि जीव सख्यानुमान कराय छे ए असख्यातउत्सर्पिणी प्रमाणे. इम त्रण सूक्ष्मपल्यो शास्त्रने विषे उपयोगी होइ तिन बादर कह्या, ते सूक्ष्मनो सुखावबोधार्थ इहा प्राय घणो अद्धापल्योपमनो प्रयोजन छे, इम कोडाकोडी सागरोपमें एककालचक्र तेणे अने ते कालचक्रे पुद्गलपरावर्त्त होइ ते आठ प्रकारना छे, ते त्याथी जो जो अस्य गाथा—उद्धार अद्धग्वित्त, पलियतिहा समय वा समय समए केसवहारोदीवोदही, आउतस्साइ परिमाणं ॥ १ ॥ ॥ पांचमे कर्म ग्रन्थे उक्त.

२४३ प्र०—आत्मसमअवस्थानउपयोगरूप ध्यानदशा केवी रीते पमाय ?

उ०—मोहवशे जीव परभावअनुयायि प्रवृत्ति कर छे. मिथ्या सुखनी तृष्णाए भूल्यो थको ससार भ्रमण कर छे, ज्यारे मोहस्थिति घटे त्यार' परप्रवृत्ति छुटे, अने ज्यार परप्रवृत्ति टळे त्यार विषयथकी विरक्त

शुद्धि थाय, अने तेणे करी मनोरोध थाय, केमजे कारण विना कार्य बनतुं नथी, मनने भमवानुं कोइ कारण के ठाम न होनाथी ते संकल्प विकल्प क्याना करे? जेम तृण विनानी भूमिमां पडेलो उखर भूमिमां पडेलो अग्नि केने बाळे, अर्थात् पोतानी मेळे उपशमी जाय छे, तेम विषय वांछा टळवाथी मन पोतानी मेळेज रुंधाय, अने मन रुंधायाथी मननी चंचलता मटे, तेवारे मन एकाग्र थइने आत्माने विषे प्रवर्त्ते, यतः जोखवेइ मोहखल्लु, सोविसय विरत्तो मणो णिरुंभिता। समवट्ठिदोसाभावे, सो अप्पाणं हवई झाया ॥ १ ॥ इति उक्तं प्रवचनसारे, आत्मभावनानी गाथा-त्रण लखीए छीए. एगोहं होमिपरे सिं, ण मे परे णत्थि मज्झमिहकिंचि। इय आय भावणाए, रागदोसाविलय जंति ॥ १ ॥ नाणस्सविसुद्धिए, अप्पा एगतेउ ण संसुद्धो। जम्मा नाणंअप्पा, अप्पाणंच अणंवा ॥२॥ आयासामाइए, आयासामाइयस्सअटोत्ती। तेणेव इमंसुत्तं, भासई आयपरिणामं ॥ ३ ॥ ए सूत्रे पण चारित्रनें आत्मपरिणामरूपज कहीए छीए. पण बाह्यक्रियारूप नथी कह्युं. तत्र काव्यं-येषांनचेतो ललनासुलग्नं, मग्नं न साहित्यसुधासमुद्रे। ज्ञास्यंति ते किममहाप्रयासान्नन्धो यथा वारवधू विलासान् ॥ इत्यर्थः ॥ त्यारे शुद्धात्मोपयोगअवस्थानरूप निर्मळ ध्यानदशानी परम शीतळ शांत सुगंधिनी अनुभवलेहेरीओनुं आत्मा आस्वादन करे, ते सुख आपणे पौद्गलिक सुखना भीखारीओ शुं जाणीए; कह्युं छे जेः—

सघळु परवश ते दुःख लक्षण, निजवश ते सुख लहिए,
ए दृष्टे आतमगुण प्रगटे, कहो सुख ते कोण कहीएर.
भविका वीरवचन चित्त धरीए. १
नागर सुख पामर नवी जाणे, वल्लभ सुख न कुमारी,
अनुभव विण तेम ध्यानतणुं सुख, कोण जाणे नरनारीर. भ. २
विषय भोग क्षय शांत वाहिता, शिव मारग ध्रुव नाम,
कहे असंग क्रिया इहा योगी, विमल सुजस परिणामर. भ ३

७४८ प्र०—उत्सर्ग अने अपवाद मार्ग परमार्थे एकज आत्मार्थिपणारूप मोक्ष साधक दशाज छे, ते शी रीते ?

उ०—उत्सर्गमार्ग घणो कठीण, घोरतपस्या, शुद्धब्रह्मचर्यादि पाळे, जिनकल्पिपणे प्रवृत्ते ते जाणवो, अने अपवादमार्ग ते पूर्वोक्त उत्सर्गनी अपेक्षाए एटले ज्यार ते उत्सर्गदशामा न टकी शकाय, त्यार तेमां पाछा स्थिर थवाने माटे, जे काइक कोमळ मार्गनु अवलंबन साधनादि करवु, एटले मुनि पंचमहाव्रत शुद्ध पाळे, उग्रविहार तपस्यादि करी शरीर गाळे, जेथी विषय कषायादि मोहवासना गाळे, शिष्य, गच्छ, शास्त्रादिनी धारणा कर, ते प्रत्ये परस्पर स्वाध्याय कर, करावे, भव्यप्राणीओने धर्मोपदेश आपी स्वपर महानिर्मलता कर करावे, पोते उत्तम मार्गे चाले बीजाने चलावे, अने चालता होय तेने अनुमोदनरूप उपष्टंभ एटले सहायतादि दइ स्थिर करे, इत्यादि अपवादमार्गनु सेवन करी, मुनि पाछा उत्सर्गमार्गमा लीन रहे छे, एम परमार्थे उत्सर्ग अने अपवादमार्गी आत्मार्थीज छे, उभय

मार्ग शास्त्रानुसार छे, पण जे निष्कारण दूषित मार्गनुं सेवन करे, अने कहे जे अमे उत्सर्गने माटे अपवाद सेवीए छीए, ते चारित्रघातीनी मिथ्या वात छे, केमजे मुनिने कोइ अतिचाररूप दूषण प्रासंगिक लागीजवारूप संभव छे, पण मन थकी अतिचार सेवनकरवारूप प्रमादादि कदापि काळे न होय. स्थविरकल्पमां पण आ कालमां सापेक्ष अपवादनी मुख्यताए चारित्र छे.

२४५ प्र०—पांच नोधम्मीया प्राणी कह्या छे ते कया ?

उ०—भट्ठोदेवायचो, विसयासत्तो अज्जियापुत्तो । गुरु देवायणदुट्ठो, नोधम्मा पंचपन्नत्ता ॥ १ ॥ अस्यार्थः— १ भ्रष्ट ज्ञात कुळथी वंठेला जीव; २ देवादिक धर्मखाताना निःशूक मने हराम दानते पगार खानारा पूजारादिक तथा देव गुर्वादिक द्रव्यना खानारा; ३ विषयाशक्त लोलुपी लंपटी; ४ व्यभिचारवडे साध्वीने पेटे अवतरेल पुत्र, ५ देव, गुरु; धर्मादिकनो निंदक, घातक उत्थापक ए पांच अधर्मी एटले नोधम्मिया जाणवा, ते वीतराग भाषित धर्मथी पराङ्मुख रहे.

२४६ प्र०—समूर्च्छिमसनुष्य मरी केटला दंडकमां जाय छे ?

उ०—दशदंडकमां जाय छे. ५ पांच थावरमां ३ विकलेन्द्रियमां ९ पंचेन्द्रियमनुष्यमां १० पंचेन्द्रिय तिर्यंचमां जाय पण युगलियो न थाय. तथा ए दशदंडकमां तेउकाय, वायुकाय ए बे दंडक वर्जिने बीजा आठ दंडकना आव्या संमूर्च्छिममनुष्य थाय.

२४७ प्र०–जीवने परभवआयु शी रीते बंधाय छे, अने ते केटला प्रकारनु छे ?

उ०–जीवने आयुकर्म परभवसंबंधिनुं आ भव भोगवतां थकां एकजवार निकाचितपणे त्रण आकर्षे करी सोपक्रमि तथा निरुपक्रमिभेदे जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्त अने उत्कृष्ट ३३ सागरोपम सुधीनु अध्यवसायनी तारतम्यताए भिन्न भिन्न जीवने नानाविध बंधाय छे, त्या देवता नारकीने आ भव आयु छमास थाकतां–बाकी रहेतां परभवायु बंधाय, तथा युगलिक मनुष्यो तथा तिर्यंच तेमज तीर्थंकरादि त्रिपष्ठि शकालापुरुष अने चरमशरीरी एटलानुं आयु निरुपक्रमि बंधाय, शेषने सोपक्रमी आयुबंध होय, त्या उपक्रम एटले उपघातादि कारण विशेषे आयु त्रूटे, एवो मंद मंदतरादि परिणामविशेषे जीवे आयुबंध कर्यो होय, तेवो उपक्रम पण आयुना बंधनी साथेज बंधाय छे, एथी जेम तेले करीने वाट सहित संपूर्ण रीते दीवानुं कोडीउ भरेलु होय, ते दीवाने कोइपण पवनादि उपघात न लागे तो ते ठेठ सुधी सारी रीते बळे छे, नहि तो पवनना एक सखत सपाटाए छते तेले अने वाटे ठरी पण जाए, एम सोपक्रम आयुना बंध पण एवाज ढीला जाणवा, ते व्यवहारे विष, शस्त्र, अकस्मातादि सात कारणे त्रूटे छे, पण निश्चये–तो जीवे तेवीज रीतनु तेटलाज समयकाळनु बांधेलु ज्ञानीनी दृष्टिए दीठेलु भोगवे छे, एक समयमात्र पण आघु पाछु करवाने कोइ पण समर्थ नथी, देव

नारकीआदि शिवायना सोपक्रमी आयुवंत प्राणीओ घणुं करीने पोताना भव आयुना अंतमां अंतर्मुहूर्त्त थाकतां परभव आयु बांधे छे, ते बांधतां जीवने अंतर्मुहूर्त्त लागे छे, ते बंध दरमियान त्रण आकर्ष (डचकां) करे छे, जेम गाय पाणी पीती वीसामे वीसामे पीये, तेम जीव पण आयुकर्मना पुद्गलने लेइ आकर्षे बांधे; त्यां मति तेवी गति अथवा गति तेवी मति अनुसारना परिणाम विशेषे बंध पडे.

२४८ प्र०—आकुट्टी, दर्प, प्रमाद अने कल्प ए चार शब्दार्थ कहो.

उ०—आकुट्टीका अनाभोगतयाउपेत्यसावद्यकरणोत्साहात्मिका १, दर्पोधावनप्लवनादिकः वल्गनादिकः। हास्यजनको वा नाट्यादिकंदर्परूपोवा २, प्रमादो रात्रौ दिवाप्रतिलेखनाप्रमार्जनाद्यनुपयुक्तता, ३ कल्पकारणे दर्शनादिचतुर्विंशतिरूपेसति गीतार्थस्यकृतयोगीप्रयुक्तस्य अयतनतया आधाकर्माद्यादानरूपः ४, इति । अस्यार्थः ।

१ आकुट्टी एटले अनाभोगे उपयोग रहित सहसात्कारे उद्धतपणे सावद्यकार्य प्रवृत्ति; २ दर्प एटले अहंकारे वा इर्ष्याए चडसाचडसीए नाटक कौतकादि जोवा जतां वाटमां अश्ववृषभादिने खूब दोडाववा वगेरे अयत्नाए निर्दय सावद्य कर्माचरण; ३ प्रमाद एटले रात्रे वा दिवसे प्रमार्जन प्रतिलेखनादि सावद्य क्रिया अयत्नाए जेम तेम बेदरकारीथी करवी ते, ४ कल्प एटले गीतार्थ बहुश्रुतादिना वचन निरपेक्षपणे निष्कारण आधाकर्मादि दूषित आहार ग्रहण करवो वगेरे मार्गथी भ्रष्ट आचार प्रवृत्ति ते.

२४९ प्र०–मिथ्यात्वप्रत्ययिकी १, अप्रत्याख्यानिकी २, परिग्रहिकी ३, आरंभिकी ४, मायाप्रत्ययिकी ५, ए पांच क्रियावंतीं जीवोनुं अल्पबहुत्व कहो.

उ०–१ मिथ्यात्वप्रत्ययिकीक्रियावाळा सर्वथी थोडा, ते थकी२ अपचक्खाणीक्रियावंतजीव असंख्यातगुणा अधिक केमजे तेमा अविरति भळ्या, ते थकी ३ परिग्रहिक्रियावंतजीवो असंख्यातगुणाधिक जे भणी तेमा देशविरति भळया माटे, ते थकी ४ आरंभिकीक्रियावंत असंख्यातगुणाधिक जे भणी सर्वविरति छट्ठा गुणठाणाना मुनि तेमां भळे तेथी, ५ मायाप्रत्ययिकीक्रियावंत तेथी संख्यातगुणाधिक जे भणी तेमां नवमा गुणठाणावर्ति मुनि वध्या तेथी. ए भाव पन्नवणासूत्रमां ये छे इति ।

२५० प्र०–देवगतिने विषे छ लेश्या आश्री अल्पबहुत्व कहो.

उ०–१ शुक्लेश्यावंतदेवताओ सर्वथी थोडा, २ ते थकी पद्मलेश्यावंत असंख्यातगुणाधिक, ३ तेथी कृष्णलेश्यावंत असंख्यातगुणाधिक, ४ ते थकी नीललेश्यावंत असंख्यातगुणाधिक. ५ ते थकी कापोतलेश्यावंत असंख्यातगुणाधिक, ६ ते थकी तेजोलेश्यावंत ज्योतिषीदेवो असंख्यातगुणाधिक जाणवा

२५१ प्र०–सोपक्रमिआयुष्यवंतजीव आयु पुरु भोगवता थका पण अकाळे चेवजीवियाओववरोविया–॥ मरण पाम्यो एम कहे छे तेनुं शु समजवु ?

उ०–जेम राजाए कोइएक चोरने पकडीने शूळीये के

फांसीए दीधो, त्यां ते जीवे सर्व आयु कर्मनां दळ हतां ते आत्मप्रदेशोदये भोगवी, आयुकर्म बांध्युं हतुं तेटलुं पूरुं भोगवी लीधुं, तथा काळ आश्री अकाळे मुओ, एटले;जे आयु सुखे समाधे जीव विपाकोदये भोगवीने मरत, ते थोडा काळमां ते आयुना दळने प्रदेशोदये वेदीने खपावीने मुओ, तेथी तेने अकाळमरण कहे छे, अर्थात् जेटलुं आयुष बांध्युं हतुं तेटलुं प्रदेशोदये भोगवीने पूरुं कीधुं, तेथी संपूर्ण आयुपे मुओ तेम कहेवाय, अने घणा काळे विपाकोदये भोगववानुं आयु कर्म थोडा काळमां भोगवीने खपाव्युं, माटे अकाळ मरण कहिये.

२९२ प्र०—कोने संघनी वहार काढवो तथा कोने दीक्षा न आपवी जोइए ?

उ०—अथ प्रास्ताविक गाथा—

जो भणईनत्थिधम्मो, न सामाइयं न चेव वयाइं ।
सो समणसंघवज्झो, कायव्वो समणसंघेण ॥ १ ॥

अट्ठारसपुरिसेसु, वीसइत्थीसु दसनपुंसेसु ।
जिणपडीकुतित्थियाओ, पव्वावेउं न कप्पंति ॥२॥

वालेवुड्ढेनपुंसयेय, किवेजडेयवाहिए ।
तेणेरायावगारिय, उम्मत्ते य अदंसणे ॥ ३ ॥

दासेदुट्ठेयमूढेय, अणंतेजुगए एय ।
अववंधए यभिएय, सेहेनिप्फोडीयाइय ॥ ४ ॥

एटलाने दीक्षादेवी न कल्पे,

२९३ प्र०—सोळ संज्ञाओ कइ ?

उ०-गाथा—

आहारभयपरिग्गह, मेहुणतह कोहमाणमायाए ।
लोहोयलोगसण्णा, दससन्नाहुंतिसव्वेसिं ॥ १ ॥
सुहदुहमोहसन्ना, वितिगिच्छाचउद समुणेयव्वा ।
सोगे तहधम्मसन्ना, सोलस ए हुंति मणुएसु ॥२॥

२६४ प्र०-दश संज्ञा कया कया जीवोमा छे.

उ०-गाथा—

रुक्खाणजलाहारो, सकोयणीयाभएण संकुयइ ।
नीयततुएण वेढइ, वलीरुक्खेण परिग्गहेय ॥ ३ ॥
इत्थीपरिरंभेण, कुरुवकतरणोफलंती मेहुणे ।
तहकोकनदस्सकंदो, हुंकारोमुयइ कोहेण ॥ ४ ॥
माणेण झरईरदती, च्छायई वल्ली फलाईमायाए ।
लोहेवील्लपलासा, खिवंतिमूले वणाणुवरिं ॥ ५ ॥
रयणीए संकोओ, कमलाण होईलोगसन्नाए ।
ओहे चईत्तु मग्गं, चढति रुखेसु वल्लीओ ॥ ६ ॥
इति १० सज्ञाना उदाहरण ।

२६५ प्र०-अढार भावदिशा तथा अढार द्रव्यदिशानु स्वरूप कहो

उ०-तत्र गाथा—

तिरियामणुआकाया, तह अग्गवीयाय चउरो ।
देवाय नेरइया-अट्ठारसभावरासीओ ॥ १ ॥
बेरेन्द्रिय, तेरेन्द्रिय, चोरेन्द्रिय, पचेन्द्रिय, ए चार तथा समूर्च्छिममनुष्य, कर्मभूमिजा, अकर्मभूमिजा, अतरद्वीपना. हवे अग्रबीज, मूलबीज, पर्वबीज, स्कंधबीज, ए चार वनस्पतिना भेद. पृथ्वीकाय, अप्-

काय, तेउकाय, वाउकाय, एवं चार तथा देवता अने नारकी एवं अढार १८ भावदिशा. आचारांग सूत्रमध्ये शस्त्रपरिज्ञाअध्ययनमांहे भावदिशा वखाणी छे. तथा अढार द्रव्यदिशा. चारदिशि, चारविदिशि, आठदिशि, विदिशिनां आंतरां, ऊर्ध्वदिशा, अधोदिशा ए १८ द्रव्यादिशा जाणवी.

२५६ प्र०—नीलीगलीए रंगेला वस्त्रमां केटला वखतमां जीव पडे छे ?

उ०—नीलीगलीए रंगेला वस्त्रथी मनुष्यसंसर्ग तत्काल कुंथुप्रमुख त्रसजीव घणा उपजे छे. एम रत्नसंचय ग्रन्थमां कह्युं छे.

२५७ प्र०—लब्धिपर्याप्तानुं तथा करणपर्याप्तानुं केवुं स्वरूप छे ?

उ०—पर्याप्तीद्विधा लब्धिः करणश्च तत्र ये स्वयोग्यपर्याप्तिः सर्वाअपि समर्था भ्रियन्ते न अर्वाग् ते लब्धिपर्याप्ता ये पुनःकरणानि शरीरेन्द्रियादीनि निवर्तन्तः ते करणपर्याप्ता इति, ननुचास्यशरीरपर्याप्तौ हि शरीरं भविष्यति किं प्राग् अभिहितेन शरीरनाम्ना ? नैतदस्ति साध्यभेदात् तथा जयसोमकृत बालावबोधमां एम लख्युं छे.

२५८ प्र०—छ पर्याप्तिनुं स्वरूप कहो.

उ०—जे कर्मना उदयथी आरंभी पर्याप्ति पूरी कर्या विना न मरे ते पर्याप्तिनामकर्म, तेणे एकेन्द्रियने चार विगलेन्द्रिय तथा असंज्ञीपंचेन्द्रियने भाषा हाय. संज्ञीपंचेन्द्रियने मन होय. उत्पत्ति प्रथम समयथी आरंभी पर्याप्ति पूरी कर्या विना न मरे, पूरी करीने

मरे ते लब्धिपर्याप्तो जाणवो. शरीर इन्द्रिय पर्याप्ति पूरी न थाय त्यां सुधी तेने अकरणपर्याप्तो कहेवो, अथवा जे जे पर्याप्ति पूर्ण नथी थइ तेनी अपेक्षाए अकरणपर्याप्तो जाणवो. जे जे पर्याप्ति पूरी करी ते अपेक्षाए करणपर्याप्तो जाणवो. जे कर्मना उदये आरंभेली पर्याप्ति पूरी कर्या विना मरे ते लब्धिअपर्याप्त नामकर्म पुद्गलना उपचयथी थयो पुद्गल परिणमन हेतु शक्ति विशेष ते पर्याप्ति विषय भेदे छे

२५९ प्र०–पर्याप्ति ने प्राणमा शो फेर छे ?

उ०–पर्याप्ति ते उपजतीवेलाए होय अने प्राण ते जावजीव लगे होय

२६० प्र०–सम्यग्दृष्टिनी केवी दशा होय ?

उ०–गाथा—

वन्धोअविरईहेउ जाणंतो रागदोसदुक्खंच ।
विरइसुह इच्छंतो, विरई काउ च असमत्थो ॥१॥
एस असंजयसम्मो, निंदतोपावकम्मकरणच ।
अहिगयजीवाजीवो, अचलियदिट्ठीदलियमोहो ॥२॥
सम्मदंसणसहिओ, गिण्हंतोविरइमप्पसत्तिए । ती
एगवइयचरमो, अणुमइमित्तत्तिदेसजई ॥ ३ ॥

ए गाथानो गुरुगमथी अर्थ धारज्यो, सम्यग्दृष्टिने उदयस्थिति प्रतियोवंध होय, पण आत्मप्रतियोवंध न होय.

२६१ प्र०–छद्मस्थ कोने कहे छे ?

उ०–छाद्यते केवलज्ञानदर्शने आत्मनः अनेनेतिछद्म–ज्ञानावरणं दर्शनावरणं मोहनीयान्तरायकर्मोदयेसति तस्य केवलज्ञानदर्शनस्यानुत्पादात् तदपगमानन्तरं चोत्पादात् ज्ञानावरणादिछद्मनि तिष्ठतीतिछद्मस्थः ॥ केवलज्ञान विना बाकीनां चार ज्ञान प्रगटतां पण छद्मस्थ गणाय छे.

२६२ प्र०–मुनिने अप्रमत्तदशाए समय समय अनंतगुणविशुद्धि कही छे ते शी रीते ?

उ०–आत्मोपयोग एकाग्रध्यान भणी मुनिने आत्मप्रदेशे रहेल अनंतीकर्मवर्गणानी निर्जरा थतां आत्मानी अनंती विशुद्धि समय समय थाय छे.

२६३ प्र०–आहारकआहारक मिश्र जीव किम करे ?

उ०–जेवारे पूर्वधरे संदेह पुछवा निमित्ते आहारकशरीर मोकल्युं होय, तिंहा ज्ञानवंत नहीं तिवारे तिंहाथी वली बीजुं आहारक करे, ते करती वेलाए पूर्व-आहारक संघाते मिश्र होय ते माटे. इति भावार्थं।

२६४ प्र०–सिद्धने अफुसमाण के फुसमाण गति शी रीते समजवी ?

उ०–एक समयमां समश्रेणिना सर्वआकाशप्रदेश, फरसतो जीव सिद्धि गतिए जाय, पण वचमां विषम श्रेणिना आकाशप्रदेश न फरसे माटे ते अपेक्षाए सिद्धनी अफुसमाणगति कहिए, तथा समश्रेणिए आकाशप्रदेश फरसतो फरसतो जाय, ते अपेक्षाए क्षेत्रआश्रिफुसमाणगति कहीए, अने एक समयथी

बीजा समयना अतरने न फरसे ते माटे समय आश्रि अफुसमाण गति कहे छे.

२६५ प्र०–त्रणप्रकारना पुद्गलो दृष्टांतथी समजावो.

उ०–१ विश्रसा, ते स्वभावे कोइ निमित्त पामी तदाकार थाय, जेम इंद्रधनुष्यादि अभ्रवत्, २ प्रयोगसा, ते जीव व्यापारे, उद्यमे करीने जे निपजे, जेम भवन, घटपटादि, ३ मिश्रसा, ते कांइक सहज स्वभावे अने कांइक प्रयोगे, जेम ते माणसे जुनो पटो बाध्यो अथवा जुनी पावडी नाखी, इत्यादिमा पुद्गलानु जीर्णपणु थवु ते स्वभावे कहीए, अने बंधनकर्म ते मनुष्यना प्रयोगवडे थाय छे, एम स्वभाव अने प्रयोगे मळी बनेल वस्तुने मिश्रसा पुद्गल कहे छे

२६६ प्र०–श्रीतीर्थंकरना जन्मादिकल्याणक वखते साते नरके केटलु अजवाळुं थाय ते कहो.

उ०–१ पहेली नरके सूर्यसमान उद्योत, २ बीजीए वादळे ढांकेला सूर्यसमान, ३ त्रीजीए पूनमना चंद्रसमान, ४ चोथीए वादळे ढांकेला चंद्रसमान, ५ पांचमीए ग्रहोना उद्योत समान, ६ छट्ठीए नक्षत्रना उद्योत समान, ७ सातमीए ताराना उद्योत समान.

अथ प्रास्ताविक गाथा—

कालेसुपत्तदाण, समत्तविसुद्धिबोहिलाभ च ।
अंते समाहिमरण, अभव्वजीवा न पावंति ॥ १ ॥
अखंडियचउत्थो, वयगहणाउ जोय गीयत्थो ।
तस्स सगासे दसण, वयगहणसोहिगहणं च ॥ २ ॥

कत्थय जीवो वलीओ, कत्थय कम्माइं हुंति वलीआइं ।
जीवस्सय कम्मस्सय ॥ ३ ॥
कालसहावोनियइ, पुव्वकयंपुरिसकार ए गंता ।
मिच्छं तंतं चेवओ, समासओ होतिसमत्तं ॥ ४ ॥
नव हि जीववहकरणं, करायण अणुमोदिथ जोगेहि ।
कालतिएहिंगुणीए, पाणीवहदुसयतेयाल ॥ ५ ॥ अस्यार्थः

साधुने पहेलाव्रतना नवकोटी पच्चक्खाण छे, पण तेहना भांगा २४३ थाय. इम २७ करवाना, २७ करावबाना, २७ अनुमोदवाने विषे निषेधे इम ८१ थाय, ते काले त्रणेगुणेगुणी त्रिगुणाकरतां २४३ भेदे साधुने पच्चक्खाण होय, जावजीवलगे. इत्यर्थः ।

२६७ प्र०—छ प्रकारना पुद्गलनुं स्वरूप कहो.

उ०—१ वादर वादर—ते खडी माटी पाषाण प्रमुख जाणवा, केमजे ते पदार्थोने छेद्या थकां तेना खंडो एकमेक न रहे, पण भिन्नभिन्न नजरे देखाय छे, माटे वादर वादर ते पहेलो भेद, २ वादर—ते घी, दूध, पाणी, तेल, मध, गोळ, खांड इत्यादिकना पुद्गलने वादर कहिये, केमजे तेमने छेद्यां थकां भिन्न न थाय एकमेक मळेलांज रहे छे. ३ वादरसूक्ष्म—ते शरीरनी छाया छतां छांयडो, धूमाडा वगेरेना पुद्गलो नजरे देखाय छे, पण हाथमां ग्रहवाय नहि माटे वादरसूक्ष्म, ४ सूक्ष्मवादर—ते गंध, रस, स्पर्श, शब्दादिकना पुद्गलो आंखे देखाता नथी, परंतु स्पर्शादिके लक्षणे जणाय छे, माटे तेने सूक्ष्मवादर कहिए, ५ सूक्ष्म—ते अष्टकर्मवर्गणाना पुद्गलो चार स्पर्शवाळा छे, ते नजरे

देखाता नथी माटे, ६ सूक्ष्मसूक्ष्म-ते छुटो शुद्धपरमाणुपुद्गल ते बे स्पर्शवाळा अत्यंतसूक्ष्म छे माटे, ए रीते छ प्रकारना पुद्गल संसारमध्ये व्यापी रह्या छे, जेम छ कायना जीव व्यापी रह्या छे तेम जाणवा

१६८ प्र०-ज्ञानावरणीयादिकर्मनो बंध, उदय, उदीरणा, सत्ता केटला गुणठाणा सुधी होय.

उ०-ज्ञानावरणीयनो बंध गुणठाणा १० मा सुधी, दर्शनावरणीयनो बंध १० मा सुधी, वेदनीयनो बंध गुणठाणा १३ मा सुधी, मोहनीयनो बंध गुणठाणा नवमा सुधी, आयुकर्मनो बंध गुणठाणा सातमा सुधी, नामकर्मनो बंध गुणठाणा १० सुधी, गोत्रकर्मनो बंध गुणठाणा दशमा सुधी, अंतरायकर्मनो बंध गुणठाणा दशमा सुधी, हवे ज्ञानावरणीयकर्मनो उदय गुणठाणा १२ मा सुधी, दर्शनावरणीयकर्मनो उदय गुणठाणा १२ मा सुधी, वेदनीयकर्मनो उदय गुणठाणा १४ मा सुधी, मोहनीयकर्मनो उदय गुणठाणा १० मा सुधी, आयुकर्मनो उदय गुणठाणा १४ मा सुधी, नामकर्मनो उदय गुणठाणा १४ सुधी, गोत्रकर्मनो उदय गुणठाणा १४ मा सुधी, अंतरायकर्मनो उदय गुणठाणा १२ मा सुधी, ज्ञानावरणीयकर्मनी उदीरणा १२ मा गुणठाणा सुधी, दर्शनावरणीयकर्मनी उदीरणा १२ मा सुधी, वेदनीयकर्मनी उदीरणा ६ सुधी, मोहनीयनी १० मा सुधी, आयुकर्मनी ६ सुधी, नामकर्मनी १३ मा

सुधी, गोत्रकर्मनी १३ मा सुधी, अंतरायनी १२ सुधी, हवे ज्ञानावरणीय कर्मनी सत्ता गुणठाणा १२ मा सुधी, दर्शनावरणीय कर्मनी सत्ता १२ मा सुधी, वेदनीयकर्मनी सत्ता १४ मा सुधी, मोहनीयकर्मनी सत्ता १२ मा सुधी, आयुकर्मनी सत्ता १४ मा सुधी, नामकर्मनी सत्ता १४ मा सुधी, गोत्रकर्मनी सत्ता १४ मा सुधी, अंतरायकर्मनी सत्ता १२ मा सुधी होय, एवं बंध, उदय, उदीरणा, सत्तानुं स्वरूप कह्युं छे. ए सर्व भाव केवलज्ञानी एकजीव स्वरूपे द्रव्य गुणपर्याये छे तेहवा अनंताजीव देखे, एकेक जीवने अनंताकर्म जे रीते छे ते देखे, एकेक जीवने अनंताभव देखे छे, एकेक जीवना अनंताभाव देखे छे, भाव ते परिणाम, इम केवली सर्वभाव अस्तिनास्तिरूपे जीम छे ते तीम जाणे देखे इति भाव. ।

२६९ प्र०—अचित्तमहास्कंध ते शुं ? अने तेनो समुद्घात तथा केवलीसमुद्घात केवी रीते थाय छे तेनुं स्वरूप कहो.

उ०—द्विप्रदेशी परमाणुओना स्कंधथी मांडीने असंख्यात प्रदेशीयास्कंधपर्यंत एकपुद्गलस्कंध थाय, तेणे करी लोक पूराय नहि, वळी अनंतापरमाणुओमळीने जे स्कंध वने तेथी पण लोक सघळो पूराय नहि, पण अनंतबादरपरमाणुनो एकस्कंध तेवा अनंतास्कंधमळे त्यारे ते अचित्तमहास्कंधरूप थाय, तेणे करी चौदराजलोक पूराय, ते आवी रीते—ते स्कंध विश्रसापरिणामे परिणमीने केवलीसमुद्घातनीपरे

दंडरूप करीने दिशि तथा विदिशिमां विस्तरी, खडुआ पूरी, चौदराज संपूर्ण स्पर्शीने पाछो केव लीसमुद्घातनी पर सवरीने स्कवरूप थाय, ते स्कंध असख्यात आकाशप्रदेश अवगाहीने रहे, ते अचित्त-महास्कंध क्षेत्रआश्री अढीद्वीपमांही करे, पण ते थकी बाहेर न करे, जेम केवली केवलीसमुद्घात अढीद्वीपमांहे करे, पण बहार नहि, तेम ए पण जाणवु, तथा केवली पण केवली समुद्घात करे तेवार पोताना जे आठ रुचक प्रदेश छे ते मेरुना म य जे रुचक प्रदेश छे त्या जाय, स्थापे, पछी त्याथी विस्तारीने सपूर्ण चौदराजलोक पोताना आत्मप्रदेशे पूरे, त्या प्रथम चौदराज प्रमाण सि गो उचो दडरूपे आत्मप्रदेश विस्तार, पछी रवैयाना चार मथान भागनी पर कपाट आकारपणे विस्तारे, पछी माहीना आंतरा पूरे, ए सर्व समुद्घातक्रिया केवली भगवान जेमनु आयुष्य अल्प होय, अने कर्म घणा रह्या होय तेज केवलीभगवान समुद्घात आठ समयनो करे पण बीजा नहि, पछी एम पोताना आत्मप्रदेशे चौदेराजलोकमां रहेल प्राणीमात्रना आत्मप्रदेश साथे मेळवी, प्रदेशोदये कर्म भोगवीने दंड, कपाट, मथानादि अनुक्रमे संचरीने अयोगी थया थका सिद्धि वरे, इत्यादि स्वरूप विस्तारे ग्रंथान्तरथी (लोकप्रकाशग्रन्थे कह्यु छे) गुरुगमथी जाणवु.

२७० प्र०-निगोदनुं स्वरूप कहो तथा जीव अने पुद्गलनी शक्तिनी सूक्ष्मता जिनवचनानुसार दर्शावो.

उ०—असंख्यातप्रदेशी लोक, ते प्रमाणे गोला पण असंख्याता छे, गोलो ते शुं ? असंख्यानि निगोदे एक गोलो इति. ते उपर गाथा—

लोएअसंखजोयण, माणेपईय जोयणंगुला संक्खा ।
पइतं असंखअंसा, पइअंसमसंखया गोला ॥ १ ॥
गोले असंख निगोओ, सोअणअसंखपईपएसं ।
कम्माणंवग्गणाणंता .... ॥ २ ॥
पइवग्गणाअणंता, अणुअ पईअणंत पज्जाया ।
एवं लोगसरुवं, भाविज्ज तहत्तिजिणवुत्तं ॥३॥ अस्यार्थः—

चौदराजलोक असंख्यानी कोडाकोडी जोजननो छे, ते मध्ये एक जोजन लहए, तेना अंगुल असंख्याता थाय, ते मध्येथी एक अंगुल लीजीए, तेना असंख्यातमा भागप्रमाण, एकभाग लइए, ते मांहे असंख्याता गोळा छे, ते मांहेलो एकगोळो लइए ते एकगोळामांहि असंख्याति निगोद छे, ते मांहेली एकनिगोद लइए ते निगोदमां अनंता जीव छे, ते मांहेलो एकजीव लइए, तेमां असंख्याता प्रदेश छे, ते एकजीवने प्रदेशे प्रदेशे अनंतीकर्मवर्गणा छे. ते मांहेली एक कर्मवर्गणा लीजीए ते मांही अनंतापुद्गलपरमाणुआ छे, ते मांहेलो एक परमाणु लीजीए, ते मांही अनंता पर्याय समकाले परिणमे, एवी जीव अने पौद्गलिक शक्तिनी अत्यंतसूक्ष्मता जाणवी, एवुं श्रीवीतराग वचन तहत्ति करी मानीए. हवे निगोदीआ जीवना भवनी संख्या काळ मान विचारे छेः—असंख्यात समयनी एक आवली

थाय, २५६ आवलिनो एक निगोदीआ जीवनो क्षुल्लक भव थाय, एक श्वासोच्छ्वासमांहे चुंवालीससेंने साडीछेतालीस आवली थाय, तेवा भव निगोदीओ जीव एक श्वासोच्छ्वासमां १७ भव झाझेरा करे, एटले ते जीव सत्तरवार मर अने अढारमी वार उपजे, केमजे एक श्वासोच्छ्वासमा १७ भव अने ९४॥ आवळी जेटलो काळ थाय छे ते प्रमाणे गणता बे घडीमां ३७७३ श्वासोच्छ्वास थाय छे, तेटलामा निगोदिआ भव ६५५३६ थाय, ए लेखे एक दिवसमा श्वासोच्छ्वास ११३१९० निरोगी युवान पुरुषना थाय, तेवा एक दिवसमा १९६६०८० भव निगोदिओ जीव कर, ते हिसाबे एक मासना श्वासोच्छ्वास ३३९५७०० गणता निगोदीआ भव ५ क्रोड ८९ लाख ८२ हजार अने ८०० थाय, अने एक वरसमां श्वासोच्छ्वास ४ क्रोड, ७ लाख, ४८ हजार, अने ४०० गणता तेने विषे निगोदीओ जीव ७० कोडी ७७ लाख ८८ हजार अने ८०० वार जन्ममरणरूप भव कर, एवा भव पूर्वे आ जीवे असंख्यातेकाले असंख्याता अधिक भव कीधा, एम अनंताकाले अनंता भव कीया, अनंता अतीतकालमा अनंताअनंत भव कर्या, ते श्री वीतराग परमात्मानुं वचन सद्दहिने, हे चेतन ! तु मनमा कांटक पापनो त्रास आण, अने आ तारा पोताना जीवनी दया चिंतवीने तेने आवा भयंकर जन्ममरणना फेरामाथी मुक्त करवानो श्रीजिन प्रणीत मार्ग छे, तेने अप्रमत्तपणे यथार्थ आदर. इतिभाव. जूनी प्रतिमा नीचे

प्रमाणे पाठ छे. तथा एक गोलामांहे असंख्याति निगोद छे. निगोदशरीर एकशरीरे अनंता जीव छे, एटले अनंते जीवे मलीने एक शरीर बांध्युं छे, आप आपणा तेजसकार्मण जूदा छे औदारिक एक छे. साथे आहारनिहार साथे मरण २५६ आवलीनो आयु भोगवी पर्याप्ति पूरी करीने मरे, तेहनी निश्राए बीजा कोइ अपर्याप्ता होय नहीं, ते अनंत केटला छे ? जेटला कंदमूल मध्ये अनंता छे, ते कंदमूल चौदराज प्रमाणे ढग करीए तेमांहे पण सूक्ष्मनिगोदना एकशरीरना अनंता निकल्या तेमांहे न समाय, एहना अनंताअनंत भव घणा छे. तिहांना निकल्या तेमांहेज समाय, तथा कंदमूलना ते बादरनिगोदिया छे, व्यवहारराशिमांहि आव्या छे, अनंताकंदादिक मांहे छे. तथा जेटला जीव सूक्ष्मनिगोदगोलकमांहेथी निकल्या छे ते व्यवहारराशिमांहे आव्या, तेमांथी कालादिक लब्धि पामी जेटला जीव सिद्धिवरे तेटला अव्यवहारनिगोदमांहेथी नीकळी उंचा व्यवहारराशिमांहे आवे, पण व्यवहारराशि तो ओछा न थाय, कदापि मुक्ति जावानो विरहकाल होय तेटला काल सुधी सूक्ष्म अव्यवहारराशि निगोदनो जीव कोइ व्यवहारराशिमां न आवे, एहवुं उपमितिभवप्रपंचग्रंथमांहे कह्युं छे.

२७१ प्र०—बादरसाधारणवनस्पतिकायमांथी जीव मरीने सूक्ष्म गोळकनिगोदमां जाय तो त्यां केटलो काळ उत्कृष्ट रहे.

उ०–अढीपुद्गलपरावर्त्तन, मतांतर असंख्याति उत्सर्पिणी अवसर्पिणी सुधी पण कह्युं छे, त्यांथी नीकळी बादर निगोद कंदमूळ मांहि उत्कृष्ट ७० कोडाकोडी सागरोपम सुधी रहे, एकनिगोदनो गोळो असंख्याताआकाशप्रदेश अवगाही रह्यो छे, तथा अव्यवहाराशिया निगोदीआ जीव जे गोलकमां छे ते भवस्थितिपाकतां उंचा आवे ते एक समये उत्कृष्ट केटला नीकळे ? तोके अढीद्वीप माहीथी सकळकर्म खपावी एक समये जेटला जीव सिद्धि वरे, तेटला सूक्ष्मनिगोदमाथी नीकळी व्यवहारराशीमा आवे, ते जघन्य एकसमयमा एक, बे, त्रणथी उत्कृष्ट १०८, तथा व्यवहारराशीया जीव पाछा निगोदगोळकमा जाय तो ते एकादिथी माडी उत्कृष्ट अनंता सुधी जाय, एम व्यवहारराशीया नीकळे तो उत्कृष्ट अनंता नीकळे, पण अव्यवहारराशीया तो उत्कृष्ट १०८ नीकळे, तेमा भव्य अने अभव्य बेउ होय, ते सूक्ष्म निगोदना अनता नीकळ्या बादरनिगोदमांहे समाय, बीजामाहे नहि, तथा एकसूक्ष्म निगोदमांहे अनता जीव केटला छे ? तोके त्रण काळना समय अनता छे, तेथी अनता जीव एक निगोदमांही छे, तेथी ज्यारे केवळी भगवंतने सिद्धना जीवनी संख्या पुछीए, त्यारे कहे छे के एक निगोदने अनतमे भागे सिद्धमां जीवो छे, एम ज्यारे पुछीए त्यारे जवाब मळे, केम जे पूर्वोक्त निगोदअनतानु स्वरूप विचारतां ए वात यथार्थ विवेकीने समजमा आवे, माटे उत्तमजीवे श्रीवीतराग परमा-

त्मानुं वचन सदा सर्वदा सद्दहवा योग्य छे, आपणी बुद्धिनी मंदताने लीधे निरोगी, निर्मम, वीतराग प्रभुना वचनमां संदेह लाववो नहि, केम जे एमणे तो पोताना ज्ञानमां दिठुं तेज कह्युं छे अने तेज सत्य छे. जूनी प्रतिमां नीचे प्रमाणे पाठ छे. व्यवहाराराशिया वादरनिगोदमांहे जे अनंता छे ते फरी कर्मनी वहुलताए सूक्ष्मनिगोद गोलकमांहे जाये तो सित्तेर कोडाकोडी सागरोपम सुधी तिहां रहे, वळी पाछा कंदादिक साधारणमांहे आवे, इम संबंधे सूक्ष्मना वादरनिगोदमांहे आवे, वली वादरना सूक्ष्ममांहे जाय, एम वे स्थानके आवागमन करतो जीव उत्कृष्टो रहे तो अढीपुद्गलपरावर्तनपर्यंत रहे, पछी पृथ्वीआदिक स्थानके फरसतो उंचो आवीने मनुष्य थाय, तीहां व्यवहारराशियो भव्यजीव सामग्री मळे वोधिवीज पामी सिद्धिवरे. तथा वली कोइ वाचनाए एम कह्युं छे जे, कंदमूलसाधारणमांहिथी जीव सूक्ष्मगोलकमांहे जाय ते उत्कृष्ट काल रहे तो असंख्याती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी काल सुधी सूक्ष्मनिगोदना गोलकमांहे रहे, तिहांथी नीकळ्यो वादरनिगोदमांहे उत्कृष्टो ७० कोडाकोडी सागर सुधी रहे, एम सर्वे वे निगोद मळी आवागमन करतां उत्कृष्टे अढीपुद्गलपरावर्त सुधी व्यवहारराशियो जीव निगोदमांहि रहे. एकनिगोदनो गोलो असंख्याताआकाशप्रदेश अवगाहि रह्यो छे. तथा अव्यवहारराशिया जे निगोदमांहि छे ते भवस्थितिनी परिपक्वताए उंचा आवे ते एक समये केटला

नीकळे ? जेटला अढीद्वीपमाहिथी सकलकर्म खपावी एक समये सिद्धिवरे तेटला सूक्ष्म निगोदमाहेथी निकळी व्यवहारराशिमां आवे, एक समये एक, बे, त्रण उत्कृष्टे एक समये अढीद्वीपमाहे १०८ सिद्धिवरे, तेटला सूक्ष्मनिगोदमाहेथी निकळे, व्यवहारराशिपणो पामे, तथा व्यवहारराशियो निगोदना गोलामाहे जाय तो एक समये एक, बे, त्रण एम अनता सुधी जाय, ते व्यवहारराशिया निकळे तो अनता सुधी एक समये निकळे, पण अव्यवहारिया तो एकसमये उत्कृष्टे १०८ निकळे, तेमाहे भव्य अभव्य बे होय. ते सूक्ष्मनिगोदना अनता निकळ्या बादरमांहि समाय बीजामा नहीं, तथा एक सूक्ष्मनिगोदमाहे अनताजीव केटला छे ? ते त्रण कालना समय अनंता छे तेहथी अनताजीव एक निगोदमाहे छे, तेणे करी जेवार पुछीए तेवार जिनेश्वर कहे छे जे " एकस्सनिगोअस्स अणतमो भागो य सिद्धिगओ " एटले सूक्ष्मनिगोदथी बादरनिगोदमाहे निरतर आवे छे ते आवे तो एकसमये १०८ सुधी उत्कृष्टे आवे, तथाचोक्त-सिज्झति जतियाखलु, इहय ववहाररासिमज्झाओ। इतिअणाईवणस्सई, मज्झाओ तत्तियाचेव ॥ १ ॥ इतिश्रीभुवनभानुकेवली चरित्रमध्ये उक्त एम निगोदनो विचार लख्यो छे.

२७२ प्र०–सिद्धशिलानु किंचित स्वरूप वखाणो.

उ०–जेम मानुनो गोळो उपर जाडपणे समो अने नीचे

टेकरारूपे विस्तरतो तेम, अथवा उंधी उघाडी राखेल अर्धछत्रआकारे, श्वेत, सुवर्णमय, स्फटिकरत्नमय सरखी निर्मळ, मध्ये आठजोजन जाडी, परिवि-विस्तारमां ४५ लाख जोजन प्रमाणे, अढीद्वीपरूप मनुष्यक्षेत्रनी उपरे ढांकण समान, छेडे जातां माखीनी पांख समान पातळी, लोकना अग्रभागे रहेली अतिनिर्मळ सिद्धशिला शोभी रही छे, जेनी उपर $\frac{1}{6}$ गाउए एटले एक गाउने छट्ठे भागे अनंता सिद्धपरमात्माओ विराजे छे, तेमने मारो त्रिकरण शुद्धिए नमस्कार हो.

२७३ प्र०–अष्टमहासिद्धिना नाम अर्थसहित कहो.

उ०–प्रथम लघिमा–ते शरीरनुं हलवापणुं थाय, जलपुष्प उपरि तथा कंटकउपर मुनि चाले पण किलामना न पामे १, बीजी वसिमासिद्धि–तेहथी सिंह, सर्प, देवमनुजादिक वश्य थाय २, त्रीजी सत्यसिद्धि–परमैश्वर्यपणुं पामे, चक्रवर्त्ति इंद्रादिक थकी अधिकी ऋद्धिविकुर्वे ३, चोथी काम्यसिद्धि–तेथी अत्यंत वलसंपदाहोय, पृथ्वीपर्वतादिक उपाडे, अचिंतित पराक्रमी होय ४, पांचमी महिमासिद्धि–तेथी मोटुं लाखजोजननुं शरीर करे ५, छट्ठी अणिमासिद्धि–तेथी नाहनुं कुंथुआ जेवडुं रूप करीने भींतमांथी तथा पर्वतमांथी निकळे अने पोते विघ्न न पामे ६, सातमी यत्रकामावसायित्वसिद्धि–तेथी जिहां उपयोग दे तिहां जाणे, निर्मल श्रुतज्ञान अवधिज्ञानने योगे ७, आठमी प्राप्तिसिद्धि–तेथी सकल मोटीवस्तु

प्रत्यक्षपणे देखे, रूपिवस्तु देखे, अवधिज्ञानदर्शन त्रण योगे ८, ए अष्टमहासिद्धि मुनिराजने होय तेहना शब्दार्थ जाणवा

७७४ प्र०–क्षणमात्र सुख अने बहुकाळ दुःख ते शी रीते ?

उ०–आ जीव आ संसारना अनुकूळ इंद्रिय विषयना भोगादिकने विषे लुब्ध थयो थको मधुबिंदुआना दृष्टाते क्षणमात्र सुख अने बहुकाळ दुःख भोगव्या करे छे, ए मधना एकटीपानी तृष्णामा पोतानी आसपास अनतगणुं व्यापी रहेलुं दुःख हिसावमा गणतो नथी, तेम स्त्रीसेवनमां जाणे साक्षात् अमृतसार महास्वादिष्टभोजन प्राप्त न थयु होय, तेवो लोलुपी थयो थको भुंड सुकरनी पेठे निज स्वरूपने तद्दन विसारीने अथवा उवेखीने खरज खणवाना स्वादना पर अथवा मधुलिप्त खड्गधाराने चाटवानी परे प्रथम सेवन करता सुख वेदे, अने पाछळथी तत्काळ एकक्षणवारमा शरीर वीर्य क्षय थता बापडा जेवो थइपडी निर्माल्य नपुसकरूप अनुभवे छे, अने त्यारज ते पोतानी भुंडसुकरपणानी निर्लज्ज बाळचेष्टाने अतरदृष्टिए विचारे छे, तेम आ ससारने विषे चक्रवर्ति आदिना विषयनां उत्कृष्ट पौद्गलिक सुख नर्कादिकने विषे तेना विपाककाळ आगळ तुच्छ अल्पकालिक क्षणिक छे, छता हा! इति खेदे आ भवनी अनादि काळनी विषय वासना जाणताने पण बाळरूप करनार एवी महामोहमय प्रबळताथी चेतनने

सावधान रहेवानुं छे, जुओ वारमा ब्रह्मदत्त चक्रवर्तिनुं आयुष्य मात्र ७०० वरसनुं हतुं, ते भोगवीने नरके गयो, तिहां ३३ सागरनुं आयु भोगवे छे. तेटलो काल विषयसुख भोगव्या ते उपर केटलुं दुःख तेहनी विगत. वर्ष १०० दिवस ३६००० थाय, तेवारे ७०० वर्षना दिवस २५२००० थाय, तेहना मुहूर्त्त ७५६०००, ते एकमुहूर्त्तना ३७७३ श्वासोच्छवास थाय. ७५६००० ते गुणा करतां २८५२३८८०००० एटले ७०० वर्षना एटला श्वासोच्छवास थाय, तथा सागरोपम ३३ ना पल्योपम त्रणसेत्रीसकोडाकोडी थाय, तेहना आंक ३३०००००००००००००० तेवारे एकश्वासोच्छवास सुधी संसारमध्ये विषयना सुख भोगव्या ते उपरे ११५६९८५ ईग्यारलाख छपन्नहजार नवसेंने पंचासी एटला पल्योपम सातमी नरके दुःख भोगवे छे एटले "खणमित्तसुखंबहुकालदुखम्" ए पद सूत्रे कह्युं छे तेहनो ए भावार्थ जाणवो. अने तेटलामां अतिअधर्मपणे निःशूकताथी भोगवेला जे विषयभोगो तेना दारूणविपाको ते सातमी नरकने विषे ज्यां आंख मीचीने उघाडीए एटली वार पण जीवने लेशमात्र सुख नथी तेने विषे जीव एकलो निराधारपणे भोगवी रह्यो छे. माटे ज्ञानी कहे छे जे–

प्रभाति.

विषयवासना त्यागो चेतन, साचे मारग लागोरे,
जप तप क्रिया दानादिक सहु, गीणति एक न आवेरे;

इंद्रिय सुखमे झल्यु ए मन, वक्र तुरग ज्यु धावेर. इत्यादि

एम जाणी आ संसारनां मूल जे विषय कषाय मोहादि छे तेना जय करवाने माटे परमात्माना वचनमां ज्ञानपूर्वक विरक्तबुद्धि राखी इंद्रियोनो जय करवो, जेथी विषय त्यागे पंचमहाव्रतादि प्रव्रज्या उदय आवे, कषायनी मंदताए गुणठाणानी श्रेणिए चडे अने स्वरूपाचरण चारित्ररूप शुद्धात्मोपयोग तीव्र वर्ते

२७५ प्र०–मिथ्यादृष्टि अने सम्यग्दृष्टिना आचार तथा उपयोगने सरखावो.

उ०–मिथ्यादृष्टिजीवने शुभाचार होय पण शुभोपयोग न होय, अने सम्यग्दृष्टिजीवने शुद्धोपयोग होय तेने शुभोपयोग आचरणरूपे होय पण आदरण न होय, अने मिथ्यादृष्टिजीवने शुभआचाररूप होय, पण ते अशुद्धोपयोगना घरनो अशुभोपयोग होय छता तेने शुभोपयोग उपचार कहिये.

२७६ प्र०–युगप्रधानना गुणो कहो.

उ०–युगप्रधानना गुणो १८ छे तत्र गाथा—
पडिरूवोतेयस्सि, जुगप्पहाणागमोमहुरवक्को ।
गभीरोधीमंतो, उवएसपरोयआयरिओ ॥ १ ॥
अपरिस्सवीसोमो, संगहसिलो अभिगहमईय ।
अविकत्थणोअचवलो, पसंतहियओगुरुहोई ॥२॥
एव चतुर्दशगुणा भवन्ति ।

२७७ प्र०–क्या ठेकाणे त्रणयोगो कह्या.

उ०–भद्रबाहुस्वामीकृत ओघनिर्युक्तिमा ७२ मी गाथामां त्रणयोगो करवी कही छे. यथा–

अवस्सगंतुकाओ, जिणोवइट्ठंगुरुवएसेणं ।
तिन्निथुई पडिलेहा, कालस्सविहिइमोतत्थ ॥ १ ॥

२७८ प्र०—तपदान अने अनशननुं शुं फल छे ?
उ०—तवसंयमेण मुक्खो, दाणेणहुंतिउत्तमाभोगा ।
देवंचणेणरज्जं, अणसणमरणेणईदत्तं ॥ १ ॥

२७९ प्र०—अभव्यजीवो शुं नथी पामता.
उ०—इंदत्तं चक्कीत्तं, पंचोत्तरविमाणवासित्तं ।
लोगंतादेवत्तं, अभव्वजीवा नपावंति ॥ १ ॥

२८० प्र०—कया अभव्यजीवो थया.
उ०—संगमकालयसूरि, कविलाअंगारपालयादोवि ।
एएसत्तअभव्वा, उदाइनिवमारओचेव ॥ १ ॥

२८१ प्र०—तुच्छनुं स्वरूप कहो.
उ०—तुच्छंभत्तंपाणुं, तुच्छानिंदाय तुच्छमारभो ।
तुच्छा जहा कसाया, ताहं तुतुच्छसंसारे ॥ १ ॥

२८२ प्र०—कया जीव अहींथी मरीने महाविदेहमां नवमे वर्षे केवली थाय छे ?
उ०—इहभरहेकेइजीया, मिच्छादिट्ठीभद्दयाभव्वा ।
तेमरीउणनवमे, वरसे होहंतिकेवलीणी ॥ १ ॥

२८३ प्र०—चमरेन्द्रनो केवो परिवार छे ?
उ०—चमरेन्द्रने पांचअग्रमहिषी छे. आठआठसहस्त्र देवीनो परिवार एम ४० सहस्र देवीओथी भोग भागवतो विचरे छे.

२८४ प्र०—षट्दर्शनना नाम कहो.
उ०—१ बौद्ध, २ नैयायिक, ३ सांख्य, ४ जैन, ५ वैशेषिक, तथा ६ चार्वाकदर्शन. ए छ दर्शनना नाम.

२८५ प्र०–त्रेसठशलाकापुरुषोना जीवो केटला तथा माता पिताना जीवोनी सख्या केटली छे ?

उ०–त्रेसठशलाका पुरुषोना जीव ५९ छे. तेहनी विगत–त्रणजीव चक्रवत्तिनी पदवीना ओछा थया तथा एक वासुदेव थया ए ४ जीवो घट्या तेथी ५९ थया. तथा ५९ जीवना माता ६० पिता ५१ कह्या छे तेहनी विगत. २४ जिननी माता, ९ चक्रीनी माता, ९ वासुदेवनी माता, ९ वलदेवनी माता, ९ प्रति वासुदेवनी माता एव ६० माता जाणवी. हवे पिता ५१ तेहनी विगत. २४ जिनना पिता, ९ चक्रीना ९ वासुदेव तथा वलदेवना पिता, ९ प्रतिवासुदेवना एवं ५१ पिता जाणवा. एणी रीते पदवी ६३, जीव ५९, माता ६०, पिता ५१ ए रीते अर्थ

२८६ प्र०–श्रीऋषभदेवस्वामी केटला वर्षनो काल गृहस्थाश्रमे वस्या तथा सर्वायु केटला वर्ष जीव्या

उ०–ऋषभदेवस्वामी वीसलाखपूर्व कुमारपणे रह्या, तेहना वर्ष केटला ? चौदलाखकोडाकोडी इग्यारहजारकोडाकोडी वली वसेकोडाकोडी १४११२००००००००-०००००००० एटला वर्ष कुमारपणे रह्या, त्यारपछी ६३ लाखपूर्व राज्यावस्था भोगवी तेहना वर्ष केटला ? चुवालीसलाख कोडाकोडी पीस्तालीसहज्जारकोडाकोडी वत्रीसे कोडाकोडी एसीकोडाकोडी तेहना आक ४४४५३२८०००००००००००००००० त्यारपछी एकलाखपूर्व दीक्षाकेवलपणे रह्या, तेहना केटला वर्ष ? सित्तेरहजारकोडाकोडी पाचसेकोडाकोडी

ते उपरे ६० कोडाकोडी तेहना आंक ७०५६००००००००००००००००० एटला वर्ष थया. एम सर्वे चोरासीलाखपूर्वनां वर्ष सरवाले ५९ लाखकोडाकोडी २७ हज्जारकोडाकोडी ते उपरे वली ४० कोडाकोडी एटला वर्ष जीव्या. एटला वर्ष श्रीऋषभदेव सर्वायु जीव्या, एकडा उपर १९ मींडा आवे त्यारे कोडाकोडी थाय. एकडा उपर २१ मींडा आवे त्यारे कोडाकोडीकोडाकोडी थाय. तथा एकडा उपर २९ मींडा आवे तेवारे कोडाकोडीकोडाकोडी थाय. इत्यर्थं ८४ लक्षपूर्वनो जाणवो.

२८७ प्र०–प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, रसबंध, तथा प्रदेशबंध क्यारे क्यारे नीपजे ?

उ०–योगे प्रदेशबंध प्रकृतिबंध नीपजे ते कर्मवर्गणादलनो संचय थाय, तथा योगने लेश्या बे एकठा मले त्यारे प्रकृति ने प्रदेशबंध नीपजे, तथा ध्यानकषाय ए बे मले त्यारे स्थितिबंध रसबंध नीपजे, तथा जिहां कषायध्यान आवे त्यारे च्यारे भेला थाय. इत्यर्थः ।

२८८ प्र०–शास्त्रमां कहेला भारनुं प्रमाण कोष्टक कहो ?

उ०–छ सरसवनो एक जव, ३ जवनी एक गुंजा (चणोठी), ३ गुंजानो एक वाल, सोळवालनो एक गदीआणो, दशगदीआणे एक पल, दोढसोपले एकमण, दशमणनी एकधडी, दश धडीनो एक भार जाणवो.

२८९ प्र०-अढारभारवनस्पति कहेवाय छे त्यां भारनुं प्रमाण केटलु? तथा ते वनस्पति अढारभार कइ कइ छे ते कहो.

उ०-३ क्रोड ८१ लाख १२ हजार नवसें सीत्तोतेर मणे एकवनस्पतिभार थाय छे, तथा प्रत्येक जातनी वनस्पतिनुं एक एक पान लइने एकठो ढगलो करीए, ए प्रमाणमां चारभार वनस्पति केवळ फुलमय छे, तथा आठभार वनस्पति फळ फुल पानमय छे, तथा छभार वनस्पति वेलनी छे, एम एकंदर १८ भार वनस्पति जाणवी

२९० प्र०-मुनिराज कया चोविसपरिग्रहना त्यागी होय.

उ०-क्षेत्रवास्तु धनधान्यद्विपदचतुष्पदयानशय्यासयन भाण्ड कुप्यचेति बहिर्दश, मिथ्यात्ववेदहास्यादिषट्कषाय चतुष्टयरागद्वेषावाभ्यंतरा चतुर्दश ॥

२९१ प्र०-महारोग केटला तथा तेनो संतानपरिवार केटलो कह्यो छे?

उ०-चार मोटा रोग कह्या छेः—१ ज्वर, २ भगंदर, ३ कोढ, ४ धातुक्षय तेनी चार स्त्रीओना नाम.—तावनी स्त्री तरस, भगंदरनी स्त्री हडकी, कोढनी स्त्री भूख, धातुक्षयनी स्त्री निद्रा. तथा ते प्रत्येक रोगना ने स्त्रीओने समागमे पचिस पचिस छोकरा रूप नानाविध रोगोनी उत्पत्ति छे, पूर्वोक्त प्रत्येक रोगने २५ गुणा करता १०० रोग थाय, ते मध्ये आठ बीजा रोग भेळीए, तेवार वैदकशास्त्रमां वर्णवेल १०८ रोगनी संख्या थाय छे. तेनी चिकित्सा

निपुण नाडीपरीक्षाना अनुभवी वैद्य यथार्थ करी शके, पण ते सर्वद्रव्यरोग, अने तेना मटाडनार पण द्रव्यवैद्य जाणवा, पण जे थकी ते द्रव्यरोगो उत्पन्न थाय छे, ते भावरोग जीवनी विषयकषायरूप अनादिकाळनी मलिन विकारी परिणति छे, तेना वैद्य तो सनत्कुमार सरखा परिणतिवंत महात्माओ गणधर तीर्थंकरादि जाणवा, जे सर्वऔषधना जाण, तथा सर्वरोगना मटाडनारा छे, माटे हे चेतन! तुं मिथ्या शरीरादिकनी ममताने छोडीने तेओने शरणे जा, तेमना वचनने आदरथी स्वीकार अने तेमने मार्गे चाल, तो अनादि अनंत अव्यावाध सुखने अचलपणे अनुभवीश.

२९२ प्र०—एक सौधर्मेंद्रना आउखामां केटली इंद्राणीओ चवे?

उ०—कोडाकोडी दुविसं पंचासीलक्खाहुंतिकोडीओ।
इगुत्तरीसहसाकोडी, चत्तारिसयायतहकोडी ॥ १ ॥
अट्ठावीसंकोडी, सत्तावन्नंहवंतिलक्खाइं।
सहस्साचउदससया, च्छासीइंदेगजमित्थि ॥ २ ॥
इयसंक्खादेवीओ, चवंतिइगइंदजम्मंमि ॥ ३ ॥

इंद्र विषयसुख भोगवतां एकलाख अठावीस हजाररूप विकुर्वे, तेनी आठअग्रमहिषीओ प्रत्येक १६ हजाररूप विकुर्वे, त्यारे ते हिसाबे इंद्रनुं आयुष्य जे बेसागरोपमनुं छे तेमां २२ कोडाकोडी ८५ लाख ७१ हजार चारसो अठावीस कोडी ५७ लाख १४ हजार वसो छीयासी उपर आठ गुणी एटली देवांगनाओ एकइंद्रना आयुष्यमांहि चवे.

१९३ प्र०—पांच स्थावर, विगलेन्द्रि,तथा पचेन्द्रिय क्यां क्यां होय.

उ०—एगेन्द्रियपंचेंदीया, उड्ढेअहेयतिरियलोएय ।
विगलेन्द्रियजीवापुण, तिरियलोएसु मुणेयव्व ॥ १ ॥
पुढवीआउवणस्स, वारसकप्पेसु सत्तपुढवीसु ।
पुढवीजा सिद्धसिला, तेउनरखित्तितिरियलोए ॥२॥
सुरलोए वावीमज्झे, मच्छअनत्थीजलयराजीवा ।
गेविज्जेनऊवावि, नाविअभावेजलनत्थी ॥ ३ ॥

१९४ प्र०—नवनियाणानु स्वरूप तथा ते नियाणाना करनारने केवा हीनफळनी प्राप्ति थाय छे ते कहो.

उ०—१. राजादिक थवानी इच्छा, २ अमात्य थवानी इच्छा, ३. स्त्री थवानी इच्छा, ४. देवभोगनी इच्छा, ५. देवीभोगनी इच्छा, ६ भोग न पामवानु नियाणु ७. श्रावक थवानी इच्छा, ८. दरिद्र थवानी इच्छा, ९. कर्मरहित थवानी इच्छारूपनियाणु, प्रथमना छ नियाणाना धणी दुर्लभबोधी थाय, माय. धर्म सद्दहे नहि, सातमानियाणाना धणीने देशविरति उदय न आवे, आठमाना धणीने सर्वविरति उदय न आवे, नवमाना धणीने मुक्ति न थाय

१९५ प्र०—पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, पचेन्द्रियपणु, अने त्रसपणु, कायस्थितिए लागलागट तेने तेज पर्याये रहे तो उत्कृष्ट केटलो काळ रहे ?

उ० १. पुरुषवेद, उत्कृष्ट ६०० सागरोपम झाझेरा,
२, स्त्रीवेद, ११० पल्योपम ६ क्रोडपूर्व सुधी,
३, नपुंसकवेद, अनंती उत्सर्पिणी अवसर्पिणी सुधी,
४, पचेन्द्रियपणु, १००० सागरोपम झाझेरा,

८, त्रसपणुं, २००० सागरोपम झाझेरा;

प्र० २९६–पांचज्ञान त्रणअज्ञान कालथकी जघन्य तथा उत्कृष्ट केटलो काल रहे.

उ०–मतिज्ञान अने श्रुतज्ञाननोकाल जघन्यथी एकसमय, उत्कृष्ट ६६ सागरोपमज्ञाझेरो, अवधिज्ञान एकसमय ते केम ? विभंगज्ञान समकित पडीवजे तेवारे विभंग फीटी अवधिज्ञान थाय, त्यारे एकसमय रहि वली पडे, विभंगज्ञानने विभंगज्ञानेज आवे एम अवधिज्ञान जघन्यथी एकसमय होय, मनःपर्यज्ञान–जघन्यथी एकसमय उत्कृष्टे देशेउणां पूर्वकोडी. एक समय ते किम ? जेवारे अप्रमत्तगुणठाणे वर्ततां मनःपर्यवज्ञान उपजीने जाय, तिहां एकसमय जाणवो, केवलज्ञानना धणीने सादिअनंतोकाल जाणवो. हवे मतिअज्ञानने श्रुतअज्ञानना भांगा, कालआश्री त्रण जाणवा, एकअनादि ने अनंत ए अभव्यने १, अनादि सांत ते भव्यने २, सादि अने सांत ते समकितथी पडी पछे चडे तेहने होय ३, सादि अने सांत छे तेहने जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टो तो अर्द्धपुद्गल परावर्त्त जाणवो. हवे विभंगज्ञाननो काल लखीए छीए. जघन्य तो एकसमय, उत्कृष्ट सागर ३३ झाझेरो, मनुष्यनो आयु पूर्वकोडीनो पाली सातमी नरके उत्कृष्टे आउखे जाय एटले एक पूर्वकोडने तेत्रीस सागर थाय, हवे ए आठे ज्ञाननुं आंतरु कहे छे. मतिज्ञाननुं आंतरु जघन्यथी अंतर्मुहूर्त्तनु होय, उत्कृष्टे अर्द्धपुद्गलपरावर्त्त माठेरुं होय, एम एणे प्रमाणे

श्रुतज्ञान अवधिमनःपर्यवज्ञाननुं पण आतरु जाणवु, केवलज्ञाननुं आतरु नथी, हवे मतिश्रुतज्ञाननु आतरु जघन्य तो अतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्ट ६६ सागरोपम झाझेरु होय, हवे विभंगज्ञाननुं आतरु जघन्यनो अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्ट तो वनस्पतिनो काल इति भाव ।

२९७ प्र०–सत्तरप्रकारना मरणनु स्वरूप कहो.

उ०–१–समयसमय आयुकर्मदल खपवारूप मरण, २–संपूर्णायु भोगववारूप मरण, ३–नरकादि गतिनु चरम मरण, एटले फरी ते गतिए मरण न थाय ते, ४–व्रतीनु मरण, ५–पतगीआनी पठे इंद्रिय विषयासक्त मरण, ६–शल्य सहित लज्जायुक्त मरण, ७–चरमशरीरी मरण, ८–अविरतिमिथ्यादृष्टिना बाळ मरण, ९–समकितीव्रतीना मरण, १०–छद्मस्थचारित्रीयाना मरण, ११–देशविरतिश्रावक मरण, १२–केवली मरण, १३–फासी, शस्त्र, विषादि थकी मरण, १४–पक्षीपशुओ, पासे शरीर करडाववारूप मरण, १५–अणसणी आराधक मरण, १६–वैयावच्च त्यागपूर्वक अणसणी मरण, १७–पादोपगम मरण–ते निश्चल दृष्टी पडेल झाडनी डाळी समान कायाने वोसराववारूप मरण.

२९८ प्र०–भूमि क्या सुधी अचित्त होय ?

उ०–१ राजमार्गनी भूमिका पाचआगळ सुधीनी उपरनी अचित्त पछो खोदेली सचित्त, २ शेरीनी भूमी सात आगळ सुधी, ३ घरनी भूमी दश ४ मलमूत्र भूमिका पदर आंगळ, ५ गाय भेंस बकरी वगेर

बांधवाना स्थाननी भूमी २१ आंगळ सुधीनी अचित्त, ६ चुला हेठळनी भूमी ३२ आंगळ सुधीनी अचित्त, ७ कुंभारना निभाडानी भूमी ७२ आंगळ अचित्त, ८ इंटवा अधःभूमि १०२ आंगळ अचित्त. इति सुयडांगवृत्तिमध्ये कह्युं छे.

२९९ प्र०—आवलनी छालमां केटला जीव होय.

उ०—आवलनी छालमां असंख्याताजीव कह्या छे, ते पन्नवणाजीना पहेलापदमां कह्युं छे.

३०० प्र०—नोकारवालिना १०८ गुण ते कया ?

उ०—बारगुण अरिहंतना, ते अष्टमाहाप्रातिहार्य, ज्ञानातिशय १, वचनातिशय २, पूजातिशय ३, अपायापगमातिशय ४, एवं १२. आठकर्मना क्षयथी सिद्धना गुण ८, आचार्यना ३६, "पंचिंदियसंवरणो" इत्यादि गाथा बेथी जाणज्यो, उपाध्यायना २५, इग्यार अंग भणे भणावे, एम १२ उपांग भणे भणावे, तथा चरणसित्तरि करणसित्तरि आराधे, एवं २५. हवे साधुना २७ गुण, ते छव्रत पाले, छकायरखवाले १२, पंचेन्द्रियनो निग्रह १७, लोभनिग्रहसंचय १८, क्रोधनिग्रहक्षमागुण एवं १९, भावविशुद्ध २०, पडिलेहणाविशुद्ध २१, संग्रहयोगयुक्त २२, मनवचनकायनुं कुशलपणुं २५, शितादिक पीडानो सहवो २६, मरणांत उपसर्गनो सहवो २७, ए सर्व मली १०८ गुण पंचपरमेष्ठिना, तेहनी नोकारवाली कहिए इत्यर्थः इति ।

प्र० ३०१—साधु सावसाए पंचमहाव्रत पाले अने श्रावक सवाछ

वसाए पंचअणुव्रत पाले ते केवी रीते.

७०–पहेलु प्राणातिपात श्रावकने अणुव्रत, तिहां दया श्रावकने वसा १। नी होय. पांचस्थावर ते सूक्ष्म ने बादर एव १० ते पर्याप्ता ने अपर्याप्ता एव २०. एम एणि रिते साधु मोजसाए पचमहाव्रत पाले, श्रावकने पाचअणुव्रतमलीने सवाव्छवसा इत्यर्थं, तथा वली पाच अणुव्रत श्रावकने होय तेहनो विवरो लखीए छीए, स्थूलबेंद्रियादिक त्रसजीव निरापराव उपेतकरणी न हणे ए प्राणातिपात अणुव्रतनी दया वसा १। नी होय ते पूर्वे लग्यु छे तेहथी जोजो, तथा बीजा अणुव्रत मध्ये आपणे काजे स्वसाधुने समस्तजीव रक्षा वसा २० सूक्ष्म ने वादर वसा १० काढ्या ने परने आत्मा अतट्ठापरट्ठावेव ५ मापराधने निरापराधे करी वसा २॥ अपराधे हणे पण निरापराधे नहीं. २॥ सापेक्षने दया निरपक्षे वसो १। रहे तथा अत्र गाथा,

तसाथावराय जीवा, सकप्पारभओभव दुविहा।
सावराहनिरावराहा, सावक्खा चेव निरवक्खा॥ १॥

जीव बे प्रकारे सूक्ष्म ने बादर जे मध्ये सूक्ष्मना १० भेद तथा १० बादरना, सूक्ष्मना १० ते पाच स्थावर पर्याप्ता ने अपर्याप्ता, एवं १० नी दया श्रावकने न होय, एव १० बादर ते तिहा १ बेइंद्रि १ तेंद्रि २ चौरिंद्रि ३ पचेन्द्रि ४ ए पर्याप्ता ने अपर्याप्ता एव भेद ८ पंचेन्द्रिसमीनो ० ने असमीनो १० एव भेद बादरना थया, ते मध्ये श्रावकने सकल्पी

न मारवुं, आरंभे जयणा एवं ५ भेद रह्या, ते मध्ये अपराधे हणे निरपराधे नहीं एटले २॥ वसा रह्या, ते मध्ये सापेक्ष अने निरपेक्ष निर्दयपणे न हणे एवं १। वसानी दया श्रावकने त्रसजीवनी रही· इति प्राणातिपातनी जीवदया १। वसानी इति । मृषावाद-अणुव्रत २ समस्तमृषावादनियम साधुने २० वसा सूक्ष्म ने बादर करतां वसा १० उपयोगे अनुपयोगे " अतद्धापरद्धा " आत्मपर एवं ५ स्वजन परजन करतां एवं २॥ धर्म अपर अधर्म परमार्थे १। तत्र गाथा—

सुहुमबायरमलीय· अप्पाणपरभेयगं भवे दुविहं ।
सयणं परगं च तहा, धम्मत्थं केवलपरमत्थं ॥ १ ॥

पांच मोटकाजूठा ते सूक्ष्म ने बादर एवं १० ते उपयोगे ने अनुपयोगे एवं २० वसानुं मृषावाद साधु न बोले पण श्रावकने १। वसानुं मृषावाद श्रावकथी पले इति भाव । अथ अदत्तादानअणुव्रत ३ समस्त अदत्तविरमणसाधुने २० वसा सूक्ष्म बादर भेद थइने वसा १० सराजनिग्रह ने निराजनिग्रहथी ५ आत्म-निमित्त परनिमित्तथी २॥ याच्युं तथा अणयाच्युं १। वसा तत्र गाथा—

सुहुमथुलमदिन्नदाणं, निवरायदंडकारियं ।
रायनिगहकारियंपुण, दुविहंकहियं गुरुजणेहिं ॥ १ ॥
नविराहनिगहकरं, अप्पाणंभेयगं दुविहं ।
दिन्नमदिन्नंच परं, भासियव्वं निउणबुद्धिहिं ॥ २ ॥

अदत्त पांच स्थूलजीव अदत्त १ जिन २ गुरु ३

स्वामी ४ सागारिअदत्त ५ ते सूक्ष्म ने बादर एव १० उपयोगे तथा अनुपयोगे एव २० वीसगुणी ए इति । हवे मैथुनअणुव्रततुर्य ४ साधुने समस्त मैथुनविरमण २० मनवचनकाया ३ एवं १० स्वदारा परस्त्री करता एव पांच वेश्या तथा परस्त्री २॥ कुमारी तथा अपरस्त्री १। तत्र गाथा—

मणवयकायमेहुण, मविनियमअविरई ।
ईत्थीओवेसापरत्थीओ, कुमारीपरईत्थीनियमो य ॥१॥

स्वदारा १ परस्त्री २ वेश्या ३ दासी ४ कुमारी ५ एव ते मनवचन तथा काथाए करी एवं १० ते सुपने तथा जागृतपणे एव वीस २० वसानो शीयल साधु पाले तिहां वसा १। नु होय श्रावकने इति । अथ परिग्रहअणुव्रत पांचमु साधु ते समस्त विरमण २० अभ्यन्तरने बाह्य करता १० "अतह्या य परह्या" ए बे भेदे ५ स्त्रीपिहरआत्मनिह्यानु २॥ स्त्री आत्मदत्त एवं वसा १ । तत्र गाथा—

अन्भतरबाहिर परिगहो परसकीयगाचेवईत्थी ।
पियअप्पोईत्थी नियदत्तनीउय ॥ १ ॥

धनधान्य १ खेतवत्थु २ रुपुंसोनु ३ कुवदते वासण ४ द्विपद चतुष्पद एव ५ ते बाह्यने अभ्यंतर १० ते इच्छामुर्च्छारूपे २० ते मध्ये श्रावकने वसा १। परिग्रहपले इति पूर्ण । अथ गाथा—

तसाथावरायजीवा, संकप्पारभओ भवे दुविहा ।
सावराहानिरावराहा, सावक्खा चेव निरवक्खा ॥१॥
इति प्राणातिपातविरमण ।

सुहुमवायरसलीयं अप्पाणपरभेयगं भवे दुविहं ।
सयणं परगंचतहा, धमत्थं केवलपरमत्थं ॥१॥ इति ॥२॥

सुहुमथुलमदिन्नदाणं, निवरायदंड कारियं ।
रायगहकारियंपुण, दुविहंकहियंगुरुजणेहिं ॥१॥

नविराह० १ इति ३, मणवयकायमेहुण० १ इति ४ । अभं० १,५ । स्वजनकाजे धर्मकाजे मुकी परकाजे बोलवानियम ए मृषावादअणुव्रत समस्तमृषा निमम २० सूक्ष्मने वादरभेदे १० आत्मकाजे परकाजे ५ स्वजनपरकाजे २॥ धर्मपरकाजे १। एवं द्वितीयं, हवे तृतीयअणुव्रत राजनिग्रहकारिउ परायुं अणदिधुं लेवा नियम समस्तअदत्तादानपच्चख्खाण २० सूक्ष्मवादरभेदे १० सराजनिग्रह निराजनिग्रह ५ आत्मकाजनिग्रह परकाजनिग्रह २॥ पियारी दिधी पियारीअणदीधी १। एवं राजनिग्रह पडे तेहनो पच्चख्खाण ते सराजनिग्रहमांहि बे भेद, एक आत्मराजनिग्रह परराजनिग्रह कहिए, हवे ते आत्मराजनिग्रह ते मोकळो, परराजनिग्रहनुं पच्चख्खाण, हवे परराजनिग्रहना बे भेद. ते किया ? एक पियारी दीधी, पीयारीअणदीधी परकीयवस्तु आणी आपे ते कोइनी दृष्टि वंची न लीये एटले सवावसो त्रीजा व्रतनो जाणवो, अथ चतुर्थ स्वदारासंतोष परदारा विवर्जनारूप ए मांहे सर्व फलामणी छे, समस्त मैथुनविरमण मनवचनकाया १० स्वदारा परस्त्री ५ वेश्या अपरस्त्रीमांहे बे भेद ते किया ? वेश्याने अपरस्त्री ते मध्ये वेश्यानो नहीं पले, अपरस्त्रीनो

पलसे एव २॥ अपरस्त्रीमाहि बे भेद छे ते किया ? कुमारी अने परणी, अपरस्त्री ते कुमारी नहीं पले. परणीस्त्रीनो पलसे. कुमारी श्या माटे मोकळी ? जे विवाह मल्यो छे परण्या नथी ने ते उपर स्त्रीनो अभिलाष करे ते माटे एटले सवावसो रह्यो "आणंद श्रावकस्य सपादो विशेपाधिक " अथ पांचमे आपणो परिग्रह स्त्रीयादिकनो करी आपणे कार्ये आण्यो होय ए परिग्रहअणुव्रत तिहा समस्तपरिग्रहविरमण २० अभ्यन्तर ने बाह्य परिग्रह विश्वा १० परआत्म एवं ५ स्त्रीपिहर आत्मा एव २॥ स्त्रीआत्मा एव स्त्रीआत्मादत्तआत्मा १। अभ्यन्तर परिग्रह क्रोधमानादिकनो नहीं पले अने बाह्य परिग्रह १० प्रकारनो ते ते पलसे एवं १०. बाह्य परिग्रहमाहि बे भेद ते किया ? एक आत्मपरिग्रह अने परपरिग्रह ते मध्ये आत्मपरिग्रहनो नही पले, परपरिग्रहनो पलसे. एव ५ वली परिग्रहमा बे भेद ते किया ? आत्मनियोग अने स्त्रीपिहरआत्मनियोग अने स्त्रीपिहरआत्मनियोग ते शु कहीए ? जे वाणोतरादिकनो जे गर्व ते आत्मनियोग पलसे अने स्त्रीना पिहरनो जे परिग्रह ते आत्मनियोगनो नहीं पले. एवं २॥ स्त्रीना पिहरनो परिग्रह तेहना बे भेद ते किया ? एक स्त्रीदत्त अने अस्त्रीदत्त एव १। सवावसो थयो इति पचाणुव्रतानि एम श्रावकने ५ अणुव्रते १। सवावसानो होय ते विवरण कर्यु. इति सपूर्ण ।

३०२ प्र०—ससारमा सार शुं ?

उ०—संसार पोतेतो निःसार छे, एटले संसार जे विषय कषायनी परिणति तेमां आत्माने कांइपण सारभूत नथी, अने अधर्म मार्गमां सम्यग्दर्शनरूप धर्म सार छे, तेमां पण सम्यग्ज्ञान सार छे, वळी तेमां पण सम्यक्चारित्र सारभूत छे, तेमां निर्वाणपद जे मोक्ष ते सारभूत छे.

३०३ प्र०—चौदपूर्वी आहारकशरीर केटलीवार करे ?

उ०—गाथा—

चत्तारियवाराओ, चउदसपुव्वी करेइ आहारं ।
संसारंमिवसंतो, एकभवे दुन्निवाराओ ॥ १ ॥

३०४ प्र०—आहारकशरीरनुं जघन्य अने उत्कृष्ट आंतरुं केटलुं ?

समयोजहन्नमंतरं, उक्कोसेणंजावछमासा ॥

उ०—आहारसरीराणं, उक्कोसेणं तु नवसहसा ॥ २ ॥

३०५ प्र०—पांच प्रकारना समकित जिनेश्वरे कया प्ररुप्या छे ?

उ०—खईउ खओवसमीयं, वेयगमुवसामीयं च सासाणा ।
पंचविहं समत्तं, परुवियंजिणवरंदेहि ॥ १ ॥

३०६ प्र०—क्षेत्र अने कालमांथी सूक्ष्म कोण छे.

उ०—सुहुमोयहोइकालो, ततोसुहुमतरहवइखित्ते ।
अंगुसेढीमित्ते, उसप्पिणीओअसंखिज्जा ॥ १ ॥

३०७ प्र०—अभव्य, दुर्भव्य, अने निकटभव्य, ए त्रणने ग्रंथिभेदथी पाछा पाडवामां मुख्य हेतु कोण छे ?

उ०—अनादिमिथ्यात्वनी वासनाए पतितपणुं ते अभव्यने होय तथा विषय लालसाए पतितपणुं दुर्भव्यने होय, कर्मवर्गणामांथी कोइककर्मोदये पतितपणुं निकट

भवीने यथाप्रवृत्तिकरणग्रंथि देश थकी कोइ कर्मना उदये पतित थाय, पण विषयवासनाए के लालसाए नहि, आमा अभव्यने मदता यथाप्रवृत्तिकरणे करी तीव्रभाव एटले उत्साहने पामे, निकटभवीनी मंदता क्षयोपशमभावने पामे.

३०८ प्र०–यथाप्रवृत्तिकरणनो शब्दार्थ कहो.

उ०–यथा एटले जेवा कर्म उदय आवे तेवा, प्रवृत्ति एटले वेदीने खेरवे, करण एटले शुभ परिणामे करी, अर्थात् यथाप्रवृत्तिकरणमा जीव अकाम निर्जराए तथा कषायनी मदताए पूर्वना औदयिककर्मने खपावे, पण नवा रागद्वेषप्रत्ययिक बध न करे, एम यथाप्रवृत्तिकरणमा जीव अकाम निर्जराए तथा कषायनी मद‑ताए पूर्वना औदयिककर्मने खपावे, पण नवा राग‑द्वेष प्रत्ययिक बध न करे एम यथाप्रवृत्तिकरणे तो अभवीजीव पण असंख्यातीवार गठीदेश सुधी आवे, पण ते गंठीने भेदवाना अपूर्वकरणरूपी परिणाम न थाय तेथी पाछो पडे, इहा गंठी ते अनादिरागद्वेषनी निबिडगाठ, जेम कोइ वृक्षना काष्ठप्रमुखनी निबि‑डगाठ भेदी न जाय, तेम आत्मानो पुद्गल उपर तन्मय एकीभावरूप ममता ते ग्रंथि जाणवी. ते अपूर्वकरणपरिणामविशेषे भेद प्रारभे,तेहने अते भेदीने अनिवृत्तिकरण पामे, ए सर्व क्रिया अतर्मुहूर्तनी, त्यार‑पछी मिथ्यात्वनो जाणवो उपशम समकितनु थवु ते अतर्करण एकसमयनो इति ४ करणनो भावार्थ.।

३०९ प्र०–सम्यक्त्वनी प्राप्तिए शु पामे ? शुं समर ?

उ०–समकित पामे थके जीवनो शुद्धोपयोग समर्यो, ते उपयोग समरे जीव समर्यो, जीव समरे योग समर्यो, योग समरे परिणाम समर्या, परिणाम समरे अध्यवसाय समर्या. वळी बीजी रीते कहीए तो जीवत्व समरे शुद्धोपयोग समरे, अने तेथी शुद्ध श्रद्धानरूप समकित पामे, तेथी योग समरे, तेथी व्रतपच्चक्खाणादि रुडी रीते उदय आवे, तेथी परिणाम सारा थाय, तेथी अप्रमत्तता जीवने आवे, अने तेथी जीवना अध्यवसाय समरे, अने शुक्लध्यान प्रगटे, अने तेने योगे क्षपकश्रेणि आरोही कर्मक्षय करी केवळज्ञान पामी मुक्तिपद वरे, एम परिपाटि सुधारा अने वगाडानी उलट पुलट जाणवी.

३१० प्र०–पर्याप्ति अने प्राणमां शुं फेर ?

उ०–भवोत्पत्तिकाले अंतर्मुहूर्तमां जीव जे करे ते पर्याप्ति, पछी जीवे त्यांसुधी सहचारी रहे ते प्राण कहिए, अर्थात् भवभव प्रत्ये उपग्रहण थाय ते पर्याप्ति अने सहचारी भवोपग्राही संबंध ते प्राण जाणवा.

३११ प्र०–परमाणु अने प्रदेशमां शुं विशेष ?

उ०–स्वभाविक ते परमाणु, अने विभाविक ते प्रदेश, जे परमाणु स्कंधने वळग्यो छे त्यांसुधी प्रदेश कहेवाय, छुटो पडे तेने परमाणु कहिए.

३१२ प्र०–श्रीआदीश्वर भगवान सिद्धाचळजी पूर्वनवाणुं वार आव्या तेनी अंक संख्या लखो.

उ०–६९ कोडाकोडी ८५ लाख ने ४४ हजार क्रोडवार आव्या, एने पूर्वनवाणुंवार कहिए.

३१३ प्र०–पांच शरीरनो शब्दार्थ कहो.

उ०–पन्नवणानी टीका मध्ये कह्युं छे, यतः उदारं प्रधानं शरीरमौदारिकं तीर्थंकरगणधरमधिकृत्य तथा उदारसातिरेकयोजनसहस्रमानत्वादौदारिक, वैक्रियंद्विधा भवधारणीय उत्तरवैक्रिय च यदेकंभूत्वा अनेकभवति अनेकंभूत्वा एकंचभवति शेषशरीरापेक्षया बृहत्प्रमाण वैक्रिय ॥ उक्तंच ॥

कज्जंमि समुप्पन्ने, सुयकेवलिणाविसुद्धलद्धिए ।
जंएत्थआहारिज्जइ, भणियंआहारकं तत्तु ॥१॥ अथतैजस
सव्वस्ससिद्धरसाइ, आहारपाकजणगंच ।
तेयगलद्धिनिमित्तं, तेयगं होइ नायव्वं ॥ १ ॥

भुक्ताहारपरिणमनकारणं तैजसम ३। अत्यंतशुभवैक्रियत्वात् इत्याहारक ४। कर्मणाजातकार्मणं कर्मपरिणामच आत्मप्रदेशसहक्षीरनीरवत्, कर्मणो विकारः कार्मणइतिवा, यदुक्तं यतः ॥

कम्मविगारोकम्मण, मट्ठविहचित्त कम्मनिप्पन्नं ।
सव्वेसिं सरीराण, कारणभूयमुणेयव्वं ॥ १ ॥

३१४ प्र०–मिथ्यात्व अने चारित्रमोहनो तात्त्विक अर्थ कहो.

उ०–शुद्धआत्मादि नवतत्त्वने विषे जे विपरीतबुद्धि तेज मिथ्यात्व, निर्विकारी आत्मज्ञानथकी विपरीत प्रवर्तन, अर्थात् वीतरागचारित्रने विषे मुझवण, विकळता ते चारित्र मोह.

३१५ प्र०–रागद्वेष ते कर्मजनित छे के जीवजनित छे

उ०–एकदेशे शुद्धनिश्चयनये ते कर्मजनित छे, अने अशुद्धनिश्चयनये जीवजनित छे, पण वास्तविक रीते

शुद्ध परम अर्थ ग्रहतां वस्तुगते, रागद्वेष ए नथी पुद्गलनो स्वभाव, के नथी जीवनो स्वभाव मूळरूपे, पण ते बंनेना संयोगिकभावथकी एक नवीन वर्ण-शंकर उत्पत्ति छे, तेथीज जे जीव रागद्वेषी छे तेओ वर्णशंकररूप देखाव संसारमां करे छे, अने तेओने बाळलीलावंत भवनाटचने विषे मग्न जोइ रह्या छे.

३१६ प्र०—श्री युगप्रधान आचार्यजी महात्माना चार मुख्य अतिशय कया ?

उ०—१ जेमना वस्त्रमां जू न पडे, २ ज्यां विचरे ते देशनो भंग न थाय, ३ तथा ते देशमां चिंता न उपजे, ४ तेमना पग धोइने पीए तेना सर्व रोग नाश पामे.

३१७ प्र०—उत्सेधांगुल, आत्मांगुल, अने प्रमाणांगुल नो अर्थ कहो, तथा तेणे करी कइ कइ वस्तुओ मपाय छे ते पण कहो.

उ०—१ उत्सेधांगुल एटले स्वदेशे, स्वक्षेत्रे, स्वकाळे पोतानुं जेवडुं शरीर होय तेना प्रमाणनो एकआंगुल जाणवो, तेणे करी शरीरादिक मपाय छे. २ आत्मांगुल ते उत्सेधांगुलथी बमणो जाणवो, अने तेणे करी घर, हाट वगेरे मपाय छे, ३ आत्मांगुलथी हजारगुणो प्रमाणआंगुल जाणवो, तेणे करी पृथ्वी, पर्वत विमानादि मपाय छे.

३१८ प्र०—भावना, अध्यात्म मौनपणुं, मुनि अने सम्यक्त्व तेनो टुंक तात्त्विकशब्दार्थ कहो.

उ०—१ आत्माने ज्ञानादिकेकरी भावीए ते भावना, २ आत्माने अधिकारी करीने जे करीए ते अध्यात्म

३ सत्य यथार्थ जिनवचनानुसार बोलवुं, ते खरु मौन एटले मुनिपणुं जाणवुं. तथा ४ जगततत्त्वने पंचास्तिकायने यथार्थ माने तेने मुनि कहीए, अने जे मुनिपणुं छे तेज खरुं सम्यक्त्व कहिये.

३१९ प्र०—दीक्षाने अयोग्य केवा प्राणीओ कह्या छे.

उ०—१८ प्रकारना पुरुष, २० प्रकारनी स्त्रीओ, तथा १० प्रकारना नपुसक जातिना प्राणीओने दीक्षा आपवाने जिनराजे वर्जन कर्युं छे, तेमा प्रथम १८ प्रकारना पुरुष कया ते कहे छेः—१ बाळ, २ वृद्ध, ३ क्लीव ते नपुसक, ४ जड ते मूर्ख, ५ रोगिष्ट, ६ चोर, ७ राजानो अपराधी, ८ उन्मत्त, ९ अंध, १० दास एटले कोइनो गोलो प्रमुख, ११ दुष्ट कषायवत एटले अत्यंतक्रोधी मानी वगेर, १२ मूढ ते मोहमयी, १३ करजदार, १४ हीनजातिवत, १५ स्त्रियादिक कोइपण गूढस्वार्थरागवंत, १६ भिक्षुक मागीखानार निर्लज्ज प्रमुख, १७ चोरीने के भरमावीने के अन्य कोईपण अयोग्य प्रकार मेळवेला शिष्यने, १८ हीनसत्त्ववत ते बीकण प्रमुख, ए रीते ए अढारदोषवंत पुरुष तथा १९ गर्भवती स्त्री, तथा २० स्तनपान करनार बाळकवत स्त्री ते धावप्रमुखस्त्री एम ए बे युक्त वीशदोषवत स्त्री जातिना प्राणीओ दीक्षाने अयोग्य कह्या छे, वळी एज रीते दशप्रकारना नपुसक पण ग्रथातरथी जाणी लेवा

३२० प्र०—कोइ जे अल्पससारी छे ते कया लक्षणथी जाणीये.

उ०—अल्पआहार, अल्पनिद्रा, अल्पआरभ, तथा अल्पकषाय होय ते नियमा अल्पससारी जाणीये.

३२१ प्र०–साम, दाम, भेद अने दंड ए चार नीतिनो टुंक शब्दार्थ कहो.

उ०–१. साम ते प्रेमवाळुं मधुर वचन, २ दाम ते दंड आपीने झघडो मटाडवो संतोषवो ते; ३ भेद ते शत्रुवर्गमां कोइ छळभेदकरी लांच रुशवतादिके पुरुषोने फोडी शत्रुनी अंदरने अंदर फाटफुट पडाववी ते, अथवा एकपक्षनी सामे बीजापक्षनी तरफेण करीने भेद पडाववो ते; ४ दंड पूर्वोक्त त्रणथी न माने तो छेवटे युद्धादि करी शिक्षा आपवी ते.

३२२ प्र०–आजकाल कोइने पण सम्यक्त्वगुण प्रगट्यो छे, तेनी कोइ पण शीघ्र जणाय एवी कोइ परीक्षा रीति छे. तेनी खात्री शी रीते करी शकाय ?

उ०–वीतरागपरमात्मा श्रीअरिहंत जिनेश्वरदेवनुं नाम सांभळतां जे जीवने रोमांच खडा थाय, तीव्र शोकावस्थामां पण जेमनुं गुण स्वरूप सांभळतां, मुद्रा नीहाळतां तमाम शोक दुःख पीडादि भूली जइने अंतरंग अने बहार अत्यंत हर्षोल्लास प्रगटे, ए परमात्मा उपर परिणतिनुं शीघ्र परखाय एवुं खास लक्षण चिह्न छे.

इति श्रीविचाररत्नसारग्रन्थसिद्धान्तना प्रश्नः ।

पं. श्री देवचन्द्रजीकृत प्रश्न समाप्तम् ॥

श्नेयं भूयात् संवत् १८७५ ना वर्षे माहसुदि २ दिने बुधवारे लि. पं. श्रीरूपचन्द्रजीगणि तच्छिष्य रत्नचन्द्रेण श्रीमत्खरतरगच्छे भट्टारकक्षेमशाखायां श्रीअहमदावादे घांचीनीपोल मध्ये श्रीसंभवनाथप्रसादात् लिपीचक्रे अधिकहीननामिथ्यादुष्कृतम् ॥ ग्रन्थांकं २५२७ ॥

श्री देवचंद्रजीकृत छूटक प्रश्नोत्तर ग्रन्थः



॥ अथ छुटक प्रश्नोत्तर लिख्यते ॥ श्री खरतरगच्छे प. प्र. महाराज श्रीदेवचद्रजीने श्रावके प्रश्न कर्या तेना उत्तर दिधा ते प्रश्नोत्तर अमोए देवचद्रजी महाराजनी चोपडीमांहे दीठा ते लख्या छे. राधनपुरना सत्रे प्रश्न पूछयु जे श्रावक सूत्र वांचे अथवा न वांचे ? तेहनो उत्तर=आगम रीते जे छे ते लिखीए छीए, जे सूत्र नंदीसूत्रमध्ये जेटलाना नाम छे तथा ठाणगे पण सूत्र ४ ना नाम छे. ए सूत्रम ये श्री ८९ योगनी विधि श्री अनुयोगद्वारचूर्णिमध्ये छे तेहथी मीळज्यो. तथा अनुयोगद्वारसूत्र म ये सूत्र भणवानी विधिना बोल छे. ते चूर्णीम ये ए अधिकार छे. तथा योगवही सूत्र भणवा ए परममार्ग छे. श्रीउत्तरा यपन सूत्रे कह्यो छे ॥ गाथा ॥

सव्वगुरूकुलेनिचे, जोगवहउवहाणव ।
पीयंकरे पीयवाई, चेसिखं लद्दुमरिहइ ॥१॥

इहा योगवंत उपधानवत ते शीखवा योग्य छे. तथा श्रीठाणागे " तिर्हिठाणेर्हिसपन्नेअणगार अणाइयं अणवदग्गदीहमद्ध चाउरतससारकतारविइवएज्झा त. अणिदाणयाए, दिठि सपन्नयाए, जोगवाहियाए " इहा जोग वहेवाना अक्षर छे केइक दुर्मतिजीव इहा योगशब्दे मनवचनकायाना योग कहे, तेहने कहीए जे मनवचनकाया विना सक्षी जीव कोण छे ? तो योगवाही ए पद किम उपजे ? तथा शुभयोगपणे ते शुभपद

तो सूत्रमध्ये दीसतो नथी. तथा ठाणांगसूत्रमें दशमेठाणांगे कह्युं छे. " दसहिं ठाणेहिं जीवा आगमेसिभद्दत्ताएकम्मं पगरेंति तं. अनिदाणयाए, दिठीसंपन्नयाए, योगवाहीययाए, खंतीखमणयाए, जीइंदियाए, अमाइल्लयाए, अपासत्थयाए, सुसामन्नयाए, पवयणवछ्लयाए, पवयणउज्झावणयाए तथा उत्तराध्ययने पण कह्युं छे.

नीयावत्तीअचवले, अमाइ अकुतूहले ।
विणीय विणएदंते, जोगवं उवहाणवं ॥ १ ॥

इत्यादि वचन अनेक छे. बत्तीसयोगसंग्रहमध्ये पिणसूत्र भणवानो मनोरथ कह्यो नथी. तथा सर्व सूत्रे श्रावक लद्धट्ठा कह्या छे, पण आचारांगादिकसूत्रना पारगामी किहांइं कह्या नथी. तथा उत्तराध्ययने १३ मा अध्ययनमांहे गाथा छे. जे ॥

महत्थरूवा वयणप्पभूआ, गाहाणुगीयानरसंघमज्झे ।
जं भिरकुणो सीलगुणोववेया,इहज्जयंतेसमणोम्हिजाओ

ए गाथामे कह्यो. एहवी गुणवंत गाथा ते भिक्षु भणे, ते माटे हुं पिण श्रमण थयो. इहां पण सूत्र भणवाना अधिकारी मुनि दीसे छे, तथा सुगडांगे १४ मा अध्ययने कह्यो छे.

गंथं विहाय इहसिखमाणा, उठायसुबंभचेरे वसिज्जा ।
उवयकाराविणुयंसिरके, जे छेएवि पमायंनकुज्जा ॥१॥

ए गाथाए पण ग्रंथ छे ते मुनि योग्य छे इंम छे. इंम अनेक सूत्रे पाठ छे. तथा समवायांग सूत्रे " सेणंअंगट्ठायाएपढमे

अंगेट्ठोसुअखंधापणवीसं अज्झयणापंचासी उदेसणकाला, पचासीसमुदेसणकाला," इम सर्व आगमनाउद्देशानाकालग्रहण कह्या छे. ते पिण कालग्रहण ते जोगवहे थाय, ते माटे योग वह्या विना सूत्र भण्या नथी कह्या. इम नदी तथा भगवतीसूत्र मध्ये पाठ छे तथा व्यवहारसूत्रे सर्व आगमना भणवानो पर्याय कह्यो छे. दीक्षाथी वीस वरस पर्याय सर्व आगम भणे, तथा निशीथ सूत्रमाहे कह्यो छे " जेभिरवु अणत्थियवागारत्थिय वा वाएइय तसाइज्जइ तस्सचाउम्मासीयपरिहारठाण " इहा जे गृहस्थने वाचना दे अथवा ग्रहस्थने वाचता अनुमोदन करे तेहने च्यार मासनो पात्योचारित्र जाय. इत्यादि प्रगटाक्षर छे, ते माटे गृहस्थने सूत्र भणवो वाचवो नहीं. तथा प्रश्नव्याकरण सूत्रे कह्यो छे " तं सव्वं भगव तित्थगरसुभासिअ दसविह चउदसपुव्वेह पाहुडत्थपवेदिअ महारिसीणसमप्पदिन देविदनरिंदाण भासीअत्थ " इहा पण साधुने सूत्र दीधो. अर्थ देविंद्रनरिंद्रने दीधो. तथा कोइ कहसे जे सुबुद्धीमत्रीये च्यार महाव्रतरूपधर्म कह्यो ते माटे अम्हे कहु छु, तेतो सुबुद्धीमत्रीये व्रतरूप उपदेश कह्यो, पण अंगादिक वाच्या नथी. ज्ञातासूत्रे सुबुद्धीमत्रीने अधिकार दीक्षा लीधा पछे आचारागादि भण्या, जो गृहस्थपणे आचारागादि भण्या होत तो दीक्षा लीधा पछे स्याने भणे ? ते विचारज्यो. तथा वली कोइक कहस्ये जे श्रावक सुअपरिग्गहिआ कह्या छे तेतो फक्त शब्दे आवश्यकादिक तथा अर्थनोधारण ते पिणश्रुत छे. ते माटे सुअपरिग्गहिआ कह्या छे. शुभज्ञानी समकिती देशविरतीने कह्या छे, आचारांगादि सूत्रनी ना छे तथा ठाणगे तो " अवायणिज्जापन्नचा तजहा अविणीए, विगयपडिबद्धे अवुसिआ पाहुडे, विगयपडिबद्धेनो अर्थ

ठाणंगे टीकामे उपधानतप विना विगयप्रतिबद्ध ते अवाचनीक छे. ते माटे योग उपधानवंतने सूत्र भणवा कह्या छे. तथा कोइक कहेस्ये जे यतिलिंगे योगवह्या विना सूत्र वांचे छे, ते किम वांचे छे ? तेहनो उत्तर जे योगवह्या विना जे सूत्र वांचे तेहने अरिहंत आणानी विराधना छे. जो पोताने छंदो करे तेने कोण कहे ? पण जो पोताने तथा श्रोताने लाभना अर्थ होय ते तो आज्ञा प्रमाणे वर्ते. श्रीअनुयोगद्वार टीकाए जे अविधिकरी सूत्र वांचे ते पोते ज्ञानावरणीयकर्म चीकणो करे छे, अने जे सांभले छे ते दर्शनावरणीय कर्म चीकणो करे छे. तथा साठिसो प्रकरणे कह्यो.

उस्सुत्तभासगाणं, बोहीनासोअणंतसंसारो ।
पाणच्चएवि धीरा, उस्सुत्तं तं न भासंति ॥ १ ॥

इमजाणी उत्सूत्र न बोलवो तथा जीतव्यवहारे सर्वने योगवहीनेज सिद्धांत भणवा एहनी हुंडी तथा हीरप्रश्न तथा विधिप्रपाप्रमुख अनेकग्रंथे अधिकार छे. इहां कोइक धन्नोअणगार, वेरस्वामी प्रमुखनो दृष्टांत देइने कुयुक्ति करे ते पोताना आत्माने अहित करे छे. धन्नोअणगारप्रमुख आगम व्यवहारे छे, तेहने जीतनो निर्धार नही, पण हवणां तो जीतनो व्यवहार छे, ते माटे योगवही सिद्धांत वांचे तेपिण नय प्रमाण सप्तभंगी निक्षेपा तथा द्रव्यभाव तथा निमित्तउपादान उत्सर्ग अपवादना जाण हुवे, ते प्रश्नव्याकरणमे बोल कह्या तेहनो जाण हवे, ए सिद्धांतनो उपदेश करे ए मार्ग छे. मुख्यपणे अर्थना कथकआचार्य, सूत्रना दायक उपाध्याय गुणवंतने आज्ञा छे. बीजा

साधुने पिण उपदेश देवानी मर्यादारीति नथी, तो गृहस्थलिंगे उपदेश करे ते किम पालवे ? घणुं स्युं लखीई ? आगमगंभीरमुखे मिल्या अनेकअर्थ कहेवाये, इंम सीछज्यो.

तथा कडुकमती कहे छे जे पोरसी प्रमुखपच्चक्खाणे जो पहोरथी वधतो काल थाय तो दोष छे, तेहनो उत्तर जे पच्चक्खाणनी शुद्धि ६ कही तिहां तीरीयसमदायकालं ए पाठ आवश्यकनिर्युक्ति, प्रवचनसारोद्धार, पच्चखाणभाष्यने विषे छे. वली भगवती टीकामध्ये खंदाधिकारे तीरइतिपूर्णेपि भवद्गो स्तोककालावस्थानात ए पाठ छे.

तथा केइक गच्छना चउसठ अठम तपने अधिकारे आगल पाछल बे एकासणा करे, तेवारे चउत्थादिक तप थाय, ते माटे अनेक कुयुक्ति करे छे, तेहनो उत्तर श्रीभगवती टीकामध्ये खंदाधिकारे चउत्थचउत्थेणं विचतुर्थभक्तयावद्भक्तंत्यज्यते यत्रच-तुर्थमियंचोपवासस्यसंज्ञाएव षष्ठादिकमुपवासद्वयादेरिति

तथा केइक संडासा पूजवो मानता नथी. तिहां श्रीभगवती-सूत्र टीकामध्ये एवंनिसीइयवति निषितव्य उ रेष्टव्य सदसकभू-मिप्रमार्जनादिन्यायेनेत्यर्थ

तथा श्रीनवानगरना सर्वे मह० अमरचंदशेठ जादवजी सा मदन मह० रायचंद भं० डोसा मह० भीम मह० माहवीजे प्रमुखे नवानगरथी पूछाव्या तेहनो आगमशाखे उत्तर लीखीइ छे प्रश्न पुछयु जे देवता शय्यामे उपजे ते देवतानो मूलगो शरीर शय्यामे रहे के न रहे ? तेहनो उत्तर जे देवता शय्यामे उपन्या पछी रहे नही. देवता देवलोक मध्ये जे कार्य करे ते मूलगे रूपे करे छे. तिहां श्रीरायपसेणिसूत्रे कयु छे. "तयाणसेमुरीयाभेदेव तेसि सरिसा-

ववगाणंदेवाणं अंतीएएयमठंसोचा निसम्महट्ठतुठेजाव सणिआउ अब्भुठेइ अब्भुठियत्ता उववायसभाए पुरिच्छिमिल्लेण दारेणं निग्गछेइ जेणेवदारे तेणेवउवागच्छति हरयंअणुप्पदाहिणीकरेमाणे पुरिखिमिलेणं तोरणेणं अणुप्पविसति” इत्यादि पाठे नवावैक्रिय कर्या विना सर्व पाठ छे, ते माटे शय्यामध्ये कोइ देवतानो शरीर न रहे तो शय्या खाली रहे छे, ए पाठ जीवाभिगम मध्ये विजयदेवाधिकारे छे. तथा भगवतीसूत्रे चमरोत्पातअधिकारे सौधर्मेंद्रे वज्र मुक्या पछी श्रीवीरनी आसातना जाणी तेवारे वज्रने लेवा माटे उत्तरवैक्रिय अणकरे पडतो मुक्यो, इहां पण उत्तरवैक्रियनो पाठ नथी तेमाटे देवलोकमध्ये मूलगेरूपेज प्रवर्त्ते पण उत्पात शय्यामध्ये मूलगोरूप रहे ए पाठ कीहांइ नथी.

तथा बीजे प्रश्ने संगमाने देवलोकथी मूलगेशरीरे काढयो छे जेसंगमानी देवांगनाए इंद्र आगल विनती करी जे अम्हने सी आज्ञा छे? तेवारे इंद्रे कह्युं जे तुंम्हे मेरु जावो अने वली पाछा इहां सुखे आवज्यो, पिण संगमाने देवलोकमध्ये आणस्यो मा, इंणेकरी जाणीये छे जे ते मूलगो शरीर तिहां रह्यो हवे तो देवांगनाने स्याने जावो पडे, तेमाटे मूलगा शरीरे काढयो छे. ए कल्पकिरणावलिमध्ये अधिकार छे.

तथा केवलीसमुद्घात जे केवलीने छ मासनो शेष आउखो हवे ए अवसरे केवलज्ञान उपजे. ते नियमा समुद्घात करे, तेहथी अधिक आउखा वाला केवलीने समुद्घातनी भजना छे. करे अथवा न करे ए अधिकारपन्नवणा टीका तथा गुणस्थानक्रमारोह टीका मध्ये छे. ॥ ३ ॥

तथा पुप्प परोववानो पाठ पंचासकमध्ये तथा हीरप्रश्न मध्ये

प्रगट छे तेपण तुम्हे जोज्यो तथा विचरता तीर्थंकरने फूले पूजे एहमे शंका आणे तेहनी बुद्धिनो दोष छे, उववाइमध्ये अप्पेगरयापूयणवत्तीया ए वचन छे ते ए पदनी टीका पूजनं-पुप्फमालादिना ए अर्थ कह्यो छे, अभयदेवसूरिकृत टीकामध्ये पाठ दीसे छे.

तीर्थंकर सचित्तने अडके नहीं ईम कहे तेपण समझता नथी. केवलीना पगथी तीतरनां बचा कुकडाना बचां पारेवानां बचा मरे तोपण सपरायकीकिरिया न लागे, ए पाठ भगवतीसूत्र-मध्ये प्रगट छे ते जोजो. तो भक्तो फूल चढावे ते मध्ये स्यो दोष छे ?

तथा बुचे पाणी पीता अरवो पाणी कलसीयामे रहे ए मध्ये समूर्छिम उपजवानो तत दीसतो नथी पन्नवणा टीकाने आसयेईम जणाय छे पिण ए चाल करवो नहीजी.

तथा राते तो अपकायजीवनी तमसकायथी वृष्टि थाय छे, ते अगासे थाए एतो निरधार दीसे छे, अने ते वृष्टिमें बीजा जीव तो जाण्या नथी अने किहांइक ग्रंथे अन्यजाति मध्ये उपजता पण कह्या छे. योगशास्त्र टीकामे ए चरचा लिखी छे, ते माटे उपजता पिण जणाय छे, शीतस्पर्शने योगे रसीया उपजवानी हा दीसे तो छे पिण घणोकाल गये योनिपलटे उपने, परभाते रविकिरण उजडे ते हणाय छे ए जाणवो, पिण आगमरीते तमसकायिया ठरे छे

तथा आहारकशरीर कर प्रदेशनीछेभागे जे दिशे केव-लीने निर्धार ते दिशे नीकले छे, दसमाद्वारनो कांइ प्रयोजन नथी किहांइ पाठ पण नथी अने मुख्यपणे हृदय प्रमुख आगला

प्रदेशथी निकले छे इम अधिकार छे ए अधिकार चरितानुवाद मध्ये छे अने कर्मग्रंथना आशयथी पिण इम जणाय छे.

तथा महीयपुइए ए पाठनो अर्थ नंदीटीकामें नथी ते नंदीटीका तो अम्ह पासे नथी पण अनुयोगद्वार आवश्यक वृत्तिमध्ये ए पाठना अर्थ कह्या छे. तेहथी जाण्या छे. नंदी टीका मध्ये वीजो कोइ अर्थ लीख्यो नथी सुगम माटे स्युंलीखे ए रीते धारज्यो.

तथा अष्टापदना चैत्यनो तथा बिंब भराव्यानो अधिकार आवश्यकनिर्युक्तिमध्ये तथा बावीसहजारीमध्ये छे तथा भगवती टीकामध्ये विरपरचीयो सिगोयमा ए आलावामें अधिकार छे.

तथा चक्रवर्तिने कोइकने मिथ्यात्वगुणठाणो छे अने भरतादिक जीवोने चोथो छे वली परिणाम वधे तो मुनिपणो सातमो तथा छठो गुणठाणो थाय पण पांचमो फरसे नही ए अधिकार पदवीना लाभना अधिकार पन्नवणाटीकाप्रमुखे ते वली अवसरे संभारवुंजी.

पलाल्याधानमध्ये अनंताजीव उपजे ते ए प्रत्येक छे तेम मध्ये साधारण किम उपजे तथा" सव्वोकिंसलयखलुउगवमाणोअ-णंत उ भणीओ" इहां पहिला अनंतकाय छे ते मध्ये पछी प्रत्येक उपजे इंम पिण छे तेहनो उत्तर जे मनुषणीना शरीरे योनि मध्ये असंख्यातासमूर्छिमनीयोनिचल्छ छे पिण अवसरे गर्भज जीव पण उपजे छे ते माटे अन्यनी योनिपणो थाय छे. सुगडांगसूत्रे पृथवीप्रमुख स्थावरमध्ये अपप्रमुख स्थावर तथा समूर्छिमनी योनि कही छेजी.

तथा साधुजीने चोथे कर्मग्रथ म ये भगवती २५ मे शतके लेश्या छ दीसे छे ते माटे तेजससमुद्‌घाते परने वाल्वाने तेजो लेश्या मूके ते काले कृष्णलेश्या पण हवे बीजी पिण हवे जां सीम शासनकामे कर ता सीम प्रशस्त लेश्या हवे पछी परिणाम पलटे अप्रशस्तपणे परिणमे तो अप्रशस्त लेश्या पिण हवे इम धारवोजी. ए प्रश्ननी शाखतो पुस्तकथी जोइ लेजो.

नवानगरना श्रावक भणसाली डोसाए प्रश्न पूछया तेना उत्तर लख्या छे'—समवसरणम ये फूलनी वृष्टि थाय छे ते उपर साधुजी किम चाले छे तेहनो उत्तर तंदुलवेयाली पयन्नानी टीका मध्ये लिख्या छे. ते कोइक आचार्य कहे छे जेविन्ने मारग रहे छे. जिम वाडी मध्ये जेम क्यारी कर छे तिम मारग रहे छे. पिण ए उत्तर पचागीने लेखे ठहरतो नथी ते वली एहज टीका मध्ये कह्यो छे जे फूल तो सर्वत्र व्यापीने वृष्टि करी छे ते उपर साधु चाले छे तिहा ते टीका म ये पूछयु छे. जे फूलने किलामना उपजे के न उपजे ? तिहां इम उत्तर छे, जे कोइक समवसरणे देवना विकुर्व्या फूल कर से तो अचित्त छे अने समवायागने पाठे सचित्त फूल छे पण देवताने सामर्थे वेदना थाती नथी तथा कदापि थाय तो पण साधुजीने प्राणातिपातकी क्रिया न लागे तथा जिन-भक्ते हिंसानो वध न थाय इम जाणवो, गुरु सादमा सूत्र सुण्याना फल उत्तरा यपन म ये कह्यो छे, ते श्रीअरिहंत विचरता ते गुरतत्त्वमध्ये छे उपदेशक माटे तथा वली पूछयो जे समवसरण उपाडे तेवार फूलनो किम थाय छे ? तेहनो उत्तर जे फूल सचित्त छे तेतो कमलाय एटले तेना विरंगी

नाखे छे, अने प्रभु विहार पछी पण विखेरी नाखे छे. तथा फूल समोसरणमांहे सचित्तनी मुख्यता छे इंम जाणजोजी. तथा तीजो प्रश्न पूछयो जे प्रभुनी माताए सरोवर दीठो ते किहां छे, ते कल्पनी टीकामध्ये तथा जंबूदीवपन्नत्तिनी अपेक्षाये तो चुलहेमवंत उपर पद्मद्रह ते जणाय छेजी. जेम कमलप्रमाण ए रीतनो सर्व वर्णव्यो छेजी. तथा पांचमे प्रश्ने जे व्यवहार रासी मध्ये जेटला जीव मोक्ष जाय तेटला अव्यवहारीनिगोदमांथी नीकले ए पाठ छे तेहना उत्तर माटे लिखीये छे जे अव्यवहारीनिगोदमध्ये पिण भव्य तथा अभव्य वे जीव छे. व्यवहारराशिमध्ये पिण भव्य अभव्य वे जातिना जीव छे. ते मध्ये भुवनभानुकेवली चरित्रे भवभावनीटीका तथा उपमितिभवप्रपंचमध्ये अनादिनिगोदथी अभव्य नीकली व्यवहारराशिमध्ये आवे छे ए प्रगट अक्षर छे. ते माटे इहां पूछस्ये जे भव्यजीव तो व्यवहारराशिमांथी अवसरं मोक्ष जाय छे, तिणे वधे नही. पिण अभव्य जे व्यवहारीया थया ते तो व्यवहारराशिमध्ये छता पांमीये. तेहनो उत्तर जे घणो काल तो भव्य नीकले छे अने कोइक वेला १० जीव मोक्ष जाय तेवारे अव्यवहारीनिगोदथी १० जीव नीकले ९ भव्य १ अभव्य इंम पण निकले छे. केइक कहस्ये जे ए रीते करतां व्यवहारराशि वधती जणाय छे. तेहनो उत्तर जे मूल तो इंम वधे नहीं कदापि कोइ वेला उपजे तो पिण अल्प माटे गिण्या नथी. तथा ॥

सिज्झंतिजित्तीयाकिर, गुणयोगेणंविवहाररासीओ ।
एइतितित्तियाकिर, अणाइनिगोयरासीओ ॥ १ ॥

इहा सख्यानो नियम कह्यो छे पण भव्य अभव्य नियम नथी ते माटे पचागीनी रीते इंम जणाय छे पछी तो श्री केवलीना जाण्यामे हुवे ते प्रमाण छेजी. तथा समवसरण मध्ये फूलनी दृष्टि थाय छे ते सचित्तफूलनी छे. श्री यशोविजय उपाध्यायजी प्रतिमाशतकमध्ये पण ए घणो चर्च्यो छेजी इंम सद्दहवो. जे कारणे प्रशस्तमार्ग जे करे ते मध्ये आस्रव नथी ए सूत्रनी परिपाटी छेजी कोइक प्रगटाक्षरमार्ग तो उत्तरा ध्ययन सूत्रे मृगी पुत्रा ध्ययने कह्यो छे

अपसत्थेहिदारेहि, सव्वओपिहीयासवो ।

अज्जप्पज्झाणजोगेहि, पसत्थदमसासणो ॥ १ ॥

इत्यादिक अनेकआचारादिसूत्रे घणा पाठ छे ते जोइ लेजो. तथा प. ज्ञानकुसलनो प्रश्न जे सूत्रे द्रव्य छ कह्या छे. तथा विशेषावश्यक मध्ये पांचज द्रव्य कथा छे. तेहनो स्वरुप लिखीये छे. जे वस्तुगते विचारता कालनो वस्तुपणो पिंडरुप द्रव्यपणो नथी. ते माटे अस्तिकायपणो नथी. अस्तिकायपणो बहुप्रदेश मिले बहुपरमाणु मिले थाये ते कालने नथी. को-इक कालना रणु असख्याता माने छे. लोकाकाशप्रदेशप्रमाण माने छे पिण ए वात प्रमाण नथी. जे रणुआमान्या अ-स्तिकायपणो थाय कदापि रणुआने भिन्नद्रव्य मानीये तो का-लद्रव्य असंख्याता थाये. अने सूत्रे कालद्रव्य अनतो मान्यो छे ते माटे रणुआनो मानवो तो सभव नहीं. तथा सूत्र परपाटीये श्रीजीवाभिगमसूत्रे पण इम दिसे छे." जे किम-यमंतेकालोत्तिवुचइ गोयमा जीवाचेव अजीवाचेव" एटले जीव

अजीवनी वर्त्तनारूपलक्षण कांइक पर्याय वर्त्तना ते काल जाणवो. ए सूत्र वचन छे. तथा उत्तराध्ययने २८ अध्ययने" अनंताणिय दव्वाणिकालो पुग्गलजंतवो" ए पाठ छे ए माटे कालद्रव्य अनंता कह्या ते जीवअजीवद्रव्य अनंतानी जुदी जुदी वर्त्तना तेहने कालद्रव्य मानीने अनंतद्रव्य कह्या छे ते माटे कालद्रव्य छठो वस्तुगते जुदो नथी. अने पर्याय ते वस्तुनो आरोप करीये तो एहने द्रव्यपणे कहीये. जिम घटद्रव्य ते घट छे. ते पुद्गलनो बंध छे. ते विभाग पर्याय छे ते पिण उपचारे द्रव्य कहीए छे. तिम ए पिण जाणवो. तथा कोइ पूछे जे काल ए छतो छे के अछतो छे? उत्तर—जे कालवर्त्तनारूप पर्याय पंचास्तिकायमध्ये छतो छे, पण पंचास्तिकायथी भिन्न नथी, ते माटे इम कहेवो. अने जे भगवतीसूत्रे छठो कालद्रव्य छे ते अढीद्वीपप्रमाण ज्योतिश्चक्रने वारे जे व्यवहारकाल तेहने कालपणे मानीने ए वचन कयो छे. ते माटे व्यवहारनये छ कहीजे, निश्चयनये तो पंचास्तिकाय छे. तथा तत्त्वार्थटीका मध्ये कयुं छे जे द्रव्यास्तिकायनयने गवेषीये तो पर्यायास्तिकायने द्रव्य मानीये तेवारे कालद्रव्य कहीये, तेमाटे ए श्रद्धा राखवी. तथा सिद्धांतना आलावा तथा द्रव्यानुयोगनीपरिणति सर्व इम ठरे छे. तथा धर्मसंग्रहणीमध्ये बे मत कह्या छे. तत्त्वार्थकारे पिण" सोऽनंतसमय" ए सूत्रसद्दहवो ते काल छ द्रव्य अनंतसमय रूप छे इम कयो तथा श्री हेमाचार्ये पिण कालना रेणुक कह्या ते पाठ जो जो ॥

लोकाशप्रदेशस्याभिन्नाः कालाणवस्तुयेभावानां ।
परिवर्त्तापिमुख्यः कालःउच्यते ॥ १ ॥ (?)

इम पाठ छे पण मूलद्रव्यानुयोगमध्ये नजर देतां तथा जीवाभिगम अनुयोगद्वारसूत्र तथा पन्नवणा भगवतीना अल्प बहुत्व विचारता कालद्रव्य जूदो नथी पचास्तिकायनी वर्त्तना छे, तिहा कोइ पूछस्ये जे जेवारे पंचास्तिकायनीवर्त्तनाने काल मानीये तेवारे कालने एकलो अरूपीपणो ठहरे नहि, जे पुद्गलास्तिकायनी वर्त्तना रूपी जोईये, तेहनो उत्तर जे पुद्गलनी वर्त्तना मुख्यपणे रूपी सभवे, पिण वर्त्तना ते पिंड नही, वर्णादिक तथा अगुरुलघुनो पलटण उत्पादव्ययरूप छे, ते व्यक्तअवस्था थाये नही, तेमाटे अरूपीज बहु यतिये गिण्यो, तथा कोइक पूछस्ये जे काल जेवारे जीवनी वर्त्तना गवेषीये तेवारे कालने चेतनपणो आवशे, तेने कहे छे जे जेवार पर्यास्तिकनयनी भेद व्याख्या करे तेवारे चारित्रादिक गुणमध्ये ज्ञानगुणनी नास्ति कहीइ, जे सर्वगुणस्वरूप अस्ति छे, परस्पे नास्ति छे, तो वर्त्तनापर्यायने चेतनपणो किम कहवाये ? तेमाटे कालद्रव्यने पिण अचेतनज कह्यो, इम कालने उपचार निक्षेपा द्रव्यादिक च्यार गुण पर्याय सर्व कहेवा, पिण मूलव्याख्याये काल ते पचास्तिकायनी वर्त्तना छे. सूत्र तथा निर्युक्ति तथा भाष्यकार सर्व गीतार्थ तथा गणधर सर्वेनी एहिज व्याख्या छेजी, तथा पुछे जे द्रव्य छ छे के पाच छे ? ते जीवाभिगमसूत्रे नो द्रव्य पाच कह्या छे अने भगवतीप्रमुखमये द्रव्य ६ कह्या छे, पिण सूत्रना वचन विरोधी हुवेज नही तेहनो परमार्थ धारवो, पण जिहा उत्तराध्ययन, भगवती तथा टीकाप्रमुख सर्वत्र जिहा ६ द्रव्य एहनो पाठ तिहा नियमापचास्तिकायनी वर्त्तना तेहने उपचार भिन्न व्याख्याये भिन्न द्रव्य कह्यो, ते सर्वत्र उपचार जाणज्यो, तथा कोइक कहस्ये जे एहनी साख किहा छे ? तेहने कहीये

जे जीवाभिगम तथा महाभाष्यथी बधती साख कोनी मागो छो? वली पूछस्ये जे एटले ठेकाणे ६ द्रव्य कह्या छे तो पांच किम मनाय? तेहने कहीये जे जीवाभिगम तथा भाष्यकारे ते ए अक्षर सर्व जाण्या हता तेहथी अजाण्या नहीं. अनुयोगद्वारं अनादिसिद्ध कह्या ते पण ए उपयोगेज कह्या छे, तथा वाच्यवाचकभावे कालनो नियम जूदो कह्यो छे तेमाटे द्रव्य जूदो वाच्यमां संभववो घटे छे, तेहने उत्तर–संवरतत्त्वेवाचक नाम जूदो कह्यो छे, तेहनो वाच्यज्ञान चारित्रादिक पण छे, तेमाटे संवरपदार्थ कह्यो. पण संवर ते जीवनी परिणति छे पण पिंडपणे जीवथी संवर जूदो नहीं. तथा वली कहेस्ये जे संवरने द्रव्य कह्यो नथी, पण द्रव्यथी प्राणातिपातादिक कह्या. तथा प्राणातिपातादिविरमण पण द्रव्यभाव आगम मध्ये कह्या. तेमाटे ए सर्वथी कांई द्रव्य जूदो थाय नहीं. तथा कोइक पूछस्ये जे ए ५ समान छठो द्रव्य कह्यो, तिहां उत्तर जे पंचमहाव्रत भेलो छठो रात्रीभोजनव्रत कह्यो, पिण अपेक्षाए कह्यो, तेमाटे रात्रीभोजन कांइ मूलगुण महाव्रतरूप न थाये. सर्व गुण, सर्व पर्याय, सर्व परिणाम, सर्व वाच्यवाचकभाव, संयुक्त छे. तेमाटे भिन्नपिंडी द्रव्यपणो न पामे अने पर्यायने द्रव्य कहीये एहवे नये पिण जैन बोले, ए दीक्षा लेवा माटे कालने छठो द्रव्य कह्यो ते रीते कहीये, यावत्मात्र अभिलाप्यभाव होवे ते वाच्यवाचकभाव संयुक्तज होवे, तेमाटे द्रव्यपणो न पांमे, जिम धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायनो देशपणो तथा पुद्गलास्तिकायनो देशपणो कदापि खंधथी जूदो नथी; अने अजीवना भेद करतां जूदो कह्यो, तेमाटे ते रीते एपण मानज्यो. प्रवचनसारोद्धारमध्ये तथा पंचकारणमध्ये जे वसंतादिकना

ऋतुस्वभावादि वोल्या, ए सर्व व्यवहारनय तथा आदित्यादिगति परिछित्तिरूप बाह्यकाल लेइने वोल्या छे, ते परमार्थे नथी ते श्रीभगवतीसूत्रे प्रश्न छे. जे केटलीक वनस्पति उष्णकाले फले ते स्वामि कीम छे ? तेवारे श्रीवीतराग कहे छे ए जीवने उष्ण फरसी पुद्गलनो आहार घणो लेवराय छे, तेमाटे उनाले फले छे. तिहां जीवनो उदीतकर्मकारण छे, पिण एकांत कालनी मुख्यता नथी. वली काल अपरिणामी अकर्त्ताद्रव्य छे ते स्याने परम ये परिणमे, स्याने परकार्य कर ? तेमाटे वृक्षादिकनो जीव पुद्गलद्रव्य छे, तेमाटे ते फलजीव पुद्गल मध्ये एहनी वर्त्तना मान्यांज सर्व समो पडे, पिण भिन्नद्रव्य मान्या कांइ समो पडे नहीं. वली कोइक पूछस्ये जे धर्मास्तिकायपण अपरिणामी, अक्रिय, अकर्त्ताद्रव्य छे, ते किम चलणसहायी थाय छे ? तेहनो उत्तर जे गतिपरिणामी जीवद्रव्य तथा पुद्गल द्रव्यने सहायी थाय छे, पिण ते धर्मास्तिकायरूप छे. अने काल ते अस्तिकाय नथी. तथा भावप्रकरणे "कालोऽतिकलन काल एव द्विधा वर्त्तना लक्षणः ॥१॥ समयावलिकादिलक्षणश्च अतस्तत्रवर्त्तते भवति भावास्तेनतेन रूपेण तान् प्रतियोजकत्व वर्त्तना सा लक्षणंलिंगऽस्येतिवर्त्तना लक्षणः अथ समस्तद्रव्यक्षेत्रभावव्यापीति." ॥१॥ एहनो अर्थ जेवर्ते थाये ते रूपे प्रतियोगी सहकारीपणे ते वर्त्तना कहीये, ते वर्त्तमानज छे लक्षण जेहनो ते वर्तनालक्षण काल कहीये. द्रव्य धर्मादिक क्षेत्र सर्वना प्रदेशभाव सर्व द्रव्यना गुणपर्याय ते मध्ये व्यापकपणे छे. एटले पंचास्तिकायनी वर्त्तना तेहज निश्चयकाल कह्यो, ए मध्ये जूदा कालद्रव्यनी ना थई. बीजो समयावलिकालक्षण ते व्यवहारकाल जाणज्यो. ते समय वर्तमान एक छतो भिन्नद्रव्य मानीये

तो ते समयनो क्षेत्र किहां मानीये, जिहां मानीये तिहां एक प्रदेश मध्ये रह्यो जोइये. तेवारं सर्वलोक अलोक मध्ये उत्पादव्ययनी वर्तना किम थाये ? तेमाटे पंचास्तिकायनी वर्तना ते कालज मान्यो, पूरवे कही नवजीरणता एपण कालनोलक्षण स्थूल छे. नवजीरणधर्म खंधनो छे, अने कालनी वर्तना सर्वद्रव्य मध्ये छे, ते पुद्गलपरमाणु तो नवजीरण थतो नथी तेवारं ए व्यवहारकालनी अपेक्षाए जाणवो, तथा नवजीरणता पुद्गलपरमाणुनो पर्याय छे इम लिख्यो ते ए परमाणु तो एकलानो पर्याय छे नही, खंधनो उत्पन्न पर्याय छे, जिम शब्दपणो छे तिम छे, अत्र तेहने एम छे तेमाटे वर्त्तमान समय एक छे, ते सर्व जीव पुद्गलादिकमें वर्ते छे, ते माटे कालद्रव्य अनंतो कहेवाय छे, जो अणुकादिक कोइ काल मानीये तो "जीवापुग्गलसमवा" ए गाथा द्रव्यानुयोगना अलपवहुत्वनी भगवती टीकामध्ये छे. तथा पन्नवणासूत्रे "एसिणं-भंतेतीणंपुग्गलाणं" इत्यादि प्रश्नसूत्रे उत्तर कह्यो छे "सवथोवा-जीवा पुग्गलाअणंतगुणा अद्धासमया अणंतगुणा सवदवाविसेसा-हीया" ए पाठ छे, तेह जीव अनंता, तेहथी पुद्गल अनंतगुणा, तेहथी कालसमय अनंत गुणा, ते सर्वथी काल, अनंतगुणो, द्रव्य-वर्त्तना गवेखीये तोज पूरवे. (पालवे) जो काल भिन्नद्रव्य मानीये तो पूरवे जे कारणे जे एक आकाशप्रदेशे अनंताकाल द्रव्य मानीये तो अस्तिकायपणो वई (टळी) जाये, अने एक आकाश-प्रदेशे एकएक काल द्रव्य मानीये तो असंख्यातो द्रव्य थाय, पण अनंतो न थाय, तेवारे सूत्रनो अलपवहुत्व किम मिले ? तेमाटे जीव तथा पुद्गल धर्म, अधर्म, आकाशनीवर्त्तना मान्यांज

पूरवे ए सूत्रनो पण एहज आशय छे, जिहां "छदवापन्नत्ता" इत्यादिक सूत्र पण व्यवहारकालने उपचार मानी ने कह्या, ए आशयसहित छे, तेमाटे एहि आशय सिद्धांतकारनो छे. सिद्धांतवादी पण इमज कहे छे. इहां जूदो पोतानी मतिना दोषे समक्षण विना सिद्धातवादीपणो जूदो माने तेहने संसार वधे, अने सिद्धातअनुयायी सिद्धांतवादी श्रीजिनभद्रगणि क्षमाश्रमणथी वधतो बीजो कोइ नथी, सिद्धातनी खरी आज्ञा प्रमाणजीव छे तेहथी वधतो हीनो चित्तमा विकल्प करे तेहने संसार वधे इम धारज्यो, एटले आवलिकादि व्यवहारकाल ते सर्व लौकिक छे परमार्थे पंचास्तिकायनी वर्त्तनाने काल कहीये छे. पण जूदो नथी, अने कालद्रव्य कह्यो ते उपचारे छे, तिहां वली पूछे जे उपचार वस्तुनी छती रावीने कह्यो छे के वस्तु पांचज छे ? तेहनो उत्तर जे वस्तुपणे मूलसूत्रने प्रमाण पाचज वस्तु छे, छठो वस्तुपणे नथी, अने पचास्तिकायमध्ये स्वकालरूप एक स्वभावपर्याय छे, तेहने काल मान्यो छे, ते स्वकालरूप पर्याय ते पंचास्तिकायमध्ये छतो छे, तेमाटे छतानो उपचार छे. इहा कोइ पूछस्ये जे छतो तेहने उपचार छे किम कहीये ? तेहनो उत्तर जे, जिम छे तेहथी वधती अवस्था कहवी ते उपचार, जे वर्त्तना ते पर्याय स्वभाव छतो, तेहने द्रव्यपणो कहेवो ते उपचार छे, एटले द्रव्यपणो अछतो छे, इम धारवो, तथा अजीवना १४ भेदमध्ये तथा ५६० भेदमध्ये अछतो होवे तो किम गण्यो ? तेहनो उत्तर जे धर्मास्तिकायदेश १ अधर्मास्तिकायदेश २ ए भेद अछता छे, पण ए भेद मध्ये गण्या छे, तेमाटे ए भेद सर्व वस्तुगति तथा उपचार ए बे भेलीनेज भरूप्या छे, पांचसेसाठ भेदमध्ये

बीजा पण उपचारी भेद घणा छे, सिद्धांतनो, भाष्यकारनो आशय एकज छे, अने व्याख्या भेद छे. तथा कोइ कहेस्ये जे कोइक गीतार्थ पोतानो आशय पोषे, ते तो जे पोतानो आशय पोषे ते गीतार्थ नथी. गीतार्थने तो सिद्धांतना सर्व आलावा अबाधक रहे, ते अर्थने मुख्य कहे. बीजा कोइक ग्रंथे अर्थ कह्या हुवे तो ते कहे, पण तेपणे कहे ए रीत छे. इहां पंचास्तिकाय मध्ये, स्वकाल तेहज काल छे, पण जूदो नथी, उत्पाद व्यय ते सर्व द्रव्यमां समये समये थाय छे. ते समय जूदो मानीये तेवारे सिद्धनो तथा धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकायमां, आकाशमां, काल भिन्न द्रव्यथी उत्पादव्यय मानवो पडे. तेवारे सिद्धादिकनो उत्पादव्यय परअपेक्षाये थाय, ते परअपेक्षाये उत्पादव्यय मानतां उत्पादव्यय ध्रुवता ते द्रव्यनो लक्षण (परापेक्षाए) थाय. जे लक्षण होवे ते स्वरूपेज होवे, परअपेक्षाये थाय नहीं. (स्वस्वरूपेणलक्षणंनपरस्वरूपेणलक्षणं) तथा तुह्मे सूत्रनी साक्षी मागी ते जीवाभिगममध्ये "किमिदंभंतेअद्धासमएत्तिवुच्चेइ गो० जीवाचेव अजीवाचेव" ए पदमध्ये ए आव्यु छे. तथा जिहां छ द्रव्य कह्या तिहां लगतोज पूछयो जे "कतिणंभंते अत्थिकायापन्नत्ता ? गो० पंचअत्थिकाया पन्नत्ता" ए पदमध्ये अस्ति ते छतानो नाम छे, तेटला छता पिंडपणे केटला छे ? तो कह्युं जे पांच छे. एटले एथी वधतो अक्षर स्यो मागो छो ? तथा उपचार हशे तो किवारे कैलोक थई जस्ये, सिद्धमे संसारीपणो थास्ये, ते एहवी कल्पना स्याने करीये ? जे धणीये तथा पूर्वाचार्ये जे उपचार कर्यो ते करीये, पण नवा न कल्पीये. अने कोइक उपचार करीये ते पण कोइक कार्य माटे करीये. सूक्ष्मनिगोदीयाने सिद्ध

कह्या ते उपचारे, इंम अनेक उपचार ळे, ते केटला लिखीये. असतुस्थापनादिक ए सर्व उपचार ळे, पण कार्य माटे छे. तथा फोडक चांपी वोलाय ते मध्ये कोइ जीवने लाभ नहींजी. तेमाटे एटलो वोलवानो मन करीये, पण खींचाताण मध्ये न पेसीये. तथा श्रीभगवतीसूत्रमध्ये धर्मास्तिकायना नामपर्याय कह्या ळे, तिहा धर्मास्तिकाय कहीये, प्राणातिपातसंवर कहीये. इंम अढारसंवर ते धर्मास्तिकायना नाम कह्या, तथा अढार पापस्थानने अधर्मास्तिकायना नाम कह्यां, ते पण सर्व उपचार कह्यो छे. ते माटे एहवा उपचार सूत्रे अनेक छे. तेमाटे पचास्तिकायनी वर्तना तेहजने काल कह्यो ळे, अत्र श्रीतीर्थंकरदेवे पण छ द्रव्य कह्या, तेपण आशय मध्ये एहज उपयोगे कह्या ळे, बीजो कोइये नवे ए आशय न कह्यो. " अणागयद्धाजीयद्धा जीवाजीवइ " इत्यादिक जोज्यो. तथा श्रीजिनाशयथी भिन्न कह्यो नथी. वीरमुखथी सुधर्मास्वामीए अर्थ इमहीज धार्यो हतो, ते परंपराये चउदपूर्वधारी भद्रबाहु स्वामी निर्युक्ति मध्ये पण एहज कह्या. जिनभद्रगणिक्षमाश्रमण तेपण दशपूर्वधर ळे. ए वात गणधरसार्धशतक, गणधरहोडसा-वृत्ति तथा कल्पचूर्णि मध्ये सुणी ळे, व्याख्यात ळे, तेह सूत्रे करीये. पण आशयमूलगो राखीने करीये, इम धारज्यो. तेमाटे ए व्याख्या ए रीतेज करज्यो. जे वस्तुपिंडपणे पाच ळे, अने पांचना स्वकालपर्यायने कालद्रव्य करी बोलाव्यो ळे, ते आरो-पेज ळे, ए आरोप ते जिम निश्चयअर्थावग्रह एक समयनो ळे अने व्यवहार अर्थावग्रह असंख्यात समयी लोकने बो-धवा माटे मान्यो, तिम मानज्यो. तथा वली जे प्रमाणप्रत्यक्ष मध्ये वस्तुगते केवलज्ञान ते सर्व प्रत्यक्ष मान्यो, अवधिमनः

पर्यवने देशप्रत्यक्ष मान्यो. वली लोकव्यवहारे उपचार करीने घोडा इंद्रियसन्निकर्षथी जे ज्ञान थयो तेहने पण व्यवहारे प्रत्यक्ष मान्यो. ए बे रीत नंदीसूत्रादिक मध्ये छे, तेपण कारणे छे. तिम कालनी बे व्याख्या कारणे छे. पण मूल व्याख्याने निजराखीने सर्व व्याख्या करीये, ए रीते कल्याण छे. तथा विशेषावश्यके "नतुपश्यतिक्षेत्र कालावसौ तयोरमूर्त्तत्वादवधिश्च-मूर्त्तविषयत्वात्,वर्त्तनारूपंतुकालंपश्येत्तद्द्रव्यपर्यायत्वात्.तस्येति" इहां पुद्गलनीवर्त्तनानी अपेक्षाये कालने रूपीगवेरव्यो छे. तथा बावीसहजारीमध्ये तथा "कालस्यवर्त्तनादिरूपत्वात्, द्रव्यपर्याय-त्वात्, द्रव्योपक्रमएवोपचारात्," श्रीभगवतीसूत्रे १३ मे शतके उद्देसे ४ थे कालस्पर्शनाधिकारे नत्थिइकेणवि ए अधिकारे टीकामध्ये पुद्गलादिकनी वर्तना तेहिज काल गवेष्यो छे, राधन-पुरथी पं. वीरचंद गणीए पूछयुं तेहनो पडुत्तरजे वैक्रियशरीर करे तेवारे, अथवा आहारकशरीर करे तेवारे सर्वप्रदेश आहा-रकशरीर मध्ये छे, पण औदारिक मध्ये नथी. तेहनो उत्तर जे आहारकवैक्रियलब्धिकाले ठाणांगवृत्ते त्रण शरीर छे. तथा कर्मग्रंथ कम्मपयडीमध्ये पण उत्तरवैक्रिय तथा आहारक करतां उदयस्थानक नामकर्मनां कह्यां छे. "आहारक संयतानां उ-दयस्थानानि भवंति तद्यथापंचविंशतिः सप्तविंशतिः अष्टाविंशतिः एकोनत्रिंशत्" "तत्र आहारकमाहारकोपांगसमचतुरस्रसंस्थान उपघातंप्रत्येकंइति पंचप्रकृतयः प्रागुक्तायांमनुष्यगतिप्रायोग्याया मेकविंशतौ प्रक्षिप्यंते मनुष्यानुपूर्वीचापनीयते ततोजातापंच-विंशति" रित्यादिपाठे, आहारकवालाने औदारिकोदय दीसतो नथी. वली जो एहने औदारिकउदय होवे तो संघयणनो पण उदय जोइये, तेमाटे ते आहारकशरीरकाले औदारिक उदय

दीसतो नथी. तथा कोइ पूछस्येजे औदारिकशरीर छतो देशनादेतो दीसे छे ते एहनो आशय छे, जे आहारकनो अंतर्मुहूर्त्त नान्हो जणाय छे ते लोकने खबर पडे नहीं. तथा जो ए शरीर मध्ये आत्मप्रदेश छे तेपण तैजसकार्मणशरीरी छे, पण औदारिकावगाही नथी, अने जो ए शरीर आत्मप्रदेश सर्वथा न मानीए तो आहारकशरीरनो संकेला संभवे नही. तथा तिहां उत्तर सांभलताज आहारक टली जाय छे अने आत्मप्रदेशो औदारिकशरीरमध्ये समाय छे. तथा कोइक पूछस्ये जे मूलगे शरीरथी जास्ये, आहारक जाइ तां सीम आत्मप्रदेशनी श्रेणि छे ते तैजसकार्मणवंत छे, जे समी अवगाहनापन्नवणा सूत्रे पांचराजनी कही छे, कार्मणनी अवगाहना १४ राजनी कही छे, उत्कृष्टथी जघन्य अंगुलने असंख्यातमे भागे कही छे, अने आहारक करता शरीरादि पर्याप्ति नवी करवी पडे छे ते कर्मग्रंथटीकामध्ये कह्युछे. "शरीरपर्याप्तापर्याप्तस्यसप्तविंशति" इत्यादि. तथा जे आहारकनी अवगाहनामुंड हस्ते छे तेमाटे मध्यप्रदेशे तैजसकार्मण छे ईम जाणवु. तथा औदारिकशरीरवत प्रथमथी आहाररूपुद्गलग्रहे तेपण औदारिकशरीरथी लेतो नथी, जे औदारिकआहारकबंधन नथी तेपण आत्मप्रदेशगत आहारकनामकर्मनी प्रकृति तेपण कार्मणवर्गणारूप जे उदय थइ तेहने उदये आहारकसमुद्घात करे, तेणे प्रदेश बाह्य नीकले, ते प्रदेश तैजसकार्मणशरीर छे. ते शरीरथी नवा आहारकवर्गणाना पुद्गल आहारे ते सर्वप्रदेशे आहारे, ते पछे सर्व प्रदेशे आहारकशरीर छे. एक अष्टप्रदेश ते अचल छे, तथा श्रेणिगत प्रदेश सर्वने तैजसकार्मण शरीर छे, ते पछे आहारकशरीर उदय छे ईम जणाय छे, इहां किहां औदारिक उदय मान्यो, इम तेजो मताम्तआचार्य वचन

ए तेजोप्रदेशोदयरूप गणवो, पण विपाकी नथी. तथा वैक्रिय शरीरने पण इंमहीज जाणवो. ईहां कोइ पूछस्ये जे, चक्रवर्ति भोगकाले ६४ हजाररूप करे छे, तिहां स्त्रीरत्न साथे भोग मूलगेरूपे करे छे ते मूलगो औदारिक शरीर छे ? तिहां इंम छे जे चक्रवर्ति ६४ हजाररूप करे छे ते बहुरूपिणी विद्यानी पेरे औदारिक शरीरनाज छे पण वैक्रिय नथी, तथा श्रीभगवतीसूत्रे "पडाओपडसहस्सं घडाओघडसहस्सं" ए पाठे घडा एकमांथी हजारेबंध घडा काढे ए पण वैक्रिय नथी, अवकरीया भेदे घडामांथी घडा काढे छे तिम औदारिक शरीरमांथी औदारिक शरीर काढे छे ए अक्षर पण ग्रंथांतरे दीठा छे पण ते ग्रंथ पासे नथी. आहारक कर्याथकां पूर्वशरीरमध्ये आत्मप्रदेश छे ते तैजसकार्मणशरीरी छे पण औदारीक शरीरी नथी, अने आहारक करे तेपण इहां ३ वर्गणानो करे छे. तथा आहारकशरीरी करतां औदारिकमिश्र मान्यो छे ते पूर्वग्रहीत औदारिक पुद्गल ज छे अने नवा ग्रह्या जे आहारक पुद्गल ते भेला थया माटे मिश्र छे परं आहारकथी औदारिक ग्रहण नथी. आहारक मूकतांकाले पण प्रथमथी औदारिकपुद्गल ते कार्मणथी लेवराइ छे इंम जणाय छे, पछे तो आगम अनंत छे. तथा तुम्हे विष्णुकुमार आश्री लिख्युं ते वैक्रियशरीर करतां औदारिक शरीर ते पण वैक्रिय मांहेज समाणो छे, अने ते औदारिक पुद्गल ते वैक्रियने उदयबले वैक्रियपणे परिणमे, पुद्गलनो पलटणस्वभाव छे तेमाटे. जे वैक्रियसमुद्घात करतां सोल जाति रत्नना पुद्गल तेह पलटावी वैक्रियपणे परिणमावी लेवे छे, अने जे वैक्रियशरीर घणा करे छे तेहने औदारिक मध्ये जे प्रदेश छे तेहनी बे परिपाटी छेजी. मूलगा शरीर पण पलटीने

वैक्रिय थयो छे, अने लोक औदारिक जेहवो देखे तेतो शक्ति विशेष छे, जिम इंद्र कालिकाचार्यपासे निगोदस्वरूप पूछवा आव्या, वृद्धद्विजरूप करीने, ते शरीर वैक्रिय हतो पण लोके औदारिकपणे दीठो, आचार्यें पण पछे उपयोग दीधे जाण्यो. तिम मनुष्य वैक्रिय करे ते मूल शरीर पण वैक्रिय छे, अने बीजा शरीर तेपण वैक्रिय छे. ए वैक्रियसमुद्घातनी उत्कृष्ट अवगाहना लाख योजननी छे तेमाटे. अने जे लाख योजनथी उपरांत छे ते तो मूल शरीरे तथा अंतरालवर्त्ती प्रदेश सर्वमध्ये तैजसकार्मणशरीर छे, समुद्घातगत केवली शरीरपर, पण औदारिकशरीर नथी. जे उत्तरवैक्रियकाले औदारिकना उदयनी ना कही छे कर्मग्रंथने विषे, तेमाटे इहा कोइ कहेजे एकरूपे ३ शरीर कह्या छे पण रूपभेदे वैक्रियादिक हवे, तेहमे उत्तर-जे कर्म उदय न हुवे ते सर्व प्रदेशेज हवे, पण कोइ प्रदेश हवे कोइ प्रदेशे न हवे इंम हवे नही. यद्यपि शुभनामकर्म अशुभनामकर्म तेना "भुवरिसिराइमुहं" ए पाठे नाभि सीम नाभिथी हेठले अशुभ इम उदय कह्यो छे, पर तिहां तत्त्वार्थ टीकाकारे कह्यो छे जे नाभिपर्यंत शुभनो विपाकोदय अने नाभिथी हेठल शुभनामकर्मनो प्रदेशोदय छे अशुभनो उदय छे इम जाणवो. पण कर्म उदय हवे तेदल थोडाघणा चीकणा लूखानो फेर हवे, पण कोइ प्रदेशे न हवे इम न हवे, तेमाटे इंम जाणवुंजी. तथा तुम्हे पूछयु जे मनुष्यगतिमार्गणा तथा तिर्यंचगतिमार्गणा मध्ये औदारिकद्विक, नरकद्विक, वज्रऋषभनाराचसंघयण ए पांच ५ प्रकृति मूलओघे बंध नथी तो औदारिकमिश्रकाययोगनी मार्गणाए चोथे गुणठाणे ७५ प्रकृतिनो बंध तेमध्ये ए ५ प्रकृति गवेषी ते स्यूं ? तेहनो उत्तर-परंपराइ इम

सांभल्योछे, मनुष्यगति तिर्यंचगति, मार्गणामां उत्तरवैक्रिय करे ते काले वैक्रिय करतां वैक्रियद्विक, देवद्विक न वांधे, पण उत्तरवैक्रिय काल गवेख्योज नथी, उपाधिकृत ते कारणिकछे. ते गवेखता नथी, इम जणाव्यो छे, अने जे मनुष्य तिर्यंच उत्तरवैक्रियपणे वर्त्तमान ते वैक्रियथी वैक्रियद्विक न वांधे, तेवारे औदारिकद्विक नरद्विक वांधे, अने औदारिक प्रत्ययि प्रथमसंघयण पण समकितीपणा माटे वांधे, ते जीव वैक्रियशरीर मूकतां वली औदारिकशरीरी थातां औदारिकमिश्रकाय योगी थाइं, ते कोइककालसीम ए पांच प्रकृति वांधे. ते ए आशय जणाववाने ए पांच गवेखी छे, वैक्रिय मूकतां औदारिक मिश्र थाइं ए सिद्धांतनो मत छे. संभारवाने सूक्ष्म ऋजुसूत्रनयनो आशय छे, ए अक्षर किहांइं दीठा नथी, परंपरामध्ये सांभल्यो छे. तथा जयसोम पन्यासे कर्मग्रंथ विषमपदपर्यायना पत्र १०-१२ कर्या छे ते मध्ये लिख्यो छे. तिहां वृहद्वंधस्वामित्वटीकानी साख लिखी छे. ए पण एकवार जीर्णश्रुतधर पासे धार्यो छे पण अक्षर दीठा नथीजी. ए प्रश्नपडुत्तर. तथा कइआमती शा लाधा ए प्रश्न पूछयोजे, आत्माना मध्ये आठप्रदेश किम रह्या छे ? अथवा सावरण छे, निवावरण छे ? तेहनो उत्तर. आठ प्रदेश छे ते च्यार उपर छे, ने च्यार हेठल छे. ते निर्मल छे, निवावरण छे, तेहनी साख लिखीइं छे. मध्यात्मप्रदेशाष्टाकस्य न कर्मवंधः यदुक्तं श्रीआचारांगटीकायां लोकविजयाध्ययने प्रथमोदेशकस्यादौ " तदनेन पंचदशविधेनापियोगेनात्माऽष्टौ प्रदेशान्विहायतप्तभाजनोदकवदुद्वर्त्तमानैः सर्वैरेवात्मप्रदेशैरात्मप्रदेशावष्टब्धाकाशदेशस्थं कार्मणशरीरयोग्यं कर्मदलिकं यद्बध्नाति तत्प्रयोगकर्मेत्युच्यते" एहवा पाठथी आठ प्रदेश निरा-

वरण छे, सिद्धसमान छे. केवलज्ञानादिक अनंतगुण निरावरण छे. तिहां वळी पूछयो जे आठप्रदेश निरावरण, केवलज्ञानमयी छे तो लोकालोक कां जाणता नथी ? तिहां उत्तर. जे पंचास्तिकाय मध्ये जड च्यार अस्तिकाय छे, ते अकर्त्ता छे, जे सर्वप्रदेशे कार्य भिन्नभिन्नपणे करे छे, अने जीवद्रव्य कर्त्ता छे, ते एक जीवना असंख्याता प्रदेश यथा मिलीने जाणवारूप कार्यने करे छे, ते सर्व प्रदेश मिल्या जाणपणो करी शके, तेमाटे आठ प्रदेश निरावरण छे, केवलज्ञानमयी छे पण सर्व पदार्थ जाणी न शके, जे आठ निर्मला पण असंख्याता सावरण छे, तेह प्रदेशे तो केवलज्ञानादिगुण अवराणा छे, ते प्रवृत्ति करी शकता नथी, आठ प्रदेशे सर्व भाव जाणी शके नहीं. वळी कोइ पूछस्ये जे ए आठ प्रदेश निरावरण केम रह्या ? तेहनो उत्तर–जे भगवती सूत्रे जे "एअइ वेअइ चलई फंदई से बंधई" ते जे प्रदेशचलपणे वर्ते ते बंधाये, तेमाटे ए आठ प्रदेश निश्चल छे. तत्त्वार्थवृत्तौ "क्रियारव पर्यायोपयोगिता प्रदेशाष्टकनिश्चलता एवमकारा संति भूयास." तथा भगवती सूत्रे अनादिअनंत संबंध कह्यो छे, तिणे ए आठ प्रदेश अचल छे, बीजा सर्व प्रदेश कटाहगत तेल उकालता जिम तेल उपरनो नीचे आवे छे, नीचाथी उपर आवे छे तिम सर्व प्रदेश चली रह्या छे. प्रदेशने चलवे वीर्यनी चलता छे. जेकेइ एकला वीर्यनी चलता माने ते न घटे, जे द्रव्यनोक्षेत्र, जे प्रदेश ते मुकीने गुणने अन्यक्षेत्रे जवो घटे नहीं, ए तत्त्वार्थकारनो आशय छे. तिहा कम्मपयडीमध्ये वीर्यविभागने अधिकार आत्मप्रदेशे वीर्यनो तरतमपणो कह्यो छे, ते क्षयोपशमज ए रीते छे. पर कोइ प्रदेशनो वीर्यकोइ मध्ये आव्यो

नथी. तिहां कोइ पूछे जे, कार्याभ्यासे सर्व प्रदेशनो वीर्य मिली कार्य करे छे, ते इहां आत्मानो कर्त्तापणो सर्व प्रदेश मिल्यांज छे. ते माटे सर्व प्रदेशनो वीर्य स्व स्व प्रदेशे रह्यो साहाय्य करे छे, पण परक्षेत्रीगुण थाय नहीं. तथा वली पूछयोजे "अक्खरस्स अणंतमो भागो निचुग्घाडीयो चिठइ" ते एस्यूं छे ? तेहनो उत्तर–जे आत्माने असंख्यात प्रदेशे अक्खर कहेतां ज्ञानगुण तेहनो अनंतमो भाग जेम तेनो अंश तथा श्रुतनो अंश ते सदा उघाडो छे. ते क्षयोपशमी छे, एटले ए अनंतमोभाग जे उघाडो थयो छे, ते एकेन्द्रियथी मांडी पंचेन्द्रियपर्यंत वेत्तापणो करे छे. वली कोइ पूछस्येजे ए अनंतमोभाग जे उघाडो ते सदा उघाडो ? तेहने उत्तर जे अनंतमो भाग उघाडो तेतो वली अयथार्थ परभावानुयायी प्रवृत्तिकार तो जे मतिज्ञानावरणी बंधाणी तेहने उदये अवराय छे, पण जे आत्मानो वीर्यक्षयोपशमी छे ते वली बीजा मतिज्ञानांशने क्षयोपशम करे छे, इंम संतति रीते सदा ज्ञाननो अनंतमोभाग प्रतिप्रदेशे क्षयोपशमी उघाडो पामीये छे. तेहनी साख श्रीविशेषावश्यकथी लिखीये छीए "तत्रह्यक्षर शब्देनाविशेषितंएवज्ञानं अभिप्रेतंतथापिरूढिवशात्" तथात्राप्यऽक्षर शब्दोवर्णएववर्त्तते. इत्यादि पाठथी जोइ लेज्यो. सर्व प्रदेश क्षयोपशम प्रतिपादकंसूत्रं. इत्यादि तथानंद्यां तदपिवाक्षरं द्विधाज्ञानं आकारादिवर्णजातं च. इहां नंदीटीकामध्ये अधिकार घणो छे. वर्णश्चश्रुतं ए विशेषावश्यक वचनथी श्रुतज्ञाननो अनंतमो अंश गवेल्यो छे. ते श्रुतज्ञाननो क्षयोपशम ते सर्व प्रदेशीय हवे, ए कम्मपयडी प्रमुखथी जोइ लेज्यो. तेमाटे अक्षरनो अनंतमोभाग ते सर्व क्षयोपशमी छे, जो सर्व प्रदेशे

न हुवे तो सर्व प्रदेशने इंद्रियज्ञान वेत्तापणो किम थाये ? तेमाटे इम सद्दहवोनिर्धार छे. इहा इंद्रियक्षयोपशमना माननो अधिकार छे, तेह मध्ये युक्ति अनेक उपजे पण नव भेद धारवा, ते सर्व आगम रीते सापेक्ष जेजी. अथवा " यद्यपि अभिलाप्याना भावानामनंतभागः एवश्रुतनिबद्धस्तथापिमसगत सर्वेऽप्यभिलाप्या श्रुतविषयं न जानंति इति उच्यते" ए पाठ भगवती टीका मध्ये आठमे शतके उद्देशे बीजे छे. शा. हरखचद दक्षाप्रश्न पूछ्यो मकसूदाबादथी, जे पुद्गलपरमाणुने विषे वर्णादिक परिणमे छे ? तेहनो उत्तर " कारणमेवतदंत्य'सूक्ष्मोनित्यश्चभवति परमाणु एकरसवर्णगधाद्विस्पर्शः कार्यलिंगीच" ए तत्त्वार्थ वृत्तिनो वचन छे, जे सर्वस्कंधनो अंत्य कहता छेहलो कारण छे, एटले द्व्यणुकादि सर्वस्कंध परमाणुथी नीपजे पण परमाणुनो कोइ कारण नथी, ए अनादिअनत शास्वत सिद्ध द्रव्य छे ते सूक्ष्म छे, तेहनो परमार्थ जे एक जीवनो एक प्रदेश, तथा आकाशनो एक प्रदेश तथा परमाणु एक सर्वनी अवगाहना तुल्य छे, पण एक आकाशप्रदेशमध्ये एक जीवना असंख्याता अने अनताजीवना अनंताप्रदेश भाने एक प्रदेशे कर्मवर्गणापणे परिणम्या अनता परमाणु समाइ रह. ते माटे आकाशप्रदेशथी आत्मप्रदेश समाय व सूक्ष्म छे, अने आत्मप्रदेशथी परमाणु समाय वे सूक्ष्म छे, तेमाटे सर्वथी परमाणु सूक्ष्म छे, तथा ते परमाणु द्रव्यपणे नित्य छे. ते एक परमाणुमें एकवर्ण, एक रस, बे फरस हुवे, ते मध्ये फरस लूखो तथा चीकणो, उन्हो तथा ताढो, ए च्यार माहला बे हुवे. लुखो उन्हो ए बे, अथवा लुखो ताढो ए बे अथवा चीकणो उन्हो ए बे, अथवा चीकणो टाढो ए बे ए रीते हवे तेजे परमाणु श्वेत वर्ण हुवे ते विश्रसापरि-

णामेज कालो थयो. श्वेतपणानो व्यय कालापणानो उत्पाद, इत्यादिक धारवो, तथा तुम्हे पूछयो जे ए परमाणुमें पूरणगलन ते किम छे? तेहनो उत्तर. एकपरमाणुमें जे वर्णादिक गुण हवे ते एकगुणो हवे, ते समयमां ते संखगुण थाय, अथवा असंखगुण थाय, अथवा अनंतगुण थाय, अथवा अनंतगुणो हवे, ते असंखगुण, संखगुण, एकगुण थइ जाये. कोइक समये वर्ण ईम थया, कोइक समे वर्ण ते प्रमाणेज रहे तो गंधादिक वधे घटे, कदाकाले वर्णादिक च्यार तेह प्रमाणे तेहनो तेज रहे. पण अगुरुलघुगुणतो एकसमयथी बीजे समये षट्गुणहानि अथवा वृद्धिपणे नियमा परिणमे, ते पूरणगलनता नियमा छे, पण अगुरुलघुनी पूरणगलनता गवेखी नथी. वर्णादिकनी ज गवेखी छे. तथा परमाणुमध्ये एक परमाणु अन्यथी मिलवारूप स्निग्धता छे तेपण घटेवधे छे "द्वाभ्यांद्वाभ्यां अधिकाभ्यां संबंधः" ए तत्त्वार्थनो वचन छे. ते रस शब्दे तीखा कडुआ मांहिलो नथी, तथा फरस मांहिलो नथी, जे रस मध्ये स्वाद धर्म छे, पण मिलवानो धर्म नथी. तथा फरस मांहिला स्निग्धता लेवे तो "रुक्खस्सरुक्खेण दुयाहिएण" एटले लुखो परमाणुओ बीजा लुखा परमाणुथी द्विगुण अधिकने मिले ए पाठ न ठरे, किम तेमाटे मिलवो कारणरूपज स्निग्धता ते पूरणगलनगुणनी छे ते पण घटेवधे छे, जे पुराणुं ते पूरण, घटे ते गलन थयो, तथा एक परमाणु एक लाभे अस्तिकाय कहेवाय छे, ते स्यामाटे जे अन्य परमाणुथी मिलाय तेहनो कारण पूरण गलननी आद्रता ते परमाणुमध्ये छे. तेमाटे अस्तिकायता छे. जे अगुरुलघुनी हानिवृद्धितो सर्व द्रव्यमां छे तेमाटे तेहनी पूरणगलनता गणवी नही, जे वर्णादिक ४ नी तथा

पूरणगलननी जे हानिवृद्धि ते पूरणगलनपणे लेवी, ए रीते ते वळी पुद्गलद्रव्य छे तेपण नित्यादिक अनंतस्वभावी छे, अनतगुणपर्यायी छे, सदाकाल छे. कडुकमतीगच्छे शा. लाद्धा कृत प्रश्नमे वीरस्वामीनो जीव सातमी नरकथकी सिंहपणे उपन्यो ते किम? तेहनो उत्तर "सप्तम्याः उद्धृत्त तिर्यचएव उत्पद्यते" प्रायोमत्स्येण तथा श्रीविशेषावश्यकमे ये " सत्तममहिनेरईया ते उववाउ अणंतरुवटा नयपावेइमणुंस" इतिवचनात् तिरिजचमध्येउपजेमत्स्यतोकाइनियामकनही. तथा सिंहथी नरके गये पण सर्वसिंह नरके जाये ए नियम नथी उक्तच "वाळादाढीपरकीहवति नरगागयाउ अइक्रुरजंति पुणोनिरएसुनहुल्लेण न उण नियमो " ते माटे नियम नथी. मनुष्य मरी चक्रवर्ति थया ते किम घटे? तथाच कल्पटीकायासमयसुंदरोपा याये "सुरनेरइएहिचियहवंतिहरि अरिहचक्किबलदेवाइत्युक्तत्वात्कथमनुष्योमृत्वाचक्रवर्त्तिर्जातः" तत्रोत्तर "यथास्मिनक्षेत्रेदशाश्चर्याणिजातानि तथा तस्मिनक्षेत्रेइदमाश्चर्यम येगणितमस्ति पुनस्तत्रनागकुमारतस्तीर्थकरोजातोस्तिइद्र विस्तारार्थिनादेवभद्रकृतवीरचरित्रंद्रष्टव्य" तथा स्त्रीपचानुत्तरविमानआ श्री पृछ्यु तेहनो उत्तर. जे "श्रीनेमिनाथस्य सप्तमेभवे स्वयवरा यशोमती भार्या, तथा द्वावपि अपराजितेमहाविमानेदेवत्वेनोत्पन्नौ" इति भवभावनाटीकाया तथा स्त्रीने वज्रऋषभनाराचसंहननंअस्ति "तत्राक्षराणिपचसग्रह कम्मपयडीग्रथे नामकर्मोदयभंगाधिकारमनुष्यस्त्रीपुपट्संहननं तस्यभगकाकृता, दिगबराम्नायेपि गोमट्टसार एवमेववाक्यं च मणुस्सणीसु छसघयणा इतिवाक्यात्, तथादिग्पटीयत्रिभग्यायोनिमतीस्त्रीक्षपकश्रेणिस्वरूप तत्रप्रथमनपुंसकवेदसत्ताक्षयः पश्चात्पुरुषवेदसत्ताक्षयः उदितवेदस्यपातेक्षतिरितिनीति" दडकने

अधिकारे संक्षेप विस्तर व्याख्या दिखाडवाने अर्थे ए कथन करयो छे. राधनपुरी श्राविका आणंदबाईकृत प्रश्नोत्तराणि. पुलाकचारित्रीयाने श्रुत जघन्य नवमा पूर्वना तीनवस्तु उत्कृष्टे नवपूर्व पुरां श्रीभगवती २५ मे शतके कह्यो छे, ते पुलाकचारित्रीयाने द्रव्यलिंग तीन कह्या छे, गृहलिंग, अन्यलिंग, स्वलिंग. ते गृहलिंगी अन्यलिंगी पूर्वकिसभणे ? तेहनो उत्तर जे श्रीभगवतीसूत्रेकह्या छे जे "भावलिंग पडुच्चनियमासलिंगेहुज्झा" ए पाठना आशयथी जे जे द्रव्यथी तीनलिंग कह्या ते वैक्रियलब्धिकरतां कारणे साधु गृहस्थलिंग अन्यलिंग करे परं ते साधु छे. पण गृहस्थ नथी, तथा बीजे प्रश्ने भगवतीसूत्रे बंधनो उदयनो नाम छे. परं सत्तानो नास नथी. ते भगवतीसूत्रे सर्वअधिकार समकाल कहे ते नियासक नथी. परं पन्नवणा तथा समवायांगे सत्तानो पाठ छे. तथा त्रीजे प्रश्ने धर्मलाभनो पाठ किहां छे ? तेहनो उत्तर जे भवभावना टीका तथा उपमितिभवप्रपंचादिक ग्रन्थे पाठ छे. चोथे प्रश्ने आलोयणनो तुम्हे कह्या ते किहां कह्यो छे ? तेहनो उत्तर जे परंपरा जीत दीसे छे. तथा नांदि मांडे तिहां अखीयाणां मुकवानो अधिकार विधिप्रपाप्रमुख विधिग्रंथमे छे. तथा स्त्रीनी असज्झाई चोवीसपहोरनो मान, आवश्यकनिर्युक्ति तथा प्रवचनसारोद्धारटीका मध्ये छे. तथा तिर्यंचणीनी असज्झाइनो जीत दीठो नथी. तथा सिद्धांतरासामध्ये कह्यो छे. तिर्यंचणीनी असज्झाइकाले दुहली धातु झरे छे. पण रुधिर झरतो नथी, ते माटे धातु झरे, असिज्झाइ नथी. तथा मनुष्यने धातु झरवा काले पाणीये सुचि करे ते समूर्छिमनी उपज टालवाने परं असिज्झाइ नथी. तिर्यंचना धातुप्रमुखमलथी समूर्च्छिम उपजे नहीं. अने जे कुयुक्ति करी जे जीत

उथापे तेहजे जीतनी श्रद्धा नथी पण आगमनी आज्ञाये ईम
छे जे गीतार्थनो करयो जीत मानवो तिहा साख छे.

असढाइन्नवणज्झ, गीअत्थअवारीयतिमज्झत्था ।
आयरणाविहुआणंति, वयणओसुवहुमन्नति ॥१॥

ए वचनथी उत्तम आचार्ये जे जीत करयो ते प्रमाण
छे. तथा चूर्णिकार टीकाकारना कीधा जे बीजा ग्रथ ते मध्ये
जे वचन ते पण पचागीनेपरे प्रमाण करवो इति. तथा विरा-
दनासंघे शा टोकर प्रमुखे पूछ्यो प्रश्न तेहनो उत्तर जे तुम्हे
पूछ्यु जे पुस्तकनी आगमनी पूजा किम छे ? केटला प्रकारनी
छे तेहनो उत्तर जे जलनी तो पूजा पुस्तकनी नथी अने
परपरागत ज्ञानपूजानी गाथा छे ते गाथा ।

नमतसामंतमहीवनाहं. देवेहिपुज्झसुविहयिपुव्व ।
भत्तिहिमुत्तित्तेमणिदामएहि, मदारपुप्फपसवेहि-
नाणं ॥ १ ॥

तहेवसङ्घामणिमुत्तिएहि, सुगधपुप्फेहिवरंसुएहि ।
पूयति वंदंति नमति नाणं, नाणसलाभायभवक्खं-
याय ॥ २ ॥

आशयथी मणि कहेता रत्नजाति, पुष्प करेता फूलजाति,
अंशुकवस्त्रजाति, मोतीनीजातिना पूजाना अक्षर छे तथा
श्रीपालचरित्रे तथा नवपदप्रकरण श्रीरत्नप्रभसूरिकृतमध्येसिद्ध
चक्रनी पूजामध्ये ज्ञानपदनी पूजा अष्टप्रकारी करी छे. तथा
शत्रुंजयमहात्मसमध्ये धनेश्वरसूरिजीए सोनाने कमले ज्ञानपूजानो

अधिकार छे. तथा रूपानाणे सोनहीये गौतमपदनी पूजानो अधिकार छे. तथा ज्ञानपंचमीनी कथामध्ये तथा पूजापटल, श्री तत्त्वार्थकारकृत छे, तेमध्ये वासपूजा, नाणानीपूजा, मोतीनी, वीटणानी, दीवानी, धूपनी, एटली पूजा लिखी छे. तथा जीतकल्पचूर्णिमध्ये जिहां आचार्यादिक पुस्तक वांचे तिहां वासपूजा, वीटणा निमित्त वस्त्रपूजा, रूपा सोनाना फूल तथा नाणा तथा श्रीफल तथा दीप तथा धूपनी पूजा ज्ञाननी करवी पण गुरु आचार्य ते सचित्तने अडकता नथी, जे पुस्तकथी गुरुने अडकवो पडे तेह पुस्तकने तो वासनी तथा सोनारूपाना फूलनी तथा नाणानी रत्ननी तथा लूगडानी एटली पूजा करवी ए जीत छे. धूपपूजा श्रावक पोते गुरुने अडकवा विना करे, तथा गुरुपूजा गुरुने नव अंगे रत्नेकरी, नाणेकरी, सोनारूपाने फूले करी करवी, ए अधिकार हीरप्रश्नमध्ये साखसहित छे. तथा गुरुने तथा पुस्तकने वधाववाने चोखे तथा मोतीए तथा सोनारूपाने फूले वधाववा एटलानो जीत छे वधतो जीत नथी. तथा गूहलीनो अधिकार श्रीविशेषावश्यकमध्ये गणधरस्थापना अधिकारे इंद्राणीए करी छे. ए सर्व पंचांगीने रीते लिख्यो छेजी. "यतः जेणेव वसायसभाणेव उवागच्छति लोमहत्थगपरामुसति पोत्थयरयणं लोमहत्थएणं पमज्झतिदिवएदगधाराअगेहिवरेहिं गंधेहिं यमलेहिं अचेति" ए पाठथी पाणीनी धारा फूलनी पूजानो अक्षर सूरीयाभने अधिकारे छे. शाह लाधाजीना पूछया प्रश्ननो उत्तर. तुम्हे पूछयुं जे वायुकायने वैक्रियशरीर छे ते लब्धिप्रत्ययी छे भवप्रत्ययी नथी. जे पन्नवणानो वचन छे. तिरिगति मनुष्यने लब्धिप्रत्ययी वैक्रियज हुवे तेमाटे वायुकाय ते तिरियंचना ४८ भेदमध्ये छे. तथा जे पूंठलेभवे जे

वैक्रियदुग बांध्यो हवे एहवो पंचेंद्री तिरियंच मनुष्य मरीने बादरएकेन्द्रियपर्याप्तामे उपन्या छे. ओदारिकशरीरने उदये भोगवता पछे लब्धिरूप उदय थाइ. तथा सर्व विजयमध्ये ३२ हजार देश छे, आर्य २५ जणाय छे पण अक्षर दीठा नथी. तथा महानिशीथे सुमतिभ्रष्ट थया ते परमाधामी थया ते अनेक पुद्गलपरावर्त्त संसारभम्या, ते जे समकीतितो अर्धपुद्गलपरावर्त्त संसार भमे, अधिकोभमे नहीं ते किम मिल्यो ? एहनो पडुत्तर जे पडवाइने अर्धपुद्गलपरावर्त्त कह्यो ते कालपुद्गलपरावर्त्त लीधो छे, अने जिहां अनेक पुद्गलपरावर्त्त कह्या छे ते कालपुद्गलप रावर्त्तमध्ये द्रव्यपुद्गलपरावर्त्त अनेक थाइ. तथा अभव्यजीव-आश्री श्रीभुवनभानुकेवलीचरित्रमध्ये अव्यवहारराशिमध्येथी निकल्या ए पाठ दीठो, ते अव्यवहारमध्ये अभव्य छे इम ठहरथा छेजी. तथा भासआश्री लिख्यो ते आचारांगटीकामध्ये तथा आचारांगचूर्णिमध्ये तथा निशीथचूर्णिमध्ये एहज अर्थ करयो ते बीजे कोणे नवो कल्पायेजी तथा जे साधु अव्याकपणे जे अशुजक्षताआहारादिक कर तेहने बंध नहीं, आत्मानो कर्त्तापणो स्वरुपानुयायी हवे तेवार जे हिंसादिक ते प्रशस्त छे, अने प्रशस्तआस्रवनी आलोयण नथी. वंदित्तुमध्ये " आयरियमप्पसत्ये" इत्यादि पाठ जोज्यो. ए चर्चा मुहडामुहडे कहेरराइ.

श्रीमद् देवचंद्रजीना लखेला पत्रो.

(१)

अत्र विवहारथी सुख छे, तुम्हारा भाव सुखसाता समाचार लिखाय तो लिखजो, जीम संतोष उपजे. तथा कोइ कहेस्ये जे व्यवहारथी तो सुख छे, तिवारे निश्चयथी दुःख ठेर्यो, एहवो शब्द लिख्यो तेहनो स्यो कारण ? तिहां उत्तर कहे छे के सातावेदनी कर्मना उदयथी उपन्यो जे सुख ते पर धर्म्म, माटे जाते ए सुख ते दुःखरूप छे. उक्तंच ॥ साया साया दुःखं, तव्विरहंम्मियसुहं जओ तेणं, देहिंदियसुखदुःखं सुख्खं देहिंदियाभावो ॥ इति वचनात्. ते कारणे सातावेदनीना उदयथी उपन्यो जे सुख ते दुःखरूप छे. शाता ते आत्मानो जे अव्यावाध गुण तेहनो रोधक छे, तथा कोइक आचार्य अव्यावाधने पर्याय पण कहे छे, ते माटे गुणपर्यायनो रोधक ते शातावेदनी कर्म, तेहना उदयथी उदयावलिकाए आव्या जे पुद्गल ते आत्माने भोग्यपणे थाय छे, पिण निश्चयनये पुद्गलनो भोगववो ते भव्यात्माने युक्त नथी, ते स्यामाटे जे निश्चयनयें पुद्गलनो आत्मा अभोगी छे. तिवारे कोइ कहेस्ये जे आत्मा तो पुद्गलनो अभोगी छे, तो ए आत्मा पुद्गलभोगी किम थाय छे, अने पुद्गलनो भोगववो किम करे छे, तिहां कहिये जे आत्माने विषे एक भोग गुण छे, ते इहां भोग स्वगुणपर्याय कहेवो, ते भोग गुण अंतराय कर्मे आवर्यो छे, तेनो नाम भोगांतराय कर्म कहियें, ते भोगांतराय कर्म सर्वथी क्षीणमोहने चरम समयें क्षय थाय छे, तिवारे स्वगुण पर्यायनो अनंतभोग

प्रगटे, इहां कोइ कहेस्ये जे तेरमा गुणस्थानकवर्त्ती जीवने भोगांतरायने क्षयथावेकरी अनंतो स्वगुणपर्यायनो भोग प्रगट्यो छे, अने आहारादि पुद्गलनो भोग ते जीव किम करे छे ? ते युक्ति खरी कही, पिण इम छे जे तेरमा गुणस्थानकवर्त्ती जीव पूर्व आहार पर्याप्ति बांधता जेटला पुद्गलनो ग्रहणपणो थयो छे, तेटला पुद्गल ग्रहे, तिवार ते आहार पर्याप्ति पुद्गलरूप जे आत्मप्रदेशे संबद्ध छे, ते निर्जर तेटलो निरावरण थाय, ते माटे केवली जे आहारादिक पुद्गलनो ग्रहण भोग करे छे तेम ते निर्जरा, पिण वांछा भोगपणे नथी. तथा सम्यग्दृष्टिनो भोग ते प्रशस्त परिणामनी प्रवर्तनाए करी निर्जरानो हेतु थाय छे, तो केवलीनु शुं कहिवो ते माटे स्वगुणपर्यायने भोगववारूप जे भोग गुण ते तो भोगांतरायना क्षयथी प्रगटे, अने भोगांतरायनो क्षयोपशम तो सर्व जीवने सदा पामीये, तिहा भोग गुणनो स्वभाव ए छे जे भोगववो, अने स्वगुण पर्यायनो भोग अनंतकाल थया भूली गयो छे, तिवार पुद्गलानंदी थये छते आत्मा पुद्गलनो भोग भोगवे छे, ते इहा भव्य जीव स्वआत्मिक अनंतोभोग गुरु मुखे सांभली, जाणी, श्रद्धा करी, ते भोग अनादिनो अवराणो जाणी, ते जीव निरावरण करवाने उद्यमी थाय, ते इहा शुद्ध निमित्तनी अवलंबनाए, शुद्ध उद्यमे, आत्मा प्रवर्त्ती शके, अने शुद्ध उद्यमे तथा शुद्ध निमित्तनी अवलंबनाने विषे थिर परिणाम रहे, जो आत्मा पुद्गलभावथी विरमणपणे करे ते जे पुद्गलथी विरमवु ते संवर कहीये, एहवा भाव संवरने विषे रह्यो छतो स्वगुणपर्यायनो अनुभव प्रवर्तना करे ते शुद्ध ज्ञान कहीयें अने ते ज्ञान तो प्रवर्ते जो वीर्यनो सहकार होय ते

ज्ञान प्रवर्तनावलरं जे वीर्यनो सहकार ते सकाम पंडित वीर्य कहीयें, अने ज्ञान स्वपर ज्ञायक होय, पिण सदा आत्मप्रदेशावगाही रहे. इणी रीते स्वगुणने विषे थिरता, स्वगुणभोग आस्वादननी रमणता ते भावचारित्र कहीये. ए रत्नत्रयी जाणी स्वगुण उपादेय करं, परगुण हेयपणे प्रवर्तें, संसारीभाव ज्ञेयपणे प्रवर्तें. सर्व एकेंद्रियादि जीव प्रथम गुणस्थानकवर्ती होय ते उपरे मध्यस्थ अने कारुण्य भावनाए वर्ते. स्वगुण निरावरण थाते छते प्रमोद्भावनायें वर्तें, साधर्मी उपरं सदा मैत्रीभावना राखे, स्वपर औदयिक सन्मुख द्रष्टि न दियें, तत्र श्रद्धा शुद्ध जीवने धर्म ध्यान कहवाय तो कहेजोजी, जे जीव शुद्ध प्रवर्त्तनाए प्रवर्त्या, प्रवर्त्तें छे, प्रवर्त्तशे ते जीव धन्य छे, इम विचारवुं पिण मादकभाव करवो नही. इणीरीते व्यावहारिक सुख छे. भाव सुख तो परिणामनी धारायें होय. इति तत्त्वम् ॥

---

(२)

श्री.

॥ स्वस्ति श्री आदिजिनं प्रणम्य। अहम्मदावादथी पं० देवचंद्र लिखितं श्रीसूरितबंदरे जिनागमतत्त्वरसिक सुश्राविका जानकीबाई हरषबाई प्रमुख धर्मस्वरूपरुचि आत्मा योग्य धर्मलाभ वांचजो जो। अत्र साता छे। अहिंसाना स्वरूप तो पूर्वं तुम्हने जणाव्या छइं अने वली समजवां। मूल अहिंसा अनुबंध होइं, ते मध्ये उपयोगीनें भावथी अनें अनउपयोगीनें द्रव्यथी, ते तो जिहां जे गुण स्थानक ते माफक जाणवी. ते मध्ये मुखताइं विरतिथी लेवी, अनें तेहनां कारण आश्री लिख्युं ते तो उपादान कारण सर्व ठामे आत्म परिणाम

होइ, असाधारण कारण तो अविरति कषाय रागादिक हुई,अने निमित्त कारण तो काल, स्वभाव, निमित्तादिक योग वचनादि बहुधा हुइ, तथा द्रव्यथी तथा भावथी ए कारणनी भिन्नता थाय तेंवारे अनवस्था दोष उपजे, ते माटें जीहां अनुपचरितसद्भूतव्यवहार लोप थाइं ते सर्वभावथी उपादान जाणवु ए लक्षणमात्र साध्यु अने जिहांथी उपचरितसद्भूत व्यवहार ते निमित्त लक्षणसाधीइ । अने जिहां उपचरित असद्भूतव्यवहार ते निमित्त लक्षण साधीइ, तिहा शुद्धअशुद्ध तो जोवा पडइं, इम सघलें विचारी लिजीई, ए प्रश्ननो उत्तर समुदायमात्र लिख्यो छे, ए गहनार्थ छे, बहुश्रुतपूछवा. अने तुम्हें वली लिख्यु जे ३ अहिंसा जे जे गुणस्थानक माफक जिहा होइ तिहां हिंसा हुइ किंवा न हुइ, ते ता हिंसा हुइ पणि ते निरवद्यरूप छे. आयतिकालें निर्जरा निमित्तज थाइ अने दोपी(ने?) तु शुभाश्रव रूप होइ । ते सावद्य निरवद्य कहीइंछि ते माटि हिंसा न कहइ, सावद्यभाषाइ कहीइं अपितु जे दीसइ ते प्रसगमात्र छें, ते माटि व्यवहारें इम कहीइ, निश्चयथी अहिंसा छे, ते जाणवु. तथा पंडितवीर्य उपादान कारण तेहनो क्षयोपशम ते असाधारणकारण अने शुद्ध व्यवहारनइ गुणोपेत योग ते निमित्तकारण ए पणि लक्षण सामान्यमात्रइ सघले लेवा, तथा अनुबंध अहिंसा आश्री लिख्यु ते जाणवु, तेहनु तो द्रव्यथी अनुबंध अहिंसा, ग्रंथी भेदइ उपशम समकितदृष्टिने भावथी, क्षायिक समकितीने ते सवर रूप शुद्ध आत्मिक भावमा–द्रव्यथी हतु अहिंसा श्री प्रशस्त ठामें निरागसपणई हतु जोडे, तिहा भावथी हेतु, अहिंसा अप्रमत्तगुणठाणाथि द्रव्यभाव शब्द ते देश सर्व जाणवा.

तथा अनुबंध अहिंसा आश्री तो सामान्यें तो इंमज जे गुणठाणइं जिहां जिहां कल्प लगइं रहे ते त्रिण्ये अहिंसा तिहां तिहां साधीइं, अतिक्रमादिक ३ लगइं, भजना अकेकनी कहिइं, अनाचारनुं तो कहवुं नहीं, इत्यादि घणो विचार छे, तेतो श्रीयशोविजयगणी कृत नयरहस्य ग्रंथमध्ये छे, स्पष्टपणे, सुबुद्धिनेइं ते तो वली कोइक समये जणाइं ते पीछवुं तथा अनंतचतुष्टय आश्री लिख्युं ते तो केवली भगवाननें निरुपाधिक च्यार कर्म घातीइंक्षयें ज्ञान १ दर्शन २ समकित ३ वीर्य ४ ए स्वाभाविक चतुष्टय थयां अनंतपणे शेष च्यार कर्मना क्षयथी अक्षयस्थिति-१ अक्षयअनिर्वाच्य अपौद्गलिक सुख-२ एकत्वावगाहना अरूपी-३ अगुरुलघुपणुं द्रव्यसाथें पर्यायनुं अविनाशपणुं-४ ए चतुष्टय सिद्धने थयां, ते माटें सिद्धनें तथा केवलीनें आपापणे गुणें फेर नहीं, न्यूनाधिक नहीं इत्यादि, तथा बिंबने ऊगटणा आश्री लिख्युं ते जाण्युं बिंबनें भक्तिनें आशयें ऊगटणुं करतां दोष नथी, पणि आंख कान नासिकादि अवयवें उपयोगराखी ऊगटणुं करइं, अने बीजे ठेकाणे जेटली मलीनता जाणइं तेटलुं ज वेयावच्च करें, इम करतां जो अंशे कांइ घसाइं तो पणि शुभाशय माटें दूषण नथी जाण्युं, श्राद्धविधि प्रमुख ग्रंथे पणि प्रतिमानें ऊगटणा नां वेयावच्च करवां कह्यां छें, ते माटिं वेयावच्च करतां दोष नहीं ते जाणवुं.

दुहा।

संज्ञारक्त वस्त्र बालपूरी वरज्यो आतमधर्म ।
और धर्म्म सव भर्म्म हें जासौं बांधइ कर्म्म ॥ १ ॥

क्षेत्र स्पर्शनाकें उदे तुम्म अम्ह दर्शन होय ।
मनोवर्ग्गणा कौ मिलन, चाहत हैं नित सोय ॥ २ ॥

तुम्ह जेसे ज्ञायक गुणी समज्ञो श्रुतसतोप ।
मिल्या ज्ञान निमणो वधे, लह ज्ञान भरपोप ॥ ३ ॥
या चित्तसे नित वाचज्यो, श्रीजिनायनम. शुद्ध
स्वामि तुम्ह वलपुरी अह निशि जान विशुद्ध ॥ ४ ॥
इति लि पाम्लोप्तनीर्थे रत्नचद्रेण ।

---

(३)

॥ स्वस्तिश्री आदिजिन प्रणम्य अहम्मदावादथी प० देवचद लिखित श्री सरतबिंदर सुश्राविका जिनागमरुचि बाई जानकीबाई हरपबाई प्रमुख स्वरूप धर्मरुचि जीव योग्य धर्म-लाभ वाचज्योजी अत्र साता छे अपरच तुम्ह यथार्थ ज्ञानी वीतराग सर्वज्ञ सर्वदर्शी अरिहंत परमात्मा ये प्रगट कर्यो सि-द्धातमाने जे संपूर्ण नीपना छे, ते सर्व जीवनें असख्यात प्रदेशें व्याप्त व्यापकपणे अनादि अनंत सत्ता रह्यो छे, ते स्वभाव-धर्मनी रुचिपणें रह्यो जे धर्म ते आत्माना अन्वय स्वभाव छे, सहज अकृत स्वरूप छे, ते अन्तरंग धर्म छे, जाणवो, देपवो ते स्वकार्य छे. तेहनी प्रवृत्ति ते रमणादिक छ, ते शुद्ध धर्म जेहनें समरणे प्रगट्यो ते देवतत्त्व, ते सपूर्ण धर्मनी इहा ये सपूर्ण धर्मी सिद्ध परमात्मानो बहुमान करवो ते साधन परि णतिने संपूर्ण थवाना कारणपणा माटे तेहनें धर्म कहीयें मूल वस्तु धर्म स्वस्वभाव तेहज धर्म ए श्रद्धा करवी. जे बाह्य प्रवृत्ति योगनी आचरणी तेहनें धर्म माने तेहना कथामें सिद्ध ते धर्म रहित थायें, ते माटें कारण ते मूल धर्मथी भिन्न छे, यद्यपि उपादान कारण आत्मपरिणति छे, पिण साधननी रीत

ते सिद्धमानथी तेटलो भेद छैं. दशमा गुणठाणाना मुनिनें श्री भगवतीसूत्रें उस्सत्तं रियति इम कह्यो छें, तो ले स्वरूपरुचि विना सातादि गारव माटें संयम श्रुताभ्यासनें संसार हेतु छे, ए आचारांगे धूताध्ययने चोथें उद्देशें कह्यो छें, ते माटें पूरण सिद्धावस्थायें जे छतो पामीयें ते धर्म जाणवो. तेहनी रुचि जे आगम प्रमाणें पोताना प्राग्भावी गुण तथा उदीक गुणी-अनुयायी करवो ए साधकता छें, ते करतां संपूर्ण धर्म प्रगटें तेहनो उद्यम करवो ए सर्व जीवनें हित छें, ए आत्मसत्ता प्रगट करवा माटें परमेश्वर,परमपुरुष, परमानंदमयी, संपूर्ण आत्मसत्ताऽभोगी,सहज आत्यंतिक,एकांतिक, ज्ञानानंदभोगी परमात्मानो बहुमान ध्यान करवो. आत्मिक शक्ति कर्त्ता भोक्तादिक कारक चक्र ते विभावरूप कार्य कर्त्तापणें अशुद्ध संसार कर्त्तापणे करतां अनंत पुद्गलपरावर्त वही गयां, ते क्षयोपशमी चेतनादिक शुद्ध निरंजन, निरामय, निर्द्वंद्व, निष्पन्न परमात्मगुणानुयायी, ते स्वरूप प्रगट करवाना कारण थया, ते पछी स्वरूपावलंबी थया एटलें परम सिद्धताना कारण थायें, ते माटे प्रथम प्रशस्तालंबी थई स्वरूपालंबीपणें परणमी स्वरूप निष्पत्ति करवी ए हित जाणवोजी । तथा द्रव्य साधन ते भावसाधन नो कारण, भावसाधन ते संपूर्ण सिद्धनो हेतु छें. ते रीतें श्रद्धा राखवीजी. पौद्गलिक भावनो त्याग ते आत्मानें स्वस्वरूप प्रगट करवानें करवो, ए निमित्तकारण साधन छें, अने आत्मचेतना आत्मस्वरूपालंबीपणें वरतें ते उपादान साधन छें, ते उपादान शक्ति प्रगट थवा माटे सिद्ध, बुद्ध, अविरुद्ध, निष्पन्न, निर्मल, अज,सहज, अविनाशी, अप्रयासी ज्ञानानंद पूर्ण क्षायिक सहज पारिणामिक रत्नत्रयीनो पात्र जे

परमात्मा परमैश्वर्यमय तेहनी सेवना जे प्रभु बहुमान भासन रमणपणे करवा वर्तमानकाले स्वरूप निर्द्धार भासनपिण दुर्लभ छे, तो स्वरूपनो रमण ते तो श्रेणिप्रतिपन्न जीवने हुवे, संपूर्ण स्वरूपानंदी वीतरागनी भक्तिने अवलंबने रहवोजी. श्रीआचारांग लोकसाराध्ययने आत्मस्वरूपावलंबी जीव ते साधक छे, बीजा साधक नथी, इम कह्यो छे. ते माटे शुद्ध साध्यरुचि अने यथापणे वस्तु परमार्थज्ञानी कर्मक्षय करवानो अर्थी निस्संग आत्मानो परिणमन ते धर्म तेहना प्रागूभावना अर्थी ते साधक जीव परमसिद्धताने वरे, ए रीते प्रतीत राखवीजी आज्ञा श्री तीर्थंकर देवनी ते प्रमाण, साधन रसी गुणी बहुमान स्वतत्त्व पूर्णताना रसिकपणे वरतज्यो ए तत्त्व छे जी।



